महाकवि पुष्पदन्त विरचित

महापुराण

[भाग-३]

मूल-सम्पादक

डॉ. पी. एल. वैद्य

अनुवादक

डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, एम.ए., पी-एच.डी.

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला : अपभ्रंश ग्रन्थांक–१७

महाकवि पुष्पदन्त विरचित

महापुराण

भाग–२

[तीर्थंकर अजितनाथसे मल्लिनाथ-चरित तक]

(सन्धि ३७ से ६७ तक)

हिन्दी अनुवाद, प्रस्तावना तथा अनुक्रमणिका सहित

मूल-सम्पादक
डॉ. पी. एल. वैद्य

अनुवादक
डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, एम. ए., पी-एच. डी.
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर (म० प्र०)

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

वीर नि० संवत् २५०७ : वि० संवत् २०३८ : सन् १९८१
प्रथम संस्करण : मूल्य पचपन रुपये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्व. पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवीकी पवित्र स्मृतिमें
स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन द्वारा संस्थापित
एवं
उनकी धर्मपत्नी स्वर्गीया श्रीमती रमा जैन द्वारा संपोषित

भारतीय ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाके अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल आदि प्राचीन भाषाओंमें उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन-साहित्यका अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उसका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदिके साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन-भण्डारोंकी सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, कला एवं स्थापत्य, विशिष्ट विद्वानोंके अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन साहित्य-ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमालामें प्रकाशित हो रहे हैं।

●

ग्रन्थमाला सम्पादक
सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री
डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन

●

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय : बी/४५–४७, कॅनॉट प्लेस, नयी दिल्ली–११०००१
मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी–२२१०१०

●

स्थापना : फाल्गुन कृष्ण ९, वीर नि० २४७०, विक्रम सं० २०००, १८ फरवरी १९४४
सर्वाधिकार सुरक्षित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

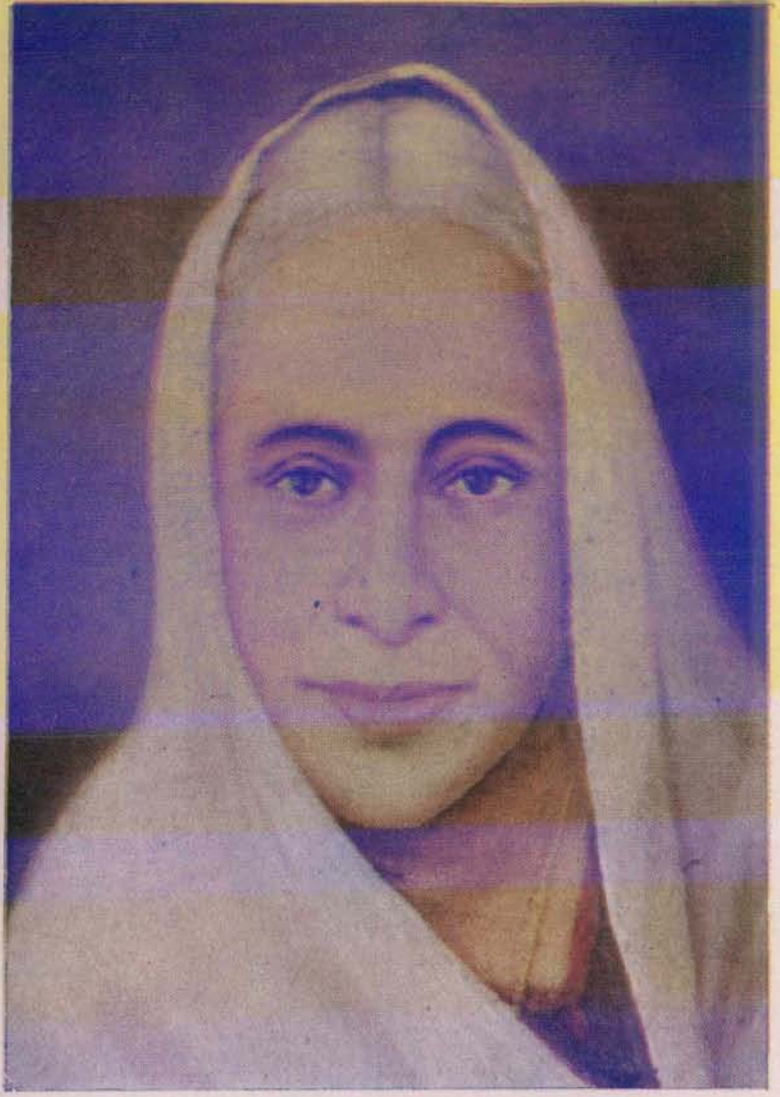

मूल प्रेरणा
दिवंगता श्रीमती मूर्तिदेवी जी
मातुश्री श्री साहू शान्तिप्रसाद जैन

अधिष्ठात्री
दिवंगता श्रीमती रमा जैन
धर्मपत्नी श्री साहू शान्तिप्रसाद जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

JÑĀNAPĪTHA MŪRTIDEVĪ GRANTHAMĀLĀ : Apabh. Grantha No. 17

MAHĀKAVI PUṢPADANTA'S

MAHĀPURĀNA

Vol. III

[From Tīrthaṅkara Ajitanātha to Mallinātha]

(Saṁdhi 37 to 67)

With
Introduction, Hindi Translation and Index of the verses etc.

Text Edited by

Dr. P. L. VAIDYA

Translated by

Dr. DEVENDRA KUMAR JAIN, M. A., PH. D.
Professor, Department of Hindi, Govt. Arts
and Commerce College,
INDORE

BHARATIYA JNANPITH PUBLICATION

VIRA NIRVANA SAMVAT 2507 : V. SAMVAT 2038 : A. D. 1981
First Edition : Price Rs. 55/–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA

MŪRTIDEVĪ JAINA GRANTHAMĀLĀ

FOUNDED BY

LATE SAHU SHANTI PRASAD JAIN

IN MEMORY OF HIS LATE MOTHER SHRIMATI MURTIDEVI

AND

PROMOTED BY HIS BENEVOLENT WIFE

LATE SHRIMATI RAMA JAIN

IN THIS GRANTHAMĀLĀ CRITICALLY EDITED JAINA ĀGAMIC, PHILOSOPHICAL, PURĀṆIC, LITERARY, HISTORICAL AND OTHER ORIGINAL TEXTS AVAILABLE IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRṀŚA, HINDI, KANNAḌA, TAMIL, ETC., ARE BEING PUBLISHED IN THEIR RESPECTIVE LANGUAGES WITH THEIR TRANSLATIONS IN MODERN LANGUAGES.

ALSO

BEING PUBLISHED ARE

CATALOGUES OF JAINA-BHAṆḌĀRAS, INSCRIPTIONS, STUDIES ON ART AND ARCHITECTURE BY COMPETENT SCHOLARS AND ALSO POPULAR JAINA LITERATURE.

●

General Editors

Siddhantacharya Pt. Kailash Chandra Shastri
Dr. Jyoti Prasad Jain

●

Published by

Bharatiya Jnanpith

Head Office : B/45-47, Connaught Place, New Delhi-110001

●

Founded on Phalguna Krishna 9, Vira Sam. 2470, Vikrama Sam. 2000, 18th Feb., 1944
All Rights Reserved.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एलाचार्य श्रद्धेय मुनिश्री विद्यानन्दजीको

समर्पित

जो परम्परामें रहकर भी उसे नये सन्दर्भ दे रहे हैं।

जो जैन-धर्मको उस विश्व-धर्ममें देखते हैं, जो मानव-धर्मकी कसौटी पर खरा उतरे।

जिनकी वीतरागता विद्यानुरागमें रूपायित है, विद्याका हर आयाम जिन्हें आन्दोलित करता है।

जिनकी आत्म-साधना विश्वकल्याण-भावनासे अनुप्रेरित है।

मूलतः कन्नडभाषी होकर जो ऐसी प्रांजल हिन्दी बोलते हैं कि जिसे सुनकर कोई कह नहीं सकता कि वे उत्तर भारतीय नहीं हैं; हालांकि साधुका अपना कोई देश नहीं होता, जाति नहीं होती।

प्राकृत अपभ्रंशमें जिनकी गहरी और सक्रिय दिलचस्पी है, जो चाहते हैं कि उक्त समूचा साहित्य आधुनिक वैज्ञानिक पद्धतिसे सम्पादित होकर प्रकाशमें आये जिससे भारतीय सांस्कृतिक धाराके अनछुए तत्त्वों और अध्यायोंको उजागर किया जा सके। उनकी यह चाह मूर्त हो।

—देवेन्द्रकुमार जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुवादक का निवेदन

महाकवि पुष्पदन्तके महापुराणके पहले खण्डका अनुवाद 'नाभेयचरिउ'के नामसे दो खण्डोंमें प्रकाशित हो चुका है, उसी प्रकाशन श्रृंखलाकी यह दूसरी कड़ी है—जिसमें ३८वीं सन्धिसे लेकर ६७वीं सन्धि तकका अंश है। इस अंशकी महत्ता इस तथ्यमें है कि इसमें अधिकतर तीर्थंकरों, चक्रवर्तियों, बलदेवों, वासुदेवों और प्रतिवासुदेवोंके चरित आ गये हैं। यह महापुराण—श्रमण संस्कृतिके ऐतिहासिक विकास और मूल प्रवृत्तियों को समझनेके लिए एक काव्यात्मक दस्तावेज है। समकालीन बृहत्तर भारतीय संस्कृतिकी दूसरी धाराओंके आलोचनात्मक अध्ययनके लिए इसका महत्त्व निर्विवाद है। अपभ्रंश भाषा और पद्धड़ियाबन्धमें होनेके कारण, इसका महत्त्व अकूत है। महापुराणकी भाषा और शैली नयी है। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं और उनके साहित्यके वैज्ञानिक अध्ययनकी दृष्टिसे इसकी उपादेयताका जब सम्पूर्ण मूल्यांकन होगा, तब अब तककी अध्ययन दृष्टि और उसके परिणामोंमें आमूल क्रान्ति होगी। लेकिन इस समय अध्ययनकी जो स्थितियाँ हैं, अवसरवाद ज्ञानके क्षेत्रमें जैसी कलाबाजियाँ दिखा रहा है उन्हें देखते हुए निकट भविष्यमें यह मूल्यांकन हो सकेगा, इसकी न तो आशा है और न सम्भावना, फिर भी निराश इसलिए नहीं हूँ कि संसार क्षणभंगुर है, उसमें एक सी स्थिति कभी नहीं रहती, कभी न कभी स्थिति बदलेगी और अध्येता सही सन्दर्भमें इस काममें लगेंगे। मैं इसे दुहराना आवश्यक समझता हूँ कि संस्कृत प्राकृत—अपभ्रंशसे आधुनिक भारतीय आर्य और आर्येतर भाषा तक पहुँचनेके लिए हमें भारतीय भाषा (भारती) को एक प्रवाहके रूपमें देखना होगा, जो बोलचालके स्तरपर निरन्तर गतिशील रहा है। विभिन्न भाषाओंमें जो साहित्य उपलब्ध हैं, वे धाराके बाँध हैं, बाँध और धारा में फर्क है; बाँधसे धाराकी गति नहीं रुकती। अपने समय और क्षेत्रकी दृष्टिसे ये बाँध अलग-अलग हो सकते हैं, परन्तु उनको धारा जोड़े रहती है। अतः वैज्ञानिक अध्ययनकी प्रक्रिया ही भाषा प्रवाहके स्थायी और गतिशील तत्त्वोंका सही मूल्यांकन कर सकती है।

२०वीं सदीका आठवाँ दशक (१९७०–८०) अपभ्रंशभाषा और साहित्यके विचारसे सचमुच दुर्भाग्यपूर्ण दशक है क्योंकि उसमें इसके अधिकांश प्रेरक, आश्रयदाता, शोधकर्ता और विद्वान् इस दुनियासे उठ गये। महापुराणके अंश 'नाभेयचरिउ' के अनुवादके समय अपभ्रंश साहित्यके मनीषी डॉ. पी. एल. वैद्य भी अब हमारे बीच नहीं हैं। पहले खण्डकी भूमिकामें, १९७४ में, मृत्युसेजपर पड़े-पड़े उन्होंने लिखा था "महाकवि पुष्पदन्तकी तीसरी रचना 'महापुराण' विशाल ग्रन्थ है, जिसके तीन खण्डोंके सम्पादनमें मुझे दस सालसे भी अधिक (१९३२–४१) का समय लगा। यह उसका डॉ. देवेन्द्रकुमार जैनके हिन्दी अनुवादका दूसरा संस्करण है, जो भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित है। मैं विशेष रूपसे सुखका अनुभव करता हूँ कि उक्त संस्थाने इसका प्रकाशन किया, और विद्वानों को इसे उपलब्ध कराया। अपभ्रंश साहित्यके प्रेमी भारतीय ज्ञानपीठके प्रति अत्यन्त अनुगृहीत हैं। मैंने आशा की थी कि इस युगनिर्माता प्रकाशनका युवा शोध-विद्वान् अध्ययन करेंगे।"

सन्तोष भी है कि उनके जीवनकालमें ही महापुराणका पहला खण्ड हिन्दी अनुवाद और उनकी भूमिकाके साथ प्रकाशित हो गया था। चूँकि यह प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ ने अपने हाथमें लिया है, इसलिए जीवनकी आखिरी साँस तक उन्हें विश्वास रहा होगा कि शेष खण्ड भी उसी आनबानसे प्रकाशित होंगे। विश्वास है कि मृत्युसे जूझते हुए स्व. डॉ. वैद्यने जो अपील की थी अपभ्रंशके अध्येता उसपर ध्यान देंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस अवसरपर, मैं भारतीय ज्ञानपीठके न्यासधारियों, निदेशक भाई लक्ष्मीचन्द्रजी और डॉ. गुलाबचन्द का हृदयसे अनुगृहीत हूँ कि उन्होंने विभिन्न स्तरोंपर इस कार्यको गति दी। मूर्तिदेवी ग्रन्थमालाके वर्तमान सम्पादक श्रद्धेय पण्डित कैलाशचन्द्र शास्त्री और डॉ. ज्योतिप्रसाद जैनके प्रति कृतज्ञ होना मेरा कर्तव्य है कि जिनके सम्पादनमें इसका प्रकाशन हो रहा है। अपभ्रंशकाव्य कृतियोंके अनुवादकी प्रेरणा देनेवाले श्रद्धेय प. फूलचन्द्रजी शास्त्रीका कृतज्ञस्मरण कर मैं सुखका अनुभव कर रहा हूँ। अनुवादको मूलगामी और शुद्ध बनानेका पूरा प्रयास किया गया है परन्तु अपभ्रंश-जैसी लचीली विकल्प प्रिय भाषा और उसके चरितकाव्योंकी संक्षिप्त और विस्तृत शैलीके कारण कभी-कभी सन्दर्भोंको जोड़ना माथापच्चीका काम है, शब्दकी पहचान भी टेढ़ी खीर बन जाती है। इसके अलावा पिछले दशकमें जिन्दगीमें आनेवाले व्यवधानों तथा पुष्पदन्तके इस कथनको दुहरानेवाले—

कलिमलमलणु कालु विवरेउ
णिग्घिणु णिग्गुणु दुण्णयगारउ
जो जो दीसइ सो सो दुज्जणु
णिप्फलु णीरसु णं सुक्कउ वणु
राउ राउ णं संझहि केरउ" ४।३८

कलियुगके पापोंसे मैला, यह समय अत्यन्त विपरीत है, निर्दय निर्गुण और दुर्नयोंको करनेवाला जो-जो दिखाई देता है। (मिलता है) वह-वह दुर्जन, फलहीन और नीरस, मानो यह दुनिया आदमियोंकी दुनिया नहीं, सूखे पेड़ोंका जंगल है। लोगोंका राग, सन्ध्याके रागके समान है, पल-भरमें, या काम होते ही गायब! मनहूस क्षणोंके कारण भी कुछ भूलें रह जाना या हो जाना सम्भव है। सहृदय पाठकोंसे निवेदन है कि यदि ऐसी भूलें उनके ध्यानमें आयें तो निस्संकोच उन्हें सूचित करनेका कष्ट करें, जिससे भविष्यमें उन्हें ठीक किया जा सके।

शान्तिनिवास
114 उषानगर, इन्दौर
452009
20-5-1981

—देवेन्द्रकुमार जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

PREFACE

The first Volume of the Mahāpurāṇa of Puṣpadanta containing the first thirtyseven saṃdhis out of a total of one hundred and two was issued in 1937 as No 37 of the Manikchand Digambara Jaina Granthamālā, Bombay, under the kind patronage of the Trustees of that Series. I am now issuing the second Volume of the work containing the next forty-three saṃdhis (xxxviii-lxxx) in the same Series as No 41 and under the patronage of the same Trustees as also of the University of Bombay. I hope to issue the third and the last Volume of the work within a year from now.

It is my pleasant duty to thank all those who have assisted me in the production of this second Volume. In the first place I should like to thank most heartily the Managing Trustee of the Manikchand Digambara Jaina Granthamālā, Mr. Thakordas Bhagwandas Javeri, who, in spite of low funds of the Mālā, agreed to finance the publication. To Pandit Nathuram Premi and Professor Hiralal Jain of King Edward College, Amraoti, the Secretaries of the Mālā, I owe a special debt of gratitude. The funds of the Mālā, after the publication of the first Volume of the work, were completely exhausted, and I feared that I would be forced to abandon the work unfinished, but these learned scholars moved heaven and earth to find out the required amount for publication. I am to thank Professor Hiralal Jain specially for his having secured for my use the Ms. of the Uttarapurāṇa designated A in the Critical Apparatus and also of the Ṭippaṇa of Prabhācandra from Master Motilal Sanghi Jain, Sanmati Pustakālaya, Jaipur, who very kindly placed them at my disposal as long as I wanted them for collation work. My thanks go to Master Motilal for this kindness. Mr. R. G. Marathe, M. A., formerly my pupil and now Professor of Ardha-Māgadhī at the Willingdon College, Sangli, helped me for the collation of this Volume also. My thanks go to him for the help he rendered me. Nor should I forget to mention thankfully the work of Mr. R. D. Desai of the New Bharat Printing Press, Bombay, and his willing staff of Proof-readers and Pressmen who are responsible for the excellent get-up and faultless execution of this Volume.

Lastly, the Editor and the Publishers acknowledge their indebtedness to the University of Bombay for the substantial financial help (Rs. 650/-) it has granted towards the cost of publication of this Volume.

Nowrosjee Wadia College,
Poona
August 1940

P. L. Vaidya

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

INTRODUCTION

CRITICAL APPARATUS

The Text of Mahāpurāṇa or Tisaṭṭhimahāpurisaguṇālaṃkāra of Puṣpadanta in this Volume is based upon three Mss. designated K, A and P which are fully collated. Occasional help for the purpose of settling the text was also derived from the Ṭippaṇa of Prabhācandra. I give below the full description of this material :—

(1) K. This Ms. is fully described in my Introduction to Vol. I on pages xi and xii. The Uttarapurāṇa portion begins on leaf No 289 of this Ms. As this Ms was found to contain the older of the two recensions of the Ādipurāṇa with corrections to accord with the other recension, I have relied upon it for the constitution of the text in this Volume. It is to be regretted that no Ms. corresponding to Ms. G of the Ādipurāṇa Mss. could be discovered for this Volume. I may say here that the No. of the Uttarapurāṇa Mss known to me is much smaller than those of the Ādipurāṇa.

(2) A. This Ms was obtained for me by Professor Hiralal Jain of the King Edward College, Amraoti, from Master Motilal Sanghi Jain, Sanmati Pustakālaya, Jaipur. It consists of 423 leaves measuring 13 inches by 5 inches with 11 lines to a page and about 40 letters to a line. This Ms presents in its original form a recension as in P, but seems to have been corrected to another recension no longer available to me with the result that the variants recorded are those of the corrected recension. The Ms further seems to have been made up of (a) leaves of the original Ms of which a few were lost, and (b) of leaves newly added to make up the lost portion and written in a different hand. This hypothesis of mine is supported by reference to Folio No 383-384 which leaves half the page blank in order that the matter should run on with the first syllable on Folio No 385 of the original part. The pages so substituted have nine lines to a page and about 38 letters to a line. That this Ms. presents a recension different from those of K and P is clear from th› fact that it contains Praśasti Stanzas 46, 47 and 48 (See Introduction to Vol I, page xxvii) which are not common to any other Ms of the Uttarapurāṇa. The Ms begins :- ॐ नमो वीतरागाय । बंभहो बंभालयसामियहो and ends : इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंत-विरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे दुउत्तरसयमो परिच्छेओ समत्तो ॥ संधि ॥ १०२ ॥ इति उत्तरपुराणं समाप्ता ॥ शुभंमस्तु ॥ कल्याणंमस्तु ॥ संवत् १६१५ वर्षे माघदि ६ शुक्रवासरे उत्तरपुराणं समाप्तं ॥ बाईहठोपठनार्थं ज्ञानावर्णीकर्म्मक्षयार्थं ग्रंथसंख्या ॥ १२००० ॥

This last page however is not the original page of the Ms but is newly written. According to this colophon the Ms is dated Friday, the 6th day of the month of Māgha (Feb.-March) of the Saṃvat year 1615, corresponding to 1558 A. D.

(3) P. This is Ms No 1106 of 1884-87 of the Deccan College Collection, now deposited in the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona. It has 681 leaves measuring 11 inches by 4½ inches with 8 lines to a page and 33 letters to a line. It is dated the full-moon day of the month of Bhādrapada (Aug.-Sept.) of the saṃvat year 1630 corresponding to 1573 A. D. The last page of the Ms. is damaged and hence it

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

was rewritten on the 6th day of the bright half of Āṣāḍha (July) of the saṃvat year 1934 corresponding to 1877 A. D. It has a brief marginal gloss. It begins; ॐ नमो वीतरागाय ॥ बंभहो बंभालयसामियहो ..The original page ends : इय महापुराणे...... दुइत्तरसहमो परिच्छेओ समत्तो. In second hand we have further : संवत् १६३० वर्षे भाद्रपदमासे शुक्लपक्षे पूर्णिमातिथौ क (विवासरे उत्त) राभाद्रपदानक्षत्रे नेमिनाथचैत्यालये श्रीमूलसंघे बलात्कार...छे श्रीकुंदकुंदान्वये......The replaced page ends : बलदेवदास टौंग्याकाकारज मोती असाडसुदी ६ समत १९३४ का सालम श्रीधीयामंडीका मंदर पंचाइतामंदरने चडायो ॥छ॥ ॥छ॥ ॥छ॥

This Baladevadās had before him the damaged page of the Ms in two parts, the first part of which is still preserved alongwith the Ms at the Institute. The year 1630 put on the original page and the Paṭṭāvalī portion on the original page seems to have been written in a different hand.

In addition to these three Mss fully collated, I have made full use of the Ṭippaṇa of Prabhācandra, a Ms of which was procured for my use by Professor Hiralal Jain from Master Motilal Sanghi Jain of Jaipur. This Ms of the Ṭippaṇa has 57 leaves measuring 12 inches by 5 inches with 13 lines to a page and 31 letters to a line. It begins : ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ बंभहो परमात्मनः and ends : श्रीविक्रमादित्यसंवत्सरे वर्षाणामशीत्यधिकसहस्रे महापुराणविषमपदविवरणं सागरसेनसैद्धांतान् परिज्ञाय मूलटिप्पणिकां चालोक्य कृतमिदं समुच्चयटिप्पणं ॥ अज्ञपातभीतेन श्रीमद्बलात्कारगणश्रीसंघाचार्यसत्कविशिष्येण श्रीचंद्रमुनिना निजदोर्दंडाभिभूतरिपुराज्यविजयिनः श्रीभोजदेवस्य ॥१०२॥ इतिउत्तरपुराणटिप्पणकं प्रभाचंद्राचार्यविरचितं समाप्तं ॥ छ॥ अथ संवत्सरेऽस्मिन् श्री नृपविक्रमादित्यगताब्दः संवत् १५७५ वर्षे भाद्रवा सुदि । बुधदिने । कुरुजांगलदेसे । सुल्तान सिकंदरपुत्रु सुल्तानब्राहिमुराज्यप्रवर्तमाने श्रीकाष्ठासंघे माथुरान्वये पुष्करगणे । भट्टारकश्रीगुणभद्रसूरिदेवाः । तदाम्नाये जैसवालु चौ. टोडरमल्लु । इद उत्तरपुराणटीका लिखापितं । सुभं भवतु । मांगल्यं ददाति लेखकपाठकयोः ॥ छ ॥

The colophon of this Ms raises some interesting problems which have been fully discussed in my Introduction to Vol I, page xv, and hence it is not necessary to restate and reexamine them here. I need only say that I have made full use of this T as also of the marginal gloss in K and P in constituting my text and in preparing my Foot-Notes.

There is one more Ms of the Uttarapurāṇa known to me. It is deposited in the Balātkāra Gaṇa Jain Mandir at Karanja, Berar, and bears No 7029 in the Catalogue of Sanskrit & Prakrit Mss in the C. P. and Berar, by the late Rai Bahadur Hiralal. This Ms is dated Thursday the 8th day of the dark half of Mārgaśīrṣa of the saṃvat year 1606, i. e., 1549 A. D. I have personally examined this Ms at Karanja during my visits to that place in 1927 & 1929, have had some trial collations, was promised the loan of it by the trustees of the temple, but could not get it when I actually required it owing to some strange attitude which the trustees then took. From my trial collations however, it appears that this Ms agrees very closely with P which is fully collated for this edition.

I have constituted my text in this Volume on the material described above. In doing so I have mostly relied upon the text as preserved in K which was found to represent the earliest of three recensions of the Uttarapurāṇa.

SUMMARY OF CONTENTS

This Second Volume of the Mahāpurāṇa contains saṃdhis XXXVIII–LXXX of the great epic, and describes the lives of twenty Tīrthaṃkaras beginning with Ajita the second and ending with Nami the twenty-first, eight each of the nine

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Baladevas, Vāsudevas and Prati-Vāsudevas, and ten out of twelve Cakravartins from Sagara to Jayasena. In narrating these lives the poet has followed the information handed down by tradition and seems to have been greatly influenced by Guṇabhadra's Uttarapurāṇa in Sanskrit. It appears that the details of the lives of these Great Men were codified by old monks, but individual poets handling the theme were free to use their poetic genius in detailed description. Vimalasūri in his Paumacariya, for instance, says :—

नामावलियनिबद्धं आयरियपरंपरागयं सव्वं ।
वोच्छामि पउमचरियं अहाणुपुव्विं समासेण ॥ १-८.

Although most of the information seems to have been codified and tabulated and handed down by tradition of each of the two schools of the Jainas, there is considerable uniformity in the subject matter. I have myself prepared some Tables and given them in the form of Appendices to this Volume. I now proceed to give the summary of contents by saṃdhis where such summary cannot be given in a tabular form.

XXXVIII. The Poet at the beginning offers salutations to the five Parameṣṭhis and assures the reader to continue his work by narrating the life of Ajita the second prophet of the Jainas. But before he proceeds he says that for some reason he was uneasy at heart and so stopped his literary activity for some time. One day the goddess of Learning appeared before him in dream and asked him to offer his salutations to the Arhats. The poet woke up but saw nobody before him. At this juncture Bharata, his patron, came to his house and asked him whether he (Bharata) offended him any way as a result of which he did not continue his work. Bharata reminded the Poet further that the life was fickle and that he should make full use of the gift of his poetic powers. The Poet then said to his patron that he was uneasy at heart because he found the world to be full of wicked people, and that, for that reason, he was not inclined to continue his composition, but that he would resume it at his request which he could not refuse. The Poet then resumes the work and narrates the life of Ajita. For details see Notes and the Tables in Appendices I, II, and III.

XXXIX. There lived a king named Jayasena at Pṛthvīpura, the capital of Vatsāvatī in the eastern Videha. He had two sons, Ratiṣeṇa and Dhṛtiṣeṇa by name, possessing great beauty. Of these Ratiṣeṇa died early. His father, overcome by grief, and disgusted with the worldly life, gave his kingdom to his son, Dhṛtiṣeṇa, and alongwith his minister Mahāruta, became a monk. Both Jayasena and Mahāruta practised penance, and after death became gods named Mahābala and Maṇiketu. These two gods made an agreement between themselves that whoever would be born on the earth earlier should be taught by the other the highest Dharma. Of these Mahābala was born first on the earth as king Sagara of Sāketa, and in course of time became a Cakravartin. Once a monk named Caturmukha attained Kevalajñāna, on which occasion gods arrived on the earth. Sagara went there to pay his respects to the monk. Maṇiketu saw king Sagara there and was reminded of his promise to god Mahābala. Maṇiketu thereupon took the opportunity to tell Sagara how fickle the earthly prosperity was, but Sagara paid no heed to him. Once again Maṇiketu came to Sagara's palace to enlighten him, but this time also

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

he failed. Now just about this time, sixty thousand sons of Sagara approached their father and asked him to give some work of command as they were tired of being idle Sagara at first told them that there was nothing that was left for them to do as his cakra had already achieved everything for them. His sons however insisted and then Sagara asked them to go to Mandara mountain and make some arrangement for the protection of the temples of the twenty-four Jinas built by Bharata the first Cakravartin. The sixty thousand sons of Sagara then started on their mission, dug up a huge ditch round Mandara and filled it with waters of the Ganges which flowed into the Nāgaloka. This time Maṇiketu thought of enlighting Sagara by a new method. He became a big snake, looked at the sons of Sagara with anger, and burned them to ashes. Only two, Bhīma and Bhagīrathī, escaped alive. Sagara was informed of this disaster, was advised by a Brahmin on the fickleness of saṃsāra. Following his advice, Sagara placed his son Bhagīrathī on the throne, and with his son Bhīma, became a monk. Maṇiketu was delighted to see this and showed to Sagara how he wrought about by his magic the death of his sons. All the sons were then brought to life, but they also followed their father by becoming monks. Bhagīrathī also, in due course, became a monk and attained emancipation.

XL, XLI, XLII, XLIII, and XLIV. For the lives of Saṃbhava, Abhinandana, Sumati, Padmaprabha and Supārśva, see the Tables.

XLV. This saṃdhi describes the six previous births of Candraprabha the eighth Tīrthaṃkara. In the earliest of these births, the soul of Candraprabha was born Śrīśarman or Śrīvarman, son of king Śrīṣeṇa and queen Śrīkāntā of Śrīpura in the Sugandha country of Western Videha. Leading a pious life he was next born as a god named Śrīdhara. In the next life he was born as a son named Ajitasena to king Ajitaṃjaya and queen Ajitasenā of Ayodhyā in the Alakā country. This Ajitasena became a cakravartin, led a pious life, and was next born as the lord of the Acyuta heaven. After this he was born as Padmanābha or Padmaprabha, son of Kanakaprabha and Kanakamālā of the town Vastusaṃcaya in the Maṅgalāvatī region, In his next birth he was born as Ahamindra in the Vaijayanta heaven.

XLVI. For the life of Candraprabha as a Tīrthaṃkara see the Tables.

XLVII. For the life of Suvidhi or Puṣpadanta see the Tables.

XLVIII. Śītala the tenth Tīrthaṃkara was in his previous life king Pṛthvīpāla of Susīmā. His wife, Vasantalakṣmī by name, died in the prime of youth, and the king, reflecting on her death, renounced the worldly life. In his next birth he was born as a god in the Āruṇa heaven. In his next birth he was born as a son named Śītala to king Dṛḍharatha and queen Sunandā of the town of Rājabhadra or Bhadrilapura. On seeing a bee dead in the lotus flower, he formed a disgust for the worldly life, renounced it, and going through the usual course of a Tīrthaṃkara, attained emancipation. After his nirvāṇa Jainism fell on bad days for want of persons preaching and practising it. There was at this time a king called Megharatha at Bhadrilapura. He wanted to spend his wealth in making gifts to suitable persons and asked the advice of his minister what type of gift was the best gift. His minister mentioned Śāstradāna to be the best form. The king however, did not like this advice, and asked a Brahmin named Muṇḍaśālāyana who told the king that he

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

should make the gifts to Brahmins of girls, elephants, cows etc. The king followed his advice which only went to enrich the Brahmins but did the king no good.

IL. For the life of Śreyāṃsa see the Tables.

L, LI and LII. These three saṃdhis describe the narrative of the first set of Baladevas, Vāsudevas and Prati-Vāsudevas. During the regime of Śreyāṃsa there lived at Rājagṛha a king named Viśvabhūti and queen Jainī. The king had a younger brother named Viśākhabhūti and his queen was called Lakṣmaṇā. Jainī gave birth to a son called Viśvanandi and Lakṣmaṇā to Viśākhanandi. One day Viśvabhūti saw an autumnal cloud disappearing in the sky. From this the king realised impermanence of saṃsāra, and giving his kingdom to his younger brother Viśākhabhūti, renounced the worldly life. When Viśākhabhūti became king, Viśvanandi became the Yuvarāja.

Now Viśvanandi once went to his pleasure-garden called Nandana, and while he enjoyed life there in the company of women, Viśākhanandi saw him. A desire to possess that very garden arose in his mind. He went to his father and pressed him to give it to him. The king agreed to do this, called Viśvanandi and asked him to take charge of his father's kingdom, and told him further that he (Viśākhabhūti) would go to the frontier to overcome the rebelling tribes. Viśvanandi did not like the idea that his uncle should go to fight, but told him that he would rather himself go for that purpose. Viśākhabhūti agreed and Viśvanandi went away. During his absence Viśākhabhūti gave the Nandana garden to his son Viśākhanandi. When Viśvanandi returned, he found that his garden was taken possession of by Viśākhanandi. Viśvanandi got angry with his uncle and cousin. He wanted to attack his cousin who climbed up the tree. Viśvanandi uprooted the tree with Viśākhanandi on, and wanted to smash them both. Viśākhanandi however escaped but climbed a stone pillar which Viśvanandi smashed into pieces. Viśākhanandi then ran away for life. At this time Viśvanandi was filled with pity that he attacked his cousin, and made up his mind to be a Jain monk. Viśākhabhūti also made up his mind to follow Viśvanandi, placed Viśākhanandi on the throne, went to the forest and practised penance. After his death he was born in the Mahāśukra heaven.

Now Viśākhanandi was overcome by a powerful enemy, and ran away from his capital. He went to Mathurā and became the minister of the king. Once his cousin, the monk Viśvanandi, was going along the road on his begging tour when he was hit by a young cow that had recently delivered a calf, and Viśvanandi fell on the ground. Viśākhanandi saw this from the terrace of the house of his courtezan, and insulted him. Unable to bear the insult Viśvanandi formed a hankering that he should in his next life have a revenge on Viśākhanandi. After his death Viśvanandi was born in the Mahāśukra heaven where his uncle Viśākhabhūti was born. Viśākhanandi also was later overcome with disgust for his conduct, practised penance, and after death was born in the same heaven.

Now there lived in Alakā a king named Mayūragrīva and queen Nīlāñjanaprabhā. Viśākhanandi in his next life became their son and was named Aśvagrīva, a Prati-Vāsudeva. He defeated his enemies and became the lord of the three continents of the earth, i. e., an Ardha-cakravartin.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

There lived in Podanapura a king named Prajāpati. He had two queens, Jayāvatī and Mṛgāvatī. Jayāvatī gave birth to a son called Vijaya, who was Viśākhabhūti in his previous birth. This Vijaya is the first Baladeva of the Jain Mythology and had a white complexion. Mṛgāvatī gave birth to a son called Tripṛṣṭha, who in his previous birth was Viśvanandi. This Tripṛṣṭha is the first Vāsudeva and had a dark complexion. These two step-brothers were greatly attached to each other.

LI. Once a report was brought to king Prajāpati that a terrific lion had been working a havoc on the subjects. His subjects requested him to remove this scourge. Thereupon the king himself prepared to go to kill the lion when his son Vijaya requested his father to allow him to go on that mission. The king allowed Vijaya to go, his younger brother Tripṛṣṭha followed him. Both of them approached the cave of the lion, which, on being roused by the din and cry of warriors, came out, and was about to attack Vijaya, when Tripṛṣṭha with his arms caught both the claws of the lion and sruck it on the face. The lion fell dead.

One day the door-keeper approached the king and told him that there was at the door a Vidyādhara who wanted to see him. He was admitted to the king's presence. The Vidyādhara told king Prajāpati that he was Indra by name and had come there as a messenger of king Jvalanajaṭī. He came there to invite the king and his two sons to the region of the Vidyādharas in order that Tripṛṣṭha should lift up the huge slab of stone known as the Koṭiśilā, to kill Aśvagrīva and marry his daughter Svayamprabhā, and thereafter to rule over the three continents of the earth and to make Jvalanajaṭī the lord of both the sides of the Vaitāḍhya mountain. King Prajāpati accepted the invitation and went to the region of the Vidyādharas. King Jvalanajaṭī received them well and introduced them to his son Arkakīrti. In the course of their talk it was arranged that Tripṛṣṭha should first lift up the Koṭiśilā which would convince them that he was capable of killing Aśvagrīva. Thereupon they all went to the forest where the Koṭiśilā stood and asked Tripṛṣṭha to life it up. He did so with ease. Jvalanajaṭī and others praised Tripṛṣṭha for his great strength. Thereafter they all returned to Podanapura and celebrated the marriage of Tripṛṣṭha with Svayamprabhā. The news of this marriage reached the ears of Aśvagrīva who resented the action of Jvalanajaṭī in marrying his daughter outside his clan, i. e., in giving her to Tripṛṣṭha, a human being, in stead of to Aśvagrīva, a Vidyādhara. Aśvagrīva thereupon marched against Jvalanajaṭi and king Prajāpati even against the advice of his ministers.

LII. Spies brought the news of the arrival of the army Aśvagrīva to the gates of Podanapura. Thereupon king Prajāpati consulted with Jvalanajaṭī as to how they should meet the situation when Vijaya told them that he was sure in his mind that Tripṛṣṭha would kill Aśvagrīva. King Jvalanajaṭī then taught Tripṛṣṭha several magic lores, after which order was given to the army to march against Aśvagrīva. Before however the fight began Aśvagrīva sent a messenger to Tripṛṣṭha to see if Tripṛṣṭha was prepared to make peace with Aśvagrīva by handing over Svayamprabhā. Tripṛṣṭha rejected the proposal. The fight began. The goddesses gave to Tripṛṣṭha a bow called Śārṅga, a conch called pāñcajnya, Kaustubha gem, a gadā called kaumudī, and to Vijaya a plough, a pestle and a gadā. The armies met and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

there was a terrible fight between them. In the course of the fight, Aśvagrīva threw his discus at Tripṛṣṭha, but instead of doing any harm to him, it remained on his arm. He then used this very discus against Aśvagrīva who was killed. Immediately on his death Tripṛṣṭha became the Ardha-cakravartin. Jvalanajaṭī thereafter returned to his capital Rathanūpura, and enjoying the sovereignty of both the sides of the Vaitāḍhya mountain for a considerable time, became a monk. King Prajāpati also did the same.

Now Tripṛṣṭha remained ever unsatiated with pleasures, died and went to the seventh hell. After his death Vijaya handed over his kingdom to Śrīvijaya, practised penance and attained emancipation. Svayamprabhā also did the same.

LIII. For the life of Vāsupūjya see the Tables.

LIV. This saṃdhi gives the narrative of the second set of Baladevas and Vāsudevas. There lived in Vindhyapura a king named Vindhyaśakti. King Suṣeṇa of Kanakapura was his contemporary. Both of them were great friends. Now king Suṣeṇa had at his court a beautiful courtezan named Guṇamañjarī. King Vindhyaśakti hearing about the beauty of Guṇamañjarī sent a messenger to Suṣeṇa and asked him to send the courtezan to him. This request was, of course, rejected and the two friends met in a battle in which Suṣeṇa was defeated. On hearing the defeat of Suṣeṇa, his friend, king Vāyuratha of Mahāpura, got disgusted with the worldly life and became a monk. King Suṣeṇa also became a monk, but formed a hankering to avenge his defeat in one of his next births. Both Vāyuratha and Suṣeṇa were born in the Prāṇata heaven. King Vindhyaśakti also was born in one of the heavens.

In the next birth Vindhyaśakti was born as son to king Śrīdhara and queen Śrīmatī of Bhogavardhana, and was named Tāraka, who, in course of time became an Ardha-cakravartin. Vāyuratha and Suṣeṇa were born sons to king Brahmā and queens Subhadrā and Uvavādevi or Uṣādevī and were named Acala and Dvipṛṣṭha who were the Baladeva and Vāsudeva. They had an excellent elephant. Now Tāraka had a desire to have that elephant and sent a messenger to Acala to hand it over. As Acala refused to do so, there was a fight between Tāraka and Dvipṛṣṭha in which Tāraka was killed. Dvipṛṣṭha then became the Ardha-cakravartin. After death both Tāraka and Dvipṛṣṭha went to hell, and Acala, seeing the death of his brother, became a monk and secured emancipation from saṃsāra.

LV. For the life of Vimala the thirteenth Tīrthaṃkara see the Tables.

LVI. There was a king called Nandimitra in Śrīpura in the western Videha. One day he reflected on the impermanence of the world, renounced the pleasures, became a monk, and after death was born in the Anuttaravimāna heaven.

There lived in Śrāvasti a king named Suketu. There lived in the same town another king named Bali. They once indulged in the play of dice in which Suketu lost everything. Out of disgust he became a monk, but while practising penance he formed a hankering that he should take revenge on Bali in the next birth. Suketu, after death, was born in the Lāntava heaven. Bali also was born as a god in heaven.

In their subsequent births Bali was born as a son of king Samarakesarī and queen Sundarī of Ratnapura, and was called Madhu. He was a Prati-Vāsudeva and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

an Ardha-cakravartin. Nandimitra and Suketu were born as sons to king Rudra of Dvāravatī by his wives Subhadrā and Pṛthivī, and were named Dharma (Baladeva) and Svayaṃbhū (Vāsudeva). One day Svayaṃbhū, while seated on the terrace of his palace, saw an army encamped outside the city and asked his minister whose army it was. His minister told him that a feudatory named Śaśisomya sent his tribute to king Madhu and that it consisted of elephants, horses etc., which was being taken to him. Svayaṃbhū would not allow that, defeated Śaśisomya and carried off the tribute. The news reached the ears of Madhu who thereupon marched against Svayaṃbhū. In the fight that followed Svayaṃbhū killed Madhu, and became an Ardha-cakravartin. After enjoying the kingdom Svayaṃbhū died and went to hell. Dharma became a monk and attained emancipation.

LVII. This saṃdhi narrates an episode of Saṃjayanta, Meru and Mandara, out of which the two latter were the Gaṇadharas of Vimala, the thirteenth Tīrthaṃkara. There are two more persons connected with the story, viz., Śrībhūti the minister and Bhadramitra the merchant. Of these the name of Śrībhūti is confounded with Satyaghoṣa. The poet describes the seven previous of the first three and only a few of the last two. A glance at the lists given in Notes on this Saṃdhi will facilitate the understanding of the reader.

In the city of Vītaśoka there lived a king named Vaijayanta. His queen was called Sarvaśrī. She gave birth to two sons, Saṃjayanta and Jayanta. One day on hearing the discourse of a Jain monk they all renounced the world. In course of time Vaijayanta secured emancipation. Gods arrived on this occasion to show their reverence to Vaijayanta. Among them was the lord of snakes who was very beautiful. Jayanta formed a hankering to have a beautiful body like that of the lord of snakes in the next birth. He was then born in the nether world as lord of snakes.

One day, when Saṃjayanta was practising the pratimās, a Vidyādhara, Vidyuddanṣṭra by name, saw him, picked him up and threw him into the waters of the confluence of five rivers, and told the people that the monk was a demon. The people thereupon beat him, but the monk remained undisturbed, and bearing the hardships, died and attained emancipation. On the occasion of his nirvāṇa gods arrived including Jayanta who was then the lord of snakes. Finding the plight of his brother Saṃjayanta, the lord of snakes began to attack people. They however said that they beat the monk on the report of Vidyuddanṣṭra. The lord of snakes then caught Vidyuddanṣṭra, and while the former was about to throw the latter into the sea, god Ādityaprabha intervened and narrated the story of the former lives of them all.

There was a king named Siṃhasena in the city of Siṃhapura. His queen was named Rāmadattā. He had two ministers, Śrībhūti and Satyaghoṣa. There was a merchant named Bhadramitra, the son of Sudatta and Sumitrā of Padmaṣaṇḍapura. Now this Bhadramitra, while wandering, obtained precious gems in Ratnadvīpa, which, during his halt at Siṃhapura, he deposited with Satyaghoṣa (There is later a confusion between Śrībhūti and Satyaghoṣa). After some time Bhadramitra asked for the return of his gems, but Satyaghoṣa denied all knowledge of gems even though

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

he was questioned by the king. Bhadramitra then went mad and ascending a tree in the neighbourhood of the king's palace, used to decry the minister. Queen Rāmadattā got angry with the minister, but arranged to play a trick on him. She arranged a game of dice with Satyaghoṣa, in which he lost his signet ring and the sacred thread to the queen, who then sent the ring to the treasurer of the minister through her maid, and obtained from him the gems of Bhadramitra. In order to ascertain that Bhadramitra has told the truth, the king got a few gems of his mixed with those of Bhadramitra, to whom they were shown. Bhadramitra picked only his gems saying that others were not his. The king was then pleased with him, punished the minister, treating him as a thief would be treated. The minister bore ill-will towards the king for this. In his next birth he became an agandhana snake, stood at the treasury of the king and bit him.

In his next birth Bhadramitra became the son of Rāmadattā, and was named Siṃhacandra. He had a younger brother called Pūrṇacandra.

It is in this strain that the previous of all the three persons mentioned at the beginning of the saṃdhi are narrated.

LVIII. For the life of Ananta the fourteenth Tīrthaṃkara, see Tables.

During his regime were born the fourth set of Baladeva, Vāsudeva, and Prati-Vāsudeva. Their names were Suprabha, Puruṣottama and Madhusūdana.

There was a king named Mahābala in Nandapura. He became a monk and after death was born in Sahasrāra heaven. There lived at this time at Podanapura a king named Vasuṣeṇa. His queen Nandā was very beautiful. Once his friend Caṇḍaśāsana came to stay with him, saw Nandā, fell in love with her, and asked Vasuṣeṇa to give her to him. He refused to do so, but Caṇḍaśāsana carried her by force. Vasuṣeṇa thereafter became a monk, and after death was born in the same heaven where Mahābala was born.

Caṇḍaśāsana in his next birth became the son of king Vilāsa and queen Guṇavatī of Vārāṇasī. Mahābala and Vasuṣeṇa became sons of king Somaprabha by his queens Jayavatī and Sītā, and were named Suprabha and Puruṣottama. Madhusūdana made a demand of tribute from them, and as they refused to pay it, there was a fight between Madusūdana and Puruṣottama in which Madhusūdana was killed. After him Puruṣottama became the Ardha-cakravartin.

LIX. For the life of Dharma the fifteenth Tīrthaṃkara see Tables.

During his regime there appeared the fifth set of Baladeva and Vāsudeva. There was a king called Naravṛṣabha in the city of Vītaśoka. He practised penance and was born in the Sahasrāra heaven. At this time there was at Rājagṛha a king named Sumitra. He was defeated in battle by Rājasiṃha. Sumitra thereupon practised penance, formed a hankering to defeat Rājasiṃha in the next birth, and after death was born in the Māhendra heaven. Now Rajasiṃha in his next birth became king Madhukrīḍa of Hastināpura. King Naravṛṣabha and king Sumitra were born as sons to king Siṃhasena and queens Vijayā and Ambikā, were called Sudarśana and Puruṣasiṃha and were the fifth of the Baladevas and Vāsudevas.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

King Madhukrīḍa sent his messengers to Sudarśana and demanded tribute from him which he refused. They fought. Puruṣasiṃha killed Madhukrīḍa and became an Ardha-cakravartin.

In the same regime there lived a king named Sumitra at Sāketa. He had a queen called Bhadrā. She gave birth to a son, Maghavan by name, who, having conquered the six continents of the earth, became the third sovereign of the Jain Mythology. After having enjoyed the kingdom for a long time, he renounced the world and attained emancipation.

After some time in the same regime there came the fourth cakravartin, Sanatkumāra by name. He was the son of king Anantavīrya and queen Mahādevī of Vinītapura. He was said to be extremely beautiful. Two gods sent by Indra came to see his beauty and said to the king that his beauty would have been everlasting if there had been no oldage and death. On hearing the mention of oldage and death Sanatkumāra renounced the world and attained emancipation.

LX. A Brahmin named Amoghajihva once predicted that within a week lightning would fall on the head of king Śrīvijaya, the son of Tripṛṣṭha Vāsudeva, and that he would receive a shower of gems on his head. When the Brahmin was asked how he could predict such a thing, he said he studied the science under a famous teacher. One day, when he asked his wife for his meals, she served him only cowries in a plate, as, owing to extreme poverty, she had nothing else in her house. His wife then rebuked him that he did not work and earn money. Just at this time a spark of fire fell on his plate and his wife disbursed a pot of water over his head. It is from this incident that he predicted the fall of lightning on the head of king Śrīvijaya and a shower of gems over his head. The ministers thereupon advised the king to abdicate the throne for a while in order to escape the calamity and to place some one on throne for the time being. The saṃdhi then narrates the enmity and fight between Śrīvijaya and Amitatejas, a Vidyādhara. A monk intervenes, preaches them the doctrines of Jainism as a result of which they both become monks.

LXI. In their next birth Śrīvijaya and Amitatejas were born in heaven as gods Maṇicūla and Ravicūla. In their next birth they were born as sons of Stimitasāgara of the city of Prabhāvatī by his queens Vasundharā and Anumati, and were called Anantavīrya and Aparājita. They had two beautiful dancing girls in their court which were demanded by a Vidyādhara king named Damitāri.

LX-LXIII. These four saṃdhis narrate the life of Śānti together with his previous births as also of Cakrāyudha, as detailed in LXIII. 11 and explained in the Notes.

LXIV. For the life of Kunthu see the Tables.

LXV. For the life of Ara see the Tables.

During the regime of Ara, there appeared the eighth cakravartin, Subhauma*

* The story of Jamadagni, Paraśurāma and Subhauma here is a mixture of two stories on the side of the Hindu mythology, viz, the story of the carrying away of Vasiṣṭha's cow, Nandinī, by Gādhi, and of Kārtavīrya Sahasrārjuna and Paraśurāma.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

by name. There was a king named Sahasrabāhu. His queen Vicitramati gave birth to a son, Kṛtavīra by name. Vicitramati's sister Śrīmati was married to king Śatabindu. A son was born to them and was named Jamadagni. Owing to the death of his mother in early childhood, Jamadagni became a tāpasa ascetic. Śatabindu and his minister Hariśarman also became ascetics under Jainism and Hinduism respectively. After death Śatabindu was born in the Saudharma heaven and Hariśarman was born in the Jyotiṣka heaven. They both wanted to test the piety of Jamadagni, assumed the form of a couple of sparrows, built their nest in the beard of Jamadagni, and talked something insulting to him. He then got angry with the birds and threatened to kill them. One of the birds thereupon said to the sage that he did not know that he could not obtain heaven as he did not beget a son. Jamadagni was then set to thinking, went to his maternal uncle, and sought a girl for marriage. Owing to his oldage however, no girl was prepared to marry him. He thereupon cursed all the girls of the town to be dwarfish or hump-backed, which town thereafter became known as Kānyakubja (Modern Kanauj). He however found his uncle's daughter, all dusty, called her Reṇukā (Dusty), attracted her by showing her a plantain, made her sit on his lap, and married her, as, he said, she liked him. In course of time she gave birth to two sons, Indrarāma and Śvetarāma. Her brother gave to her a gift of a cow that would yield everything desired, as also a charm (mantra) of axe (Paraśu). Reṇukā and her husband Jamadagni thereafter lived happily.

One day king Sahasrabāhu with his son Kṛtavīra came to her hermitage. They were both treated to a royal feast by Reṇukā. The king and his son were struck with the excellence of the food and asked Reṇukā how she, the wife of an ascetic, could treat them so sumptuously. She said that her borther had given her a cow that yielded desired things. Kṛtavīra wanted that cow, and, inspite of Reṇuka's protests, carried her off. In the fight that ensued between Kṛtavīra and Jamadagni, Sahasrabāhu killed Jamadagni. His sons Indrarāma and Śvetarāma were away, but when they returned and learnt from their mother that their father was killed by Sahasrabāhu and his son Kṛtavīra, and that their cow was carried off by them, they got angry. Reṇukā taught them the Paraśumantra. They then went to Sāketa, killed Sahasrabāhu and Kṛtavīra, and all other members of the Kṣatriya race twentyone times. After the extermination of all living Kṣatriyas they gave the earth to Brahmins who thereafter ruled over it. Vicitramati, the queen of Sahasrabāhu, was pregnant at this time, and bore in her womb the soul of a former king Bhūpala by name, who was destined to be a cakravartin. She ran for life into the forest, and was offered shelter by a sage named Śāṇḍilya. There in his hermitage she gave birth to a son who was named Subhauma.

LXVI. Subhauma passed his childhood in the hermitage of the sage Śāṇḍilya in the forest, and grew to be a strong and powerful youth. One day he asked his mother how it was that he did not see his father and pressed her to tell him his whereabouts. Thereupon Vicitramati narrated to him how his father Sahasrabāhu was killed by Paraśurāma.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

In the meanwhile an astrologer came to the house of Paraśurāma who asked the astrologer how he would meet his death. The astrologer told him that he at whose glance the plate filled with the teeth of his enemies (Sahasrabāhu and Kṛtavīra) would turn into a plate of rice, would be his killer. Thereupon Paraśurāma established a dānaśālā in the city where Brahmins were served meals free and were shown the plate of teeth. Subhauma was asked to visit the dānaśālā to see if he was the person at whose hands Paraśurāma was to meet his death. Subhauma thereupon went to the dānaśālā, saw the plate when it turned into a plate of cooked rice. Immediately the keepers attacked young Subhauma who was unarmed. But the plate itself turned into a discus with which he killed them and also Paraśurāma. He thereafter became a cakravartin.

King Subhauma was once served a ciñcā fruit by his cook. He got angry with the cook and killed him for this offence. The cook was born as a Jyotiṣka god and assuming the form of a merchant offered the king some nice fruits. The king liked them very much and pressed the merchant to have more of them. The merchant said that gods gave him the fruits which were exhausted. As the king persisted in his demand, the merchant told him that the king would obtain them if he would accompany him to an island. The king agreed, went with merchant who placed him on a rock and killed him. Subhauma after death went to hell.

In the regime of Ara, there appeared the sixth set of Baladeva etc., whose names were Nandiṣeṇa. Puṇḍarīka and Niśumbha. For details see Tables.

LXVII. For the life of Malli, see Tables.

During his regime there appeared the ninth cakravartin, Padma by name. For details of his life see Tables.

It is in the regime of Malli that there appeared the seventh set of Baladeva etc., whose names were Nandimitra, Datta and Bali. For details see Tables.

THE APPENDICES

The monotony with which the traditional details of the lives of Sixty-three Great Men of Jain Mythology are given and a hint by Vimalasūri in his Paumacariya quoted on page xi above suggested to me the idea of tabulating the information under suitable heads. I have therefore appended to this Volume Five Tables. Appendix I gives the iconographical information about the images of the Tīrthaṃkaras according to the school of the Digambaras. I have taken this Appendix from Mr. G. H. Khare's Mūrtivijñāna, a very valuable book in Marathi on Iconography. I have made slight modifications in Mr. Khare's Table so that the information in my Table should agree with the same as supplied in the works of Puṣpadanta and Guṇabhadra. Appendix II gives details about the Tīrthaṃkaras such as their previous lives, place of birth, parents etc. Appendix III supplies the number of Gaṇadharas of different Tīrthaṃkaras. Appendix IV supplies some information about the Twelve Cakravartins or sovereign rulers of the Jain Mythology. Appendix V gives information about the eight out of nine sets of Baladevas,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Vāsudevas and Prati-Vāsudevas. The sources of my information are of course the Ādipurāṇa of Jinasena, the Uttarapurāṇa Guṇabhadra and the Mahāpurāṇa of Puṣpadanta, which works, I hope, represent one of the best, if not the best, of the Digambara tradition. At one or two places I used Śvetāmbara sources as my texts failed to give, or I failed to trace therein the material. I shall be greatly obliged to scholars if they bring to my notice inaccuracies or deficiencies in them which I shall most thankfully consider.

Nowrosjee Wadia College, Poona }
August 1940 }

P. L. Vaidya

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूमिका

पुष्पदन्तके महापुराणकी पहली जिल्दमें, कुल एक सौ दो सन्धियोंमें-से सैंतीस सन्धियाँ हैं, जो १९३७ में, ग्रन्थमालाके न्यासधारियोंके सदय संरक्षणमें, माणिकचन्द ग्रन्थमाला बम्बईके ३७वें क्रमांकके रूपमें प्रकाशित हुई थीं। अब मैं दूसरी जिल्द, जिसमें अगली तैंतालीस सन्धियाँ हैं उसी ग्रन्थमालाके ग्रन्थ क्रमांक इकतालीसवेंके रूपमें प्रकाशित कर रहा हूँ, वह भी, उक्त न्यासधारियों और बम्बई विश्वविद्यालयके संरक्षणमें। मैं सोचता हूँ कि अबसे एक सालके भीतर महापुराणकी तीसरी और अन्तिम जिल्द प्रकाशित कर दी जाये।

यह मेरा सुखद कर्तव्य है कि मैं उन सबके बारेमें सोचूँ कि जिन्होंने इस दूसरी जिल्दके प्रकाशनमें मेरी सहायता की। सबसे पहले मैं माणिकचन्द दिगम्बर ग्रन्थमालाके कार्यकारी न्यासधारी श्री ठाकुरदास भगवानदास जवेरीको धन्यवाद देना चाहूँगा कि जिन्होंने ग्रन्थमालाकी धनराशि कम होते हुए भी, इसके प्रकाशनमें आर्थिक सहायता दी। ग्रन्थमालाके मन्त्री, पण्डित नाथूराम प्रेमी और हीरालाल जैन, प्रोफेसर किंग एडवर्ड कॉलेज अमरावतीके प्रति मैं अपनी विशेष हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, पहली जिल्दके प्रकाशनके समय 'माला'की धनराशि लगभग समाप्त हो चुकी थी, और डर था कि शायद मुझे तीसरी जिल्दका, जो अधूरी है, काम छोड़ना पड़ेगा, परन्तु इन विद्वानोंने धन प्राप्त करनेके लिए आकाश-पाताल एक कर दिया, कि जो इसके प्रकाशनमें लगता। विशेषरूपसे मैं प्रोफेसर हीरालाल जैनको धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने मेरे उपयोगके लिए उत्तरपुराणकी पाण्डुलिपि (जिसे आलोचनात्मक सामग्रीमें 'ए' प्रति कहा गया है।) और मास्टर मोतीलाल संघवी जैनके सन्मति पुस्तकालयसे, प्रभाचन्द्रके टिप्पण उपलब्ध कराये, उन्होंने कृपाकर तबतकके लिए मेरे अधिकारमें उसे दे दिया कि जबतक मैं मिलानके लिए उनका उपयोग करना चाहूँ। मैं मास्टर मोतीलालको धन्यवाद देता हूँ उनकी इस उदारताके लिए। श्री आर. जी. मराठे, एम. ए. ने जो मेरे भूतपूर्व शिष्य और इस समय विलिंगडन कॉलेज सांगलीमें अर्द्धमागधीके प्रोफेसर हैं, इस जिल्दके मिलानकार्यमें मेरी मदद की। उन्होंने जो सहायता की, उसके लिए वे धन्यवादके पात्र हैं। न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस बम्बईके श्री देसाई और उनके प्रूफरीडरोंके, इच्छासे काम करनेवाले स्टाफको मैं नहीं भूल सकता, कि जो इसकी शानदार साज-सज्जा और इसके निर्दोष प्रकाशनके लिए उत्तरदायी हैं। मुझे इस बातका उल्लेख विशेष रूपसे करना है कि इस जिल्दके अन्तमें जो ग़लतियोंकी सूची है वह उनकी उपेक्षाका परिणाम नहीं है, बल्कि वह उनका मेरी दृष्टिसे ओझल हो जानेका परिणाम है।

अन्तमें सम्पादक और प्रकाशक, विश्वविद्यालय बम्बईके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं, जिसने प्रतीक रूपमें ६५७) रु. मूलभूत सहायता की।

नार्वस वाडिया कॉलेज
अगस्त : १९४०

—पी. एल. वैद्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिचयात्मिका भूमिका

आलोचनात्मक सामग्री

पुष्पदन्तका 'महापुराण' अथवा त्रिषष्टिपुरुषगुणालंकार, जो इस जिल्दमें है, के., ए. और पी. पाण्डुलिपियोंपर आधारित है। इनका पूर्णरूपसे मिलान किया गया है। कभी-कभी पाठोंको निश्चित करनेके लिए, प्रभाचन्द्रके टिप्पणसे सहायता ली गयी है, मैं नीचे इस सामग्रीका सम्पूर्ण विवरण दे रहा हूँ।

१. 'के' इस पाण्डुलिपिका मेरी पहली जिल्दके ७-८ पृष्ठोंपर पूरा विवरण है। उत्तरपुराणका हिस्सा पत्र क्रमांक २८९ से प्रारम्भ होता है, चूँकि आदिपुराणके दो पाठोंकी तुलनामें यह पाण्डुलिपि निश्चित रूपसे पुरानी है, अतः इस जिल्दके पाठोंकी रचनामें मैं इसपर 'निर्भर' रहा हूँ। यह खेदकी बात है कि आदिपुराणकी 'जी' पाण्डुलिपिसे मिलती-जुलती पाण्डुलिपि इस जिल्दके लिए प्राप्त नहीं की जा सकी। मैं यहाँ यह कह सकता हूँ कि उत्तरपुराणकी जो पाण्डुलिपियाँ मुझे ज्ञात हैं, बहुत थोड़ी हैं, आदिपुराणकी पाण्डुलिपियोंकी तुलनामें।

२. 'ए' यह पाण्डुलिपि मुझे प्रोफेसर हीरालाल जैन, किंग एडवर्ड कॉलेज अमरावतीने, मास्टर मोतीलाल संघवी जैन सन्मति पुस्तकालय जयपुरसे उपलब्ध करायी। इसमें ४२३ पन्ने हैं, जो १२ इंच लम्बे और ५ इंच चौड़े हैं। प्रत्येक पृष्ठपर ११ पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्तिमें लगभग ३६ अक्षर हैं। इस पाण्डुलिपिमें अपने मूलरूपमें वही पाठ हैं, जो 'पी' में हैं, परन्तु फिर भी किसी दूसरी पाण्डुलिपिके आधारपर पाठोंमें सुधार किया गया है, परन्तु वह मुझे उपलब्ध नहीं, इसका परिणाम यह है कि जो विभिन्न पाठ अंकित किये गये हैं वे संशोधित पाठोंके आधारपर हैं। आगे यह पाण्डुलिपि, (a) मूल पाण्डुलिपिके पन्नोंसे बनी है कि जिसके कुछ पन्ने खो गये हैं, और (b) कुछ उन पन्नोंसे बनी है, जो भिन्न-भिन्न हाथोंसे लिखित नये पन्नोंसे बनी है, जो खोये हुए पन्नोंके स्थानपर जोड़े गये हैं। मेरा यह अनुमान, ३८३-३८४ के पत्रांकके सन्दर्भसे समर्थित है जिसमें आधा पृष्ठ खाली है कि जिससे मैटर मूलभागके अगले पृष्ठ ३८५ के अक्षरसे प्रारम्भ किया जा सके। इस प्रकार जोड़े गये पृष्ठोंमें प्रति पृष्ठपर नौ पंक्तियाँ हैं, प्रत्येक पंक्तिमें लगभग ३८ अक्षर हैं। इस पाण्डुलिपिके पाठ, 'के और पी' प्रतियोंके पाठों'से भिन्न हैं, यह इस तथ्यसे स्पष्ट है कि इसमें ४६,४७,४८ (पहली जिल्दकी भूमिका पृ. २७ देखिए) प्रशस्तिछेद हैं, जो उत्तरपुराणकी किसी भी पाण्डुलिपिसे नहीं मिलते। यह पाण्डुलिपि इस प्रकार प्रारम्भ होती है : ओं नमः वीतरागाय, बभहो बंभालयसामिहो; और अन्त इस प्रकार है : 'इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरुसगुणालंकारे महाकइपुष्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए, महाकव्वे दुउत्तरसयमो परिच्छेओ समत्तो। संधि १०२। इति उत्तरपुराण समाप्ता। शुभमस्तु। कल्याणमस्तु। संवत् १६१५ वर्षे, माघादि ६ शुक्रवासरे उत्तरपुराणं समर्सं। बाईहठो पठनार्थं ज्ञानावरणी कम्म क्षयार्थं ग्रंथ संख्या ॥१२०००॥

यद्यपि, यह अन्तिम पृष्ठ मूल पाण्डुलिपिका मूल पृष्ठ नहीं है, बल्कि नया लिखा गया है। इस पुष्पिकाके अनुसार पाण्डुलिपिकी तिथि माघकी छठ है, वि. संवत् १६१५ की, जो १५५८, ईसवीके लगभग है।

(पी) दक्खन कालेजके संग्रहकी इस पाण्डुलिपिका क्रमांक ११०६–१८८४–८७ है, जो अब भाण्डारकर संस्थान पूनामें जमा है। इसमें ६८१ पन्ने हैं, जो ११ + ४½ इंच हैं, प्रत्येकमें आठ पंक्तियाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और प्रत्येक पंक्तिमें ३३ अक्षर हैं। इसकी तिथि भाद्रपदकी पूर्णिमा है (अगस्त–सितम्बर); वि. स. १६३०, ई. १५७३ के लगभग। इस पाण्डुलिपिका अन्तिम पृष्ठ क्षतिग्रस्त है और इसलिए फिरसे लिखा गया, आषाढ़ शुक्ल छठीको (जुलाई) वि. सं. १९३४. ई. स. १८७७ के लगभग। इसमें पार्श्वभागमें संक्षिप्त टीका है। यह इस प्रकार प्रारम्भ होता है; ओं नमः वीतरागाय। बमहो। बंभालयसमियहो। मूल पृष्ठका अन्त इस प्रकार है इय महापुराणे—दुद्दत्तरसमो परिच्छेओ समत्तो। दूसरे रूपमें पाठ इस प्रकार है : संवत् १६३० वर्षे भाद्रपदमासे शुक्लपक्षे पूर्णिमातिथौ, के (वि वासरे उत्त), रा भाद्रपदा नक्षत्रे, नेमिनाथ चैत्यालये, श्रीमूलसंघे—बलात्कार छे कुंदकुंदान्वये—स्यापन्न पृष्ठका अन्त इस प्रकार होता है। बलदेवदास टोंग्याका कारज, मीती अषाढ़ सुदी ६ समत १९३४ का सालम, श्री धीया मंडीका मंदिर पंचाइतो मंदरने छडायो ॥ छ ॥ छ। छ ॥ इन बलदेवदासके पास क्षतिग्रस्त पन्ना दो हिस्सोंमें था, जिसका पहला हिस्सा, अभी भी, मूल पाण्डुलिपिके साथ संस्थानमें सुरक्षित है; मूल पृष्ठपर १६३० अंकित है, और मूल पृष्ठपर पट्टावलीवाला हिस्सा, किसी दूसरे हाथसे लिखा हुआ प्रतीत होता है।

उक्त तीन पाण्डुलिपियोंके सम्पूर्ण मिलानके अतिरिक्त प्रभाचन्द्रके टिप्पणका पूरा उपयोग किया गया है। इसकी पाण्डुलिपि, प्रोफेसर हीरालाल जैन ने, श्री मोतीलाल संघी जैन, जयपुरसे प्राप्त करायी। टिप्पणकी इस पाण्डुलिपिमें ५७ पृष्ठ हैं। जो लम्बाई-चौड़ाईमें १२×५ इंच हैं; प्रत्येक पृष्ठमें १३ पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्तिमें ३१ अक्षर हैं। यह प्रारम्भ होता है—ओं नमः सिद्धेभ्यः, बंभहो परमात्मनो। अन्त इस प्रकार होता है—श्रीविक्रमादित्य संवत्सरे वर्षाणामशीत्यधिक सहस्रे, महापुराण-विषम-पद विवरणं सागरसेन सैद्धान्तान् परिज्ञाय, मूल टिप्पणकां चालोक्य कृतमिदं समुच्चयटिप्पणं। अज्ञपातभीतेन श्रीमद्बलात्कार गण श्रीसंघाचार्य सत्कवि शिष्येण श्रीचन्द्रमुनिना निजदोर्दण्डाभिभूतरिपुराज्यविजयिनः श्रीभोजदेवस्य ॥१०२॥ इति उत्तर पुराण टिप्पणकं प्रभाचन्द्राचार्यविरचितं समाप्तं छे ॥ अथ संवत्सरेऽस्मिन् श्रीनृपविक्रमादित्यगताब्दा संवत् १५७५ वर्षे भाद्रवा सुदि। बुद्धि दिने। कुरुजांगल देसे। सुलितान सिकन्दर पुत्र सुलिताना-ब्राहीम सुरताज प्रवर्तमाने श्रीकाष्ठासंघे माथुरान्वये पुष्करगणे भट्टारक श्रीगुणभद्रसूरिदेवाः। तदाम्नाये जैसवाल्ल चौ. टोडरमल्लु। इदं उत्तर पुराण टीका लिखापितं। सुभं भवतु। मांगल्यं ददाति, लेखक-पाठकयोः।

ओम् सिद्धोंको नमस्कार, ब्रह्म और परमात्माको नमस्कार। श्री विक्रम संवत्के एक हजार अस्सी अधिक होने पर, महापुराणके विषम पदोंका विवरण, सागरसेन सैद्धान्तसे (?) को ज्ञातकर और मूल-टिप्पणियाँ देखकर, यह समूचा टिप्पण किया गया। अज्ञपात भीत श्रीमत् बलात्कार गणके श्रीसंघाचार्य सत्कवि शिष्य चन्द्रमुनिने, अपने बाहुदण्डसे अभिभूत शत्रुके राज्यको जीतनेवाले श्रीभोजदेवके। प्रभाचन्द्राचार्य द्वारा विरचित उत्तरपुराण टिप्पण समाप्त हुआ। अथ इस संवत्सर नृप विक्रमादित्य गत १५७५ वर्ष भादों सुदी, बुधवार। कुरुजांगल देशमें सुल्तान सिकन्दरके पुत्र सुल्तान इब्राहीमके द्वारा सुराज्य स्थापित होने पर, श्रीकाष्ठासंघ, माथुरान्वय, पुष्करगण। भट्टारक श्रीगुणभद्र सूरीदेव, उनके आम्नायमें जैसवाल चौ. टोडरमल। यह उत्तरपुराण टीका लिखवाई। शुभ हो। मांगल्य देता है—लेखक और पाठकको।

इस पाण्डुलिपिकी पुष्पिका कुछ दिलचस्प समस्याएँ खड़ी करती हैं ? जिनका मैंने प्रथम जिल्दके पृ. छह पर विस्तारसे विचार किया है। इसलिए यहाँ उनका फिरसे कथन और परीक्षण जरूरी नहीं है। मुझे यहाँ केवल यह कहना जरूरी है कि मैंने 'टी' का पूरा उपयोग किया है, और के. और पी. के हाशियों पर अंकित टीकाओंका भी, पाद-टिप्पणियोंकी रचनामें।

उत्तर पुराणकी एक और पाण्डुलिपि मुझे ज्ञात है। यह कारंजा (बरार) के बलात्कार गण जैन मन्दिरमें सुरक्षित है। सी. पी. एण्ड बरारके संस्कृत-प्राकृत कैटलागमें इसका क्रमांक ७०२९ है। यह क्रमांक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्व. रायबहादुर हीरालालने दिया है। इस पाण्डुलिपिकी तिथि, संवत् १६०६, मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष अष्टमी, जो १५४९ ई. है। १९२७–१९२९ में मैंने व्यक्तिगत रूपसे कारंजा जाकर इस पाण्डुलिपिका परीक्षण किया है, और जाँचके तौर पर कुछ मिलान किया है। मुझे मन्दिरके न्यासधारियोंने यह वचन दिया था पाण्डुलिपि मुझे उधार दे दी जायेगी। लेकिन जब मुझे वास्तविक रूपसे इसकी जरूरत पड़ी, तो मैं न्यासधारियोंकी विचित्र मनोवृत्तिके कारण उसे प्राप्त नहीं कर सका। अपने जाँच मिलानसे, लगता है कि यह पाण्डुलिपि 'पी' पाण्डुलिपिके बहुत निकट है, जिसका कि इस संस्करणमें पूरा मिलान किया गया है।

इस जिल्दमें, मैंने अपने मूल पाठकी रचना ऊपर लिखित सामग्रीके आधारपर की है। ऐसे करते हुए मैं 'के' में सुरक्षित पाठोंपर अधिकतर निर्भर रहा हूँ जो उत्तरपुराणकी तीनों पाण्डुलिपियोंमें सबसे पुरानी है।

विषयसामग्रीकी संक्षेपिका

२. महापुराणकी इस दूसरी जिल्दमें महापुराण महाकाव्यकी ३७ से ८०—कुल चवालीस सन्धियाँ हैं, और बीस तीर्थंकरोंकी जीवनियोंका वर्णन करती हैं। अजितनाथसे प्रारम्भ होकर नमिनाथ तक, जो २१वें तीर्थकर हैं। नौमें-से आठ बलदेवों, वासुदेवों और प्रतिवासुदेवोंका वर्णन है। और बारह चक्रवर्तियोंमें-से दस चक्रवर्तियोंका, सगरसे लेकर जयसेन तक। इन जीवनियोंके वर्णनमें कविने परम्परासे प्राप्त सूचनाओं-से काम लिया है, वह अधिकतर गुणभद्रके संस्कृत उत्तरपुराणसे प्रभावित है, ऐसा प्रतीत होता है कि इन महापुरुषोंकी जीवनियोंका विस्तार, पुराने साधुओंने वर्गीकृत कर दिया था। परन्तु विषयवस्तुका उपयोग करते हुए व्यक्तिगत रूपसे कवि, विस्तृत वर्णनमें अपनी काव्य-प्रतिभाके उपयोगमें स्वतन्त्र थे। विमलसूरिने 'पउमचरिउ'में कहा है—

'नामावलिय निबद्धं आयरियपरम्परागयं सव्वं।
वोच्छामि पउमचरियं अहाणुपुव्वि समासेण॥

ऐसा लगता है कि यद्यपि, जैनोंके दोनों सम्प्रदायोंमें जानकारी अधिकतर वर्गीकृत और तालिकाबद्ध रूपमें परम्परासे प्राप्त है, और विषयवस्तुमें काफी समानता है। मैंने स्वयं कुछ तालिकाएँ बनायी हैं और उन्हें इस जिल्दके परिशिष्टमें दिया गया है। अब मैं सन्धियोंका संक्षेप देना शुरू करता हूँ कि जहाँ सन्धियोंका संक्षेप तालिकाके रूपमें देना सम्भव नहीं है।

XXXVIII—कवि प्रारम्भमें पाँच परमेष्ठियोंकी वन्दना करता है और दूसरे तीर्थंकर, अजितनाथ की जीवनीका वर्णन करते हुए, पाठकोंको काव्यरचना जारी रखनेका आश्वासन देता है। प्रारम्भ करनेके पहले, वह कहता है कि कुछ कारणोंसे उसका मन उदास था और इसलिए उसने कुछ समयके लिए काव्य रचना बन्द कर दी थी। एक दिन विद्याकी देवी सरस्वती उसके सामने स्वप्नमें प्रकट हुईं और बोलीं, 'तुम अर्हत्को नमस्कार करो। कवि जाग पड़ा पर उसे कोई भी दिखाई नहीं दिया। संकटके इस क्षणमें आश्रय-दाता भरत उसके घर आया और बोला कि क्या मैंने उसके प्रति कोई अपराध किया है कि जिसके कारण वह काव्यरचना जारी नहीं रख सका। भरतने उसे स्मरण दिलाया कि जीवन क्षणभंगुर है, और उसे अपनी काव्यप्रतिभाका पूरा-पूरा उपयोग करना चाहिए। तब कवि ने आश्रयदाता भरतसे कहा कि मैं अपने मनमें दुःखी हूँ, क्योंकि यह दुनिया दुष्टोंसे भरी है। और इसलिए काव्यरचना जारी रखनेकी रुचि उसमें नहीं है। लेकिन अब वह उसकी प्रार्थनापर फिर काव्यरचना शुरू करेगा क्योंकि वह उसे इनकार नहीं कर सकता। कवि काव्यरचना प्रारम्भ करता है और अजितके जीवनका वर्णन करता है, विस्तारके लिए देखिए टिप्पण और तालिका। परिशिष्ट I, II, III में देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

XXXIX—पृथ्वीपुरमें राजा जयसेन था, पूर्व विदेहमें वत्सावती उसकी राजधानी थी। उसके रतिसेन और धृतिसेन—दो सुन्दर पुत्र थे। रतिसेन जल्दी मर गया। उसके पिता बहुत दुःखी हुए। वह सांसारिक जीवनसे विरक्त हो गये। पुत्रको राज्य देकर, मन्त्री महारुतके साथ मुनि बन गये। जयसेन और महारुत दोनोंने तपस्या की। मृत्युके बाद वे स्वर्गमें महाबल और मणिकेतु नामक देव हुए। इन दो देवोंने आपसमें यह प्रतिज्ञा की कि जो पहले धरतीपर उत्पन्न होगा, उसे दूसरा उच्चधर्मकी शिक्षा देगा। इनमें-से महाबल पहले धरतीपर सगर नामका राजा हुआ साकेतमें। और समयके दौरान चक्रवर्ती राजा बन गया। एक बार चतुर्मुख मुनिको केवलज्ञान प्राप्त हुआ, उस अवसरपर देव वहाँ आये। सगर भी वहाँ मुनिके प्रति अपनी श्रद्धा समर्पित करनेके लिए गया। मणिकेतुने राजा सगरको देखा। उस देव महाबलको दिया गया अपना वचन याद आया। इसपर मणिकेतुने सगरको संसारकी क्षणभंगुरता बतानेका प्रयास किया परन्तु उसने उसकी बातपर ध्यान नहीं दिया। मणिकेतु एक बार, सगरके प्रासादपर उसे समझाने आया, परन्तु इस बार भी वह असफल रहा। ठीक इसी समय, सगरके साठ हजार पुत्र, अपने पिताके पास आये, और उनसे कुछ काम बतानेके लिए कहा—क्योंकि वे आलस्यमें रहनेसे थक चुके हैं। सगरने पहले तो यह कहा कि ऐसा कोई काम करनेके लिए नहीं है। क्योंकि चक्र ने प्रत्येक चीज उनके लिये उपलब्ध कर दी है। लेकिन तब भी पुत्रोंने आग्रह किया—तो सगरने उनसे मन्दराचल जाने और प्रथम चक्रवर्ती भरत द्वारा निर्मित चौबीस तीर्थंकरोंके मन्दिरोंकी सुरक्षाका प्रबन्ध करनेके लिए कहा। तब सगरके साठ हजार पुत्र अपने लक्ष्यपर गये। उन्होंने बहुत बड़ी खाई खोदी मन्दराचलके चारों ओर, और उसे गंगाके पानीसे भर दिया, जो नागलोकमें पहुँच गया। इस अवसरपर मणिकेतुने नई शैलीसे सगरको समझानेकी बात सोची। वह बहुत बड़ा नाग बन गया। उसने सगरके हजारों पुत्रोंको क्रुद्ध दृष्टिसे देखा, और उन्हें भस्मीभूत कर दिया; केवल भीम और भगीरथ जीवित बच सके। सगरको विनाशकी सूचना दी गयी, ब्राह्मणने उसे संसारकी क्षणभंगुरताके बारेमें बताया। सगरने भगीरथको गद्दी दी, और वह अपने पुत्र भीमके साथ मुनि हो गया। यह देखकर मणिकेतु बहुत प्रसन्न हुआ और उसने सगरको बताया कि किस प्रकार उसने विद्याके बलसे उसके पुत्रोंको मृत कर दिया था, तब सब पुत्र जीवित कर दिये गये परन्तु उन्होंने भी अपने पिताका अनुगमन किया—और मुनि बन गये। काफी समय बीतनेपर भगीरथ भी मुनि बन गया, और मुक्त हुआ।

XL, XLI, XLII, XLIII, और XLIV—सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ और सुपार्श्वकी जीवनियोंके लिये, तालिका देखिए।

XLV—यह सन्धि, आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभके पूर्वभवोंका वर्णन करती है। अपने इन पूर्वभवोंमें चन्द्रप्रभुकी आत्मा, पश्चिमी विदेहके सुगन्धदेशमें श्रीषेणराजा और रानी श्रीकान्ताके दम्पतिका पुत्र हुई। पवित्र जीवन बिताते हुए, वह अगले जन्ममें श्रीधरदेव, फिर अजितसेन नामसे, अलकादेशकी अयोध्यानगरीमें राजा अजितंजय और रानी अजितसेना दम्पति की सन्तान (पुत्र) हुई। यह अजितसेन चक्रवर्ती बना। उसका जीवन पवित्र था। अगले जन्ममें अच्युत स्वर्गमें अहमेन्द्र हुई। अगले जन्ममें वह पद्मनाभ, यह पद्मप्रभ-के रूपमें उत्पन्न हुई, कनकप्रभ और कनकमालाके पुत्रके रूपमें, मंगलावती क्षेत्रके वस्तुसंचय नगरमें। अगले जन्ममें उसका जन्म वैजयन्त स्वर्गमें अहमेन्द्रके रूपमें हुआ।

XLVI—चन्द्रप्रभके जीवनके लिए तालिका देखिए।

XLVII—सुविधि तीर्थंकरके जीवनके लिए तालिका देखिए।

XLVIII—दसवें तीर्थंकर शीतल, अपने पूर्व जीवनमें, सुसीमाके राजा पृथ्वीपाल थे। उसकी पत्नीका नाम वसन्तलक्ष्मी था, जो यौवनकी प्राथमिकतामें ही मर गयी। उसकी मृत्युसे प्रभावित हुए राजाने संन्यास ग्रहण कर लिया। अगले जन्ममें वह अरुण स्वर्गमें देव हुआ। अगले जन्ममें वह शीतलके नामसे राजा

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

दृढ़रथ और रानी सुनन्दाका पुत्र हुआ राजभद्र नगरमें। कमलमें मरे हुए भौंरेको देखकर, उसके मनमें सांसारिक जीवनके प्रति घृणा हो गयी, उसने संन्यास ग्रहण कर लिया। तीर्थंकरकी सामान्य जीवन प्रक्रियामें गुजरते हुए उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। उनके निर्वाणके बाद, उपदेश देने और आचरण करने-वालोंके अभावमें जैनधर्मको बुरे दिन देखने पड़े। इस अवसरपर भद्रिलपुण्णमें मेघरथ नामका राजा था। वह उपयुक्त आदमियोंके लिए अपने धनका दान करना चाहता था, उसने मन्त्रियोंसे सलाह माँगी कि सबसे अच्छा दान क्या होगा। मन्त्रीने शास्त्रदानको दानका सर्वश्रेष्ठ रूप बताया। परन्तु राजाको यह सलाह पसन्द नहीं आयी। उसने मुण्डशालायन मन्त्रीसे पूछा, उसने राजासे कहा कि उसे ब्राह्मणोंको हाथी, गाय आदि दानमें देने चाहिए। राजाने सलाह मान ली जिसने केवल ब्राह्मणोंको सम्पन्न बनाया परन्तु उससे अच्छा नहीं हुआ।

IL—श्रेयांसकी जीवनीके लिए तालिका देखिए।

L, LI, LII—ये तीन सन्धियाँ प्रथम बलदेव, वासुदेव और प्रतिवासुदेवका वर्णन करती हैं। श्रेयांसके तीर्थकालमें राजगृहमें राजा वसुभूति और रानी जैनी थे। राजाका विशाखभूति नामका छोटा भाई था, उसकी पत्नीका नाम लक्ष्मणा था। जैनीने वसुनन्दी पुत्रको जन्म दिया और लक्ष्मणाने विशाखनन्दीको। एक दिन राजाने शरद्के बादल आकाशमें विलीन होते हुए देखे, इससे राजाको संसारसे विरक्ति हो गयी। अपने छोटे भाई विशाखभूतिको राज्य देकर उसने दीक्षा ग्रहण कर ली। जब विशाखभूति राजा हुआ, तो विश्वनन्दी युवराज बन गया। एक दिन वह अपने प्रमद-उद्यान नन्दनवनमें गया। वह वहाँ स्त्रियोंके साथ आनन्द कर रहा था, विशाखनन्दीने उसे देख लिया। उसके मनमें उस उद्यानपर अधिकार करनेकी कल्पना आयी। वह अपने पिताके पास गया और उसने वह उद्यान उसे देनेके लिए उनपर दबाव डाला। राजाने ऐसा करना स्वीकार कर लिया। उसने विश्वनन्दीको बुलाया और उससे राज्यका भार लेनेके लिए कहा, उसने आगे बताया कि वह विद्रोह करनेवाली जातियोंके दमनके लिए सीमान्त प्रदेशपर जाना चाहता है। विश्वनन्दीको यह विचार अच्छा नहीं लगा कि उसके चाचा लड़ने जायें, उसने उनसे कहा कि वह खुद इस कार्यके लिए जाना पसन्द करेगा। विशाखभूतिने विश्वनन्दीकी यह बात मान ली। विश्वनन्दी चला गया। विश्वनन्दीकी अनुपस्थितिमें विशाखभूतिने नन्दनवन अपने पुत्र विशाखनन्दीके लिए दे दिया। जब विश्वनन्दी लौटा तो उसने पाया कि उद्यान विशाखनन्दीके अधिकारमें है। विश्वनन्दी अपने चाचा और चचेरे भाईपर क्रुद्ध हो उठा। उसने भाई पर आक्रमण करना चाहा, परन्तु वह वृक्षपर चढ़ गया, विश्वनन्दीने उसे विशाखनन्दी सहित उखाड़ दिया। उसने दोनोंको नष्ट करना चाहा, परन्तु विशाखनन्दी पत्थरके खम्भेपर चढ़ गया, विश्वनन्दीने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। तब विशाखनन्दी अपना जीवन बचानेके लिए भागा। इस बीच विश्वनन्दीको तरस आया कि उसने अपने भाईपर आक्रमण किया, उसने जैनमुनि बननेका निश्चय कर लिया। विशाखभूतिने भी विश्वनन्दीका अनुकरण करनेका निश्चय कर लिया। विशाखनन्दीको गद्दीपर स्थापित कर दिया। वनमें जाकर उसने तप किया। मरनेके बाद महाशुक्र स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। अब विशाखनन्दी एक शक्तिशाली शत्रुसे पराजित होकर राजधानीसे भागकर मथुरा गया और वहाँके राजाका मन्त्री बन गया। एक दिन, मुनि विश्वनन्दी (चचेरे भाई) चर्याके लिए सड़कपर जा रहे थे। हाल ही में ब्यानेवाली जवान गायने उन्हें मार दिया जिससे वह गिर पड़े। महलकी छतसे विशाखनन्दीने यह देखा और उसने मुनिका अपमान किया। मुनि इसे सहन नहीं कर सके, उन्होंने संकल्प किया कि अगले जन्ममें मैं इस अपमानका बदला लूँगा। मरकर वह महाशुक्र स्वर्गमें देव हुए जहाँ उसके चाचा विशाखभूति थे। कुछ समय बाद विशाखनन्दी घृणासे अभिभूत हो उठा। उसने तप किया और वह भी महाशुक्र स्वर्गमें देव हुआ। अलका नगरीमें राजा मयूरग्रीव और उसकी पत्नी नीलांजनप्रभा रहती थी। अगले जन्ममें विशाखनन्दी उसका पुत्र हुआ—अश्वग्रीवके नाम से। अपने दुश्मनोंका सफाया कर, वह प्रतिवासुदेव तीन खण्ड धरतीका सम्राट्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्धचक्रवर्ती बन बैठा। पोदनपुरके राजाकी दो रानियाँ थीं—जयावती और मृगावती। जयावतीने जिस पुत्रको जन्म दिया, उसका नाम विजय था जो कि पूर्वजन्ममें विशाखभूति था। यह विजय, जैन पुराणविद्याके प्रथम बलदेव थे, उनका रंग गोरा था। मृगावतीने जिस बालकको जन्म दिया, उसका नाम त्रिपृष्ठ था जो कि अपने पूर्वजन्ममें विशाखनन्दी था। यह पहले वासुदेव थे, और इनका वर्ण काला था। ये दोनों सौतेले भाई एक दूसरेके प्रति प्रगाढ़ प्रेम रखते थे।

LI एक बार राजा प्रजापतिके पास यह समाचार आया कि एक भयंकर सिंह प्रजामें आतंक मचा रहा है। प्रजाने उससे इस अनर्थको हटानेकी प्रार्थना की। तत्पश्चात् राजा स्वयं जाकर सिंहको मारनेके लिए तैयार हो गया, जब कि विजयने उससे प्रार्थना की कि उसे इस कार्यके लिए जाने दिया जाये। पिताने उसे जानेकी अनुमति दे दी, उसका छोटा भाई भी उसके पीछे गया। दोनों सिंहकी गुफामें पहुँचे, योद्धाओंके शोरगुल और चिल्लाहटसे भड़ककर सिंह बाहर आया। वह विजयपर झपटनेवाला था कि त्रिपृष्ठने अपने दोनों बाहुओंमें सिंहके पंजे पकड़ लिये और उसके मुँहपर आघात किया। सिंह मरकर गिर गया।

एक दिन द्वारपाल पहुँचा और राजासे निवेदन करने लगा—कि द्वारपर एक विद्याधर है जो आपसे मिलना चाहता है। उसे राजाके सम्मुख उपस्थित किया गया। विद्याधरने राजा प्रजापतिसे कहा कि उसका नाम इन्द्र है और वह राजा ज्वलनजटीका दूत बनकर आया है। वह राजा और विजय तथा त्रिपृष्ठको विद्याधर-क्षेत्रके लिए निमन्त्रित करने आया है ताकि त्रिपृष्ठ पत्थरकी शिला उठाये, जिसका नाम कोटिशिला है, तथा अश्वग्रीव को मारे और उसकी कन्या स्वयंप्रभासे शादी करे, वह तीनखण्ड धरतीका राजा बने और राजा ज्वलनजटीको विजयार्ध पर्वतकी दोनों श्रेणियोंका राजा बनाये। प्रजापतिने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। वह विद्याधर क्षेत्रमें गया। ज्वलनजटीने उनका अच्छी तरह स्वागत किया। उससे अपने पुत्र अर्ककीर्तिसे परिचय कराया। बातचीतके दौरान यह तय किया गया कि सबसे पहले त्रिपृष्ठ शिला उठाये जिससे उन्हें विश्वास हो सके कि वह अश्वग्रीवको मार सकता है। तत्पश्चात् वे सब उस जंगलमें गये, जहाँ कोटिशिला रखी हुई थी। उन्होंने त्रिपृष्ठसे शिला उठानेके लिए कहा। उसने आसानीसे उसे उठा दिया। ज्वलनजटी और दूसरोंने इतनी शक्तिके लिए उसकी प्रशंसा की। उसके बाद वे सब पोदनपुर लौट आये और उन्होंने त्रिपृष्ठ और स्वयंप्रभाके विवाहका उत्सव मनाया। विवाहका समाचार अश्वग्रीवके कानोंमें पड़ा, वह ज्वलनजटीके कार्यसे कुद्ध गया, कि उसने अपनी कन्याका विवाह जातिके बाहर किया—अर्थात् उसने एक मनुष्य त्रिपृष्ठको अपनी कन्या विवाह दी, बजाय विद्याधर अश्वग्रीवके। उसने मन्त्रियोंकी रायके विरुद्ध ज्वलनजटी और प्रजापतिपर चढ़ाई करनेके लिए कूच किया।

LII—चरोंने राजाको सेना और अश्वग्रीवके पोदनपुरके प्रवेशद्वार तक पहुँचनेकी सूचना दी। इसपर प्रजापतिने ज्वलनजटीसे परामर्श किया कि उन्हें किस प्रकार स्थितिका सामना करना चाहिए, जबकि विजयने कहा—मुझे विश्वास है कि त्रिपृष्ठ निश्चित रूपसे अश्वग्रीवको मार डालेगा। लड़ाई शुरू होनेके पहले अश्वग्रीवने दूत भेजा, त्रिपृष्ठके पास यह जाननेके लिए कि क्या वह अश्वग्रीवके साथ सन्धि करने और स्वयंप्रभा वापस करनेके लिए तैयार है। त्रिपृष्ठने प्रस्ताव ठुकरा दिया। युद्ध शुरू हो गया। देवीने त्रिपृष्ठको सारंग नामका धनुष, पांचजन्य नामका शंख, कौस्तुभ मणि और कुमुदनी गदा और विजयके लिए हल, मूसल और गदा दिया। सेनाएँ भिड़ों और उनमें भयंकर युद्ध हुआ। युद्धके दौरान अश्वग्रीवने अपना चक्र त्रिपृष्ठपर फेंका, पर वह उनकी हानि नहीं कर सका, वह उसके हाथ में स्थित हो गया। उसने तब इसी चक्रका उपयोग अश्वग्रीवके विरुद्ध किया जिससे वह मारा गया। उसकी मृत्युके बाद त्रिपृष्ठ अर्धचक्रवर्ती बन गया। उसके शीघ्र बाद ज्वलनजटी अपनी राजधानी रथनूपुर नगर आ गया और लम्बे अरसे तक विजयार्ध पर्वतकी दोनों श्रेणियोंके ऊपर प्रभुसत्ताका भोग करता रहा, फिर साधु हो गया। राजा प्रजापतिने भी ऐसा ही किया। अब त्रिपृष्ठ सदैव आनन्दसे अतृप्त रहा। वह मरकर सातवें नरकमें गया। उसकी मृत्युके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाद विजयने अपनी राजधानी श्रीविजय को सौंप दी और तपस्या कर मुक्ति प्राप्त की। स्वयंप्रभाने भी यही किया।

LIII—वासुपूज्यकी जीवनीके लिए तालिका देखिए।

LIV—यह सन्धि बलदेव, वासुदेव और प्रतिवासुदेवके दूसरे समूहका वर्णन करती है। विन्ध्यपुरमें विन्ध्यशक्ति राज्य करता था। कनकपुरका राजा सुषेण उसका मित्र था। सुषेणके पास गुणमंजरी नामकी सुन्दर वेश्या थी। विन्ध्यशक्तिने उसके पास दूत भेजा कि वेश्या उसे दे दी जाये। सुषेणने प्रार्थना ठुकरा दी। दोनों मित्रोंमें युद्ध छिड़ गया। सुषेण पराजित हुआ। मित्रकी पराजय सुनकर महापुरके वायुरथ सांसारिक जीवनसे विरक्त हो गया। वह मुनि बन गया। सुषेणने भी मुनिव्रतकी दीक्षा ले ली। उसने मरते समय अपने वैरका बदला लेनेका निदान बाँधा। वायुरथ और सुषेण दोनों प्राणत स्वर्गमें देव हुए। राजा विन्ध्यशक्ति भी किसी एक स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। अगले जन्ममें विन्ध्यशक्ति भोगवर्धनपुरके राजा श्रीधर और रानी श्रीमतीका पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम तारक था। समयकी अवधिमें वह अर्धचक्रवर्ती बन गया। वायुरथ और सुषेण राजा ब्रह्मा एवं रानी सुभद्रा और उषादेवीके पुत्र हुए। अचल और द्विपृष्ठ उनके नाम थे जो बलदेव और वासुदेव थे। उनके पास श्रेष्ठ हाथी था। तारक उस हाथीको अपने पास रखना चाहता था और उसने द्विपृष्ठके पास हाथी देनेके लिए दूत भेजा। अचलने मना कर दिया। तारक और द्विपृष्ठमें संघर्ष हुआ, जिसमें तारक मारा गया। द्विपृष्ठ अर्धचक्रवर्ती बन गया। मृत्युके बाद तारक और द्विपृष्ठ नरक गये। अपने भाईकी मृत्यु देखकर अचलने जैन-दीक्षा ग्रहण कर ली और उसने संसारसे मुक्ति प्राप्त कर ली।

LV—तेरहवें तीर्थंकर विमलकी जीवनीके लिए तालिका देखिए।

LVI—पश्चिमी विदेहके श्रीपुरमें राजा नन्दिमित्र था। एक दिन उसे संसारकी क्षण-भंगुरताका ज्ञान हो गया, सुखभोग छोड़कर उसने दीक्षा ग्रहण कर ली। मृत्युके अनन्तर वह अनुत्तर विमानमें देव हुआ। श्रावस्तीमें सुकेतु नामका राजा था। उसी नगरमें दूसरा राजा बली था। वे एक दिन जुआ खेले जिसमें सुकेतु सब कुछ हार गया। निराशामें वह मुनि बन गया। परन्तु तपस्या करते हुए उसने यह निदान बाँधा कि उसे बलीसे अगले जन्ममें बदला लेना चाहिए। मृत्युके बाद सुकेतु लान्तव स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। बली भी स्वर्गमें देव उत्पन्न हुआ। अपने अगले जन्मोंमें बली रत्नपुरके राजा समरकेशरी और रानी सुन्दरीका पुत्र हुआ। उसको मधु कहा गया। वह प्रतिवासुदेव और अर्धचक्रवर्ती था। नन्दिमित्र और सुकेतु द्वारावतीके राजा रुद्रकी पत्नियों सुभद्रा और पृथ्वीसे उत्पन्न हुए। उनके नाम थे धर्म (बलदेव) और स्वयम्भू (वासुदेव)। एक दिन स्वयम्भूने जब अपने महलकी छतपर बैठा हुआ था, शहरके बाहर सैनिक-शिविरको ठहरा हुआ देखा। उसने मन्त्रीसे पूछा कि यह सेना किसकी है। मन्त्रीने उससे कहा कि सामन्त शशिसोमने राजा मधुको उपहार भेजा है जिसमें हाथी-घोड़ा आदि हैं। स्वयम्भूने इसकी अनुमति नहीं दी। उसने शशिसोमको हरा दिया और उपहार छीन लिया। यह खबर मधुके कानों तक पहुँची। उसके बाद उसने स्वयम्भूपर हमला बोल दिया। बादमें जो लड़ाई हुई उसमें स्वयम्भू ने मधुका काम तमाम कर दिया। वह अर्धचक्रवर्ती हो गया। राज्यका उपभोग करते हुए स्वयम्भू भी मरकर नरकमें गया। धर्मने मुनिधर्मकी दीक्षा ली और निर्वाण प्राप्त किया।

LVII—यह सन्धि संजयन्त, मेरु और मन्दरकी कहानीका वर्णन करती है। इनमें-से दो बादमें विमलवाहनके गणधर हुए, जो तेरहवें तीर्थंकर थे। दो और आदमी थे जो इस कहानीसे सम्बन्धित हैं—मन्त्री श्रीभूति और व्यापारी भद्रमित्र। इनमें-से श्रीभूति सत्यघोषसे संलग्न है। पहले तीन व्यक्तियोंके सात भवोंका कवि वर्णन करता है जब कि अन्तिम दोके कुछ ही भवोंका वर्णन करता है। इस सन्धिके टिप्पणमें इनकी सूचीपर दृष्टिपात किया गया है जिससे पाठकोंको समझनेमें सुविधा होगी।

[५]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीतशोकनगरमें वैजयन्त नामका राजा था। उसकी रानीका नाम सर्वश्री था। उसने दो पुत्रोंको जन्म दिया—संजयन्त और जयन्त। एक दिन जैन मुनिका प्रवचन सुनकर उन सबने संसारका परित्याग कर दिया। समयके दौरान वैजयन्तने निर्वाण प्राप्त किया। इस अवसरपर जो देव उनके प्रति अपनी श्रद्धा प्रदर्शित करने आये, उनमें नागोंका देव भी था जो अत्यन्त सुन्दर था। जयन्तने यह निदान बाँधा कि अगले जन्ममें उसका वैसा ही सुन्दर शरीर हो जैसा कि नागोंके स्वामीका है। वह नागलोकमें नागोंका देवता हुआ। एक दिन जब संजयन्त प्रतिमाओंकी साधना कर रहा था, विद्युद्दंष्ट्र विद्याधरने उसे देखा, उसे उठाया और पाँच नदियोंके संगमक्षेत्रमें फेंक दिया तथा लोगोंसे कह दिया कि मुनि शैतान है। इसपर लोगोंने मुनिको पीटा, परन्तु वह अविचलित रहे। वह यातनाओंको सहते हुए निर्वाणको प्राप्त हुए। इस अवसरपर जयन्त सहित, जो नागोंका देवता था, सब देव आये। अपने भाईकी स्थिति देखकर नागने लोगोंपर हमला शुरू कर दिया। वे बोले कि हमने इसलिए साधुको विद्याधर विद्युद्दंष्ट्रकी सूचनापर पीटा। तब नागदेवताने विद्याधर विद्युद्दंष्ट्रको पकड़ा, और जब कि पहला दूसरेको समुद्रमें फेंकनेवाला था, आदित्य-प्रभ देवने बीच-बचाव किया और उसने उन सबके पूर्वभवोंका वर्णन किया। सिंहपुरमें वहाँ सिंहसेन नामका राजा था। रामदत्ता उसकी रानी थी। श्रीभूति और सत्यघोष उसके मन्त्री थे। नगरमें भद्रमित्र नामक व्यापारी था, जो पद्मखण्डपुरके सुदत्त और सुमित्राका पुत्र था। यात्रा करते हुए भद्रमित्रको कीमती मणि मिले जिन्हें उसने अश्वघोषके पास धरोहरके रूपमें रख दिया। (बादमें सत्यघोष और श्रीभूतिमें भ्रम है) कुछ समय बाद भद्रमित्रने अश्वघोषसे रत्न लौटानेको कहा, परन्तु उसने रत्नोंकी जानकारीके बारेमें साफ मना कर दिया, यहाँ तक राजाके पूछनेपर भी। भद्रमित्र पागल हो गया और राजमहलके पड़ोसमें एक पेड़पर चढ़कर चिल्लाकर मन्त्रीकी इज्जत घटाने लगा। रानी रामदत्ता मन्त्रीसे चिढ़ गयी और उसने उसके साथ एक चाल चली। उसने सत्यघोषके साथ जुएका खेल खेला जिसमें वह पहचानवाली अँगूठी और पवित्र जनेऊ रानीसे हार गया। उसने अपनी दासीके माध्यमसे मन्त्रीके खजांचीके पास अँगूठी भेजी और उससे रत्न प्राप्त कर लिये। इस बातकी परीक्षाके लिए कि भद्रमित्रने जो कुछ कहा है, वह सत्य है, राजाने उन रत्नोंमें मिला दिये जो भद्रमित्रके थे। वे रत्न भद्रमित्रको दिखाये गये। उसने केवल अपने रत्न उठाये यह कहते हुए कि वे उसके नहीं हैं। तब राजा उसपर प्रसन्न हो गया। राजाने मन्त्रीको सजा दी और वही बर्ताव किया जो एक चोरके साथ किया जाता है। मन्त्रीने इसके लिए राजाके प्रति अपने मनमें गाँठ बाँध ली। अगले जन्ममें वह अगन्धन नाग बना और राजाके खजानेमें खड़े होकर राजाको काट खाया। अगले जन्ममें भद्रमित्र रामदत्ताके पुत्रके रूपमें जन्मा उसका नाम सिंहचन्द्र रखा गया। उसका छोटा भाई पूर्णचन्द्र था। और यह इस विस्तारमें है कि तीनों व्यक्तियोंकी पूर्वभव की जीवनियाँ इस सन्धिके प्रारम्भमें वर्णित की गयी हैं।

LVIII—अनन्तकी जीवनीके लिए (१४वें तीर्थंकर) तालिका देखिए। उनके तीर्थकालमें बलदेव, वासुदेव और प्रतिवासुदेवका चौथा समूह उत्पन्न हुआ। नन्दपुरमें राजा महाबल था। वह मुनि हो गये और मरकर सहस्रार स्वर्गमें उत्पन्न हुए। उस समय पोदनपुरमें राजा वसुसेन राज्य करता था। उसकी रानी नन्दा बहुत सुन्दर थी। उसका मित्र चन्द्रशासन उसके पास रहने आया। उसने नन्दाको देखा, वह उसके प्रेममें पड़ गया और वसुसेनसे कहा कि वह उसे दे दे। उसने ऐसा करनेसे मना कर दिया। परन्तु चन्द्रशासन उसे जबरदस्ती ले गया। इसके बाद वसुसेन मुनि बन गया और मृत्युके बाद उसी स्वर्गमें उत्पन्न हुआ, जिसमें महाबल उत्पन्न हुआ था। चन्द्रशासन अगले जन्ममें वाराणसीके राजा विलास और रानी गुणवतीका पुत्र हुआ। महाबल और वसुसेन, राजा सोमप्रभकी रानियों (जयावती और सीता) से क्रमशः उत्पन्न हुए और क्रमशः उनके नाम सुप्रभ और पुरुषोत्तम रखे गये। मधुसूदनने उनसे उपहारकी माँग की, और चूँकि उन्होंने ऐसा करनेसे मना कर दिया, इसलिए मधुसूदन और पुरुषोत्तममें संघर्ष हुआ जिसमें मधुसूदन मारा गया। पुरुषोत्तम अर्धचक्रवर्ती बन गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

LIX—पन्द्रहवें तीर्थंकर धर्मनाथकी जीवनीके लिए तालिका देखिए। इनके तीर्थकालमें बलदेव, वासुदेव और प्रतिवासुदेवका पाँचवाँ समूह हुआ। वीतशोकनगरमें नरवृषभ राजा हुआ। उसने तपस्या की और मरकर वह सहस्रार स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। राजगृहमें राजा सुमित्र था। वह राजसिंहसे लड़ाईमें मारा गया। सुमित्रने तपस्या की और मरते समय यह निदान बाँधा कि मैं अगले जन्ममें राजसिंहको पराजित करूँ। मृत्युके बाद वह महेन्द्र स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। राजसिंह अगले जन्ममें हस्तिनापुरका राजा मधुक्रीड़ हुआ। राजा नरवृषभ और सुमित्र राजा सिंहसेनको रानियों विजया और अम्बिकासे उसके पुत्र हुए, उनके नाम सुदर्शन और पुरुषोत्तम थे, जो पाँचवें बलदेव और वासुदेव थे। राजा मधुक्रीड़ने दूत भेजकर सुदर्शनसे कर माँगा जिसे उसने अस्वीकार कर दिया। उनमें युद्ध हुआ। पुरुषोत्तमने मधुक्रीड़को मार डाला और अर्धचक्रवर्ती सम्राट् बन गया। उसी राज्यमें साकेतमें राजा सुमित्र था। उसकी रानी भद्रा थी। उसने एक पुत्रको जन्म दिया, उसका नाम मघवन था। उसने समस्त छह खण्ड धरती जीत ली और जैनपुराण-विद्याके अनुसार तीसरा सार्वभौम चक्रवर्ती सम्राट् बन गया। बहुत समय तक धरतीका उपभोग करनेके बाद उसने संसारका परित्याग कर मोक्ष प्राप्त किया। थोड़े समयके बाद उसी शासनकालमें चौथा चक्रवर्ती हुआ, उसका नाम सनत्कुमार था। वह विनीतपुरके राजा अनन्तवीर्य और रानी महादेवीका पुत्र था। वह अत्यन्त सुन्दर था। इन्द्रके द्वारा प्रेषित दो देव उसका सौन्दर्य देखने आये। उन्होंने राजासे कहा कि कुमारका सौन्दर्य शाश्वत रहेगा यदि उसे बुढ़ापे और मौतने नहीं घेरा। बुढ़ापे और मृत्युका नाम सुनकर सनत्कुमारने संसारका परित्याग कर दिया और निर्वाणलाभ किया।

LX—अमोघजीह्व नामके ब्राह्मणने भविष्यवाणी की कि छह महीने बाद राजा श्रीजीवके सिरपर बिजली गिरेगी, जो वासुदेव त्रिपृष्ठका पुत्र है और उसके सिरपर रत्नोंकी वर्षा होगी। जब ब्राह्मणसे यह पूछा गया कि वह इस प्रकारका भविष्यकथन कैसे कर सकता है तो उसने कहा कि मैंने प्रसिद्ध शिक्षकसे यह विद्या पढ़ी है। एक दिन जब उसने अपनी पत्नीसे भोजनके लिए कहा तो उसने थालीमें खाली कौड़ियाँ परोस दीं, क्योंकि गरीबीके कारण उसके घरमें कुछ और था ही नहीं। पत्नीने उसे झिड़का कि तुम कुछ काम करके धन नहीं कमाते। ठीक इसी समय आगकी चिनगारी उसकी थालीमें गिरी, ठीक इसी समय पानीका घड़ा उसकी पत्नीने उसके सिरपर डाल दिया। यह इस घटनाके कारण था कि ब्राह्मणने यह भविष्यवाणी की थी कि राजाके सिरपर बिजली गिरेगी और उसके सिरपर रत्नोंकी वर्षा होगी। तत्पश्चात् मन्त्रियोंने राजाको सलाह दी कि दैवी विपत्तिको टालनेके लिए कुछ समयके लिए राज्य छोड़ दिया जाये और तबतक के लिए किसी दूसरेको गद्दीपर बैठा दिया जाये। इसके बादकी सन्धि श्रीविजय और अमिततेज विद्याधरके बीच हुई शत्रुता और संघर्षका वर्णन करती है। एक मुनि हस्तक्षेप करते हैं और उन्हें जैनसिद्धान्तोंका उपदेश देते हैं; इसके परिणामस्वरूप वे दोनों दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं।

LXI—अगले जन्ममें श्रीविजय और अमिततेज स्वर्गमें देव हुए, मणिचूल और रविचूलके नामसे। अगले जन्ममें प्रभावती नगरके राजा स्तिमतसागरके रानी वसुन्धरा और अपराजितासे पुत्र हुए। उनके दरबारमें दो सुन्दर नृत्यांगनाएँ थीं, जिनकी विद्याधर राजा दमितारिने माँग की।

LX-LXIII—ये चार सन्धियाँ तीर्थंकर शान्तिनाथ और उनके पूर्वभवोंका, विशेषरूप और खासकर चक्रायुधकी, जीवनी विस्तारसे (LXIII) जिसका टिप्पणमें विस्तार है।

LXIV—कुन्थुकी जीवनीके लिए तालिका देखिए।

LXV—अर्हके जीवनके लिए तालिका देखिए। अर्हके शासनकालमें आठवें चक्रवर्ती सुभौम हुए। सहस्रबाहु नामका राजा था। उसकी पत्नी विचित्रमतीने कृतवीर पुत्रको जन्म दिया। विचित्रमतीकी बहन श्रीमतीका विवाह शतबिन्दुसे हुआ था। उनसे जो पुत्र हुआ उसका नाम जमदग्नि रखा गया। बचपनमें माताकी मृत्युके कारण जमदग्नि तापसमुनि बन गया। शतबिन्दु और उसका मन्त्री हरिशर्मा भी क्रमशः जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और हिन्दू मुनि बन गये। कुछ समयके बाद शतबिन्दु मरकर सौधर्म स्वर्गमें देवता हुआ तथा हरिशर्मा ज्योतिष देव हुआ। वे दोनों जमदग्निकी पवित्रताकी परीक्षा करना चाहते थे। उन्होंने चिड़ी-चिड़ाका रूप धारण कर जमदग्निके बालोंमें घोंसला बना लिया। और कुछ उसके प्रति अपमानजनक बातें करने लगे। वह पक्षियोंपर नाराज हो गये और उन्हें मारनेकी धमकी दी। उन पक्षियोंमें-से एकने कहा कि उसे नहीं मालूम कि वह (जमदग्नि) इसलिए स्वर्ग न पा सका क्योंकि उसके पुत्र नहीं हैं। जमदग्निने इसपर विचार किया और मामाके पास जाकर उसने उसकी कन्यासे विवाह करनेका प्रस्ताव किया। बुढ़ापा होनेसे कन्या उससे विवाह नहीं करना चाहती थी। इसपर क्रुद्ध होकर उसने नगरकी सब कन्याओंको बौना होनेका शाप दे दिया। तबसे उस नगरका नाम कान्यकुब्ज पड़ गया (आधुनिक कन्नौज)। उसे किसी प्रकार मामाकी लड़की मिल गयी, उसका नाम रेणुका (धूलभरी) मिल गयी। उसे केला दिखाकर आकर्षित किया और अपनी गोदमें बैठा लिया। उससे विवाह कर लिया। चूँकि उसने कहा कि वह उसे चाहती थी। समय बीतनेपर उसने दो पुत्रोंको जन्म दिया—इन्द्रराम और श्वेतराम। उसके भाइयोंने उसे दानमें एक गाय दी थी जो सब मनोकामनाएँ पूरी करती थी, और मन्त्र फरशा दिया। रेणुका और जमदग्नि सुखपूर्वक रहते थे। एक दिन राजा सहस्रबाहु अपने पुत्र कृतवीरके साथ मुनिकी कुटियापर आया। रेणुकाने उन्हें राजकीय भोज दिया। पिता-पुत्र भोजनकी श्रेष्ठतासे प्रभावित हुए और उन्होंने पूछा कि मुनिकी पत्नी होते हुए रेणुकाने उनको इतना व्ययसाध्य भोजन कैसे दिया। रेणुका बोली कि उसके भाइयोंने गाय दी है वह मनचाही चीजें देती है। कृतवीरने वह गाय चाही और रेणुकाके विरोधके बावजूद वह उसे ले गया। कृतवीर और जमदग्नि-की जो लड़ाई हुई उसमें सहस्रबाहुने जमदग्निको मार डाला। उसके पुत्र इन्द्रराम और श्वेतराम बाहर थे। जब वे लौटे तो उन्हें अपनी माँसे पता चला कि उनके पिताको सहस्रबाहु और उसके पुत्रने मार डाला है और वे उनकी गाय ले गये हैं। वे क्रुद्ध हुए। रेणुकाने उन्हें परशुमन्त्र पढ़ाया। तब वे साकेत गये और सहस्रबाहु तथा कृतवीर तथा घरके दूसरे सदस्योंकी तथा क्षत्रियजातिकी इक्कीस बार हत्या की। समस्त क्षत्रियोंके विनाशके बाद उन्होंने सारी धरती ब्राह्मणोंको दे दी जिसपर उन्होंने बादमें शासन किया। सहस्रबाहुकी रानी विचित्रमति उस समय गर्भवती थी, उसके गर्भसे पूर्वजन्मकी आत्मा भूपालके नामसे पैदा हुई, जिसकी नियति आगे चक्रवर्ती होनेकी थी। वह जीवनकी सुरक्षाके लिए जंगलमें भाग गयी। शाण्डिल्य मुनिने उसे संरक्षण दिया। उसकी कुटियामें उसने बच्चेको जन्म दिया, जिसका नाम सुभौम रखा गया।

LXVI—सुभौमने अपना बचपन जंगलमें शाण्डिल्य मुनिकी कुटियामें बिताया। वह एक शक्तिशाली दृढ़ युवक बन गया। एक दिन उसने अपनी मांसे पूछा कि उसने अपने पिताको नहीं देखा और उनके बारेमें बतानेके लिए आग्रह किया। तब माँने सारी कहानी सुनायी कि किस प्रकार सहस्रबाहु परशुरामके द्वारा मारे गये। इसी बीच एक ज्योतिषी परशुरामके घर आया और उसने बताया कि उसकी मृत्यु किस प्रकार होगी। उसने कहा कि उसके शत्रुओं (सहस्रबाहु और कृतवीर) के दाँतोंसे भरी थाली, जिसके दृष्टिपातसे चावलोंकी थालमें बदल जायेगी, वह उसका वध करनेवाला होगा। इसपर परशुरामने नगरके मध्य एक दानशाला खुलवायी जहाँ ब्राह्मणोंको मुफ्त भोजन दिया जाता और उन्हें दाँतोंकी थाली दिखाई जाती। सुभौमसे भी दानशालेकी भेंट करनेके लिए कहा गया, यह जाननेके लिए कि क्या यही वह व्यक्ति है जिसके हाथों परशुरामकी मौत होगी। तब सुभौम दानशालामें गया, उसने थाली देखी जो पके हुए चावलोंके रूपमें बदल गयी। रक्षकोंने फौरन हमला कर दिया जब कि वह निहत्था था। परन्तु वह थाली ही तत्काल चक्रमें बदल गयी जिससे उसने उनका और परशुरामका अन्त कर दिया। उसके बाद वह चक्रवर्ती हो गया। एक बार सुभौमको उसके रसोइएने निकृष्ट फल परोसा। वह क्रुद्ध हो उठा और उसने इस अपराधके लिए रसोइएको मार डाला। रसोइया ज्योतिष देव उत्पन्न हुआ। वह व्यापारीका रूप धारण करके आया और राजाको कुछ सुन्दर फल दिये। राजाने उन फलोंको खूब पसन्द किया और व्यापारीसे और फल लानेका आग्रह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया। व्यापारीने कहा कि देवने जो फल दिये थे वे समाप्त हो गये हैं। चूँकि राजा अपनी माँगके लिए आग्रह करता रहा, तो ज्योतिषीने कहा कि राजा उन फलोंको पा सकता है यदि वह उसके साथ एक द्वीपके लिए चलता है। राजाने मंजूर कर लिया। वह व्यापारीके साथ गया, उसने उसे चट्टानपर रखा और मार डाला। मृत्युके बाद सुभौम नरक गया। अरके शासनकालमें बलदेव, वासुदेव और प्रतिवासुदेवका छठा दल उत्पन्न हुआ। उनके नाम थे नन्दीसेन, पुण्डरीक और निशुम्भ। विस्तारके लिए तालिका देखिए।

LXVII— मल्लिकी जीवनीके लिए तालिका देखिए। इनके शासनकालमें नौवें चक्रवर्ती पद्म हुए। विस्तृत जीवनीके लिए तालिका देखिए। यह मल्लिनाथके शासनकालमें हुआ कि बलदेव, वासुदेव और प्रतिवासुदेवका सातवाँ दल उत्पन्न हुआ। जिनके नाम हैं नन्दिमित्र, दत्त और बलि। विस्तारके लिए तालिका देखिए।

परिशिष्ट

जैनपुराणोंमें त्रेसठ शलाका पुरुषोंकी जीवनियोंके परम्परागत विस्तारमें जो एकरूपता दे दी गयी है, और विमलसूरिने अपने 'पउमचरिउ'में जो संकेत दिया है (पृ. ११ पर उद्धृत है) ने मुझे यह विचार दिया कि मैं सुविधजनक शीर्षकोंके रूपमें सभीकी मुख्य बातोंको अंकित कर दूँ। इसलिए मैं इस जिल्दमें पाँच तालिकाएँ दे रहा हूँ। तालिका एकमें, दिगम्बरोंकी परम्पराके अनुसार तीर्थंकरोंको प्रतिमाओंके चिह्नोंको दिया गया है। मैंने यह तालिका, श्री जी. एच. खरेकी मराठी पुस्तकसे जो बहुत मूल्यवान् है, ली है, इसलिए कि मेरी तालिकामें जानकारी है, वह गुणभद्र और पुष्पदन्तके उस जानकारीसे मिलनी चाहिए, जो उन्होंने अपने पुराणोंमें दी है, इसके लिए मैंने श्री खरेकी तालिकामें थोड़ा फेर-बदल किया है। दूसरी तालिका, तीर्थंकरोंके पूर्वजन्म, जन्मस्थान आदिका विवरण देती है। तीसरी तालिकामें विभिन्न तीर्थंकरोंके गणधरोंकी सूची है। चौथीमें चक्रवर्तियोंके बारेमें सूचनाएँ हैं। पाँचवीं तालिकामें बलदेवों, वासुदेवों, प्रतिवासुदेवोंके बारेमें जानकारी है। दरअसल मेरी जानकारीका स्रोत जिनसेनका आदिपुराण, गुणभद्रका उत्तरपुराण और पुष्पदन्तका महापुराण है। ये रचनाएँ, मैं आशा करता हूँ कि दिगम्बर परम्पराका प्रतिनिधित्व करनेवाले सर्वोत्तम स्रोतोंमें-से एक हैं, यदि वे सर्वोत्तम नहीं हैं तो एक या दो स्थानोंपर मैंने श्वेताम्बर परम्पराका उपयोग किया है, क्योंकि उनकी जानकारी देनेमें महापुराण समर्थ नहीं था या फिर मैं उसमें सामग्री ढूँढ़नेमें समर्थ नहीं हो सका। मैं पाठकोंके प्रति अत्यन्त कृतज्ञ होऊँगा यदि वे अनुपयुक्तताओं और कमियोंको ध्यानमें ला सके, मैं धन्यवादके साथ उनपर विचार करूँगा।

नौरोजी वाडिया कालेज
पूना
अगस्त १९४०

—*पी. एल. वैद्य*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रमणिका

अड़तीसवीं सन्धि : ... १–२३

अजितनाथकी वन्दना (१-२), कविकी सुजनसे उदासी (२-३), सरस्वती और भरत-कविको समझाना, (३), कविका उत्तर, समयकी विपरीतताका उल्लेख, सुजनकी स्वीकृति (४-५), रचनाका उद्देश्य जिनभक्ति (५-६), वत्सदेश और सुसीमा नगरीका वर्णन (६-७), विमलवाहन राजाकी विरक्ति और तपस्या, विजयका अनुत्तर विमानमें जन्म (८), इन्द्रके आदेशसे कुबेर द्वारा अयोध्याकी रचना; स्वर्णवृष्टि (९), विजयादेवीका सोलह स्वप्न देखना (१०), स्वप्नफल कथन (११-१२), अजितनाथका जन्म (१२), अजित जिनका जन्माभिषेक (१३), देवों द्वारा जिनकी वन्दना (१४), विवाहका प्रस्ताव (१५), उल्कापात देखकर विरक्ति (१६), लौकान्तिक देवों द्वारा सम्बोधन और स्तुति (१७), दीक्षा ग्रहण करना (१८), देवेन्द्र द्वारा जिनेन्द्रकी स्तुति; समवसरणकी रचना (२०), जिनवर द्वारा तत्त्वकथन (२१), संघका वर्णन (२२)।

उनतालीसवीं सन्धि : ... २४–४०

वत्सावती देशके राजा पुण्डरीकका वर्णन (२४), राजा जयसेनका वर्णन, उसके रतिसेन और धृतसेन पुत्र, रतिसेनकी मृत्यु, पिताका शोक (२५), जितसेन दीक्षा ग्रहण करता है, जयसेन मरकर स्वर्गमें महाबलदेव हुआ, उसके साथ तप करनेवाला सामन्त महारुत भी मरकर सोलहवें स्वर्गमें मणिकेतु हुआ (२६), उनमें तय हुआ कि जो स्वर्गमें रहेगा, वह दूसरेको मर्त्यलोकमें जाकर उपदेश देगा; महाबलकी मृत्यु (२७), महाबलका सगरके रूपमें जन्म, उसका चक्रवर्ती बनना, मणिकेतुदेवका आकर समझाना (२८), देवका अपना परिचय देना, सगरको अनसुनी करना, मणिकेतुका मुनिके रूपमें आना (२९), सगरका उनसे विरक्तिका कारण पूछना, मणिकेतुका उपदेश; सगरपर कोई प्रतिक्रिया नहीं, देवकी वापसी; सगरके साठ हजार पुत्र (३०-३२), सगरका भरत द्वारा निर्मित मन्दिरोंकी सुरक्षाका आदेश, पुत्रोंका वज्ररत्नसे कैलासके चारों ओर खाईं खोदना, पानीका निकलना, खाईंके रूपमें गंगाका कैलास पर्वतको घेरना (३३-३४), नागभवनका प्रताड़ित होना, मणिकेतु देवका नागराज बनकर पुत्रोंको भस्म कर देना, भीम और भगीरथका जाकर सारा वृत्तान्त राजा सगरको बताना, दण्डो साधुका अवतरण, साधुका उपदेश, उसका वस्तुस्थिति बताना, सगरकी विरक्ति और भगीरथको राजगद्दी मिलना (३४-३७), मणिकेतुका मृत पुत्रोंको जीवित करना, उनका दीक्षा ग्रहण करना, तपस्याका वर्णन, सगरकी निर्वाण-प्राप्ति (३९-४०)।

चालीसवीं सन्धि : ... ४१–५७

सम्भवनाथकी स्तुति (४१-४२), कच्छ देशके क्षेम नगरका वर्णन (४३), राजा विमलवाहन-का तप ग्रहण करना, सुदर्शन विमानमें जन्म (४४), श्रावस्तीमें इक्ष्वाकुवंशका शासन, राजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृढ़रथ, रानी सुषेणा, स्वप्न दर्शन (४५), इन्द्रका कुबेरको आदेश, सम्भवनाथका जन्म, रत्न वर्षा (४६), जिनेन्द्र सम्भवनाथका अभिषेक और अलंकरण (४७-५१), सम्भवनाथका तपश्चरण, केवलज्ञानकी प्राप्ति, देवताओं द्वारा स्तुति और समवसरण (५२-५४) गणधरोंकी संख्या और मोक्ष (५५-५७)।

इकतालीसवीं सन्धि : ... ५८–७५

अभिनन्दनकी स्तुति (५८-५९), मंगलावती देश, रत्नसंचय नगर, राजा महाबल, रानी लक्ष्मीकान्ता, राजाको विरक्ति और तपश्चरण, अनुत्तरविमानमें जन्म (६०-६१), इन्द्रके आदेशसे कुबेर द्वारा कौशलपुरीकी रचना, स्वप्नकथन, राजा स्वयंवरका भविष्यकथन; अहमेन्द्रका अभिनन्दनके रूपमें जन्म, इन्द्रके द्वारा अभिषेक (६२-६४), अभिषेकमें विशेष देवताओंका आह्वान (६६-६७), अभिनन्दनके यौवनका वर्णन, राज्याभिषेक (६८-६९), विरक्ति, लौकान्तिक देवोंका सम्बोधन, पारणा, केवलज्ञान, देवेन्द्र द्वारा स्तुति, निर्वाण (७०-७५)।

बयालीसवीं सन्धि : ... ७६–८८

सुमतिनाथकी वन्दना (७६-७७), पुण्डरीकिणी नगरीका वर्णन (७७), राजा रतिसेन अपने पुत्र अर्हन्नन्दनको राज्य देकर दीक्षा ग्रहण करता है (७८), अहमेन्द्र स्वर्गमें उत्पन्न होना, इन्द्रका कुबेरको आदेश कि वह जाकर अयोध्यामें भावी तीर्थंकरके जन्मकी व्यवस्था करे, मेघरथकी पत्नी मंगलाका स्वप्न देखना (७९), राजा द्वारा तीर्थंकरके जन्मका भविष्यकथन, कुबेर द्वारा स्वर्णवृष्टि (८०), जिनके जन्मपर देवेन्द्र द्वारा वन्दना (८१), जिनेन्द्रका अभिषेक (८२), सुमतिनाथकी बालक्रीड़ा, राज्याभिषेक, राज्य करते हुए जिनेन्द्रका आत्मचिन्तन (८३), लौकान्तिक देवोंका आगमन और उद्बोधन, दीक्षाग्रहण (८४), केवलज्ञानकी प्राप्ति, देवेन्द्र द्वारा स्तुति (८५), स्तुति जारी (८६), समवसरणकी रचना, उसका वर्णन, गणधरोंका उल्लेख (८७), गणधरोंका उल्लेख, निर्वाण (८८)।

तैंतालीसवीं सन्धि : ... ८९–१०२

पद्मप्रभुकी वन्दना (८९), वत्स देशका वर्णन, सुसीमा नगरी, अपराजित राजा (९०), राजाका आत्मचिन्तन, दीक्षा ग्रहण करना (९१), तपस्याका वर्णन; मृत्युके बाद प्रीतंकर विमानमें जन्म, छह माह शेष रहनेपर इन्द्रके आदेशसे कौशाम्बी नगरीकी रचना और स्वर्णप्रासादकी रचना (९२), रानीका स्वप्नदर्शन (९३), स्वप्नफल कथन, जिनेन्द्रकी उत्पत्तिकी भविष्यवाणी, जिनका गर्भमें आना (९४), जिनका जन्म अभिषेक, बालक्रीड़ा (९५), महागजकी मृत्यु, पद्मप्रभकी विरक्ति (९६), दीक्षाभिषेक और तपश्चरण (९७), सोमदत्त द्वारा आहारदान, तपश्चरण, केवलज्ञानकी उत्पत्ति, देवों द्वारा स्तुति (९८), स्तुति (९९), समवसरणकी रचना (१००), निर्वाणलाभ (१०१)।

चौवालीसवीं सन्धि : ... १०३–१११

सुपार्श्वनाथकी वन्दना (१०३), कच्छ देशका वर्णन, क्षेमपुरी राजाकी विरक्ति, तपश्चरण, शरीर त्यागकर भद्रामर विमानमें अहमेन्द्र (१०४), छह माह शेष रहनेपर इन्द्रके आदेशसे कुबेर द्वारा काशीकी वाराणसीकी पुनर्रचना, पृथ्वीसेनाका स्वप्नदर्शन (१०५-१०६),

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

स्वप्नफल कथन, सुपार्श्वका गर्भमें अवतरण (१०७), बालक्रीड़ा, भोगमय जीवन, उल्कापात देखकर विरक्ति (१०८), दीक्षाकल्याण (१०९), देवेन्द्र द्वारा स्तुति (१०९), केवलज्ञानकी उत्पत्ति, जिनका उपदेश (११०), निर्वाणलाभ (१११)।

पैंतालीसवीं सन्धि : ११२–१२४

पद्मनाभ तीर्थंकरका वर्णन (११२-१२४)।

छियालीसवीं सन्धि : १२५–१३७

चन्द्रप्रभ स्वामीका वर्णन (१२५-१३७) तक।

सैंतालीसवीं सन्धि : १३८–१५२

पुष्पदन्तका वर्णन (१३८-१५२)।

अड़तालीसवीं सन्धि : ... १५३–१७२

शीतलनाथका वर्णन (१५३-१७२)।

उनचासवीं सन्धि : ... १७३–१८४

श्रेयांसनाथका वर्णन (१७३-१८४)।

पचासवीं सन्धि : ... १८५–१९५

अश्वग्रीव और त्रिपृष्ठ वासुदेव और बलदेवकी उत्पत्ति (१८५-१९५)।

इक्यानवीं सन्धि : ... १९६–२११

त्रिपृष्ठ द्वारा सिंहमारण और कोटिशिलाका उद्धार (१९५-२११)।

बावनवीं सन्धि : ... २१२–२४१

त्रिपृष्ठकी अश्वग्रीवसे भिड़न्त (२१२-२४१)।

त्रेपनवीं सन्धि : २४२–२५३

वासुपूज्यका वर्णन (२४२-२५३)।

चौवनवीं सन्धि : ... २५४–२७१

द्विपृष्ठ और तारकके चरितका वर्णन (२५४-२७१)।

पचपनवीं सन्धि : ... २७२–२८१

विमलनाथका वर्णन : (२७२-२८१)।

छप्पनवीं सन्धि : २८२–२९१

भीम और स्वयम्भूकी भिड़न्तका वर्णन (२८२-२९१)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तावनवीं सन्धि : ... २९३–३१७

मन्दर और मेरुकी कथा (२९३-३१७)।

अट्ठावनवीं सन्धि : ... ३१८–३३६

अनन्तनाथके तीर्थकालमें सुप्रभ पुरुषोत्तम और मधुसूदन की कथा (३१८-३३६)।

उनसठवीं सन्धि : ... ३३७–३५७

धर्मनाथका वर्णन, सुदर्शन, पुरुषसिंह, मधुक्रीड़, मघवा, सनत्कुमार (३३७-३५७)।

साठवीं सन्धि : ... ३५८–३८४

शान्तिनाथ भवावलि (३५८-३८४)।

इकसठवीं सन्धि : ३८५–४०५

वज्रायुध चक्रवर्ती (३८५-४०५)।

बासठवीं सन्धि : ... ४०६–४२४

मेघरथका तीर्थंकर गोत्रबन्ध (४०६-४२४)।

त्रेसठवीं सन्धि : ४२५–४३४

शान्तिनाथ निर्वाणगमन (४२५-४३४)।

चौंसठवीं सन्धि : ... ४३५–४४४

कुन्थु चक्रवर्ती और तीर्थंकर (४३५-४४४)।

पैंसठवीं सन्धि : ४४५–४६४

अर तीर्थंकर और परशुराम विभवका वर्णन (४४५-४६४)।

छियासठवीं सन्धि : ... ४६५–४७४

सुभौम चक्रवर्ती-वासुदेव-प्रतिवासुदेव कथान्तर (४६५-४७४)।

सड़सठवीं सन्धि : ... ४७६–४८९

मल्लिनाथ-पद्म चक्रवर्ती-नन्दिमित्र-दत्तवलि-पुराण (४७५-४८९)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महापुराण

भाग ३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाकवि पुष्पदन्त विरचित

महापुराण

संधि ३८

बंभहु बंभालयसामियहु ईसहु ईसरवंदहु ॥
अजियहु जियकामहु कामयहु पणविवि परमजिणिंदहु ॥ ध्रुवकं ॥

१

सुहयरुओहं सुहयरुमेहं ।
वीरमघोरं वयविहिघोरं ।
उवसमणिलयं पसमियणिलयं ।
कंदरवालं कंदरणीलं ।
मंदरसित्तं मंदरसित्तं ।
रामारमणे रामारमणे ।
विणयजणाणं विणयजणाणं ।
जेण कयं तं जे ण कयंतं ।
आलोयंते आलोयंते ।
भमइ जसोहो भवेइजसोहो ।
णाहो ताणं जो भत्ताणं ।

सन्धि ३८

ब्रह्मा (परमात्मा) मोक्षालयके स्वामी, ईश्वरोंके द्वारा वन्दनीय, ईश, जिन्होंने कामको जीत लिया है, जो कामनाओंको पूरा करनेवाले हैं, ऐसे परम जिनेन्द्र अजितनाथको मैं प्रणाम कर ।

१

जिन्होंने रोगों (काम-क्रोधादि) के समूहका नाश कर दिया है, जो पुण्यरूपी वृक्षके लिए मेघके समान हैं, जो वीर और सौम्य हैं, जो व्रतोंके आचरणमें कठोर हैं, जो उपशम (शान्तभाव) के घर हैं, जिन्होंने मनुष्योंके विनाशको शान्त कर दिया है, जिनकी ध्वनि (दिव्य ध्वनि) मेघकी ध्वनिके समान है, गुफा ही जिनका घर है, जिनका सुमेर पर्वतपर अभिषेक हुआ है, जिसमें धन और कामका मन्थन है ऐसे स्त्रीरमणमें जिनकी मन्दरसता है, जिन्होंने विनत जनोंके लिए विनयजज्ञान (श्रुतज्ञान) दिया है, जो यमको नहीं देखते, जिनका यश-समूह चन्द्रमाकी किरणोंके समान शोभावाला है, तथा लोकपर्यन्त परिभ्रमण करता है, जो भक्तोंका त्राण करने-

१. १. A भवइ । २. A भमइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो भयवंतो जो भयवंतो ।
जमकरणवहं जमकरणवहं ।
अण्णाणमहं सण्णाणमहं ।
णिद्दारहियं[3] णिद्दारहियं ।
अवसावसणं आसावसणं ।
आसासमणं आसासमणं ।
वररमणीसं वररमणीसं ।
णीसंसालं णीसंसालं ।
परसमयंतं परसमयंतं ।
अहिवंदिययं सुहमिंदियय ।
जेणे[4] ण कहियं तेलोक्कहियं ।
णिरुवमदेहं तं वंदे हं ।

घत्ता—पुणु पणविवि पंच वि परमगुरु णियजसु तिजगि पयासेवि[5] ॥
घणदुरियपडलणिण्णासयरु अजियहु चरिउ समासेवि[6] ॥१॥

२

मणि जाएण किं पि अमणोज्जें कइवयदियहइं[1] केण वि कज्जें ।
णिव्विण्णउ थिउ जाम महाकइ ता सिविणंतरि पत्त सरासइ ।
भणइ भडारी सुहयरुओहं पणमहु[3] अरुहं सुहयरुमेहं[4] ।

वाले स्वामी हैं, जो ज्ञानवान् और सात भयोंका नाश करनेवाले हैं, जो रोगादिका विनाश करनेवाले यमों और व्रतोंका अनुष्ठान करनेवाले हैं, जो अज्ञानका नाश करनेवाले ज्ञानको धारण करते हैं, जो निद्रा और कलत्रसे रहित हैं, जो शापसे शून्य और दिशारूपी वस्त्रोंको धारण करते हैं, जो सब ओर त्रैलोक्यरूपी लक्ष्मीसे विलसित हैं, जो आशाके शामक और मुक्तिरूपी रमणीके ईश हैं, जिनकी बुद्धि वर देनेवाली है, जो मनुष्योंकी प्रशंसासे युक्त हैं, जो संसारका परित्याग कर चुके हैं, जो पर सिद्धान्तोंका अन्त करनेवाले हैं, जो श्रेष्ठ शान्तिसे रमणीय, और नागराजके द्वारा अभिनन्दनीय हैं, जिन्होंने इन्द्रियजन्य सुखको सुख नहीं माना, तथा जो अनुपम और अशरीरी हैं, ऐसे अजितनाथकी मैं वन्दना करता हूँ।

घत्ता—पाँचों परमगुरुओं (पाँच परमेष्ठियों) को प्रणाम कर तथा अपने यशको तीनों लोकोंमें प्रकाशित कर घन पाप पटल के नाशक श्री अजितनाथके चरितका संक्षेपमें कथन करता हूँ।

२

कई दिनों तक किसी कारण, मन में कुछ असुन्दर बात हो जानेसे जब कवि उदासीन था तो उसे सपनेमें सरस्वती प्राप्त हुई। आदरणीया वह कहती हैं—"संसारके रोगसमूहका नाश करनेवाले तथा पुण्यरूपी वृक्षके मेघ श्री अरहन्तको तुम नमस्कार करो।"

---

३. A णिदारहियं । ४. P जेण णं । ५. AP पयासमि । ६. AP समासमि ।

२. १. A कइवयदियहें; P कइवयइ दियहें । २. K णिव्विणोउ थिउ but gloss निर्विण्णः; P णिव्विणु उट्ठिउ । ३. A पणमहु; P पणवह । ४. A सुहयरमेहं but gloss in K शुभतरुमेघम् ।

इय णिसुणेवि विउद्धेउ कइवरु　　सयलकलायरु णं छणससहरु ।
दिसउ णिहालइ किं पि ण पेच्छइ　　जा विम्हियमइ णियघरि अच्छइ ।
ताम पराइएण णयवंतें　　मउलियकरयलेण पणवंतें ।
दसदिसिपसरियजसतरुकंदें　　वरमहमत्तवंसणहयंदें ।
छणससिमंडलसंणिहवयणें　　णवकुवलयदलदीहरणयणें ।

घत्ता—खलसंकुलि कालि कुसीलमइ विणउ करेप्पिणु संवरिय ॥
वच्चंति वि [10]सुण्णसुसुण्णवहि जेण सरासइ [11]उद्धरिय ॥२॥

३

अइयणदेवियव्वतणुजाएं　　जयदुंदुहिसरगहिरणिणाएं ।
जिणवरसमयणिहेलणखंभे　　दुत्थियमित्तें ववगयडंभें ।
मइं उवयारभावु णिव्वहणें　　विउसविहुरसयभयणिम्महणें ।
तेओहामियपवरक्करहें　　तेण विगव्वें भव्वें भरहें ।
बोल्लाविउ कइ कव्वपिसल्लउ　　किं तुहुं सच्चउ बप्प गहिल्लउ ।
किं दीसहि विच्छायउ दुम्मणु　　गंथकरणि किं ण करहि णियमणु ।

यह सुनकर महाकवि जाग उठा मानो समस्त कलाओंको धारण करनेवाला पूर्णिमाका चन्द्र हो। वह दिशाओंको देखता है, परन्तु वहां कुछ भी नहीं देखता, विस्मित बुद्धि जब वह अपने घरमें स्थित था, तब जो न्यायशील है, जिसने दोनों करतल जोड़ रखे हैं, जो प्रणाम कर रहा है, जिसके यशरूपी वृक्षकी जड़ें दसों दिशाओंमें फैल रही हैं, जो श्रेष्ठ माहामात्यके वंशरूपी आकाशका चन्द्रमा हैं, जिसका मुख पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान है, जिनके नेत्र दीर्घ कुवलयदलके समान हैं, ऐसे आये हुए भरतने—

घत्ता—खलोंसे व्याप्त समयमें विनय करके कुशीलमतिको रोका। जिसके द्वारा आकाशके सूने पथमें जाती हुई सरस्वतीका उद्धार किया गया ॥२॥

३

जो अइयण (एयण या देवीयव्वा) देवीका पुत्र है, जिसका स्वर विजयकी दुंदुभिके स्वरकी तरह गम्भीर है, जो जिनवरके सिद्धांतरूपी भवनका आधार स्तम्भ है, जो दुःस्थित लोगोंका मित्र है, दम्भसे रहित है, मुझमें उपकार भावका निर्वाह करनेवाला है, जो विद्वानोंके संकटों और सैकड़ों भयोंका नाश करनेवाला है, जिसने अपने तेजसे सूर्यके रथको निष्प्रभ कर दिया है, ऐसे उस गर्वरहित भव्य भरतने कहा—"हे काव्य-पण्डित कवि, क्या तुम बेचारे ग्रहगृहीत हो (तुम्हें भूत लग गया है), तुम कान्तिहीन और उदासीन क्यों दिखाई देते हो, ग्रन्थ रचनामें

५. A विबुद्धउ । ६. AP विभियमइ । ७. P दसदिस° । ८. AP °णहचंदें । ९. P संवरिइ । १०. A विसण्ण सुसुण्ण° । ११. P उद्धरिइ ।

३. १. A अइयणदेविअंब.; P इयणुदेवियव्व° । २. A ववगयडिभें । ३. AP परउवयार° । ४. A °भार°; P °हार° । ५. A °रुय° ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

किं किउ काइं वि मइं अवराहउ अवरु को वि किं विरसुम्माहउ।
भणु भणु भणियउं सयलु पडिच्छेंवि इउं कयंपंजलियरु ओहच्छेंवि।
घत्ता—अथिरेण असारें जीविएण किं अप्पउ संमोहहि ॥
तुहुं सिद्धहि वाणीधेणुयहि णवरसखीरु ण दोहहि ॥३॥

४

तं णिसुणेप्पिणु दरविहसंतें मित्तमुहारविंदु जोयंतें।
कसणसरीरें सुट्ठुकुरूवें मुद्धाएविगब्भसंभूवें।
कासवगोत्तें केसवपुत्तें कइकुलतिलएं सरसइणिलएं।
पुप्फयंतकइणा पडिउत्तउ भो भो भरह णिसुणि णिक्खुत्तउ।
कलिमलमलिणु कालु विवरेरउ णिग्घिणु णिग्गुणु दुण्णयगारउ।
जो जो दीसइ सो सो दुज्जणु णिप्फलु णीरसु णं सुक्कउ वणु।
राउ राउ णं संझहि केरउ अत्थि पयट्टइ मणु ण महारउ।
उव्वेउ जि वित्थरइ णिरारिउ एक्कु वि पउ वि रएंवउ भारिउ।
घत्ता—दोसेण होउ तं णउ भणमि चोज्जु अवरु मणि थक्कउ ॥
जगु एउ चडावियउं चाउं जिह तिह गुणेण सहुं वंकउं ॥४॥

अपना मन क्यों नहीं लगाते ? क्या मुझसे कोई अपराध हो गया है, या कोई दूसरी, उदासीनता उत्पन्न करनेवाली बात हो गयी है। कहो कहो, मैं कहा हुआ सबको स्वीकार करता हूँ। लो, यह हाथ जोड़कर तुम्हारी बात सुननेके लिए मैं बैठा हूँ।

घत्ता—अस्थिर और असार जीवनसे तुम अपनेको सम्मोहित क्यों करते हो, तुम सिद्ध वाणीरूपी धेनुसे नव (नौ / नया) रस रूपी दूध क्यों नहीं दुहते ॥३॥

४

यह सुनकर थोड़ा हँसते हुए मित्रका मुखकमल देखते हुए, कृश शरीर और अत्यन्त कुरूप मुग्धादेवीके गर्भसे उत्पन्न कश्यपगोत्री केशवपुत्र, कविकुल तिलक और सरस्वतीके पुत्र पुष्पदन्त कविने प्रत्युत्तर दिया—हे भरत, तुम निश्चितरूपसे सुनो। कलिके मलसे मैला यह समय विपरीत निर्घृण निर्गुण और दुर्नयकारक है, जो-जो दीखता है, वह दुर्जन है, वह निष्फल नीरस है, मानो शुष्कवन हो। (लोगोंका) राग सन्ध्याके रागकी तरह है, मेरा मन किसी अर्थमें प्रवृत्त नहीं होता, अत्यन्त उद्वेग बढ़ रहा है, एक भी पदकी रचना करना भारी जान पड़ रहा है।

घत्ता—दोष होगा इसलिए नहीं कहता, मेरे मनमें दूसरा कुतूहल यह है कि यह विश्व गुणके साथ उसी प्रकार टेढ़ा है जिस तरह डोरी पर चढ़ा हुआ धनुष टेढ़ा होता है ॥४॥

६. AP पडिच्छमि। ७. A कयपंजलि अरुहहुं अच्छमि। ८. PT ओहच्छमि। ९. AP तुहु।

४. १. A सुट्ठुमुरूवें; P सुट्ठकुरूवें। २. P कयकुल°। ३. A omits सरसइणिलएं and reads उत्तमसत्तें in its place; P सरसय°। ४. P adds after this : उत्तमसत्तें जिणपयभत्तें। ५. A रएंतउ। ६. A णव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५

जइ वि तो वि जिणगुणगणु वण्णेवि   किह पइं अब्भत्थिउ अवगण्णवि ।
चायभोयभोउग्गमसत्तिइ   पइं अणवरयरइयकइमेत्तिइ ।
राउ सालवाहणु वि विसेसिउ   पइं णियजसु भुवणयलि पयासिउ ।
कालिदासु जें खंधें णीयउ   तहु सिरिहरिसहु तुहुं जगि बीयउ ।
तुहुं कइकामधेणु कइवच्छलु   तुहुं कइकप्परुक्खु ढोइयफलु ।
तुहुं कइसुरवरकीलागिरिवरु   तुहुं कइरायहंसमाणससरु ।
मंदु मयालसु मयणुम्मत्तउ   लोउ असेसु वि तिण्हइ भुत्तउ ।
केण वि कव्वपिसल्लउ मण्णउ   केण वि थद्धू भणिवि अवगण्णिउ ।
णिच्चमेव सब्भाउं पउंजिउ   पइं पुणु विणउ करिवि हउं रंजिउ ।

घत्ता—धणु तणु समु मज्झु ण तं गहणु णेहु णिकारिमु इच्छेवि ॥
देवीसुय सुहणिहि तेण हउं णिलइ तुहारइ अच्छवि[10] ॥५॥

६

महुसमयागमि जायहि ललियहि   बोल्लइ कोइल अंबयकलियहि ।
काणणि चंचरीउ रुणुरुंटइ   कीरु किं ण हरिसेण विसट्टइ ।
मज्झु कइत्तणु जिणपयभत्तिहि   पसरइ णउ णियजीवियवित्तिहि ।

५

यद्यपि, तब भी जिनवरके गुणोंका वर्णन करता हूँ। तुमने अभ्यर्थना की है किस प्रकार उपेक्षा करूँ? तुमने त्याग भोगकी उद्दाम (उद्‌गम) शक्ति, और निरन्तर की गयी कविकी मित्रता द्वारा, राजा शालिवाहनसे भी विशेषता प्राप्त की है। तुमने अपना यश भुवनतल पर प्रकाशित किया है, जिसने कालिदासको अपने कन्धे पर बैठाया है उस श्रीहर्षसे तुम जगमें द्वितीय हो, तुम कवियोंके लिए कामधेनु और कवि वत्सल हो, तुम कवियोंके लिए फल उपहारमें देनेवाले कल्पवृक्ष हो। तुम कवियोंके लिए (कवियोंके लिए), देवोंके क्रीड़ा पर्वत (सुमेरु पर्वत) हो। तुम कविराज रूपी हंसके लिए मानसरोवर हो। लोग, मन्द मदालस, कामसे उन्मत्त और तृष्णासे भुक्त हैं। किसीके द्वारा कामपण्डित माना गया, और किसीके द्वारा मूर्ख कहकर मेरी अवहेलना की गयी। लेकिन तुमने हमेशा सद्‌भावका प्रयोग किया और विनय करके मुझे प्रसन्न रखा।

घत्ता—धन मेरे लिए तिनकेके समान है, मैं उसे नहीं लेता। मैं अकारण स्नेहका भूखा हूँ। हे देवीपुत्र शुभनिधि भरत, इसीलिए मैं तुम्हारे घरमें रहता हूँ ॥५॥

६

वसन्तका समय आने पर सुन्दर हुई आम्रमञ्जरी पर कोयल बोलती है, काननमें भ्रमर रुनझुन करता है, फिर तोता हर्षसे विशिष्ट क्यों नहीं होता, मेरा कवित्व जिनवरके चरणोंकी भक्तिसे प्रसरित होता है अपनी आजीविकाकी वृत्तिसे नहीं।

---

५. १. P जय वि। २. A वणम्मि; P वण्णमि। ३. AP अवगण्णमि। ४. AP सालिवाहणु। ५. APT मण्णिउ। ६. A मंदु; P थड्ढु; T थंठ जडः। ७. AP सब्भाव। ८. A तिणु। ९. AP इच्छमि। १०. AP अच्छमि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विमलगुणाहरणंकियदेहउ एउँ[1] भरह णिसुणइ पइं जेहउ।
कमलगंधु घेप्पेइ[2] सारंगें णउ सालूरें णीसारंगें।
गमणलील जा कय सारंगें सा किं णासिज्जइ सारंगें।
सज्जणदूसियदूसणवसणें[3] सुकइ[4]कित्ति किं हम्मइ पिसुणें।
कहमि कव्वु वम्महसंघारणु अजियपुराणु भवण्णवतारणु।
घत्ता—जिणगुणरयणावलिवियडिउ सद्दसुवण्णे[5]समुज्जलु ॥
आहासइ गणहरु सेणियहु करहु कण्णि कहकोंडलु[6] ॥६॥

७

सरपंकयरयरत्तविदेहइ जंबूदीवहु पुव्वविदेहइ।
सीयहि दाहिणे[1]कूलि रवण्णउ वच्छउ णाम देसु विच्छिण्णउ।
सहलारामहिं गामहिं घोसहिं दहियविरोलणमंथणिघोसहिं।
पक्किउलपक्क[2]कल[3]मकेयारहिं कणिसु चुणंतहिं जंपिरकीरहिं।
घणकणगुरुभरणवियहिं धण्णे[4]हिं हंसहिं णवबंभहरणिसण्णहिं।
चंपयदेवदारु[5]साहारहिं कुसुमा[6]लीणभमरझंकारहिं।
णच्चिरमुक्क[7]मोरकेकारहिं पबलबलालवसहढेक्कारहिं[8]।
महिसमेसजुज्झुच्छवमिलियहिं[9] जो[10] सोहइ [11]णंदंतहिं हलियहिं।

हे भरत, जिसने शरीर पर विमल गुणरूपी आभरण धारण किये हैं ऐसा तुम जैसा व्यक्ति उसे सुनता है, कमलकी गन्ध भ्रमरके द्वारा ग्रहण की जाती है सारहीन मेंढकके द्वारा नहीं। हरिणके द्वारा जो गमनलीला की जाती है, क्या वह धनुषके द्वारा नष्ट की जा सकती है। जिनका स्वभाव सज्जनोंको दूषित करना है ऐसे दुष्टके द्वारा क्या सुकविकी कीर्ति नष्ट की जा सकती है। मैं कामदेवका संहार करनेवाले और संसार रूपी समुद्रसे सन्तरण करनेवाले अजित पुराण काव्यको कहता हूँ।

घत्ता—गौतम गणधर कहते हैं, "हे गौतम, तुम जिनवरके गुणोंकी रत्नावलीसे विजड़ित शब्दरूपी स्वर्णसे समुज्ज्वल यह कथा रूपी कुण्डल अपने कानोंमें धारण करो" ॥६॥

७

जहाँ सरोवरोंके कमलरजसे पक्षियोंके शरीर धूसरित हैं जम्बूद्वीपके ऐसे पूर्व विदेहमें, सीता नदीके दक्षिण तट पर, सुन्दर वत्स नामका विशाल देश है, जो फल सहित उद्यानों, ग्रामों, दही बिलोनेकी मथानियोंके घोषवाले गोकुलों, पके हुए प्रचुर धान्यके खेतों, कण चुगते बोलते हुए शुकों, सघन दानोंसे भरे हुए नये धान्यों, नवकमलों पर बैठे हुए हंसों, चम्पक देवदारु और आम्र वृक्षों, पुष्पोंमें लीन भ्रमरोंकी झंकारों, नृत्य करते हुए मुक्त मयूरोंकी ध्वनियों, प्रबल बलयुक्त बैलोंके ढेक्कार शब्दों तथा भैंसाओं और मेढ़ोंके युद्धोत्सवमें इकट्ठे हुए प्रसन्न हलवाहोंसे शोभित है।

६. १. P एह। २. AP घिप्पइ। ३. AP वड्ढियसज्जणदूसण°। ४. P सुकय। ५. AP °सुवण्णु। ६. AP कहकुंडलु।

७. १. उत्तर°; K उत्तर but corrects it to दाहिण°। २. A° पिक्क°। ३. AP° कलम°। ४. AP अण्णहिं; K धण्णहिं and gloss धान्यैः। ५. A °देवदार°। ६. AP कुसुमालीण°। ७. AP णच्चिरमोरमुक्क°। ८. P °केक्कारहिं। ९. AP महिसहिं मेसहिं जुज्झिरि मिलियहिं। १०. P omits जो। ११. P adds णिरु after णंदंतहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तहिं अत्थि सुसीमा णाम पुरि सररुहछण्णमहासर[१२] ॥
[१३]णंदणवणसंठियदेवसिरमउडरयणकर[१४] सियघर[१५] ॥७॥

८

परिहाजलपरिघोलिररसणहिं हिमपंडुरपायारणिवसणहिं ।
विविहदुवारंतरवरवयणहिं गेहगवक्खुग्घाडियणयणहिं ।
धूव[१]धूमधम्मेल्लय[२]कसणहिं तोरणमोत्तियमालादसणहिं ।
लंबियचलचिंधावलिवत्थहिं ठाण[३]माणलक्खणहिं पसत्थहिं ।
मंदिरकंचणकलसयथणियहि किं वण्णिज्जइ सीमंतिणियहि ।
जं वण्णहुं भेसइ वि ण सक्कइ सुरवइ फणिवइ अवरु वि सक्कइ ।
अत्थि विमलवाहणु तहिं राणउ जसु[४] विहवेण ण सक्कु समाणउ ।
जसु सोहग्गें वम्महु भज्जइ तेण अणंगत्तणु पडिवज्जइ ।
जसु वइवसु[५]वसु दंडहु संकइ तेयहु तरणि तवंतु चवकंइ[६] ।
पडिगयभडथड[७] भड भंजंतहु तासु णरिंदलच्छि भुंजंतहु ।
जाणियसारासारविवेयउ एक्कहिं दिणि जायउ णिव्वेयउ ।

घत्ता—पुरु परियणु हय गय रह सधय अंतेउरु अवगण्णिवि ॥
सीहासण[८]छत्तइं चामरइं गउ सयलइं[९] तणु मण्णिवि ॥८॥

घत्ता—उसमें सुसीमा नामकी नगरी है जिसके सरोवर कमलोंसे आच्छन्न हैं, तथा लक्ष्मीगृह नन्दनवनोंमें बैठे हुए देवोंके सिरोंके मुकुटोंकी किरणोंसे युक्त हैं ॥७॥

८

परिखाके जलोंकी शब्द करनेवाली करधनियों, हिमकी तरह स्वच्छ प्राकार रूपी वस्त्रों, विविध द्वारोंके अन्तररूपी मुखों, घरोंके झरोखों रूपी उघड़े हुए नेत्रों, धूपके धुओं रूपी केशपाशोंसे काले तोरणोंकी मुक्तामालाओंके दाँतों, लम्बे चंचल ध्वजोंकी आवलियोंके वस्त्रों, स्थान और मानके प्रशस्त लक्षणों, मन्दिरोंके स्वर्णकलशोंके स्तनों वाली उस नगरी रूपी सीमंतिनी (नारी)का क्या वर्णन किया जाये, जिसका वर्णन बृहस्पति भी नहीं कर सकता, देवेन्द्र नागराज और दूसरा कोई भी वर्णन नहीं कर सकता। उस नगरीमें विमलवाहन नामका राजा है, इन्द्र भी उसके वैभवके समान नहीं है, जिसके सौभाग्यसे कामदेव भग्न हो जाता है इसीलिए उसके द्वारा अंगहीनत्व धारण किया जाता है, जिसके दण्डसे यमकी सेना डर जाती है, जिसके तेजसे सूर्य चमकता रहता है, शत्रुओंके हाथियों और योद्धाओंके समूहको नष्ट करते हुए तथा राजलक्ष्मीका भोग करते हुए उसे जिसमें सार और असारका विवेक जान लिया गया है, ऐसा वैराग्य एक दिन हो गया।

घत्ता—पुर परिजन अश्व गज ध्वज सहित रथ और अन्तःपुरकी उपेक्षाकर, तथा समस्त सिंहासनों छत्रों चामरोंको तिनकेके बराबर समझकर चला गया ॥८॥

१२. P महासरि । १३. P °वणमंडिय° कसणहिं । १४. AP °देवसिरि मउड° । १५. P सियघरि ।
८. १. P धूप° । २. AP °धम्मेल्लहि । ३. P रायमाण° । ४. A जसु विहवें सक्कु वि ण समाणउ । ५. PT वइवसुपसु । ६. A चमक्कइ; P चमुक्कइ । ७. P °घडथड° । ८. A सिंहासण°; P सिंघासण । ९. AP सयलु वि तिणु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

गुरुचरणारविंदु सेवेप्पिणु जायउ परमभिक्खु तउ लेप्पिणु ।
वीयरायवयणेण विणायउ पालइ पंचमहव्वयमायउ ।
अप्पाणउं तिहिं गुत्तिहिं भावइ णीरसु जेंवइ णिसिहि ण सोवइ ।
वेज्जावच्चु करइ मुणिणाहहं बालहं वुड्ढहं रुयहयदेहहं ।
धम्मु अहिंसालक्खणु अक्खइ मित्तु वि सत्तु वि समु जि णिरिक्खइ ।
आगच्छंतुवसग्गु समिच्छइ लंबियकरु उब्भुब्भउ अच्छइ ।
दंसमसय सुडसंत ण साडइ सप्प वि लग्ग देहि णउ फेडइ ।
दंसणसुद्धिविणउ आराहइ सहइ परीसह इंदिय साहइ ।
विकहउ ण कहइ ण रुसइ ण हसइ भीसणि णिज्जणि काणणि णिवसइ ।
णाणु णिरंतरु तेणब्भसियउ कम्मु अहम्मकारि संपुसियउ ।
एम घोरु तवचरणु चरेप्पिणु तित्थयरत्तु णाउं बंधेप्पिणु ।

घत्ता—तेलोक्कचक्कसंखोहणइं सुहकम्माइं समज्जिवि ॥
मुउ मुणिवरु णिरसणविहि करिवि चित्तु समत्ति णिउंजिवि ॥९॥

१०

तेत्तीसंबुहिआउपमाणइ पंचाणुत्तरविजयविमाणइ ।
किं वण्णवि पुण्णेणुप्पण्णउ हत्थमेत्ततणु ससहरवण्णउ ।

९

गुरुके चरण-कमलोंकी सेवा कर वह तप ग्रहण कर परम भिक्षु हो गया। वह वीतरागके वचनोंसे ज्ञात, पाँच महाव्रतोंकी पांच-पाँच भावनाओंका पालन करता है, वह स्वयंको तीन गुप्तियोंसे भावित करता है, नीरस भोजन करता है, रातमें नहीं सोता है। रोगसे जिनका शरीर आहत है ऐसे बाल और वृद्ध मुनिस्वामियोंकी वैयावृत्य (सेवा) करता है, अहिंसा लक्षणवाले धर्मकी व्याख्या करता है, जो मित्र और शत्रुको समानरूपसे देखता है, आते हुए उपसर्गको सहन करता है, हाथ ऊपर कर खड्गासनमें स्थित रहता है। काटते हुए डांस और मच्छरोंको नहीं भगाता, शरीर पर लगे हुए सांपको भी नहीं हटाता, दर्शनविशुद्धि और विनयकी आराधना करता है, परीषहोंको सहन करता है, और इन्द्रियोंको सिद्ध करता है, विकथा नहीं कहता, न क्रोध करता है और न हँसता है, भीषण और निर्जन काननमें निवास करता है। इस प्रकार उसने निरन्तर ज्ञानका अभ्यास किया, और अधर्म करने वाले कर्मको नाश कर दिया इस प्रकार घोर तपश्चरण कर तीर्थंकर प्रकृतिका बँधकर।

घत्ता—त्रिलोकचक्रको क्षुब्ध करनेवाले शुभ कर्मोंका अर्जनकर, अनशन विधिकर और चित्तको सम्यक्त्वमें नियोजित कर वह मृत्युको प्राप्त हुए ॥९॥

१०

तैंतीस सागर आयु प्रमाणवाले पांचवें विजयनामक अनुत्तर विमानमें वह उत्पन्न हुए। पुण्यसे उत्पन्न उनका क्या वर्णन करूँ, उनका एक हाथ प्रमाण शरीर चन्द्रमाके रंगका प्रतिकार-

---

९. १. P विण्णायउ। २. A णोवइ। ३. AP जेमइ। ४. AP विज्जावच्चु। ५. AP समु। ६. P उब्भब्भउ। ७. AP झाडइ। ८. A विकहउ कहइ ण हसइ ण रुसइ। ९. AP अणमण°।

१०. १. A तेतीसंबुहि°। २. AP पंचाणुत्तरि। ३. AP वण्णमि। ४. A पुण्णेण पउण्णउ; P पुण्णेणु पउण्णउ। ५. AP हत्थमेत्तु तणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिप्पडियारउ णिरहंकारउ　　भूसणहरु अहमिंदभडारउ[६] ।
णियवासहु वासंतरु ण सरइ　　उत्तरवेउव्विउ वउ ण करइ ।
सीहासणि सुणिसण्णउ अच्छइ　　ओहिइ तिजगणाडि संपेच्छइ ।
लेइ मणेण भक्खु[७] छुह णासहि　　सो तेत्तीसहिं[८] वरिससहासहिं ।
णिग्गयदइयधवणि[९]हदुक्खहिं　　णीसं[१०] सेइ तेत्तियहिं जि पक्खहिं ।
छम्मासाउसु वट्टइ[११] जइयहु　　सोहम्मिंदें जाणिउ तइयहु ।
सो अहमिंदराहिउ[१२] आवेसइ[१३]　　जियसत्तहि घरि जिणवरु होसइ ।
इय चिंतेवि भणिउ जक्खाहिउ　　धरणीगयणिहाणलक्खाहिउ ।
जंबूदीवभरहउज्झाउरि[१४]　　धणय कणयमयणिलयंण[१५] लहु करि ।

घत्ता—ता णयरि कुबेरें णिम्मविय कंचणभवणविसेसहिं ॥
सरिसरवरउववणजिणहरहिं[१६] पहचच्चरविण्णासहिं[१७] ॥१०॥

११

आयउ[१] देविउ इंदाएसें　　पुरवरु माणवमाणिणिवेसें ।
सिरिहिरिदिहिमइकंतीकित्तिउ　　विजयादेविहि सेव करंतिउ ।
तणुसंसोहणगुणसंजोयहिं[२]　　थक्कउ णाणाविहिहिं[३] विणोयहिं ।
गब्भि ण थंतहु[४] अमरवरिट्ठउ　　वसुधारहिं वइसवणु वरिट्ठउ ।

से रहित और निरहंकार, भूषण धारण करनेवाला आदरणीय अहमेन्द्र। वह अपने निवासविमानसे दूसरे विमानमें नहीं जाता। उसका शरीर प्रतिशरीर उत्पन्न नहीं करता। वह अपने सिंहासन-पर स्थित रहता। अवधिज्ञानसे वह तीनों लोकोंकी नाड़ीको देखता, वह भूख नष्ट करनेके लिए तैंतीस हजार वर्षमें मनसे आहार ग्रहण करता और धमनीके समान दुःखसे रहित तैंतीस पक्षमें एक बार श्वास लेता। जब उसकी छह माह आयु शेष रह जाती है तब सौधर्म स्वर्गके इन्द्रके द्वारा जान ली गयी। वह अहमेन्द्रराज आयेगा और जितशत्रुके घर जिनवर होगा। यह विचार-कर (इन्द्रने) धरतीपर स्थित लाखों निधानोंके स्वामी कुबेरसे कहा, 'हे धनद, जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रकी अयोध्यानगरीमें स्वर्णमय प्रासादका निर्माण करो।'

घत्ता—तब कुबेरने नगरीका विशेष कंचन भवनों, नदियों, सरोवरों, उपवनों, जिनघरों, पथों और चत्वरोंकी रचनाओंसे निर्माण कर दिया ॥१०॥

११

इन्द्रके आदेशसे मानवोंकी मानवियोंके वेश देवियाँ नगरवरमें आयीं। श्री, ह्री, धृति, कान्ति, कीर्ति और विजयदेवी सेवा करने लगीं। शरीरके संशोधनों और गुणोंके उत्पादनों और नाना प्रकारके विनोदोंके साथ वे स्थित हो गयीं। उनके गर्भमें स्थित नहीं होते हुए भी अमर श्रेष्ठ

६. AP अहमिंदु । ७. P भिक्खु । ८. A तेतीसहिं । ९. P °दयियधवण° । १०. P adds वि after णीससेइ । ११. A P वड्ढइ । १२ A P सो लहु अमराहिउ । १३. A P आएसइ । १४. A जंबूदीवे भरहे उज्झा°; P जंबूभरहदीउ उज्झा° । १५. P °णिलयहु लहु । १६. P °जिणहरउववणेहिं । १७. A अइरमणीयपएसहिं ।

११. १. P आइउ । २. P °संजोवहिं । ३. P णाणविहिहिं । ४. A गब्भेच्छंतहु; P गब्भि ण छंतउ ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सुहदंसणि णियमणि संतुट्ठउ　　जा छम्मासहिं ता परिउट्ठउ ।
पल्हत्थंतु णिहाणइं दिट्ठउ ।
णरवइँप्रंगणि दविणु ण माइउं　　सयलहं दीणाणाहहं ढोइउं ।
पवरिक्खाउवंससंभूयहु　　वम्महरूवपरज्जियरूवहु ।
विजयदेवि णं चंदहु रोहिणि　　जियसत्तुहि णरणाहहु गेहिणि ।
अहिणवसयदलकोमलगत्ती　　हंसवण्णि पल्लंकि पसुत्ती ।

घत्ता—परमेसरि णिसि पच्छिमपहरि एक्केक्कउ जि समिच्छइ ।।
णिद्दालसवस मउलियणयण सोलह सिविर्णय पेच्छइ ।।११।।

१२

मउज्झल्लगंडं　　पमत्तं पयंडं ।
गिरिंदप्पमाणं　　गयं गज्जमाणं ।
धरित्ती खणंतं　　विसं ढेक्करंतं ।
हयारिंदपक्खं　　हरिं तिक्खणक्खं ।
करिंदाहिसित्तं　　सिरिं पोमंवत्तं ।
सयामोयधामं　　णवं पुप्फदामं ।
सुहं सेयभाणुं　　दिसुब्भासिभाणुं ।
सिणिद्धं समाणं　　दहे कीलमाणं ।
रईलीलयाणं　　जुयं मीणयाणं ।
वरं वारिपुण्णं　　सियंभोयछण्णं ।

कुबेर धनकी धाराओंमें बरस गया । शुभदर्शनसे अपने मनमें सन्तुष्ट जब छह माह हो गये, तब वह परितुष्ट हो गया । निधान फैलता हुआ दिखाई दिया । राजाके आँगनमें धन नहीं समाया, समस्त धन दीनों और अनाथोंके लिए दे दिया गया । महान् इक्ष्वाकु कुलमें उत्पन्न कामदेवके रूपको अपने रूपसे पराजित करनेवाले राजा जितशत्रुकी गृहिणी विजयादेवी उसी प्रकार थी जिस प्रकार चन्द्रमाकी रोहिणी, जो अभिनव शतदलके समान कोमल शरीरवाली थी । हंसके रंगकी वह पलंगपर सो रही थी ।

घत्ता—रातके अन्तिम प्रहरमें नींदसे अलसायी आँखें बन्द किये हुए वह परमेश्वरी सोलह सपने देखती है और एक-एककी समीक्षा करती है ।।११।।

१२

मदसे गीले गण्डस्थलवाला प्रमत्त प्रचण्ड पहाड़ जैसा गरजता हुआ महागज, धरती खोदता हुआ, तथा फेक्कार करता हुआ वृषभ, शत्रुपक्षको नष्ट करनेवाला, तीखे नखोंवाला सिंह, गजेन्द्रोंके द्वारा अभिषिक्त कमलपत्रोंवाली लक्ष्मी, सदैव आमोद प्रदान करनेवाली नव पुष्पमाला, शुभ्र चन्द्र, दिशाओंको उद्भासित करनेवाला सूर्य, सरोवरमें क्रीड़ा करता हुआ रति-क्रीड़ासे युक्त मत्स्योंका स्निग्ध जोड़ा, जलसे भरित और श्वेत कमलोंसे आच्छादित घड़ोंकी शोभा

५. A परिवुट्ठउ but corrects it to परितुट्ठउ; P परिवुट्ठउ; T परिउट्ठउ । ६. A P add after this : घणु जिह पुणु वरिसंतु अणिट्ठउ । ७. A P °पंगणि । ८. A सविणय; P सिविणइ ।
१२. १. P पोम्मवत्तं ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

रमारामरम्मं घडाणं च जुम्मं ।
लयापत्तणीलं विउद्धारणालं ।
मरालालिरोलं सरं सारसालं ।
जलुल्लोलमालं महामच्छवालं ।
गहीरं रवालं समुद्दं विसालं ।
पहारिद्धिरूढं मइंदूढपीढं ।
णहे धावमाणं सुराणं विमाणं ।
धरारंधणित्तं[3] पसत्थं पवित्तं ।
जसेणुण्णयाणं घरं पण्णयाणं ।
गयासामऊहं मणीणं समूहं ।
सिहालीचलंतं[4] हुयासं जलंतं ।

घत्ता—इय सिविणयपंति मणोहरिय जोइवि सीलविसुद्धइ ॥
सुविहाणइ रायहु पज्जरिय सुत्तविउद्धइ[5] मुद्धइ ॥१२॥

१३

पहुणा विहसिवि गुणगणवंतहि सिविणयफलु विण्णासिउ कंतहि ।
होही तुह सुउ जियवम्मीसरु तिहुयणगुरु तिणाणजोईसरु ।[1]
तासु विमलवाहणअहमिंदहु आउ पउण्णउ बुहयणचंदहु ।
कुंजरवेसें णिवरामाणणि[2] झत्ति पइट्ठउ णं दिणयरु घणि ।
गब्भि परिट्ठिउ जिणु जगमंगलु उट्ठिउ घरि सुरसंथुइकलयलु ।

समूहसे युक्त जोड़ा, लतापत्रोंसे हरा, खिले हुए कमलोंसे युक्त, सारसोंका घर सरोवर, उछलती हुई, जलतरंगोंसे सहित महामत्स्योंका पालक शब्दमय विमल शरीर समुद्र, प्रभाके वैभवसे भरपूर सिंहासनपीठ, आकाशमें दौड़ता हुआ देवताओंका विमान, धरतीके बिलसे निकलता हुआ पवित्र प्रशस्त तथा यशसे उन्नत नागोंका समूह, दिशाओंमें फैली हुई किरणोंवाला मणिसमूह, तथा ज्वालाओंमें जलती हुई आग।

घत्ता—इस प्रकार स्वप्नावली देखकर, शीलसे विशुद्ध सुन्दर मुग्धा विजयादेवी सबेरे सोकर उठी। उसने राजासे कहा। ॥१२॥

१३

राजाने हँसकर गुणगणसे युक्त कान्ताको स्वप्नोंका फल बताया—"तुम्हारा कामदेवको जीतनेवाला त्रिभुवनका गुरु तीन ज्ञानोंका धारक योगीश्वर पुत्र होगा।" बुधजनोंके चन्द्र उस विमलवाहन अहमेन्द्रकी आयु पूर्ण हो गयी। वह शीघ्र गजरूपमें रानीके मुखमें इस प्रकार प्रवेश कर गया मानो सूर्यने बादलोंमें प्रवेश किया हो। विश्वका कल्याण करनेवाले जिन गर्भमें आये

---

२. A P विबुद्धा° । ३. P °णेत्तं । ४. A सिहालीपलित्तं; P सिहालीवलत्तं, but T सिहालीचलंतं । ५. P °विउट्ठइ ।

१३. १. A P add after this: जेट्ठहु मासहु पक्खि अचंदणि (P पक्खियचंदिणि), मावसदिणि ससहरि थियरोहिणि । २. A P णिव° ।

णच्चिउ णवरसालु तियसेसरु अहिणंदिउ जियसत्तु णरेसरु ।
तासु घरंगणि वण्णविचित्तइं रयणइं पुणु णवमास णिहित्तइं ।
धणयाएसें जक्खकुमारिहिं घोसियसुमहुरसाहुक्कारिहिं ।
कामकोहमयमोहविहंजणि णिव्वुइ रिसहजिणिंदि णिरंजणि ।
जलणिहिसमहं कालपरिवाडिहिं जा पण्णासलक्खु गय कोडिहिं ।
घत्ता—ता माहमासंसियदसमिदिणि बीयउ सिवँपयगामिउ ।।
तित्थंकरु णाणत्तयसहिउ उप्पण्णउ जगसामिउ ।।१३।।

१४

उप्पण्णइ जिणि आऊरिय धर कहिं वि समुग्गय जयघंटारव ।
कहिं वि मइंदणिणाय सुभइरव कहिं वि समुग्गय जयघंटारव ।
आसणकंपें विम्हियमइ कंपिउ अहिवइ महिवइ सुरवइ ।
दसणकमलसरणच्चियसुरवरि मयजलमिलियघुलियबहुमहुयरि ।
सयमहु मुणिमहसयणिव्वूढउ अइरावणि वारणि आरूढउ ।
भंभाभूरिभेरिसंघायहिं वज्जंतहिं वाइत्तणिणायहिं ।
जिणकमकमलजुयलसंगयमणु सवहु सवाहणु सधउ सपहरणु ।
सोमभीमभूसाभाभासुर चलिय हरि सरसरसिर सुरासुर ।
कोसलणयरि झड त्ति पराइय परियंचेवि तिवार घरु आइय ।

और घरमें देवताओंकी स्तुतिका कल-कल शब्द होने लगा। इन्द्रने अत्यन्त मधुर नृत्य किया, उसने राजा जितशत्रुका अभिनन्दन किया। नौ माह तक उसके घरमें रत्नोंकी वर्षा होती रही। जिन्होंने साधुकारकी घोषणा की है ऐसी यक्ष-कुमारियोंने रंगबिरंगे रत्नोंकी वर्षा कुबेरके आदेशसे की। काम, क्रोध, मद और मोहका नाश करनेवाले ऋषभ जिनेन्द्रके निर्वाणको प्राप्त होनेके बाद, पांच लाख करोड़ वर्ष बीत जाने पर—

घत्ता—माघ माहके शुक्लपक्षकी दसमीके दिन शिवपदगामी तीन ज्ञानके धारी विश्वके स्वामी द्वितीय तीर्थंकर अजितनाथका जन्म हुआ ।।१३।।

१४

अजितनाथ जिनके उत्पन्न होनेपर धरती आपूरित हो उठी। कहींपर जय-जय और घण्टों-के शब्द होने लगे, कहीं भयंकर सिंहनाद शब्द हो रहा था, कहीं जयघण्टारव उठा, आसनके कम्पायमान होनेसे जिसकी बुद्धि विस्मित है ऐसे नागराज, पृथ्वीराज और देवराज कांप उठे, जिसके दांतोंपर स्थित सरोवरके कमलपर देववर नृत्य कर रहे हैं, जिसके मदजलसे आकृष्ट होकर अनेक भ्रमर गुनगुना रहे हैं, ऐसे ऐरावत महागजपर, तीर्थंकरोंके अभिषेकका निर्वाह करनेवाला इन्द्र आरूढ़ हो गया। भम्भा और प्रचुर भेरियोंके समूहों, बजते हुए वाद्योंके निनादों-के साथ, जिनवरके चरणकमल युगलमें संगतमन अपनी वधू, वाहन, ध्वज और अस्त्रोंके साथ, सौम्य विशाल भूषाकी आभासे भास्वर, प्रेमसे शब्द करते हुए इन्द्र, सुर और असुर चले। वे शीघ्र ही अयोध्या नगरी पहुँचे, तीन परिअर्चनाएँ कर वे घरमें आये।

३. A °कुमारहिं। ४. A °साहुक्कारहिं। ५. A °लक्ख। ६. A °मासि। ७. A सिवपुर°। ८. A तित्थंकर।

१४. १. A P कहि मि। २. A विभाविय°। ३. P भंभाभेरिपडह°। ४. P वायत्त°।

घत्ता—पणवेप्पिणु पियरइं आयरिण सहसा चित्ति वियेप्पिउ ॥
जिणमायहि मायइ सुरवरहिं मायाबालु समप्पिउ ॥१४॥

१५

जगगुरु लेवि देव गय तेत्तहि	सुरगिरिपंडुसिलायलु जेत्तहि ।
तहिं सीहासणि णिहिउ भडारउ	मयणबाणसंताणणिवारउ ।
इंदजलणजमणेरियवरुणहं	पवणधणयभवससिखरकिरणहं ।
आवाहणु करेवि पोमाइवि	जण्णभाउ सब्भावें ढोइवि ।
अमरपंति अवितुट्ट करेप्पिणु	णीरु खीरमयरहरि भरेप्पिणु ।
किसलयछण्ण कलस उच्चाइवि	मंतु पणवसाहा संजोइवि ।
देविंदहिं जिणिंदु अहिसिंचिउ	कुवलयकमलकयंबहिं अंचिउ ।
देवंगइं वत्थइं परिहाविउ	देवे दिव्वगंधेहिं विलेविउ ।
भूसिउ भूसणेहिं साणंदें	णामकरणु विरइउं देविंदें ।

घत्ता—जाएण जेण जसु बंधुयणु कीलासु वि अविसंकिउ ॥
बहिरंतरंगवइरिहिं ण जिउ अजिउ तेण सो कोक्किउ ॥१५॥

१६

णमो जिणा कयंतपासणासणा	णमो विसुद्ध बुद्ध सिद्धसासणा ।
णमो कसायसोयरोयवज्जिया	णमो फणिंदचंदविंदपुज्जिया ।

घत्ता—माता-पिताको आदरसे प्रणाम कर सहसा देवेन्द्रने अपने मनमें विचार किया और मायासे निर्मित कृत्रिम बालक जिनवरकी माताको दे दिया ॥१४॥

१५

विश्वगुरुको लेकर देवता वहाँ गये, जहाँ सुमेरु पर्वतपर पाण्डुक शिला थी, वहाँ कामदेवके बाणोंका सन्ताप दूर करनेवाले भट्टारक जिनवरको रख दिया। इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, पवन, धनद, शंकर, चन्द्र और सूर्यका आह्वान कर संस्तुति की और सद्भावसे यज्ञ पूरा कर अविच्छिन्न देवपंक्ति निर्मित कर, क्षीरसागरसे जल भरकर, किसलयोंसे आच्छादित कलशोंको ऊपर कर, 'ओम् स्वाहा' कहकर, नीलकमलोंसे युक्त जलसे देवेन्द्रोंने जिनेन्द्रदेवका अभिषेक किया तथा उन्हें दिव्य वस्त्र पहनाये। दिव्य गन्धोंसे लेप किया, देवेन्द्रने आनन्दपूर्वक अलंकारोंसे उन्हें भूषित किया, तथा उनका नामकरण संस्कार किया।

घत्ता—जिसके उत्पन्न होनेसे जिसके बन्धुजन क्रीड़ाओंमें शंकाविहीन हो उठे, और जो बहिरंग तथा अन्तरंग शत्रुओंसे नहीं जीते जा सके इसलिए उन्हें 'अजित' कहकर पुकारा गया ॥१५॥

१६

यमके पाशको काटनेवाले हे जिन आपको नमस्कार हो, हे सिद्धबुद्ध और सिद्धशासन आपको नमस्कार हो, कषाय समूह और रोनासे रहित आपको नमस्कार हो; नागेशों चन्द्रोंके समूहसे

---

५. P वियप्पियउ। ६. P समप्पियउ।

१५. १. A[1]P सिहासणि। २. A °संताव°। ३. P अविरुद्ध। ४. P खीरु। ५. A देव।

१६. १. A P विसुद्धबुद्धिसिद्धसासणा। २. A P फणिदइंदचंदपुज्जिया।

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

णमो अदीणकामबाणवारणा णमो महाभवंबुरासितारणा।
णमो विसालमोहजालछिंदणा णमो जियारिरायरायणंदणा।
णमो णिहित्तसुण्णवाइवासणा णमो अणेयभेयभावभासणा।
णमो गयालसालसीलभूसणा णमो पसण्ण दिण्णरोस[3]दूसणा।
णमो विमुक्कदिव्वघोसणीसणा णमो रिसी तवोविहीपयासणा।
णमो अणंतसंतसम्म[4]भावणा णमो[5]रहंत मोक्खमग्गदावणा।

घत्ता—इय वंदिवि अमराणंदियहि णंदणवणसुच्छायहि॥
आणेप्पिणु उज्झहि परमजिणु इंदें अप्पिउ मायहि॥१६॥

१७

कालें जंतें जायउ पोढउ जयवइ णवजोव्वणि आरूढउ।
का वि णारि आलिंगणु मग्गइ क वि कामाउर पायहि लग्गइ।
का वि कुमारि भणइ मई परिणहि विरहु भडारा किं तुहुं ण मुणहि।
एक्कु[1] देहि दिट्ठि सुहगारी जा जीवमि ता दासि तुहारी।
इय णारीयणु होंतु रसिल्लउ कामासत्तउ कामगहिल्लउ।
रक्खहि देवदेव णियसंगें मारिज्जंतु वराउ अणंगें।
पिउणा सुरवइणा घरु गंपिणु पत्थिउ जिणकुमारु पणवेप्पिणु।

पूज्य आपको नमस्कार हो, अदीन काम बाणोंका ध्वंस करनेवाले आपको नमस्कार हो, हे निर्भय आपको नमस्कार, महासंसाररूपी समुद्रसे तरनेवाले आपको नमस्कार, विशाल मोहरूपी जालका छेदन करनेवाले आपको नमस्कार, जितशत्रुके पुत्र आपको नमस्कार; शून्यवादी विचार-धाराको समाप्त करनेवाले आपको नमस्कार, अनेक भेदों और भावोंका कथन करनेवाले आपको नमस्कार, आलस्यसे रहित, और शीलसे भूषित आपको नमस्कार, प्रसन्न और क्रोधरूपी दूषणको दूर करनेवाले आपको नमस्कार, दिव्यध्वनिका शब्द करनेवाले आपको नमस्कार, तपकी विधिके प्रकाशक आपको नमस्कार, अनन्त शान्त और समभाववाले आपको नमस्कार; मोक्षमार्गके अर्हन्त आपको नमस्कार।

घत्ता—इस प्रकार वन्दनाकर, इन्द्रने, नन्दनवनके समान शोभा धारण करनेवाली अयोध्यामें आकर जिनेन्द्रदेवको उनकी माताके लिए अर्पित कर दिया॥१६॥

१७

समय बीतनेपर वे प्रौढ़ हो गये। विश्वपति अजितनाथ नवयौवनमें स्थित हो गये। कोई नारी आलिंगन माँगती है, कोई कामातुर होकर पैरोंसे लगती है, कोई कुमारी कहती है कि "मुझसे विवाह करो। हे आदरणीय क्या आप विरहको नहीं समझते। एक सौभाग्यशाली दृष्टि दीजिए, मैं जीवित नहीं रहूँगी, तुम्हारी दासी हूँ। इस प्रकार रसमय कामसे आसक्त और कामसे गृहीत होते हुए, कामदेवसे मारे जाते हुए नारीजनकी हे देवदेव अपने संगसे रक्षा कीजिए" इस प्रकार पिता और इन्द्रने घर जाकर जिनकुमार अजितको प्रमाणकर निवेदन किया। किसी

---

३. A P °दिण्णदोस°। ४. A P °संतसोमभावणा। ५. A णमो अरहंत।

१७. १. A एक्क सुदिट्ठि देहि सुहगारी; P एक्क सदिट्ठि देहि सुहगारी। २. A P add after this:; कुमरत्तें (P कुमरत्ति) पुणु कालु सुहासिउ, पुव्व अट्ठदहलक्ख पणासिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कह व कह व मइइं[3] इच्छाविउ कण्णासहसहिं पहु[4] परिणाविउ ।
सुसिरु तंति घणु पुक्खरु वज्जइ जहिं तुंबुरुणा सुसरउ गिज्जइ ।
जहिं उव्वसिरंभहि णच्चिज्जइ अणवम[5]रसविसेसु संचिज्जइ ।

घत्ता—जहिं मंगलदव्वविहत्थियहिं उरघोलिरहारमणिहिं ॥
आवंतिहिं जंतिहिं सुललियहिं छेउ णत्थि सुररमणिहिं ॥१७॥

१८

जहिं उवमाणउ किं पि ण दिज्जइ तं उच्छउ मइं किं वण्णिज्जइ ।
सव्वतित्थपरिपुण्णहिं कलसहिं मुणिव[1]यणहिं णं वियलियकलुसहिं ।
खीरतुसारतारणित्तारहिं जित्त[2]विलासिणिमोत्तियहारहिं ।
कोमल[3]किसलयछाइयवत्तहिं विसहरसुरणरखयरुक्खित्तहिं ।
मंगलघोसविलासविसेसहिं तियसिंदहिं मिलेवि पुहईसहिं ।
किउ रज्जाहिसेउ सुर[4]सेवहु बद्धु णिलाडि पट्टु तहु देवहु ।
महि भुंजंतहु पीणियभव्वहुं एक्कुणवीस[5] लक्ख गय पुव्वहं ।
एक्कहिं दिणि णरणियरणिरंतरि अच्छंतें[6] अत्थाणब्भंतरि ।
वसुवइवसुमइकंताकंतें रयणिहि गयणभाउ जोयंतें ।

प्रकार बलपूर्वक इच्छा उत्पन्न करके प्रभुका एक हजार कन्याओंसे विवाह कर दिया गया जहाँ सुषिर, तन्त्री, घन और पुष्कर वाद्य बजाये जाते हैं और तुम्बिरके द्वारा सुसरस गान किया जाता है, जहाँ उर्वशी और रम्भाके द्वारा नृत्य किया जाता है। इस प्रकार बिना नौवें रस (शान्त) के बिना रस विशेष संचित किया जाता है।

घत्ता—जहाँ, जिनके हाथमें मंगल द्रव्य हैं और वक्षपर हारमणि हिलडुल रहे हैं ऐसी आती जाती हुई सुन्दर सुर रमणियोंका अन्त नहीं है ॥१७॥

१८

जिसका कोई भी उपमान नहीं दिया जा सकता, ऐसे उस उत्सवका मेरे द्वारा क्या वर्णन किया जा सकता है ? मुनि वचनोंके समान कालुष्य (पाप—कलुषता) से रहित, क्षीरकी तरह हिमकणोंसे निरन्तर भरपूर, बिलासिनियोंके मोतियोंके हारको जीतनेवाले, कोमल किसलयवाले, पत्तोंसे आच्छादित, नागों, देवों और मनुष्यों एवं विद्याधरोंके द्वारा उठाये गये, सब तीर्थोंसे परिपूर्ण कलशोंसे, मंगलघोषों और विलासोंसे विशिष्ट, देवों देवेन्द्रों और पृथ्वीशोंने, लक्ष्मीके द्वारा सेवित देवका राज्याभिषेक किया और उनके ललाटपर पट्ट बाँध दिया। भव्योंको प्रसन्न करनेवाले और धरतीका भोग करनेवाले उन्नीस लाख पूर्व समय बीत गया। एक दिन मनुष्य-समूहसे भरपूर दरबारके मध्य बैठे हुए धरती और लक्ष्मीके स्वामी रात्रिमें आकाश मार्गमें,

---

३. A मंडइ; P मडइ। ४. P सहु। ५. A P अणुवम°; T अणुवम° but the meaning given is शान्तरसरहितः।

१८. १. A P णं मुणि°। २. P जिणिवि विला°। ३. A कमलकिसलयच्छाइय°; P कमलहिं किसलयछाइय°। ४. A सुरसेवहु; P सियसेवहु। ५. A एक्कुणलक्खवीस गय; P तयपंचास लक्ख गय। ६. P अच्छइ जा अत्थाण°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—ता तेण दीह ससहरधवल उक्क पडंती दिट्ठिय ॥
णं णहसिरिकंठहु परियलिय चलमुत्ताहलकंठिय ॥१८॥

१९

पेच्छंतहु सा तहिं जि विलीणी ईसमणीस समासमलीणी ।
गयणुम्मुक्क उक्क गय जेही अथिर णरेसरसंपय तेही ।
लग्गमि णिरवज्जहि मुणिविज्जहि पभणइ सामि जामि पावेज्जहि ।
छणि छणि जडयणु किं हरिसिज्जहि आउ वरिसवरिसेणे जि खिज्जइ ।
जीय भणंतहं विहसइ तूसइ मरे पभणंतहं रुंजइ रूसइ ।
ण सहइ मरणह केरउ णाउं वि पहरणु धरइ फुरइ णित्थाउ वि ।
कालि महाकालिहिं घरु ढुक्कइ मज्जु मासु ढोवंतु ण थक्कइ ।
जोइणीहिं को किरे रक्खिज्जइ पीडिवि मोडिवि कालें खज्जइ ।
खयकालहु रक्खंति ण किंकर मय मायंग तुरंगम रहवर ।
खयकालहु रक्खंति ण केसव चक्कवट्टि विज्जाहर वासव ।
होइ विसूई सप्पें घेप्पई दाढिविसाणिमिगहिं दारिज्जइ ।
जलि जलयर थलि थलयर वइरिय णहि णहयर भक्खंति अवारिय ।
तो वि जीउ जीवेवइ वंछइ लोहें मोहें मोहिउ अच्छइ ।

घत्ता—चन्द्रमाके समान धवल लम्बी उल्का गिरते हुए देखी मानो आकाशरूपी लक्ष्मीकी मोतियोंकी चंचल कण्ठी गिर गयी हो ॥१८॥

१९

देखते-देखते वह उल्का वहीं विलीन हो गयी। भगवान् की बुद्धि उपशमको प्राप्त हुई। वह विचार करने लगे कि जिस प्रकार आकाशसे च्युत उल्का चली गयी, उसी प्रकार नरेश्वरकी सम्पत्ति अस्थिर है। मैं निरवद्य मुनिविद्यामें लगूँगा। स्वामीने कहा कि मैं प्रव्रज्याके लिए जाता हूँ। मूर्खजन क्षण-क्षणमें क्यों प्रसन्न होता है? आयु साल-सालमें क्षीण-क्षीण होती है। 'जियो' कहने वालों पर (जीव) हँसता है और सन्तुष्ट होता है, मरो कहने वालों पर गर्जता है और रुष्ट होता है? वह मरणका नाम भी सहन नहीं करता। दुर्बल होते हुए भी प्रहरण धारण करता है, स्फुरित होता है। काली और महाकालीके घर पहुँचता है। और मद्य मांस ले जाते हुए नहीं थकता। योगिनियोंके द्वारा किसकी रक्षा की जाती है, कालके द्वारा पीडित कर और तोड़कर खा लिया जाता है। अनुचर क्षयकालसे नहीं बचा सकते। मत्तमातंग तुरंग और रथवर भी। क्षयकालसे केशव चक्रवर्ती विद्याधर इन्द्र भी रक्षा नहीं करते। विशूचिका होता है और साँपके द्वारा ग्रहण किया जाता है। दाढ़ी और सींगवाले पशुओंके द्वारा विदीर्ण कर दिया जाता है। जलमें जलचर और थलमें थलचर उसके दुश्मन हैं, आकाशमें आकाशचर जीव खा लेते हैं बिना किसी देरके। तब भी जीव जीनेकी इच्छा रखता है, और लोभ तथा मोहसे मोहित रहता है।

७. A तो।

१९. १. P पव्वज्जहि। २. A P वरिसु वरिसेण। ३. A मरणु भणंतहं; P मरु पभणंतहं। ४. A किर को रक्खिज्जइ; P किं किर। ५. A संपेसिज्जइ। ६. A P add after this : दहि बुड्डइ जलणेण पलिप्पइ। ७. A P °मिगहिं। ८. A P add after this : विसविसक्खसत्थहिं मारिज्जइ। ९. A जीवेवउ; P जीवेव्वउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—सुहुं वंछइ पर[१०] तं णउ लहइ मरणहु तसइ ण चुक्कइ ॥
[११]इच्छाभयपरवसु एहु जणु जममुहकुहरहु ढुक्कइ ॥१९॥

२०

ता[१]वाइय लोयंतिय सुरवर ते भणंति जय जगगुरु सुरवर ।
चंगउ चित्तडिंभु[२] संथवियउ णाणणिहेलणि पइं संथवियउ ।
छंडेंहि[३] पणइणि कंचणगोरी धरेंहि[४] भुवणसंबोहणगोरी ।
गइदुच्चरित्तकम्मसंताणइ अजियसेणु णिहियउ संताणइ ।
पभणिउ पुत्त चरेसु[५] संताणइ सयलमहीयलकयसंताणइ ।
तहिं अवसरि णहु छण्णु विमाणहिं पत्तहिं गिव्वाणेहिं विमाणिहिं ।
किउ दिक्खाहिसेउ तियसेसहिं अंचिउ पहु पसत्थतियसेसहिं ।
गय खग सुर णियसिवियाजाणें फलतरुणविएं पवरुज्जाणें ।
णावइ णविउ सहेउवणामें सो सोहंतु सुद्धपरिणामें ।
णिच्च करंति पणयकलहं सइं जहिं सरि सरु मुयंति कलहंसइं ।
[१०]तडगंधव्वगीयकलहंसइं ताहं चलणि रसियइं कलहंसइं ।
तहिं सत्तच्छयतलि सुणिसण्णउ जिणु जिणंतु चत्तारि वि सण्णउ ।

घत्ता—सुखकी इच्छा करता है परन्तु उसे नहीं पाता, मौतसे डरता है (त्रस्त होता है) परन्तु चूकता नहीं, इस प्रकार इच्छा और भयके अधीन यह जीव उन यमके मुख रूपी कुहरमें प्रवेश करता है ॥१९॥

२०

इतनेमें लौकान्तिक देववर आये। वे देववर कहते हैं कि हे विश्वगुरु आपकी जय हो, आपने चित्तरूपी बालकको धैर्य बँधाया, और उसे ज्ञानरूपी घरमें स्थापित किया। स्वर्गकी तरह गोरी कामिनीको आप छोड़ते हैं, और भुवनको सम्बोधित करनेवाली गोरी (सरस्वती) को धारण करते हैं। दुश्चरित कर्मकी सन्तान परम्परा चले जाने पर उन्होंने अजितसेनको कुल-परम्परामें स्थापित किया और कहा—हे पुत्र, तुम कुल-परम्परामें चलना, और समस्त विश्वको निज सन्तान समान मानना। उस अवसरपर आकाश विमानोंसे आच्छादित हो गया। आये हुए असंख्य देवेन्द्रोंके द्वारा दीक्षाभिषेक किया गया। प्रशस्त स्त्रियोंके द्वारा अर्चा की गयी। विद्याधर और देव अपने-अपने शिविकायानसे चले गये। वह अपने शुद्ध धारणाओंसे इस प्रकार शोभित है, जिस प्रकार, फलसे यौवनको प्राप्त, सहेतुक नामका विशाल उद्यान जैसे झुक गया हो। जहां कलहंस स्वयं नित्य प्रणयकलह करते हैं और जहां नदीमें वे सुन्दर स्वर करते हैं। जहां नट गन्धर्वोंके गीतोंकी सुन्दरताको नष्ट करनेवाले उनके पैरोंमें सुन्दर नूपुर बज रहे थे, ऐसे उद्यानमें सप्तपर्णी वृक्षके नीचे बैठे हुए, चार संज्ञाओं (आहार, निद्रा, भय और मैथुन) को जीतते हुए, आशा रहित परमेश जिनवर ने।

१०. P तं पर णउ। ११. A इच्छाहय परवसु; P मिच्छाभयपरवसु।

२०. १. A P तावाइय। २. चित्तडंभु but gloss बालकः। ३. A छंडिवि; P छड्डहि। ४. A P चंपय°। ५. P वरहि। ६. P चरसु। ७. A णर; P णिव। ८. A तावइ णमिउ। ९. A P सहेउअणामें; K सहेउवणामें but gloss and T सहेउवणामें सहेतुकनाम्नोद्यानम्। १०. A णडगंधव्व°। P तडि गंधव्व°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—[11]माहे मासे सियणवमिदिणे रोहिणिरिक्खि गयासें ॥
अवरण्हइ केसलोउ करिवि लइय दिक्ख परमेसें ॥२०॥

२१

जे धम्मेल्ल विमुक्क सुवत्तें[1] ते सुरणाहें मणिमयपत्तें ।
लेवि घित्त खीरण्णवणीरइ को णउ करइ भत्ति जइ णीरइ ।
विसयें[2]परीसहरिउहु ण संकिउ [3]णिवसहासु तें सहुं दिक्खंकिउ ।
णाणु चउत्थउ खणि उप्पण्णउं छट्ठुववासें [4]वँउ पडिवण्णउं ।
उज्झाणयरिहि बीयइं[5] वासरि किउं पारणउं बंभरायहु घरि ।
कुसुमवरिसु सुरवं[6]डहणिणायइं पंचच्छरियइं तहिं संजायइं ।
गेहँ[7]णेहबंधणु विच्छिण्णउं बारहवरिसइं तउ संचिण्णउं ।
पूसहु सुक्कपक्खि संपत्तइ एयारसि रोहिणिणक्खत्तइ ।
भावाभावालोयविराइउ[8] केवलणाणु तेण उप्पाइउ ।
हय दुंदुहि णं गज्जिउ सग्गें आय देव दिसिविदिसहुं[9] मग्गें ।

घत्ता—चत्तारि सयाइं सरासणहं सड्ढइं देहु जिणिंदहो ॥
अमरिंदें दूरासंकिएण मण्णिउ सरिसु गिरिंदहो ॥२१॥

घत्ता—माघ, माहके शुक्लपक्षकी नवमीके दिन रोहिणीनक्षत्रके अपराह्लके समय केश लोंचकर दीक्षा ग्रहण कर ली ॥२०॥

२१

सुन्दर मुखवाले उन्होंने जो बाल छोड़े उन्हें देवेन्द्रने मणिमय पात्रमें लेकर क्षीर समुद्रके पानीमें डाल दिया, नीरज (रजरहित निष्पाप) मुनिकी भक्ति कौन नहीं करता। विषयरूपी परीसहके शत्रुसे शंका नहीं करते हुए, एक हजार राजाओंने उनके साथ दीक्षा ग्रहण कर ली। एक क्षणमें चौथा ज्ञान उन्हें उत्पन्न हो गया, छठे उपवाससे उनका व्रत सम्पन्न हुआ, दूसरे दिन, अयोध्यानगरीमें उन्होंने ब्रह्मराजाके यहाँ पारणा की। कुसुम वर्षा, देवनगाड़ोंका निनाद और पाँच महाश्चर्य वहाँ हुए, घरके स्नेहका बन्धन छिन्न-भिन्न हो गया, बारह वर्ष तक उन्होंने तपश्चरण किया। पूष माहका शुक्लपक्ष आनेपर ग्यारस रोहिणी नक्षत्रमें विश्वके समस्त पदार्थों-को प्रकाशित करनेवाला केवलज्ञान उन्हें उत्पन्न हो गया। देव दुन्दुभियाँ आहत हो उठीं, मानो स्वर्ग गरज उठा हो, देवता दिशा और विदिशाके रास्ते आये।

घत्ता—जिनेन्द्रके साढ़े चार सौ धनुष ऊँचे शरीरको देखकर दूरसे आशंकाको प्राप्त इन्द्रने उन्हें सुमेरु पर्वतके समान समझा ॥२१॥

---

११. A P माहहो मासहो ।

२१. १. A P °वत्तें । २. A P विसहपरीसह° । ३. A P णिव° । ४. A P वउ । ५. A तीयइ । ६. A P °पडह° । ७. P गेहि णेह° । ८. A P भावाभावलोएं पविरायउ । ९. A °विदिसहं मग्गे; P °विदिसि णहग्गें ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२

णवकणयवण्णु खमभावु पुण्णु ।
संथुउ अणेण अमराहिवेण ।
जय भव भवंत जय दाणवंत ।
जय भु[1]यणाह विरइयविवाह ।
जय गोरिरमण जय सुविसगमण ।
जय तिउरडहण जय मयणमहण ।
जय मोक्खमग्ग णिग्गंथ णग्ग ।
जय सोमसीस जय तिहुवणीस ।
जय णायहार– भूसियसरीर ।
सुतिलोयणास– हर हरविलास ।
सुरयंतवित्त– पब्भाररत्त ।
णीसरियविमल चउवयणकमल ।
जय वेयभासि पसुवहपयासि ।
णिद्दड्ढ[2]डंभ जय परमबंभ ।
कंपावियक्क कयधम्मचक्क ।

२२

इन्द्रने उनकी स्तुति शुरू की—"आप नवस्वर्णवर्णके समान हैं, आपका क्षमाभाव पूर्ण हो चुका है, भवका अन्त करनेवाले हे शंकर आपकी जय हो। दानशील आपकी जय हो। हे भूतनाथ (सकल प्राणियोंके स्वामी), आपकी जय हो। विवाहसे विरक्त आपकी जय हो। गौरीरमण (पार्वती सरस्वतीसे रमण करनेवाले) आपकी जय हो, सुवृषगमन (धर्मका प्रवर्तन करनेवाले, बैलपर गमन करनेवाले) आपकी जय हो। त्रिपुर दहन (त्रिपुरराक्षसका दहन करनेवाले और जन्म जरा और मरणका नाश करनेवाले) आपकी जय हो, मोक्षमार्ग (मोक्षमार्ग स्वरूप, बाण छोड़नेवाले) आपकी जय हो, हे निर्ग्रन्थनग्न आपकी जय हो। हे सोमशिष्य (शान्तशिष्य, चन्द्रमस्तक) आपकी जय हो। त्रिभुवनस्वामी (त्रिलोकस्वामी, त्रिपथगा स्वामी) आपकी जय हो। हे नायधार (सन्मार्ग धारण करनेवाले और नागोंको धारण करनेवाले) आपकी जय हो। भूषित शरीर (अलंकृत शरीर, भभूतसे अलंकृत शरीर) आपकी जय हो। हे सुतिलोयनाश (त्रिलोकका नाश करनेवाले, तीन नेत्रोंको धारण करनेवाले) हे हर (शिव, धर्मंधर) आपकी जय हो, हरविलास (क्रीड़ा रहित विशिष्ट क्रीड़ावाले) आपकी जय हो। सुरयंतवित्त प्राग्भाररक्त (सुरतिका अन्त करनेवाले, चरितके व्रतमें लीन रहनेवाले, सुरतिमें अन्ततक प्रयत्नशील रहनेवाले) णीसरियविमल (जिससे विशिष्ट मल अलग हो चुके हैं, ऐसे जो चार मुख रूपी कमलवाले हैं।

वेदभाषी (ज्ञानको प्रकाशित करनेवाले, वेदको प्रकाशित करनेवाले) आपकी जय हो। पसुवह पयासी (पशुवध करनेवाले, पशुओंके लिए भी पथ प्रकाशक) आपकी जय हो। निर्दग्धदम्भ (दम्भको जलानेवाले, निकृष्ट दम्भवाले) आपकी जय हो। हे परम ब्रह्म (परमात्म-स्वरूप, ब्रह्मा, विष्णु, और महेश स्वरूप) आपकी जय हो, अर्कको कम्पित करनेवाले हे धर्मचक्र

---

२२. १. P भुवणाह। २. A णिद्दंदडंभ।

जय चक्कपाणि   जय दिव्वणाणि।
बहुसोक्खहेउ   जय गरुलकेउ।

घत्ता—तुहु गब्भणिवासि हिरण्णमयविट्ठिइ सुट्ठु पसिद्धउ॥
तुहुं तेण हिरण्णगब्भे भणिउ अण्णहु एउ णिसिद्धउ॥२२॥

२३

वंदिवि एम सुरिंदें सत्तिइ   विरइउ समवसरणु जिणभत्तिइ।
माणखंभसरवरसरपरिहहिं   सकुसुमवेल्लिहिं मरगयफलिहहिं।
णिम्मियपायारेहिं विचित्तिहिं   थूहहिं सूरयंतमणिदित्तिहिं।
कप्पद्दुमचेईहरचिंधहिं   धूवहडेहिं सुधूवसुगंधहिं।
णडसालाहिं णट्टतंडवियहिं   थामि थामि मणिमयमंडवियहिं।
तोरणरयणालंकियदामहिं   कणयदंडवरफणिपडिहारहिं।
जं एहउं तहिं मोक्खहु पंथिउ   अजियणाहु सीहासणि संठिउ।
पुव्वासासंमुहुं आसीणउ   किं वण्णमि तेल्लोक्कपहाणउ।

(धर्मचक्र, चक्राकार धनुषवाले) आपकी जय हो। हे चक्रपाणि (हाथमें चक्रका लांछनवाले, चक्रवाले) आपकी जय हो। हे दिव्यज्ञान आपकी जय हो। बहुसोक्खहेउ (बहुत लोगोंके सुखके कारण, वधुओंके सुखके कारण) हे गरुडध्वज आपकी जय हो।

घत्ता—गर्भमें स्थित रहनेपर हिरण्यमय वृष्टिसे आप बहुत प्रसिद्ध हुए इसी कारण आप हिरण्यगर्भ कहे गये, दूसरेके लिए, यह नाम निषिद्ध है॥२२॥

२३

इस प्रकार देवेन्द्रने वन्दना कर, मानस्तम्भों, सरोवरों, सरों और परिखाओं, पुष्प सहित लताओं, मरकत और स्फटिक मणियों, बनाये गये विचित्र परकोटों, सूर्यकान्तमणियोंसे दीप्त थूनियों, कल्पवृक्षों, चैत्यगृहों और चिह्नों, सुन्दर धूप से सुगन्धित धूपघटों, जिनमें ताण्डव नाट्य किया जा रहा है, ऐसी नाट्यशालाओं, स्थान-स्थानपर मणिमय मण्डपों तोरणों, रत्नों से अलंकृत मालाओं, स्वर्णदण्ड धारण करनेवाले श्रेष्ठ ....? प्रतिहारोंसे, उसने (देवेन्द्रने) शक्ति और भक्तिके साथ जब ऐसे समवशरणकी रचना की, तो मोक्षके पथिक अजितनाथ सिंहासनपर स्थित हो गये। पूर्व दिशा के सम्मुख बैठे हुए उन त्रिलोक श्रेष्ठ का मैं क्या वर्णन करूँ?

———

३. A P दिव्ववाणि। ४. A P °गब्भु। ५. A एउ ण सिद्धउ।

२३. १. P सुकुसुम°। २. P सुयंधसुयंधहिं। ३. A णट्टमंडवियहिं। ४. A P रयणतोरणालं°। ५. A P °दारहिं। ६ A P °दंडधर°। ७. P जं एहउ तं सक्कें पत्थिउ, जगकारुण्णें आवेप्पिणु थिउ। ८. P पुव्वासामुहुं तेण आसीणउ।

घत्ता—चउतीसातिसयविसेसधरु जिणु हरिवीढि बइट्ठउ ॥
उययद्दिसिहरि उययंतु रवि छुडु णं[1] लोएं दिट्ठउ ॥२३॥

२४

सव्वभद्दु तं तहु सीहासणु कुसुमवासु भसलावलिपोसणु ।
णवकंकेल्लिरुक्खु कोमलदलु भामंडलु णं दिणयरमंडलु ।
छत्तइं तिण्णि चंदसंकासइं चमरइं हिमगोखीराभासइं ।
वज्जइ दुंदुहि भुवणाणंदणु विरइयरिद्धिउ सइं सक्कंदणु ।
णिग्गय दिव्व[1]भास सच्चु[2]ण्णय तं णिसुणंति अमर णर पण्णय ।
अक्खइ जिणु सत्त वि पायालइं णरयलक्खदुक्खग्गिविसालइं ।
अक्खइ जिणु भावणसंपत्तिउ वेंतरजोइससग्गुप्पत्तिउ ।
अक्खइ जिणु अहमिंद वि सुरवर बहुविह णर तिरिक्ख तस थावर ।
अक्खइ जीवकम्म[3]भेयंतरु अक्खइ पेक्खइ तिजगु[4] णिरंतरु ।
सीहसेणरायाइय गणहर जाया णउइ[5] तासु सम्मय[6]धर ।

घत्ता—सहसाइं तिण्णि पण्णासियइं सयइं सत्त भयवंतहं ॥
पुव्वंगधरहं तहिं मुणिवरहं जायइं संतहं दंतहं ॥२४॥

घत्ता—चौंतीस अतिशय विशेषोंको धारण करनेवाले जिनेन्द्र भगवान् सिंहासनपर बैठ गये मानो लोगोंने उदयाचलके शिरपर उगता हुआ सूर्य शीघ्र देखा हो ॥२३॥

२४

उनका वह सर्वभद्र सिंहासन था, जिसमें कुसुमोंकी गन्ध है, और जो भ्रमरावलीका पोषण करनेवाला है, ऐसा कोमलदलवाला नव अशोकवृक्ष, भामण्डल, (मानो दिनकरका मण्डल हो) चन्द्रमाके समान तीन छत्र, चन्द्रमा और दूधकी आभाके समान चमर, भुवनको आनन्द देनेवाली दुन्दुभि बजती है। ऋद्धियोंको उत्पन्न करनेवाला इन्द्र स्वयं (कहता है); भगवान्की सत्यसे उन्नत दिव्यभाषा निकलती है उसे अमर नर और नाग सुनते हैं। जिन भगवान् नरककी लाखों दुःखरूपी अग्नियोंसे विशाल सात पातालों (सातों नरकों) का कथन करते हैं। जिनवर, भवनवासी देवोंकी सम्पत्तिका कथन करते हैं। व्यन्तर ज्योतिष स्वर्गोंकी उत्पत्तिका कथन करते हैं। जिन, अहमेन्द्र सुरवर बहुविध मनुष्य तिर्यंच त्रस और स्थावरका कथन करते हैं। जीव और कर्मके भेदोंका कथन करते हैं। त्रिजगको निरन्तर देखते हैं और उसका कथन करते हैं। सम्यग्दर्शन धारण करनेवाले सिंहसेनादि उनके नब्बे गणधर थे।

घत्ता—तीन हजार सात सौ पचास ज्ञानवान पूर्वांगके धारी शान्त और दांत मुनिवर हुए ॥२४॥

---

१. A णं तइलोएं दिट्ठउ।

२४. १. P दिव्ववाणि। २. A सव्वुण्णय; P सव्वण्णुय; but K सच्चुण्णय and gloss सत्योन्नता। ३. P °कम्महो यंतरु। ४. A तिजयब्भंतरु। ५. A P णवइ; K णउवि and gloss नवतिः। ६. A सम्मइधर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५

छुसयाइं इगिवीससहासइं सिक्खुयरिसिहिं विमुक्कधणासइं ।
चउसयाइं णवसहसइं सिट्ठइं णाणत्तयसंजुत्तहं[1] दिट्ठइं ।
केवलणाणिहिं वीससहासइं जाइं अणंगसंगणिण्णासइं ।
ताइं जि पुणु चउसयहिं समेयइं विक्किरियारिद्धिहरहं णेयइं ।
तवसमसहसइं पुणरवि उत्तइं चउसयाइं पण्णासइ जुत्तइं[2] ।
सग्गारोहण[3]सुहयणिसेणिहिं संभूयइं[4] मणपज्जवणाणिहिं ।
तेत्तियइं जि पण्णासइ रहियइं दिण्णुत्तरहं विवाइहिं विहियइं[5] ।
एंवं[6] गणंतगणंतहुं आयउ एक्कु लक्खु भिक्खुहुं संजायउ ।
अज्जहं लक्खइं तिण्णि समासँविं[7] उप्परि सहसइं वीस णिवेसँविं[8] ।
तेत्तिय हउं सावय[9] आहासविं पंचलक्ख अणुवइयहिं घोसविं[10] ।
संखारहिय देव णिद्देसविं[11] देविहिं किहं[12] परिमाणु[13] गवेसविं ।
घत्ता—इय एत्तियसंघें परियरिउ पुव्वहं विरइयपरैंहिय[14] ॥
[15]तेपण्णलक्खु महियलि भमिवि बारहवरिसहिं विरहिय ॥२५॥

२६

सिहरिहि दरिसियदरिमयवेयहु[1] पुणु अवसाणि गंपि संमेयहु ।
मासमेत्तु थिउ पडिमाजोएं जाणेंमि[2] णाहु विमुक्कउ जोएं ।

२५

धनकी आशासे रहित इक्कीस हजार सातसौ शिक्षक मुनि थे। नौ हजार चार सौ, तीन ज्ञानोंसे युक्त (अवधिज्ञानी) कहे गये हैं। कामके संगका नाश करनेवाले बीस हजार केवलज्ञानी। इतने ही अर्थात् बीस हजार और चार सौ विक्रिया ऋद्धिवालोंको जानना चाहिए। स्वर्गारोहणकी सुखद नसैनी मनःपर्यय ज्ञानी बारह हजार चार सौ पचास। पचास रहित इतने ही अर्थात् बारह हजार चारसौ उत्तर देनेवाले अनुत्तरवादी। इस प्रकार गिनते-गिनते एक लाख भिक्षु हो जाते हैं, संक्षेपमें तीन लाख बीस हजार आर्यिकाएँ और इतने ही मैं श्रावक कहता हूँ। मैं पाँच लाख अणुव्रतियों (श्राविकाओं) की घोषणा करता हूँ। मैं देवोंका संख्यारहित निर्देश करता हूँ। देवियोंके परिमाणकी मैं क्या खोज करूँ ?

घत्ता—इस प्रकार इतने संघसे घिरे हुए, बारह वर्ष कम त्रेपन लाख पूर्वतक, दूसरोंका हित करते हुए उन्होंने धरतीपर परिभ्रमण किया ॥२५॥

२६

जिसकी घाटियोंमें हरिणोंका वेग दिखाई देता है, ऐसे सम्मेदशिखरपर वह अन्तमें गये। एक माह तक प्रतिमायोगमें स्थित रहे। मैं जानता हूँ फिर स्वामी योगसे विमुक्त हो गये। इस

---

२५. १. A P °संजुत्तइं। २. P °उत्तइं। ३. A P सुहणिस्सेणिहिं, but T सुहय° सुखद°। ४. P संभूयहिं। ५. P वहियइं। ६. A P एम। ७. A P समासमि। ८. A P णिवेसमि। ९. A P सावइ आहासमि। १०. A P घोसमि। ११. A P णिद्देसमि। १२. A P कहिं। १३. A P गवेसमि। १४. A P विहरइ परहिय। १५. A तेवण्ण लक्ख; P सो एक्कु लक्खु।

२६. १. A दावियदरिसरिवेयहु; P दरिसियदरिसरिवेयहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक्कपिंड बाहत्तरिलक्खइं जीवेप्पिणु पुव्वहं कय[3]सोक्खइं ।
मासि चइत्ति पक्खि ससिजोण्हइ पंचमिदिवसि जाइ पुव्वण्हइ ।
रोहिणिरिक्खि कम्मसंघारणु दंडॅंकवाडुरुजगजगपूरणु ।
अंतिमझाणु झत्ति विरएप्पिणु तिण्णि वि तणुबंधणइं मुएप्पिणु ।
भुवणॅत्तयसिहरहु सुहठाणहु अजिउ भडारउ गउ णिव्वाणहु ।
कय णिव्वाणपुज्ज सुरसारहिं तणु संपूइॅउ अग्गिकुमारहिं ।
गउ सुरवइ जिणगुणरंजियमणु अवरु वि जहिं आयउ तहिं गउ जणु ।

घत्ता—जिह रिसहें भरहहु वज्जरिउं तिह हउं तुह सॅयमॅाणण ।।
आहासमि सयररायचरिउ कुंदपुप्फदंताणण ।।२६।।

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे अजियणिव्वाणगमणं णाम अट्ठतीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥३८॥

॥ अॅजियचरियं समत्तं ॥

प्रकार बहत्तर लाख पूर्व वर्ष सुख पूर्वक जीकर चरमशरीरी, चैत्रशुक्ल पंचमीके दिन पूर्वाह्णमें (जब कि रोहिणी नक्षत्र था) कर्मका संहारक दण्डप्रतर आदि लोकपूरण-समुद्घात किया कर तथा अन्तिम ध्यान कर तीन शरीर बन्धनों (औदारिक तैजस और कार्मण) को छोड़कर, आदरणीय अजितनाथ भुवनत्रयके शिखर शुभस्थान निर्वाणके लिए चले गये। सुरश्रेष्ठोंने उनकी निर्वाण-पूजा की। अग्निकुमार देवोंने उनके शरीरका संस्कार किया। इन गुणोंसे रंजित मन होनेवाला इन्द्र चला गया। और भी लोग जहाँसे आये थे वहाँ चले गये।

घत्ता—कुन्द पुष्पके समान मुखवाले हे श्रेणिक, सगर राजाका जैसा चरित ऋषभ नाथने भरतसे कहा था वैसा मैं तुमसे कहता हूँ ॥२६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका अड़तीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥३८॥

---

२. AP जाणिवि । ३. A P कयसंखहं । ४. A दंडु कवाड पयरजयपूरणु; P दंडु कवाडु पयरु जयपूरणु । ५. A भुवणंतय°; P भुवणत्तइ । ६. A P संकारिउ । ७. A P T सियमाणण । ८. A P omit अजियचरियं समत्तं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ३९

गुणगणहरु भासइ गणहरु बहुरसभावणिरंतरु ॥
मगहाहिव णिसुणि महाहिव सयरणरिंदकहंतरु ॥ ध्रुवकं ॥

१

इह जंबुदीवि खरयरकराहि मंदरगिरिपुव्विल्लइ विदेहि ।
सीयहि दाहिणयलि संणिसण्णु उद्दामगामसीमापउण्णु ।
णं धरणिइ दाविउ सुहपएसु वच्छावइ णामें अत्थि देसु ।
मायंदणवदलुक्कंठियाउ जहिं कलयलंति कलयंठियाउ ।
कमलायर धरियसुपुंडरीय णं णरवइ धरियसुपुंडरीय ।
उववणइं विविहवच्छंकियाइं गोउलइं धवलवच्छंकियाइं ।

सन्धि ३९

गुणोंके समूहको धारण करनेवाले गौतम गणधर कहते हैं—"हे महाधिप मगधराज, अनेक रसभावोंसे परिपूर्ण राजा सगरका कथान्तर सुनो ।"

१

सूर्यके तेजसे युक्त इस जम्बूद्वीपमें मन्दराचलके पूर्व विदेहमें सीता नदीके दक्षिण तटपर स्थित वत्सावती नामका देश है । उत्कट ग्रामों और सीमाओंसे परिपूर्ण जो मानो धरतीके द्वारा सुप्रदेशके रूपमें दिखाया गया हो । जहाँ आम्रवृक्षोंके नवदलोंके लिए उत्कण्ठित कोयलें कलकल ध्वनि करती हैं, कमलोंको धारण करनेवाले सरोवर ऐसे हैं मानो राजाने सुपुण्डरीक (छत्र और कमल) धारण कर रखा हो । जहाँ विविध वृक्षोंसे अंकित उपवन हैं, और धवल बछड़ोंसे अंकित

Mss. A and P have the following stanza at the beginning of this Saṃdhi :—

शशधरबिम्बात्कान्ति (न्ति ?) स्तेजस्तपनाद्गभीरतामुदधेः ।
इति गुणसमुच्चयेन प्रायो भरतः कृतो विधिना ॥१॥

This stanza is also found at the beginning of Saṃdhi XVIII of this Work in certain Mss. of the Mahāpurāṇa. For details see Introduction to Vol. I. pp. xvi–xxvii and also foot-note on page 295 of the same Vol. K does not give it there or here.

१. १. A P महाणिव । २. A उत्तरयलि; K उत्तरयलि but corrects it to दाहिणयलि । ३. A कलियंठियाउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहिं मंडव दक्खाहल[4] वहंति　　घरि घरि करिसणियहं[5] हल वहंति ।
जहिं णिच्चु जि [6]सुट्ठ [7]सुहिक्खु खेडं　　कामिणिउ देंति कामुयहं खेडं ।

घत्ता—विम्हियसुरु[8] तहिं पुहईपुरु पविमलमणिमयमहियल[9] ॥
सरयामलु चंदयरुज्जलु [10]घरचूलाहयणहयलें[11] ॥१॥

२

तहिं णिवसइ सिरिजयसेणु राउ　　जिणसेणापणइणिजणियराउ ।
रइसेणु पुत्तु पररमणिअवरु　　उप्पण्णु ताहं दिहिसेणु अवरु ।
ते बिण्णि वि जण पच्चक्खकाम　　ते बिण्णि वि जण संपुण्णकाम[1] ।
ते बिण्णि वि जण ससिसूरधाम　　ते बिण्णि वि जण जयलच्छिधाम ।
ते बिण्णि वि जण परहियविवेयं[2]　　ते बिण्णि वि जण जणणहु विहेय ।
गुरुदेवमित्तबंधवविणीउ　　रइसेणु णवर कालेण णीउ ।
करपल्लवग्गताडियउराइं　　पडियइं पियरइं सोयाउराइं ।
अप्पउ ण मुणंति ण घरु[3] दुवारु　　सिसुमोहणीउ मुणिहिं वि दुवारु ।

घत्ता—णिवडंतहं बिहिं वि रडंतहं उवसमभाउप्पायणु ॥
कयसंतिहिं दिण्णउं मंतिहिं[4] जिणवरवयणु[5] रसायणु ॥२॥

गोकुल हैं। जहाँ मण्डप द्राक्षाफलों (अंगूरों) को धारण करते हैं, जहाँ घर-घरमें किसानोंके हल चलते हैं। जहाँ क्षेत्र नित्य सुन्दर और सुभक्ष्य रहते हैं, जहाँ कामिनियाँ कामुकोंको आलिंगन देती हैं।

घत्ता—उसमें देवोंको विस्मित करनेवाला और स्वच्छ मणिमय महीतलवाला पृथ्वीपुर नामका नगर है, जो शरद्की तरह निर्मल, चन्द्रकिरणोंकी तरह उज्ज्वल और अपने गृहशिखरोंसे आकाशको आहत करनेवाला है ॥१॥

२

उसमें श्री जितसेन नामका, अपनी प्रणयिनी जितसेनाके लिए राग उत्पन्न करनेवाला राजा निवास करता था। उसका परस्त्रियोंसे दूर रहनेवाला रतिसेन नामका पुत्र हुआ, एक और दूसरा धृतिसेन नामका। वे दोनों ही जन जैसे साक्षात् कामदेव थे। वे दोनों ही पूर्ण कामनावाले थे। वे दोनों ही सूर्य और चन्द्रमाके आश्रय थे। वे दोनों ही विजयलक्ष्मीके घर थे। वे दोनों ही दूसरोंके कल्याणका विवेक रखते थे, वे दोनों ही लोगोंके प्रति विनयशील थे। गुरुदेव, मित्रों और बन्धुजनोंके लिए विनीत रतिसेनको कालने उठा लिया। माता-पिता, करपल्लवोंके अग्रभागसे (हथेलियोंसे) अपने उर पीटते हुए शोकसे व्याकुल होकर मूच्छित हो गये। वे स्वयंको, घर और द्वारको कुछ भी नहीं समझते। पुत्रका स्नेह मुनियोंके लिए भी दुर्निवार होता है।

घत्ता—शान्ति करनेवाले मन्त्रियोंने मूर्च्छित और पड़े हुए तथा रोते हुए उन दोनोंको जिनवर-वचनरूपी रसायन दिया ॥२॥

४. A P दक्खारसु । ५. A करसणियहं । ६. A P सुत्थ । ७. A P सुभिक्खु । ८. A P विभिय° ।
९. A P °महियलु । १०. °चूडाहय° । ११. A P °णहयलु ।

२. १. A संपुण्णकाम । २. A °विहेय but gloss °विवेकः । ३. AP घर दुवाह । ४. A P कुलमंतिहिं ।
५. A °वयणरसायणु ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

३

कुलकंचुईहिं संबोहियाइं कह[1] कह व ताइं उम्मोहियाइं ।
जणमयगलमूलालाणरज्जु[2] तक्खणि दिहिसेणहु देवि रज्जु ।
जयसेणें णासियरइरुएण सामंतें समउं महारुएण ।
णियदेविइ सहुं रयविहुणएहिं[3] अण्णेहिं मि बहुणरमिहुणएहिं ।
दुज्जयदुण्णयदुज्जसहरासु[4] वउ[5] लइयउ पणविवि जसहरासु ।
परिसेसेप्पिणु णीसेसु संगु तउ चिण्णउं तेहिं दुवालसंगु ।
वोलीणइ गुरुसेवाइ कालि पच्छा संपत्तइ मरणकालि ।
मणि तिहुयणलच्छीवइ सरेवि वरपरंगण[6]चरियइं पइसरेवि ।
मुणिवरहिं मयणघणमारुएहिं दोहिं मि जयसेणमहारुएहिं ।

घत्ता—दुरियह्लइं तिण्णि वि सल्लइं हिययहु कड्ढिवि घित्तइं ।
किउ अणसणु दूसहु भीसणु पंच वि करणइं जित्तइं ॥३॥

४

जयसेणु मरेवि महाबलक्खु संजायउ सुरवरु जसवलक्खु ।
वेउव्विउ जहिं णीरोउ काउ बावीसजलहिसमपरिमियाउ ।
इयरु वि सुहकम्में तहिं जि धामि[1] सोलहमइ अच्चुयकप्पणामि ।
तणु मुइवि महारुउ[2] पवरतेउ संभूयउ सिरिमणिकेउ देउ ।

३

कुलके प्रतिहारियों द्वारा सम्बोधित होनेपर किसी प्रकार बड़ी कठिनाईसे उनका मोह दूर हुआ। उसने शीघ्र धृतिषेणको जनरूपी मदगजोंको बाँधनेके लिए रस्सीके समान राज्य देकर रतिके आकर्षणको नष्ट करनेवाले जयसेन नामक सामन्त महारुत और अपनी देवीके साथ, तथा रागको नष्ट करनेवाले, दूसरे नर जोड़ोंके साथ दुर्जय, दुर्नय और अपयशका हरण करनेवाले यशोधर मुनिको प्रणाम कर व्रत ग्रहण कर लिये। समस्त परिग्रहको छोड़कर उन दोनोंने दुष्काल-का साथी तप ग्रहण कर लिया। गुरुकी सेवा आदिमें समय बीतनेपर और बादमें मरणकाल आनेपर अपने मनमें त्रिभुवन-लक्ष्मीपति जिनेन्द्रकी याद कर, उत्तम और श्रेष्ठ चर्यामें प्रवेश करते हुए, कामरूपी मेघके लिए पवनके समान उन दोनों—जयसेन और महारुत मुनिवरोंने—

घत्ता—अपने हृदयसे पापमयी तीनों शल्योंको उखाड़कर फेंक दिया। उन्होंने दुःसह्य और भीषण अनशन किया और पाँचों इन्द्रियोंको जीत लिया ॥३॥

४

जयसेन मरकर महाबल नामका यशसे उज्ज्वल देववर हुआ। जहाँ उसका नीरोग वैक्रियिक शरीर था और बाईस सागर प्रमाण आयु थी। दूसरा भी (महारुत) शरीर छोड़कर अच्युतकल्प नामक सोलहवें स्वर्गमें प्रवर तेजस्वी श्री मणिकेतु नामका देव हुआ। सज्जन लोग अपने स्नेहका बन्ध नहीं छोड़ते। उन दोनोंने एक दूसरेको प्रतिबोधित करनेका यह वचन दिया

---

३. १. P कह व कहव । २ A णं मयगलथूणा°; P णं मयगलाथूला° । ३. A P रइविहुणएहिं । ४. A दुक्कियदुण्णयदुज्जसहरासु; P दुक्कियदुण्णयदुज्जयहरासु । ५. A P वउ । ६. A P परपरगण° ।

४. १. A P धामि । २. A महारुइ ।

ण मुयंति सयणं[3] ससणेहबंधु किउ दोहिं मि पडिबोहणणिबंधु ।
जो पावइ अग्गइ मणुयजम्मु तहु अमरु समासइ परम[4]धम्मु ।
बिण्णि वि ते दिवि णिवसंति जांव कालेण महाबलु ढलिउ तांव ।
कोसलपुरि राउ समुद्दविजउ जसु घरि घोसिज्जइ णिच्चविजउ ।
विजया णामें तहु अत्थि घरिणि परमेसरि णाइं अणंगधरणि ।
सो तियसु सग्गसिहराउ ल्हसिउ तहि केरइ गब्भणिवासि वसिउ ।

घत्ता—हरिकंधरु बहुलक्खणधरु छणससहरमंडलमुहु ॥
कणयच्छवि णावइ णवरवि जाणियउ जणणिइ तणुरुहु ॥४॥

५

संगामसमुद्दरउद्ददमयरु कोक्किउ कुमारु ताएण सयरु ।
णं केसरि दरदीसंतदाढु दुव्वारवेरिसंगामसोढु ।
कालेण गलंतें जाउ पोढु पलयक्कु व ति[1]व्वपयावरूढु ।
तणु तासु जोहकरभूसणाहं चउरद्धसयाइं सरासणाहं ।
मंदरभित्ति व उत्तुंगिमाइं[2] छज्जइ गोरी सेविय रमाइ ।
तहु णिवकुमारकीलाइ[3] ललिय पुव्वहं अट्ठारहलक्ख गलिय ।
तेत्तिय जि महामंडलवइत्तु पालंतहु पत्थिवपय पयत्तु ।
गय जइयहुं तइयहुं सुकियसारु उप्पण्णउ चक्कु फुरंतधारु ।

कि जो पहले मनुष्य-जन्म प्राप्त करेगा, देव उसे परमधर्मका कथन करेगा। इस प्रकार जब वे दोनों स्वर्गमें निवास कर रहे थे तब समयके साथ महाबल देव स्वर्गसे च्युत हुआ। कोशलपुरमें राजा समुद्रविजय था। उसके घरमें नित्य विजय घोषित की जाती थी, उसकी विजया नामकी गृहिणी थी। वह परमेश्वरी जैसे कामदेवकी भूमि थी। वह देव स्वर्गशिखरसे च्युत होकर, उसके गर्भनिवासमें आकर बस गया।

घत्ता—सिंहके समान कन्धोंवाले, अनेक लक्षणोंके धारक और पूर्णिमाके चन्द्रके समान मुखवाले उस बालकको माताने जन्म दिया, जैसे स्वर्णच्छविने नवसूर्यको जन्म दिया हो ॥४॥

५

संग्रामरूपी समुद्रके भयंकर मगर उस कुमारको पिताने सगर कहकर पुकारा। दुर्वार वैरियोंके संग्राममें समर्थ वह मानो सिंह था कि जिसकी थोड़ी-थोड़ी डाढ़ें दिखाई दे रही थीं। समय बीतनेपर वह प्रौढ़ हो गया। वह प्रलय-सूर्यके समान अपने तीव्र प्रतापसे प्रसिद्ध था। उसका शरीर योद्धाओंके हाथोंके आभूषण स्वरूप साढ़े चार सौ धनुषके बराबर था। ऊँचाईमें वह मन्दराचलकी भित्तिके समान था। लक्ष्मी और सरस्वतीसे सेवित वह शोभित था। पत्नीकी सुन्दर क्रीड़ामें अठारह लाख पूर्व वर्ष बीत गये, और जब इतने ही वर्ष महामण्डलाध्यक्षके रूपमें पार्थिवप्रजाका प्रयत्नपूर्वक पालन करते हुए हो गये तो उसे पुण्यका सारभूत चमकती धारवाला

३. A सयणि । ४. A P पवरु धम्मु ।
५. १. A °पयायरूढु । २. P उत्तंगिमाइ । ३. P कुमारलीलाइ ।

असि चम्मं[4] छत्तु गहवइ[5] पुरोहु करि[6] हरि कागणि मणि सेण्णणाहु ।
वरजुवइ थवइ[7] वर[8]कुलिसदंडु परपहरणगणणिद्दलण[9]चंडु ।
चोद्दह[10] रयणइं महियलु छखंडु महाकालु कालु पिंगलु [11]पयंडु ।
दुइ[12] पोम संख दुइ अवरु[13] दिव्वु माणव इय णव णिहि देंति सव्वु ।

घत्ता—महि हिंडिवि समरु[14] समोड्डिवि दुज्जणें[15] दुट्ठ दुसाहिय ॥
जलथलवइ णहयर णरवइ देव वि तेण पसाहिय ॥५॥

६

वरवसुमइ असिणा वसि करेवि णीसेसणरेसहं कप्पु लेवि ।
आवेप्पिणु कउ उज्झहि णिवासु एत्तिय संपय भुवणयलि कासु ।
जिंव[1] भरहहु तिंव[2] सयरहु जि होइ तं वण्णहुं ण वि सक्कंति जोइ ।
णामेण चउम्मुहु देउ संतु उप्पण्णउं तहु केवलु अणंतु ।
आसीणु भडारउ णिलइ जेत्थु संजायउ देवागमणु तेत्थु ।
किंकरकरवालकरालधारु अण्णहिं दिणि सुंदरु सपरिवारु ।
गउ वंदणहं[3]त्तिइ सयरु[4] राउ अवयरिउ तहिं जि मणिकेउ देउ ।
अवलोइउ[5] जिणपयणिहियचित्तु बोल्लाविउ तियसें परममित्तु ।
भो देव महाबल णिव्वियप्प ओलक्खहि किं मइं णाहिं बप्प ।

चक्ररत्न प्राप्त हुआ। असि, चर्म, छत्र, गृहपति, पुरोहित, हाथी, अश्व, काकणीमणि, सेनापति, वरकामिनी, स्थपति, शत्रुओंके शस्त्रसमूहको नष्ट करनेवाला श्रेष्ठ वज्रदण्ड, ये चौदह रत्न और छह खण्ड धरती महाकाल, काल, पिंगल, पद्म, महापद्म, प्रचण्ड दो और शंख (शंख, महाशंख), और मानव, ये नौ निधियाँ उसको सब कुछ देती थीं।

घत्ता—धरतीपर घूमकर युद्ध कर उसने दुःसाध्य दुष्ट, दुर्जन, जलस्थलपति, विद्याधर, राजा और देव सभीको सिद्ध कर लिया ॥५॥

६

अपनी श्रेष्ठ तलवारसे श्रेष्ठ धरतीको जीतकर, समस्त राजाओंसे कर लेकर और आकर उसने अयोध्यामें निवास किया। भुवनतलमें इतनी सम्पत्ति किसकी है? जिस प्रकार भरतके पास सम्पत्ति थी, उतनी ही सगर चक्रवर्तीकी थी, योगी भी उसका वर्णन नहीं कर सकता। चतुर्मुख नामक एक मुनिको अनन्त केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। वह आदरणीय मुनि जिस स्थानपर विराजमान थे, वहाँ देवोंका आगमन हुआ। दूसरे दिन अनुचर और भयंकर तलवार धारण करनेवाला वह राजा सगर अपने परिवारके साथ वन्दनाभक्तिके लिए गया। वहींपर मणिकेतु देव भी आया। उस देवने जिनके चरणोंमें अपना मन लगाये हुए अपने मित्र सगरको देखा। उसने कहा—"हे विकल्पहीन महाबल देव! हे सुभट, क्या तुम मुझे नहीं पहचानते। पृथ्वीपुरमें

४. A P चम्मु । ५. A P गिहवइ । ६. A P हरि करि । ७. K omits थवइ । ८. A P दढ° । ९. A °णिद्दहणचंडु; P °णिव्वहणचंडु । १०. A चउदह । ११. A P पचंडु । १२. A तह पोम संख णेसप्पु सव्वु । १३. P पवरभव्वु । १४. A P सुमंडिवि । १५. P दुज्जस ।

६. १. A P जिम । २. A P तिम । ३. P वंदणभत्तिइ । ४. A P सयरराउ । ५. P अवलोयउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुहईपुरि णरवरसंथुएहिं होइवि जयसेणमहारुएहिं ।
चिरु चिण्णउ तउ जइणिंदमग्गि जाया बिण्णि वि सोलहमि सग्गि ।

घत्ता—तुहुं सुहमइ हूयउ णरवइ हउं ओहच्छवि सुरवरु ॥
जं जंपिउ आसि वियप्पिउं तं हियउल्लइ संभरु ॥६॥

७

जे गय ते मयमउलवियणयण जे हरिवर ते चल वंकवयण ।
संदण ण मुणंति विइण्णु णेहु किंकर णियकज्जहि देंति देहु ।
रायहं हियवइ धम्मु जि ण थाइ चामरपवणें उड्डेवि जाइ ।
अंतरि छत्तइं छत्तहर देंतु तं तइ वि बप्प पेक्खइ कयंतु ।
अंगइं लच्छिहि दोसंकियाइं भुजंतइं केवं ण संकियाइं ।
रायउलइं पहु पइं जेरिसाइं पंचिंदियसुहविसरसवसाइं ।
णिवडंति णरइ घोरंधयारि ण विरप्पइ किं तुहुं भोयभारि ।
किं रक्खइ तेरउ विजयचक्कु सिरि पडइ भयंकरु कालचक्कु ।
तहु वयणहु तेण ण दिण्णु कण्णु गउ सुरवरु सुरहरु मणि विसण्णु ।
पुणु अण्णहिं वासरि रयणकेउ णियरूवोहामियमयरकेउ ।
मुणिवरु होइवि कयधम्मसवणि आइउ थिउ सयरजिणिंदभवणि ।
तं पेच्छिवि पुरु जंपइ असेसु एहउं ण रूवु पावइ सुरेसु ।

लोगोंके द्वारा संस्तुत जयसेन और महारुत होते हुए, प्राचीन समयमें हम दोनोंने जैनमार्गका तप ग्रहण किया था, और हम सोलहवें स्वर्गमें देव उत्पन्न हुए थे।

घत्ता—तुम, अब शुभमतिवाले राजा हुए हो, और मैं सुरवर ही हूँ। जो विचार तुमने कहा था, उसे अब याद करो ॥६॥

७

जो गज हैं वे आँखें बन्द कर मर जाते हैं, जो अश्व हैं वे चंचल और वक्रनेत्र हैं। रथ कुछ भी विचार नहीं करते। स्नेह विदीर्ण (नष्ट) हो जाता है। अनुचर अपने स्वार्थसे शरीर देते हैं। राजाओंके हृदयमें धर्म नहीं ठहरता है, चमरके पवनसे वह उड़ जाता है। छत्रधर भीतर छत्र लगा देते हैं परन्तु उसे (जीवको) कृतान्त वहाँ देख लेता है। लक्ष्मीके दोषोंसे अंकित अंगों-का (सप्तांग राज्य) का भोग करते हुए राजा लोग आशंकित क्यों नहीं होते ? पाँच इन्द्रियोंके सुख रूपी विषरसके वशीभूत होकर हे प्रभु, तुम्हारे जैसे राजकुल, घोर अन्धकारपूर्ण नरकमें गिरते हैं। तुम भोगके भारसे विरक्त क्यों नहीं होते ? क्या तेरा विजयचक्र तेरी रक्षा कर लेगा ? सिरपर भयंकर कालचक्र पड़ेगा। परन्तु राजाने उसके वचनोंपर कान नहीं दिया। सुरवर अपने मनमें दुखी होकर स्वर्ग चला गया। एक दूसरे दिन, अपने रूपसे कामदेवको तिरस्कृत करनेवाला मणिकेतु देव मुनिवर होकर, जिसमें धर्मश्रवण किया जाता है ऐसे जिन-मन्दिरमें सगर आकर बैठ गया। उसे देखकर, सारे नगरने कहा कि ऐसा रूप इन्द्र भी नहीं पा सकता।

६. A P णरवइ° । ७. A P सो अच्छमि ।

७. १. P मउलेवि णयण । २. P विण्णु । ३. A के णउ संकियाइं; P केम ण संकियाइं । ४. P omits पुणु । ५. A P आइवि । ६. P एहउ णरु ण अच्चुयसुरेसु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता---जणणेत्तइं जहिं जि णिहित्तइं तहिं जि णिरारिउ लग्गइं ॥
बुहयंदहु तासु मुणिंदहु को वण्णइ तणुअंगइं ॥७॥

८

तं वंदिवि चिंतइ सयरु एंव　　किं एहा होंति ण होंति देव ।
एहउ सुरूवु[1] णउ वम्महासु　　पुणु चवइ णिवइ दरविरियसियासु[2] ।
मुणि[3] किं तुह किर वेरग्गु[4] थियउ　　भणु किं जोव्वणु वणजोग्गु[5] कियउ ।
तं सुणिवि भणइ मायारिसिंदु　　झिज्जंतु ण पेक्खहि पुण्णिमिंदु ।
भरियउ पुणु रित्तउ होइ राय　　सासय किं चिंतहि अब्भछाय ।
तणु धणु परियणु सिविणयसमाणु　　तसथावरजीवहुं अभयदाणु ।
किज्जइ तरुणत्तणि तवपवित्ति　　बुड्ढत्तणि पुणु परियलइ सत्ति ।
जर पसरइ विहडइ देहबंधु　　लोयणजुयलुल्लउ होइ अंधु ।
पब्भट्ठचेट्ठु[6] गयरमणराउ　　तरुणिहिं कोकिज्जइ हसिवि ताउ ।
डहु थेरु सो वि किं णिव्वियारि　　दइवेण जि पंडउ बंभयारि ।
जीविज्जइ जहिं सो णिययदेसु　　तं भोयणु जं मुणिभुत्तसेसु ।

घत्ता---किं भव्वें पंडियगव्वें लोउ असेसु णडिज्जइ ॥
विउसत्तणु तं सुकइत्तणु जेण ण णरइ पडिज्जइ ॥८॥

घता—लोगोंके नेत्र जहाँ भी पड़ते वे वहीं लगकर रह जाते। बुध-चन्द्र उस मुनीन्द्रके शरीरके अंगोंका वर्णन कौन कर सकता है? ॥७॥

८

उसकी वन्दना करके राजा सगर अपने मनमें विचार करता है, हो न हो ये क्या देव हैं? यह मनुष्यका स्वरूप नहीं है। अपना थोड़ा-सा मुँह खोलते हुए राजाने कहा, "हे मुनि, आप विरक्त क्यों हो गये? बताइए आपने-अपने यौवनको वनके योग्य क्यों बनाया?" यह सुनकर वह कपटी मुनि बोला, "क्या तुम पूर्णिमाके चन्द्रको नष्ट होते हुए नहीं देखते? पहले चन्द्रमा भर जाता है, फिर खाली होता है, हे राजन्, क्या तुम बादलोंकी छायाको शाश्वत समझते हो? तन, धन, और परिजन स्वप्नके समान हैं? इसलिए त्रस और स्थावर जीवोंके लिए, अभयदान एवं यौवनमें तपकी प्रवृत्ति करनी चाहिए। बुढ़ापेमें तो फिर शरीरकी शक्ति नष्ट हो जाती है। बुढ़ापा फैलने लगता है। शरीरके बंध ढीले पड़ जाते हैं, दोनों नेत्रयुगल अन्धे हो जाते हैं। चेष्टाओंसे भ्रष्ट और रमणरागसे रहित बूढ़ा आदमी युवतियोंके द्वारा हँसकर तात पुकारा जाता है। वृद्ध आदमी दग्ध हो जाता है (उसकी इन्द्रियचेतना नष्ट हो जाती है) क्या वह भी निवृत्ति करनेवाला हो सकता है? नपुंसकको तो दैवने ही ब्रह्मचारी बना दिया? वहीं जीवित रहना चाहिए जो अपना देश है, भोजन वही है जो मुनिके आहारसे बचा हो।

घत्ता—बुद्धिके गर्ववाले भव्यके द्वारा समस्त लोक क्यों प्रतारित किया जाता है? पाण्डित्य और सुकवित्व वही है कि जिससे मनुष्य नरकमें नहीं पड़ता ॥८॥

---

८. १. A सरूउ; P सरूव। २. A P दरविहसियासु। ३. A मुणि; P मुणे। ४. P वइरग्गु। ५. A वणजोगु; P वणिजोगु। ६. A P सुदट्ठु पहुत्तणु।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

९

सो सूरउ जो इंदियइं जिणइ [1]सा सुद्धबुद्धि जा तच्चु मुणइ ।
सो इट्ठु बंधु जो धम्मु कहइ तं तणुबलु जं वयभारु वहइ ।
ते कर जे पडिलिहणेंउं [2]धरंति ते कम जे मउयउं संचरंति ।
तं सिरु जं जिणपयजुयलि णवइ तं तोंडु णं[3] जं विप्पियइं[4] चवइ ।
ते चक्खु ण जे तियमइ णियंति ते सवण ण जे रइसुइ सुणंति ।
सा जीह ण जा रसलोल लुलइ तं हियउ ण जं परमत्थि चलइ ।
सुंकारु देंतु णिंदइ दुगंधु तं णंकु[5] ण जं इच्छइ सुयंधु[6] ।
तं अंगु ण जं कुसयणहु तसइ सो मित्तु समउं जो रण्णि वसइ ।
ते चारु केस संजमधरेहिं उप्पाडिय जे मुणिवरकरेहिं ।
सँकयत्थइं[7] जईकररुहइं[8] ताइं लग्गाइं विलासिणिथणि ण जाइं ।
डज्झउ कामाउरु सीलरहिउ तं जीविउ जं चारित्तसहिउ ।

घत्ता—उज्जैयमणु[9] जं गुणभायणु तं माणुसु सुकुलीणउ ॥
तं जोव्वणु हउं [10]मण्णवि घणु जं तवचरणें खीणउ ॥९॥

१०

आवेहि जाहुं लइ तुहुं वि दिक्ख सिक्खहि गयमयरय मोक्खसिक्ख ।
इय कहइ जइ वि सो देवसाहु पडिबुद्धउ तो वि ण पुहइविणाहु[1] ।

९

शूर वही है जो इन्द्रियोंको जीतता है, वही सद्बुद्धिवाला है जो तत्त्वका विचार करता है। वही इष्ट बन्धु है कि जो धर्मका कथन करता है। वही शरीरबल है जो व्रतभारको धारण करता है। वे ही हाथ हैं जो मयूरपिच्छ धारण करते हैं। वे ही चरण हैं जो मृदुतासे चलते हैं, वही सिर हैं जो जिनपद युगलमें नमन करते हैं, वही मुख है जो बुरा नहीं बोलता। वे ही आँखें हैं जो स्त्रियोंको नहीं देखतीं। वे ही कान हैं जो रतिसुखको नहीं सुनते। जीभ वही है जो रसकी लम्पटतामें नहीं पड़ती है। हृदय वही है जो परमार्थसे नहीं चलता। नाक वही है जो सुंकार करते हुए न तो दुर्गंधकी निन्दा करती है और न सुगन्धकी इच्छा करती है? शरीर वह है जो कुश पर सोनेसे पीड़ित नहीं होता। वही मित्र है जो जंगलमें साथ रहता है। सुन्दर केश वही हैं, जो संयमधारण करनेवाले मुनिवरोंके द्वारा उखाड़े जाते हैं। मुनिके वे ही हाथ कृतार्थ हैं जो विलासिनियोंके स्तनोंसे नहीं लगे। कामातुर और शील रहित जीवनमें आग लगे। वही जीवन है जो चारित्र्यसहित हो।

घत्ता—जो सरलमन और गुणोंका भाजन है, वही मनुष्य कुलीन है। उसी यौवनको मैं मानता हूँ जो तपश्चरणके द्वारा क्षीण है ॥९॥

१०

"आओ, चलें, तुम भी दीक्षा ले लो। मदरजसे रहित मोक्षकी शिक्षा सीख लो।" यद्यपि

९. १. A सो सुद्धबुद्धि जो। २. A P पडिलेहउ धरंति। ३. A जं ण। ४. A P विप्पियउ। ५. A P णक्कु। ६. A सुगंधु। ७. P सकइत्थइं। ८. A P जणॅ। ९. A उज्जुयमणु। १०. A P मण्णमि।
१०. १. A पुहइणाहु।

लइ अंजि[2] वि ण लहइ काललद्धि जाणिवि देवें[3] कय गमणसिद्धि।
गउ चक्कवट्टि सणिहेलणासु णं इंदिंदिरु कमलिणिवणासु।
अत्थाणि परिट्ठिउ छुडु जि जाम सहसाइं सट्ठि तणुरुहहं ताम।
आयाइं भणंतइं जीयँ[4] देव पायडहुं तुहारी पायसेव।
दे देहि तुरिउ आएसु किं पि णोसरहुं महारिउ रणि पयं पि।
मंदर महिहर जेंवड्डु[5] जं पि लीलाइ समाणहुं कज्जु तं पि।
तं णिसुंणिवि[6] सक्कसमाणएण विहसेप्पिणु वुत्तउं[7] राणएण।
आएसहु कारणु किं पि णत्थि आरुहिवि तुरंगम मत्तहत्थि।
अणुहुंजहु महु रिद्धिहि फलाइं मा जंपह वयणइं चप्फलाइं।

घत्ता—किं वग्गह पेसणु मग्गह[8] मंडलाइं धणरिद्धइं॥
महु एक्कें मुक्कें चक्कें सुट्ठु दुसज्झइं सिद्धइं॥१०॥

११

अह जइ सुयत्तु[1] दक्खविउं[2] अज्जु तो करह महारउ धम्मकज्जु।
देवेण जाइं चक्केसरेण कारावियाइं भरहेसरेण।
लंबियघंटाचामरधयाहं केलासु गंपि कंचणमयाहं।
वरसिहरहं चउवीसहं वि ताहं परिरक्ख[3] पउंजह जिणहराहं।
जिह[4] णासइ खलमाणवहं मग्गु तिह विरयह तरुसिलसलिलदुग्गु।

वह देवमुनि यह कहता है, फिर भी वह पृथ्वीनाथ सगर प्रतिबुद्ध नहीं हुआ। लो वह आज भी काललब्धि नहीं पाता। यह जानकर उस देवने गमनसिद्धि की (अर्थात् वह वहाँसे चला गया)। राजा सगर अपने निवासके लिए चला गया, मानो भ्रमर अपने कमलिनी-निवासके लिए चल दिया हो। जैसे ही वह अपने दरबारमें बैठा, वैसे ही उसने अपने साठ हजार पुत्रोंको देखा। आते हुए उन्होंने कहा—"हे देव! आपकी जय हो, हम आपके चरणोंकी सेवा प्रकट करते हैं। आप शीघ्र ही कोई आदेश दीजिए, यदि युद्धमें सुमेरुपर्वतके बराबर भी शत्रु होगा, तो भी हम अपना पैर नहीं हटायेंगे? इस कार्यको भी खेल-खेलमें सम्मानित करेंगे।" यह सुनकर इन्द्रके समान हँसते हुए राजा सगरने कहा, "आदेश देनेके लिए कोई कारण नहीं है? तुम लोग अश्वों और मतवाले हाथियोंपर चढ़कर मेरे वैभवके फलोंको चखो। चंचल वचनोंका प्रयोग मत करो।"

घत्ता—"क्यों सनकते हो और आज्ञा माँगते हो। मेरे द्वारा मुक्त एक चक्रसे ही दुःसाध्य और धन-सम्पन्न मण्डल अच्छी तरह जीत लिये गये॥१०॥

११

अथवा यदि तुम्हें आज अपना सुपुत्रत्व दिखाना है, तो हमारा एक धर्मकार्य करो। चक्रवर्ती राजा भरतेश्वरने जिनमन्दिरोंका जो निर्माण करवाया था, तुम कैलास पर्वत जाकर, जिनमें घण्टा, चमर और ध्वज अवलम्बित हैं ऐसे स्वर्णमय और श्रेष्ठ शिखरवाले चौबीसों जिन-मन्दिरोंकी परिरक्षा करो। तुम वृक्षों, चट्टानों और जलोंका दुर्ग बनाओ जिससे दुष्ट मनुष्योंका

---

२. A P अज्ज वि। ३. P कय देवें जाणसिद्धि। ४. A P जोव। ५. A P जेवड्डु। ६. P तं सुणिवि। ७. P उत्तउ। ८. P लग्गह।

११. १. A सयत्त। २. A P दक्खवहु। ३. A वर रक्ख। ४. A जिम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ता णिग्गय तणय पसाउ भणिवि [5]जमदंडचंड भुयदंड धुणिवि ।
धर[6]धरणक्खम उद्धुद्धसोंड णं मयगल मय[7]जलगिल्लगंड ।
धाइय जुवाण मुहमुक[8]राव णं पलयजलय गज्जणसह[9]ाव ।

घत्ता—पविदंडें खणरुइचंडें फाडिउ खणि खोणीयलु ॥
णरसारहिं रायकुमारहिं [10]देवहुं दाविउं भुयबलु ॥११॥

१२

णियचिर[1]पवाहपिहुपहु मुयंति करिकरडगलियमय[2]मलु धुयंति ।
परिभमियवारिविब्भम भमंति कमलोयरमयरंदइं [3]वमंति ।
परिमलमिलियालिहिं गुमुगुमंति [4]वणयवजालोलिहिं सिमिसिमंति ।
सविसइं विसिवि[5]वरइं पइसरंति फणिफुक्कारिहिं दरोसरंति ।
गिरिकंदर दरि सर सरि भरंति दि[6]स णहयलु [7]थलु जलु जलु करंति ।
उत्तुंगतरंगहिं णहि मिलंति वि[8]यडयरसिलायल पक्खलंति ।
कच्छवमच्छोह समुच्छलंति हंसावलि कलरव कलयलंति ।
पविउलजलवलयहिं चलवलंति कड्ढिय गंगाणइ [9]खलखलंति ।
वलइयउ ताइ कइलासु केंव वेसाइ पमत्त सुयंगु जेंव ।

मार्ग (आना) नष्ट हो जाये।" तब 'जैसी आज्ञा'—कहकर वे पुत्र यमदण्डके समान प्रचण्ड अपने भुजदण्ड ठोकते हुए निकल पड़े, जैसे वे पृथ्वी धारण करनेमें सक्षम, अपनी सूँड़ ऊपर किये हुए, मदसे आर्द्र गण्डस्थलवाले मदगज हों। अपने मुँहसे शब्द करते हुए वे युवक ऐसे दौड़े, मानो गर्जनस्वभाववाले प्रलयमेघ हों।

घत्ता—बिजलीकी तरह प्रचण्ड वज्रदण्डसे उन्होंने एक क्षणमें पृथ्वीतलको विदीर्ण कर दिया, और इस प्रकार मनुष्यश्रेष्ठ उन राजकुमारोंने देवोंके लिए अपना बाहुबल दिखा दिया ॥११॥

१२

अपने चिर प्रवाहके विशाल मार्गको छोड़ती हुई, हाथीके गण्डस्थलोंसे गलित मदजलको धोती हुई, घूमते जलोंसे विभ्रमको धारण करती हुई, कमलोदरोंसे मकरन्दका वमन करती हुई, सौरभसे मिले हुए भ्रमरोंके द्वारा गुनगुनाती हुई, वनोंकी दावाग्नियोंकी ज्वालाओंसे सिमसिमाती हुई, साँपोंके विषैले बिलोंमें प्रवेश करती हुई, नागोंके फूत्कारोंसे थोड़ा फैलती हुई, पहाड़की गुफाओं, घाटियों, सरोवरों, नदियोंको भरती हुई, दिशाओं, आकाशतल, स्थल और जलको जलमय बनाती हुई, ऊँची तरंगोंसे आकाशसे मिलती हुई, विकट शिलातलोंका प्रक्षालन करती हुई, कछुओं और मत्स्योंके समूहोंको उछालती हुई, हंसावलियोंका कलरव करती हुई, विशाल जलवलयोंसे चिल-बिल करती हुई, और खल-खल करती हुई गंगा नदी आकर्षित की गयी, उसके द्वारा कैलास पर्वत उसी प्रकार घेर दिया गया, जिस प्रकार वेश्याके द्वारा प्रमत्त लम्पट घेर लिया जाता है।

५. जयदंड° । ६. A वरधरणुक्खम उद्धायसोंड । ७. A जलमयगिल्ल° । ८. A °राय । ९. A सहाय । १०. A परियड्ढिउ गंगाजलु; P परियट्ठिउ गंगाजलु ।

१२. १. A चिरु पवाहपिहमहु । २. A °मयजल चुवंति; P °मयजलु धुयंति । ३. P मुयंति । ४. A P वणदव° । ५. A विसविवरइं । ६. A दिसि । ७. P जलु थलु । ८. A वियलयलसिलायलि । ९. P खलहलंति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—धवलंगइ वेढिउ गंगइ पुणु वि [10]मज्झु सो [11]भावइ ॥
सुरमणहरु मंदरमहिहरु तारापंतिइ णावइ ॥१२॥

१३

फणिभवणि विलग्गउ दंडरयणु तहु सद्दें कंपिउ सयलु भुवणु ।
भयथर[1]हरंत कुंडलिय णाय वणि वणयरेहिं पविमुक्क णाय ।
झलझलि[2]यउ जलहि [3]ढलढलिय धरणि वि[4]म्हिउ [5]सुरिंदु कंपेविउ तरणि ।
पडिबोह[6]णकारणु मुणिउं तेण मणिकेउणा हि[7] पवरामरेण ।
[8]फणिमणिपहपिहियदिणाहिवेण होइवि मायाणायाहिवेण ।
तिहुयणजणमरणुप्पायणेहिं गुंजारुणदारुणलोयणेहिं ।
जोइवि कुमार कय भू[9]ईरासि णं पुंजिय सजस[10]विभूइरासि ।
तहिं [11]कासु वि ण हवइ पलयकालु दरिसाविउ देवें इंदजालु ।
[12]अमुयाइं वि मुयाइं व दिट्ठ बंधु गय भीम भईरहि पुरु[13] सचिंधु ।
[14]उव्वरिय कह व ते विहिवसेण घरु पत्ता मुक्का पोरिसेण ।
घत्ता—घरु गंपिणु पिउ पणवेप्पिणु आसणेसु आसीणा ।
सविसाएं विण्णि वि ताएं दिट्ठ सुट्ठु विद्दाणा ॥१३॥

घत्ता—गोरे अंगोंवाली गंगानदीके द्वारा घेरा गया कैलास पर्वत मुझे ऐसा लगता है मानो देवसुन्दर मन्दराचल तारापंक्तियोंसे घिरा हुआ हो ॥१२॥

१३

वह दण्डरत्न नागभवनसे जा लगा। उसके शब्दसे सारा विश्व काँप उठा, कुण्डलाकार नाग भयसे काँप उठे, वनमें वनचरोंने शब्द करना शुरू कर दिया, समुद्र झलझला उठा, देवेन्द्र विस्मित हो उठा। सूर्य काँप गया। उस मणिकेतु प्रवर देवने इसे प्रतिबोधनका कारण समझा। जिसने अपने फणमणिकी प्रभासे दिनाधिप (सूर्य) को ढँक लिया है, ऐसा मायावी नागराज बनकर, उस देवने, त्रिभुवनके लोगोंको मृत्यु उत्पन्न करनेवाले, गुंजाफलके समान लाल और भयंकर नेत्रोंसे कुमारोंको देखकर राखका ढेर बना दिया, (उन्हें भस्म कर दिया) मानो उसने अपने यशकी विभूतिराशि एकत्रित कर ली हो। उसमें किसीके लिए भी प्रलयकाल नहीं हुआ। क्योंकि देवने अपने इन्द्रजालका प्रदर्शन किया था। बिना मरे हुए भी भाई मरे हुए दिखाई दिये। तब भीम और भगीरथ अपने-अपने ध्वजचिह्नोंके साथ गये। भाग्यके पथसे वे दोनों किसी प्रकार बच गये थे। अपने पौरुषसे रहित वे घर पहुँचे।

घत्ता—घर जाकर, अपने पिताको प्रणाम कर वे आसनोंपर बैठ गये। विषादपूर्वक पिताने देखा कि वे दोनों ही अत्यन्त दुःखी हैं ॥१३॥

---

१०. A मज्झि। ११. P भाइ।

१३. १. A थरहरंति। २. A झलझलिउ। ३. A टलटलिय। ४. A P विभिउ। ५. A P कंपियउ। ६. A पडिबोहणु। ७. A P वि। ८. P फणमणि। ९. A °भूय°। १०. P सज्जसविहूइ°। ११. A कासु ण हूयउ। १२. A P अमुया वि। १३. A P पुरि। १४. A उव्वरिय ते ण कह विहिवसेण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

कक्केयणकिरणुब्भासणाहं　　जोयेंवि[1] सहसइं सुण्णासणाहं ।
बिहिं ऊणी सट्ठि दुसंठिएण　　सुयदंसणसोक्खुक्कंठिएण[2] ।
मणिमयकुंडलचंचइयगंडु　　राएण पलोइउ[3] मंतितोंडु ।
दुइ आया इयर ण पइसरंति　　भणु कारणु तणुरुह किं करंति ।
पुव्वं चिय सुरसंकेइएण　　संबोहणबुद्धिविराइएण ।
तं णिसुणिवि मंतिं वुत्तु तेण　　हे[4] महिवइ महिलाहियियथेण ।
अत्थमइ[5] ण किं रवि उययभाउ[6]　　उल्हाइ ण किं पज्जलिउ दीउ ।
ण वि णासइ किं तडि मेहसोह　　फुट्टंति ण किं जलबुब्बुओह[7] ।
थिरु होइ ण संझारायरंगु　　गउ आवइ णउ सरिसरतरंगु ।
विहडइ ण काइं सुरचावदंडु　　किं खयहु ण वच्चइ मणुयपिंडु ।
कालेण गिलिय[8] देविंद देव　　पच्छण्णपउत्तिहिं[9] कहिउ एम्व ।

घत्ता—ता रायहु वड्ढियसोयहु बाहजलद्दइं णेत्तइं ॥
चलपत्तइं ओसासित्तइं णं गलंति सयवत्तइं ॥१४॥

१४

कर्केतन रत्नोंकी किरणोंसे आलोकित हजारों सूने आसनोंको देखकर भाग्यसे साठकी संख्या नष्ट हो जानेसे व्याकुल चित्त, और पुत्रदर्शनके सुखके लिए उत्कण्ठित राजाने, मणिकुण्डलोंसे अलंकृत गालवाले मन्त्रीमुखकी ओर देखा (और कहा) कि दो ही पुत्र आये हैं, दूसरे नहीं आये हैं। कारण बताओ कि पुत्र क्या कर रहे हैं ? तब पहलेके देव (मणिकेतु) के द्वारा पहलेसे समझाये गये और राजाको सम्बोधन देनेकी बुद्धिसे शोभित मन्त्रीने कहा—"हे महिलाओंके स्तनको चुरानेवाले राजन्, क्या उदय होनेवाले सूर्यका अस्त नहीं होता ? क्या जलाया हुआ दीप शान्त नहीं होता ? मेघोंकी शोभा बिजली क्या नष्ट नहीं होती ? क्या जलके बुद्बुदोंका समूह नहीं फूटता ? सन्ध्यारागका रंग स्थिर नहीं होता ! नदी और सरोवरकी गयी हुई लहर वापस नहीं आती ! क्या इन्द्रधनुष नष्ट नहीं होता ? क्या मनुष्य शरीर विनाशके मार्गपर नहीं जाता ? देवेन्द्र और देव महाकालके द्वारा निगल लिये जाते हैं ?" इस प्रकार प्रच्छन्न उक्तियोंसे मन्त्रीने कहा।

घत्ता—तब जिसका शोक बढ़ गया है, ऐसे राजाके अश्रुजलसे गीले नेत्र इस प्रकार गल गये मानो ओससे गीले चंचल पत्तोंवाले कमल हों ॥१४॥

---

१४. १. A जोइवि सहास सुण्णा°; P अवलोइवि सुयसुण्णा° । २. A °सुक्खुक्कंठिएण; P °सोहुक्कंटिएण । ३. A पलोयउ; P पलोविउ । ४. A ते महिवइ महिलहियय°; P हे महिवइ महिलहिआयथेण । ५. A अत्थवइ । ६. P उयणभाउ । ७. A जलपुव्वओह but gloss जलबुद्बुद । ८. A गलिय । ९. A पच्छण्णपउत्तिहि ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

१५

तावेक्कु परायउ दंडपाणि कासायचीर[1]धरु महुरवाणि ।
जिणवरु व णिवारियभव्वविहे[2]रु कुंडलियणीलभमरउलचिहुरु ।
सोत्तरियफुरियजण्णोववीउ रूवेण गुणेण वि अ[3]द्दुतीउ ।
सो मंतिहिं गहियखणेहिं महिउ कुलबंभणु भणिवि नृव[4]स्सुं कहिउ ।
ता भासइ लद्धावसरु विप्पु को पुत्तु एत्थु किर कवणु बप्पु ।
संसारु असारु णिरायराय किं सासय मण्णहि अब्भछाय ।
जिह तरुवेल्लिहिं परगम्मु होइ तिह णरु णारिहिं अप्पउं ण वेइ ।
जीहोवत्थहिं जगमारणेहिं डिंभहिं डं[5]भुब्भवकारणेहिं ।
संसारिय सयल सणेहु लेंति केसा इव बंधणजोग्ग होंति ।
मोहें [6]बद्धा भ[7]वि सं[8]सरंति पुणु पुणु ह[9]वंति पुणु पुणु [10]मरंति ।

घत्ता—महु वित्तइं पुत्तकलत्तइं एम [11]भणंतु जि णिज्जइ ॥
[12]सुहुं माणइ धम्मु ण याणइ जगु खयरक्खें खज्जइ ॥१५॥

१५

तब इतनेमें गेरुए वस्त्र धारण किये हुए मीठी वाणी बोलनेवाला एक दण्डी साधु वहाँ आया । जो जिनवरकी तरह भव्योंके कष्टोंको दूर करनेवाला था, जिसके भ्रमरकुलके समान नीले बाल कुण्डलित थे, जो उत्तरीय वस्त्रके साथ यज्ञोपवीत धारण किये हुए था । वह रूप और गुणमें अद्वितीय था । तपके लिए नियम ग्रहण करनेवाले मन्त्रियोंने उसका सम्मान किया और कुलीन ब्राह्मण समझकर राजासे कहा । तब अवसर मिलनेपर ब्राह्मण बोला—"यहाँ कौन पुत्र है, और कौन बाप है ? हे मनुष्योंके राजराज, यह संसार असार है । क्या तुम मेघोंकी छायाको शाश्वत मानते हो ? जिस प्रकार तरु लताओंके परवश हो जाता है, उसी प्रकार मनुष्य नारियोंके कारण अपनेको नहीं जान पाता । जगका नाश करनेवाली जीवकी अवस्थाओं, बच्चों और बच्चोंके जन्मकारणोंके द्वारा सभी संसारी जीव स्नेह ग्रहण करते हैं, और केशोंके समान बन्धनके योग्य हो जाते हैं । मोहसे बँधकर संसारमें परिभ्रमण करते हैं । फिर-फिर जन्म ग्रहण करते हैं और फिर-फिर मृत्युको प्राप्त होते हैं ।

घत्ता—'मेरा धन, मेरे पुत्र-कलत्र' इस प्रकार कहता हुआ वह ले जाया जाता है, फिर भी वह सुख मानता है, धर्म नहीं जानता । और इस प्रकार यह जग यमरूपी राक्षसके द्वारा खा लिया जाता है ॥१५॥

१५. १. A °चीरु धरु । २. A P °विहुरु । ३. A अद्दुईउ; P अदुईउ । ४. A P णिवस्स । ५. A डिंभुब्भव° । ६. A मोहं बद्धा । ७. P जगि । ८. P संभरंति । ९. A मरंति; P भवंति । १०. A हवंति । ११. A रुणंतु । १२. सुकु माणइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

दारिवि धरणीयलु दिढभुएहिं आणिय मंदाइणि तुह सुएहिं ।
अहिभवणि विलग्गउ दंडरयणु णिग्गउ फणि [1]गेरलुप्पेच्छणयणु ।
आरूसेप्पिणु[2] आसीविसेण जोइय णिव[3] णंदण वइवसेण ।
ता चवइ सयरु गयदुरियकलिलु ण्हाइज्जइ दिज्जइ काइं सलिलु ।
किं एण पणासइ [4]ईट्ठसोउ [5]वर पंचमुट्ठि सिरि देमि लोउ ।
जहिं कहिं मि ण पेच्छमि सुहिविओउ ण हु होइ कयाइ अणिट्ठजोउ ।
जहिं [6]सयलकाल [7]अयरामरत्तु जहिं थक्कइ अप्पउ णाणमेत्तु ।
तं सिउ [8]साहंवि [9]गिण्हंवि चरित्तु पुणु भीमकुमारु णिवेण वुत्तु ।
लइ वसुह ण इच्छिय तेण केम गुणवंतें परगेहिणिय जेम ।
ता थविवि भईरहि पुहइरज्जि अप्पणु लग्गउ परलोयकज्जि ।
दढधम्महु पायंतिइ समग्गु आराहिउ भावें मोक्खमग्गु ।

घत्ता—सहुं भीमें णिज्जियकामें चारित्तेण विहूसिउ ॥
चक्केसरु हुउ जोईसरु मणिकेउ[10] वि सुरु तोसिउ ॥१६॥

१६

तुम्हारे पुत्र धरतीको अपने दृढ़ बाहुओंसे खोदकर गंगा नदी ले आये। उनका दण्डरत्न नागभवनसे जा टकराया। विषसे परिपूर्ण नेत्रवाला वह नाग निकला। उसने क्रुद्ध होकर यमके समान उन पुत्रोंको देखा। इसपर जिसका पाप कलंक धुल गया है ऐसा राजा सगर कहता है कि क्या स्नान किया जाये और पानी दिया जाये, क्या इससे इष्टजनका वियोग दूर हो जायेगा ? अच्छा है मैं पाँच मुट्ठियोंमें सिरके बाल लेकर केशलोंच करता हूँ। जहाँ किसी सुधीका वियोग मैं नहीं देखता। और न कभी भी अनिष्ट योग होता है, जहाँ सदैव अजर और अमरत्व निवास करता है। जहाँ आत्मा ज्ञानमात्र रहता है, मैं उस शिवको सिद्ध करता हूँ। मैं चारित्र ग्रहण करता हूँ।" तब राजाने कुमार भीमसे कहा कि यह धरती तुम ले लो। परन्तु उस गुणवान्ने उसकी इच्छा नहीं की जैसे वह किसी दूसरेकी गृहिणी हो। तब भगीरथको पृथ्वीके राज्यमें स्थापित कर, राजा सगर स्वयं परलोकके काममें लग गया। दृढ़धर्मा मुनिके चरणोंके निकट उसने सम्पूर्ण भावसे समग्र मोक्षमार्गकी आराधना की।

घत्ता—कामको जीतनेवाले चारित्रसे विभूषित, और भीमके साथ वह चक्रेश्वर योगीश्वर हो गया। इससे मणिकेतु देव भी सन्तुष्ट हो गया ॥१६॥

---

१६. १. P गरलु दुपेच्छणयणु । २. P रूसेप्पिणु आसीविसविसेण । ३. A P तुह । ४. A दुट्ठसोउ । ५. P वरि । ६. A P सव्वकाल । ७. A P अयरामरत्तु । ८. A P साहमि । ९. A P गेण्हमि । १०. A P मणिकेउ वि संतोसिउ ।

१७

गउ तेत्तहिं[1] जेत्तहि पडिय पुत्त मायाविसमुच्छारयेंविलित्त[2]।
अवहरिवि विउव्वियगरलें[3] भप्पु जीवाविय कउ णिम्मलु वियप्पु।
उट्ठिय ते सायरि सायरेण भासियसुरेण महुरक्खरेण।
वसु वसुमइ सीहासँणु[4] मुएवि गउ तुम्हहं पिउ पावज्ज लेवि।
णियजीवियें[5]चायपरिग्गहेण तुम्हइं विणडिय गंगागहेण[6]।
ता तेहिं विमुक्कउ णिहिलु गंथु गउ जेण महाजणु सो जि पंथु।
जाया जइ णियजणणाणुयारि णीरंजण थिरमँण[7] णिव्वियारि।
दोर्वासपयडपासुलियगत्त[8] सकवालमूलसुणिलीणणेत्त।
उत्ताणखप्परोयरकराल[9] दीहरणह भासुररोमवाल[10]।
अणदिट्ठपुट्ठिगयें[11]वंसपव्व विच्छिण्णगाव[12] तवतावतिव्व।
कडयडियजाणुकोप्परपएस उववासखीण चम्मट्ठिसेस।
कंकालरूव जगभीमवेस णिज्जणणिवासि[13] सुइसुक्कलेस।

घत्ता—दिहिपरियर पसमियमयजर जमसंजमधरणुच्छव ॥
[14]बहुखमदम कुंचियकरकम णावइ थलगय कच्छव ॥१७॥

१७

वह वहाँ गया जहाँ माया-विषकी मूर्च्छाके वेगसे लुप्त पुत्र पड़े हुए थे। उसने वैक्रियिक विषको खींचकर भस्मको जीवित कर सुन्दर शरीरमें परिणत कर दिया। वे सगर-पुत्र आदरके साथ उठ बैठे। देवने मधुरवाणीमें उनसे कहा कि धन, धरती और सिंहासन छोड़कर तुम्हारे पिता संन्यास लेकर चले गये हैं। अपने जीवनके त्यागका परिग्रह है जिसमें, ऐसी गंगा लानेके आग्रहसे तुम लोग प्रवंचित हुए। यह सुनकर उन लोगोंने भी समस्त परिग्रहका परित्याग कर दिया और उसी रास्ते पर गये, जिसपर महाजन जा चुके थे। अपने पिताका अनुकरण करनेवाले वे निरंजन, निर्विकार और स्थिरमन मुनि हो गये। जिनके शरीरके दोनों पार्श्वभागोंकी पसुलियाँ निकल आयी हैं, जिनके नेत्र कपालके मूल भागमें लीन हो गये हैं, जो उठे हुए खप्परके उदरसे भयंकर हैं जिनके लम्बे नाखून और चमकता हुआ रोमजाल है, जिनके पीठके बाँसकी गाँठें दिखाई दे रही हैं, जिनका अहंकार जा चुका है, जो तीव्र तपके तापसे सन्तप्त हैं, जिनके घुटने और हथेलियोंके प्रदेश सूख गये हैं, जो उपवाससे क्षीण हैं और जिनकी केवल चमड़ा और हड्डियाँ शेष रह गयी हैं। जो कंकालस्वरूप और जगमें भयंकररूप धारण करते हैं, एकान्तमें निवास करनेवाले जो पवित्र शुक्ललेश्यावाले हैं।

घत्ता—जो धैर्यके परिग्रहसे युक्त जराको शान्त करनेवाले, यम और संयमको धारण करनेका उत्सव करनेवाले, बहुत ही क्षमा और दयावाले तथा जिन्होंने अपने हाथ-पैर संकुचित कर लिये हैं ऐसे मानो स्थलपर रहनेवाले कच्छप हैं ॥१७॥

१७. १. A P जेत्तहि तेत्तहि। २. A °रसपलित्त; P °रयपलित्त। ३. A °गरलु दप्पु; P °गरलु सप्पु। ४. A P सिंहासणु। ५. A जीवियराय°। ६. A P मायागहेण। ७. P थिर मणि। ८. A P दोपासुपयडपंसुलिय°। ९. A उत्ताणुयखप्परो°। १०. A P °रोमजाल। ११. A गयबंभपव्व। १२. A P विच्छिण्णगत्त। १३. A P णिज्जणि णिवासि। १४. A P पिहुखमदम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८

सुरधणुवलए विज्जुज्जलए।
गज्जंतघणे हयविरहियणे।
सरिवहसरिसे धारावरिसे।
संविहियथले पवहंतजले।
मुगरवमहले वणविडवितले।
णिवसंति इसी विलुलंति विसी।
गलकंदलए पुणु कंदलए।
ओसापसरे पत्ते सिसिरे।
दरिसियगयणे बाहिरसयणे।
णिक्कंपमणा धीरा समणा।
तमछइयदिसं गमयंति णिसं।
हिमणिग्गमणे गिम्हागमणे।
गिरिसिहरगया सज्झाणरया।
संतावणिहिं रविकिरणसिहिं।
विसहंति जई सुविसुद्धमई।
णिज्जियविसयं इय एरिसयं।
पालेवि समं पुत्तेहिं समं।
विद्धत्थरयं णिव्वाणगयं।
जणतोसयरो पत्तो सयरो।
णिट्ठवियरिउं णिसुणेवि पिउं।
अयमेय वयं गयमयणमयं।
णियपुत्तयहो वरयत्तयहो।
जयलच्छिसहिं दाऊण महिं।

१८

इन्द्रधनुषसे मण्डित, विद्युत्से उज्ज्वल, विरहीजनोंको आहत करनेवाले मेघोंके गरजनेपर नदीके प्रवाह पथके समान स्थलभागको ढक लेनेवाले, धारावाहिक रूपसे जलके प्रवाहित होनेपर, पशुकुलसे मुखरित वनविटपके नीचे वे मुनि रहते हैं और विषयोंका नाश करते हैं। जिसके कन्दल (अंकुर/केश) गल चुके हैं, ऐसे मस्तक प्रदेशमें ओसके प्रसारसे युक्त शिशिरऋतुके प्राप्त होनेपर, जिसमें आकाश दिखाई देता है, ऐसे बाह्य शयनमें, धीर श्रमण निष्कम्प भावसे तमसे आच्छादित दिशाओंवाली रात्रि व्यतीत करते हैं। हिम (शीत) ऋतुके चले जानेपर और ग्रीष्म ऋतुके आगमनपर पहाड़ोंके शिखरोंपर विराजमान वे सत् ध्यानमें रत रहते हैं। सतानेवाली रविकिरणोंकी आगको सुविशुद्ध मतिवाले वे मुनि सहन करते हैं। विषयोंको जीतनेवाले इस प्रकारकी साधनाका पालन कर राजाजनोंको सन्तुष्ट करनेवाले सगर अपने पुत्रोंके साथ, पापका नाश करनेवाले निर्वाणको प्राप्त हुए। यह सुनकर कि पिताने कर्मोंका नाश कर दिया है, (यह सोचकर) अपने

१८. १. A P विज्जुज्जलिए। २. A P संपिहिय°; K संविहिय but gloss संपिहित°। ३. A P मिगरव°। ४. A P दरसिय°। ५. A P गिंभागमणे। ६. A °रई। ७. A °गई। ८. A P अपमेयवयं। ९. A वरदत्तयहो; P वरपत्तयहो।

[10]आसमि गुणिहे गुत्तयमुणिहे[11] ।
घत्ता—अरितरुसिहि राउ भईरहि हिंसारंभु मुएप्पिणु ॥
सरहंगहि तडि थिउ गंगहि [12]जिणपावज्ज लएप्पिणु ॥१८॥

१९

ताराहारावलिपविमलेहिं सतुसारखीरसायरजलेहिं ।
कलहोयकलसकविलियकरेहिं तहु पयजुयलउ सिंचिउ सुरेहिं ।
तप्पायधोयसलिलेण सित्त तहिं हूई सुरवरसरि पवित्त ।
हिमवंतपोमसरवरपसूय अज्जु वि जणु मण्णइ तित्थभूय ।
मंदारजाईसिंदूरएहिं अरविंदकुंदकणियारएहिं ।
सुपउरमयरंदायंबएहिं अंचिवि णवकुसुमकरंबएहिं ।
आमोयमिलियचलमहुलिहेहिं गंधेहिं दिण्णणासासुहेहिं ।
थोत्तेहिं जईसरु धरियजोउ वंदेवि देव गय सग्गलोउ ।
उप्पाइवि केवलु तिजगचक्खु संपत्तु भईरहि परममोक्खु ।
घत्ता—सो मुणिवरु अजरामरु हूयउ खणि असरीरिउ[2] ॥
भरहत्थहिं णिवसत्थहिं पुप्फदंतु जयकारिउ ॥१९॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सयरणिव्वाणगमणं णाम एकूणचालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥३९॥

॥ सयरचरियं[3] समत्तं ॥

पुत्र वरदत्तके लिए विजयरूपी लक्ष्मीकी सहेली धरती देकर गुणवान् गुप्तमुनिसे कामके मदसे रहित यही व्रत ग्रहण करता हूँ ।

घत्ता—अरिरूपी वृक्षके लिए आगके समान राजा भगीरथ हिंसा और आरम्भको छोड़कर तथा जिनदीक्षा ग्रहण कर चक्रवाकोंसे युक्त गंगानदीके तटपर स्थित हो गये ॥१८॥

१९

तारोंकी हारावलियोंके समान स्वच्छ, तुषारकणों सहित, क्षीरसागरके जलोंसे स्वर्णकलशसे युक्त हाथोंसे देवोंने उनके पदयुगलका अभिषेक किया। उनके चरणोंके धोये गये जलसे सींची गयी देवनदी गंगा उस समय पवित्र हो गयी। हिमवन्त सरोवरसे निकलनेवाली गंगानदीको लोग आज भी तीर्थस्वरूप मानते हैं। मन्दार, जुही, सिन्दुवार, अरविन्द, कुन्द, कनेर पुष्पोंके सुप्रचुर मकरन्दोंसे लाल नव कुसुम समूहोंसे अर्चा कर, तथा जिनमें आमोदसे चंचल मधुकर मिले हुए हैं ऐसी नासिकाको सुख देनेवाले गन्धों और स्तोत्रोंसे योगधारी योगीश्वरकी वन्दना कर देव स्वर्ग-लोक चले गये। त्रिलोकनयन केवलज्ञान उत्पन्न कर भगीरथ परममोक्षको प्राप्त हुए।

घत्ता—वह मुनिवर एक क्षणमें अजर-अमर और अशरीरी हो गये। भरतक्षेत्रवासी राजसमूहोंने पुष्पदन्तके समान उनका जयजयकार किया ॥१९॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका सगरनिर्वाणगमन नामका उनतालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥३९॥

---

१०. A P असमे । ११. A P गोत्तयमु णेहें । १२. A P जिणपव्वज्ज ।
१९. १. A °महुवरेहिं; A °महुयरेहिं । २. A असरीरउ । ३. A P omit सयरचरियं समत्तं····

संधि ४०

पणवेप्पिणु संभवु सासयसंभवु संभवणासणु मुणिपवरु ॥
पुणु तहु केरी कह रंजियबुहसेह कहंवि सरासइ देउ वरु ॥ ध्रुवकं ॥

१

सदयं परिरक्खियमयं अदयं विद्धंसियमयं ।
चूरियअलियलयंसयं लुंचियअलिअलयं सयं ।
दूसियपरहणहरणयं पुसियबंभहरिहरणयं ।
विणिवारियपरदारयं परदरिसियपरदारयं ।
रयणीभोयणविरमणं धीरं अविवेविरमणं ।
कयगिहिसंगपमाणयं बहुणयणिहियपमाणयं ।

सन्धि ४०

शाश्वत है जन्म जिनका, ऐसे तथा जन्मका नाश करनेवाले मुनिप्रवर सम्भवनाथको प्रणाम कर, फिर उन्हींको, पण्डित सभाको रंजित करनेवाली कथा कहता हूँ, हे सरस्वती देवी, मुझे वर दो।

१

जो पशुओंकी रक्षा करनेवाले सदय हैं, जो मदको ध्वस्त करनेवाले अदय हैं, जिन्होंने असत्यके अंशको ध्वस्त कर दिया है, और भ्रमरके समान श्याम केशोंको उखाड़ दिया है, जिन्होंने दूसरेके धनके हरणकी निन्दा की है, जिन्होंने ब्रह्मा, हरि और हरके नयको दूर कर दिया है। जो परस्त्रीका निवारण करनेवाले हैं, तथा जिन्होंने दूसरोंके लिए मोक्षका द्वार बताया है, जो निशा भोजनसे विरत हैं, धीर और अकम्पित मन हैं। जिन्होंने गृहस्थ जीवनमें परिग्रहका परि-

---

Mss. A and P have the following stanza at the beginning of this Samdhi :—

विनयाङ्कुरसातवाहनादौ नृपचक्रे दिवि (व) मीयुषि क्रमेण ।
भरत तव योग्यसज्जनानामुपकारो भवति प्रसक्त एव ॥१॥

This stanza is also found at the beginning of Samdhi XXXIII of this Work in certain Mss. See foot-note on page 530 of Vol I. K does not give it there or here.

१. १. A P °बुहसुह । २. A वीरं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणेणं अपमाणयं[3] [4]सवराणं पि पमाणयं ।
पविहियभव्वसुरायमं[5] णिंदियसोंडसुरायमं[6] ।
जं तवतावेणुग्गयं जेण वीयराउग्गयं ।
अणुहुत्तं संसारयं णो बद्धं हरिसा रयं ।
दूरुज्झियसंसारयं ण हि संसासंसारयं ।
देवासुरकंपावणं जं देवं कं पावणं ।
जयपायडियसयारयं सिद्धिपुरंधिसयारयं ।
कंतं तीइ अयारयं प[7]ढमट्ठाणि अयारयं ।
बीएं[8] सरहंकारयं अरुहं णिरहंकारयं[9] ।
उयरलीणसयलक्खरं मंतेसं परमक्खरं ।
भुवणकुमुयवणसंभवं तं वंदे हं संभवं ।
[10]ओसारियअसिआउसं [11]णविऊणं असिआउसं ।
भणिमो संभवसंकहं जोणीमुहदुहसंकहं ।

घत्ता—तियसिंदफणिंदहिं खयरणरिंदहिं जं थुव्वइ कयपंजलिहिं ।
तं जिणगुणकित्तणु महुं सुकइत्तणु अमिउं पियह कण्णंजलिहिं ॥१॥

माण किया है। जो अनेक नयोंसे प्रमाणको स्थापित करनेवाले हैं, जो ज्ञानसे अप्रमाण (सीमा रहित) हैं; और जो स्वपरको ज्ञानरूपी लक्ष्मीको प्राप्त करानेवाले हैं, जिन्होंने भव्यजनोंके लिए देवोंका आगमन करवाया है, जिन्होंने मद्यकी प्रशंसा करनेवाले शास्त्रोंकी निन्दा की है, जो तपभावसे उग्र हैं और जिन्होंने वीतराग भाव उत्पन्न किया है, जिन्होंने अनन्त सुखका अनुभव किया है, जो हर्षसे पापमें लिप्त नहीं हैं, जिन्होंने संसारको छोड़ दिया है, और जो प्रशंसा या अप्रशंसामें रत नहीं हैं, जो देव और असुरोंको कँपानेवाले हैं, उस देवके समान पवित्र कौन है ? जिन्होंने जगमें सदाचारको प्रकट किया है, जो सिद्धिरूपी इन्द्राणीमें सदारत हैं, जो मुक्तिरूपी कान्ताके दूतरहित स्वामी हैं, जिनके नामके प्रथम अक्षरमें 'अ' और दूसरे स्थानमें 'र' सहित हकार है (अर्थात् अर्हत्), जिसके भीतर समस्त अक्षर लीन हैं, जो मन्त्रेश और परम अक्षर हैं, जो भुवनरूपी कुमुदवनके लिए चन्द्रमा हैं, ऐसे उन सम्भवनाथकी मैं वन्दना करता हूँ। जिन्होंने लक्ष्मी और आयुका निवारण कर दिया है, ऐसे पंचपरमेष्ठीको प्रणाम कर जन्म दुःखकी शंकाका नाश करनेवाले सम्भवनाथकी कथा कहता हूँ।

घत्ता—देवेन्द्रों, नागेन्द्रों और विद्याधरेन्द्रोंके द्वारा जिनकी हाथ जोड़कर स्तुति की जाती है, ऐसे जिनके गुणकीर्तन और मेरे सुकवित्वरूपी अमृतको कर्णरूपी अंजलियोंके द्वारा पियो ॥१॥

---

३. A P add after this : देवं जं सुपमाणयं; T seems to omit it. ४. P सवरे दरिसियमायमं। ५. P adds after this : सवरेवि परमायमं; T seems to omit it। ६. P सुरामयं। ७. A पढमट्ठाणअयारयं। ८. A सुमहियसरहंकारयं। ९. A P add after this : पाइय (A झाइय) णिरहंकारयं, पावियसाहुक्कारयं। १०. AT ओहामिय°; P ऊसारिय°। ११. A भरिऊणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

दिणयरपईवए इह पढमदीवए ।
मेरुपुव्विल्लए पसु[1]कणधणिल्लए ।
तहिं विदेहे[2] वरे सीयसरिउत्तरे ।
पविमलदियंतरे कच्छदेसंतरे ।
रायहंसुज्जलं सच्छविच्छु[3]लु जलं ।
फुल्लपंकयवणं पवणहल्लिरवणं ।
णवकुसुमपरिमलं सर[4]ससुमहुरफलं ।
रुणुरुणियमहुयरं रइरमियणहयरं ।
तुंगपायारयं गोउरदुवारयं ।
विरइयमहुच्छवं तुर[5]यहिलिहिलिरवं ।
रसियनृ[6]ववारणं णीलदलतोरणं ।
चिंधमालाउलं विविहजणसंकुलं ।
हेममयमंदिरं खेमणामं पुरं ।
तहिं सुहडसाहणो पहु विमल[7]वाहणो ।
वसइ सिरिसेविओ पणइणीणं पिओ ।
चारुरज्जे कए दीहकाले गए ।
तिविहणिव्वेइणा तेण वरराइणा ।
थोरदीहरभुए विम[8]लकित्तीसुए ।
सधरधरणी पया विणिहिया[9] संपया ।

२

जिसमें सूर्यरूपी प्रदीप हैं ऐसे इस प्रथम द्वीप जम्बूद्वीपमें सुमेरुपर्वतके पूर्वमें पशु और धान्यसे सम्पन्न श्रेष्ठ विदेह क्षेत्रमें सीता नदीके उत्तरमें प्रविमल दिशान्तरवाले कच्छ देशमें क्षेम नामका नगर है, जो राजहंसकी तरह उज्ज्वल और स्वच्छ उछलते हुए जलवाला है, जिसमें कमलवन खिला हुआ है, और जो पवनसे हिलनेके कारण सुन्दर है। नवकुसुमोंसे सुरभित, और सरस तथा सुमधुर फलवाला है। जिसमें मधुप गुंजन कर रहे हैं और नभचर रतिसे क्रीड़ा कर रहे हैं। जिसमें ऊँचे परकोटे हैं, जो गोपुर द्वारवाला है, जिसमें महोत्सव हो रहे हैं, अश्वोंके हिनहिनानेका शब्द हो रहा है; राजाके गज चिग्घाड़ रहे हैं, नीलपत्तोंके तोरण हैं, जो ध्वजचिह्नोंको मालाओंसे व्याप्त हैं, तरह-तरहके जनोंसे संकुल हैं और जिसमें स्वर्णनिर्मित प्रासाद हैं, ऐसे उसमें सुभटोंकी सेवासे युक्त विमलवाहन नामका राजा था। श्रीसे सेवित वह अपनी प्रणयिनियोंके लिए अत्यन्त प्रिय था। अपना सुन्दर राज्य करते हुए, उसका जब बहुत समय बीत गया, तो संसार, शरीर और कामसे विरक्त होकर उस उत्तम राजाने अपने स्थूल और लम्बी बाहुवाले विमलकीर्ति नामक पुत्रके लिए पर्वत और धरती सहित समस्त सम्पदा सौंप दी। और असन्दिग्ध प्रभावाले स्वयंप्रभ जिनको

२. १. P वसुकण° । २. P विदेहे पुरे । ३. A विच्छुलजलं । ४. AP सरसमहुरं फलं । ५. P तुरिय° । ६. AP णिववारणं । ७. A विवलवाहणो । ८. A विवलकित्ती° । ९. APT विणिहया ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिणमसंसयपहं पणविवि सयंपहं ।
जायओ जइवरो णिम्मम णिरंबरो ।
[10]सहिवि तवतावणं धरिवि सुहभावणं ।
जिणगुणणिबंधणं भुवणयलखोहणं ।
चिणिवि [11]सुहसंपयं धुणिवि भवभ[12]वरयं ।
उवसमविहूसणं करिवि संणासणं ।
[13]अवियलियसंजमो मरिवि मुणिपुंगमो ।
पढमगइवेयए [14]पढमयणिकेयए ।
विस्सुयसुदंसणे दुक्खविद्धंसणे ।
अहममरवइ हुओ भवियणसंथुओ ।

घत्ता—तेवीस अणूणइं जलहिसमाणइं आउ णिबद्धउं सुरवरहु ॥
बिहिं र[15]यणिहिं जुत्तउ अद्ध णिरुत्तउ तणुपरिमाणु वि भणिउं तहु ॥२॥

३

तेवीसवरिसं[1]सहसहिं असइ तेत्तियहिं जि पक्खिहिं ऊससइ ।
वण्णें भावेण वि सु[2]क्किलउ विलुलंतहारमणिमेहलउ ।
णउ गेयवज्झसरकलयलउ णउ णारि ण हियवइ कलमलउ ।
पाविट्ठ दुट्ठ जहिं णत्थि जणु जो जो दीसइ सो सो सुयणु ।
णाणें जाणइ सुरणरणियइ सत्तमणरयंतु जाम णियइ ।
तं तेत्तिउ व[3]ट्टइ णिट्ठियउं जांवाउसेसु तहु णिट्ठियउं ।

प्रणाम कर वह निर्मम दिगम्बर यतिवर हो गये। तपकी तपन सहकर और शुभभावना धारण कर त्रिभुवनतलको क्षुब्ध करनेवाले जिनगुणोंका निबन्धन कर शुभ सम्पदाका चयन कर, भवके भय और पापको नष्ट कर, उपशमसे विभूषित संन्यास धारण कर, अविगलित संयम वह मुनिश्रेष्ठ मरकर प्रथम ग्रैवेयकके दुःखोंका नाश करनेवाले प्रथम विश्वप्रसिद्ध सुदर्शन विमानमें, भव्यजनों द्वारा संस्तुत अहमेन्द्र देवके रूपमें उत्पन्न हुआ।

घत्ता—उस सुरवरके तेईस सागर प्रमाण पूरी आयु थी। ढाई हाथ ऊँचा उसके शरीरका प्रमाण था। वह भी मैंने निश्चयपूर्वक कहा ॥२॥

३

तैंतीस हजार वर्षमें वह भोजन करता। और उतने ही पक्षोंमें (अर्थात् साढ़े ग्यारह हजार वर्षोंमें) श्वास लेता। रंग और भावमें वह शुभ्र था। उसपर हार और मणिमेखला झूलती थी। उस ग्रैवेयक विमानमें कामदेवका कोलाहल नहीं था, और न स्त्री और हृदयमें पाप था। वहाँ पापिष्ठ और दुष्ट लोग नहीं थे। जो दिखाई देता था, वह सज्जन था। अवधिज्ञानसे वह सुर और मनुष्योंको जानता था। सातवें नरकके अन्त तक वह देख सकता था। जब उसका उतना समय

१०. A सहइ तव° । ११. AP सुहसंचयं । १२. A भवभयरयं । १३. AP अविहलिय° । १४. A पढमणिक्खेयए; P पढमइ णिकेयए । १५. A विहरयणिहिं ।
३. १. A तेवीससहासवरिसहिं; P तेवीससहसवरिसेहिं । २. A सुक्किल्लउ । ३. AP वट्टइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ता एत्तहि उववणि रमियँणेंसुरि　　इह भरहखेत्ति सावत्थिपुरि ।
इक्खाउँवंसु सुविसुद्धमइ　　हयसढु दढु णामें पुहइवइ ।
धणुगुणसंधियपंचमसरहु　　तहु घरणि सुसेण सेण सरहु ।
एक्कहिं दिणि णिसि पच्छिमपहरि　　सुहुं सुत्ती देवि सवासहरि ।

घत्ता—सा सालंकारी सेण भडारी पइवय सोलह सुंदरइं ॥
महिमंडलसामिणि मंथरगामिणि अवलोयइ सिविणंतरइं ॥३॥

४

करिणं वसहं केसरिणं　　लच्छि दामं चंदमिणं ।
झसजुय कुंभजुयं च वरं　　सरवरममलिणमयरहरं ।
हरिवीढं देविंदघरं　　फणिभवणं फुडमणिणियरं ।
विप्फुलिंगपिंगलियणहं　　सिहिणं जलियं दीहसिहं ।
इय जोइवि पीणत्थणिया　　पविउद्धा सीमंतिणिया ।
सिसुमयणयणा पत्तलिया　　णीलुप्पलदलसामलिया ।
अहिणववेल्लि व कोमलिया　　गहियाहरणा संचलिया ।
करि धरिवि सविलासिणियं　　कलहंसी विव हंसिणियं ।
पत्ता कंता रायहरं　　सिहरोलंबियसलिलहरं ।
अवलोइवि पइमुहकमलं　　पुच्छइ सत्था सिविणहलं ।
णियबुद्धीइ परिग्गहियं　　तेण वि तिस्सा तं कहियं ।
जस्स वसा तेलोक्कसिरी　　मज्जणवीढं मेरुगिरी ।

बीत गया, और उसकी आयुका निश्चित भाग शेष रह गया, तब जिसमें देवता क्रीड़ा करते हैं, ऐसे उपवनवाले भरत क्षेत्रकी श्रावस्ती नगरीमें इक्ष्वाकुवंश था । उसमें विशुद्धतम बुद्धि दृढ़रथ नामका राजा था । उसकी सुषेणा नामकी गृहिणी, मानो धनुषकी डोरीपर पाँच बाणोंका सन्धान करनेवाले कामदेवकी सेना थी । एक दिन रात्रिके अन्तिम प्रहरमें वह देवी अपने निवासगृहमें सुखसे सोयी हुई थी । महीमण्डलकी स्वामिनी मन्द गतिवाली उसने स्वप्न-परम्परा देखी ॥३॥

४

हाथी, वृषभ, सिंह, लक्ष्मी, पुष्पमाला, चन्द्र, मत्स्ययुगल, श्रेष्ठ कुम्भयुग्म, स्वच्छ सरोवर, सूर्य, समुद्र, सिंहासन, देवविमान, नागभवन, स्फुटमणिसमूह और स्फुलिंगोंसे आकाशको पीला बनानेवाली दीर्घ ज्वालाओंवाली प्रज्वलित आग । पीनस्तनोंवाली वह सीमन्तिनी यह देखकर जाग गयी । शिशुमृगनयनी दुबली पतली नीलकमलदलके समान श्यामल, अभिनवलताके समान कोमल, और आभरण धारण करनेवाली वह चली । विलाससे युक्त कलहंसीके समान वह हंसिनी-को अपने हाथमें धारण कर, वह कान्ता शिखरोंसे मेघगृहोंको सहारा देनेवाले राजभवनमें पहुँची । अपने पतिका मुखरूपी कमल देखकर, स्वस्थ वह, स्वप्नोंका फल पूछती है । अपनी बुद्धिसे ज्ञात कर उसने भी उनका फल उसे बता दिया कि त्रिलोक लक्ष्मी, जिसके अधीन है, सुमेरुपर्वत,

४. A रमियसरि । ५. A इक्खागुवंस । ६. A हयसयदढु । ७. A ससेण । ८. A सुहसुत्ती; P सुहें सुत्तो ।

४. १. AP झसजुयलं कुंभजुयं पवरं । २. A दीयसिहं । ३. P विउद्धा । ४. P मयसिसु° । ५. P रयणहरं ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

अमरउलं चियं[६] भिश्चउलं जस्स घरं तिजगं विउलं।
सो भद्दे तुह दिण्णवरो होही तणओ तित्थयँरो[७]।
घत्ता—तं णिसुणिवि सुंदरि सरमहिहरदरि रोमंचिय पुलएण किह।
महुसमयहु वत्तइ पोसियसोत्तइ पणइणि पियमाहविय जिहं[८] ॥४॥

५

वज्जिणा धम्मकज्जं तओ पीणियं चिंतियं चिंतणिज्जं मणे[१] भावियं।
एत्थ सावत्थिरायस्स गेहे जिणो जक्ख होही सुसेणासईणंदणो।
जाहि ताणं तुमं होहि तोसायरो वासवित्ताइरिद्धीपवित्तीयरो।
ताभयासाहिवाणाइ मावट्टणं[२] दव्वणाहेण वेउव्वियं पट्टणं।
सव्वहेमालयं सूरयंतप्पहं[३] सव्वकालंचिवं सव्वसोक्खावहं।
आगया गब्भसंसोहणत्थं[४] इरी कंति[५] कित्ती दिही लच्छि बुद्धी हिरी।
जाम छम्मास ता संपयालिंगणे भम्मवुट्ठी कया राइणो पंगणे।
फग्गुणे मासए सुक्कपक्खंतरे पंचमे रिक्खए अट्ठमीवासरे।
सिंधुरायारधारी सुहेणुण्णओ [६]पुज्जगेवज्जदेवो समोइण्णओ।
णारिदेहे थिओ सुद्धधाउत्तए वारिबिंदु व्व राईविणीपत्तए।
धम्मचंदस्स सच्चंदिमाणंदिया देवदेवेण मायापिऊ वंदिया।
णिच्च माणिक्करासी पुणो घत्तिया दोससंखेहिं पक्खेहिं णिव्वत्तिया।

जिसका स्नानपीठ है, विशाल त्रिजग, जिसका घर है, हे कल्याणि, वरोंको देनेवाला तुम्हारा ऐसा तीर्थंकरपुत्र होगा।

घत्ता—यह सुनकर कामरूपी पर्वतकी घाटी वह सुन्दरी पुलकसे रोमांचित हो उठी मानो वसन्तके कानोंको पोषित करनेवाली वार्तासे प्रणयिनी कोयल पुलकित हो उठी हो ॥४॥

५

उस अवसरपर इन्द्रने चिन्तनीय कर्मकी अपने मनमें चिन्ता और भावना की और यह धर्मकार्य यक्षसे कहा—'हे यक्ष, श्रावस्तीके राजाके घरमें जिन भगवान् सती सुषेणाके पुत्र होंगे, तुम वहाँ जाओ और सन्तोष उत्पन्न करनेवाली गृह-द्रव्य आदि मनोहर ऋद्धियाँ उत्पन्न करो।' इस प्रकार आकाशके राजा (इन्द्र) की आज्ञासे कुबेरने रत्नोंकी वृष्टि और नगरकी रचना की। वह नगर स्वर्णनिर्मित घरों और सूर्यकान्त मणियोंकी प्रभासे युक्त था। उसमें सब कालके वृक्ष थे और वह सर्व प्रकारके सुखोंका घर था। शीघ्र ही गर्भ संशोधन करनेवाली देवियाँ, कान्ति-कीर्ति-धृति-लक्ष्मी-बुद्धि और ह्री, इन्द्रकी आज्ञासे वहाँ आयीं। जब छह माह शेष रह गये तब सम्पत्तियोंसे आलिंगित राजाके आँगनमें स्वर्णवृष्टि हुई। फागुन माहके शुक्ल पक्षमें अष्टमीको पाँचवें मृगशिरा नक्षत्रमें गजका आकार धारण करनेवाला, सुखसे उन्नत पूर्वग्रैवेयकका देव अवतीर्ण हुआ और शुद्ध धातुवाले नारीरूपमें इस प्रकार स्थित हो गया मानो कमलिनी पत्रपर जलकण हो। जिनेन्द्रकी शोभासे आनन्दित होनेवाले माता-पिता की देवदेवने वन्दना की। फिर नौ महीने तक प्रति-

---

६. A विय; P पिय° । ७. P तित्थहरो । ८ P जह ।

५. १. A मणे जाणियं; P कज्जयं जाणियं । २. AP मावड्ढणं । ३. A सूरयंतं पहं । ४. A सोहणत्थे इरी and gloss इरी त्वरिता; T इ दूरो; PK सिरी । ५. P कित्ति कंती । ६. P पुव्वगेवज्जं° ।

दीहरद्धीसमाणं खणेणं खणं कोडिलक्खा गया तीस जइया घणं ।
जित्तसत्तूसुए कम्मणिम्मुक्कए पँत्तिए[7] बीर्यतित्थंकरे[8] ढुक्कए ।
कत्तिए पुण्णिमासीइ भे पंचमे सोमँजोए[9] दुजोयावलीणिग्गमे ।
तइउ तइया तिणाणी समुप्पण्णओ इंदु[10] इंदो रवी कंपिओ पण्णओ ।
आइया भावणा जोइसा विंतरा सायरा भासुरा कप्पवासी सुरा ।
अंकुसो भामिओ देहंभाधारिणा[11] चोइओ वारणो झत्ति जंभारिणा[12] ।
णच्चमाणा परे गायमाणा परे धावमाणा परे खेलमाणा[13] परे ।
[14]सद्दहासा परे गज्जमाणा परे सीहसद्दा[15] परे संखसद्दा परे ।
छाइयासारसा सारसा सासुरा [16]चित्तचारेहिं पत्तेहि पत्ता सुरा ।

घत्ता—पुरु परियंचेप्पिणु घरु जाएप्पिणु जणणिहि देप्पिणु सिसु अवरु ।।
पियरइं पुज्जेप्पिणु कर मउलेप्पिणु लइउ सुरिंदें तित्थयरु ।।५।।

६

जिणरूवरिद्धि पेच्छंतियइ सुरवरपंतिइ गच्छंतियइ ।
तक्खणि तारायणु लंघियउ सुरसिहरिसिहरु आसंघियउ ।
पविलोइय पंडुर पंडुसिले[1] सा खंडससंकसमाण किले[2] ।
ता तहिं सईइ सइं धारियउ करिकंधराउ उत्तारियउ ।

दिन रत्नवृष्टि की गयी। फिर जितशत्रुके पुत्र दूसरे तीर्थंकर (अजितनाथ) के कर्मसे निवृत्त होनेसे लेकर दीर्घ समुद्र प्रमाण तीस करोड़ वर्ष समय बीतनेपर कार्तिक शुक्ला पूर्णमासीके दिन मृगशिरा नक्षत्रमें दुर्योगावलीसे रहित सौम्ययोगमें तीन ज्ञानधारी सम्भवनाथका जन्म हुआ। इन्द्र, इन्दु, सूर्य और नागराज काँप उठे। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषदेव और भास्वर कल्पवासी देव आदरपूर्वक आये। शरीरकी कान्तिके धारक इन्द्रने अपना अंकुश घुमाया और शीघ्र अपने हाथीको प्रेरित किया। कोई नाच रहे थे, कोई गा रहे थे, कोई दौड़ रहे थे, कोई खेल रहे थे। कोई अट्टहास कर रहे थे, कोई गरज रहे थे। कोई सिंहगर्जना कर रहे थे। कोई शंख बजा रहा था। देवोंसे पृथ्वी और आकाश छा गये। उत्कृष्ट लक्ष्मीसे युक्त देवोंके साथ देव नाना प्रकारकी प्रवृत्तिवाले वाहनोंके साथ आये।

घत्ता—नगरकी परिक्रमा कर घर जाकर, माताको दूसरा पुत्र देकर, माता-पिताकी पूजा कर और हाथ जोड़कर जिनेन्द्र भगवान्को ले लिया गया ।।५।।

६

जिनेन्द्रकी रूपऋद्धि देखती हुई, देवताओंकी कतार जाती हुई, शीघ्र तारागणोंको लांघती हुई सुमेरुपर्वतके शिखर पर पहुँची। वहाँ सफेद पाण्डुक शिला देखी जो चन्द्रमाके खण्डके समान थी। वहाँ उसने इन्द्राणीके साथ उन्हें उठा लिया और हाथीके कन्धेसे उन्हें उतारा। प्रभुको

७. AP पत्तए। ८. A बीइ तित्थंकरे। ९. A सोम्मजोए। १०. A इंदु इंदो रई किं पि उप्पण्णओ; P सहसु लक्खणहं वसुअहियसंपुण्णओ। ११. A देहंभाधारिणो; P देहसाधारिणा। १२. A जंभारिणो। १३. AP खेल्लमाणा। १४. A सद्दहासा। १५. P संखसद्दा परे पडहसद्दा परे। १६. A चित्तधारेहिं; P चित्तयारेहि।

६. १. AP पंडुसिला। २. AP किला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हरिआसणि पहु वइसारियउ इंदेण मंतु उच्चारियउ।
दिण्णउं दब्भासणु णिहयमलु दसदिसु परिघित्तु स[3]कुसुमजलु।
दसदिसु सुं[4]धूवु उच्चाइयउ दसदिसु चरुभाउ णिवेइयउ।
दसदिसु थियै सुरवर कलसकर दसदिसु वित्थरिय मुइंगसर।
खीरोयखीरधाराधरहिं सिंचिउ जिणिंदु सयलामरहिं।
हारावलितडिफुरिएहिं किह गज्जंतिहिं मेहहिं मेरु जिह।

घत्ता—मंगलु गायंतिहिं पुरउ णडंतिहिं दावियबहुरसभावहिं।
णाणाविहभासहिं थोत्तसहासहिं जगगुरु संथुउ देवहिं ॥६॥

७

हरिणा परमेट्ठि पसाहियउ सुइथुइगिराहिं आराहियउ।
सिहिणा तहु दीवउ बोहियउ जउं जंपइ हउं पइं साहियउ।
रिंछाहिउ रिंछहु ओयरिउ विणएण णएण जि संचरिउ।
जडव[2]इणा जडमणु परिहरिउ परमप्पउ णियहियवइ धरिउ।
वाएण भडारउ विज्जियउ रयणेसें रयणहिं पुज्जियउ।
इसाणें ईसु भणिवि णविउ [3]सुसुहासूएं सुहाहि ण्हविउ।
सूरेण वि मोहंधारहरु सूरु जि णिज्झाइउ परमपरु।

सिंहासनपर बैठाया। इन्द्रने मन्त्रका उच्चारण किया। दर्भासन रखा, और दसों दिशाओंमें मलका नाश करनेवाला कुसुमोंसे सुवासित जल फेंका। दसों दिशाओंमें धूप उठा ली गयी, दसों दिशाओंमें चरुभाग निवेदित किया गया। हाथमें कलश लिये हुए देव दसों दिशाओंमें खड़े हो गये। मृदंगका स्वर दसों दिशाओंमें फैल गया। क्षीरसमुद्रके क्षीरकी धाराओंको धारण करनेवाले समस्त देवोंने जिनेन्द्रका इस प्रकार अभिषेक किया, जैसे हारावलीके समान बिजलीसे भास्वर गरजते हुए मेघों द्वारा सुमेरु पर्वतका अभिषेक किया गया हो।

घत्ता—मंगलगान करते हुए, सामने नृत्य करते हुए, अनेक रसभावोंका प्रदर्शन करते हुए, देवोंने अनेक प्रकारकी भाषाओंवाले हजारों स्तोत्रोंसे विश्वगुरुकी स्तुति की ॥६॥

७

देवेन्द्रने परमेष्ठीको अलंकृत किया। पवित्र स्तुतियोंकी वाणीसे उनकी आराधना की। आगके द्वारा उनका दीप प्रज्वलित किया गया। यम कहता है कि मैं तुम्हारे द्वारा जीत लिया गया हूँ। नैऋत्यदेव अपने रीछके वाहनसे उतर पड़ा। वह विनय और नयके साथ चला। जड़वादी (वरुण) ने जड़बुद्धि छोड़ दी। उसने परमात्माको अपने हृदयमें धारण कर लिया। वायु ने आदरणीय पर पंखा झला, रत्नेशने रत्नोंसे उनकी पूजा की। ईशानने ईश कहकर नमन किया। चन्द्रमाने अमृतसे स्नान करवाया। सूर्यने भी मोहान्धकारका नाश करनेवाले शूरवीर जिनका

३. P सुकुसुम। ४. A दसदिस सुधूधु; P दसदिसु सुधूधुच्चा°। ५. AP सुरवर थिय। ६. A °भाविहिं; P °भावेहि। ७. A णाणाविहभासिहिं; P णाणाविहिभासेहिं।
७. १. P सइथुइ°। २. AP जडवयणा। ३. A ससुहासूई; P सुसुहासूई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धरणिंदें धरणिसमुद्धरणु　　पत्थिउ महुं देव तुहुं जि सरणु ।
इय बहुगिव्वाणहिं वंदियउ　　ध्रुवुं संभवु संभवु सद्दियउ ।

घत्ता—पुणु पुणु पणवेप्पिणु घरु आणेप्पिणु दिण्णु सुसेणासुंदरिहि ॥
गुरुचरणइं अंचिवि सुकिउ संचिवि गउ सुरवइ सुरवरपुरिहि ॥७॥

८

कणयच्छवि सुहु सलक्खणउ　　जहिं दीसइ तहिं जि सुहावणउ ।
अंगउ लायण्णमहिड्ढियउ　　चउचावसयाइं पवड्ढियउ ।
जसु आयत्तउ सयमेव विहि　　सो किं वण्णिज्जइ रूवणिहि ।
जसु अंगि दुद्धु लोहिउं गणमि　　सो खमवंतउ किं किर भणमि ।
जसु गुणपरिमाणु णेय लहंवि　　सो सूहउ हउं किरे किं कहंवि ।
अच्छरणररामाणंदणहु　　तंहु तेत्थु सुसेणाणंदणहु ।
कीलंतहु अमरवरेहिं सहुं　　भुंजंतहु रायकुमारसुहुं ।
घरघडियारयदंडेण हय　　पुव्वहं पण्णारहलक्ख गय ।
पइरत्तउ पेच्छिवि तरुणियणु　　आहंडलु आयउ तहिं वि पुणु ।
उवणेप्पिणु णिवइकुमारिगणु　　पारंभिउ रायहु परिणयणु ।

घत्ता—तूरहिं वज्जंतहिं गलगज्जंतहिं तियसेहिं किं ण विसट्टु महि ॥
जिणणाहु ण्हवंतिहिं वारि वहंतिहिं किं जाणहुं सोसिउ उवहि ॥८॥

ध्यान किया। धरणेन्द्रने प्रार्थना की—"हे धरतीका उद्धार करनेवाले देव, आप ही मेरे लिए शरण हैं।" इस प्रकार देवोंने उनकी वन्दना की और निश्चित रूपसे 'सम्भव-सम्भव' शब्दका उच्चारण किया।

घत्ता—बार-बार प्रणाम कर और घर आकर, (उन्होंने) सुन्दरी सुषेणाको बालक दे दिया। गुरुके चरणोंकी वन्दना कर और पुण्यका संचय कर इन्द्र अपने स्वर्ग चला गया ॥७॥

८

स्वर्ण रंगवाले और लक्षणोंसे युक्त वह जहाँ दिखाई देते वहीं सुन्दर लगते। लावण्य और ऋद्धियोंसे सम्पन्न उनका शरीर चार सौ धनुष ऊँचा था। जिसके अधीन स्वयं विधाता हैं, उस रूपनिधिका क्या वर्णन किया जाये? जिसके शरीरमें मैं रक्तको दूध गिनता हूँ, उनको मैं क्षमावान् किस प्रकार कहूँ? मैं जिसके गुणोंके परिमाणको नहीं पा सकता, उन्हें मैं सुभग किस प्रकार कहूँ? अप्सराओं, मनुष्यों और स्त्रियोंको आनन्दित करनेवाले, सुषेणादेवीके पुत्र (सम्भव) के देवोंके साथ क्रीड़ा करते हुए, और राजकुमारका सुख भोगते हुए, घरकी घड़ीके दण्डसे आहत पन्द्रह लाख पूर्व वर्ष निकल गये। पतिमें अनुरक्त युवतीजनको देखकर, इन्द्र दुबारा आया। राजाओंकी कन्याओंका समूह देकर उनका विवाह प्रारम्भ किया गया।

घत्ता—बजते हुए तूर्यों, गरजते हुए देवेन्द्रोंसे क्या धरती विशिष्ट नहीं हुई? जिननाथका अभिषेक करते और पानी बहाते हुए क्या जानें कि समुद्र सूख गया ॥८॥

४. A ध्रुव संभव संभउ; P धुउ संभउ संभउ। ५. A आवेप्पिणु।

८. १. AP महड्ढियउ। २. A किं किर। ३. A रामावंदणहु। ४. A ता तेत्थु। ५. AP पेक्खिवि।
६. T उवणेविणु। ७. AP णाहहु। ९. P विसट्टु।

७

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

९

भालयलइ पट्टु[1] चडावियउ　　रायासणि राउ चडावियउ ।
चिंतंतहु तासु णयाणयइं　　पालंतहु गामें[2]णयरसयइं ।
पुव्वहं परमाउहि संचलिय　　चालीस चयारि लक्ख गलिय ।
तइयहं तहिं दियें[3]हि सुसोहणइ　　अच्छंतहु सुँहुं[4] सणिहेलणइ ।
अवलोइवि गयणि विलीणु घणु　　थिउ महिगयणयणु विसण्णमणु ।
वेरग्गु पहूयउं[5] जिणवरहु　　हरि सजव वि णेंति ण सिवपुरहु ।
गय मत्ता महुं वि जणंति मउ　　पहु रह रहंति मुणिधम्ममउ ।
चामरवाएं णृवु[6] मोडियउ　　भणु कवणु ण कालें तोडियउ ।
सिरि धरियइं वारिणिवारणइं　　पुणु होंति ण मारिणिवारणइं ।
तहिं अवसरि लोयंतिय अइय　　ते विण्णवंति भत्तिइ लइय ।
जं इंदियसोक्खु समुज्झियउं　　तं चारु चारु पइं बुज्झियउं ।

घत्ता—जो पइं संबोहइ सो संबोहइ सूरहु दीवउ मूढमइ ।
पइं मुइवि गुँणु[7]ब्भव सामिय संभव को परियाणइ परमगइ ॥९॥

१०

आणंदु ण हियवइ माइयउ　　पुणु तेत्थु पुरंदरु आइयउ ।
पुणु परिवुड्ढहिं[1] देवावलिहिं　　आहूय[2] दुद्धसलिलावलिहिं ।
थिरदीहरहत्थगलत्थियहिं　　चामीयरघडपल्हत्थियहिं ।

९

उनके भालतलपर पट्ट बाँध दिया गया और राज्यासन पर राजाको बैठा दिया गया। न्याय-अन्यायकी चिन्ता करते और सैकड़ों ग्राम-नगरोंका पालन करते हुए, उनकी परमायुके चालीस लाख पूर्व वर्ष और बीत गये। एक दिन, तब, अपने सुन्दर प्रासादमें सुखसे बैठे हुए उन्होंने आकाश में लुप्त होते हुए मेघको देखा। वह धरतीमें आँखें गड़ाकर उदासमन हो गया। जिनवरको अत्यन्त वैराग्य हो गया। (वे सोचते हैं) कि तेजसे तेज वेगवाले भी अश्व शिवपुर नहीं ले जा सकते। मदवाले गज भी मुझमें मद उत्पन्न नहीं करते, रथ मुनिधर्ममय पथका अवरोध करनेवाले होते हैं, चामरोंकी हवासे राजा मोड़ दिया जाता है, बताओ संसारमें कालसे कौन नहीं तोड़ दिया जाता। सिरपर धारण किये गये छत्र, फिर मृत्युका निवारण करनेवाले नहीं होते। उस अवसरपर लौकान्तिक देव आये, उन्होंने भक्तिके साथ निवेदन किया, "जो आपने इन्द्रिय-सुखोंका त्याग किया है, वह आपने अच्छा किया।

घत्ता—जो आपको सम्बोधित करता है, वह मूढ़मति दीपक, सूर्यको सम्बोधित करता है ? हे गुणसम्भव स्वामी, आपको छोड़कर और कौन परमगति को जान सकता है ?" ॥९॥

१०

जिसके हृदयमें आनन्द नहीं समा सका ऐसा इन्द्र फिर आया। पुनः दूध और जलोंकी (कलश पंक्तियाँ) लानेवाली बढ़ती हुई देवपंक्तियोंने अपने लम्बे स्थिर हाथोंसे गिरती हुई स्वर्ण-

९. १. P पट्ट । २. A णयरगामसयइं । ३. A दिवसि । ४. AP सहुं । ५. A पहूवउं । ६. AP णिवु । ७. AP गुणण्णव ।

१०. १. AP परितुट्ठिहिं । २. A आहूउ ।

संण्हविउ[3] णविउ पोमाइयउ वत्थालंकारविराइयउ ।
दुम्मोहुँ[4] मुएप्पिणु रज्जगहु[5] सिद्धत्थयसिवियारूढु पहु ।
परमेसरु पणइणिपाणपिउ णरखयरहिँ[6] तियसहिँ वहिवि णिउ ।
बहुखगमाणियफलसाउयउं णंदणवणु गंपि सहेउयउं[7] ।
परिसेसेप्पिणु सिरिरमणिउरु[8] पणवेप्पिणु देवें सिद्धगुरु ।
उप्पाडिउ केसकलाउ किह भवकुरुहमूलपब्भारु[9] जिह ।
सकुसुमु सभसलु सु करिवि करि सइरमणें घित्तउ मयरहरि ।
किउ रोसपसायहं[10] णिक्खवणु [11]रायहं सहसें सहुं णिक्खवणु ।
उववासु करेप्पिणु सावसरि बीयइ दिणि दिणयरकरपसरि[12] ।
सावत्थिहि चरियामग्गु किउ [13]देविंददत्तणिवभवणि थिउ ।

घत्ता—सुररवु मंदाणिलु घणवरिसियजलु[14] सुरहिउ मणिकोडिहिँ सहिउ ॥
दायारउ पुज्जिउ दुंदुहि वज्जिउ[15] दाणपुण्णु[16] देवहिँ महिउं ॥१०॥

११

देंतेण ण संकडु चिंतविउ[1] जं अण्णहु कासु वि णिम्मविउ ।
जं संजमजोग्गउ बुज्झियउं दहिसप्पिखीरतेल्लुज्झियउं ।
तं भुंजइ सउवीरोयणउं पडिसेहियदप्पुक्कोयणउं[2] ।

कलशोंकी कतारोंसे भगवान् को स्नान कराया, और वस्त्रालंकारोंसे अलंकृत कर उनकी स्तुति की। दुर्मोहको उत्पन्न करनेवाले राजरूपी ग्रहको छोड़कर सिद्धार्थ नामक शिविकामें बैठकर प्रणयिनियोंके प्राणप्रिय परमेश्वर मनुष्य, विद्याधरों और देवोंके द्वारा ले जाये गये। जिसके फलोंका स्वाद अनेक पक्षियोंके द्वारा मान्य है, ऐसे सहेतुक नन्दनवनमें जाकर देवने लक्ष्मी और स्त्रियोंका अपने चित्तमें त्यागकर तथा सिद्धगुरुको प्रणाम कर अपने केश इस प्रकार उखाड़ लिये मानो संसाररूपी वृक्षकी जड़ोंको ही उखाड़ दिया हो। पुष्पों और भ्रमरों सहित उन्हें अपने हाथमें लेकर शचीरमण (इन्द्र) ने क्षीरसमुद्रमें फेंक दिया। उन्होंने क्रोध और प्रसादका संयम कर लिया और एक हजार राजाओंके साथ संन्यास ग्रहण कर लिया। उपवास कर पारणा बेलामें, दूसरे दिन, सूर्यकी किरणोंका प्रसार होनेपर वह चर्याके लिए श्रावस्तीमें गये और इन्द्रदत्त राजाके घरमें ठहरे।

घत्ता—देवशब्द, मन्दपवन, सुरभित मेघोंसे बरसा हुआ जल, रत्नोंके साथ दातारकी पूजा हुई। नगाड़े बजे और देवोंने दान पुण्यका सम्मान किया ॥१०॥

११

(आहार) देते हुए उसने संकटकी चिन्ता नहीं की, जो कि किसी दूसरेके निमित्तसे बनाया गया था, और मुनिके लिए उपयुक्त समझा गया था। दही, घी, खीर और तेलसे रहित था,

३. A सो ण्हविउ। ४. A दुम्मोह। ५. P रज्जु गहु। ६. P णरखेयरतियसहिँ। ७. P adds after this: आगहणमासि सियकुहुयदिणि, सिलउवरि णिहिउ उइयइणि। ८. A रमणियरु। ९. A मूलु पब्भारु। १०. A रोसकसायहं। ११. AP रायहंससहसें। १२. A °कयपसरि। १३. P देवेंदुदत्त°। १४. A °वरसिय°। १५. AP गज्जिउ। १६. A दाणवंतु।

११. १. A चिंतियउ। २. A दुक्खुक्कोहणउं।

गहणंति कहिं वि अहणिसु गमइ जंपइ ण किं पि सं[3] संसमइ।
विहरइ मणपज्जवणाणधरु विसमें जिणकप्पें जिणपवरु।
तउ एंव करंतहु झीणाइं चउदहवरिसइं वोलीणाइं।
कत्तियसियपक्खि चउत्थिदिणि अवरण्हि जम्मरिक्खि वियणि।
छट्ठेणुववासें णिट्ठियहु सुविसालसालतलि संठियहु।
गइ पढमि बीइ सुक्कुग्गमणि चउकम्मकुलक्खयसंकमणि।
उप्पण्णउं केवलु केवलिहि गयणोवडंतकुसुमंजलिहि॥
घत्ता—तहु जाएं णाणें णेयपमाणें जे केण वि ण[4] वि चिंतविय॥
ते विवरि अहीसर महिहि महीसर सग्गि सुरिंद[5] वि कंपविय॥११॥

१२

खगामिणा ससामिणा।
समेयया अमेयया।
अमाहरा रमाहरा।
मलासयं णियासयं।
कुणंतया थुणंतया।
मुणीसरं सरो सरं।
ण संधए ण विंधए।
ण जम्मि सा मलीमसा।
रइच्छिहा[1] कया विहा।
महाजसं तमेरिसं।
महाइया पराइया।

ऐसा, दर्पकी उत्कण्ठाओंका निषेध करनेवाला थोवीरके भातको उन्होंने खा लिया। गहन वनमें वह कहीं भ्रमण करते हैं, वह कुछ भी नहीं बोलते, आत्माका उपशमन करते हैं, मनःपर्यय ज्ञानके धारी वह जिनप्रवर विषम जिनकल्पमें भ्रमण करते हैं। इस प्रकार तप करते हुए उनके क्षीण चौदह वर्ष बीत गये। तब कार्तिक शुक्ला चतुर्थीके दिन, जन्मकालीन मृगशिरा नक्षत्रमें अपराह्ण-के समय, छठे उपवासके साथ, एक विशाल शाल वृक्षके नीचे बैठे हुए प्रथम और दूसरी गतिमें शुक्लध्यान उत्पन्न होनेपर चार घातिया कर्मोंके कुलका क्षय कर लेनेपर, जिनके ऊपर आकाशसे कुसुम वृष्टि हो रही है ऐसे उन केवलीके लिए केवलज्ञान उत्पन्न हो गया।

घत्ता—जिसका प्रमाण नहीं है, ऐसे उत्पन्न केवलज्ञानके द्वारा किसीके भी द्वारा नहीं कँपाये गये, पाताल लोकके नागेश्वर, धरतीके राजा और स्वर्गके देवेन्द्र भी कम्पित हो उठे॥११॥

१२

अपने स्वामीके साथ विद्याधर प्रचुर संख्यामें इकट्ठे हुए। अलक्ष्मीका नाश करनेवाले लक्ष्मीके धारक, अपने चित्तको मलरहित करते हुए तथा जिनपर कामदेव न तो बाणका सन्धान करता है, और न बेधता है, ऐसे मुनीश्वरकी स्तुति करते हुए, और जिन मुनीश्वरमें मलिन रति-कामनाका अन्त कर दिया गया है, महायशवाले ऐसे मुनीश्वरके पास, वे महा-

३. A सं सम्ममइ। ४. A ण वि चिंतिय; P ण वि चिंतविया। ५. A वि कंपिय; P वि कंपविया।
१२. १. P रईछिहा।

समासुरा　सुरासुरा।
सिमुग्गया　समुग्गया।
रसुद्धुरा　इमी गिरा।
सुसाइया　अणाइया।
सुवत्तया　अवत्तया।
रसंकिया　रसुज्झियां[2]।
सरूवया　अरूवया।
सुगंधया[3]　अगंधया।
सकारणा　अकारणा।
ससंभवा　असंभवा।
ससंगया　असंगया।
रयासवं　पुणो णवं।
दया[4]णिही　तवोविही।
अहंगया　अहं गया।
ण ते णया　वरायया।
सरायया　समायया।
खयं गया　महादिया।
सइंदिया　अणिंदिया।
णिव्विंदिया[5]　णिवंदिया[6]।
पसाहिओ　पवोहिओ।
कुकम्मरं[7]　सुयंतरं।
कहंति जे　कुबुद्धि ते।
णगेसु[8] या　पुरीसु[9] या।
पढंतु[10] मा　ण ताण मा।

आदरणीय सुन्दर सुर और असुर आये। उनके मुखसे सभी दिशाओंमें व्याप्त होनेवाली रससे परिपूर्ण यह वाणी निकली—"आप पर्यायकी अपेक्षा आदि हैं, और द्रव्यकी अपेक्षा अनादि। आप अत्यन्त व्यक्त हैं और अव्यक्त हैं, आप रससे युक्त हैं, और रससे रहित हैं, आप स्वरूपवान् हैं और अरूप हैं, आप गन्धयुक्त हैं और गन्धहीन हैं, आप कारणसहित हैं और अकारण हैं। आप संसारसहित हैं और संसारसे रहित हैं, ज्ञानसे युक्त होकर भी परिग्रहसे रहित हैं, कर्मोंका आश्रव होनेपर भी आप नये हैं। आप दयाकी निधि और तपका विधान करनेवाले हैं। भंगसे रहित हे देव, जो बेचारे देव आपको नमन नहीं करते वे नरकको प्राप्त होते हैं। रागसहित दूसरोंको ठगनेवाले (मायावी कपटी) महाद्विज क्षयको प्राप्त होते हैं। द्रव्येन्द्रियोंसे सहित, भावेन्द्रियोंसे रहित, मनुष्योंसे वंचित जो कुकर्मोंका प्रतिपादन करनेवाले शास्त्रान्तरोंको कहते हैं वे खोटी बुद्धिवाले होते हैं। जो पहाड़ोंमें और नगरियोंमें उन्हें पढ़ते हैं (शास्त्रोंको पढ़ते हैं) उन ब्राह्मणों-

२. P adds after this: सतच्चया, अतच्चया। ३. AP सगंधया। ४. P दयामही। ५. PA णिवंदिया। ६. A omits this foot। ७. P कुकम्मदं। ८. AP णएसु वा। ९. P पुरेसु वा। १०. A पढंत मा।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सुसासया[११] णिरंसया।
सुणीरए तुहारए।
अदुण्णए बुहा मए।
कयज्जमा महाखमा।
चरंति जे लहंति ते।
[१२]महुंणइं परंगइं।
सुहं गया हयावया।
णिरामया सरामया।
णिरंजणा णमो जिणा।

घत्ता—कय[१३]माणवखंभहिं सारसरंभहिं वे[१४]ल्लीदुममणिवेइयहिं ॥
वरधूलीसालहिं णच्चणसालहिं गोउरथूहहिं चेइयहिं ॥१२॥

१३

जहिं समवसरणु सुरणिम्मविउं गुरु कंठीरवविट्ठरु[१] ठविउं।
जहिं सुविहावलउं विलंबिकरु अलिचुंबियफुल्लु[२] असोयतरु।
जहिं णहणिवडिउ[३] पसूयपयरु[४] आहंडलडिंडिमु मुयइ सरु।
जहिं छत्तइं तिण्णि समुब्भियइं विविहइं चिंधइं चमरइं सियइं।
जक्खिंदमउड[५]सिहरुद्धरिउ जहिं धम्मचक्कु आराफुरिउ।
जहिं वंति गंति णच्चंति सुर[६] विंभ[७]यरसपरवस थक्क णर[८]।
तहिं संणिसण्णु सो परममुणि मुणिवयणविणिग्गउ[९] दिव्वझुणि।

को शाश्वत और अंशरहित अर्थात् सम्पूर्ण लक्ष्मी नहीं प्राप्त होती। जो लोग तुम्हारे अत्यन्त पवित्र, दुर्नयोंसे रहित मार्गमें चलते हैं, उद्यम करनेवाले अत्यन्त क्षमाशील वे अपनी आपत्तियोंका नाश कर परमगति और सुखको प्राप्त होते हैं। जो निरामय हैं, कामदेवके रोगसे रहित ऐसे निरंजन जिनको प्रणाम करता हूँ।"

घत्ता—बनाये गये मानस्तम्भों, सारसयुक्त जलों, लता-द्रुम और मणिमय वेदिकाओं, श्रेष्ठ धूलिप्राकारों, नृत्यशालाओं, गोपुर-समूहों और चैत्योंसे सहित—॥१२॥

१३

जहाँ देवनिर्मित समवशरण था। उसमें विशाल सिंहासन रखा हुआ था। जहाँ कान्तिसे सहित, प्रसरित किरणोंवाला, भ्रमरोंसे चुम्बित पुष्पवाला अशोक वृक्ष था, जहाँ आकाशसे पुष्प समूह गिर रहा था। इन्द्रका नगाड़ा डिम-डिम वाद्य बजा रहा था। जहाँ तीन छत्र उत्पन्न हुए थे, विविध ध्वजचिह्न और चमर भी। जहाँ यक्षेन्द्रके मुकुटशिखरपर उद्धृत और आशाओंसे विस्फुरित धर्मचक्र था। जहाँ देवता गाते-बजाते नाच रहे थे। विस्मय रससे भरे हुए लोक स्थिर रह गये। ऐसे उस समवसरणमें वह परममुनि विराजमान थे। मुनिवरके मुखसे दिव्यध्वनि

११. A सुसंसया। १२. APT महुण्णई। १३. A माणवहरखंभहिं; K omits कय°। १४. P वल्लो°।
१३. १. A विट्ठर। २. AP फुल्ल। ३. णिवडिय। ४. AP °पवरु। ५. A °मउल°। ६. AP सुरा।
७. A विंभिय। ८. AP णरा। ९. P °विणिग्गय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

झुणि साहइ जणजम्मंतरइं झुणि साहइ [10]भूभुवणंतरइं।
झुणि साहइ मणुयदेवसुहइं झुणि साहइ [11]णरतिरियदुहइं।
झुणि साहइ जीवरासिकुअइं झुणि साहइ बंधमोक्खफलइं।

घत्ता—झुणि सुणिवि पबुद्धहं जाइविसुद्धहं णिग्गंथहं मउलियकरहं।
जायउ गयगामिहि संभवसामिहि पंचुत्तरु सउ गणहरहं ॥१३॥

१४

तहिं चारुसेणु पहिलउ भ[1]णिवि पुणु गणमुणि मेल्लिवि मुणि गण[2]वि।
दोसहसइं अवरु दिवड्ढु सउ पुव्वंगधरहं थिउ जिणिवि मउ।
सयतिउ सलक्खु सिक्खुय[3]मइहिं एक्कूणतीससहसइं जइहिं।
परमोहिणाणधारिहिं मियइं छहसयइं रंधसहसंकियइं।
पण्णारहसहसइं केवलिहिं एक्कूणतीस पसमियकलिहिं।
सहसाइं रिसिंदहं वसुसयइं वेउव्वणरिद्धिहिं कयवयइं।
सउ स[4]ड्ढु सहासइं तवसमइं मणपज्जवधरिहिं धरियसमइं।
सउ सयहं समउ सय[5]वीसइइ जइवाइहिं संख[6] करवि मइ[7]इं।
जा[8]यइं बम्मीसरदा[9]राहं दुइलक्खइं एंव भडाराहं[10]।
लक्खाइं तिण्णि रइवज्जियहं दहगुणिय तिण्णि सहसज्जियहं।
सावियहं लक्ख पंच जि भ[11]णमि सावयहं तिण्णि ते हउं [12]मुणमि।

निकलती है। वह ध्वनि जो जन्म-जन्मान्तरका कथन करती है, वह ध्वनि जो भू और भुवनान्तरोंका कथन करती है, ध्वनि जो मनुज और देवोंके सुखोंका कथन करती है, ध्वनि जो नरक और तिर्यंचोंके दुःखोंका कथन करती है, ध्वनि जो जीवकुलराशिका कथन करती है, ध्वनि जो बन्ध और मोक्षफलोंका कथन करती है।

घत्ता—ध्वनि सुनकर प्रबुद्ध हुए जातिसे शुद्ध निर्ग्रन्थ हाथ जोड़े हुए एक सौ पाँच गणधर गजगतिसे गमन करनेवाले सम्भव स्वामीके गणधर हुए ॥१३॥

१४

उनमें चारुसेनको पहला कहकर, फिर गणप्रमुखको छोड़कर मुनियोंको गिनाता हूँ। दो हजार एक सौ पचास मदको जीतनेवाले पूर्वधारी थे। एक लाख उनतीस हजार तीन सौ शिक्षामतिवाले शिक्षक मुनि थे। नौ हजार छह सौ परम अवधिज्ञानके धारी थे। पन्द्रह हजार केवलज्ञानी थे। पापको नष्ट करनेवाले उन्नीस हजार आठ सौ विक्रिया ऋद्धिके धारक मुनि थे। बारह हजार एक सौ पचास शान्तिको धारण करनेवाले मनःपर्ययज्ञानी उनकी सभामें थे। वादी मुनियोंकी संख्या मैं बारह हजार कहता हूँ। इस प्रकार कामदेवको जीतनेवाले आदरणीय दो लाख मुनि थे। रतिसे रहित तीन लाख तीस हजार आर्यिकाएँ थीं। पाँच लाख श्राविकाएँ थीं, तीन लाख श्रावक थे। उनको मैं जानता हूँ।

१०. P भुवणु अणंतरइं। ११. A णरयतिरिय°।

१४. १. P भणमि। २. A गणिवि। ३. A सिक्खुव°; P सिक्खय°। ४. AP सड्ढु। ५. P सयवीसइहु। ६. AP करमि संख। ७. P मइहु। ८. A जाया। ९. A °दारयहं। १०. A भडारयहं। ११. AP मुणमि। १२. AP भणमि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—अहणिसु कयसेवहं चउविहदेवहं देविहिँ संख ण दीसइ ॥
संखेज्जतिरिक्खहं इच्छियसोक्खहं धम्मु अधम्मु[12] वि भासइ ॥१४॥

१५

महि विहरिवि भवियतिमिरु लुहिवि संमेयहु सिहरु[1] समारुहिवि ।
तहिँ दोण्णि पक्ख तणुचाउ किउ रिसिसहसें[2] सहुं षडिमाइ थिउ ।
दिक्खहि लग्गिवि पुव्वहं तणउं चोद्दह[3]वरिसूणउं लक्खु गउ ।
बद्धाउहिँ पुव्वहं घित्ताइं[4] लक्खाइं सट्ठि अणुहुत्ताइं[5] ।
मासम्मि पहिल्लइ पक्खि सिइ छट्ठइ दिणि मज्झण्हइ रुहसिइ ।
णियजम्मरिक्खि संभाइयउ अवि घाइ[6]चउक्कु वि घाइयउ ।
छेइल्लउ सुक्कज्झाणु धरिवि किरियाविच्छित्ति झ त्ति करिवि ।
पुग्गलपरिणामहु[7] णवणवहु गउ मुक्कउ संभवु संभवहु ।
ठिउ अट्ठमपुहइहि[8] अट्ठगुणु महुं पसियउ णिक्कलु णाणतणु ।
सुरमुक्ककुसुमरयमहमहिउ दीवेहिँ गंधधूवहिँ महिउ ।
वउ वीयरायरायहु ललिउ अग्गिंदमउडमणिसिहिजलिउ ।
लोएहिँ पवित्त पावरहिय अरुहंगभूइ सीसें गहिय ।

घत्ता—दिन-रात सेवा करनेवाले देवों और देवियोंकी संख्या दिखाई नहीं देती। सुखको चाहनेवाले उसमें संख्यात तिर्यंच थे। वह धर्म-अधर्मका कथन करते हैं ॥१४॥

१५

धरतीपर विहार कर, भव्य लोगोंके अन्धकारको दूर कर सम्मेदशिखर पर्वतपर आरूढ़ होकर उन्होंने वहाँ दो पक्ष तकके लिए एक हजार मुनियोंके साथ प्रतिमायोग धारण कर लिया। दीक्षाके समयसे लेकर चौदह वर्ष कम एक लाख पूर्व वर्ष बीतनेपर अपनी बँधी हुई आयुके साठ लाख पूर्व वर्ष भोगकर छोड़ दिये। चैत्र माहके शुक्लपक्षकी छठीके दिन मध्याह्न होनेपर अपने जन्मनक्षत्रमें सम्भावित चार घातिया कर्मोंका नाश कर दिया। छेदक शुक्लध्यान धारण कर, शीघ्र सूक्ष्म क्रिया विप्रतिपत्ति कर, उत्पन्न होनेवाले नये-नये पुद्गल परमाणुओंसे मुक्त होकर सम्भवनाथ मोक्ष चले गये। आठ गुणोंसे युक्त वह, आठवीं भूमि (सिद्ध शिला) में जाकर स्थित हो गये। निष्पाप ज्ञानशरीर वह मुझपर प्रसन्न हों। देवोंके द्वारा मुक्त कुसुमांजलियोंके परागसे महकते हुए, दीपों और धूपोंसे पूजित, वीतरागराजका सुन्दर शरीर, अग्नीन्द्रोंके द्वारा अपने मुकुटकी आगसे जला दिया गया। लोगोंने पवित्र, पाप रहित अर्हंतके शरीरकी भस्म अपने सिरपर ग्रहण की।

१२. AP अहम्मु वि हासइ ।
१५. १. A सिहरि । २. P रिसिसहसें पडिमाजोएं ठिउ । ३. A चउदह°; P बारह° । ४. AP वित्ताइं । ५. AP अणुहुंताइं । ६. P इय घाइ° । ७. A परिमाणहु । ८. AP पुहविहि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—जिणणिव्वाणुच्छवि सच्छरु सविब्भवि सुरवइ भरहु पणच्चिउ।
गउ णियघररंगहु सिंगारंगहु पुप्फदंतणियरच्चिउ ॥१५॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए
महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे संभवणिव्वाणगमणं णाम
चालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४०॥

॥ °संभवचरियं समत्तं ॥

घत्ता—जिन भगवान्‌के निर्वाण-उत्सवमें, अप्सराओं और अपने विभावोंके साथ कान्तिमान् इन्द्र खूब नाचा। फिर पुष्पदन्त (नक्षत्रों) के समूहसे अर्चित वह शृंगारस्वरूप अपने घरकी रंगशालाके लिए चला गया ॥१५॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका
चालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४०॥

९. P णियघरि रंगहु वज्जियभंगहु। १०. AP omit संभवचरियं समत्तं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ४१

अहिणंदणु इंदाणंदयरु णिंदिंदियइं णिवारउ ॥
वंदारयवंदेहिं वंदियउ वंदिवि संतु भडारउ ॥ध्रुवकं॥

१

असोक्खकंतारयं हयभवोहकंतारयं ।
ण जं च कंतारयं ण्हवणयम्मि कं तारयं ।
जैणस्स सं गंगयं कुणइ जस्स संग गयं ।
विइण्णमलभंगयं हुणइ वड्ढमाणं गयं ।
सुवण्णरुइरंगयं जसपऊण्णभूरंगयं ।
विहंसियणिरंगयं जणियभावणारंगयं ।
रयं परमघोरयं असमसंपयावारयं ।

सन्धि ४१

इन्द्रको आनन्द देनेवाले निन्दित इन्द्रियोंके द्वारा निवारित देवसमूहके द्वारा वन्दित सन्त भट्टारक अभिनन्दनकी मैं वन्दना करता हूँ।

१

जो दुखरूपी जलसे तारनेवाले और जन्मसमूहरूपी कान्तारको नष्ट करनेवाले हैं, जो स्वयं कान्तामें रत नहीं हैं, जिनके अभिषेककर्मका जल स्वच्छ है, गंगासे उत्पन्न और उनके शरीरसे प्राप्त जो जल लोगोंके लिए सुख उत्पन्न करता है। मलोंका घातक जो बढ़ते हुए रोगोंका नाश करनेवाला है, जिनके शरीरकी कान्ति स्वर्णके समान है, जिनके यशसे समस्त भूमिमण्डल परिपूर्ण है, जिन्होंने कामदेवको ध्वस्त कर दिया है, जिन्होंने सोलह कारण भावनाओंमें राग पैदा किया है, जो आत्मरत और परम अरौद्र हैं। जो क्रोधरूपी सम्पत्तिका निवारण करने-

---

Mss. A and P have the following stanza at the beginning of this Samdhi:—

वरमकरोदपारतरविवरमहिकिरणेन्दुमण्डलं
यदपि च जलधिवलयमधिलंघ्य विधेस्तदनन्तरं दिशः ।
विगलितजलपयोदपटलद्युति कथमिदमन्यथा यशः
प्रसरदमादमल्लकदनाभारत भुवि भरत सांप्रतम् ॥१॥

A reads °किरणर्द्धिमण्डलं in the first; P reads विधिसूदनन्तरं दिशः। P repeats the stanza at the beginning of XLVII. A gives it only here. K does not give it here or there.

१. १. AP °विदहि। २. AP add जं before जणस्स। ३. AP हणइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुजायमसरीरिणं णिहणिऊणमसरीरिणं ।
जमीसममरच्चियं गुणणिसेणियाहिं चियं ।
अहं तमहिणंदणं पणविऊण धीणंदणं ।
भणामि तव्ववसियं किर कहं तिणा ववसियं
वणे चडुलवाणरे सुहयमाणिणीवाणरे ।
सुणउ मा णा सणं सुणउ पावणिण्णासणं ।
इमं सुकियवासणं लहउ सम्मईसासणं ।

घत्ता—जिव सुयकेवलि जिव तियसवइ जिवँ पुणु थुणउ फणीसरु ॥
हउं णरु जीहासहसेण विणु किं वण्णवि परमेसरु ॥१॥

२

सालतालतालीदुमोहए मेरुसिहरिपुव्वे विदेहए ।
संचरंति करिमयरसंतई वहइ गहिर सीया महाणई ।
तीइ तीरि दाहिणइ पविउले चूयचारफलघुलियसुविउले ।
वारिवाहधाराहि सित्तए मुग्गमासजववीहिछेत्तए ।
छेत्तवालिणीसद्दसंगए दिण्णकण्णसंठियकुरंगए ।
वेकरंतबहुदुद्धगोहणे वच्छमहिसवसहिंदसोहणे ।
सव्वधण्णछण्णे अणूसरे सरतरंतकिंणरवहूसरे ।

वाले हैं, जो सुजात सिद्ध और दारिद्र्यरूपी ऋणका नाश करनेवाले हैं, ईश्वर जो देवोंके द्वारा पूज्य हैं, जो गुणरूपी सीढ़ियोंसे समृद्ध हैं, ऐसे बुद्धिको बढ़ानेवाले अभिनन्दनको प्रणाम कर उनके व्यवसित (चरित) को कहता हूँ कि जिसकी उन्होंने चेष्टा की। जिसमें चटुल वानर हैं, और जो सुन्दर मानिनियोंके लिए पीड़ाजनक है, ऐसे संसाररूपी वनमें मनुष्य शब्दको न कहे, (चुप रहे) तथा पापका नाश करनेवाले उस शब्दको (कथान्तरको) अवश्य सुने, जिसमें पुण्य (सुकृत) की वर्षा है, तथा सन्मतिके शासनको प्राप्त करे।

घत्ता—जिस प्रकार श्रुतकेवली इन्द्र, और जिस प्रकार नागेश्वर स्तुति करता है, मैं मनुष्य, हजारों जीभोंके बिना परमेश्वरका वैसा वर्णन कैसे कर सकता हूँ ? ॥१॥

२

सुमेरुपर्वतके पूर्वमें शाल और ताल तथा ताली वृक्षोंके समूहसे युक्त विदेह क्षेत्रमें गजों और मगरोंकी परम्परा जिसमें संचरण करती है, ऐसी गम्भीर सीता नदी बहती है। उसके विशाल दक्षिणी किनारेपर मंगलावती भूमिमण्डल (देश) है, जिसके आम्र और चार वृक्षोंपर विशाल पक्षिकुल आन्दोलित है, जो मेघकी धाराओंसे अभिषिक्त है। जिसमें मूंग, उड़द, जौ और धान्यके खेत हैं। जो क्षेत्रोंको रखानेवाली बालिकाओंके शब्दसे युक्त है, जिसमें हरिण कान दिये हुए बैठे हैं, अत्यधिक दूध देनेवाला गोधन जिसमें रँभा रहा है, जो बछड़ों, महिषों और वृषभेन्द्रोंसे शोभित है, जो सब प्रकारके धान्योंसे आच्छन्न और उपजाऊ है। जिसके सरोवरोंमें किन्नर वधुएँ

---

४. A °मसिरीरणं। ५. P गुणिणिसेणि°। ६. A चटुलवाणरे; P चवलवाणरे। ७. A जिण पुणु।
२. १. A पुव्वविदेहए। २. A संवरंत°। ३. A ताइ। ४. P पविउले। ५. A मुग्गमाह°। ६ P °छत्तए। ७. A वेकरंतबहुधुद्ध°; P वुक्करंत°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंजपुंजरुंजंतमहुलिहे कयलिललियलवलीलयागिहे ।
णिसुयमहुरपियमाहवीसरे पहियहियय गयविसमसरसरे ।
[10]उंच्छुवीलणुच्छलियरसजले मंगलावईभूमिमंडले ।
कोट्ट[11]वट्टुलट्टालदुग्गमं रु[12]द्धकुद्धलुद्धारिसंगमं ।
खोल्लखाइयावूढकोमलं पंच[13]वण्णकेलिल्लिचंचलं ।
मणिगणंसुमालाविरोहियं कूव[14]दीहियावाविसोहियं ।
कणयघडियघरपंतिपिंगलं णिच्चमेव संगीयमंगलं ।
अमियरायरिद्धीपपवे[15]ट्टणं रयणसंचयं णाम पट्टणं ।
तत्थ वसइ राया महाबलो भुयबलि व्व धीरो महाबलो ।
जस्स लच्छिकंता उरत्थले रमइ कित्तिरमणी महीयले ।
दीहकालमविय[16]लैमणोरह[17] भुंजिऊण रज्जं रमासुहं ।[18]
किं कु[19]णामि णिच्चं परासुहं हो[20] मुयामि इणमो परासुहं ।
माणसं दमेणं णियंतियं एम तेण सहसा विचिंतियं ।

घत्ता—धणवालहु बालहु णियसुयहु विरइवि पट्टणिबंधणु ॥
सो पासि विमलवाहणजिणहु जायउ राउ तवोहणु ॥२॥

तैरती हैं, जहाँ कमलोंके समूहपर भ्रमर गुंजन कर रहे हैं, जिसमें कदलियों और लवली लताओं-के सुन्दर लतागृह हैं, जिसमें कोयलोंके मधुर स्वर सुनाई दे रहे हैं, जहाँ पथिकोंके हृदय कामदेवके विषम तीरोंसे आहत हैं, जिसमें गन्नोंके पेरनेसे रसरूपी जल उछल रहा है। उसमें (मंगलावती देशमें) रत्नसंचय नामका नगर है, जो परकोटों और गोल-गोल अट्टालिकाओंसे दुर्गम है। जिसमें क्रुद्ध और लोभी शत्रुओंका समूह अवरुद्ध है, जो कोटरों और खाइयोंसे व्याप्त और कोमल है, जो पाँच रंगोंकी पताकाओंसे चंचल है, जो मणिगणोंकी किरणमालाओंसे सुशोभित है, और कूप और दीर्घ वापिकाओंसे सुशोभित है, जो स्वर्णनिर्मित गृह पंक्तियोंसे पीला है, और जिसमें सदैव संगीत और मंगल होते रहते हैं, जिसमें अमित राज्यवैभव बढ़ रहा है। उसमें (रत्नसंचय नगरमें) राजा महाबल नामका राजा निवास करता था, जो बाहुबलिके समान धीर और महाबली था। जिसके उरस्थलमें लक्ष्मीकान्ता रमण करती थी, और महीतल पर कीर्तिरूपी रमणी। लम्बे समय तक निर्विघ्न मनोरथ राज्य और रमासुखका भोग करनेके बाद एक दिन उसने सहसा विचार किया कि मैं नित्य दूसरोंके प्राणोंका घात क्यों करता हूँ? हा, मैं इन अत्यन्त अशुभ (कामोंको) छोड़ता हूँ। मैं अपने मनको संयमसे नियन्त्रित करता हूँ।

घत्ता—अपने पुत्र बालक धनपालको पट्ट बाँधकर, वह राजा विमलवाहन जिनके पास जाकर मुनि हो गया ॥२॥

---

८. A °पुंजरयरत्त° । ९. P °विसमसरिसरे । १०. A उच्छपीलणु°; P उच्छुपीलणु° । ११. A कोट्ट-बद्धलंटालदुग्गमं; P कोट्टवट्टुलाट्टालसंगमं । १२. P कुद्धलुद्धमुद्धारिदुग्गमं । १३. A पंचवण्णकंकेल्लि° । १४. P °दीविया° । १५. A ° पवड्ढणं । १६. A P °मविलय° । १७. A °मणोहरं । १८. A °रमाहरं । १९. P कुणोमि । २०. हो ण जामि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

सो णिग्गंथु गंथु[1] ण समीहइ सणियउं वियरइ पावहु बीहइ ।
ण पसंसाइ करइ पहंसिउं[2] मुहुं णउ केण वि णिंदिउ मण्णइ दुहुं ।
दूसंतउ परु[3] पिसुणु ण दूसइ हिंसंतउ मणा वि णउ हिंसइ ।
लाहालाहइ जीवियमरणइ समु जि समणु संठिउ समचरणइ ।
जिणिवि कुहेउवाय णयचंडहं तिण्णि तिउत्तरसय पासंडहं ।
एयारह अंगईं अवगाहिवि दंसणु सुद्धि बुद्धि आराहिवि ।
बंधिवि कयसोलहकारणहलु सिरिअरहंतणाउं गोत्तुज्जलु ।
णिहणयालि अणसणु अब्भसियउं देहखेत्तु रिसिहंलिएं किसियउं ।
कामकोहधरणीरुह खंडिवि पासहिं दिहिवइ दढयर मंडिवि ।
णाणसासु वड्ढारिउ चंगउं सासु मुयंतें मुक्कु णियंगउं ।

घत्ता—सुहझाणें मुउ सो परमरिसि णिम्मलु णिरुवमरूयउ ॥
अहमिंदु अणुत्तरि धवलतणु विजयविमाणइं° हूयउ ॥३॥

४

जलहिसमंमिए[1] तीसतियहिए ।
कालि णिग्गए सुरहं[2] मग्गए ।
तम्मि सुंदरे हं पुरंदरे ।

३

वह निर्ग्रन्थ मुनि, परिग्रहकी इच्छा नहीं करते, धीरे-धीरे विचरण करते, और पापसे डरते। प्रशंसासे वह अपना मुख हँसता हुआ नहीं करते (प्रसन्न नहीं होते), और किसीके द्वारा निन्दा किये जाने पर दुःख नहीं करते। दूषण लगाते हुए भी दुष्टको वह दोष नहीं देते। हिंसा करनेपर भी, जरा भी हिंसा नहीं करते। लाभ-अलाभ, जीवन और मरणमें सम, वह श्रमण समताके आचरणमें स्थित हो गये। कुहेतुवादोंको जीतकर और नयसे प्रचण्ड तीन सौ त्रेसठ पाखण्डोंको जीतकर, ग्यारह अंगोंका अवगाहन कर दर्शनशुद्धि और बुद्धिकी आराधना कर, सोलह कारण भावनाओंके फल, श्री अरहन्तके उज्ज्वल गोत्रका बन्ध कर, उन्होंने अन्तिम समय अनशनका अभ्यास किया, और देहरूपी खेतको मुनिरूपी कृषकने कर्षित किया। काम-क्रोध-रूपी वृक्षोंको उखाड़कर चारों ओर धैर्यकी मजबूत बागड़ लगाकर उन्होंने ज्ञानरूपी धान्य खूब बढ़ा ली, साँस छोड़ते ही उन्होंने अपने शरीरका त्याग कर दिया।

घत्ता—शुभध्यानसे मरकर वह निर्मल परममुनि, और विजय नामक अनुत्तर विमानमें अनुपम रूपवाले धवलशरीर अहमेन्द्र देव हुए ॥३॥

४

तीन अधिक तीस अर्थात् तेंतीस सागर प्रमाण, देवरीतिसे समय बीतनेपर, उस शुभाशय

---

३. १. P ण गंथु। २. A P पहसियमुहु। ३. A परपिसुणु ण दूसइ; P परि पिसुणु ण दोसइ। ४. A P तिण्णि तिसट्ठिसयइं। ५. A P दंसण°। ६. A रिसिहलि संकिसियउ। ७. A मुयउ। ८. A P °रूवउ। ९. A अणुत्तर। १०. P °विमाणे।

४. १. A समणिए; P समसिए। २. A सुरहरं गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थिई[३] सुहासए आउसेसए ।
धरियजीवए[४] पढमदीवए ।
वइरिखंडणा भरहमंडणा ।
अत्थि सुहयरी कोसलाउरी[५] ।
रिसहकुलरुहो पुण्णससिमुहो ।
तहिं महीसरो णाम संवरो ।
तस्स इत्थिया साहियत्थिया ।
चारुहारिया सुइसरीरिया[६] ।
भवणलच्छिया मउलियच्छिया[७] ।
णिसिविरामए चरमजामए[८] ।
पेच्छए हियं सिविणमालियं ।
गलियमयजलं अमरमयगलं ।
कुंदपंडुरं[९] गोवइं वरं ।
णहरदारुणं दुरयवइरिणं ।
बहुविलासिणी णलिणवासिणी[१०] ।
भमररामयं कुसुमदामयं ।
णयणपरिणयं सिसिरकिरणयं ।
णिहयतिमिरयं[११] तरुणमिहिरयं[१२] ।
रमणरसणयं मीणमिहुणयं ।
सजलकमलयं कलसजुवलयं ।
रमियरोयरं[१३] पंकयायरं ।
मयरभीयरं खीरसायरं ।
लच्छिसासणं हरिवरासणं ।
हरिणिहेलणं फणिणिकेयणं ।
सुमणिसंगहं अवि य हुयवहं ।

अहमेन्द्रकी थोड़ी आयु शेष रहनेपर, जीवोंको धारण करनेवाले प्रथम द्वीप (जम्बूद्वीप) में शत्रुका खण्डन करनेवाली, भारतका मण्डन, तथा शुभ करनेवाली कौशलपुरी नगरी थी। उसमें ऋषभ-कुलका अंकुर, पूर्ण चन्द्रमाके समान मुखवाला स्वयंवर नामका राजा था। उसकी सिद्ध करने-वाली (सिद्धार्था) नामकी पत्नी थी। सुन्दर पवित्र शरीरवाली उस भुवनलक्ष्मीने आँखें बन्द किये हुए, रात्रिका अन्त होनेपर अन्तिम प्रहरमें सुन्दर स्वप्नमाला देखी। मद झरता हुआ ऐरावत महागज; कुन्दपुष्पके समान श्रेष्ठ वृषभराज; नखोंसे भयंकर गजका शत्रु (सिंह); कमलोंमें निवास करनेवाली, बहुविलासिनी (लक्ष्मी); भ्रमरोंसे सुन्दर कुसुममाला; नेत्रोंके लिए सुन्दर चन्द्र; अन्धकारको नष्ट करनेवाला तरुणसूर्य; रमणकी ध्वनि करता हुआ मीनयुगल; कमल और जलसे सहित कलशयुगल, जिसमें चक्रवाक क्रीड़ा कर रहे हैं ऐसा कमलाकर, मगरोंसे भयंकर क्षीरसमुद्र, लक्ष्मीका शासन सिंहासन, देवोंका विमान और नागभवन, मणियोंका समूह और अग्नि।

३. A थिय। ४. P reads this line as : पढमदीवए धरियजीवए। ५. A P कोसलापुरी। ६. P °सरीरया। ७. A मोलियच्छिया। ८. A चरिम°। ९. P reads this line as : गोवइं वरं कुंदपंडुरं। १०. A कमलवासिणि। ११. A णिहिय°। १२. A तरुणि°। १३. P रमियखेयरं।

घत्ता—इय दंसणणिउरुंबउ सइइ सुहसुत्ताइ णिरिक्खिउ ॥
सुविहाणइ संवरणरवइहि जं जिह तं तिह अक्खिउ ॥४॥

५

तं णिसुणिवि जसधवलियमहियलु   कहइ कंतु कंतहु सिविणयफलु ।
जो तिहुवणमंगलु तिहुयणवइ   जं झायंति जोइ गयमलमइ ।
सो तुह होसइ सुउ मइं णायउं   णच्चहि सुंदरि चंगउं जायउं ।
तहिं अवसरि दिवि सक्कें वुक्किउं   संवरमहिवइ भुंजउ सुकिउ ।
सिरि अरहंतु देउ अवलोयउ   सिद्धत्थइ सिद्धत्थु जणेव्वउ ।
मा होज्जउ तहु किं पि दुगुंछिउ   अहु णिहिणाह करहि हियइच्छिउं ।
ता साकेयणयरु वित्थारिउ   अहिणवु धणएं सव्वु सवारिउं ।
फुरियपसंडिपिंडु पविरइयउ   जहिं दीसइ तहिं तहिं अइसइयउ ।
कडयमउडमंडियवरगत्तउ   उयरसुद्धिपारंभणिउत्तउ ।
घत्ता—सोहम्मसुरिंदें पेसियउ सव्वउ पुण्णपसत्थउ ।
घरु रायहु आयउ देवयउ मंगलदव्वविहत्थउ ॥५॥

घत्ता—इस प्रकार सुखसे सोयी हुई उस सतीने स्वप्न-समूह देखा। दूसरे दिन सुन्दर प्रभातमें, उसने जैसा देखा था, वैसा अपने पति राजा स्वयंवरसे कहा ॥४॥

५

यह सुनकर अपने यशसे महीतलको धवल कर देनेवाले कन्तने अपनी कान्तासे कहा—"जो त्रिभुवनके मंगल और त्रिभुवनपति हैं, निर्मल मतिवाले योगी जिनका ध्यान करते हैं, वह तुम्हारे पुत्र होंगे, मैंने यह जान लिया है। हे सुन्दरी, तुम नाचो; यह बहुत अच्छा हुआ।" उसी अवसरपर स्वर्गमें इन्द्रने कहा कि राजा स्वयंवरको पुण्यका भोग हुआ है। देखो, वह श्री अरहन्त देवको सिद्धार्थकी तरह, सिद्धार्थासे जन्म देगा। हे कुबेर, उनके लिए कुछ भी खराब बात न हो, जाओ तुम उनकी इच्छाके अनुसार काम करो। तब उसने साकेत नगरका विस्तार किया। धनदने वहाँ सब कुछ नया कर दिया। सुन्दर स्वर्णपिण्डसे रचना की। वह जहाँ दिखाई देता वहाँ अतिशय सुन्दर था। उदरकी शुद्धि प्रारम्भ करनेके लिए नियुक्त कटक और मुकुटोंसे अलंकृत शरीरवाली,

घत्ता—सौधर्म स्वर्गके देवों द्वारा भेजी गयीं, पुण्यसे प्रशस्त मंगलद्रव्य अपने हाथोंमें लिये हुए देवियाँ राजाके घर आयीं ॥५॥

---

१४. A णिउरंबउ। १५. A P सुहुं सुत्ताइ। १६. A संवरणिवइहि।

५. १. P °हलु। २. A तिभवणवइ। ३. A जोगि। ४. A मयणायउ। ५. A P बुज्झिउं। ६. A संवरणरवइ भुंजइ। ७. A अविलेवउ; P अवलोइउ। ८. A सक्केयणयरु। ९. A P समारिउ। १०. A °पिंड। ११. A °मउलमंडिय°।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

६

छम्मासइं वसुहार वरिट्ठी थिय जिण[1]जणणि जाम संतुट्ठी।
ता वइसाहहु[2] पंडुर[3]पक्खइ छट्ठीवासरि सत्तमरिक्खइ।
विजयणाहु तिहुयणविक्खायउ करिरूवें सिविणंतरि आयउ।
मयणविलासविसेसुप्पत्तिहि उयरि परिट्ठिउ संवरपत्तिहि।
पुणु सो णिहिवइ णिवँहि पसाहिइ[4] [5]पंगणि छउरंगावलिसोहिइ।
[6]धरणीयलगयणिहिआकरिसइं [7]णँव वि मास माणिक्कइं वरिसइ।
[8]जंससहरकरधवलियदिग्गइ संभवि[9] संभवपासविणिग्गइ।[10]
जइयहुं सायरसरिसहुं झीणइं दहलक्खइं कोडिहिं वोलीणइं।
तइयहुं माहमासवारसियहि [11]पालेयंसुकरावलिसुसियहि।
बारह[12]मम्मि जोइ कोमलतणु बारहअणुवेक्खाभावियमणु।
णाणत्तयजाणियजगरूयउ देउ चउत्थउ जिणु संभूयउ।

घत्ता—जिणजम्मणु[13] आसणथरहरणि जाणिवि कुंजरु सज्जिउ॥
महि आयउ ससुरु सुराहिवइ सुरकरचमरहिं विज्जिउ॥६॥

६

छह माह तक रत्नवृष्टि हुई। भगवान्‌की माता सन्तुष्ट हो गयी। वैशाख माहके शुक्लपक्षमें षष्ठीके दिन, सातवें नक्षत्र (पुनर्वसु) में, त्रिभुवनविख्यात विजयनाथ अहमेन्द्र गजरूपमें स्वप्नान्तरमें आया और कामके विलास विशेषोंको उत्पन्न करनेवाली राजा स्वयंवरकी पत्नी सिद्धार्थाके उदरमें प्रविष्ट हो गया। वह कुबेर पुनः राजाको प्रसन्न करता है, वह छह प्रकारके रंगों की रांगोलीसे शोभित घरके प्रांगणमें, धरतीतलकी निधियोंको आकर्षित करनेवाले माणिक्योंकी नौ माह तक वर्षा करता है। अपने यशरूपी चन्द्रमाकी किरणोंसे दिग्गजोंको धवलित करनेवाले सम्भवनाथके जन्मपाशसे मुक्त होनेपर, जब दस लाख करोड़ सागर समय बीत गया, तब माघमासके शुक्लपक्षकी चन्द्रकिरणोंसे धवल द्वादशीके दिन, बारह अनुप्रेक्षाओंसे भावितमन कोमल शरीर तीन ज्ञानोंसे विश्वस्वरूपको जाननेवाले, चौथे तीर्थंकर अभिनन्दन उत्पन्न हुए।

घत्ता—सिंहासन कांपनेसे जिनका जन्म जानकर देवेन्द्रने अपना हाथी सज्जित किया और देवोंके हाथोंसे चमरों द्वारा हवा किया जाता हुआ देवों सहित वह धरतीपर आया॥६॥

---

६. १. A णियजणणि। २. P वयसाहहु। ३. A P पंडुर°। ४. A पवरपसाहिइ। ५. A P पंगणि। ६. P धरणीयले। ७. P णवमासइं। ८. A जं ससहरकरधवलियदिग्गइ; P °धवलिए दिग्गए। ९. A संभमि। १०. A P संभवपासहु णिग्गइ। ११. A पालेयंसकरावलि°; P पालेयंसुकलावलि°। १२. AP बारहयम्मि। १३. A P °जम्मणि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

पुरि[1] परियंचिवि पइसिवि णिवघरि   कित्तिमु सिसु दिण्णउ जणणिहि करि।
सयणु[2]किरणकविलियपविउलणहु   पोमरायपह[3]णिहतंबिरणहु।
बहु[4]भवकयवयणियमि[5]यणियमइ   विसमविसयविसहरणइयरवइ।
कमल[6]कुलिसकलसंकियकमजुउ   विरइयरइसंवरु संवरसुउ।
णंद वद्ध जय देव भणेप्पिणु   सुरणाहें मुणिणाहु लएप्पिणु।
अंकि चडाविउ चंपयगोरउ   गोरो[7] सो तेण जि अवियारउ।
जायउ जंतहु गुरु रहसुब्भडु   अमरविमाणहं धणवहि संकडु।
पडिवाहणहयवाहणसेणिहि   इंदें कह व मंदसंदाणिहि।
वारणु चरणचारु संजोइउ[8]   मंदरु मंदरुइल्लु पलोइउ।
जिणदेहच्छविइ अहिहवियउ   गुरुयणतेएं कवणु ण खवियउ।
ससिरवितारापंतिउ लंघिवि   तं तहु तणउ सिहरु आसंघिवि।

घत्ता—तहिं पंडुसिलायलु ससिधवलु तित्थु पसण्णु[9] णिहालिउ॥
अहिमंतिवि पाणिउं सयमहिण सीहवीढु[10] पक्खालिउ॥७॥

७

नगरकी परिक्रमा देकर, एवं राजाके घरमें प्रवेश कर कृत्रिम बालक माताकी गोदमें देकर, अपने शरीरकी किरणोंकी कान्तिसे विशाल आकाशको आलोकित करनेवाले, पद्मरागमणियोंकी प्रभाके समान लाल नखवाले, अनेक जन्मोंमें किये गये व्रतोंसे अपनी मति नियमित करनेवाले, विषयरूपी विषधरोंके लिए गरुड़, कमल कुलिश और कलशोंसे चिह्नित चरण, रतिका संवरण करनेवाले हे स्वयंवर पुत्र, तुम बढ़ो, प्रसन्न होओ, जय हो देव, यह कहकर सुरनाथने मुनिनाथको ले लिया। चम्पक कुसुमकी तरह गोरे, ज्ञानरत, और अविकारी उन्हें, उसने अपनी गोदमें ले लिया। उसके जाते हुए अत्यन्त हर्ष-उल्लास हुआ। जिसमें प्रतिवाहनों और अश्ववाहन श्रेणियाँ हैं और जिसमें धीमे रथ चल रहे हैं, ऐसे घनपथमें देवोंके विमानोंका जमघट हो गया। इन्द्रने बड़ी कठिनाईसे अपने हाथीको प्रेरित किया और मन्दकान्ति मन्दराचलको देखा। जिनेन्द्रकी देहकान्तिसे वह अत्यन्त अभिभूत हो गया। गुरुजनोंके तेजसे कौन क्षीणताको प्राप्त नहीं होता। चन्द्र, सूर्य और तारोंकी पंक्तिको लाँघकर, उसके उस शिखरको पाकर,

घत्ता—वहाँ उसने चन्द्रमाके समान धवल प्रसन्न पाण्डुक शिलातलको देखा, इन्द्रने जलको अभिमन्त्रित कर सिंहासनका प्रक्षालन किया॥७॥

७. १. A पुह। २. A सयणुविकरण°। ३. P °पविमल°। ४. A बहुतव°। ५. A P °णिवसियणियमइ। ६. A कमलकलसकुलिसंकिय°। ७. A P गोरउ तेण जि सो अवियारउ। ८. A संजोयउ; P संचोइउ। ९. A पसत्थु। १०. P सीहपीढु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८

कयविहिपरियम्मं छिण्ण[1]दुकम्मजम्मं सइं[2] सिरिअ[3]रहंतं तम्मि आरोहिउं[4] तं ।
थिवइ[5] दसदिसासुं सेयभिंगारणीरं कुणइ सुरवरिंदो सिद्धमंताहियारं ॥१॥
बहुदसणविसाले कक्खणक्खत्तमाले चलियचमरलीले संठियं पीलुबाले ।
पविहरमम[6]राणीसेवियं देववंदं जिणण्हवणविसेसे वाहरामोमरिंदं ॥२॥
जलियकविलवालं[7] भासुरालं करालं दिसि पसरियजालं धूमचिंधेण णीलं ।
पयपहयउरब्भं भाविणीभावियासं जिणण्हवणविसेसे वाहरामो हुयासं ॥३॥
जलयपडलकालं णिद्धणीलं[8] व सेलं महिसमुहसमीरुड्डीणजीमूयमालं ।
करवं[9]लइयदंडं [10]छाहिसंसत्तसंतं जिणण्हवणविसेसे वाहरामो कयंतं ॥४॥
भसल[11]गरलमालाकालरोमं तुरंतं अरुणणयणछोहं रिछमावाहयंतं ।
जुवइजणियकामं [12]साहिरामं करामो जिण्णहवणविसेसे णेरियं वाहरामो ॥५॥
करिमयर[13]णिविट्ठं हारणीहारतेयं धुव[14]धवलधओहं कामिणीए समेयं ।
वरुणममरसारं माणसे संभरामो जिणण्हवणविसेसे सायरं वाहरामो ॥६॥
तरुपहरणपाणि [15]वाइसंदिण्णरायं सुरहिपरिमलंगं [16]माणिणीजायरायं ।

८

जिन्होंने विधाताके परिकर्मको किया है, और पापकर्म और जन्मका नाश कर दिया है, ऐसे श्री अरहन्तको उसपर आरोहित कर दिया। दसों दिशाओंसे श्वेत भृंगारपात्रोंका जल गिरता है; सुरवरेन्द्र सिद्धमन्त्रोंका अभिचार करता है। बहुतसे दाँतोंसे विशाल, वरत्रारूपी नक्षत्रमालासे युक्त, चलते हुए चमरोंकी लीला धारण करनेवाले बाल ऐरावत गजपर उन्हें रख दिया। जिन भगवान्‌के अभिषेक-विशेषमें मैं, (कवि पुष्पदन्त) वज्रको धारण करनेवाले, इन्द्राणीके द्वारा सेवित, देवोंके द्वारा वन्दनीय, अमरेन्द्रको बुलाता हूँ। जिसके प्रज्वलित कपिल केश हैं, भास्वर भयंकर, दिशाओंमें जिसका जाल फैला हुआ है, धूमचिह्नोंसे नीला, अपने पैरसे मेषको आहत करनेवाला, अपनी पत्नीके द्वारा जिसका मुख देखा गया है, ऐसे अग्निदेवको मैं जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषमें बुलाता हूँ। जो मेघपटलके समान श्याम है, शैलके समान स्निग्ध और नीला है, जिसके महिषके मुखके पवनसे मेघमाला उड़ रही है, जिसके हाथमें दण्ड झुका हुआ है, अपनी भार्या, छायामें जिसका चित्त आसक्त है, ऐसे यमको मैं जिनके अभिषेक-विशेषमें बुलाता हूँ। भ्रमर और गरलमालाके समान जिसके रोम काले हैं, जो लाल आँखोंकी कान्तिवाला है, रीछपर सवारी करता है, युवतीजनमें जो काम उत्पन्न करता है, ऐसे नैऋत्यको मैं अनुरागयुक्त करता हूँ और जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषमें उसे बुलाता हूँ। जो गजाकार मगरपर अधिष्ठित हैं, जो हार-नीहार-की तरह स्वच्छ हैं, हिलती हुई धवल ध्वज-समूहसे युक्त हैं, कामिनीसे सहित हैं, ऐसे अमरोंमें श्रेष्ठ वरुणको मैं याद करता हूँ और जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषमें उन्हें सादर बुलाता हूँ। वृक्ष ही जिसके प्रहरण और हाथ हैं, वातप्रमी मृगीमें जिसका अनुराग है, सुरभिपरिमल जिसका शरीर है,

८. १. A °कुवकम्म° । २. A सयसिरि° । ३. AP °अरिहंतं । ४. A आराहिऊणं । ५. P खिवइ । ६. A °ममराणीसंजुयं देवदेवं; P °ममरेहिं सेवियं देवविंदं । ७. P अग्गिवालं पहालं । ८. P °णिद्धणीलालिसेलं । ९. A °वडइय° । १०. A छाहिसंसत्तगत्तं; P छाहिसंसत्तवत्तं । ११. P कसणभसलमालाकार° । १२. P साहिरामो । १३. A °मयरणिविद्धं । १४. A P धुयधवल° । १५. A P वायसं । १६. P कामिणिजाय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चडुलगमणसीलं लंघियायासपारं जिणण्हवणविसेसे वाहरामो समीरं ॥७॥
विमलमणिवियाणं[17] मंदरद्दीसमाणं क[18]यमयरविमाणं देहभाभासमाणं ।
धणयमधणदुक्खातंकपंकावहारं[19] जिणण्हवणविसेसे वाहरामो कुबेरं ॥८॥
सग[20]णगुणगणालं [21]भालभीमच्छिवत्तं व[22]रविसवसहदुक्खित्तपायं महंतं ।
फणिवलयक[23]रंगुग्गिण्णसूलं दुरिक्खं जिणण्हवणविसेसे वाहरामो तियक्खं ॥९॥
अमयमयसरीरं कूरकंठीरवत्थं णवकुवलय[24]मालामालियं कोंतहत्थं ।
जणणयणसुहंकं संक[25]मुच्छिण्णसंकं जिणण्हवणविसेसे वाहरामो ससंकं ॥१०॥
मणिफुरियफणालं दित्तदिक्चक्कवालं अहिणवरविवण्णं कुम्म[26]पट्ठीणि[27]सण्णं ।
महिविवरणिवासं रम्मपोम्मावईसं जिणण्हवणविसेसे वाहरामो फणीसं[28] ॥११॥

घत्ता—णियवाहणपहरणपियरमणिचिंधावलिहिं विराइय ॥
इंदें [29]सहुं इंदावाहणए लोयवाल संप्राइय[30] ॥८॥

९

एवं पत्ते पंकयणेत्ते विस्से देवे णविऊणं
दुहणा[1]सणयं सुहसासणयं दब्भासणयं ठविऊणं ।

जो मानिनी स्त्रियोंमें राग उत्पन्न करता है, जो चंचल और गमनशील है, जो आकाशकी सीमाको लांघ जाता है, ऐसे समीरको मैं जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषमें बुलाता हूँ । जो विमल मणियोंका जानकार है, जो उत्तर दिशाका अधिपति है, जिसका विमान मकराकृति है, जो देहकान्तिसे भास्वर है, जो अधनके दुःख और आतंककी कीचड़का अपहरण करनेवाला हैं, ऐसे धनद कुबेरको मैं जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषमें बुलाता हूँ । जो अपने गणों और गुणगुणोंका आश्रय है, जो भालपर भीम आंखोंवाला है, श्रेष्ठ वृषभके कन्धेपर जो पैर रखे हुए है, जो नागोंके बलयवाले हाथकी अंगुलियोंमें त्रिशूल उठाये हुए है, ऐसे दुर्दर्शनीय महान् रुद्रको मैं जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषके समय बुलाता हूँ। जो अमृतमय शरीरवाला है, जो कण्ठीरव (सिंह) पर स्थित है, जो नवकुवलयमालासे शोभित है, जिसके हाथमें भाला है, जो जननेत्रोंके लिए अमृतजल है, चिह्न सहित तथा शंकाओंको दूर करनेवाला है, ऐसे चन्द्रको मैं जिनेन्द्रके अभिषेक-विशेषमें बुलाता हूँ । जिसका फणसमूह मणियोंसे स्फुरित है, जिसने दिशामण्डलको प्रदीप्त किया है, जो अभिनव सूर्यके रंगका है, जो कूर्मकी हड्डियोंपर आसीन है, जिसका निवास महीविवर है, जो सुन्दर पद्मावतीका स्वामी है, ऐसे फणीशको मैं जिनवरके अभिषेक-विशेषमें बुलाता हूँ ।

घत्ता—अपने-अपने वाहन, प्रहरण, प्रिय रमणी और चिह्नोंकी पंक्तियोंके शोभित लोकपाल, इन्द्रके आह्वानपर इन्द्रके साथ आये ॥८॥

९

इस प्रकार कमलनयनके प्राप्त होनेपर सब देवोंको नमस्कार कर दुःखनाशक सुखका शासन

---

१७. A °विताणं । १८. A P कणयमयविमाणं । १९. P °तंकसंकावहारं । २०. A सगुणगुण° । २१. A P °भीमच्छिवंतं । २२. A वरविसविसहत्थं खित्त°; P वरसियवसहपुट्ठे खित्त° । २३. A °करग्गुक्किण्ण° । २४. A °मालियाकुंतहत्थं । २५. A सुक्कमुच्छिण्ण°; P सक्कमुच्छिण्ण° । २६. A P कुम्मपिट्ठी° । २७. A °रवण्णं । २८. A फणिंदं । २९. A सहुं देवाणंदएण । ३०. A P संपाइय ।
९. १. P दुहुणासणयं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरगंभीरं पणकुम्कारं साहाकारं काऊणं
अग्घं पत्तं गंधं धूवं चरुवं दीवं दाऊणं।
दुण्णयतावं[2] मिच्छागावं दुक्कियभावं महिऊणं[3]
पव्वयसरिसे पयणियहरिसे कंचणकलसे गहिऊणं।
आसासंते रवियरवंते गयणयलंते चरिऊणं
भंगरउद्दे खीरसमुद्दे खिप्पं खीरं भरिऊणं।
कीलालोलं गेयरवालं सुरवरमालं रइऊणं
ते जलवाहे जियजलवाहे हत्थाहत्थं[4] लइऊणं।
सोहम्मेणं ईसाणेणं तियसयणेणं[5] संण्हविओ[6]।
दाउं वासं कुसुमं भूसं तेहिं जिणिंदो पुणु णविओ[7]।
सिगुत्तुंगं वसियकुरंगं मेरुं मोत्तुं वारिदरिं[8]
णरसोक्खयरिं[9] कोसलणयरिं[10] आगंतूणं पुरिसहरिं।
णयणिरयाणं[11] गुरुपियराणं दाउं णहयलदिण्णपया
हरिसविसट्टं रइउं[12] णट्टं देवा सग्गं झ त्ति गया।

घत्ता—सज्जणहं णेहु दिहि दुत्थियहं तरुणिहि पेम्मपहावउ[13]।
णाहें वड्ढंतें वड्ढियउ पिसुणहं मणि संतावउ ॥९॥

१०

जोव्वणभावें देहि[1] चडंतें घडियामाणें[2] काले जंतें।
देहपमाणु पत्तु रणचंडहं सड्ढइं तिण्णि सयइं धणुदंडहं।

दर्भासन बिछाकर, गम्भीर स्वरमें ओम्‌के साथ स्वाहाका उच्चारण कर अर्घ-पत्र-गन्ध-धूप-चरु और दीप देकर, दुर्नयका सन्ताप, मिथ्यागर्व और पापभावका नाश कर, पर्वतके समान हर्षको उत्पन्न करनेवाले स्वर्णकलशोंको लेकर, उच्छ्वासोंके मध्य, सूर्यकी किरणोंसे युक्त आकाशमें चल कर, भंगिमासे भयंकर क्षीर समुद्रमें शीघ्र जल भरकर, क्रीड़ासे चंचल, गीतोंसे सुन्दर सुरवरोंकी पंक्ति रचकर, मेघोंको जीतनेवाले उन कलशोंको हाथों-हाथ लेकर, सौधर्मेन्द्र, ईशानेन्द्र और देवजनोंने स्नान कराया तथा वस्त्र-भूषण देकर, उन्होंने जिनेन्द्रको फिर नमस्कार किया। फिर शिखरोंसे ऊँचे हरिणोंसे बसे हुए जलयुक्त घाटियोंसे युक्त सुमेरु पर्वतको छोड़कर, मनुष्योंको सुख देनेवाली अयोध्या नगरीमें आकर न्यायरत उन पुरुषश्रेष्ठको माता-पिताको देकर और हर्ष-विशिष्ट नाट्यका अभिनय कर वे शीघ्र स्वर्ग चले गये।

घत्ता—स्वामीके बढ़नेपर सज्जनोंका स्नेह, दुःस्थितोंका भाग्य, युवतियोंका प्रेमभाव और दुष्टोंके मनमें सन्ताप बढ़ने लगा ॥९॥

१०

यौवनभावसे उनकी देह बढ़ती गयी, और घड़ीके मानसे समय बीतता गया। उनके शरीर-

---

२. A दुण्णयभावं। ३. P गहिऊणं। ४. P हत्थाहत्थें गहिऊणं। ५. A तियसवरेणं। ६. P संण्हविउं। ७. P णविउं। ८. A धीरदरिं। ९. P °सोक्खयरी। १०. P णयरी। ११. A णरणियराणं। १२. P रइयं णट्टं। १३. P णेहपहावउ।

१०. १. A देह चडंतें। २. A P घडियामालें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिसुकीलाइ रमियगंधव्वहं　　दोण्णि दहद्धलक्ख गय पुव्वहं ।
फणिसुरणरमणणयणाणंदणु　　जणणें [3]हक्कारिउ अहिणंदणु ।
भणिउ देव किं देंवि सकित्तणु　　भुवणत्तयसामिहि सामित्तणु ।
लइ लइ रज्जु अज्जु जाएसंवि　　हउं परलोयकज्जु [4]थाहेसवि ।
तहिं अवसरि आयउ सक्कंदणु　　पुरि घरि गयणि ण माइउ सुरयणु ।
[5]वाइउ सुसिरु तंति घणु पुक्खरु　　गायउ किं पि [6]गेउ महुरक्खरु ।
पुरउ णडंतें अमरणिहाएं　　वइयालियदिण्णासीवाएं ।
सायरसरिसरजलसंघाएं　　पुणु [7]ण्हाणिउ कुमारु सुरराएं ।
[8]हार तार जोयणवित्थिण्णी　　णं णहि गंगाणइ अवइण्णी ।

घत्ता—जलधार पडइ सिरि [9]दुद्धरिय देउ [10]ताइ ण वि हम्मइ ॥
[11]भावइ महुं ण्हंतु वि [12]घडसएहिं [13]बिंदुएण णउ तिम्मइ ॥१०॥

११

मउडपट्टधरु [1]धीरविणिट्ठिउ　　पिउसंताणि णिओइ [2]अहिट्ठिउ ।
[3]विणिहयराउ ताउ रिसि जायउ　　[4]पहु वि महिं भुंजंतु सजायउ ।

का प्रमाण साढ़े तीन सौ प्रचण्ड धनुष हो गया। क्रीड़ामें गन्धर्वोंके साथ खेलते हुए उनके साढ़े बारह लाख पूर्व वर्ष बीत गये। नागों, सुरों और मनुष्योंके मनको आनन्द देनेवाले अभिनन्दनको पिताने पुकारा और कहा, "हे देव, भुवनत्रयके स्वामीके लिए कीर्तिसहित स्वामित्व क्या दूँ, लो-लो राज्य, आज मैं जाऊँगा, और मैं परलोककार्यको थाह लूँगा।" उस अवसरपर भी इन्द्र आया, और वह देवसमूह, पुर, घर तथा आकाशमें नहीं समा सका। सुषिर, तन्त्री, घन और पुष्कर वाद्य बजाये गये। और मधुर अक्षरोंमें कुछ भी मधुर गीत गाया गया। सामने नाचते हुए देव-समूह वैतालिकोंके द्वारा दिये गये आशीर्वादके साथ समुद्र, नदी और सरोवरोंके जलसमूहसे इन्द्रने कुमारका पुनः अभिषेक किया। हारोंकी तरह स्वच्छ एक योजन तक फैली हुई, मानो आकाशमें गंगानदी अवतीर्ण हुई हो।

घत्ता—दुर्धर जलधारा उनके सिरपर पड़ती है, लेकिन देव उससे आहत नहीं होते। वह मुझे अच्छे लगते हैं कि सैकड़ों घड़ोंसे नहलाये जाते हुए भी वह एक बूँदसे भी नहीं भींगते ॥१०॥

११

मुकुट पट्टको धारण किये हुए, धैर्यसे युक्त वह नियोगसे पितृपरम्परामें नियुक्त हो गये। और पिता रागको नष्ट करनेवाले मुनि हो गये। प्रभु भी पत्नीके साथ धरतीका उपभोग करने

३. A कोक्काविउ। ४. P साहेसमि। ५. A वायउ सुसरु। ६. A गेय। ७. A P ण्हाविउ। ८. A हारसुतारतोयविच्छिण्णो; P हारसुतारजोयविच्छिणी। ९. A सिरिसिहरि; P T दुद्धरिस। १०. A P तहिं ण वि हम्मइ। ११. A णावइ but records a p भावइ। १२. A P घडसएण। १३. A जं बिंदुएण; P तं बिंदुएण।

११. १. A धीरविणिट्ठिउ; P धीढि णिविट्ठउ। २. A P पहिट्ठिउ। ३. P विणियराउ। ४. P एहु वि महि भुंजंतु।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

अच्छइ जाम सपुत्तु सपरियणु रक्खइ पोसइ माभीसइ जणु ।
गय छत्तीस लक्ख लक्खद्धं सहुं पुव्वहं सिरिसोक्खसमिद्धं ।
सुयणभाणु णहि णयणइं ढोयइ ता गंधव्वणयरु अवलोयइ ।
पेच्छइ सत्तभूमिघरसिहरइं पेच्छइ जालगवक्खइं पवरइं ।
पेच्छइ धयमालउ उल्ललियउ पेच्छइ पुत्तलियउ चित्तलियउ ।
पेच्छइ चंदसाल मुहसालउ पेच्छइ लेहसाल गयसालउ ।
पेच्छइ दाणसाल णडसालउ मणुयारोगसाल असिसालउ ।
पेच्छइ हट्टमग्ग चउदारइं पेच्छइ पहु आरामविहारइं ।
इय पेच्छंतहु तक्खणि णट्ठउ तहिं तं पुरु पुणु तेण ण दिट्ठउ ।

घत्ता—णासंतें णयरें साहियउ णासु अत्थि णृवरिद्धिहि ॥
किं णरु रइपरवसु परिभमइ उज्जमु करइ ण सिद्धिहि ॥११॥

१२

ता लोयंतिएहिं संबोहिउ आएणिंदें ण्हविउ पसाहिउ ।
उट्ठिउ सयलदेवडिंडिमसरु चडिउ विचित्तहि सिवियहि जिणवरु ।
णरखेयरसुरेहिं पणवेप्पिणु बाहुदंडखंधेहिं वहेप्पिणु ।
णिहियउ पुरबाहिरि णंदणवणि मग्गसिरइ सिइ बारहमइ दिणि ।
अवरण्हइ णियसंभवरिक्खइ अप्पुणु अप्पउ भूसिउ दिक्खइ ।

लगे । इस प्रकार जबतक वह अपने पुत्रों-परिजनके साथ रहते हैं, और लोगोंकी रक्षा-पालन करते और अभयदान देते हैं, तबतक उनके श्री-सुखसे समृद्ध साढ़े छत्तीस लाख पूर्व वर्ष बीत गये। एक दिन विश्वसूर्यकी आंखें आकाशकी ओर जाती हैं, वह वहाँ गन्धर्व नगर देखता है। वह सात भूमिवाले गृहशिखर देखता है, जालोंके विशाल गवाक्षोंको देखता है, उड़ती हुई ध्वजमालाओंको देखता है, वह चित्रित पुतलियोंको देखता है, वह चित्रशाला और मुख्यशाला देखता है। वह लेखशाला और गजशाला देखता है। दानशाला और नटशाला देखता है। बाजार मार्ग और चारद्वार देखता है, राजा आराम और विहार देखता है। इस प्रकार उसके देखते हुए ही वह नगर तत्काल नष्ट हो गया। फिर उसने उस नगरको नहीं देखा।

घत्ता—नष्ट होते हुए नगरने मानो यह कहा कि नृप-ऋद्धिका भी नाश होता है। मनुष्य रतिके अधीन क्यों घूमता है; सिद्धिके लिए वह प्रयत्न क्यों नहीं करता ॥११॥

१२

तब लौकान्तिक देवोंने उन्हें सम्बोधित किया, आये हुए इन्द्रने उनका अभिषेक किया। समस्त देवोंका डिंडिम स्वर उठा। जिनवर विचित्र शिविकापर चढ़ गये। प्रणाम कर मनुष्य, देव और विद्याधरोंने अपने बाहुदण्डों और कन्धोंसे उसे ले जाकर नगरके बाहर नन्दनवनमें रख दिया। माघ माहके शुक्लपक्षकी द्वादशीके दिन अपराह्णमें अपने जन्मनक्षत्रमें उन्होंने स्वयंको

५. A णयरि । ६. A धयमालाउल्ल° । ७. P हट्टमग्गि । ८. A P णिवरिद्धिहि । ९. A °परवसु मूढमइ उज्जमु ।

१२. १. A आइवि इंदें; T आयंदेण आगतेनेन्द्रेण । २. A मग्गसिरासिइ; P माहमासि सिइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मण्णेप्पिणु घरु गिरिवरकंदर दढमुट्ठिहिं उप्पाडिय कंदर ।
भावु करेवि अहप्पयरासिहि ते सक्केण घित्त पयरासिहि ।
दावियणिट्ठें छट्ठववासें जइ हूयउ सहुं णिवहं सहासें ।
मुक्कउ जीयधणासाकेयइ बीयइ दिणि पइट्ठु साकेयइ ।
पंथु पलोयइ जंतु ण खंडइ भे[3]भे भवइ व घरि घरि हिंडइ ।
लहुयउं गरुयउं गेहु ण चिंतइ प्रंगणु[4] प्राविवि पुणु णिणियत्तइ ।

घत्ता—जहिं रज्जु[5] कियउ तहिं तेण पुणु दरिसिउ भिक्खविहाणउं ।
भयलज्जामाणमयवज्जियउं जिणवउं पेम्मसमाणउं ॥१२॥

१३

सयमहदत्तें पहु पाराविउ तहु देवहिं दाणुच्छवु दाविउ ।
पंचविहु वि जयजयपभणंतिहिं आयासहु कुसुमाइं घिवंतिहिं ।
अक्खयदाणु भणेप्पिणु णिग्गउ गउ वणु चरणविसेसहु लग्गउ ।
जो ण समिच्छइ विप्परियावहु पहि चरंतु ण करइ इरियावहु ।
जेण मूलु रइवालहु छिण्णउं दाणु जेण अभयावहु दिण्णउं ।
जेण सहियवउं णाणें भिण्णउं अट्ठारहवरिसइं तवु चिण्णउं ।
[1]णीसंगेण णिरुत्तु विहारिउ पुणु[2] वि जेण तं छट्ठ संवारिउं[3] ।

दीक्षासे अलंकृत कर लिया। गिरिवरकी गुफाओंको घर मानकर उन्होंने अपनी दृढ़ मुट्ठियोंसे केश उखाड़ लिये। पापोंको नाश करनेवाले उन केशोंको इन्द्रने समुद्रमें फेंक दिया। निष्ठाको प्रदर्शित करनेवाले छठे उपवासके साथ एक हजार राजाओं सहित वह मुनि हो गये। जीव और धनकी आशारूपी डोरसे मुक्त वह दूसरे दिन अयोध्या नगरी गये। वह रास्ता देखते हैं जन्तुका नाश नहीं करते। भो-भो शब्द होता है, वह घर-घर परिभ्रमण करते हैं, छोटे या बड़े घरका विचार नहीं करते। प्रांगणमें जाकर फिर उसे देखते हैं।

घत्ता—जहाँ उन्होंने राज्य किया था वहाँ उन्होंने भिक्षाके विधानका प्रदर्शन किया। भय, लज्जा, मान और मदसे रहित जिनपद प्रेमके समान है ॥१२॥

१३

इन्द्रदत्तने उन्हें पारणा करायी। जय-जय कहते, और आकाशसे फूलोंको गिराते हुए देवोंने उसके दानका पाँच प्रकार महोत्सव किया। 'अक्षयदान' कहकर वह चले गये और वनमें जाकर विशेष तपश्चरणमें लग गये। जो ब्राह्मणोंके ऋचापथ (वेदमार्ग) को नहीं मानते, जो रास्तेमें चलते हुए ईर्या समितिका हनन नहीं करते, जिन्होंने कामदेवकी जड़को समाप्त कर दिया है, जिन्होंने सबको अभयदान दिया। जिन्होंने अपने हृदयको ज्ञानसे परिपूर्ण कर लिया और अठारह वर्ष तक लगातार तप किया, अनासंग भावसे लगातार विहार किया। फिर उन्होंने छठा उपवास

३. A भे भे विरइ व, but records a *p:* भवइ इति पाठः। ४. A P पंगणु पावइवि।
५. A रज्जि।

१३. १. P णीसंगत्तु। २. P पुणिवि। ३. A संचारिउ; P समारिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूसँहु मासहु पक्खि पहिलइ चउदहमइ दिणि सिणतरुमूलइ।
उडुवरि सत्तमि जेणुप्पाइउं केवलणाणु तिलोउ वि जोइउ।

घत्ता—सो मोहमहामहिरुहजलणु जिणवरु जियँपंचिंदिउ ॥
गिव्वाणहिं समउं पराइएण वार्णबलेण पवंदिउ ॥१३॥

१४

थुणइ सुरिंदु सरइ गुण समणें तुहुं जि देउ किं देवागमणें।
तुहुं जि अणंगु अणंगहु वंछहि अणुदिणु णिक्कलगइ पर वंछहि।
तुहुं सरूवु किं तुह आहरणें तुहुं सुयंधु किं तुह सवलहणें।
तुहुं अकामु किं तुह णारियणें तुहुं अँणिद्दु किं तुह वरसयणें।
सुद्धिवंतु तुहुं किं तुह ण्हाणें दिव्वासहु किं तुह परिहाणें।
तुज्झु ण वइरु ण भउ णउ पहरणु तुज्झु ण रइ णउ कीलाविहरणु।
तुहुं जि सोम्मुँ सोम्में किं किज्जइ तुह छविहउ रवि काइं भणिज्जइ।
गुणणिहि तुहुं तुह किं किर थोत्तें तो वि थुणइ जणवउ सहियत्तें।
हरिकरिगिरिजलणिहिहिं समाणउ पइं किं भणइ वराउ अयाणउ।

घत्ता—ससिसूरहं सरिसउ पइं परम भत्तिइ कइयणु अक्खइ ॥
गयणयलहु अवरु वि तुह गुणँहं पारु को वि किं पेक्खइ ॥१४॥

किया, पूस माहके शुक्लपक्षकी चतुर्दशीके दिन असन वृक्षके तलभागमें सातवें पुनर्वसु नक्षत्रमें उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया और उन्होंने त्रिलोकको देख लिया।

घत्ता—मोहरूपी महावृक्षके लिए आगके समान, पाँचों इन्द्रियोंको जीतनेवाले जिनवरकी देवोंके साथ आकर इन्द्रने वन्दना की ॥१३॥

१४

देवेन्द्र स्तुति करता है, अपने मनसे उनके गुणोंका स्मरण करता है कि तुम्हीं देव हो, देवागमनसे क्या? तुम स्वयं काम हो, तुम कामको क्यों चाहोगे? तुम स्वयं ही सुन्दर हो, तुम्हें आभरणोंसे क्या; तुम स्वयं सुगन्ध हो, तुम्हें विलेपनसे क्या? तुम स्वयं अकाम हो, तुम्हें नारी-जनसे क्या? आप स्वयं निद्रारहित हैं, आपको उत्तम शयनसे क्या? आप स्वयं शुद्धिसे युक्त हैं, आपको स्नानसे क्या? आप दिगम्बर हैं, आपको वस्त्रोंसे क्या? आपका न शत्रु है, न भय है और न प्रहरण है, आपमें न रति है और न क्रीड़ाविहार है। आप स्वयं सौम्य हैं, आपको सोम (चन्द्रमा) से क्या? कान्तिसे आहत सूर्यको कान्तिमान् क्यों कहा जाता है? आप गुणोंकी निधि हैं, आपको स्तोत्रोंसे क्या? फिर भी लोग, अपने मनसे तुम्हारी स्तुति करते हैं, बेचारे अज्ञानी वे आपको अश्व, गज, गिरि और जलनिधिके समान क्यों बताते हैं।

घत्ता—कविजन केवल भक्तिसे आपको शशि और सूर्यके समान बताते हैं लेकिन एक आकाश और दूसरे तुम्हारे गुणोंका पार कौन पा सका है? ॥१४॥

---

४. A P पउसहु। ५. A T पहिल्लइ। ६. A P सिणितरु°। ७. A पंचेंदियउ। ८. A T वालबलेण; P वणवालेण। ९. A पवंदियउ।

१४. १. P वि। २. A P तुहुं अणंगु जो अंगु ण इच्छहि। ३. A सरूउ; P सुरूउ। ४. A P अणिदु। ५. A सोमु सोमिं किं। ६. A भणमि। ७. A गुणहं सामि पारु को लक्खइ; P गुणहं सामिय पारु कु लक्खइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५

इंदणरिंदचंदसूराउलु समवसरणु जिणरायहु राउलु[1] ।
बहुपालिद्धय अट्ठ महाधय पसुकोट्ठइ दक्खालिय हय गय ।
धम्मचक्कु अग्गइ अवइण्णउं पंगणु[2] सुरणर[3]रमणिहिं छण्णउं ।
पुण्णमणोरह जे ते[4] णं रह मउलियकर थिय संमुह णव गह ।
जसु तवेण कंपइ भूमंडलु अवसें तासु होइ भामंडलु ।
छत्तइं दुरियायव[5]विणिवारइं चमरइं भव[6]खीणत्तणतारइं ।
जासु मोक्खु[7] सोक्खु जि जायउं फलु सो असोउ किं वण्णमि चलदलु[8] ।
अवरु वि अरुहहु उत्तमसत्तहु आसणु सासणु तिजगपहुत्तहु ।
आयासहु णिवडइ कुसुमावलि[9] सरु भीयउ भासइ ण सरावलि ।
रुंजउ[10] अलि तइ सिंथ ण मेरी णिच्छउ सामिय आण तुहारी ।
दुंदुहि खणु वज्जंति ण थक्कइ लोउ धम्मु णिसुणहुं णं कोक्कइ ।
दिव्वें घोसें भुवणु वि सुज्झइ अप्पउं परु परलोउ वि बुज्झइ ।

घत्ता—सिरिवज्जणाहु णिवु[11] धुरि करिवि सीलविमलजलवाहहं ॥
तिहिं सहियउ सउ संतासयहं संजायउ गणणाहहं ॥१५॥

१५

इन्द्र, नरेन्द्र, चन्द्र और सूर्यसे परिपूर्ण समवसरण जिनराजका राजकुल था। आठ महाध्वज थे और छोटे-छोटे ध्वज अनेक थे। पशुओंके कोठोंमें अश्व और गज दिखाई देते थे। आगे धर्मचक्र अवतीर्ण हुआ। प्रांगण सुरों और नरोंकी रमणियोंसे भर गया। जो-जो पूर्णरथ थे, वे किसी भी प्रकार, अपने दोनों हाथ जोड़कर उनके सम्मुख नवग्रहके समान स्थित थे। जिसके तपसे भूमण्डल कांप उठता है; उनके लिए अवश्य भामण्डल प्राप्त होगा। दुरितोंके आतपका निवारण करनेवाले छत्र, संसारकी थकानको दूर करनेवाले चामर होंगे। जिन्हें मोक्ष और सुखका फल प्राप्त है, उनका चंचल पत्तोंवाले अशोकके रूपमें क्या वर्णन करूँ। और भी उत्तम सत्त्ववाले श्री अरहन्तके आसन और त्रिजगकी प्रभुताके शासनका क्या वर्णन करूँ? आकाशसे पुष्पोंकी अंजलि गिरती है, कामदेव डरता है, उनपर अपना तीरावलि नहीं छोड़ता। भ्रमर रोता है कि वह मेरी प्रत्यंचा नहीं है। हे स्वामी, यह निश्चय ही तुम्हारी आज्ञा है, दुन्दुभि बजते हुए थकती नहीं, लोगोंको धर्म सुननेके लिए मानो वह पुकार रही है, दिव्यघोषसे भुवन शुद्ध होता है और स्वपर तथा परलोकको समझने लगता है।

घत्ता—श्री वज्रनाथ (वज्रनाभि) को प्रमुख गणधर बनाकर, शीलरूपी विमल जलको वहन करनेवाले और शान्तचित्त एक सौ तीन गणधर हुए ॥१५॥

१५. १. A P रावलु। २. A P पंगणु। ३. P सुरवररमणिहिं। ४. A ते णयरहं। ५. A P दुरियावय°। ६. A भवरीणत्तणु; P भवझीणत्तणु। ७. A P मोक्खसोक्खु। ८. A P वरदलु। ९. A कुसुमाउलि। १०. A P रुंजइ। ११. A धरिवि धुरि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

अट्ठाइज्जसहस णिरणंगहं रिसिसीहहं[1] सिक्खियपुव्वंगहं ।
पण्णासइ संजुत्तहं भिक्खुहुं तीससहसदोलक्खइं सिक्खुहुं ।
अट्ठाणउवि सेयाइं[2] तिणाणिहिं सोलह सहसइं केवलणाणिहिं ।
एक्कुणवीससहसइं विक्किरियहं संख भणमि मणपज्जवरिसियहं ।
सावयगुणठाणेहिं सहासहिं छहसएहिं अण्णु वि पण्णासहिं ।
ऍक्कारहसहसाइं[3] विवाइहिं रिसिहिँ[4] तिण्णि लक्खइं सज्झाइहिं ।
तवसंजम[5]वयतणुरुहमाइहि संजमधरिहिं सुद्धकुलजाइहि ।
भोयभूमिसमसहसइं चेयँहि[6] लक्ख तिण्णि रिदुसयइं वि वेयहि ।
अज्जियसंख एम जाणिज्जइ लक्खँत्तउ[7] सावयहं गणिज्जइ ।
पंचलक्ख सावियहं णिरुत्तउ देवहिं देविहिं माणु ण उत्तउ[8] ।

घत्ता—विहरंतहु महि परमेसरहु धम्मु कहंतहु[9] भव्वहं ॥
अट्ठारहवरिसइं[10] ऊणयरु एक्कु लक्खु गउ पुव्वहं ॥१६॥

१७

इय पुव्वहं पण्णास जि लक्खइं गणहरमुणिवरसाहियसंखइं ।
गयइं ण किं पि वि धाइं[1] णियाणइ मासँसेसि[2] थिउ आउपमाणइ ।
हरिणहँ[3]अविहयकरिकुंभत्थलि तहिं संमेयगिरिंदवणत्थलि ।
लंबियकरु सहुं मणिसंदोहें दुण्णि पक्ख थिउ जोयणिरोहें ।

१६

निष्काम पूर्वांगधारी मुनिश्रेष्ठ ढाई हजार, संयमी शिक्षक दो लाख तीस हजार पचास, अवधिज्ञानी नौ हजार आठ सौ, केवलज्ञानी सोलह हजार, विक्रिया-ऋद्धिधारी उन्नीस हजार, मनःपर्ययज्ञानधारियोंकी संख्या कहता हूँ, वे ग्यारह हजार छह सौ पचास हैं। वादी मुनि ग्यारह हजार, इस प्रकार श्रुत ध्यानवाले कुल तीन लाख मुनि उनके साथ थे। तप, संयम, व्रत और शरीरकी कान्तिसे युक्त शुद्ध कुल जातिवाली तथा संयम धारण करनेवाली आर्यिकाओंको तीन लाख तीस हजार छह सौ जानो। आर्यिकाओंकी संख्या इस प्रकार जानना चाहिए, श्रावकोंको तीन लाख गिना जाये। श्राविकाओंको निश्चित रूपसे पाँच लाख जाना जाये। देवों और देवियों की वहाँ कोई गिनती नहीं थी।

घत्ता—इस प्रकार धरतीपर विहार करते हुए और भव्यजनोंके लिए धर्मका कथन करते हुए परमेश्वरके अठारह वर्ष कम, एक लाख पूर्व वर्ष व्यतीत हो गये ॥१६॥

१७

गणधर मुनिवरों द्वारा कहे गये एक लाख पचास हजार पूर्व वर्ष बीत गये। अन्तमें कुछ भी नहीं रहता, केवल उनकी आयुका प्रमाण एक माह शेष रह गया, जहाँ सिंहके द्वारा हाथियोंके कुम्भस्थल आहत नहीं किये जाते, ऐसे सम्मेदशिखर पर्वतपर, मुनिसमूहके साथ हाथ ऊपर कर दो

---

१६. १. A रिसिसोसहं । २. P सयइं तिण्णाणिहिं । ३. A P एयारह । ४. A omits this foot. ५. A omits this foot. ६. A विरयहिं । ७. P लक्खतइउ । ८. A P add after this : मिलिउ तिरिक्खविंदु संखेज्जउ, एत्तियजणहं करिवि साहिज्जउं । ९. A P कहंतहं । १०. A वरिसहं ।
१७. १. A P ठाइ । २. A माससेस थियº । ३. A हरिणहअविहय; P हरिणहयरि हयº ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वइसाहहु मासहु सियछट्ठिहि सत्तमभवि हियचंदाइट्ठिहि।
खंतिवयंसियाइ संमाणिउ एक्कल्लउ समाहिघरु आणिउ।
णाहु चारुचारित्तु विवज्जइ णग्गउ थिउ णिल्लज्ज ण लज्जइ।
किरियाभट्ठु उड्ढु संचलियउ सिद्धिविलासिणीहि जिणु मिलियउ।
जीवपक्खिबंदिग्गहपंजरु इंदें पुज्जिउ मुक्ककलेवरु।
अग्गिकुमारहिं अग्गि विइण्णउ सवइ चवइ णहि जंतु सउण्णउ।
चउदहभूयगामरइ छंडिय अहिणंदणेण मोक्खपुरि मंडिय।
गउ गउ गउ जि पडीवउं णायउ मज्झु वि होज्जउ तेहिं जि णिकेयउ।

घत्ता—जणु आवइ जाइ ण थाइ खणु अत्थवणुग्गमु दावइ ॥
महुं हियवइ भरहाणंदयरंपुप्फयंतसमु भावइ ॥१७॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे अहिणंदणणिव्वाणगमणं णाम एक्कचालीसमो परिच्छेउ समत्तो ॥४१॥

॥ [11] अहिणंदणचरियं समत्तं ॥

पक्षके योगनिरोधमें स्थित हो गये। वैशाख माहके शुक्लपक्षकी षष्ठीके दिन सातवें नक्षत्रके चन्द्रमासे युक्त होनेपर शान्तिरूपी सखीसे सम्मानित वह अकेले समाधिघरमें स्थित हो गये। सुन्दर चरितवाले स्वामीका विश्लेषण किया जाता है, वह नग्न स्थित थे एकदम लज्जाहीन, उन्हें लज्जा नहीं आती थी। स्पन्दनसे रहित नक्षत्रके समान वह ऊपर चले, और जिन भगवान् सिद्धि-रूपी विलासिनीसे जा मिले। इन्द्रने जीवरूपी पक्षीके लिए वन्दीगृहके समान उनके शरीरकी पूजा की। अग्निकुमार देवोंने उसे आग दी। आकाशमें जाते हुए पुण्यात्मा इन्द्र कहता है कि चौदह भूतग्रामोंमें रति छोड़कर अभिनन्दनने मोक्षपुरीको अलंकृत किया। वह गये तो गये, फिर वापस नहीं आये। मेरी भी घर वहींपर हो।

घत्ता—जीव आता है और जाता है; एक क्षण भी स्थिर नहीं रहता, केवल अस्त और उद्गम बताता है। वह मुझे भरतको आनन्द देनेवाले पुष्पदन्तके समान, हृदयमें अच्छे लगते हैं ॥१७॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा प्रणीत और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका अभिनन्दन जिनवरका निर्वाणगमन नामका इकतालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४१॥

४. A सत्तमभवियहि चंदा° । ५. A P णिल्लज्जु । ६. A उवसंचलियउ । ७. P जणु । ८. A P सवकु; but T सवइ स्वर्गपतिः । ९. A तं जि णिकेयउ; P बहि जि णिकेयउ । १०. P °णंदयह । ११. A P omit the line.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ४२

पंचमगइगमणु पहु पंचगुरुहुं पहिलारउ ॥
पंचमं[1]तित्थयरु पणविवि पंचेसुवियारउ ॥ ध्रुवकं ॥

१

णिज्जियसं[2]वणं संतं सं[3]वणं ।
णिज्जियरूवं णिरुवमरूवं ।
णिज्जियगंधं सुरं[4]हियगंधं ।
णिज्जियसरसं वज्जियसरसं ।
णिज्जियकोहं वरवकोहं ।
णिज्जियमाणं सुहरिसमाणं ।
णिज्जियमायं चत्तपमायं ।
णिज्जियलोहं गयसल्लोहं ।
मुणियपयत्थं भासातत्थं ।
कयसुत्तं[5]त्थं जं दिव्वत्थं ।
पालियमहिमं घं[6]ल्लियमहिमं ।

सन्धि ४२

पाँच गुरुओंमें पहले, पाँचवीं गतिमें गमन करनेवाले प्रभु (सिद्ध) और कामका नाश करनेवाले पाँचवें तीर्थंकर (सुमतिनाथ) को मैं प्रणाम करता हूँ ।

१

जो श्रवण (कान) को जीतनेवाले सन्त श्रमण हैं, जो बाह्य रूपको जीतकर भी अनुपम रूपवाले हैं, गन्धको जीतकर भी सुरभित गन्धवाले हैं, काम-सुखको जीतकर जिन्होंने सराग वचन छोड़ दिया है, जो क्रोधको जीतकर भी उत्तम वाक्य-समूहवाले हैं, मानको जीतकर भी जो इन्द्रके समान हैं, जिन्होंने मायाको जीत लिया है, एवं प्रमादका परित्याग कर दिया है। जो लोभको जीतनेवाले और शल्योंसे रहित हैं। प्रशस्तके ज्ञाता, निर्बाध वक्ता, दिव्यार्थवाले सूत्रोंके निर्माता,

A has, at the beginning of this Samdhi, the following stanza:—

सोऽयं श्रीभरतः कलङ्करहितः कान्तः सुवृत्तः शुचिः
सज्ज्योतिर्मणिराकरो प्लुत इवानर्घ्यो गुणैर्भासते ।
वंशो येन पवित्रतामिह महामत्राह्वयः प्राप्तवान् (प्रापितः ?)
श्रीमद्वल्लभराज—कटके यश्चाभवन्नायकः ॥ १ ॥

No other known MS of the work gives it.

१. १. A P पंचमु तित्थयरु । २. P °समणं । ३. P °समणं । ४. A °सुरहिसुयंधं; T सुरहिसुगंधं । ५. A °सुवतत्थं । ६. T लंघियमहिमं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महिलाकुमइं　　मोत्तुं कुमइं ।
इच्छियसुमइं　　णमिउं सुमइं ।
तस्स पवित्तं　　वोच्छं वित्तं ।

घत्ता—जिह तें लइँउ[7] व्रउ जिह हुयउ अणुत्तरि सुरवरु ॥
जिह जायउ सुमइ तिह कहमि समासइ वइयरु ॥१॥

२

जलवरिससीयए दीवए धीयए　　कुंभयण्णोहिं[1] णिक्खित्तमहिवीयए ।
भमियमत्तंडए तमपडलखंडए　　फुल्लतरुसंडए धा[2]दईसंडए ।
तरुणणरमिहुँ[3]णपरिवड्ढियसणेहए　　पुव्वसुरसिह[4]रिणो हरिदिसिविदेहए ।
णडियबरहिणणडे सरिवरुत्तरतडे　　पोमरयरासिपिंजरियकुंजरघडे ।
दुक्खणिग्गमणरइरमणवणसिरिसही　　जत्थ तत्थत्थि पिहु पुक्खलावइ मही ।
तम्मि गच्छंतसामंतभडसुहयरी　　सेयसउहा[6]वली पुंडरिं[7]गिणि पुरी ।
घुसिणरससिंचिए हसियगयणंगणे　　मोत्तियकणंचिए पंगणे[8] पंगणे ।
अमलिणा[9] सणलिणा जत्थ जलवाविया　　कुररकारंडकलहंस[10]संसेविया ।
मंदिरे मंदिरे सइरें[11]गइ गोमिणी　　हम्मई मद्दलो णच्चए कामिणी ।

महिमाका पालन करनेवाले, धरती और लक्ष्मीको छोड़नेवाले हैं। जिन्होंने महिला पृथ्वीकी बुद्धि और कुमतिको छोड़नेके लिए सुमतिको इच्छा की है, ऐसे सुमतिनाथको मैं प्रणाम करता हूँ और उनके पवित्र वृत्तान्तको कहता हूँ।

घत्ता—जिस प्रकार उन्होंने व्रत लिया, जिस प्रकार वह अनुत्तर स्वर्ग विमानमें उत्पन्न हुए और जिस प्रकार सुमति नामक तीर्थंकर हुए, वह सारा वृत्तान्त मैं संक्षेपमें कहता हूँ ॥१॥

२

जो जल वर्षासे शीतल हैं तथा जिसमें घड़ोंके द्वारा धरतीमें बीज बोये जाते हैं, जिसमें अन्धकारके समूहको नष्ट करनेवाला सूर्य परिभ्रमण करता है और वृक्षसमूह खिला हुआ है, ऐसे घातकी खण्ड द्वीपके पूर्वमें सुमेरुपर्वतकी पूर्वदिशामें, जिसमें तरुण नर जोड़ोंमें स्नेह बढ़ रहा है, ऐसा विदेह क्षेत्र है। जिसमें मयूररूपी नट नृत्य करता है और जिसमें कमलोंके परागसमूहसे हस्तिघटा पिंजरित (पीली) है, सीता नदीके ऐसे उत्तर तटपर विशाल पुष्कलावती भूमि है, जो दुःखको दूर करनेवाली एवं रतिरमण करानेवाली वनलक्ष्मीकी सखी है। उसमें चलते हुए भट सामन्तोंसे सुखकर एवं श्वेत चूनोंके प्रासादोंवाली पुण्डरीकिणी नामकी नगरी है। जिसके केशर रससे सिंचित गगनांगनको हँसनेवाले मुक्ताकणोंसे अंचित आँगन-आँगनमें कमलों सहित निर्मल बावड़ियाँ हैं। घर-घरमें स्वैरगामिनी लक्ष्मी है। मृदंग बजाया जाता है और कामिनी नचायी जाती है। जहाँ

---

७. A लयउ वउ; P लइउ वउ।

२. १. A P कुंभयण्णेहिए खित्त°। २. A धायई°। ३. A P °णरमिहुणए वड्ढिय°। ४. A हरिदिस°। ५. A P °सिहरिए। ६. A सउहाउली। ७. A P पुंडरिकिणि। ८. A P पंगणे पंगणे। ९. A समलिणा। १०. A P कलहंसजुयसेविया। ११. A सइं रमइ but gloss स्वेच्छाचारिणी।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

महुसमयसंगमो उववणे उववणे रमइ व[12]इसवणओ आवणे आवणे।
वूढसिंगारए जोव्वणे णवणवे वसइ वरसरसई माणवे माणवे।
जत्थ सव्वो जणो जित्तगिव्वाणओ तत्थ पहु अत्थि णामेण रइसेणओ।
किंकरा बंधुणो दाणसंमाणिया रायलच्छी चिरं तेण संमाणिया।
मंतियं चिंतियं चारु कज्जं पुणो मोक्खसोक्खंकरो णत्थि रज्जे गुणो।

घत्ता—उवसमवाणिएँ[13] सिंचेप्पिणु किज्जइ सीयलु॥
भोय[14]ईंधणेण पुणु पज्जलइ भीमु कामाणलु॥२॥

३

गच्छामु इच्छा[1]मु गुरुपाय पेच्छामु।
इय भणिवि समु चिणिवि जिणु थुणिवि मणु जिणिवि।
मोहणिउ मेल्लेवि अइरहहु मे[2]हि देवि।
वल्लहहु णंदणहु तं अ[3]रुहणंदणहुँ।[4]
[5]पावंति व्रउ लइउ हियवउ ण विम्हिय[6]उं।
रामाहिरामेसु इट्ठेसु कामेसु।
दुव्वारवारणइं सोलह वि कारणइं।
भावेण भावेवि णीसट्ठ व[7]वसेवि।
जिणसुत्तु जिणवित्तु जिणणाउं जिणगोत्तु।
गुरुपुण्णु अज्जेवि मोहं विसज्जेवि।

उपवन-उपवनमें वसन्तका समागम है, और जहाँ कुबेर बाजार-बाजारमें रमण करता है। शृंगारित नवनवयौवन और मनुष्य-मनुष्यमें जहाँ सरस्वती निवास करती है। जहाँ सभी मनुष्य देवोंको जीतनेवाले हैं, ऐसे उस नगरमें रतिसेन नामका राजा था। जिसके अनुचर और बन्धु दानसे सम्मानित हैं, उसने बहुत राज्यलक्ष्मीको सम्मानित किया (बहुत समय तक उसका उपभोग किया)। फिर उसने अपने शुभ कामकी मन्त्रणा और चिन्तना की कि राज्यमें मोक्षसुखको देनेवाला गुण नहीं है।

घत्ता—उपशमरूपी जलसे सींचकर कामरूपी आगको शान्त करना चाहिए, भोगोंसे तो कामाग्नि भयंकर रूपसे प्रज्वलित हो उठती है॥२॥

३

'मैं जाता हूँ। इच्छा करता हूँ। गुरुचरणोंके दर्शन करता हूँ।' यह विचारकर, समताको पहचानकर, जिनकी स्तुति कर, मनको जीतकर, मोहनीय कर्मको छोड़कर, अपने प्रिय पुत्र अतिरथको राज्य देकर, अर्हन्नन्दनके चरणोंमें उसने व्रत ले लिया। स्त्रियोंसे सुन्दर इष्ट कामोंमें उसका मन तनिक भी विस्मित नहीं हुआ। संसारका निवारण करनेवाली सोलह कारण भावनाओंकी अपने मनसे भावना कर, मुक्त व्यवसाय कर, जिनसूत्र जिनवृत्त जिननाम जिनगोत्र भारीपुण्यका

---

१२. AP वइसवणु पुणु। १३. A P °पाणिएण। १४. A P भोयत्तणेण।

३. १. P एच्छामु। २. P मही देवि। ३. A P जित्तारिसंदणहु। ४. A P add after this: मुणिगोत्तणामासु रविकिरणधामासु। ५. AP पावंति तउ। ६. A P विभविउ। ७. A P ववसेवि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मउ[8] करिवि संणासु　　हुउ वइजयंतीसु ।
णिवसेइ कंतम्मि　　तें[9] वइजयंतम्मि ।
कालेण दीहरइं　　तेत्तीस सायरइं ।
सरिसाउ माणियउं　　णियबंध[10] णीणियउं ।
पुणु तस्स सुहभाउ　　छम्माससेसाउ ।
सक्केण जाणियउ　　संबंधु भाणियउ ।
धणयस्स णेहेण　　हरिसुद्धदेहेण ।
इह जंबुदीवम्मि　　भो भरहखेत्तम्मि ।
चिरु वसियसयरम्मि　　साकेयणयरम्मि ।
मेहरहु पुहईसु　　पिय मंगला तासु ।
हविही[11] सुओ ताहं　　जिणु जाहिं पियराइं ।
पुरु करहि सोवण्णु　　ता झ त्ति बहुवण्णु[12] ।

घत्ता—वज्जहिं मरगयहिं वेरुलियहं गयणुब्भासणु ।
जक्खें [13]णिम्मवियउं कोसलपुरु पावविणासणु ॥३॥

४

एत्थंतरए जणमणरामे　　वासहरे णिसि पच्छिमजामे ।
मउपल्लंके णिद्दायंती　　हंसी विव कमले णिवसंती ।
पेच्छइ देवी सिविणयपंती　　तुहिणतारमुत्ताहलकंती ।
गयणाहं गोमंडलणाहं　　पिंगलचलणयणं मयणाहं ।
पोमं[1] पीणियपुहईणाहं　　दामं रुंजियभसलसणाहं ।

अर्जन कर, मोहका विसर्जन कर; वह संन्यासपूर्वक मरकर वैजयन्त विमानमें अहमेन्द्र हुआ। वह सुन्दर वैजयन्त विमानमें निवास करता है। तेंतीस सागर पर्यन्त उसने सरस आयुका भोग किया, और इस प्रकार अपना निबन्ध पूरा किया। फिर उसकी शुभभाववाली आयु छह माह शेष बची। इन्द्रने जान लिया। हर्षसे उद्धत है देह जिसमें, ऐसे स्नेहसे उसने धनदसे सम्बन्ध कहा—"इस जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रमें, जिसमें पहले सगरका निवास था ऐसे साकेत नगरमें राजा मेघरथ है। उसकी प्रिया मंगला है। उनका पुत्र जिन होगा; इसलिए तुम उनके माता-पिताके पास जाओ, नगरको स्वर्णमय बनाओ।" तब शीघ्र ही—

घत्ता—यक्षने वज्रों, मरकत मणियों-वैदूर्योंसे आकाशचुम्बी पापोंका नाश करनेवाले बहुरंगे अयोध्यानगरका निर्माण किया ॥३॥

४

इसी बीच जनमनोंके सुन्दर निवासगृहमें रात्रिके अन्तिम प्रहरमें कोमल पलंगपर सोती हुई, जैसे हंसिनी कमलोंमें निवास करती है, हिम तार और मोतियोंके समान कान्तिवाली वह देवी स्वप्नमाला देखती है। गजनाथ वृषभराज पीली और चंचल आँखोंवाला, सिंह; पृथ्वीनाथको

---

८. A P मुउ। ९. A P तं। १०. P णियबंधणियउ। ११. A होही। १२. A बहुपुण्णु। १३. A P णिम्मियउं।

४. १. A लच्छीवियसियकमलसणाहं; P पोमापीणिय°।

तारणाहं वासरणाहं झसजुयलं तडिजुयलगुणाहं ।
कलसजुयं मंगलकुलणाहं कमलसरं कीलियकरिणाहं ।
तुंगतरंगं तीरिणिणाहं वइसणयं च ससावयणाहं ।
गेहं सुवसियसुरवरणाहं अवरं पवरं थियफणिणाहं ।
रयणगणं विम्हियधणणाहं[2] दीहसिहालं साहाणाहं ।
इय दट्ठुं[3] पुच्छइ णियणाहं[4] जाया अज्ज दिट्ठसिविणाहं[5] ।
भो[6] सोलहपुरिल्लगयणाहो[7] ताणं कहसु फलं मइ णाहो[8] ।
तं णिसुणिवि पभणइ णरणाहो[9] होही पुत्तो तुह जगणाहो[10] ।
[11]सव्वण्हू सव्विंदसमच्चो देवो णहु[12] सो भण्णइ मच्चो ।
हूए हरिभणणे[13] णिरवज्जे[14] सइसरीरपक्खालणकज्जे ।
आया देवी हिरि[15] सिरि कंती लच्छी बुद्धी दिहि[16] मइ कित्ती ।

घत्ता—अणवइण्णि अरुहे पहिलउ जि जाम छम्मासिउ[17] ॥
ताम धणाहिवेण धणधारहिं[18] णिवघरि वरिसिउं ॥४॥

५

णीलियदिसावणइ मासम्मि सावणइ ।
तहिं सुद्धबीयाइ दूरं विणीयाइ ।

प्रसन्न करनेवाली पद्मा, (लक्ष्मी), गुनगुनाते हुए भ्रमरोंसे युक्त पुष्पमाला, तारानाथ (चन्द्रमा), वासरनाथ (सूर्य); विद्युत्युगलकी तरह मत्स्ययुगल, मंगलकुलका स्वामी कलशयुगल; जिसमें गजनाथ क्रीड़ा कर रहे हैं, ऐसा कमलाकर, ऊँची तरंगोंवाला समुद्र; सिंहोंसे युक्त आसन (सिंहासन), सुवसित-सुरवरोंका घर (देवविमान); नागलोक, कुबेरको विस्मित करनेवाला रत्नसमूह; लम्बी ज्वालाओंवाली आग। यह देखकर वह अपने स्वामीसे पूछती है कि "आज मैं स्वप्न देखनेवाली हो गयी हूँ, अर्थात् आज मैंने स्वप्न देखे हैं, जिनमें पहला गजनाथ है, ऐसे उन स्वप्नोंका फल हे स्वामी मुझसे कहिए" । यह सुनकर राजाने कहा, "तुम्हें विश्वनाथ पुत्र होगा। सर्वज्ञ, और सर्वेन्द्रोंके द्वारा समर्चनीय वह देव हैं, उन्हें मर्त्य नहीं कहा जाता।" इन्द्रका निरवद्य कथन पूरा होनेपर; सतीके शरीरका प्रक्षालन करनेके लिए, श्री-ह्री-कान्ति-लक्ष्मी-बुद्धि धृति देवियाँ आयीं।

घत्ता—देवके अवतार लेनेके पहले जब छह माह बाकी थे, तब कुबेरने राजाके घरमें स्वर्णवृष्टि की ॥४॥

५

श्रावण माहमें, जब कि दिशाएँ और धरती हरी थी, शुक्लपक्षकी द्वितीयाके दिन वह गर्भमें

२. A णिज्जियधणणाहं; P विभियधणणाहं। ३. P दिट्ठ। ४. A णिवणाहं। ५. A °सिविणोहं। ६. A जे सोलह°। P जो सोलह°। ७. A P °गयणाहं। ८. A P णाहं। ९. P महिणाहो। १०. P जयणाहो। ११. P सव्वण्हु सव्विंद°। १२. A देवो णउ भण्णइ सो मच्चो; P देवो ण हि सो भण्णइ मच्चो। १३. A P हरिभवणे। १४. A णिरुवज्ज। १५. P सिरि हिरि। १६. P सइं। १७. P छमासिउ। १८. A P णिवघरि।

गब्भम्मि अवयरिउ जणणीइ उरि धरिउ ।
सो वइजयंतेंदु पुण्णिमइ णं चंदु ।
कयजयरवालाइ आवेवि लीलाइ ।
[2]करधरियवीणाइ सहुं तियससेणाइ ।
तं णयरु तं भवणु सा जणणि सो जणणु ।
अंगंतरंगत्थु वंदेवि [3]मुणितित्थु ।
गउ सयमहो तेत्थु सविमाणु तं जेत्थु ।
रयणप्पहाकिट्ठि पुणु विहिय वसुविट्ठि ।
जक्खीकडक्खेण तूसेवि जक्खेण ।
ता जाव णवमास संपुण्णविहलास ।
केवलसिरीरिद्धि अहिणंदणे सिद्धि ।
हयदियह[4]पाडीहिं णवलक्खकोडीहिं ।
जइया गया ताहं सायरसमाणाहं ।
तइया महंतेण पुण्णेण होंतेण ।
चित्ताइ पिउजोइ पविमलदिसा[5]टोइं[6] ।
तिण्णाणमयदिट्ठि पंचमउ परमेट्ठि ।
संभूउ सो जाम संखुहिय सुर ताम ।

घत्ता—णाणावाहणहिं दिसि दिसि झुल्लंतवडायहिं ।।
आइउ अमरवइ सहुं च[7]उविहअमरणिकायहिं ।।५।।

अवतरित हुआ और अत्यन्त विनीत माँने उस वैजयन्त देवको अपने उदरमें धारण किया, जैसे पूर्णिमाने चन्द्रमाको धारण किया हो। तब इन्द्रने जय-जय शब्द करती हुई हाथमें वीणा धारण करनेवाली देवसेनाके साथ लीलापूर्वक आकर, उस नगर, उस भवन, उस माता, उस पिता और शरीरके भीतर स्थित मुनितीर्थकी वन्दना की। और वह वहाँ चला गया जहाँ उसका अपना विमान था। फिर यक्षिणीके कटाक्षसे सन्तुष्ट होकर यक्षने रत्नोंकी प्रभाको आकृष्ट करनेवाली धनवृष्टि तबतक की कि जबतक विकलोंकी आशा पूरी करनेवाले नौ माह नहीं हुए; जब तीर्थंकर अभिनन्दनको केवल श्रीरूपी ऋद्धि सिद्ध हुई थी, तबसे नौ लाख करोड़ सागर दिवस परिपाटीके गुणित होनेपर (बीतनेपर); तब महान् पुण्यके योगसे चित्रा नक्षत्रमें (माघ शुक्ला एकादशी); दसों दिशाओंका विस्तार जिसमें निर्मल है, ऐसे पितृयोगमें, तीन ज्ञानोंकी दृष्टिवाले पाँचवें परमेष्ठी जब उत्पन्न हुए तो देवलोक क्षुब्ध हो उठा।

घत्ता—नाना वाहनों, दिशा-दिशामें झूलती हुई पताकाओं और चार प्रकारके अमर-निकायोंके साथ इन्द्र आया ।।५।।

---

५. १. A जणणीउरे । २. P करि धरिय° । ३. A P मुणि तेत्थु । ४. P हयदियहणाडीहिं । ५. A P पविमलदिसाहोइ; T दिसाभोइ दशदिशाटोपे । ६. P adds after this : एयादसि ए पक्खि, सिए चंदे महारिक्खि । ७. A बहुविहअमर° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६

पाविऊण पट्टणं देवि तिप्पयाहिणं ।
गंपि रायमंदिरं णिम्मिऊण णिब्भरं ।
बंधुचित्तविब्भमं अण्णबालसंकमं ।
वज्ज[1]पाणिणा पुणो वंदिओ सयं जिणो ।
अंकए णिवेसिओ सूहवो सुहासिओ ।
कुंभकंठबंधुरो चोइओ ससिंधुरो ।
पत्तओमरो[2]यलं पंडुरं सिलाय[3]लं ।
तम्मि देहमाण[4]वो तेण दिव्वमाण[5]वो ।
णाह[6]ओ णिरूविओ भत्तएहिं भाविओ ।
पावतावहारिणा दुद्धरासिवारिणा ।
देवएहिं ण्हाणिओ पुप्फगंधमाणिओ ।
आलयं पुण[7]णिओ जेहिं सो वियाणिओ ।
ते जयम्मि धण्णया णाणिणो संउ[8]ण्णया ।
मंडणेहिं राइओ किंणरेहिं गाइओ ।
जोइएहिं झाइओ अत्थिणत्थिवाइओ ।
अप्पिओ विपं[9]कए माउ[10]पाणिपंकए ।
वज्जिणा जिणेसरो जीयलोयणेसरो ।
संसिऊण तं णिवं कोसिओ गओ दिवं ।

६

नगरको पाकर, उसकी तीन प्रदक्षिणा कर राजमन्दिरमें जाकर, बन्धुओंके चित्तको विभ्रममें डालनेवाले कृत्रिम बालकका पूर्ण रूप निर्मित कर, इन्द्रने स्वयं जिनको प्रणाम किया, और सुभग सुभाषित उन्हें अपनी गोदमें ले लिया। गण्डस्थल और कण्ठसे सुन्दर अपने गजको उसने प्रेरित किया और अमरालय पाण्डुशिलापर पहुँचा। देहश्रीसे अभिनव दिव्य मानवनाथको उसने स्थापित किया। और भक्तोंने उसकी भक्ति की। देवोंने पापतापका हरण करनेवाली दुग्धराशिके जलसे स्नान कराया और पुष्पगन्धसे सम्मान किया। वे पुनः उन्हें घर ले आये, कि जिनके द्वारा वे ले जाये गये थे। जगमें वे ज्ञानी और पुण्यात्मा धन्य हैं जो अलंकारोंसे अलंकृत हैं, किन्नरोंके द्वारा जिनका गान किया जाता है, योगियोंके द्वारा जिनका ध्यान किया जाता है; जो स्याद्वादके प्रतिपादक हैं। फिर माताके निर्मल करकमलमें इन्द्रने जीवलोकके ईश्वर जिनको दे दिया। और राजाकी प्रशंसा कर इन्द्रलोकको चला गया।

---

६. १. A वज्जपाणिणो । २. A P °मरालयं but A corrects it to सुरालयं; gloss in K अमराचलं । ३. P सिलालयं । ४. A माणवे । ५. A माणवे । ६. A णाहए । ७. A पुणो णिओ । ८ A समुण्णया; P सउण्णया । ९. A विकंपए । १०. समाउपाणिपंकए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—सुरसीमंतिणिहिं थणथण्णएण वड्ढारिउ ॥
सुमइसे[11]मंग्घविउ पहु सुमई[12] भणिवि हक्कारिउ ॥६॥

७

पुव्वाण गिव्वाणकीलाइ कयसोक्ख कुमरत्तणेणेय वोलीण दहलक्ख।
अइऊण[1] ता णवर दणुयारिरायण भंभंतगंभीरभेरीणिणाएण।
सिंचेवि सुइ[2]सलिलधाराणिवाएहिं अंमहिवि[3] णवमालईपा[4]रियाएहिं।
सवलहिवि कप्पूरचंदणपयारेहिं भूसेवि केऊरहारेहिं दोरेहिं[5]।
कलरवतुलाकोडिकंचीकलावेहिं णच्चेवि विब्भमहिं हावेहिं भावेहिं।
बद्धो सिरे पट्टु देवाहिदेवस्स णिव्विं[6]धकामावहो णिव्विलेवस्स।
अंधाइं बहिराइं धणविहवहीणाइं संपीणयंतस्स काणीणदीणाइं।
महि भुंजमाणस्स दिव्वाइं सोक्खाइं गलियाइं पुव्वाइं णवलक्खसंखाइं[7]।
ता चिंतियं चिंतणिज्जं जिणिंदेण रज्जेण महु होउ भववेल्लिकंदेण।
तं चयमि तउ करमि संचरमि मग्गेण विसहिंदचिण्णेण जडकसरदुग्गेण।
घत्ता—गिरिकक्करि पडइ महुकारणि जिह हयकरहउ ॥
रज्जरसेण तिह भणु महियलि को किर ण णिहउ ॥७॥

घत्ता—देव-सीमन्तिनियोंके द्वारा अपने दूधसे वृद्धिको प्राप्त तथा सुमतिके लिए समर्पित प्रभुको सुमति कहकर पुकारा गया ॥६॥

७

सुख उत्पन्न करनेवाली देवक्रीड़ाओं और कौमार्यमें उनके जब दस लाख पूर्व वर्ष बीत गये, तो इन्द्रने आकर घूमते हुए गम्भीर भेरी निनादके साथ पवित्र जलधाराओंकी वर्षासे अभिषेक कर, नवीन मालती और पारिजात कुसुमोंसे पूजा कर, कपूर और तरह-तरहके चन्दनोंसे लेप कर, केयूर-हार-दोरों और सुन्दर बजते हुए घुँघरुओंवाली करधनियोंसे अलंकृत कर, विभ्रमों, हाव-भावोंसे नृत्य कर, कामको निरन्तर ध्वस्त करनेवाले निर्लेप देवाधिदेवके सिरपर पट्ट बाँध दिया। अन्धे, बहिरों, धनविभवसे हीनों, कन्यापुत्रों और दीनोंको प्रसन्न करते हुए, धरती और दिव्य सुखोंका भोग करते हुए, उनकी नौ लाख पूर्व वर्ष आयु बीत गयी। तब जिनेन्द्रने चिन्तनीयका विचार किया कि संसाररूपी लताका अंकुर यह राज्य मेरे लिए व्यर्थ है। उसे मैं छोड़ता हूँ, तप करता हूँ और वृषभेन्द्र (ऋषभनाथ धवल बैल) के द्वारा स्वीकृत जड़ और गरियाल बैलोंके लिए अत्यन्त दुर्गम मार्गसे चलता हूँ।

घत्ता—जैसे हत-करभ (ऊँट) मधुके लिए पहाड़के शिखरपर गिरता है, बताओ राज्यके रसके कारण संसारमें कौन नहीं मारा जाता ? ॥७॥

---

११. P T सुमइ समप्पियउ and gloss in T सुमतिः समर्पिता अतिशयवती येन। १२. P सुम्मइ।
७. १. P अविऊण। २. P सिंचेवि सो सलिल°। ३. A सम्मोवणिव°। ४. P °पारियाएहिं। ५. A डोरेहिं।
६. A P णिब्बंध°; T णिब्बंध सातत्यम्। ७. P णववीसलक्खाइं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८

अणुभासियं तं जि लोयंति[1] विबुद्धेहिं आवेवि देवेहिं पउणणपमुहेहिं ।
तिपुरिल्लकल्लाणविहि तेहिं संविहिउ सिवियाइ णेऊण णंदणवणे णिहिउ ।
मुक्काइं वत्थाइं भीमाइं सत्थाइं गहियाइं सत्थाइं णियधम्मसत्थाइं ।
लुंचेवि कुंतलकलावो वि कोंतलइं[2] सहुं छुहिओ जोग्गपत्तम्मि पविमलइ ।
सो देवदेवेण घित्तो समुद्दम्मि दुद्धंबुकल्लोलमालारउद्दम्मि[3] ।
मणपज्जउप्पण्णणाणेण सुवसिल्लु छट्ठोववासत्थु णीसंगु णीसल्लु ।
णीसंकु णिक्कंखु णिम्मुक्कदुविहासु सियलेसु णिद्दोसु णीरोसु णोहासु ।
वइसाहसियणवमि पुव्वण्हवेलाइ आलिंगिओ सामिओ दिक्खबालाइ ।

घत्ता—अवरहिं दियहि पुणु संसारमहण्णवतारउ ॥
पुरवरु सउमणसु चरियाइ पइट्ठु भडारउ ॥८॥

९

तत्थ सो पोमणामेण राएण संभाविओ भाववंतेण सत्तीइ भत्तीइ भुंजाविओ ।
पंचचोज्जाइं जायाइं दाणिस्स तस्सालए लोयणाहो भमंतो[2] वसंतो गिरिदालए ।
वीसवासाइं घोरे गहीरे तवे संठिओ ता रओ दूसहो दुम्महो दुज्जओ णिट्ठिओ ।
तम्मि दिक्खावणे वायहल्लंततालीदले णिच्चलं झायमाणेण झेयं[3] पियंगूतले ।

८

यही बात लौकान्तिक देवोंने आकर कही। इन्द्र प्रभृति देवोंने आकर आगेकी तीसरी कल्याण विधि सम्पन्न की और शिविकासे ले जाकर उन्हें नन्दनवनमें स्थापित कर दिया। वस्त्र और भीषण शस्त्र छोड़ दिये गये, स्वधर्मको शासित करनेवाले शास्त्र ग्रहण कर लिये गये। केशकलापको उखाड़कर पुष्पमालाके साथ पवित्र योगपात्रमें डाल दिया गया। देवेन्द्रने दुग्धजलकी लहरोंकी मालासे भयंकर समुद्रमें फेंक दिया। मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हो जानेके कारण स्ववशीभूत, अनासंग और शल्यरहित, छठे उपवासमें स्थित, निःसंग आकांक्षा-रहित, दुविधाओंसे मुक्त, शुक्ल लेश्यासे युक्त, निर्दोष अक्रोध, भाषाविहीन (मौन) स्वामीका वैशाख माहके शुक्लपक्षकी नवमीके दिन, पूर्वाह्न वेलामें दीक्षा रूपी बालाने आलिंगन कर लिया।

घत्ता—एक दूसरे दिन, संसाररूपी महासमुद्रसे तारनेवाले भट्टारक जिन सुमतिनाथ, सौमनस नगरमें चर्याके लिए प्रविष्ट हुए ॥८॥

९

वहाँ पद्मनाभके राजाने उन्हें पड़गाहा तथा भावोंसे भरे हुए उसने शक्ति और भक्तिसे उन्हें आहार करवाया। उस दानीके घरमें पाँच आश्चर्य हुए। लोकनाथ सुमति पहाड़ोंके घरमें भ्रमण करते और निवास करते हुए वे बीस वर्षोंके घोर तपमें स्थित हो गये। और तब दुःसह, दुर्मद और दुर्जय कर्मरज नष्ट हो गया। वायुसे आन्दोलित तालीदलवाले उसी दीक्षा वनमें

---

८. १. P लोयंत° । २. A P कुंतलइ । ३. P °कल्लोलवेलारउद्दम्मि ।

९. १. हम्मालए । २. P समंतो । ३. A जायं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आइमे मासए चंदजोण्हंकिए पक्खए   बारसीए इणे पच्छिमत्थे मघारिक्खए ।
इच्छियं णो सइत्तम्मि रायाणसंमाणसं   तेण मोत्तूण भत्तं तिरत्तं च काऊण सं ।
मेरुधीरेण हंतूण कम्मारिकूरं बलं   सव्वदव्वावलोयं समुप्पाइयं केवलं ।
आसणाणं पयंपेण पायालए पण्णया   कंपिया देवलोयम्मि देवा वि णिद्दुण्णया ।
माणवा माणवाणं णिवासाउ संचल्लिया   वाहणोहेहिं खं ढंकियं मेइणी डोल्लियाँ ।
आगओ वित्तसत्तू ससूरो सतारो ससी   जोइओ दीहणीलालिमालाजडालो रिसि ।
तिण्णि बाणासणाणं सयाइं सरीरुण्णओ   अंगवण्णेण सोवण्णवण्णं समावण्णओ ।

घत्ता—सुरवइअहिवइहिं महिवइहिं मि णियणियसत्तिइ ॥
पारद्धउ थुणहुं सुमईसरु परमइ भत्तिइ ॥९॥

१०

जय देव णिप्पाव   णिक्कोव णित्ताव ।
जय तुंग णिब्भंग   दिव्वंग णिव्वंग ।
जय वाम णिव्वाम   णिक्काम णिद्धाम ।
जय धीर संसार–   कंतारणित्थार ।
जय संत विक्कंत   परमंत अरहंत ।
जय कंत कुकयंत   कुणयंत भयवंत ।

प्रियंगुलताके नीचे अपने निश्चल ध्येयका ध्यान करते हुए चैत्र माहके शुक्लपक्षकी एकादशीके दिन सूर्यके पश्चिम दिशामें स्थित होनेपर मघा नक्षत्रमें उन्होंने अपने चित्तमें राजाओंका सम्मान नहीं चाहा। भोगत्व और रतिको छोड़कर और सम्यक्त्व ग्रहण कर मेरुके समान धीर उन्होंने कर्मरूपी अरिके क्रूर बलको नष्ट कर सर्व द्रव्यका अवलोकन करनेवाले केवलज्ञानको प्राप्त कर लिया। आसनोंके प्रकम्पनसे पाताललोकमें नाग काँप उठे, देवलोकमें देव भी नींदसे उठ बैठे। मनुष्य मनुष्योंके निवाससे चल पड़े। वाहनोंसे आकाश ढक गया और धरती हिल उठी। इन्द्र आ गया, सूर्य और तारों सहित चन्द्रमा आ गया। उन्होंने लम्बी नीली अलिमालाके समान जटावाले ऋषिको देखा। उनका शरीर तीन सौ धनुष ऊँचा था। अपने शरीरके रंगमें वह तपाये गये सोनेके रंगके समान थे।

घत्ता—सुरपतियों, नागपतियों और महीपतियोंने अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार भक्तिपूर्वक श्रेष्ठमति सुमतीश्वरकी स्तुति शुरू की ॥९॥

१०

हे निष्पाप, निष्क्रोध और निस्ताप! आपकी जय हो। हे महान् निर्दोष दिशांग, आपकी जय हो। हे सुन्दर स्त्रीरहित निष्काम और निर्धाम, आपकी जय हो। हे धीर और संसाररूपी कान्तारसे निस्तार करनेवाले, आपकी जय हो। हे शान्त विक्रान्त परमन्त्र अरहन्त, आपकी जय हो। हे स्वामी कृतान्तके लिए अप्रिय, कुनयका अन्त करनेवाले ज्ञानवान्, आपकी जय हो। हे

---

४. A बारसीए दिणे; P गारसीए इणे। ५. P सइत्तं। ६. A पकंपेण। ७. P हल्लिया। ८. A P महिवईहिं णविउ णियसत्तिइ।

१०. १. A णित्ताव णिक्कोव। २. P वीर।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

जय संथ मयमंथ णिग्गंथ सिवपंथ।
जय दित्त तम[3]चत्त अणिमित्तजगमित्त।
जय राय रिसि[4]राय णीराय णिम्मा[5]य।
जय णंद रुइरुंद– मुहयंद बुहयंद।
भुजगिंद भूमिंद खयरिंद तियसिंद।
णित्तंद णिद्दंद मुणिवंदसयवंदे।
जयणाह णिण्णाह णिव्वाह दुव्वाह।
समयार सिंदूर– मंदारकणियार–।
सुर[6]घित्तसियरत्त– सयवत्त सुविचित्त।
कुसुमोहकयसोह णिल्लोह णिम्मोह।
जय तिक्ख दुणिरिक्ख– तव[7]पक्खधुवसोक्ख–।
फलसाहि महुं देहि सुसमाहि लहुं बोहि।

घत्ता—इय वंदिउ सुमइ जीहासयहिं सहसक्खें॥
चउदारहिं सहिउ किउ समवसरणु ता जक्खें॥१०॥

११

मइंदासणं लच्छितुंग[1]त्तवासं वरं आयवत्त[2]त्तयं चंदभासं।
सुरुम्मुक्कसेलिं[3]धविट्ठी विसिट्ठा पडंती सराणीसरोलि व्व दिट्ठा।
ण सा तस्स काही समारं वियारं मणुम्मोहया[4] ते हया जेण दूरं।

स्वस्थ मदका मन्थन करनेवाले निर्ग्रन्थ शिवमार्ग, आपकी जय हो। हे प्रदीप्त अन्धकारसे त्यक्त, विश्वके अकारण मित्र, आपकी जय हो। हे राजर्षिराज नीराग और मायासे रहित, आपकी जय हो। हे आनन्दमय कान्तिसे महान् मुखचन्द बुधेन्द्र, आपकी जय हो। हे भुजगेन्द्र भूपेन्द्र, विद्याधरेन्द्र, देवेन्द्र, नित्येन्द्र निर्द्वन्द्व, सैकड़ों मुनिवरोंसे वन्दनीय, आपकी जय हो। हे नाथरहित निर्बाध और दुर्बाध आपकी जय हो। हे समाचार (शान्त आचारवाले) सिन्दूर मन्दार कर्णिकार देवोंके द्वारा फेंके गये श्वेत रक्त कमलोंसे सुविचित्र कुसुमसमूहोंकी शोभावाले आपकी जय हो। हे तीक्ष्ण और दुर्दर्शनीय तपरूपी वृक्षकी शाश्वत सुखरूपी फलशाखावाले आपकी जय हो। आप मुझे (कविको) शीघ्र सुसमाधि और सम्बोधि प्रदान करें।

घत्ता—इस प्रकार देवेन्द्रने अपनी सैकड़ों जिह्वाओंसे सुमतिकी वन्दना की। और इतनेमें यक्षने चार द्वारोंसे सहित समवसरणकी रचना कर दी॥१०॥

११

लक्ष्मीके उच्च निवासवाला सिंहासन, चन्द्रमाकी आभावाले श्रेष्ठ तीन छत्र, देवों द्वारा की गयी पुष्पवर्षा, जो कामदेव द्वारा विसर्जित तीर-पंक्तिके समान दिखाई दी। लेकिन वह उनमें किसी भी प्रकारका कामका विकार उत्पन्न करनेमें असमर्थ थी। क्योंकि वे मनको उन्मादन

३. A तवतत्त। ४. A सिरिराय। ५. P णीमाय। ६. P adds after this : अणवद्द।
७. A तववेक्ख।

११. A तुंगत्तु। २. A आयवत्तं तयं। ३. A सेलंधविट्ठी। ४. P मणुम्मोहयंता हया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तवेणुब्भवाए बुहाणंदिरीए　　　विहामंडलं कुंडलं णं सिरीए।
णहे सुम्मए दुंदुही गज्जमाणो　　　मुहालोयणेणेय विद्धत्थमाणो।
अभव्वो वि देवस्स पाए णवंतो　　　भिसं दीसए साणुकंपं चवंतो।
चला चामराली मरालालिसेया　　　सुभासाविभासाहिं गिज्जंति गेया।
असोयद्दुमो दिव्वपक्खिदरावो　　　जगुम्मोहणो भारहीए पहावो।
सुणिज्जंति दव्वत्थ[9]पज्जायभेया　　　मुणिज्जंति लोएहिं पंचत्थिकाया।
गणिज्जंति कम्माइं छज्जीवकाया　　　पवड्ढंति देहीण चित्ते विवेया।

घत्ता—पुच्छंतहु जणहु संदेहतिमिरु संणिरसइ॥
जलि थलि णहि विवरि तं णत्थि जं ण जिणु सासइं[10]॥११॥

१२

सउ[1] सोलहउत्तरु गणहरहं　　　पुव्ववियाणहं मुणिवरहं।
दुण्णि सहस चत्तारि सय　　　णिच्चपउंजियजीवदय।
दोण्णि लक्ख चउवण्ण पुणु　　　सहस तिण्णि सय तहिं जि भणु।
अवरु वि पण्णासइ सहिय　　　एत्तिय सिक्खुव सवरहिय।
एआरह[2]सहसइं परहं　　　अत्थि तेत्थु अवहीहरहं।
देवघित्तकुसुमंजलिहिं　　　तेरहसहसइं केवलिहिं।
चउसयअट्ठारहसहस　　　वेउव्वियहं सुज्झाणवस।

करनेवाले उन्हें दूरसे ही नष्ट कर चुके थे। प्रभामण्डल (भामण्डल) ऐसा मालूम हो रहा था मानो तपसे उद्भासित, पण्डितोंको आनन्द देनेवाली लक्ष्मीका कुण्डल हो। आकाशमें बजती हुई दुन्दुभि सुनाई दे रही थी। मुखके अवलोकन मात्रसे विश्वस्त होता हुआ अभव्य भी देवके पैरोंमें नमस्कार करने लगता है, वह अनुकम्पापूर्वक सुन्दर वाणी कहते हुए दिखाई देते हैं, हंसोंकी पंक्तिके समान श्वेत चामरोंकी पंक्ति चंचल है। सुभाषाओं और विभाषाओंमें गीत गाये जा रहे हैं। दिव्य पक्षीन्द्रोंके शब्दसे युक्त अशोक वृक्ष और विश्वका मोह दूर करनेवाला भारतीका प्रभाव है। द्रव्यार्थ और पर्यायार्थोंके भेद सुने जा रहे हैं, लोगोंके द्वारा पंचास्तिकायोंका मनन किया जा रहा है। कर्मादि और छह प्रकारके जीवनिकायोंकी गणना की जा रही है, मनुष्योंके चित्तमें विवेक बढ़ रहा है।

घत्ता—पूछनेवाले मनुष्यका सन्देहरूपी तिमिर नष्ट हो जाता है। जल-थल-नभ और आकाशमें वह नहीं है कि जिसका जिन कथन नहीं करते॥११॥

१२

एक सौ सोलह गणधर थे। पूर्वोंके ज्ञाता मुनिवर दो हजार चार सौ। नित्य जीवदयाका प्रयोग करनेवाले स्वपरके हितके साधक, शिक्षक दो लाख चौवन हजार तीन सौ पचास, वहाँ ग्यारह हजार अवधिज्ञानी थे। जिनके ऊपर देवताओंने पुष्पांजलि डाली है, ऐसे केवलज्ञानी तेरह हजार, सद्ध्यानमें लीन विक्रिया-ऋद्धिधारी अठारह हजार चार सौ। मदका नाश करनेवाले

---

५. A P कोंडलं। ६. A सगंधो वि। ७. P मरालाण्णिसेया। ८. P सुहासाहि भासाहि। ९. K दिव्वत्थ° but gloss द्रव्यार्थ°। १०. A P भासइ।

१२. १. A P सउ जि ससोलह। २. A P एयारह°।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

दहसहास चउरो[3] सयइं मणपज्जवहहं[4] हयमयइं ।
तेत्तिय पुणु पण्णासजुय वाइ तासु णिप्पण्णसुय ।
लक्खइं गुत्तिसमय गणमि सहसइं अवरु तीस भणमि ।
सरिसइं[5] बंभीसुंदरिहिं तहु[6] जायइं संजमधरिहिं ।
णिच्चमेव हयलियकरहं तिण्णि लक्ख सावयणरहं ।
पंचलक्ख घरचारिणिहिं णारिहिं अणुवयधारिणिहिं ।
विहरंतहु तहु महिठाणाइं वीसवरिसपरिहीणाइं[7] ।
पुव्वहं[8] घडिमालाहयइं एक्कवीसलक्खइं[9] गयइं ।
कायविसग्गें थिउ वियडि माससेसु[10] संमेयतडि ।
मासि पहिल्लइ पक्खि सिइ एयारसिदिणि[11] दिण्णसिइ ।
मघणक्खत्तें[12] णिव्वुयउ सहुं जोइहिं णिक्कलु हुयउ ।
देविंदहिं जयकारियउ पुज्जिवि[13] साहुक्कारियउ ।
अट्ठगुणालंकिउ सुमइ देउ मज्झु अवियलें सुमइ[14] ।

घत्ता—भरहेण अण्णहिं मि परमेसरु सो वण्णिज्जइ ।
सइं अमराहिवेण गुणपुप्फयंतु[15] जसु गिज्जइ[16] ॥१२॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सुमइणिव्वाणगमणं णाम दुचालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४२॥

॥ सुमइचरियं समत्तं ॥

मनःपर्ययज्ञानी दस हजार चार सौ, श्रुतमें निष्णात वादी मुनि दस हजार चार सौ पचास। ब्राह्मी सुन्दरीके समान उनकी आर्यिकाएँ तीन लाख तीस हजार थीं। नित्यप्रति हाथ जोड़े हुए श्रावक तीन लाख थे। अनुव्रत धारण करनेवाली श्राविकाएँ पाँच लाख थीं। धरतीके स्थानोंमें परिभ्रमण करते हुए उनकी बीस वर्ष कम, घटिकामालासे आहत इक्कीस लाख पूर्व वर्ष निकल गये। एक माह बाकी रहनेपर वह सम्मेदशिखरके विकट तटपर कायोत्सर्गमें स्थित हो गये। चैत्रशुक्ला ग्यारसके दिन, वह मोक्षलक्ष्मीको देनेवाले मघा नक्षत्रमें दूसरे मुनियोंके साथ निर्वाणको प्राप्त हुए (निष्पाप हुए)। देव-देवेन्द्रोंने उनका जयजयकार किया और पूजा कर साधुवाद दिया। आठ गुणोंसे अलंकृत सुमतिदेव मुझे अविकल सुमति दें।

घत्ता—स्वयं देवेन्द्रके द्वारा जिनके गुणरूपी पुष्पवाले यशका गान किया जाता है, ऐसे उन परमेश्वरका भरत तथा दूसरोंके द्वारा भी वर्णन किया जाता है ॥१२॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका सुमतिनिर्वाणगमन नामका बयालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४२॥

---

३. P चउरो य सइं । ४. A मणपज्जवयहं गयमयइं; P मणपज्जवहु वि हयमयइं । ५. P सरसइं । ६. A omits तहु । ७. A परहीणाइं । ८. P पुण्णाहं । ९. P एक्कपुव्वलक्खइं । १०. A माससेत्तु । ११. A एगारसिं । १२. A P महणक्खत्तें । १३. A अंगिदेहिं सक्कारियउ; P अंगिदेहिं संकारियउ । १४. P देउ मज्झु विमलमइ । १५. A पुप्फयंत । १६. A किज्जइ ।

संधि ४३

दप्पिट्ठदुट्ठपाविट्ठजगजणियभावु दावियपहु ॥
कम्मट्ठगंठिणिट्ठवणखमु पणवेप्पिणु पउमप्पहु ॥ध्रुवकं॥

१

णिरंतरु जो तवलच्छिणिकेउ गइंदखगिंदविसंकियकेउ ।
परज्जिउ जेण रणे झसकेउ समुग्गउ[1] जो कुगईखयकेउ ।
णियायमसग्गणिओइयसीसु[2] अपासु अवासु अणीसु रिसीसु ।
वियड्ढविवाइविइण्णवियारु रयासववारु विमुक्कवियारु ।
विवज्जिउ जेण वियालविहारु सया[3] गलकंदलु जस्स विहारु ।
कडीयलि मेहल णेय णिबद्ध ण कामिणि जेण सणेहणिबद्ध ।
खयासरिसित्तसरोसहुयासु सुझाणदवग्गिसिहोहहुयासु ।
भडारउ जोरुणपंकयभासु अमिच्छअतुच्छपयापियभासु[4] ।
पमेल्लिउ जो विहिणा विविहेणं णमामि तमीसमहं तिविहेण[5] ।
समिच्छियणिक्खयसोक्खपयस्स[6] णइच्छियविप्पवियप्पपयस्स[7] ।
दुगुंछियकण्हमयाइणयस्स[8] भणामि समायरियं इणयस्स[9] ।

सन्धि ४३

दर्पसे भरे, दुष्ट और पापी जगमें शुभभाव उत्पन्न करनेवाले पथ-प्रदर्शक अष्टकर्मोंकी गाँठको नष्ट करनेमें सक्षम पद्मप्रभुको मैं प्रणाम करता हूँ।

१

जो निरन्तर तपरूपी लक्ष्मीके निकेतन हैं, जिनका ध्वज गजेन्द्र, गरुड़ और वृषभेन्द्रसे अंकित है, जिन्होंने युद्धमें कामदेवको पराजित कर दिया है, जो कुगतिके क्षयके लिए उद्यत हैं, जिन्होंने शिष्योंको अपने आगममार्गमें नियोजित किया है, जो बन्धनरहित, गृहविहीन, अनीश, और ऋषीश्वर हैं। जिन्होंने विदग्ध विवादियोंसे विचार किया है, जो कर्मोंके आस्रव-द्वारको रोकनेवाले और विकारोंसे मुक्त हैं। जिन्होंने असमयका विहार करना छोड़ दिया है, जिनका गला सदैव हारसे रहित है। जिन्होंने कटितलपर मेखला नहीं बाँधी। जिनसे कामिनी स्नेहबद्ध नहीं है, जिन्होंने क्रोधरूपी ज्वालाको क्षमारूपी नदीसे शान्त कर दिया है, जिन्होंने सुध्यानरूपी दावाग्निके शिखासमूहमें इच्छाओंको होम दिया है, जो अरुण कमलोंकी कान्तिवाले हैं, जिनकी भाषा मिथ्यात्व रहित प्रचुर जनताके लिए प्रिय है, जो विविध कर्मोंसे रहित हैं, मैं उन ईशको तीन प्रकारसे प्रणाम करता हूँ। जिन्होंने विप्रोंके विकल्पोंसे युक्त (संशयापन्न) पदकी इच्छा नहीं की है, जिन्होंने अक्षय सुखपदकी इच्छा की है, जिन्होंने कृष्ण मृगाजिनकी निन्दा की है, मैं ऐसे इनके (पद्मप्रभुके)

---

१. १. A सग्गउ। २. A णियागम°। ३. A सयामयकंदलु। ४. A P पयासियभासु। ५. A तिविहेण। ६. A °अक्खयसोक्खपयासु। ७. A °पयासु। ८. P कण्हमयं अइणस्स। ९. P इणमस्स।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भविस्सजिणिंद अणिंदसमीह अहो सुणि सेणियराय णिसीह ।
जगुत्तमु गोत्तमु भासइ एंव सुणंति महोरय दाणव देव ।

घत्ता—धादइसंडइ दीवम्मि वरे जणगोहणसंकिण्णइ ॥
तहिं पुव्वमेरुपुव्वइ दिसइ पुव्वविदेहि रवण्णइ ॥१॥

२

सयामयणाहिसुगंधसमीरि सुसीयहि सीयहि दाहिणतीरि ।
सकच्छउ वच्छउ देसु विसालु मरालविहंगविहिण्णमुणालु ।
समीवसमीवपरिट्ठियगामु पैरीणपवासिपऊरियकामु ।
फलोणयछेत्तणियत्तणरिद्धु पिओ जहिं रोसणियत्तणणिद्धु ।
तहिं पुरि अत्थि पसिद्ध सुसीम दुवारविलंबियमोत्तियदाम ।
दुभूमितिभूमिसमुण्णयणीड महंतफुरंतसुवण्णकवाड ।
सरोरुहकेसरलग्गदुरेह जिणालयचूलियचुंबियमेह ।
हरीमणिबद्धमणोहरमग्ग णिभोयविसेसविसेसियसग्ग ।
तहिं अपरज्जिउ णाम णरिंदु करिंदु व दाणि कुलंबरचंदु ।
रईसु व भाविणिदुल्लहसंगु सरासणु जेम गुणेणे वियंगु ।

सुन्दर चरितको कहता हूँ। उत्तम और सम्यक् चेष्टावाले हे भावी जिनेन्द्र, नृसिंह, हे श्रेणिक सुनो। विश्वमें श्रेष्ठ गौतम इस प्रकार कहते हैं और उसे नाग, दानव और देव सुनते हैं।

घत्ता—धातकीखण्डद्वीपमें मनुष्यों और गोधनसे परिपूर्ण सुन्दर पूर्वविदेह, पूर्वसुमेरु पर्वतके पूर्वमें है ॥१॥

२

अत्यन्त शीतल सीता नदीके, कस्तूरीमृगोंसे सुगन्धित समीरवाले दक्षिण तटपर, सीमोद्यानोंसे सहित विशाल वत्स देश है, जिसमें हंसपक्षी मृणालोंको छिन्न-भिन्न कर देते हैं, जहाँ ग्राम अत्यन्त पास-पास बसे हुए हैं, जहाँ थके हुए प्रवासियोंकी कामनाएँ पूरी की जाती हैं, जो फलोंसे झुके हुए खेतोंके नियन्त्रणसे समृद्ध हैं, जहाँ प्रिय क्रोधके नियन्त्रणसे स्निग्ध हैं। ऐसे उस वत्स देशमें सुप्रसिद्ध सुसीमा नगरी है, जिसके द्वार-द्वारपर मोतियोंकी मालाएँ लटकी हुई हैं, जहाँ दो या तीन भूमियों (मंजिलों) से ऊँचे मकान हैं, खूब चमकते हुए स्वर्ण किवाड़ हैं, जहाँ भ्रमर कमलोंपर मड़रा रहे हैं तथा जिनमन्दिरोंके शिखर आकाशको चूम रहे हैं। जहाँ हरितमणियों (मरकत) मणियोंसे निबद्ध सुन्दर मार्ग हैं। मनुष्योंके भोग विशेषोंसे जो स्वर्गसे विशिष्ट हैं। ऐसी उस नगरीमें अपराजित नामका राजा था, जो करीन्द्रकी तरह दानी (मदजल और दानवाला) अपने कुलरूपी आकाशका चन्द्र था। कामदेव होकर भी जिसका संग, कामिनियोंके लिए दुर्लभ था। धनुषके समान जो गुणोंसे वक्र था, जो तेल की तरह खल (खली और दुष्ट) से रहित और स्नेहपूर्ण

२. १. A °सुगंधि°; P °सुयंध° । २. P तीरिणि । ३. A मरालमुहग्ग° । ४. A पहीण° । ५. A °पवासियऊरिय°; P °पवासियपूरिय° । ६. A पउंजहि । ७. P कुलंबरइंदु । ८. P भामिणिदुण्णयसंकु । ९. P गुणेण अवंकु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खलुं[10]ज्झिउ तेल्लु व णेहलभोउ   णहं व समेहु णिवेसियलोउ ।
सविग्गहु सद्दु[11] व लक्खणवंतु   पउंजइ संधि वियाणइ मंतु ।
घत्ता—अण्णहिं दिणि तेण णराहिवेण चिंतिउं होउ पहुच्चइ ॥
जं पुरउं पमेल्लइ वल्लहउं अप्पणु तं लहु मुच्चइ ॥२॥

३

अरे जडजीव समासमि[1] तुज्झु   ण कस्स वि हं जगि को[2] वि ण मज्झु ।
गयालसु लालसु लोहरसेण[3]   णिरंतरयं णियकज्जवसेण ।
जणेण जणो पणविज्जइ तेंव   सजीउ वि[4] तासु णरक्खइ जेंव ।
मयंग तुरंगम किंकर कासु   फलक्खइ पक्खि व जंति दिसासु ।
ण मित्तु कलत्तु ण पुत्तु ण बंधु   सरीरु वि एउं[5] विणासि दुगंधु ।
विचिंतिवि एंव णिरुत्तु मणेण   पकोक्किउ[6] पुत्तु सुमित्तु खणेण ।
सवित्ति धरित्ति णिवेइय तासु   धराभँर[7]धारणु कंधरु जासु ।
गुरुं पिहियासवयं[8] पणवेवि   थिओ जिणदिक्खवयक्खमु होवि ।
दसेक्कसुयंगवयाइं धरेवि   पुरायरगामसयाइं चरेवि ।
सुपासुय[9]भोयणुभक्खु गसेवि   अपंडयथीपसुवासि वसेवि ।
छुहा भयं[10] मेहुणु णिद्द मुएवि   सणाणजलेण कलंकु धुएवि ।

भोगवाला था, जो आकाशके समान समेह (मेघ और बुद्धिसे सहित); और लोको निवेशित करनेवाला था। जो शब्दकी तरह विग्रह-रहित (संघर्ष और पदविग्रहसे मुक्त) था, व्याकरणकी तरह सन्धिका प्रयोग करता था और मन्त्रको जानता था।

घत्ता—दूसरे दिन, राजाका सोचा पूर्ण होता है। यदि वह प्रिय नगरको छोड़ता है तो खुद भी मुक्त हो जायेगा ॥२॥

३

अरे जड़ जीव, मैं तुझसे कहता हूँ कि दुनियामें मैं किसीका नहीं हूँ और कोई मेरा नहीं है। लोभ रस और निरन्तर अपने-अपने कार्यके वशसे गतालस और लालची है। मनुष्यके द्वारा मनुष्यको इस प्रकार प्रणाम किया जाता है कि उसके द्वारा अपने जीव की भी रक्षा नहीं की जाती। गज, अश्व और अनुचर किसके? फल क्षय होनेपर पक्षियोंके समान दिशान्तरोंमें चले जाते हैं। न मित्र, न कलत्र, न पुत्र और न बन्धु, यह शरीर विनाशी और दुर्गन्धयुक्त है। अपने मनमें अच्छी तरह यह विचारकर उसने एक क्षणमें अपने पुत्र और मित्रको पुकारा और वृत्ति सहित धरती उसे सौंप दी कि जिसके कन्धे धराका भार उठानेमें समर्थ थे। गुरु पिहिताश्रवको प्रणाम कर, जिनदीक्षा और व्रतोंमें सक्षम होकर वह स्थित हो गया। ग्यारह श्रुतांग व्रतोंको धारण कर, सैकड़ों नगरों और ग्रामोंमें विचरण कर, प्रासुक भोजनका आहार ग्रहण कर, नपुंसक, स्त्री और पुंस्त्वकी वासनाको वशमें कर, भूख, भय, मैथुन और नींदको छोड़कर (आहार निद्रा भय और

१०. A खलुज्झियतेल्लु व णेहलभोउ; P खलुज्झिय तेलु व्व णेहलु भाउ। ११. P सद्दु सलक्खणवंतु।
३. १. A पयासमि। २. P ण को वि। ३. P मोहरसेण। ४. A तासु वि। ५. A एम विणासि। ६. A मित्तु सुपुत्तु। ७. A धराभरधारण; P धराभरु धारणु। ८. A पिहियासव णं पणवेवि। ९. A सुफासुय। १०. A छुहामयमेहुणु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सहेवि परीसह भीमुवसग्ग[11] मुणित्तणवित्ति चिणेवि समग्गो[12]।
चएप्पिणु दुव्वहसीलवहाउ णिरिक्कवहूणिवभत्तकहाउ।
तवेण करेवि कलेवरु खामु णिबंधिवि गोत्तु जिणेसरणामु।
विहंडिवि छंडिवि चंडु तिदंडु [13]मओ पमुएवि चउव्विहपिंडु।

घत्ता—अवराइउ रिसि उवरिल्लियहि णरवंदहिं णिरवज्जहिं ॥
पीइंकर[14]णामविमाणवरि सुरु जायउ गेवज्जहिं ॥३॥

४

गिहीगुणठाणवएहिं विमीस तहिं तहु आउ[1] महोवहि वीस।
स[2]संतहु अंतरु तेत्तिय पक्ख दुहत्थ[3]पमाणिय बोंदि वलक्ख।
ण को वि महीयलि संणिहु जासु दिणेहिं अहंसुरणाहहु तासु।
छमासु[4] परिट्ठिउ आउसु जाव इणं घणवाहि पजंपइ ताव।
पुरीकउसंबिवईसु मणीसु[5] धराधरणो[6] धरणीसु महीसु।
सुसीम णियंबिणि वल्लह तस्स[7] अखंडसुहारुइ[8]सोम्ममुहस्स।
भिसं भरहेसरवंसरुहस्स करेहि दिहिं णिलयं व णिवस्स।
अहो णिहिणाह विहंसियसोउ पहोसइ णंदणु णंदियलोउ।
तओ धणिणा पुरुपेसणरम्मु विणिम्मिउं भम्मविणिम्मियहम्मु।

मैथुन), अपने ज्ञानरूपी जलसे कलंकको धोकर, भयंकर उपसर्ग और परीषह सहन कर, सम्पूर्ण रूपसे मुनीन्द्रवृत्तिको स्वीकार कर, दुर्वहशीलका नाश करनेवाली चोर, स्त्री और नृपभक्तिकी कथाओंका त्याग कर, तपसे अपने शरीरको क्षीण बनाकर, तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध कर, प्रचण्ड त्रिदण्डको खण्डित कर और छोड़कर, तथा चार प्रकारके आहारका त्याग कर वह मृत्युको प्राप्त हुआ।

घत्ता—वह अपराजित मुनि, मनुष्योंके द्वारा वन्दनीय निरवद्य ग्रैवेयक विमानोंमें-से तीसरे प्रीतंकर विमानमें देव उत्पन्न हुए ॥३॥

४

गृहस्थोंके ग्यारह व्रतोंसे मिली हुई बीस सागर, अर्थात् इकतीस सागर प्रमाण उनकी आयु थी। उतने ही पक्षोंमें अर्थात् इकतीस पक्षोंमें वह साँस लेते थे। उनका शरीर दो-दो हाथ प्रमाण और शुक्ल था। जिसके समान धरतीपर कोई नहीं था। उस अहमेंद्र देवराजके कई दिनोंके बाद छह माह आयु शेष रह गयी। तब इन्द्र कुबेरसे कहता है कि "कौशाम्बी नगरीका पृथ्वीको धोखा करनेवाला मनस्वी राजा धरण है। सम्पूर्ण चन्द्रके समान सौम्य मुखवाले उसकी सुसीमा नामकी प्रिय पत्नी है। वह भरतेश्वरके वंशका अंकुर है। उसके लिए हे कुबेर, तुम भाग्य और घरकी रचना करो। हे कुबेर, उनके शोकका उपहास करनेवाला और लोकको हर्ष उत्पन्न करनेवाला पुत्र होगा।" तब कुबेरने इन्द्रके आदेशसे रम्य स्वर्णप्रासाद बनाया।

११. A °वसग्गि। १२. A समग्गि। १३. A P मुओ। १४. A °पोईकरणाम; P पोयंकरमाण°।
४. १. A आव। २. A सुसंतहु। ३. P दिवड्ढयहत्थय। ४. A P छमास। ५. A मुणोसु। ६. A धरणोद्धरणे। ७. A तासु। ८. A °सुहायरसोम्ममुहासु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—अण्णहिं वासरि रायाणियइ णिसिविरामि चवलक्खिय ॥
पासायतलिमतलसुत्तियइ सिविणयमाल णिरिक्खिय ॥४॥

५

सुहाहिमसारयणीरयवण्णु　　पईहरपाणि झलज्झलकण्णु ।
गलंतमओलकवोलु करिंदु　　णियच्छिउ जंगमु णाइं धरिंदु ।
खरेहिं खुरेहिं धरग्गु दलंतु　　बलाल गविंद बलेण खलंतु ।
विसेसविसेसु विसाण धुणंतु　　णियच्छिउ संमुहु एंतु डरंतु ।
गिरिंदगुहाकुहरंतविणित्तु　　रुसारुणदारुणदूसहणेत्तु ।
लयादललोललला वियजीहु　　णहालिफुरंतु णियच्छिउ सीहु ।
णिसावइसेय दिसागयकंति　　णियच्छिय लच्छि सरोवरि ण्हंति ।
अणेयपसूयकरंबयगुत्थु　　णियच्छिउ दामयजुम्मु णहत्थु ।
णिहित्ततमीतमु णिम्मलु चंदु　　णियच्छिउ तिव्वु तवंतु दिणिंदु ।
पमत्त रमंत द्रहंति तरंत　　णियच्छिय मच्छ चलंत वलंत ।
महुप्पल कुंभलएसु णिसण्ण　　णियच्छिय कुंभ वरंभपउण्ण ।
अलीरवफुल्लियपोमरयालु　　विहंगसिलिंबयचक्खियणालु ।
णिमज्जणकीलणलीण गइंदु　　णियच्छिउ तामरसायरु रुंदु ।
पदंसियभीयरमीणरउद्दु　　णियच्छिउ वारिरउद्दु समुद्दु ।

घत्ता—दूसरे दिन रात्रिके अन्तिम प्रहरमें प्रासादके अन्तिम तलमें सोते हुए रानीने स्वप्नमाला देखी ॥४॥

५

जो सुधा, चन्द्र और शरद्कालीन मेघके समान सफेद रंगका है, जिसकी सूँड़ लम्बी है, जो हिलते हुए कानोंवाला है, और जिसके कपोलभागसे मद झर रहा है ऐसा गजराज देखा, जो मानो जंगम पहाड़ हो। अपने तीव्र खुरोंसे धरतीके अग्रभागको रौंधता हुआ, बलशाली, बलसे स्खलित होता हुआ, सींग धुनता हुआ, सामने आता हुआ, गरजता हुआ विशेष वृषभेन्द्र देखा। पहाड़ोंकी गुफाओं और कुहरोंमें रहनेवाला, क्रोधसे अरुण और भयंकर नेत्रवाला लतादलके समान चंचल जीभको हिलाता हुआ, नखावलीसे भास्वर सिंह देखा। चन्द्रमाकी तरह श्वेत और दिग्गजोंकी कान्तिवाली लक्ष्मीको सरोवरमें स्नान करते हुए देखा। अनेक पुष्पसमूहोंसे गूँथी हुई मालाओंका युग्म आकाशमें देखा। रात्रिके अन्धकारको नष्ट करनेवाला निर्मल चन्द्र देखा। तीव्रतम तपता हुआ सूर्य देखा, प्रमत्त रमण करती हुई, सरोवरमें तैरती हुई, चलती मुड़ती हुई मछलियाँ देखीं। कुम्भमालामें रखा हुआ मधु कमलोंसे ढका हुआ उत्तम जलसे परिपूर्ण घड़ा देखा, जिसमें डूबने और क्रीड़ा करनेमें गजेन्द्र लीन है, जो भ्रमरोंके शब्द और पुष्पित कमलोंके रजसे युक्त है, जिसमें हंसोंके बच्चे मृणाल खा रहे हैं, ऐसा विशाल सरोवर देखा। जो दिखाई देनेवाले

९. A °तलि सुत्तियइ; P °तले सुत्तिइ ।

५. १. A कवोल° । २. P गइंद । ३. A P विसेसु विसेसु । ४. A P रडंतु । ५. A P गुंथु । ६. A reads this line after चक्खियणालु below. ७. A भमंतु । ८. A P दहंति । ९. AP अलीरउ । १०. A कीलणसीलु; P कीलणणीलु । ११. P °रसायरु । १२. A P रवद्दु ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सुहावहु सुट्ठु [13]पैरिट्ठिउ इट्ठु णियच्छिउ विट्ठरु सीहणिविट्ठु ।
णियच्छिउ अच्छरणाहविमाणु [14]अहीसरमंदिरु मेरुसमाणु ।
णियच्छिउ वोमदिसाणणभासि पहाइ अणूण मणीण य रासि ।
[15]पैवित्तु पलित्तु घिएण व सित्तु महंतु जलंतु [16]णहंग्गि मिलंतु ।
णियच्छिउ चिंचि णरच्चियदेहु पहायइ गंपि णराहिवगेहु ।

घत्ता—णियदइयहु देविइ वज्जरिउं जं जिह दंसणु दिट्ठउं ॥
तुह होसइ तणुरुहु परमजिणु तेण ताहि फलु सिट्ठउं ॥५॥

६

पुरंदरणारि हिरी धवलच्छि सिरि दिहि कंति पराइय लच्छि ।
पसाहिउ सोहिउ सीमहि गब्भु रिदुंत्तिउ वुट्ठउ हेमवरंभु ।
हिमागमि संगमि माहि पवण्णि णहे दहदिव्वलयम्मि पसण्णि ।
असेयहि छट्ठिहि रत्तिविरामि ससंकदिवायरसंगि [3]सकामि ।
इहाहिवरूवधरो वलिरेहि थिओ मुणिणाहु सम[5]रिदेहि ।
भुयंग णरामर मंदिरु आय रिहुच्छिण उच्छवि [4]सुंकियमाय ।
दहट्ठ जि पक्ख सिणा दुहहार घरंगणि पाडिय कब्बुरधार ।
गए सुमईसि महिड्ढिसमेहिं असीदहकोडिसहासपमेहिं ।
समायइ कत्तिइ कंदवियोइ अचंदिणतेरसि तट्ठयजोइ ।

भीषण मत्स्योंसे रौद्र है ऐसे जलसे भयंकर समुद्र देखा । सुखावह सुन्दर अच्छी तरह स्थापित सिंहासन देखा । देवोंका विमान देखा, और मेरुके समान नागराजका लोक देखा । आकाश और दिशाओंमें चमकती हुई प्रभासे अत्युत्तम मणियोंकी राशि देखी । पवित्र प्रदीप्त घीसे सिंचित महान् आकाशसे मिलती हुई अग्नि देखी, प्रभातमें मनुष्योंके द्वारा पूजित राजाके घर जाकर—

घत्ता—देवीने अपने पतिसे जिस प्रकार स्वप्नदर्शन किया था वैसा कहा । उसने उसे फल बताते हुए कहा कि उसका पुत्र परम जिन होगा ॥५॥

६

इन्द्रकी नारियाँ धवल आँखोंवाली ह्री-श्री-धृति-कान्ति और लक्ष्मी आयीं और स्वामीके गर्भका प्रसाधन तथा शोधन किया । छह माह तक स्वर्णवर्षा हुई । फिर हिमागमवाले माघ माहके कृष्णपक्षमें षष्ठीके दिन जब कि दिशाचक्र निर्मल था, रात्रिके अन्तमें चन्द्र और सूर्यके सकाम योगमें गजरूपमें त्रिबलिसे शोभित अपनी माताकी देहमें भगवान् स्थित हो गये । नाग, मनुष्य और देव उनके घर आये । और इन्द्रके साथ उत्सवमें उन्होंने मायाको खण्डित कर दिया । कुबेरने अठारह पक्षों तक लगातार गृहप्रांगणमें दुःखको दूर करनेवाली स्वर्णवृष्टि की । सुमतिनाथके बाद महाऋद्धियोंसे परिपूर्ण नब्बे हजार करोड़ सागर बीत जानेपर कार्तिक माहके कृष्णपक्षकी

१३. A P पणिट्ठियदुट्ठु । १४. A P अहीसरगेहु गिरिंदसमाणु । १५. A पलित्तु पवित्तु घिएण; P पदीवि पलित्तु घिएण । १६. A णहग्गमिलंतु ।

६. A °णारिहिं घो धवलच्छि । २. A उडुत्तिउ । ३. A P °संगमिकामि । ४. A सुंकिय । ५. A महमड्ढिसमेहिं । ६. A तट्ठिय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुओ परमेसु सुहाइं जणंतु असंखसहाँसु महामहवंतु ।
पुणाइउ जीय जिणिंद भणंतु णहं तुरएहिं गएहिं पिहंतु ।
पुरं पणवेवि णिवासि विसेवि सुहीहियथंतरि भत्ति करेवि ।
जिणम्महि हत्थि परो सिसु देवि जगत्तयणाहु णवेवि लएवि ।
पवज्जियढक्कु कमक्कमियंकु णिओइउ वारणु चल्लिउ सक्कु ।
गओ गहमंडलु लंघिवि ताव सिला इगसिंचणमेइणि जाव ।

घत्ता—तहिं मेरुसिंगि संणिहिउ जिणु पाणिउ सुरयणु आणइ ॥
कल्हारपिहियघडसहसकरु सइं पुलोमिपिउ ण्हाणइ ॥६॥

७

वियाणिवि ण्हाणिवि ण्हाणविहीइ पुणो अवयारु करेवि महीइ ।
पणच्चिवि अग्गइ बालु चलेहिं थुणेवि सुरेहि गुणालकुलेहिं ।
समप्पिउ मायहि पंकयणेत्तु सुलक्खणवंजणरंजियगत्तु ।
गयामयभोइ सवासपएसु पवड्ढिउ तायहरम्मि जिणेसु ।
ण वण्णहु सक्कवि तासु कयाइं सयद्ध णिउत्तइं दोण्णि सयाइं ।
सरासणयाहं सरीरपमाणु रुईइ विरेहइ णं णवभाणु ।
समं णरडिंभयणेण रमेवि इसीसमपुव्वहं लक्ख गमेवि ।
वयंकसमंकिउ सुण्णचउक्क इणं पि दिणेहि पमाणु पढुक्क ।

तेरसके दिन त्वष्ट्रायोगमें परमेश्वर सुखोंको उत्पन्न करते हुए उत्पन्न हुए। असंख्य देव और पांच कल्याणकार्यको करनेवाला इन्द्र फिर आया, 'हे जिनेन्द्र जीवित रहो' यह कहते हुए और गजों तथा अश्वोंसे आकाशको आच्छादित करते हुए, फिर प्रणाम कर और घरमें स्थापित कर, बन्धुजनोंके हृदयके भीतर भक्ति कर जिनमाताके हाथमें दूसरा शिशु देकर, त्रिलोकनाथको प्रणाम कर और लेकर, जिसपर ढक्का बज रहा है, और जो सूर्यका अतिक्रमण करनेवाला है, ऐसे गजको उसने प्रेरित किया, और इन्द्र चला। ग्रहमण्डलका उल्लंघन करता हुआ वह वहाँ पहुँचा जहाँ जिन भगवान्‌की अभिषेकभूमि पाण्डुशिला थी।

घत्ता—उस सुमेरु पर्वतपर जिन भगवान्‌को स्थापित कर दिया गया। सुरसमूह जल लाता है, कमलोंसे आच्छादित घड़े जिसके हजार हाथोंमें हैं ऐसा इन्द्र उनका अभिषेक करता है ॥६॥

७

जानकर और स्नानविधिसे स्नान कराकर पुनः धरतीपर अवतरण कर, बालकके आगे नृत्य और स्तुति कर गुणालकुलके देवोंने लक्षणों और सूक्ष्मव्यंजनोंसे शोभित-शरीर कमलनयन बालक माताके लिए सौंप दिया। देव अपने-अपने घर चले गये। जिनेश अपने पिताके घरमें बढ़ने लगे। उनकी लीलाओंका मैं वर्णन नहीं कर सकता। उनके शरीरका प्रमाण ढाई सौ धनुष ऊँचा था। कान्तिमें वह ऐसे शोभित थे मानो नवसूर्य हों। इस प्रकार मानव बालकोंके साथ रमण करते हुए, उनके सात लाख पचास हजार पूर्व समय बीत गया। इतने दिनोंका मान (प्रमाण) पूरा

७. A T सुहासु। ८. A P T जिणंबहि। ९. A °ढक्क। १०. A कमक्कमियंकु।
७. १. A P read *a* as *b* and *b* as *a*. २. A P बाहुबलेहिं। ३. A P गुणाण। ४. A P °विजण°।
५. A ण वण्णहं सक्कमि; P ण वण्णवि सक्कमि। ६. A P सरीरु पमाणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तओ तहिं पत्तु सयं सयमण्णु कुमारु णिवेसिउ रज्जि पसण्णु ।
दु एक्कु जि बिंदु[७]य पंच जि देहि [८]पुणो वि सिसुत्तरसंख गणेहि ।
घत्ता—इय पुव्वकालु पुहईसरहु गउ सुहुं सिरि माणंतहु ।
विण्णवियउ ता किंकरे[९]णरिण कर मउलिवि पणवेवि तहु ॥७॥

८

णराहिव दीहरपासणिरुद्धु करीसरु वारिणिबंधणि बंधु[१] ।
समुण्णयकुंभु णहग्गविलग्गु धराहिव जाणवि तुम्हहुं जोग्गु ।
तओ परिचिंतिउं दिव्वें[२]णिवेण पमग्गियकेवलणाणसिवेण ।
ण विंझसरीजलकील मणोज्ज ण सल्लइपल्लवभोज्ज ण सेज्ज ।
ण कंदल मिट्ठ ण कोमलवेणु ण मग्गविलग्गिरबालकरेणु ।
करेणुरई करताडणु णत्थि सफासवसेण विडंबिउ हत्थि ।
दढंकुसघट्टणु फं[३]सणिरोहु सहेइ वराउ वियंभियमोहु ।
ण एक्कु इहिंदु मए इह वुत्तु अहो जणु दुक्कियदेहणि खुत्तु ।
ण णिग्गइ जग्गइ किं पि ण मूढु सिरिमयणिद्दपरव्वसु मूँ[४]ढु ।
अहं पि हु मोहिउ किं परु मोक्खु दुमाणवु चम्मविणिम्मिउ रुक्खु ।
विणासिरु जाणिवि पेच्छमि लोउ विरप्पें[५]मि तो विण भुंजमि भोउ ।
असासउं रज्जु असुंदरु अंति ण इच्छमि अच्छमि गंपि वणंति ।

होनेपर, तब फिर वहाँ इन्द्र स्वयं आया और प्रसन्न कुमारको राज्यमें प्रतिष्ठित किया। फिर दो और एकके ऊपर पांच बिन्दु दो और तब शैशवके बादकी संख्या गिनो।

घत्ता—इतने वर्ष पूर्व (इक्कीस लाख पूर्व वर्ष) वर्ष लक्ष्मीका सुख मानते हुए राजाके निकल गये तो अनुचर मनुष्यने हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए राजासे निवेदन किया ॥७॥

८

हे नराधिप, जो लम्बे पाशसे निरुद्ध था, हाथियोंके आलानमें बँधा हुआ था और जिसका कुम्भस्थल समुन्नत था, ऐसा वह महागज आकाशके अग्रभागसे जा लगा है (मर गया है)। अब तुम्हारे योग्य बातको मैं जानता हूँ। तब जिसने केवलज्ञान और शिवकी याचना की है, ऐसे दिव्य राजाने विचार किया—"विन्ध्या नदी (नर्मदा) की जल-क्रीड़ा सुन्दर नहीं है, शल्यकी लताके पल्लवों को भोजन और सेज भी ठीक नहीं हैं, न कन्दल मीठे हैं और न कोमल वेणु। न मार्गमें लगी हुई बाल करेणु अच्छी है, अब उसमें हथिनीका प्रेम और सूँड़से प्रताड़न नहीं है। स्पर्शके वशीभूत होकर हाथी विडम्बनामें पड़ गया है। बढ़ रहा है मोह जिसका, ऐसा यह बेचारा गज दृढ़ अंकुशों-का संघर्षण एवं स्पर्शका निरोध सहन करता है, मैं यह कहता हूँ कि अकेला गजेन्द्र नहीं, आश्चर्य है लोग भी पापोंकी कीचड़में फँसे हुए हैं। मूर्खजन न निकलता है और न थोड़ा भी जागता है। मूर्ख लक्ष्मीके मद और निद्राके वशीभूत है। अरे मैं भी तो मोहित हूँ, श्रेष्ठ मोक्ष क्या? खोटा मनुष्य चर्मसे निर्मित और रूखा है। लोकको विनश्वर जानता हूँ और देखता हूँ। तो भी विरक्त नहीं होता, और भोग भोगता हूँ। राज्य अशाश्वत है और अन्तमें सुन्दर नहीं होता। मैं इसे नहीं चाहता। वनमें जाकर रहता हूँ।"

७. P पंच जि बिंदुय । ८. P चयारि । ९. A °णरिणा ।

८. १. A P बद्धु । २. A दिव्वु । ३. A पासणिरोहु । ४. A P वूढु । ५. A विरप्पवि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तावायहिं लहुं लोयंतियहिं णाहहु वयणु सम[6]त्थिउ।
अंबरु धावंतहिं दणुयरिहिं चित्तचीरु णावइ थिउ ॥८॥

९

गिरि व्व जलागमणें जलएहिं　　सुरेहिं पहू ण्हविओ कुलएहिं।
समच्चिउ लोयगुरू कुडएहिं　　थुओ दुवईवयणुक्कुडएहिं।
सुवण्णम[1]याइ णरच्छिपियाइ　　महिंदणियाइ गओ सिवियाइ।
वणंतरु चारु पफुल्लियचारु　　सकंकणु हारु पमोल्लिवि दोरु।
खमाविउ लोउ सिरे कउ लोउ　　भवण्णवपोउ विसुद्धतिजोउ।
करेप्पिणु छट्टु वि सुट्ठु वरिट्ठु　　पदिट्ठसइट्ठु समासियणिट्ठु।
समट्ठममासि ज[2]गंतपयासि　　घणागमणासि हिमालपवासि।
दिणे असियम्मि सुतेरसियम्मि　　दिणेसरि जाम दुयालसियम्मि।
विणिग्गउ हत्थु पहूइय चित्त　　अलंकिय तद्दिणि संजमज[3]त्त।
सुयाइं मुणेवि रयाइं धुणेवि　　महव्वय लेवि थिओ रिसि होवि।
समं सकिवाहं सहासु णिवाहं　　तवंकिउ ताहं ण मच्छरु जाहं।

घत्ता—बारहविहतवणिव्वा[4]हणहि धम्म[5]जोय[6]परिरक्खहि॥
पउमप्पहु वड्ढमाणणयरि देउ प[7]इट्ठउ भिक्खहि ॥९॥

घत्ता—तब लोकान्तिक देवोंने आकर प्रभुके वचनोंका समर्थन किया। आकाशमें दौड़ते हुए देवदानवोंने जैसे अपने चित्तरूपी चीरको स्थिर कर लिया ॥८॥

९

जिस प्रकार वर्षाकाल आनेपर मेघोंके द्वारा गिरि अभिषिक्त होता है, उसी प्रकार देवोंने घड़ोंसे प्रभुका अभिषेक किया। कुटक पुष्पोंसे लोकगुरुकी समर्चना की। दुवई वचनों (द्विपदो वचनों) से उत्कट (गीतों) से स्तुति की। लोगोंके नेत्रोंके लिए सुन्दर, स्वर्णमयी इन्द्रके द्वारा ले जायी गयी शिविकाके द्वारा वह, जिसमें चार पुष्प खिले हुए हैं, ऐसे सुन्दर वनमें गये। अपना कंगन हार डोर छोड़कर लोगोंसे क्षमा माँगकर, सिरका केश लोंचकर, संसाररूपी समुद्रके जहाज तीन योगोंसे विशुद्ध, छठा उपवास कर, श्रेष्ठ वरिष्ठ, अपने हितके द्रष्टा, चारित्रसे आश्रय लेनेवाले वह, आठवें माह (कार्तिक माह) जबकि विश्वको प्रकाशित करनेवाला सूर्य, मेघोंके आगमनका नाश करता हुआ, शीतलताका प्रवेश कराता है, कृष्ण पक्षकी त्रयोदशीके दिन, सूर्य दो पहर ढल चुकता है, चित्रा और हस्त नक्षत्र उगे हुए थे, तब वह संयमकी यात्रासे शोभित हुए। श्रुतका अध्ययन कर, पापोंका नाश कर महाव्रत ग्रहण कर और महामुनि होकर स्थित हो गये। उनके साथ समान करुणावाले एक हजार ऐसे राजाओंने भी अपनेको तपसे अंकित किया कि जिनमें ईर्ष्या नहीं थी।

घत्ता—बारह प्रकारके तपोंके निर्वाहके लिए, और धर्मयोगकी रक्षाके लिए, पद्मप्रभु स्वामी आहारके लिए वर्धमान नगरीमें प्रविष्ट हुए ॥९॥

६. A P समत्थियउ।

९. १. A सुवण्णमियाइ। २. A P जगत्तपयासि। ३. A संजमजुत्त। ४. A णिव्वाहणउ। ५. A धम्मु। ६. P जोइपरिक्खहि। ७. A पयट्ठउ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

१०

णमोत्थु भणेवि गहीररवेण घरं णिउ सो ससियत्त[1]णिवेण।
तिणा तहु णिम्मलु[2] भोयणु दिण्णु मुणिंदणिहालणि संचिउ पुण्णु।
णिहेलणि उग्गय[3] अब्भुय पंच अहासवदारइं रुंभिवि पंच।
गओ रिसि घोसिवि अक्खयदाणु सुबंधुसु[4] वरिसु[5] णिच्चसमाणु।
पमाय कसाय विसाय हरंतु छमास विहिंडिउँ[7] वित्त चरंतु।
विहूयतमोमयमंदकलंकि चइत्तंछणम्मि पउण्णससंकि।
सुचित्तहि चित्तइ चिंतविमुक्क दुइं झणि पूरिउं बीयउ सुक्कु।
परंदिसमासिइ वासरराइ उइण्णउ[8] केवलणाणु विराइ।
णियासणचालणचालियसग्गु विमाणपऊरियवारियमग्गु॥
समागउ झत्ति पवाहियपीलु विडोउ सभिच्चु सचिंधु सलीलु।

घत्ता—दह भावण वेंतर अट्ठविह जोइस पंचविहाइय॥
सोलहविह कप्पणिवासिसुर जिणु णवंति गुणराइय॥१०॥

११

णमो अरिहंत[1] णमो अरिहंत णमो विसयंत णमो विसयंत।
णमो दयवंत णमो दयवंत णमोत्थु अभंत भयंत[2] भवंत।

१०

'नमस्कार हो' गम्भीर ध्वनिमें यह कहकर सोमदत्त उन्हें अपने घर ले गया। उसने उन्हें निर्मल भोजन दिया और इस प्रकार मुनीन्द्रदर्शनसे पुण्यका संचय किया। उसके घरमें पाँच आश्चर्य प्रकट हुए। पाँच पापास्रवोंके द्वारको रोककर, महामुनि, 'अक्षयदान' कहकर चले गये। अच्छे बन्धु या शत्रुके प्रति नित्य समानरूपसे रहनेवाले प्रमादों, कषायों और विषादोंको दूर करते हुए और मुनिवृत्तिका आचरण करते हुए उनके छह माह बीत गये। जिसने तमोमय मृग-लांछनको नष्ट कर दिया है ऐसी पूर्णचन्द्रमावाली चैत्रशुक्ला पूर्णिमाके दिन, चित्रा नक्षत्रमें, चिन्तासे मुक्त अपने सुचित्तमें दूसरा शुक्लध्यान पूरा कर लिया। और जब सूर्य पश्चिम दिशामें पहुँच रहा था उन विरागीको केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। अपने आसनोंके डिगनेसे स्वर्ग चलायमान हो गया। आकाशमार्ग विमानोंसे भर गया। अपने हाथीको प्रेरित कर, अपने भृत्यों, पताकाओं और लीलाओंके साथ शीघ्र इन्द्र आ गया।

घत्ता—दस प्रकारके भवनवासी, आठ प्रकारके व्यन्तर, पाँच प्रकारके ज्योतिष और सोलह प्रकारके कल्पवासी देव गुणोंसे विराजित जिनको नमस्कार करते हैं॥१०॥

११

कर्मरूपी शत्रुओंका घात करनेवाले आपको नमस्कार, अर्हन्नाथ आपको नमस्कार, विषयोंका अन्त करनेवाले आपको नमस्कार, विषय (वस्तु) को अन्तिम सीमा तक जाननेवाले आपको नमस्कार, दयायुक्त आपको नमस्कार, अदयाको नष्ट करनेवाले आपको नमस्कार, अभ्रान्त भदन्त

१०. १. A ससिदत्त°। २. A भोयणु णिम्मलु। ३. A णिग्गय। ४. A P सबंधु। ५. A सवेरि। ६. P सुभिच्च°। ७. A विहंडिउ। ८. P उप्पण्णउं। ९. P ताव।

११. १. A P अरहंत। २. A णमोत्थु भयंत।

णमो बुहराम णमोहविराम　　णमो गुणथाम णमोमियथाम ।
णमो गिरिधीर णमो गयसीर　　णमो हयमार णमो धुवमार ।
णमो णियमाल सुपंकयमाल　　कयंघिसुसील महाकरिलील ।[3]
फलाइं गसंतु जलाइं रसंतु　　दलाइं वसंतु वणम्मि वसंतु ।
ण जे तवसीह अहो मुणिसीह　　परत्तसिरीह णिरीस णिरीह ।
तुमं सुमरंति भवेसु मरंति　　ण ते सुहि होंति मॅगेसु हि होंति ।[4]
पणासियसासयसंपयमूलु　　मई तुह धम्मसिरीपडिकूलु ।
कुसंगु कुलिंगु कुसामि कुदेउ　　कुपत्ति कुमित्तु म जम्मि विहोउ ।
वियंभउ णाणविलोयणसत्ति　　सुणिच्चल होउ तुहुप्परि भत्ति ।

घत्ता—णिव्वाणभूमिवररमणिसिरिचूडामणि पइं वण्णमि ॥[5]
जड्डु कव्वपिसाएं विणडियउ अप्पउ हउं तणु मण्णमि ॥११॥[6][7]

१२

थुणेप्पिणु एम गुणोहु जिणेसु　　तओ तियसेहिं कओ तहु वासु ।
चउद्दिसु उब्भिय सोहिय खंभ　　चउद्दिसु सारसरावसरंभ ।
चउद्दिसु दारइं गोउरयाइं　　चउद्दिसु चेइयमंदिरयाइं ।[1]
चउद्दिसु पायववेल्लिहराइं　　चउद्दिसु थूहइं दिव्वघराइं ।[2][3]

(मुनि) और ज्ञानवान् आपकी जय हो। पण्डितोंके लिए आपको नमस्कार, अघोंका नाश करनेवाले आपको नमस्कार हो, गुणोंके घर आपको नमस्कार, हे अनन्तवीर्य आपको नमस्कार। गिरिकी तरह गम्भीर और हल रहित आपको नमस्कार, कामको जीतनेवाले आपको नमस्कार, ध्रुव लक्ष्मीदायक आपको नमस्कार, नियम सहित आपको नमस्कार, कमलोंकी मालासे शोभित आपको नमस्कार, जिन्होंने सुशील मुनियोंको अपने चरणोंमें नत किया है ऐसे महागजकी लीला करनेवाले आपको नमस्कार। जो तपस्वी फल खाते हैं, जल पीते हैं, दलोंमें रहते हैं, वनमें निवास करते हैं, ऐसे तपस्वीश्रेष्ठ भी, यदि हे निरीह निरीश मुनीश्वर, तुम्हें स्मरण नहीं करते, तो वे जन्म-जन्मान्तरोंमें मरते हैं, वे पण्डित भी नहीं होते, पशुओंमें उनका जन्म नहीं होता। जिन्होंने शाश्वत सम्पत्की जड़को नष्ट कर दिया है और जो धर्मरूपी लक्ष्मीके प्रतिकूल है, ऐसा कुसंग कुलिंग कुस्वामी कुदेव कुपत्नी कुमित्र मेरा, किसी भी जन्ममें न हो। मेरी ज्ञानसे देखनेकी शक्ति बढ़े (विकसित हो), तुम्हारे ऊपर मेरी भक्ति निश्चल हो।

घत्ता—निर्वाणभूमिरूपी श्रेष्ठ रमणीके सिरके चूड़ामणि हे देव, मैं तुम्हारा वर्णन करता हूँ। काव्यरूपी पिशाचसे प्रताड़ित मैं जड़ स्वयं तिनकेके बराबर समझता हूँ ॥११॥

१२

इस प्रकार गुणोंके समूह जिनकी वन्दना कर, उस समय देवोंने उनके निवासकी रचना की। चारों दिशाओंमें खम्भे स्थापित कर दिये गये। चारों ओर सारसोंके शब्दसे युक्त जल था। चारों ओर दरवाजे और गोपुर थे। चारों दिशाओंमें चैत्य और मन्दिर थे। चारों ओर वृक्ष और

३. P कलंघि° । ४. A मिगेसु; P मगेसु । ५. A °सिरचूलामणि । ६. A मण्णमि । ७. A तणु हउं ।
१२. १. P दाविय । २. A बेल्लिवणाइ । ३. A दिव्वयराइं ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

चउद्दिसु दीसइ सम्मुहुं देउ चउद्दिसु आसणु सीहसमेउ।
चउद्दिसु भावलउब्भवु तेउ चउद्दिसु पल्लवरत्तु असोउ।
चउद्दिसु छत्तइं पंडुरयाइं चउद्दिसु सुब्भइं चामरयाइं।
चउद्दिसु अट्ठमहाधयपंति चउद्दिसु पुप्फचयाइं पडंति।
चउद्दिसु दुंदुहिसद्द घडंति चउद्दिसु इंदतियाउ णडंति।
असेसहं भासविसेसहं खाणि चउद्दिसु तस्स वियंभइ वाणि।

घत्ता—तच्चाइं सत्त दह धँम्मविहि णव पयत्थ छद्दव्वइं॥
आहासइ परमप्पउ जणहु सव्वइं भूयइं भव्वइं॥१२॥

१३

खएक्कु पुणेक्कु गणेसवराहं दुसुण्णइं तिण्णि दु पुव्वधराहं।
तिबिंदुय रंध रिऊयदुयजुत्त जिणिंदहु एत्तिय सिक्खपउत्त।
सहास दसेव य ओहिजुयाहं दुवालस ते च्चिय सव्ववियाहं।
सहासइं सोलह अट्ठसयाइं विउव्वणरिद्धिरिसिंदहं ताइं।
महामणपज्जयणाणधराहं धुवं तिसयंकिउ सउ जि सयाहं।
सहासहं उप्परि रंधसमाहं खजुम्मु सडंकु वि वाइवराहं।
सहासइं वीस पयोणिहि लक्ख वियाणहि संजमधारिणिसंख।
वयत्थघरत्थहं तासु तिलक्ख अणुव्वयणारिहिं पंच जि लक्ख।

लतागृह थे, चारों ओर स्तम्भ तथा दिव्य घर थे। चारों दिशाओंके सामने देव थे, चारों तरफ सिंहासन थे। चारों ओर भामण्डलोंसे उत्पन्न तेज था, चारों ओर पल्लवोंसे आरक्त अशोक वृक्ष थे। चारों ओर सफेद छत्र थे, चारों ओर दोनों हाथोंमें चामर थे। चारों ओर आठ ध्वज-पंक्तियाँ थीं। चारों दिशाओंमें पुष्प-समूहकी वर्षा हो रही थी। चारों दिशाओंमें दुन्दभि शब्दकी रचना हो रही थी। चारों ओर इन्द्राणियाँ नृत्य कर रही थीं। समस्त भाषाओंकी खदान उनकी वाणी चारों दिशाओंमें फैल रही थी।

घत्ता—सात तत्त्व, दस प्रकारका धर्म, नौ पदार्थों और छह द्रव्योंका कथन वह सबके लिए करते हैं। उस अवसरपर सभी लोक भव्य हो गये॥१२॥

१३

एक सौ दस उनके गणधर थे। दो हजार तीन सौ पूर्वधारी थे। जिनेन्द्रके दो लाख उनहत्तर हजार शिक्षक कहे गये हैं। दस हजार अवधिज्ञानी, बारह हजार केवलज्ञानी, विक्रिय-ऋद्धिके धारक मुनीन्द्र सोलह हजार आठ सौ; मनःपर्ययज्ञानी दस हजार तीन सौ, नौ हजार छह सौ श्रेष्ठवादी थे। चार लाख बीस हजार संयम धारण करनेवाली आर्यिकाएँ हैं। व्रती गृहस्थ तीन लाख थे। अणुव्रत धारण करनेवाली श्राविकाएँ पाँच लाख थीं। संख्यात तिर्यंच थे और देव

४. P जक्खकरे। ५. A P इंदतियाउ। ६. A तासु। ७. A धम्मविह। ८. P छदव्वइं।
९. A सव्वभूइभूयइं भवइ।
१३. १. A सिक्खय उत्त। २. A P अणुव्वयधारिहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरिक्ख ससंखँ सुरा वि असंख पणासिवि राईरईसुहकंख ।
समासिवि धम्मु पंधंसियदुक्खु छमासविहीणउं पुव्वहं लक्खु ।

घत्ता—संमेयहु सिहँरि समारुहिवि मासमेत्तु थिउ जोएं ॥
जिणु अंतिमु झाणु पराइयउ सहुं मुणिवरसंघाएं ॥१३॥

१४

मंहग्गमि फग्गुणपक्खि सुकिण्हि संचित्तचउत्थितिथिहीअवरण्हि ।
स णाणसरूवु तिदेहविमुक्कु जगग्गधँरित्ति जाइवि थक्कु ।
ण कण्णेँ ण पीउ ण लोहिउ सुक्कु ण लाहवु तासु ण चत्थि गुरुक्कु ।
ण पुंसुँ ण संढु ण भण्णइ इत्थि फुरंतसकेवलबोहँगभत्थि ।
हुओ परमेसरु अट्ठगुणड्ढु सरीरु सलक्खणु तक्खणि दड्ढु ।
सिहिंदसिरोमणिमुक्कसिहीहिं समच्चणवंदणहोमविहीहिं ।
णँमंसिवि सिद्धणिसीहियथत्ति पएहिं णिओइउ कुंजरु झ त्ति
गओ पविहारि समीरवहेण सुरण्ण वि अण्णविभाणुमहेण ।

असंख्य थे। रातकी रतिके सुखकी आंकाक्षाका त्याग करनेवाले, धर्मका आश्रय लेनेवाले और दुःखका ध्वंस करनेवाले उनका छह माह कम एक लाख पूर्व समय बीत गया।

घत्ता—सम्मेद शिखरपर चढ़कर वह एक माह तक योगमें स्थित रहे। मुनिवरसमूहके साथ वह अन्तिम शुक्ल ध्यानपर पहुँचे ॥१३॥

१४

माघ माह बीतनेपर फागुनके कृष्णपक्षमें चतुर्थीके दिन अपराह्णके समय चित्रा नक्षत्रमें ज्ञानस्वरूप, तीन प्रकारकी देहोंसे विमुक्त वह जाकर विश्वके अग्रभागमें स्थित हो गये। जहाँ वह न कृष्ण थे और न पीत। न लाल और न शुक्ल। न उनमें लाघव था और न गुरुता। न वह पुल्लिग थे और न नपुंसक। और न स्त्री कहे जाते थे। वह अपने प्रकाशमान केवलज्ञानमें स्थित थे। वह आठ गुणोंसे समृद्ध परमेश्वर हो गये। लक्षण सहित उनका शरीर समर्चन, वन्दन और होमकी विधियोंसे युक्त अग्निकुमार देवोंके मुकुटमणिकी ज्वालाओंसे तत्काल दग्ध हो गया। सिद्धरूपी नृसिंहोंमें स्थिति पानेवाले उनको नमस्कार कर इन्द्रने अपने पैरसे ऐरावतको प्रेरित किया, और चला गया। दूसरे देव भी सूर्य-चन्द्रमाके समान तेजवाले विमानोंपर बैठकर चले गये।

३. A सुसंख। ४. A रायरईसुह°; P णारिरईसुह°। ५. A पहंसिय°। ६. A सिहरु।
१४. १. A म्हुग्गमि। २. A सुचित्त। ३. A P जगग्गधरित्तिहि। ४. A किण्हु। ५. A ण पुंसउ संढु ण।
६. A बोधगभत्थि। ७. A समंचिवि।

घत्ता—महुं तूसउ [8]भरहभव्वणमिउ [9]पउमप्पहु णिहयावइ ॥
तिजगिंदहु केरउ एम जसु पुप्फयंतु को पावइ ॥१४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए
महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे पउमप्पहणिव्वाणगमणं णाम
तियालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४३॥

॥ [10]पउमप्पहचरियं समत्तं ॥

घत्ता—भरत भव्यके द्वारा प्रणम्य, आपत्तियोंका नाश करनेवाले पद्मप्रभु मुझपर प्रसन्न हों, सूर्य-चन्द्रके समान त्रिजगेन्द्रका यश इस प्रकार कौन पा सकता है? ॥१४॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त
द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यमें पद्मप्रभ
निर्वाण-गमन नामक तैंतालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४३॥

८. A P भव्वभरह°। ९. A पउमप्पउ; P परमप्पहु। १०. A P omit the line.

संधि ४४

अगहिय असिपासहु गयदप्पासहु पासाइयवम्महजयहु ।।
तोडियपसुपासहु णविवि सुपासहु पासियपासंडियणयहु ।।ध्रुवकं।।

१

णिरायसं महाजसं णिरंजसं समंजसं ।
अमोसयं णिरंजणं सुवच्छलं णिरंजणं ।
पुरुं गुरुं णिरासवं तवोणिहिं णिरासवं ।
असंगयं णिरंबरं मयप्पमाणियंबरं ।
अमंदिरं णयालयं वियक्खणं णयालयं ।
मुणीसरं णिरामयं समोसहं णिरामयं ।
अलं कुलेण उत्तमं सणाणएण णित्तमं ।
जिणाहिवेसु सत्तमं णमंसिऊण सत्तमं ।
जयाहियं जईहियं भणामि तस्स ईहियं ।

घत्ता—णररयणकरंडइ धायइसंडइ पुव्वविदेहि पुव्वगिरिहि ।।
हिमजललवसीयहि उत्तरि सीयहि कच्छउ देसु महासरिहि ।।१।।

सन्धि ४४

जिन्होंने आशाके पाशको ग्रहण नहीं किया, जिनका दर्प और आशा जा चुकी है, जिन्होंने कामदेवकी विजयको नियन्त्रित कर लिया है, जिन्होंने जीवके बन्धनोंको तोड़ दिया है, जिन्होंने पाखण्डियोंके नयका खण्डन कर दिया है, ऐसे सुपार्श्वनाथको मैं प्रणाम करता हूँ।

१

जो रागसुखसे रहित हैं, जो परमार्थस्वरूप, कुटिलतासे रहित, अमृषावादी, निरंजन, सुवत्सल, अपाप, महान् हितोपदेष्टा, आस्रवसे रहित, तपोनिधि, अपरिग्रही, दिगम्बर, ज्ञानसे आकाशको आच्छादित करनेवाले, गृहविहीन, पहाड़ोंमें भ्रमण करनेवाले, विचक्षण नययुक्त मुनीश्वर नीरोग उपशमरूपी औषधिसे युक्त, स्त्रीसे रहित, समर्थकुलसे उत्तम, केवलज्ञानसे अज्ञानतमको दूर करनेवाले, जिनाधियोंमें सातिशय सबसे अधिक प्रशस्त, जगके अधिपति और यतियोंके द्वारा काम्य हैं, ऐसे सुपार्श्वनाथको प्रणाम कर उनकी चेष्टा (चरित) को कहता हूँ।

घत्ता—जो महापुरुषरूपी रत्नोंके लिए पिटारीके समान हैं ऐसे धातकीखण्डके पूर्वविदेहके पूर्वविदेह पर्वतकी हिमकणोंसे शीतल सीता नदीके उत्तरमें कच्छ देश है ।।१।।

---

१. १. P महायसं । २. A परं; P पुरं । ३. A P तवोणिहि । ४. A णियालयं । ५. P reads *a* as *b* and *b* as *a*. ६. A धायइ° । ७. A उत्तरसीयहि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

तेत्थु[1] सत्तभूयलसउहयलहि चूलाकलसलिहियवोमयलहि।
पाणियपूरियपविमलपरिहहि कोट्टट्टालयणच्चियवरिहहि।
णाणावणतरुकीलियखयरिहि णंदिसेणु पहु खेमाणयरिहि।
महि भुंजेवि सुइरु णिव्वेइउ लच्छिभारु णियतणयहु ढोइउ।
धणवइणामहु णामसमाणहु णरवम्मीसहु विकुसुमबाणहु।
अरहंतहु सिरिणंदणसामिहि पासि लइउ वउ सिवपयगामिहि।
एयारह अंगइं अवगाहिवि अप्पउं सीलगुणेहिं पसाहिवि।
पावपडलपसरणु आउंचिवि तित्थयरत्तु पुण्णु संसंचिवि।
दीहु कालु तवु तिव्वु तवेप्पिणु हियवउ जिणकमकमलि थवेप्पिणु।
पाणिंदियसंजमु अविराहिवि आराहणभयवइ आराहिवि।
चउविहु पच्चक्खाणु लएप्पिणु णंदिसेणु मुणिणाहु मरेप्पिणु।

घत्ता—मज्झिमगेवज्जहि संभवसेज्जहि चंदकुंदसंणिहरुइरु॥
भद्दामरमंदिरि णयणाणंदिरि संजायउ अहमिंदु सुरु॥२॥

२

उसमें क्षेमपुरी नगरी है जिसमें सातभूमियोंवाले सौधतल हैं, जो अपने शिखरकलशोंसे आकाशतलको छूती है, जिसकी परिखाएँ निर्मल पानीसे भरी हुई हैं, जिसके परकोटों और अट्टालिकाओंपर मयूरोंके नृत्य हो रहे हैं, जिसके नाना प्रकारके वृक्षोंपर विद्याधरियाँ क्रीड़ा कर रही हैं ऐसी उस नगरीमें राजा नन्दिषेण निवास करता था, जो बहुत समय तक लक्ष्मीको उपभोग करनेके बाद विरक्त हो गया। उसने लक्ष्मीका भार सार्थक नामवाले अपने पुत्र धनपतिको सौंप दिया, और स्वयं नर ब्रह्मेश्वर कामदेवसे रहित, अरहन्त शिवपदगामी श्रीनन्दन स्वामीके पास व्रत ग्रहण कर लिया। ग्यारह अंगोंका अवगाहन करते हुए, स्वयंको शीलगुणोंसे विभूषित करते हुए, पापपटलके प्रसारको संकोच करते हुए, तीर्थंकर प्रकृतिके पुण्यका संचय कर, दीर्घ समय तक लम्बा तप कर हृदयको जिनके चरणकमलोंमें स्थापित करते हुए, प्राणों और इन्द्रियोंके संयमको अवधारित करते हुए, भगवतीकी आराधना कर, चार प्रकारका प्रत्याख्यान कर, नन्दिषेण मुनिनाथ मृत्युको प्राप्त होकर—

घत्ता—मध्यम ग्रैवेयकके नेत्रोंके लिए आनन्ददायक, भद्रामर विमानके उत्पत्ति शिला सम्पुटपर चन्द्रमा और कुन्दके समान कान्तिवाला अहमेन्द्र देव उत्पन्न हुआ॥२॥

२. १. P तत्थ। २. A °णिहियं°। ३. P बरहिहि। ४. P णिव्वेइयउ। ५. A P विक्कमठाणहु। ६. P अरिहंतहु। ७. A अलुंचिवि। ८. A तित्थयरत्त पुणु; P तित्थयरत्तु गोत्तु। ९. P आराहणा। १०. A P °संणिहु। ११. P अहिमिंदु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

दुरयणितणु लोयणइं अणिदइं[1] आउ वि सत्तावीससमुद्दइं ।
तेत्तिएहिं[2] सो वरिससहासहिं भुंजइ अणु णियमणविण्णासहिं ।
अक्खिउ भिक्खुवरेहिं जियक्खहिं णीससइ जि तेत्तियहिं जि पक्खहिं ।
कालें तं तहु आउ विणिट्ठिउ कालें तिहुयणि किं पि ण संठिउ ।
छडुमासाउसु[3] थक्कउ जइयहुं अक्खइ सुरवइ धणयहु तइयहुं ।
जंबुदीवि बहुदीवणिवासइ[4] भारहवरिसइ कासीदेसइ ।
सरयसलिलहरससहरसियगिहि वाणारसिपुरि सुरपुरसंणिहि[5] ।
परमारिसि[6]रिसहण्णवजायउ सुपइट्ठउ णामें महिरायउ ।
तासु अत्थि पिय[7] प्राणपियारी पुहइसेण णामेण भडारी ।
ताहं बिहिं मि होसइ तित्थंकरु देवदेउ जिणु पावखयंकरु ।
ताहं बिहिं मि करि तुहु जं जोग्गउ पट्टणु भवणु[8] भोयसुहुं चंगउ ।
ता जक्खें तं तेम समारिउ रयणविचित्तु णयरु वित्थारिउ ।

घत्ता—तुंगियहि विरामइ पच्छिमजामइ वालमराललीलगइइ ॥
मणिमंचइ सुत्तिइ ढंकियणेत्तइ दीसइ सिविणावलि सइइ ॥३॥

३

दो हाथ ऊँचा शरीर, नींदरहित नेत्र, सत्ताईस सागर आयु, इतने ही हजार वर्षमें अपने मनके अनुसार वह भोजन करता है। इन्द्रियोंको जीतनेवाले मुनिवरोंने कहा है कि वह सत्ताईस हजार वर्षोंमें साँस लेता है। समयके साथ उसकी भी आयु समाप्त हो गयी। समयके साथ त्रिभुवनमें कुछ भी स्थित नहीं रहता। जब उसकी आयु छह माह शेष रह गयी, तब इन्द्रने कुबेरसे कहा, "अनेक द्वीपोंके निवासस्थान जम्बूद्वीपके भारतवर्षमें काशी देश है, उसमें शरद् मेघ और चन्द्रमाकी शोभाके समान घरोंवाली वाराणसी नगरी इन्द्रपुरीके समान है। उसमें परम ऋषि ऋषभनाथकी कुलपरम्परामें उत्पन्न सुप्रतिष्ठ नामका राजा था। पृथ्वीसेना उसकी प्राणप्यारी पत्नी थी। उन दोनोंके तीर्थंकरका जन्म होगा, देवोंके देव और पापोंका नाश करनेवाले। उनके लिए जैसा योग्य समझो वैसा सुन्दर नगर, भवन और भोगसुख पैदा करो।" कुबेरने उसी प्रकार रचना कर दी, रत्नोंसे विचित्र नगरकी रचना कर दी।

घत्ता—रातका अन्त होनेपर—अन्तिम प्रहर होनेपर बालहंसिनीके समान लीलागतिवाली उस सतीने मणिमय मंचपर आँखें बन्द कर सोते हुए स्वप्नावली देखी ॥३॥

३. १. A P अणिदइं । २. P तेत्तीयहि जि सु । ३. A छम्मासाउसु । ४. A P °दीवणिवेसइ । ५. A सुरपुरि° । ६. A °सुरिसहं णयजायउ । ७. A P पिय पाण° । ८. A भोयभवणु सुहुं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

दीसइ पीणपाणि सुरपूणउ दीसइ सेरु मुयंतु उच्छाणउ ।
दीसइ भंगुर णहरुकेरउ कंठीरेवु करिकुंभवियारउ ।
दीसइ दिग्गयवरसिंचिय चल दीसइ सुसुमणमाल सपरिमल ।
दीसइ जोण्हु जोण्हावासउ दीसइ उग्गमंतु णहि पूसउ ।
दीसइ पाढीणहं मिहुणुल्लउ दीसइ ससलिलु कुंडजुयलुल्लउ ।
दीसइ वियसिउ बंभहरायरु दीसइ सरिवइ सरयरभीयरु ।
दीसइ पीढु सीहरुवालउ दीसइ घंटारवु तियसालउ ।
दीसइ गेयमुहलु विसहरघरु दीसइ रयणरासि पसरियकरु ।
दीसइ जायवेउ जालाहरु इय जोइवि जाइवि रायहु घरु ।
घत्ता—जं जिह मणलोलिउं णिसिहि णिहालिउं तं तिह दइयहु [10]भासियउं ॥
तेण वि तहि तुट्ठें पत्थिवजेट्ठें सिविणयफलु उवएसियउं ॥४॥

५

होही सुंदरि तुह सुउ तेहउ को वि ण दीसइ जंगि जें जेहउ ।
जासु कित्ति लोयंतु पधावइ णाणु अलोयंतु वि दरिसावइ ।
बारहपक्ख जांव ससिवासहु भूरिचंदु णिवडिउ आयासहु ।
सोवठाण गहयण सुहदिट्ठिहि भद्दवयहु मासहु सियछट्ठिहि ।

४

स्थूल सूंड़वाला ऐरावत हाथी देखा, आवाज करता हुआ बैल, नखोंके समूहवाला, भंगुरगजोंके गण्डस्थलोंको विदीर्ण करनेवाला सिंह देखा, दिग्गजोंसे अभिषिक्त लक्ष्मी दिखाई दी, परिमल सहित सुमनमाला दिखाई दी, ज्योत्स्नाका घर चन्द्रमा दिखाई दिया, आकाशमें उगता हुआ सूर्य दिखाई दिया, मत्स्योंका युगल दिखाई दिया, जलसे भरा हुआ कुम्भयुगल दिखाई दिया, खिला हुआ सरोवर दिखाई दिया, जलचरोंसे भयंकर समुद्र दिखाई दिया, सिंहासनपीठ दिखाई दिया, गतिमुखर नागलोक दिखाई दिया, किरणोंके प्रसारसे मुक्त समुद्र दिखाई दिया, ज्वालाओंको धारण करनेवाली आग दिखाई दी, यह देखकर और राजाके घर जाकर—

घत्ता—रात्रिमें मनको सुन्दर लगनेवाला जो जैसा देखा था, वह उस प्रकार अपने पतिको बताया। उस ज्येष्ठ राजाने भी सन्तुष्ट होकर स्वप्नफलका कथन किया ॥४॥

५

हे सुन्दरी, तुम्हारा ऐसा पुत्र होगा, जैसा इस संसारमें कोई नहीं है, जिसकी कीर्ति लोकान्त तक जायेगी, जिनका ज्ञान अलोकान्त तक को प्रकट करता है। जब बारह पक्ष (अर्थात् छह माह) शेष रह गये, तो चन्द्रमाके निवास घर (आकाश) से स्वर्णवृष्टि हुई। भाद्रपद शुक्ल

---

४. १. A P सुरथूणउ; K सुरपूणउ and notes a p : पूर्णो वा पाठः । २. A सर । ३. P वियडदाढु सिविणयकंठीरउ । ४. A P सुमणसमाल । ५. A उग्गवंतु । ६. A जुयलुल्लउं । ७. A कुंभमिहुणुल्लउं । ८. P सीहरुइरालउ । ९. P मणलालउं । १०. P भासिउं । ११. A P उवएसिउं ।

५. १. A जं जगि जेहउ; P जगि जं जेहउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढंतेण विसाहारिक्खें सुमुहुत्तेणुप्पाइयसोक्खें ।
गयरूवें विम्हा²वियसिट्ठिहि हुउ गब्भावयारु परमेट्ठिहि ।
घरु आवेप्पिणु खणि सुत्तामें गुरु गुरुयणु अंचिउ जसरामें ।
गउ देवाहिउ देवावासहु पय वंदे³वि भावें देवेसहु ।
घत्ता—णरणाहहु केरइ हरिसजणेरइ णव मासइं तूसवियजणु ॥
जंबुण्णयधारहिं दुहमलहारहिं घरि वुट्ठउ वइसव⁴णुं घणु ॥५॥

६

जयडिंडिमि दंडेणें¹ समाहइ णिव्वुइ पउमप्पहि पउमाहइ ।
सायरसमहं पमाणें लइयहं णवसहासकोडिहिं गय जइयहं ।
कालपमाणें संखहि आयउ तइयहुं तहिं वइसाहहु जायउ ।
पसवणु देवहु जाइ² सुहासिइ बारसिवासरि जेट्ठाभूसिइ³ ।
सामरु सच्छरु सधउ सवा⁴रणु पुणु संप्राइउ⁵ सो हरिवाहणु ।
अम्महि अवरु डिंभु संजोइवि णिउ हरिणा जगगुरु उच्चाइवि ।
सिंचिउ सुरगिरिसिरि सुररायहिं मुहवियलियसिवणिवसंघायहिं ।
सुहतणुपासु सुपासु पकोक्किउ सयमहु थोत्तु करंतउ संकिउ ।
पुज्जिवि वंदिवि णिउ सणिकेयहु⁶ पहु करपंकइ णिहियउ तायहु ।
देउ पियंगुपसवसरिसप्पहु दोधणुसयपमाणु माणावहु ।

षष्ठीके दिन विशाखा नक्षत्रके बढ़नेपर सुख उत्पन्न करनेवाले शुभमुहूर्तमें जिन्होंने सृष्टिको विस्मयमें डाल दिया है, ऐसे परमेष्ठीका गजरूपमें अवतार हुआ। यशसे सुन्दर इन्द्रने एक क्षणमें आकर श्रेष्ठजन गुरुकी पूजा की। भावपूर्वक देवेशके पैरोंकी वन्दना कर देवेन्द्र अपने देवगृह चला गया।

घत्ता—हर्ष उत्पन्न करनेवाले राजाके घरमें नौ माहतक जिसने जनोंको सन्तुष्ट किया है ऐसा कुबेररूपी मेघ, दुखमलको हरण करनेवाली स्वर्णधाराओंसे बरसा ॥५॥

६

विजयरूपी दुन्दुभिके डण्डेसे आहत होनेपर, रक्तकमलके समान आभावाले पद्मनाथके निर्वाण प्राप्त करनेपर जब नौ हजार करोड़ सागर प्रमाण समय बीत गया तथा कालप्रमाणमें एक शंख हुआ तब विशाखा नक्षत्रका उदय हुआ। जेठ शुक्ल द्वादशीके दिन अग्निमित्र नामक शुभयोगमें देवका जन्म होनेपर देवेन्द्र अपने देवों, अप्सराओं, ध्वजों और गजोंके साथ फिर वहाँ पहुँचा। माताको दूसरा मायावी बालक देकर, इन्द्रके द्वारा विश्वगुरुको ऊँचा कर, ले जाया गया। शब्दों (स्तुति वचनों) के साथ, जो जलघट छोड़ रहे हैं ऐसे देवेन्द्रोंने सुमेरुपर्वतपर उनका अभिषेक किया। दोनों पार्श्वभाग सुन्दर होनेसे उन्हें सुपार्श्व कहा गया। स्तुति करते हुए इन्द्र शंकामें पड़ गया। पूजा और वन्दनाके बाद, उन्हें (सुपार्श्व को) अपने घर ले जाया गया, और उन्हें पिताके हाथमें रख दिया गया। सुपार्श्वदेव प्रियंगु पुष्पके समान आभावाले थे, मानका नाशक उनका शरीर दो सौ धनुष प्रमाण था।

---

२. A P विभाविय° । ३. A वंदिवि; P वंदिय । ४. P वइसवणधणु ।
६. १. P डंडेण । २. A चंदसुहासिइ । ३. A जेट्ठपभूसिइ । ४. सवाहणु । ५. A P संपाइउ । ६. P सणिकेवहु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—जें णाहतणुत्तणु गय दिव्वत्तणु ते तेत्तिय परिमाणु भणु ॥
जें तेणें समाणचं रूवपहाणउ अण्णु ण दीसइ को वि जणु ॥६॥

७

खेलंतहु दरिसियसिसुलीलहु पंचलक्ख पुव्वहं गय बालहु ।
णाहु सुणासीरें खीरोहें पुणु ण्हविय पुव्वुत्तपवाहें ।
रायलच्छिदेविइ अवरुंडिउ थिउ णरवइ णयसत्तिइ मंडिउ ।
तित्ति ण पूरइ भोयहं दिव्वहं चउदहलक्ख जांव गय पुव्वहं ।
तावेक्कहिं दिणि उडुपल्लट्टउ पेच्छिवि णाहु समग्गि पयट्टउ ।
कालें कालु वि जेण गिलिज्जइ तेण किं ण माणुसु कवलिज्जइ ।
जांवि थांवि पावज्ज लएप्पिणु तो भणंति सुर रिसि पणवेप्पिणु ।
एमं बुहाहिव तुज्झु जि छज्जइ अण्णु ण एहउ जगि पडिवज्जइ ।
घत्ता—जणु तिट्ठइ छित्तउ भमइ पमत्तउ पावइ जंम्मि जम्मि मरणु ॥
पइं मुइवि भडारा तिहुयणसारा एंव हणइ को जमकरणु ॥७॥

८

पुणु पाईणबरिहि संपत्तउ जिणु कल्लाणण्हाणि अहिसित्तउ ।
विहिउ तेणें लहुं सिवियारोहणु ढुक्कु सहेउयंकु णामें वणु ।

घत्ता—स्वामीके शरीरमें जितने परमाणु थे वे उतने ही थे इसीलिए उनके-जैसा रूपप्रधान कोई दूसरा आदमी नहीं था ॥ ६ ॥

७

खेलते और शिशु-क्रीड़ाओंका प्रदर्शन करते हुए शिशुके पांच लाख वर्ष बीत गये। स्वामीका इन्द्रने फिरसे पूर्वोक्त जलप्रवाह और दूधसे अभिषेक किया, राज्यलक्ष्मी देवीने आलिंगन किया, न्यायकी शक्तिसे अलंकृत यह राजा बने। चौदह लाख वर्ष पूर्व समय बीतनेपर भी जब भोगोंसे तृप्ति नहीं हुई, तब एक दिन टूटता तारा देखकर, स्वामी अपने मार्गमें प्रवृत्त हुए, जिस कालके द्वारा काल (नक्षत्र जो समयका प्रतीक है) नष्ट होता है, तो क्या उससे मनुष्य कवलित नहीं होगा। लो मैं जाता हूँ और प्रव्रज्या लेकर स्थित होता हूँ। इतनेमें लौकान्तिक देवोंने आकर प्रणाम किया और कहा—'हे पण्डितोंमें श्रेष्ठ, यह तुम्हें ही शोभा देता है। विश्वमें दूसरा व्यक्ति इसे स्वीकार नहीं कर सकता।'

घत्ता—मनुष्य तृष्णासे व्याकुल और प्रमत्त होकर घूमता है, और जन्म-जन्ममें मृत्युको प्राप्त होता है। हे त्रिभुवनश्रेष्ठ आदरणीय, तुम्हें छोड़कर दूसरा कौन यमकरणका नाश कर सकता है? ॥ ७ ॥

८

इन्द्र फिरसे आया और दीक्षाकल्याण-स्नानमें उनका अभिषेक किया। शीघ्र उन्होंने

---

७. A जो णाह° । ८. A तो तेत्तिय°; P तेत्तिओ जि । ९. A जेणु समाणउ; P तं तेण समाणउं ।
७. १. खेल्लंतहु । २. P सुणासिरेहिं । ३. A ण्हावियउ । ४. A णिवसत्तिइ । ५. P ताम भणहिं सुर ।
६. A एहु । ७. A तेहउ । ८. A P जम्मजरामरणु । ९. P सुरवरसारा ।
८. १. T records a *p* : दाणवरिउवइ इति पाठेऽपि इन्द्रः । २. A तेहिं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जेट्ठहु मासहु पक्खि वलक्खइ　　वार[3]सिदिवसि स[4]संभवरिक्खइ ।
खत्तियदहसयहिं संजुत्तें　　लइय दिक्ख भुवणुत्तमसत्तें ।
छट्ठुववासु करिवि कयकिरियहु　　सोमखेडपुरवरु गउ चरियहु ।
तेत्थु महिंददत्तणरराएं　　पाराविउ णवेवि अणुराएं ।
तहु घरि तियसणिघोसणिणायइं[5]　　पंचच्छेरयाइं[6] संजायइं ।
णववरिसइं छउमत्थु[7] हवेप्पिणु　　अच्छिउ जिणु जिणकप्पु चरेप्पिणु[8] ।
पुणु सहेउवणि मूलि सरीसहु[9,10]　　पंचमु हुयउ णाणु तिजगीसहु ।
णाणावाहणवलइयपायउ　　देवलोउ णीसेसु वि आयउ ।

घत्ता—उट्ठंतपडंतहिं पुरउ णडंतहिं णविउ णाहु पंजलियरेहिं[11] ॥
दहविहअट्ठविहहिं पुणु पंचविहहिं सोलहविहहिं[12] वि सुरवरहिं ॥८॥

९

पइं थुणंति[1] रिसि अमर सविसहर　　माणुस अम्हारिस वि णिरक्खर ।
एक्कु जि फलु जइ भत्ति समुज्जल　　लइ[2] पुणु हियवइ सा णउ णिम्मल ।
ता[3] अच्छउ पढंतु थुइलक्खइं　　पावउ मुहवायामें दुक्खइं ।
कहइ[4] सक्कु फणिराउ सरासइ　　तुह गुणरासिहि छेउ ण दीसइ ।
जइ तो किं वायइ वण्णइ जडु　　जलहिमाणि[5] किं आणिज्जइ घडु ।

शिविकामें आरोहण किया, और वह सहेतुक नामके वनमें पहुँचे। ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशीके दिन विशाखा नक्षत्रमें, भुवनमें सर्वश्रेष्ठ सत्त्ववाले उन्होंने एक हजार क्षत्रियोंके साथ दीक्षा ग्रहण कर ली। छठा उपवास कर कृतक्रिया चर्याके लिए वह सोमखेट नगरमें गये। वहाँ राजा महेन्द्रदत्तने प्रेमसे प्रणाम कर उन्हें आहार कराया। उसके घरमें देवोंके द्वारा किये गये घोष-निनादोंके साथ पाँच आश्चर्य उत्पन्न हुए। नौ वर्ष तक वह छद्मस्थ अवस्थामें रहे। जिनचर्याका आचरण जिन भगवान्‌ने किया। फिर सहेतुक वनमें शिरीष वृक्षके नीचे त्रिजगके स्वामीको पाँचवाँ ज्ञान (केवलज्ञान) उत्पन्न हुआ। नाना वाहनोंपर अपने पैरोंको मोड़ते हुए समस्त देवलोक वहाँ आया।

घत्ता—इस प्रकार आठ प्रकार, पाँच प्रकार और सोलह प्रकारके उठते-पड़ते और नाट्य करते हुए देवोंने अंजलियोंसे सामनेसे देवको नमस्कार किया ॥ ८ ॥

९

ऋषि, अमर, नाग और हम-जैसे भी निरक्षर मनुष्य आपकी जो स्तुति करते हैं, इसका एक ही फल है कि यदि समुज्ज्वल भक्ति उत्पन्न हो, यदि वह निर्मल भक्ति हृदयमें नहीं आती, तो तुम लाखों स्तुतियाँ पढ़ते रहो, मुखके व्यायामसे केवल कष्ट ही प्राप्त करोगे। इन्द्र, नागराज और सरस्वती कहे, फिर तुम्हारी गुणराशिका यदि अन्त नहीं दीखता, तो जड़ कवि क्या बाँचता और

---

३. P बारिसिदिवसि । ४. A संभवरिक्खइ; P सुसंभवरिक्खइ । ५. A णिग्घोसणिणाएं । ६. A पंचच्छरियइं ता संजायइं । ७. A P छम्मत्थु । ८. A वहेप्पिणु । ९. P adds after this: फग्गुणि किण्हि पक्खि छट्ठियदिणि, भे विसाहि पच्छिमसमुहइ दिणि । १०. A P सिरीसहु । ११. P अंजलिकरेहिं । १२. A °विहहि सुरवरहिं; P °विहहिं वि सुरवरेहिं ।

९. १. A संथुणंति । २. A P जइ । ३. A तो । ४. AP कहइ । ५. A P जलहिमाणु ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

देव तुहारी हयदुहवेल्लिहि भत्ति मूलु आसिद्धि सुहेल्लिहि ।
अट्ठ वि पाडिहेर थिय जांवहि समवसरणि आसीणउ तांवहि ।
भासइ धम्मु भडारउ जेहउ भासहुं सक्कइ को वि ण तेहउ ।
पालइ को वि कहिं मि जइ सूरउ णासइ णिट्ठहि जणु विवरेरउ ।

घत्ता—पाणिवह पमेल्लह अलिउं म बोल्लह दव्वु परायउ मा हरह ॥
परदार म माणह धणु परिमाणहु रयणिहि भोयणु परिहरह ॥९॥

१०

एंव भणिवि संबोहिय मणहर पंचणवइ संजाया गणहर ।
बिण्णि सहस भासिय तीसुत्तर अंगसपुव्वधारि तहु मुणिवर ।
बिण्णि लक्ख चालीससहासइं चउसहसइं णवसयइं विमीसइं ।
अवर वि वीस जि सिक्खुय साहिय जे णीरंजणेण णिव्वाहिय ।
णव जि सहासइं ओहिविबोहहं सहसेयारह पंचमबोहहं ।
सयइं तिण्णि सहसइं पण्णारह विक्किरियालहं रिसिहि सुहीरहं ।
सोत्तसमाणसहासपमाणहं पण्णासुत्तरु सउ मणजाणहं ।
वसुसहसइं रिदुसयइं विवाइहिं सुद्धसुरूवदेसकुलजाइहिं ।
लक्खइं तिण्णि तीससहसालइं विरयहं णारिहिं लुंचियवालइं ।
सागारहं वि लक्खु गुणगुत्तिहि वयगुणियाइं ताइं तप्पत्तिहिं ।

वर्णन करता है ? समुद्र मापनेके लिए क्या घड़ा लाया जाता है ? हे देव, दुःखरूपी लताका हनन करनेवाली सुखरूपी लताका, सिद्धिपर्यन्त मूल तुम्हारी भक्ति ही है। जैसे ही आठ प्रातिहार्योंकी स्थापना हुई वैसे ही, वह समवसरणमें विराजमान हो गये। आदरणीय वह जिस प्रकार धर्मका कथन करते हैं, उस प्रकारका कथन दूसरा कोई नहीं कर सकता। कहीं यदि कोई सूर हो तो वह पालन कर सकता है ? निष्ठासे विपरीत मनुष्य नाशको प्राप्त होता है।

घत्ता—प्राणियोंका वध छोड़ो, झूठ मत बोलो, दूसरेके धनका अपहरण मत करो, परस्त्रीको मत मानो, धनका परिसीमन करो, रात्रिमें भोजनका परिहार करो ॥ ९ ॥

१०

इस प्रकार कहकर उन्होंने सम्बोधित किया। उनके पंचानबें सुन्दर गणधर हुए। अंगधारी मुनिवर दो हजार तीस थे। शिक्षक दो लाख चौवालीस हजार नौ सौ बीस कि जिनका निरंजन (तीर्थंकर) ने संसारसे उद्धार किया। अवधिज्ञानी नौ हजार; केवलज्ञानी; पन्द्रह हजार तीन सौ सुधीर, विक्रिया-ऋद्धिके धारक थे। मनःपर्ययज्ञानी नौ हजार एक सौ पचास। शुद्ध स्वरूप, देशकालमें उत्पन्न हुए वादी मुनि आठ हजार छह सौ। तीन लाख तीस हजार केश लोंच करनेवाली आर्यिकाएँ थीं। तीन लाख श्रावक और पाँच लाख श्राविकाएँ।

६. A आसुद्धि। ७. A कहि मि को वि। ८. AP पाणिवहु। ९. P परदारु। १०. P परियाणहु।
१०. १. A दोण्णि। २. A अंगसुपुव्वधारि; P अंगपुव्वधारिय। ३. A ओहिविमोहहं। ४. P सयाइं। ५. P सुधीरहं। ६. P °समारण°। ७. A विरइयणारिहिं। ८. P लुंचियकुरुलहिं। ९. A वयगुणियाइं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तियसेहिँ असंखहिँ संखतिरिक्खहिँ सहुं दुच्चरियइं खंडिवि ॥
णववरिसविहीणउ जयविजयाणउ पुव्वलक्ख महि हिंडिवि[10] ॥१०॥

११

महियमहिउ महमहियाणंगउ　　सहुं सीसेहिँ समाहिवसंगउ ।
संमेयहु जाइवि गिरिधीरउ　　तीस दियह[1] थिउ मुक्कसरीरउ ।
फग्गुणमासि कालपक्खंतरि[2]　　साणुराहि सुहसत्तमिवासरि ।
सूरुग्गमि बुहदेवहं देवें　　णिक्किरियत्तु पत्तु विणु खेवें ।
णिट्ठिउ अट्ठमवसुह[3] पढुक्कउ　　गउ सुपासु पासेहिं विमुक्कउ ।
चंदणकद्दमेण पव्वालिय　　पउलोमीसें[4] मालेहिँ[5] मालिय ।
दिण्णी[6] मउडाणलजालोलिय　　चिच्चिकुमारें[7] तणु पज्जालिय ।
वंदिवि भप्प[8] पावणिण्णासउ　　णायणाहु गउ णायावासउ ।
णायारूढउ कहइ णयंगहं　　पवणवरुणवइसवणपयंगहं ।
घत्ता—जहिँ भरहजिणेसहु णाणु सुपासहु पसरइ देवहु केवलिहिँ ॥
तहिँ वाइ ण वायउ ण तमु ण तेयउ पुप्फदंत[9]किरणावलिहिँ ॥११॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे [10]सुपासणिव्वाणगमणं णाम चउयालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४४॥

॥ [11]सुपासचरियं समत्तं ॥

घत्ता—असंख्यात देवों और संख्यात तिर्यंचोंके साथ दुश्चरितोंका खण्डन कर, नौ वर्ष कम, जय-विजय करनेवाले एक लाख पूर्व वर्ष धरतीपर विहार कर ॥१०॥

११

पूज्योंके पूज्य, तेजसे कामका मथन करनेवाले, समाधिमें लीन, शिष्योंके साथ, पहाड़की तरह धीर सम्मेद शिखरपर जाकर वह तीस दिन तक मुक्त शरीर रहकर फागुन माहके कृष्णपक्षमें शुभ सप्तमीके दिन अनुराधा नक्षत्रमें सूर्योदय वेलामें अनेक देवोंके देवने बिना किसी विलम्बके निष्क्रियत्व (मुक्ति) को प्राप्त कर लिया । निष्ठावान् वह आठवीं भूमिमें पहुँच गये, सुपार्श्व पाशके बन्धनोंसे मुक्त हो गये । उनके शरीरको चन्दनसे प्रलिप्त किया गया, इन्द्रके द्वारा मालाओंसे लपेटा गया, अग्निकुमार देवने मुकुटानल ज्वाला दी और शरीर प्रज्वलित कर दिया गया । उनकी, पापका नाश करनेवाली भस्मकी वन्दनाकर इन्द्र अपने निवासके लिए चला गया । अपने ऐरावत नागपर आरूढ़ वह नत शरीर पवन, वरुण, वैश्रवण और सूर्य आदि देवोंसे कहता है—

घत्ता—कि जहाँ सूर्य-चन्द्रके समान किरणावलिवाले भरतजिनेश और केवली देव सुपार्श्वका ज्ञान प्रसरित होता है वहाँ न वादी है और न प्रतिवादी, न तम है और न तेज ॥११॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका सुपार्श्व निर्वाणगमन नामका चवालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४४॥

---

१०. P मंडिवि ।

११. १. A P दिवह । २. P कालि पक्खंतरि । ३. A अट्ठमिवसुह । ४. A P पोलोमीसें । ५. A मालइमालिय । ६. P मणिमउडाणलेण जालोलिय । ७. P चच्चिकुमारिंहि । ८. A भव्व । ९. AP पुप्फयंत° । १०. A सुपासजिणणिव्वाण° । ११. A P omit this line.

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

संधि ४५

णित्तेइयअरिवंदहु वयणचंदजियचंदहु ॥
पणविवि कुवलयचंदहु चंदप्पहहु जिणिंदहु ॥ध्रुवकं॥

१

णियंगरस्सीहिं तमं विणीयं सुयंगउत्तीहिं जयं विणीयं
कयं कयत्थं किर जेण णिच्चं णमंति जं देववई वि णिच्चं ।
अतुच्छलच्छीहलकप्पभूयं उदारचित्तं गुणपत्तभूयं ।
दयावरं पालियसव्वभूयं गिराहिं संबोहियरक्खभूयं ।
ण जं पियालीविरहे विसण्णं मुणिं महंतं विमलं विसण्णं ।
विसुद्धभावं विगयप्पमायं परं परेसं परिझीणमायं ।
णिहीसरं जं महियंतरायं परज्जियाणंतदुरंतरायं ।
पबुद्धदुक्कम्मविवायवीलं विइण्णदुव्वाइविवायवीलं ।

सन्धि ४५

शत्रुसमूहको निस्तेज करनेवाले तथा मुखचन्द्रसे चन्द्रमाको पराजित करनेवाले पृथ्वी-मण्डलके चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रको मैं प्रणाम करता हूँ।

१

जिन्होंने अपने शरीरकी किरणोंसे अन्धकारका विनाश किया है, और शोभन द्वादशांग श्रुत की उक्तियोंसे जगको विनीत और कृतार्थ किया है, जिन्हें देवेन्द्र प्रतिदिन नमस्कार करते हैं, जो महान् लक्ष्मीरूपी फलके लिए कल्पवृक्षके समान हैं, जो उदारचित्त और गुणोंके पात्रीभूत हैं, दयावर सब प्राणियोंके पालनकर्ता, अपनी वाणीसे भूतपिशाचोंको सम्बोधित करनेवाले जो प्रिय सखीके विरहमें विषण्ण नहीं होते, जो पवित्र संज्ञाशून्य महान् मुनि हैं, जो विशुद्धभाव और प्रमाद रहित हैं, जो श्रेष्ठ विश्वस्वामी और माया रहित हैं, निधियोंके ईश्वर, अन्तरायोंका नाश करनेवाले, अनन्त दुरन्त रागोंको जीतनेवाले, दुष्पाक कर्मकी संवेदनासे सजग, जो दुष्ट वादियोंको

A has, at the beginning of this Saṃdhi, the following stanza:—

वापीकूपतडागजैनवसतीस्त्यक्त्वेह यत्कारितं
भव्यश्रीभरतेन सुन्दरधिया जैनं सुराणां (पुराणं) महत् ।
तत्कृत्वा प्लवमुत्तमं रविकृतिः (?) संसारवार्धेः सुखं
कोन्यत् (?) स्नसहसो (?) स्ति कस्य हृदयं तं वन्दितुं नेहते ॥ १ ॥

This stanza is not found in any other known MS. of the work.

१. १. A अरविंदहु; P अरिविंदहु । २. A दयायरं । ३. A संबोहियसव्वभूयं; T records a *p* सव्व-भूयमिति पाठे सर्वभूकं सर्वभूमिकम् । ४. P मुणीमहंतं । ५. A P परिखीण° । ६. A दुव्वायविवाय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुसच्चतच्चंगवियारणासं अणंगसिंगारवियारणासं ।
सदित्तियाभक्खरभाँवहारं भवोहसंभूँइभयावहारं ।
पुरंदरालोयणजोग्गगत्तं समुज्झियाहम्मदुपंकगत्तं ।
णिवारियप्पडवहसेलपायं फणिंदचूडामणिघट्ठपायं[10] ।
खगिंददेविंदमुणिंदधेयं णमामि चंदप्पहणामधेयं ।
भणामि तस्सेव पुणो पुराणं गणेसगीयं पवरं पुरा णं ।

घत्ता—अमलइ अत्थरसालइ वयणणवुप्पलमालइ ॥
अट्ठमु जिणवरु पुज्जमि पउरु पुण्णु आवज्जमि ॥१॥

२

मणुउत्तरोइल्लि भूभाइ सुसहिल्लि ।
दीवे पसिद्धम्मि पुक्खरवरद्धम्मि ।
जलभरियकंदरहु पुव्विल्लमंदरहु ।
सुरलोयसोहम्मि पच्छिमविदेहम्मि ।
धणकणसमिद्धम्मि देसे सुगंधम्मि ।
छक्खंडधरणिवइ सिरिपुरवरे णिवइ ।
उद्धूयरिउरेणु णामेण सिरिसेणु ।
सिरिकंत तहु घरिणि करिवरहु णं करिणि ।
सुयरहिउ णरणाहु चिंतवइ थिरबाहु ।
किं करमि कहिं चरमि को देउ संभरमि ।

विशेष पीड़ा देनेवाले हैं, जिनका मुख सुसत्य और तत्त्वसे उपलक्षित है, जो कामशृंगारके विचारोंका नाश करनेवाले हैं, जो अपनी दीप्तिसे सूर्यप्रभाका अपहरण करनेवाले हैं, जिनका शरीर इन्द्रके लिए दर्शनीय है, जिन्होंने अधर्मके दुष्पंकका गर्त छोड़ दिया है, जिन्होंने आत्मज्ञानके लिए पर्वतसे नीचे गिरनेका विरोध किया है, जिनके चरण नागराजके चूड़ामणिसे घिसे जाते हैं, जो खगेन्द्रों, देवेन्द्रों और मानवेन्द्रोंके द्वारा ध्येय हैं—मैं ऐसे चन्द्रप्रभ स्वामीको नमस्कार करता हूँ और फिर उन्हींका पुराण कहता हूँ जो कि पहले गणधरोंके द्वारा कहा गया था।

घत्ता—स्वच्छ अर्थोंसे रसाल वचनरूपी नवकमलोंकी मालासे आठवें जिनवरकी मैं पूजा करता हूँ और प्रचुर पुण्यका उपार्जन करता हूँ ॥१॥

२

मानुषोत्तर पर्वतसे सुशोभित सुखद भूभागवाले प्रसिद्ध पुष्कर द्वीपमें, जिसकी गुफाएँ जलसे पूरित हैं ऐसे पूर्व मन्दराचलके पश्चिम विदेहमें धनकणसे समृद्ध सुगन्धि देशके श्रीपुर नगरमें छह खण्ड धरतीका अधिपति, शत्रुओंकी धूल उड़ानेवाला राजा श्रीषेण था। श्रीकान्ता उसकी गृहिणी थी, मानो करिवरकी हथिनी हो। पुत्रसे हीन स्थिरबाहु राजा विचार

७. A T °भाविहारं । ८. A °संभूइयभावहारं । ९. A पुरंदरोलोयणजोगगत्तं; P पुरंदरालोयणजोयगत्तं । १०. A °घिट्ठपायं । ११. A P पवरं ।

२. १. A P मणमुत्तरोइल्लि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को देइ मह पुत्तु गुणरयणसंजुत्तु ।
ता भणइ सुपुरोहु जइ महसि सुयलाहु ।
तो कुणसु सहहेउ जिणणाहअहिसेउ ।
धम्माणुराएण तं सुणिवि राएण ।
जरमरणभयहरहं पडिमाउ जिणवरहं ।
रयणेहिं रइयाउ कलहोयमइयाउ ।
मंतेहिं थवियाउ खीरेहिं ण्हवियाउ ।
सुसुहं सुयंतीइ महिरायपत्तीइ ।
सिविणम्मि सुहईइ छेयम्मि राईइ ।
करि सीहु सिरि चंदु दिट्ठो विहारुंदु ।

घत्ता—वरपुत्तासइ लइयहु अक्खिउ जाइवि दइयहु ॥
तेण वि तहु परियाणिउं दंसणफलु वक्खाणिउं ॥२॥

३

सज्जणगणमणपयणियपणउ तुह सुंदरि होसइ पियतणउ ।
कइवयदियहहिं वेल्लि व लंलिउ लायण्णबहलजलविच्छुलिउ ।
वउ देविहि गब्भालंकरिउं ओलक्खिवि देहचिंधु तुरिउं ।
कंचुइहिं णरिंदहु वज्जरिउ तहु हियवउं हरिसें विप्फुरिउं ।
संतोसें देविहि पासि गउ णं वणगणियारिहि मत्तगउ ।

करता है—क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? किस देव की आराधना करूँ, कौन मुझे गुणरत्नसे युक्त पुत्र देगा ? तब सुपुरोहितने कहा कि यदि तुम पुत्र-लाभ चाहते हो तो शुभके हेतु जिननाथका अभिषेक करो । यह सुनकर राजाने धर्मके अनुरागसे जरा और मरणके भयका अपहरण करनेवाले जिनवरोंकी रत्नोंसे रचित स्वर्णमयी प्रतिमाएँ बनवायीं। मन्त्रोंसे उनकी स्थापना की और दूधसे अभिषेक कराया । महीराजकी सुभगा पत्नीने सुखपूर्वक सोते हुए, रात्रिके अन्तिम भागमें हाथी सिंह, लक्ष्मी और प्रभासे बहुल चन्द्रमा देखा।

घत्ता—उसने जाकर श्रेष्ठ पुत्रकी आशासे पतिसे कहा । उसने भी उसे बताया और स्वप्नदर्शनके फलकी व्याख्या की ॥२॥

३

हे सुन्दरी, तुम्हारे सज्जनसमूहके मनमें प्रणय उत्पन्न करनेवाला प्रिय पुत्र होगा । कुछ ही दिनोंमें देवीका लताके समान सुन्दर लावण्यके अत्यधिक जलसे विच्छुरित शरीर, गर्भसे अलंकृत हो गया । शरीरके चिह्नको देखकर कंचुकीने जाकर राजासे कहा । उसका हृदय हर्षसे विस्फुरित हो गया । सन्तोषके साथ वह देवीके पास गया, मानो वनहथिनीके पास मतवाला गज गया हो । उसके

२. AP सुसुहं सुवंतीइ । ३. A सुसईइ । ४. P पच्छम्मि । ५. A चंदु and gloss सूर्यः । ६. A विहोरुंदु and gloss चन्द्रः । ७. A सिविणयफलु ।

३. १. A सज्जणगुणगणपयणियपणउ; P सज्जणजणमणपयणिउ पणउ । २. AP होसइ सुंदरि । ३. A ललिय । ४. A °विच्छुलिय । ५. P देहि चिंधु । ६. A पासु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पेच्छिवि कसणाणणु थणजुयलु पेच्छिवि मुहमंडलु दरधवलु[७]।
सालसुयंगउ गयगइपसरु[८] पेच्छिवि पिय संभासिवि सुसरु[९]।
णरवइ [१०]णियमंदिरि गंपि थिउ णवमासहिं जणियउ [११]प्राणप्रिउ।
सुउ[१२] दुल्लहु वल्लहु सज्जणहं कुलमंडणु खंडणु दुज्जणहं।
णच्चिज्जइ गिज्जइ महुरसरु[१३] [१४]घंटु वज्जइ दिज्जइ धणणियरु।
काणीणहुं दीणहुं दुत्थियहं णिद्दविणहु किविणहु पंथियहं[१५]।

घत्ता—तूररवें[१६] दिस हम्मइ कण्णि वि पडिउ[१७] ण सुम्मइ॥
णारीणच्चणपेल्लिय[१८] वसुमइ णावइ हल्लिय॥३॥

४

विण्णाणें सण्णाणें घडियउ हियजणमणि णवजोव्वणि चडियउ।
ससिवयणहं सयणहं आवडिउ [१]सो इंदु व चंदु व णहि वडिउ।
जणणीजणणइं[२] जोयंति मुहुं अच्छंति तेण सहुं जांव सुहुं।
ता इट्ठउं दिट्ठउं णउ रहिउं सुइसीलें वणवालें कहिउं।
अरहंतहु संतहु आगमणु कयतावहु पावहु णिग्गमणु।
मयभावु गावु खणि परियलिउ लहुं णरवइ सुरवइ जिह चलिउ।
समसरणु समवसरणंतु गउ पहु विविहधउ[३] जियमयरधउ।

स्तनयुगलको श्याममुख देखकर और मुखमण्डलको कुछ सफेद देखकर, अलसाये अंगों और गजगतिका प्रसार देखकर, प्रियासे सुन्दर स्वरमें बात कर राजा अपने प्रासादमें जाकर स्थित हो गया। नौ माहमें प्रणयिनीने प्राणप्रिय पुत्रको जन्म दिया। वह दुर्लभ पुत्र सज्जनोंका वल्लभ (प्रिय) था, कुलमण्डन और दुर्जनोंका खण्डन करनेवाला था। मधुर स्वरमें गाया-नाचा जाने लगा। घण्टा बजने लगा, धनसमूह दिया जाने लगा—कानीनों, दीनों, दुःखितों, धनरहितों, कृपणों और पथिकोंको।

घत्ता—तूर्योंके शब्दोंसे दिशाएँ आहत हो उठीं। कानमें पड़ा हुआ भी शब्द सुनाई नहीं देता। नारियोंके नृत्यसे प्रेरित जैसे धरती हिल उठी॥३॥

४

विज्ञान और सम्यक्ज्ञानसे रचित, जनमनका हरण करनेवाला वह नवयौवनमें आरूढ़ हो गया। चन्द्रमाके समान मुखवाले अपने लोगोंमें आकर वह ऐसा लगता था जैसे इन्द्र या चन्द्रमा आकाशमें चढ़ गया हो। माता-पिता जबतक सुखसे उसका मुख देखते हुए रहते हैं तबतक वनपालने जो इष्ट दर्शन किया था, उससे वह रह नहीं सका। उस सुचिशील नामक वनपालने वह कह दिया—अरहन्त सन्तका आगमन और सन्तापदायक पापका निर्गमन। एक क्षणमें राजाका मदभाव और गर्व चला गया। शीघ्र ही वह राजा इन्द्रकी तरह चला। उपशमके स्थानपर

७. A वरधवलु; P छुहधवलु। ८ A गइगयपसरु; P गउ गयपसरु। ९. A ससुरु। १०. A मंदिरु। ११. AP पाण पिउ। १२. AP सो दुल्लहु। १३. P महुरयरु। १४. AP घडु। १५. P पत्थियहं। P adds after this: सिरिसम्मणिरूविउ णामु तसु, सुहलक्खणु जणवइ लद्धजसु। १६. A तूररवहं। १७. P वडिउ। १८. K °णच्चणपडिपेल्लिय।

४. १. P सो इंदु चंदु णं वडिउ। २. P °जणणु वि। ३. K विवहधउ।

जिणु वंदिवि णिंदिवि अप्पणउं तें पिसुणिउं णिसुणिउं तिहुयणउं ।
सिरिसेणें सेणें[4] पमेल्लविय सिरिसम्मइ[5] सिरिसम्मइ[6] थविय ।
महियासि णिवासि सिरिप्पहहु णियरुइगइछाइयरविरहहु ।
तवु गहियउं महियउं[7] दुच्चरिउं [8]चेट्ठिउं चिरु णिरु णिम्मच्छरउ ।
एत्तहि णंदणु णंदणु जणहु पउणंतु अंतु दुक्कियरिणहु ।
आसाढि रूढि णंदीसरइ छणंससिहरि[9] [10]मणहरि वासरइ ।
उववासिउ तोसिउ सुयसुइहिं सहुं सद्दिहिहिं [11]ससुहिहिं सुहमइहिं ।

घत्ता—अट्टरउद्दहिं चत्तउ धम्मझाणसंजुत्तउ ॥
थिउ [12]अत्थाणि णराहिउ णं णहयलि ताराहिउ ॥४॥

५

जावच्छइ[1] पेच्छइ जलियइ[2] दिस ता कामिणिचूडामणिसरिस ।
विहिविरलिय[3] वियलिय उक्क किह सुहरुहसररुहमयरंदु जिह ।
तं पेच्छिवि परिहच्छिवि[4] सयलु संचियमलु चंचलु भुवणयलु ।
णियतणयहु पणयहु लच्छिसहि अहिअल्लिय घल्लिय दिण्ण महि ।
पिउगुरुहि पुरुहि[5] थिरु लइउ वउ[6] सिरु मुंडिउं दंडिउं तेण वउ ।

समवसरणके लिए चला । विविध ध्वजवाले राजाने मकरध्वज (कामदेव) को जीतनेवाले जिनकी वन्दना कर अपनी निन्दा की । उसने जो कहा वह त्रिभुवनने सुना । श्रीषेणने सेना छोड़ दी और लक्ष्मी श्रीशर्मा पुत्रको सौंप दी । अपनी कान्ति और गतिसे जिन्होंने सूर्यके रथको आच्छादित कर लिया है ऐसे श्रीप्रभ (श्रीपद्म) के आशाओंका नाश करनेवाले निवासपर जाकर उसने तप ग्रहण कर लिया और दुश्चरितका नाश किया । उसकी पुरानी चेष्टाएँ मत्सरभावसे बिलकुल रहित हो गयीं । यहाँ लोगोंकी वृद्धि करनेवाले उस पुत्रने पापोंका अन्त करते हुए, आषाढ़ माहके प्रसिद्ध नन्दीश्वरमें पूर्णिमाके सुन्दर दिन, धैर्य सम्पन्न और शुभमतिवाले सुहृदोंके साथ उपवास किया और सन्तुष्ट हुआ ।

घत्ता—आठ रौद्रध्यानोंसे दूर और धर्मध्यानसे संयुक्त वह राजा दरबारमें बैठा हुआ ऐसा मालूम होता मानो नभतलमें चन्द्रमा हो ॥४॥

५

जब वह बैठा हुआ था तो जलती हुई दिशा देखता है । कामिनीके चूड़ामणिकी तरह आकाशमें फेंकी गयी उल्का उसे ऐसी दिखाई दी जैसे चन्द्ररूपी कमलका पराग हो । उसे देखकर संचित मल चंचल समस्त भुवनतलको छोड़कर अपने प्रणत पुत्रको अहित करनेवाली लक्ष्मीरूपी सखी त्याग दी और धरती दे दी । अपने पिताके गुरु नगरमें स्थिर व्रत लिया, सिर मुड़ा लिया,

४. A सेणय मेल्लविय । ५. A सिरिसमइ सिरिवम्मइ । ६. P reads *a* as *b* and *b* as *a*. । ७. P महिउं । ८. उव्वेढिउ चिरु णिम्मच्छरिउ । ९. AP छणससहरि । १०. A मणहरवासरइ । ११. A सु मु हि हि सुहमईहि; P मंतिहिं सुहमइहि । १२. P अत्थाणेण ।

५. १ A जामच्छइ; P जावच्छइ । २. A जडिय । ३. P °वियलिय विरलिय । ४. P परियच्छिवि । ५. A पुरहि; P गुरुहि । ६. A वउ; P तउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहरिहि सिरिसिह[7]रिहि हरिवि रइ　कयकलुसणास संणासगइ ।
सवियप्पि कप्पि सोहम्मवरि　एक्को[8]वहिसुहणिहिआउधरि ।
सिरिवहि सिरि[9]वंहि विलुलियचमरु　सिरिहरु मणहरु[10] जायउ अमरु ।
[11]एसज्जु पुज्जु तहु अट्ठगुणु　सुहवत्त सत्तकरमवियतणु ।
विहवइहं अइहं सहस दुइ　वट्टंति जंति जइ भुत्ति तइ ।
णीसासु मासु पूरिवि मुयइ　भावइ सेवइ काएं[12] जुयइ ।

घत्ता—तहु तहिं पंकयत्तहु　कीलंतहु[13] कीलंतहु ॥
आउ पईहु वि पें[14]लिउ　कालें को व[15] ण कवलिउ ॥५॥

६

अवरें[1] वि णररविपहवत्ति जहिं　बहुजीवइ बीयइं[2] दीवि तहिं ।
मोरयभीमोरयसंगरहु　इसुकारं[3]हु सारहु गिरिवरहु ।
पुव्वासइ वासइ भारहइ　सियभाणुभाणुकरभारहइ ।
णंदंत[4]पगावगावगहिरि　इलतिलइ अलयइ विसयवरि ।
संपयहि पयहि णिच्चु जि पियहि　णिदु[5]गेज्झहि उज्झहि णयरियहि ।
णिव्वट्टिउ लोट्टिउ कूरमइ　[6]अजियंजउ दुज्जउ मणुयमइ ।

और शरीरको दण्डित किया। सिहों सहित श्रीपर्वत शिखरपर रतिका नाश कर, जिसमें कालुष्यका नाश कर दिया गया है, ऐसी संन्यास गति रचकर वह एक सागर आयु और सुखकी निधि धारण करनेवाले सौधर्म स्वर्गके श्रीसम्पन्न श्रीप्रभ विमानमें, जिसपर चमर ढोरे जा रहे हैं, ऐसा श्रीधर नामका सुन्दर देव हुआ। उसका आठ गुना पूज्य ऐश्वर्य था। उसका सात हाथोंसे मापा गया शरीर सुखका पात्र था। वैभवसे गोले दो हजार वर्ष जब बीत जाते हैं, तब उसका भोजन होता है, एक माहमें साँस लेकर छोड़ता है। उसे स्त्री अच्छी लगती है, और शरीरसे उसका सेवन करता है?

घत्ता—वहाँ क्रीड़ा करते-करते कमलनेत्र उसका लम्बा समय निकल गया। समयके द्वारा कौन कवलित नहीं होता? ॥५॥

६

मनुष्य रूपी सूर्यकी प्रभावाले अनेक जीवोंसे युक्त दूसरे धातकीखण्ड द्वीपमें जिसमें मयूर और भयंकर साँपोंका युद्ध होता है, ऐसे श्रेष्ठ इष्वाकार पर्वतकी पूर्व दिशामें सूर्य और चन्द्रमाकी किरणोंसे आलोकित भारतवर्षके आनन्द करते हुए प्रचुर गांवोंसे गम्भीर पृथ्वीमेंश्रेष्ठ अलका क्षेत्रमें सम्पत्तियों और प्रजाओंसे प्रिय मनुष्योंके द्वारा अग्राह्य अयोध्या नगरीमें अत्यन्त भ्रष्ट

७. AP सुरसिहरिहे। ८. A जुम्मोवहिं। ९. A सुरगिहि। १०. A सिरिहरु। ११. A एसज्ज पुज्ज। १२. A कायवि जुवइ। १३. P सहुं अच्छर। १४. A पयडिउ। १५. A कालें को वि ण कवलिउ; P कालें को णउ कउलिउ।

६. १. A अवर वि णर रवि पवहंति जहिं; P अमर वि णरवर विहरंति जहिं। २. A दीवइ बीइ। ३. A सुइकारहु। ४. AP पगामगामं। ५. A णिरु गिज्झहि but णिदुगेज्झहि in margin। ६. AP अजयंजउ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तहु मंदिरि[7] णंदिरि णिम्मलिणि सुंदरि इंदिदिरि णं णलिणि ।
मुक्कमलकमलदलणयणजुय[8] सुहजलरहल्लि[9] णववेल्लिभुय ।
[10]तियसिरमणि गुणमणिणिवहखणि सरसेणाजियसेणा रमणि ।
सुपसुत्त पुत्तसंणिहियमइ सा सिविणय[11] सुविणिय णियइ सइ ।
घत्ता—सीहु हत्थि ससि दिणयरु पुण्णकलसु पंकयसरु ॥
सिरि वसहिंदु पमत्तउ [12]संखु दाहिणावत्तउ ॥६॥

७

दिट्ठउ सिट्ठउ सुहिमाणियइ[1] णियकंतहु कंतहु राणियइ ।
फलु विलसिउं भासिउं तेण तहि दिसवलेए[2] विमलइ थियइ णहि ।
तहि गब्भि अब्भि णं चंदमउ थिउ[3] सिरिहरु सिरिहरु सच्चमउ ।
उप्पण्णउ धण्णउ पुण्णणिहि[4] तरु धरणिहि अरणिहि णाइं सिहि ।
जं जाणिउं भाणिउं जेण जहिं वड्ढंतें संतें तेण तहिं ।
णयरिद्धिइ बुद्धिइ लक्खियउं णिहिलत्थु वि सत्थु वि सिक्खियउं ।
मायइ पियवायइ गुणसहिउं णियणामु सधामु तासु णिहिउं ।
सवियक्कउ थक्कउ तरुणिरउ[5] णवजोव्वणि णं[6] वणि महुसमउ ।

कूरमति अजितंजय नामका दुर्जेय (मनुजमति) राजा था। आनन्द देनेवाले उसके घरमें निर्मल सुन्दरी गृहिणी थी मानो कमलिनीमें लक्ष्मी हो। वह निर्मल कमलके समान आँखों वाली सौन्दर्यके जलकी लहर नवलताके समान बाहुबली, स्त्रियोंमें शिरोमणि, गुणरूपी मणिसमूहकी खदान, और कामदेवकी सेना अजितसेना नामकी स्त्री थी। पुत्रमें अत्यन्त बुद्धि रखनेवाली, अत्यन्त प्रगाढ़ रूपसे सोयी हुई, सुविनीता वह सती स्वप्न देखती है।

घत्ता—सिंह, हाथी, चन्द्रमा, दिनकर, पूर्णकलश, कमल, सरोवर, लक्ष्मी, प्रमत्त वृषभेन्द्र और दक्षिणावर्त शंख ॥६॥

७

सुधियोंके द्वारा मान्य रानीने जो देखा, वह अपने प्रिय पतिसे कहा। उसने उससे उसका विलसित फल कहा। दिशा मण्डल और आकाशके निर्मल होनेपर उसके गर्भमें, बादलोंमें चन्द्रमा के समान, लक्ष्मीधारक श्रीधर स्थित हो गया। पुण्य निधि और धन्य वह इस प्रकार उससे उत्पन्न हुआ जैसे धरती पर वृक्ष और लकड़ीसे आग उत्पन्न हुई हो। वृद्धिको प्राप्त होते हुए उसने जहाँ जो जाना वह कहा। नय-ऋद्धि और बुद्धिसे वह उपलक्षित हो गया, निखिलार्थ शास्त्र भी उसने सीख लिये। प्रिय बोलनेवाली माँ ने गुण सहित अपना नाम और घर उसे सौंप दिया (अजितसेन उसका नाम था) नवयौवनमें वह विचारग्रस्त और तरुणीरत हो गया मानो वनमें

७. A णंदिरि मंदिरि । ८. A सुक्क° । ९. A सुयजलहरणि णिववेल्लिभुय; P सुहजलवहुल्लि । १०. AP तियसिर° । ११. A सविणय सिविणय; P सुविणय सिविणय । १२. AP संखु वि दाहिणवत्तउ ।

७. १ सुहमाणियइ । २. A दिसिवलयइ विमलि थियम्मि णहि; P दिसवलइ विमलि थियम्मि णहि । ३. AP omit थिउ । ४. A उप्पण्णउ वण्णउ सच्चणिहि; P उप्पण्णहु वण्णहु पुण्णणिहि । ५. A तरुणियउ । ६. AP वणि णं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ता राएं ताँ[7]एं तालघणु गंपिणु गयसोउ असोयवणु ।
दुहहरु सिरिहरु जिणु सेवियउ भव[8]पासु सुदूरु[9] विहावियउ ।

घत्ता—चिंतइ महिपरमेसरु एंवहिं धम्महु अवसरु ॥
कण्णहु णियडइ धुलियइं मरणु कहंति व पलियइं ॥७॥

८

सो अजियसेणु वेणु[1] व धरहि अहिसिंचिउ ण्हविउ ढोइयकरेंहि[2] ।
रिसिसिक्खहि दिक्खहि लग्गु किह पिउ हयकलि केवलि हुयउ जिह ।
एत्तहि जयजत्तहि जोत्तियहु णिक्खत्तियखत्तियसोत्तियहु ।
तसियक्कु चक्कु तहु हुयउ घरि रुइपुंजु कंजु ण कंजैं[3]सरि ।
जणजोणिहि खोणिहि साहियइं चडइं छक्खंडइं साहियइं ।
णवणिहि मणदिहिउप्पायणइं रयणइं चेयणइं अचेयणइं ।
चउदह दहंगभोएँ[4]ण सहुं घरु एंति देंति चिंतविउं लहु ।
कयदमु अरिंदमु णामें समणु मासोववासि धणे[5]रासितणु ।
जो मण्णइ वण्णइ जिणचरिउं जें सुत्तु सुजुंत्तु[6] समुद्धरिउ ।
घरु पत्तु पत्तु तें जोइयउ अणवज्जु भोज्जु संप्राइयउँ[7] ।
णवें[8]पुण्णइं णवणवभावणइ तें बद्धइं णिद्धइं कयें[9]पणइ ।

वसन्तका समय हो। तब पिता राजाने शोकसे रहित होकर ताल वृक्षोंसे सघन अशोक वनमें जाकर दुःखका हरण करनेवाले श्रीधर जिनकी सेवा की और अत्यन्त दूरवर्ती भवरूपी बन्धनको देख लिया।

घत्ता—धरतीका वह राजा विचार करता है कि इस समय, अब धर्मका अवसर है। कानोंके निकट व्याप्त सफेदी मानो मृत्युका कथन कर रही है ॥७॥

८

उसने उस अजितसेनको कर देनेवाली धरती पर वेणुके समान स्थापित कर दिया और अभिषेक किया और मुनिकी शिक्षासे युक्त दीक्षामें वह इस प्रकार लग गया कि पापको नष्ट करनेवाले पिता केवलज्ञानी हो गये। इधर विजय-यात्रामें लगे हुए तथा जिसने क्षत्रियों और ब्राह्मणोंको क्षत्र रहित कर दिया है ऐसे उस राजा अजितसेनको सूर्यको त्रस्त करनेवाला चक्र, इस प्रकार उत्पन्न हुआ मानो कमलोंके सरोवरमें कान्तिका समूह उत्पन्न हुआ हो। उसने मनुष्यों-की योनि प्रचण्ड छह खण्ड भूमि सिद्ध कर ली। नव निधियाँ, मनके भाग्यको उत्पन्न करनेवाले चेतन अचेतन चौदह रत्न, दशांगभोगोंके साथ घर आते हैं और वह जिसकी चिन्ता करता है, वे वह शीघ्र प्रदान करते हैं। शान्तमन एक मासका उपवास करनेवाले और तृणके समान शरीरवाले अरिंदम नामक श्रमण, जो जिनचरितको मानते हैं और उसका वर्णन करते हैं, तथा जिन्होंने युक्तियुक्त सूत्रोंका उद्धार किया है घर आये। राजाने उन्हें देखा और उन्हें अनवद्य आहार दिया। प्रणतिपूर्वक नव-नव भावनासे उसने स्निग्ध नये-नये पुण्योंका बंध किया। जिन्होंने शुभ दिशा

७. A तालहिं तालघणु । ८. AP भवयारु । ९. A सदूरु ।
८. १. A घेणु व धरहु । २. A °करहु । ३. P रज्जसरि । ४. P °भोएहिं । ५. A गुणरासितणु । ६. P सजुत्त । ७. A P संपाइउ । ८. P णवपुण्णय । ९. P कयविणइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणवंतहं संतहं महरिसिहिं आदंसियसंसियसुहदिसिहिं।
[10]महिवंटयणिक्कंटयवइहि पंचब्भुय तहु हुय णरवे[11]इहि।
घत्ता—चक्कवट्टिसिरिलीलइ एंव तासु गयकालइ ॥
दिट्ठउ जिणु त[12]रुणीलइ मणहरणामवणालइ ॥८॥

९

सुहावहं गईवहं।
रविप्पहं गुणप्पहं।
थिरं पियं सुवं सुयं।
णिवाइणा सराइणा।
महाणिणा पुणो तिणा।
मुएवि सं रईविसं।
कयं तवं गयासवं।
णिरासयं अहिं[1]सयं।
अदोसयं अमोसयं।
अरोसयं अतो[2]सयं।
विहट्टियं पलोट्टियं।
[3]चलं खलं मणोमलं।
[4]मओ मुणी [5]हुओ गुणी।
अणप्पए सुकप्पए।
बुहत्थुए स[6] अच्चुए।
विहंकरे सुहंकरे।
समाणए विमाणए।

दिखायी और सूचित की है, ऐसे गुणवान् और सन्त महर्षियोंके द्वारा मही और पत्तनोंके निष्कंटक स्वामी उस राजाके लिए पाँच आश्चर्य उत्पन्न किये गये।

घत्ता—इस प्रकार चक्रवर्तीकी श्रीलीलासे उसका समय निकलता चला गया। उसने वृक्षोंसे हरेभरे मनहर वनालयमें जिनके दर्शन किये ॥८॥

९

सुख प्राप्त करानेवाले, गतियोंके नाशक, सूर्यके समान प्रभावाले गुणोंके मार्ग, स्थिर स्थित, उन्हें राजाने प्रेमके साथ सुना और फिर चक्रवर्तीने गतिके अधीन सुख छोड़कर आस्रव रहित, आश्रयहीन अहिंसक अदोष मृषा शून्य अक्रोध, दोष रहित तप किया और चंचल दुष्ट मनोबल को नष्ट कर दिया। वह मुनि मर गये और वह गुणी महान् विभासे युक्त शुभंकर सम्माननीय अच्युत विमानमें अच्युतेन्द्र हुआ।

१०. A महिवट्टयणिक्कंटयवइहो; P महिवट्टयणिक्कंटियमहिहि। ११. A णरवइहो। १२. P तरुलीलइ।

९. १. A omits अहिंसयं। २. A सतोसयं। ३. A वलं। ४. A मुओ। ५. P हुओ। ६. A P सुअच्चुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—आउमाणु हयणिद्दइं　　तहु बावीससमुद्दइं ॥
तेत्तियवाससहासहिं　　भुंजइ मणविण्णासहिं ॥९॥

१०

ससेइ सो पमत्तए[1]　　दुवीसपक्खमेत्तए।
सहंतकंठरेहओ　　तिहत्थमेत्तदेहओ।
अमस्सरोमकेसओ[2]　　ससंकसुक्कलेसओ।
अमोहबोहसंणिही　　पहू[3] तमप्पभावही।
किरीडकोडिमंडिओ[4]　　अपाढओ वि पंडिओ।
अधूविओ सुगंधओ　　अण्हायओ[5] सिणिद्धओ।
सहावजायभूसणो　　कणंति[6]किंकिणीसओ।
विचित्तचारुचेलओ　　ललंतफुल्लमालओ।
जहिं जहिं विजोइओ　　तहिं तहिं विराइओ।
गुणेहिं सो अदुज्जसो　　अणालसो अतामसो।
मणेण चिंतियं जहिं　　खणेण गच्छए तहिं।
कवाडवेइअंतरे　　असंखदीवसायरे।
कुलायलावलीवणे　　रमेइ गंधमायणे।
जलंतरयणपावए　　दुइज्जयम्मि दीवए।
तहिं पि सीयलीरिणी　　णिदाहडाह[7]हारिणी।
गइंद[8]घट्टचंदणे　　तडम्मि तीइ दाहिणे।

घत्ता—उसकी आयु, निद्रासे रहित बाईस सागर प्रमाण थी। उतने ही हजार वर्षों (बाईस हजार वर्षों) में वह मनसे कल्पित आहार ग्रहण करता ॥९॥

१०

बाईस पक्षोंकी यात्रावाले समयमें वह साँस लेता। उसके कण्ठकी रेखा शोभित थी। उसका शरीर तीन हाथ प्रमाण था। मूँछ और केशोंसे रहित वह चन्द्रमाके समान निर्मल शुक्ल लेश्यावाला था। तमप्रभा नामक नरक तक अवधिज्ञानसे युक्त था। जो किरीटकोटिसे मण्डित था, बिना पढ़ाये हुए भी पण्डित था। बिना धूपके ही जो सुगन्धित था। बिना स्नानके भी स्निग्ध था, स्वभाव ही से उसे आभूषण उत्पन्न हुए थे, जो किंकिणियोंके मधुर स्वरसे युक्त था, विचित्र सुन्दर वस्त्रोंसे सहित था, झूलती हुई सुन्दर मालाओंसे युक्त था, वह जहाँ-जहाँ भी देखा गया, वहाँ-वहाँ सुन्दर था। गुणोंके कारण अपयशसे रहित, अनालस और तामसिक प्रवृत्तिसे रहित था। मनसे जहाँ चाहता था, वहाँ एक क्षणमें पहुँच जाता था। वह कपाटवेदी और वेदीवाले असंख्य द्वीप सागरों, कुलाचलोंके पंक्तिवनों और गन्धमादन पर्वतपर रमण करता। जिसमें रत्नोंकी ज्वाला प्रज्वलित है, ऐसे दूसरे द्वीपमें ग्रीष्मकी जलनका हरण करनेवाली सीता नदी है, जिसमें

१०. १. A P पमेत्तए। २. A P अमंसु°। ३. P पहुत्तमप्पहा°। ४. A किरीडिकोडि°। ५. A P अण्हाणिओ। ६. A P कणंत। ७. AP °डाहघारिणी। ८. P गयंद°।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

विलासवाससंतई धरित्ति मंगलावई।
पुरं तहिं घरुच्चयं विहाइ वत्थुसंचयं।
घत्ता—सूहउ कामसमाणउ कणयप्पहु तहिं राणउ ॥
कणयमाल तहु गेहिणि णं जलहिहि[9] जलवाहिणि ॥१०॥

११

तओ सो सुवत्तो जिणिंदस्स भत्तो।
चुओ देवणाहो हुओ पोमणाहो[1]।
सुओ तीइ[2] दिव्वो अगव्वो सुभव्वो।
सरूवेण[3] मारो बलेणं समीरो।
पयावेण सूरो धणेणं कुबेरो।
गईए चिसिंदो जुईए णिसिंदो।
मईए महल्लो गुणीणं पहिल्लो।
रमाए सुरिंदो खमाए मुणिंदो।
पिऊ तुट्ठचित्तो स पुत्तेण जुत्तो।
गओ रिद्धरुक्खं[5] सरुद्दक्खदक्खं[6]।
णहालग्गतालं फलालं लयालं।
भमंतालिसामं[7] मणोहारिणामं।
वणं तं पइट्ठो सयासिट्ठणिट्ठो[8]।
तहिं तेण दिट्ठो मुणीणं वरिट्ठो।

गजों द्वारा चन्दन घर्षित है उसके ऐसे तटपर विलासपूर्ण गृहोंकी पंक्तिवाली मंगलावती नामकी भूमि है। उसमें घरोंसे ऊँचा वस्तु संचय नामका नगर शोभित है।

घत्ता—उसमें सुन्दर कामदेवके समान कनकप्रभ नामका राजा था। कनकमाला उसकी गृहिणी थी, मानो समुद्रकी नदी हो ॥१०॥

११

तब वह सुमुख जिनभक्त देवेन्द्रनाथ च्युत होकर उससे पद्मनाथ नामक पुत्र हुआ जो दिव्य गर्वरहित, सुन्दर और भव्य था। जो स्वरूपमें कामदेव, बलमें समीर, प्रतापमें शूर, धनमें कुबेर, गतिमें वृषभराज, ज्योतिमें चन्द्रमा, मतिमें श्रेष्ठ, गुणियोंमें पहला, लक्ष्मीमें देवेश, और क्षमामें मुनीन्द्र था। सन्तुष्ट चित्त पिता पुत्रके साथ मनोहर नामके वनमें गया, जिसमें समृद्ध वृक्ष थे, जो रुद्राक्ष और द्राक्षा वृक्षोंसे युक्त था। जिसमें ताल वृक्ष आकाशको छू रहे थे। जो फलों और लताओंसे युक्त था और भ्रमण करते हुए भ्रमरोंसे श्यामल था। उसने वनमें प्रवेश किया। वहाँ उसने श्रेष्ठ अनुष्ठानसे युक्त तथा मुनियोंमें वरिष्ठ एक मुनिको देखा।

९. A जलणिहि।

११. १. P पउमणाहो। २. A तेए दिव्वो। ३. AP सुरूवेण। ४. P रईणं सुचंदो। ५. A रिद्धिरुक्खं। ६. A सुरो दक्खदक्खं। ७. P भमंतालिमालं; P adds after this : मरालीमरालं, सुच्छाइसामं। ८. T सिद्धणिट्ठो उत्तमानुष्ठानः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तहु धुवसिवपुरगामिहि णरवइ सिरिहरसामिहि ॥
जम्मभवणसमभग्गउ दिढु कमकमलेहिं लग्गउ ॥११॥

१२

णिवदारणि मारणि सा[3]इंणिय　णियतणयहु पणयहु मेइणिय ।
लहु ढोयवि जोयवि सुयमइउ　कणयप्पहु दप्पहु पावइउ ।
पडिवण्णउं सुण्णउं तेण वणु　चलसंदणु णंदणु गउ भवणु ।
सोमप्पह सुप्पह तासु पूयँ　किं अक्खमि पेक्खमि णाइं स्रुयँ ।
णिरवण्णु सुवण्णु ताहं तणउ　लद्धुण्णइ भण्णइ किं मणुउ ।
ससिअक्कचक्कचंचलपयहिं　दियहेहिं रहेहिं व संगयहिं ।
सइं सासणि आसणि थियउ जहिं　पहसियमुहु तणुरुहु थविउ तहिं ।
विण्णविवि णंविवि ओलग्गियउ　वउं सिरियरु सिरिहरु मग्गियउ ।
णिग्गंथहु पंथहु खणु[5] ण चुउ　सो पोमप्पहु[12] रिसिणाहु हुउ ।
घत्ता—सयलहं जीवहं मित्तउ　हेमधूलिसमचित्तउ ॥
णियदेहे वि णिरीहउ　वणि णिवसइ मुणिसीहउ ॥१२॥

घत्ता—जन्मभवके श्रमको नष्ट करनेवाला वह राजा शाश्वत शिवपुरके गामी उन श्रीधर स्वामीके चरणोंमें पूरी दृढ़तासे लग गया ॥११॥

१२

नृपदारिणी, मारिणी, शाकिनी, भेदिनी आदि विद्याएँ और धरती अपने प्रिय पुत्रको देकर, शुभमति दर्पको आहत करनेवाला वह कनकप्रभ प्रव्रजित हो गया। उसने शून्य वन स्वीकार कर लिया। चंचल है रथ जिसका ऐसा पुत्र अपने घर गया। चन्द्रमाके समान कान्तिवाली सुप्रभा उसकी प्रिया थी। उसका क्या वर्णन करूँ। मैं उसे पुष्पमालाके समान देखता हूँ। स्वर्णनाभ उन दोनोंका पुत्र था जो मनुष्योंमें सुन्दर था। उन्नति प्राप्त करनेपर (बड़े होनेपर) उसे मनुष्य क्या कहा जाये? जिनके चन्द्रमा और सूर्यरूपी चक्र पैर हैं ऐसे दिनरूपी रथोंके निकल जानेपर, जहाँ राजा स्वयं शासन और सिंहासनपर स्थित था, वहाँ उसने प्रहसित मुख अपने पुत्रको स्थापित कर दिया। विनय और प्रणाम कर उसने सेवा की, श्रीलक्ष्मीके कर्ता पद्मनाभ श्रीधरसे व्रतकी याचना की। निर्ग्रन्थ पथसे वह एक क्षण च्युत नहीं हुआ। इस प्रकार वह पद्मनाभ मुनि हो गये।

घत्ता—वह समस्त जीवोंके मित्र थे, स्वर्ण और धूलमें समान चित्त रखनेवाले थे। अपने ही शरीरके प्रति निरीह वह मुनिसिंह वनमें निवास करने लगे ॥१२॥

९. P °पुरिगामिहि। १० P जम्ममरणसम°। ११. A °कमलहो लग्गउ।
१२. १. P णिवमारणि। २. मारणि। ३. A सइरिणिय। ४. AP पिय। ५. AP सिय। ६. A णाहतणउ। ७. P मणउ। ८. A थियउ; P णिहिउ। ९. A णविउ। १०. AP वउ सिरिहरु। ११. P खणिण कउ। १२. A पोमणाहु; P पउमणाहु।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

१३

एयारह मणहरकहियाइं[1] अविहंगइं अंगइं गहियाइं ।
मयदवणें तवणें तवियाइं तुंगइं अट्ठंगइं खवियाइं ।
उद्दाम[2]कामविद्दावणउ सुह[3]सीलहं सोलहहं भावणउं[4] ।
तहु लीणउ[5] झीणउ रयपसरु[6] लइ लद्धउं बद्धउं तित्थयरु ।
णामल्लउं भल्लउं जाणियउ परिछेयहु छेयहु आणियउ ।
आराहिवि साहिवि संतमइ जीविउं संपाविउँ[7] दिव्वगइ ।
अववग्गहु सग्गहु मज्झि जइ णिव्वाणठाणसंबद्धरइ ।
उच्छण्ण[8]छिण्णमिच्छत्तगेहि[9] संपुण्णपुण्णफलभुत्तिवहि ।
तिगुणियदहतिजलहिआउहरि तइसंखपक्खणीसासयरि ।
तेत्तीसवाससहसंतरिउ आहारु चारु जहिं अवयरिउ ।
करमेत्तु गत्तु विच्छुरियदिसु[10] जहिं णिहिलु धवलु जणु णं सुजसु[11] ।
घत्ता—तहिं सियंगु सुच्छायउ वइजयंति सो जायउ ॥
जं पेक्खिवि पह[12]हीणी भरह पुप्फदंताणी ॥१३॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे पउमणाहवइजयंतसंभवो णाम [13]पंचचालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४५॥

१३

केवलज्ञानियों द्वारा प्रतिपादित अविकल ग्यारह अंग उसने स्वीकार कर लिये। मदको सन्तप्त करनेवाले तपमें उन्होंने उसके ऊँचे आठों अंगोंको नष्ट कर दिया। उद्दाम कामको नष्ट करनेवाली शुभशील सोलह कारण भावनाओंका ध्यान किया। उनका रतिप्रसार लीन और क्षीण हो गया, तो उन्होंने तीर्थंकरत्वका बन्ध कर लिया और उसे पा लिया। श्रेष्ठ नामप्रकृतिको जान लिया और उत्तम पुरुषकी आयुका बन्ध कर लिया। शान्तमति वह आराधना और साधना कर दिव्यगति और जीवनको प्राप्त हुआ। जिसने निर्वाणके स्थानमें अपनी रति बाँधी है ऐसे वह मुनि अवग्रह स्वर्गमें (वैजयन्त विमानमें) उत्पन्न हुए। जहाँ मिथ्यात्वरूप ग्रह नष्ट हो गया है और जो सम्पूर्ण पुण्यफलकी भुक्तिको वहन करता है, जहाँ तैंतीस सागर प्रमाण आयु होती है, तैंतीस पक्षोंमें श्वास लिया जाता है, और तैंतीस हजार वर्षमें जहाँ सुन्दर आहार किया जाता है। जहाँ दिशाओंको विच्छुरित करनेवाला एक हाथ प्रमाण शरीर होता है और जहाँ मनुष्य मानो यशके समान सब ओरसे धवल होता है।

घत्ता—वहाँ उस वैजयन्त विमानमें सुन्दर कान्तिवाला वह श्वेतांग देव हुआ, जिसे देखकर पुष्पदन्त (सूर्य-चन्द्र) की भार्या (प्रभा) प्रभासे हीन हो गयी ॥१३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका पद्मनाभ-वैजयन्त-उत्पत्ति नाम का पैंतालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४५॥

१३. १. A T मणहरणिहियाइं। २. P omits this foot. । ३. A °सीलउ । ४. A P add after this : भावेप्पिणु सिवपहदावणउ । ५. P झीणउ लोणउ । ६. P रइपसरु । ७. A P संपाविउ । ८. A P उच्छिण्ण° । ९. A °गिहे but gloss ग्रहे । १०. A P वित्थरियदिसु । ११. A णंदजसु । १२. A पहहाणी । १३. P पंचालीसमो ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ४६

तहु देवहु तेत्तीसंबुणिहिपरिमियाउ पुणु णिट्ठिउ ॥
कालें कलियउ[1] तं तेत्तिउ वि छम्मासंतु परिट्ठिउ ॥ध्रुवकं॥

१

तइयहुं सहसच्छि[2] सहासबाहु अक्खइ जक्खहु सोहम्मणाहु ।
भो जक्ख जक्ख सयदलदलक्ख परिपालियवसुहणिहाणलक्ख ।
इह जंबुदीवि भरहंतरालि चंदउरि पवरि धणकणजणालि[3] ।
धरसेणु[4] महासेणक्खु णिवइ जं लंघिवि उवरि ण रवि वि तवइ ।
सोहग्गें तिहुयणहियवलीण गमणेण हंसि घोसेण वीण ।
सियसरलतरलणयणहिं कुरंगि लक्खण णामें लक्खणहरंगि ।
तहु पणइणि णं ससहरहु कंति णं मुणिवरणाहहु लग्ग खंति ।
अट्ठमउ दयासरिमहिहरिंदु एयहु घरि होसइ जिणवरिंदु ।
सयणासणु भूसणु असणु वसणु कुरि पुरवरु सुंदरं[5] दलहि वसणु ।

घत्ता—ता [6]भूरिचंदमउ चंदउरु चंदमुहिण तं विरइयउ[7] ॥
धणदेवीभत्तारेण खणि मोत्तियरयणहिं खइयउ ॥१॥

सन्धि ४६

उस देवकी तेंतीस सागर परिमित आयु फिर समाप्त हो गयी । वह उतनी आयु भी कालके द्वारा कवलित कर ली गयी । केवल छह माह आयु शेष रही ।

१

तब हजार आँखों और बाहुओंवाला सौधर्मेन्द्र यक्षसे कहता है—"कमलके समान आँखोंवाले, और जिसने वसुधाके लाखों खजानोंकी रक्षा की है ऐसे हे यक्ष, इस जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रके भीतर धन-जन और अन्नसे परिपूर्ण प्रवर चन्द्रपुरमें सेनाको धारण करनेवाला महासेन नामका राजा है, उसे लाँघकर; उसके ऊपर सूर्य भी नहीं तपता । उसकी लक्षणोंको धारण करनेवाली लक्ष्मणा नामकी पत्नी है, जो सौभाग्यसे त्रिभुवनके हृदयोंमें लीन है, जो गमनमें हंस और बोलनेमें वीणा के समान है, जो अपने श्वेत और चंचल नयनोंसे हरिणी है । उसकी वह प्रणयिनी ऐसी थी मानो चन्द्रमाकी कान्ति हो, या मानो मुनिवरके लिए क्षांति लगी हो । दयारूपी नदीके लिए महीधरेन्द्रके समान आठवें जिनेन्द्र इनके घर जन्म लेंगे । इसलिए शयनासन, भूषण, अशन, वसन और नगरको सुन्दर बनाओ, सब कष्टोंको दूर कर दो ।"

घत्ता—तब चन्द्रमुख और लक्ष्मी देवीके स्वामी कुबेरने शीघ्र ही स्वर्णमय नगरकी रचना की और उसे एक क्षणमें मोतियों तथा रत्नोंसे विजड़ित कर दिया ॥१॥

---

१. १. A P कवलिउ । २. A सहसत्ति but gloss सहस्रपाक इन्द्रः । ३. A धणकयजणालि । ४. A वरसेणु । ५. A P सुंदरु दलियवसणु । ६. P भूरिचंदसुहचंदउ । ७. A चंदमुहेणं विरयउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

सम[1]विउलवाहियालीणिवेसु अवितुट्टहट्टटिंटा[2]पएसु ।
वियसियवणपरिमलमहमहंतु चलचंचरीयकुलगुमुगुमंतु ।
जिणवरघरघंटाटणटणंतु कामिणिकरकंकणखणखणंतु ।
माणिक्ककरावलिजलजलंतु सिहरग्गधयावलिललललंतु ।
ससिमणिणिज्झरजलझलझलंतु मग्गावलग्गहरिहिलिहिलंतु ।
करिचरण[3]संखलाखलखलंतु [4]रवियंतहुयासणधगधगंतु ।
बहुमंदिरमंडिय[5]जिगिजिगंतु सद्दलदलतोरणचलचलंतु ।
गंभीरतूररवरस[6]मसंतु तरुणयवसंतु णिच्चु जि वसंतु ।
कालायरुधूवियणायरंगु णाणारंगावलिलिहियरंगु ।

घत्ता—सा सुंदरि पियमणहारिणिय सुरहिय[7]गंधइं मालइ ॥
[8]सुहं सुत्त विरामि विहावरिहि सिविणयमाल णिहालइ ॥२॥

३

गलियदाणचलजललवलोलिरभिंगयं
पेच्छइ विसालच्छि पमत्तमयंगयं ।
इट्ठगिट्ठितणुफंसणकंटइयंगयं
वसहममलथलकमलपसाहियसिंगयं ।

२

जिसमें अश्वोंके सम और विस्तीर्ण क्रीड़ाप्रदेश हैं, तथा सम्पुष्ट बाजार और द्यूतप्रदेश हैं। जो विकसित वनके परिमलोंसे महक रहा है और चंचल भ्रमरोंके कुलसे गुनगुना रहा है। जिसमें जिनवरके मन्दिरोंके घण्टोंकी टन-टन ध्वनि तथा कामिनियोंके कंगनोंकी खन-खन ध्वनि हो रही है, जो माणिक्योंकी किरणावलीसे प्रज्वलित है और शिखरोंके अग्रभागकी ध्वजाओंसे चंचल है। जो चन्द्रकान्त मणियोंके निर्झरोंके जलसे चमक रहा है। मार्गपर चलते हुए अश्वोंसे आन्दोलित है तथा हाथियोंके पैरोंकी शृंखलाओंसे झूल-सा रहा है, सूर्यकान्त मणियोंकी ज्वालासे धकधक करता हुआ, अनेक प्रासादोंकी शोभासे चमकता हुआ जो गीले पत्तोंके तोरणोंसे चंचल है, गम्भीर तूर्योंसे शब्द करता हुआ जो तरुणजनोंसे अधिष्ठित है और जिसमें वृक्षोंमें नित्य वसन्त स्थित रहता है। जिसके प्रांगण कालागुरुके धुएँसे युक्त तथा नाना प्रकारकी रांगोलियोंसे लिखित हैं।

घत्ता—सुरभित गन्धसे मालतीके समान अपने प्रियके मनका हरण करनेवाली, सुखसे सोती हुई वह रात्रिका अन्त होने पर स्वप्नावली देखती है ॥२॥

३

वह विशालाक्षी स्वयं देखती है—जिसके झरते हुए चंचल मदजलके कक्षोंपर चंचल भ्रमर मँडरा रहे हैं ऐसे प्रमत्त महागजको; जिसका शरीर प्रिय गौके शरीरके संस्पर्शसे रोमांचित है,

२. १. P समु जेत्थु वाहि° । २. °टेंटापवेसु । ३. P °चरणह संखला° । ४. AP रविअंत । ५. A °मंडण° । ६. A समसमंतु । ७. A सुरहिगंध णं मालइ; P सुरहियगंध स मालइ । ८. A सुहसुत्ति; P सुहँ सुत्त ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिक्खणक्खणिद्दा[1]रियमारियकुंजरं
रत्तलित्तमुत्ताहलें[2]मंडियकेसरं ।
सीहयं मुहा[3]वालुयणिग्गयदाढयं
गोमिणिं च दिसकुंजरसिंचणरूढयं ।
इट्ठगंधसेलिंधकरंबयं[4]कोसयं
दामजमलमलिमालासहपरिपोसयं ।
पुण्णयं विहुं जामिणिकामिणिदप्पणं
उग्गयं इणं पीणियपंकइणीवणं ।
मीणमिहुणमणिहणजलकीलणलंपडं
चारुहारिकल्लाणघरं घडें[5]संपुडं ।
हंसचंचुपुडें[6]खुडियभिसं भिसिणीहरं
सेयसलिलवेलागहिरं रयणायरं ।
कुलिसणहरकेसरिकिसोरधरियासणं
अवि य पायसासणजसस्स णं सासणं ।
इंदधामं[7]महिवंदवइस्स णिहेलणं
रयणपुंजमरुणंसुसिहातमें[8]हालणं ।
झत्ति दित्तजा[9]लासयछित्तणहंगणं
हुयवहं च सोई[10] पेच्छइ जालियकाणणं ।

और जिसके सींग स्थलकमलों (गुलाबपुष्पों) से प्रसाधित हैं, ऐसे वृषभको; जिसने अपने तीखे नखोंसे हाथियोंको फाड़कर मार डाला है; जिसकी अयाल रक्तसे रंजित मोतियोंसे शोभित है, जिसकी लम्बी दाढ़ें निकली हुई हैं ऐसे सिंहको; दिग्गजोंके द्वारा किये गये अभिषेकसे प्रसिद्ध लक्ष्मीको; प्रिय गन्धवाले शैलिन्ध्र पुष्पोंके समूहको जिसमें स्थान है, और जो भ्रमरमालाकी सभासे परिपोषित हैं ऐसे पुष्पमाला युग्मको; भामिनीरूपी कामिनीके लिए दर्पणके समान पूर्णचन्द्र को कमलिनी वनको प्रसन्न करनेवाले उगते हुए सूर्यको, प्रचुर जलक्रीड़ाके लम्पट मीन युगलको, सुन्दरताको धारण करनेवाले और कल्याणके घर कलशयुगलको; जिसमें हंसिनियोंके चंचुपुटोंसे कमलिनियां काटी गयी हैं, ऐसा कमलिनीगृह अर्थात् सरोवरको; श्वेत सलिलके तटोंसे गम्भीर समुद्रको; वज्रके समान नखोंवाले किशोरसिंहके द्वारा धारण किये गये आसन (सिंहासन) को; और भी जो इन्द्रके यशके मानो शासन हो, ऐसे इन्द्रके विमानको; नागराजके भवनको; अपनी अरुण किरणोंकी ज्वालासे अन्धकारका प्रक्षालन करनेवाले रत्नसमूहको; और शीघ्र ही अपनी सैकड़ों प्रदीप्त ज्वालाओंसे आकाशके आंगनको आच्छादित करनेवाली और वनोंको भस्म करनेवाली आग को।

३. १. P °विद्दारिय° । २. P °मुत्ताहलमालामंडिय° । ३. AP सुहावालुय° । ४. AP °करंबिय° । ५. AT घडसंघडं । ६. A °फुडखुडिय° । ७. A इंदघामं वरउरवइणिहेलणं । ८. A °तमहारणं । ९. P °दित्तिजाला° । १०. A हुयवहस्स जं सा पेच्छइ; P हुयवहं च सा पेच्छइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—इय पेक्खिवि रायहु राणियइ संतोसें आहासिउ ॥
तेण वि तहु मंगलदंसणहु फलु पणइणिहि पयासिउ ॥३॥

४

सुओ देवि होही तुहं तित्थणाहो असामण्णसंपत्तिवित्तीसणाहो।
दिही आगया देवया पंकयच्छी हिरी कंति कित्ति सिरी बुद्धि लच्छी।
णिहीसेण गेहम्मि छम्मासकालं णिहित्तं[2] सुवण्णं सुवण्णं पहालं।
चइत्तस्स पक्खंतरे चंदिमिल्ले[3] सुहोहायरे वासरे पंचमिल्ले।
रिसी पोमणाहो चुओ सोहमिंदो थिओ गब्भवासे पुलोमारिवंदो।
सुपासाहिवे णिव्वुए संगएहिं समुद्दाणहो रंधकोडीसएहिं।
महाजक्खणिक्खित्तमाणिक्कएहिं पउण्णेहिं मासेहिं रामंकएहिं।
तओ पूसमासे पक्खंतम्मि सीए सुहे सक्कजोयम्मि एयारसीए।
पहूओ पहू पुण्णपाहोहमेहो जयाणं गुरू लक्खणुप्पत्तिगेहो।
सपायालमग्गं सतारक्कसक्कं खणे कंपियं झत्ति तेलोक्कचक्कं।

घत्ता—परतेउ ण कत्थइ विप्फुरइ अंधारउ णउ रेहइ ॥
जम्मणु उग्गमणु वि भुवणयलि जिणदिणणाहहु सोहइ ॥४॥

घत्ता—यह देखकर रानीने राजासे सन्तोषपूर्वक कहा। उसने भी अपनी प्रणयिनीसे मंगल स्वप्न देखनेके फलका कथन किया ॥३॥

४

हे देवी, तुम्हारा असामान्य सम्पत्तियों और प्रवृत्तियोंका स्वामी तीर्थंकर पुत्र होगा। कमल नेत्रोंवाली धृति, ह्री, कान्ति, कीर्ति, श्री, वृद्धि और लक्ष्मी देवियाँ आ गयीं। कुबेरने उसके घरमें छह माह तक प्रभासे युक्त सुन्दर रंगके स्वर्णकी वर्षा की। चैत्रशुक्ल शुभयोगोंके आकर, पांचवींके दिन ऋषि पद्मनाथ सौधर्म इन्द्रच्युत हुआ और इन्द्रके द्वारा संस्तुत वह गर्भवासमें आकर स्थित हो गया। सुपार्श्वनाथके निर्वाण प्राप्त करनेके नौ करोड़ सागर समय बीतनेपर, जिनमें यक्षके द्वारा आकाशसे रत्नोंकी वर्षा की गयी है ऐसे नौ माह सम्पूर्ण होनेपर, पूष माहमें शुक्लपक्षकी एकादशीके दिन शुभ इन्द्रयोग और ज्येष्ठा नक्षत्रमें पुण्यरूपी जलोंके मेघ, विश्वगुरु लक्षणोंकी उत्पत्तिके घर प्रभु उत्पन्न हुए। पातालमार्गसे लेकर तारों, सूर्य और इन्द्रके साथ एक क्षणमें त्रिलोकचक्र कांप उठा।

घत्ता—कहीं पर भी दूसरेका तेज नहीं चमकता था और न अन्धकार ही कहीं शोभित था; जिनरूपी दिननाथ (सूर्य) का जन्म और उदय शोभित होता है ॥४॥

---

११. पणइणिहो।

४. १. P असावण्ण°। २. A णिहत्तं। ३. A चंदमिल्ले। ४. A पुणोमारिवंदो। ५. A सुवमाहिए।
६. P पुण्णयंभोहमेहो। ७. P जयाणं। ८. P सपायालसग्गं सतारं ससक्कं।

५

सहसा जायउ सुरलोय[1]खोहु वीणारवु चल्लिउ किंणरोहु ।
उच्छाहें रक्खस किलिकिलंति व[2]ड्ढंतइं भूयइं णहि मिलंति ।
किंपुरिस के वि किं किं भणंति सद्दिट्ठिदेव पुच्छिवि मुणंति ।
रयवंत महोरय फुप्फु[3]यंति गंधव्व गेयसरु स[4]इं मुयंति ।
अणिबद्ध पिसायउ लइ चवंति दसदिसइं जक्ख रयणइं घिवंति ।
ससहररविते[5]एं महि ण्हवंति तार[6]उ तारत्तणु पक्खवंति ।
दुग्गह गहचरियइं णिक्खवंति जय णंद व[7]ड्ढ सामिय चवंति ।
णक्खत्तइं णवणक्खत्तमहिउ वंदहुं चलियाइं वियाररहिउ ।
दाविय णियपंति पइण्णएहिं सासेहिं व[8] चासपइण्णएहिं ।
णहवडणविवरमुहणिग्ग[9]मेहिं दिसिविदिसामग्गसमागमेहिं ।
संगलियइं[10] मिलियइं सुरउलाइं भावण[11]मोभरियइं जलथलाइं ।

घत्ता—अइरावयकुंभविइण्णकरु पत्तउ जियपरसेणहु ॥
पुरुहूयउ पुरपासहिं भमिवि घरि पइट्ठु महसेणहु ॥५॥

५

शीघ्र ही देवलोकमें क्षोभ मच गया। वीणाके स्वरवाला किन्नर लोक चला। उत्साहसे राक्षस किलकारियाँ भरते हैं, बढ़ते हुए भूत आकाशमें मिलते हैं। कितने ही किंपुरुष किं किं का उच्चारण करते हैं, अच्छी दृष्टिवाले देव पूछकर विचार करते हैं, वेगशील महोरग फूत्कार करते हैं, गन्धर्व अपने गीत स्वर स्वयं छेड़ने लगते हैं? पिशाच अनिबद्ध बोलते हैं, दसों दिशाओंमें यक्ष रत्नोंकी वर्षा करते हैं। चन्द्रमा और सूर्यकी प्रभासे पृथ्वी अभिषेक करती है, तारागण भी अपना तारापन प्रदर्शित करते हैं? खोटे ग्रह अपनी गृहचर्याका त्याग कर देते हैं, और वे 'हे स्वामी, जय हो, आप वृद्धिको प्राप्त हों, आप प्रसन्न हों,' यह कहते हैं। नक्षत्र भी नव नक्षत्रोंसे पूजित और विकार रहित की वन्दना करनेके लिए चले। नागोंने अपनी पंक्तिका प्रदर्शन किया, जैसे क्षेत्र हल रेखासे निबद्ध धान्योंकी पंक्ति हो, आकाश पतनके विवर मुखोंके निर्गमों और दिशा विदिशा मार्गों के समागमनोंसे देवकुल मिलकर चले। भवनवासी देवोंकी आभासे जल और स्थल आलोकित हो उठे।

घत्ता—जिसने ऐरावतके गण्डस्थलपर हाथ फैला रखा है ऐसा इन्द्र, वहाँ आया और नगर की चारों ओर परिक्रमा देकर, शत्रुसेना को जीतनेवाले राजा महासेनके घरमें उसने प्रवेश किया ॥५॥

५. १. सुरलोइ खोहु । २. A वग्गंतइ । ३. P पुप्फुयंति । ४. P सयं । ५. A °तेय महि; P तेयइं महि । ६. P ताराउ । ७. AP वद्ध । ८. A व वासपइण्णएहिं; P व वण्णपयण्णएहिं । ९. A °णिग्गएहिं । १०. संवलियइं । ११. P °भाभारिय जल° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६

तओ तेण छम्मेण णिच्छम्मयाए परं डिंभयं दिण्णयं अम्मयाए ।
तडालग्गतारावलीमेहलालं ससिगप्पहापिंगदिव्चक्कूलं ।
रमंतच्छराणेउरारावरम्मं दिसादीसमाणुद्धजेणिंदहम्मं ।
फणिंदाणियापायरायावलित्तं अदिट्ठेक्कलंबंतकिंकिल्लिवत्तं ।
लयामंडवासीणविज्जाहरिंदं तुरंगासणासत्तकीलापुलिंदं ।
दरीचंदणामोयलग्गाहिकण्णं मओमत्तमायंगदंतग्गभिण्णं ।
गुहाकिंणरीकिंणरालत्तगेयं सपायंतणिक्खित्तचंदक्कतेयं ।
णिओ सुंदरं मंदरं देवदेवो तहिं तेहिं सो णाणणिक्कंपभावो ।
पविच्छिण्णकुंभेहिं कुंभीसगामी तिलोयंतवासीहिं तेलोक्कसामी ।
गुणुप्पण्णणेहेहि णिण्णट्ठणेहो अकूवारखीरेहि खीराहदेहो ।
जिणिंदो जियारी जयंभोयमित्तो फणिंदेहि इंदेहिं चंदेहिं सित्तो ।

घत्ता—तं दुद्धु पडंतउ जिणतणुहि कंतिइ पयडु ण होंतउ ॥
णं अमिउं ससंकहु वियेलियउं दिट्ठु महिहि धावंतउं ॥६॥

६

उस अवसरपर उस मायावी इन्द्रने (भगवान् की) निष्कपट माँके लिए दूसरा बालक दिया और वह ज्ञानभावसे निष्कम्प उस देवदेवको सुन्दर मन्दराचल पर्वत पर ले गया, जो (मन्दराचल) तटपर लगी हुई तारावलीसे युक्त है, अपने ही शिखरोंकी प्रभासे जिसके दिग्मण्डलोंके तट पीले हैं, जो रमण करती हुई अप्सराओंके शब्दसे रमणीय हैं, जिसकी दिशाओंमें ऊँचे-ऊँचे जिन मन्दिर दिखाई देते हैं, जो पद्मावतीके चरणरागसे (चरण लालिमासे) लिप्त हैं, जो अदृष्ट और एक पर एक अवलम्बित अशोकपत्रोंसे युक्त हैं, जिसके लता मण्डपों में विद्याधरेन्द्र बैठे हुए हैं, जिसमें घोड़ोंके उरासनोंपर आसक्त क्रीड़ा-पुलिन्द हैं। जिसमें नागकन्याएँ घाटोके चन्दनोंके आमोदमें लगी हुई हैं, जो मतवाले गजोंके दाँतोंके अग्रभागोंसे विदीर्ण हैं, जिसमें किन्नर और किन्नरियाँ गीतोंका आलाप कर रहे हैं, जिसने सूर्य और चन्द्रमाको अपने चरणोंके नीचे डाल रखा है। कुंभीसगामी (गजगामी) का अविच्छिन्न कुम्भों (घड़ों) के द्वारा, त्रिलोक स्वामीका त्रिलोकके अन्तमें निवास करनेवाले देवोंके द्वारा स्नेहका नाश करनेवालेका गुणोंमें उत्पन्न स्नेह करनेवालोंके द्वारा दूधकी आभाके समान देहवाले जिनेन्द्रका, समुद्रक्षीरोंके द्वारा, शत्रुओंको जीतनेवाले विजयरूपी कमलके सूर्य श्री जिनेन्द्रका, नागेन्द्रों, इन्द्रों और चन्द्रोंके द्वारा, अभिषेक किया गया।

घत्ता—गिरता हुआ वह दूध जिनवरके शरीरकी कान्तिसे प्रगट नहीं होता हुआ, ऐसा मालूम हो रहा था मानो चन्द्रमासे विगलित अमृत धरतीपर दौड़ रहा हो ॥६॥

६. १. P अंबयाए । २. A °मेहलीलं; P मेहजालं । ३. AP दिच्चक्कवालं । ४. AP °कंकेल्लि° । ५. A °णासंत° । ६. A °लग्गाहिकिण्णं । ७. P मयमत्त° । ८. P कंति । ९. P वियलिउं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

दिव्वं गंधं पुप्फं धूवं वासं भूसं चरु[1]यं दीवं।
दाउं सव्वं से[2]व्वाणिट्ठं काउं पुज्जं सत्थे दिट्ठं।
णाणत्तयघणपुप्फसमुद्दं तं गहिऊणं भय[3]वं भद्दं।
तं पेच्छंता तं पणवंता तं गायंता तं णच्चंता।
चंदउरं मणितोरण[4]दारं आया देवा रायागारं।
उव[5]समवेल्लीवासारत्तं जणणीहत्थे दाऊणं तं।
सोहम्मीसाणा देवेसा पत्ता सग्गं णाणावेसा।
बाणासणदिवड्ढसय[6]तुंगो सेयंगो णं सेयपयंगो।
उप्पाइयखाइयसम्मत्तो इक्खाऊ कासवणिवगोत्तो।
दो लक्खा पुव्वाणं छिण्णा पण्णास[7]ड्ढसहासाउण्णा।
एस तस्स तरुणत्तणकालो पच्छा हू[8]ओ मेइणिवालो।
तत्थ वि जायं देवागमणं पारा[9]वारवारिघडण्हवणं।
वइसवणाणियवसुसंदोहे[10] भोए भुजंतस्स [11]ससोहे।
छड्ढ लक्ख पुव्वाणं झीणा अरिहसंखपुव्वंगविलीणा।
घत्ता—अण्णहिं दिणि दप्पणयलि वयणु जोयंतें तें दिट्ठउं॥
जेणेत्थ[12] दड्ढसंसारसुहि हियवल्लउं उव्विट्ठउं॥७॥

७

इष्ट दिव्य गन्ध पुष्प धूप वस्त्र भूषा चरु और दीप सबके लिए इष्ट जिन भगवान्‌को देकर और शास्त्रमें निर्दिष्ट पूजा कर, और ज्ञानत्रयरूपी सघन जलके समुद्र सबके लिए भद्र उन्हें लेकर, उनको देखते हुए उनको प्रणाम करते हुए, उनको गाते हुए और नृत्य करते हुए देवता लोग, मणियोंके तोरणद्वारवाले चन्द्रपुरमें राज्य-प्रासादमें आये। उपशमरूपी लताके लिए वर्षा ऋतुके समान उन्हें माताके हाथमें देकर सौधर्म ईशान स्वर्गोंके नाना वेशवाले देवेश अपने-अपने स्वर्ग चले गये। उनका शरीर डेढ़ सौ धनुष ऊँचा था मानो श्वेत अंगोंवाला चन्द्रमा हो। उन्हें क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न हो गया है, ऐसे वह इक्ष्वाकुवंशीय और कश्यपगोत्रीय थे। जब उनकी दो लाख और पच्चीस हजार पूर्व आयु बीत गयी, तो यह उनका यौवनकाल था। इसके बाद वह पृथ्वीके राजा बने। वहाँपर भी देवोंका आगमन हुआ और समुद्रके जलघटोंसे अभिषेक किया गया। जिसमें कुबेरके द्वारा धनसमूह लाया गया है ऐसे शोभायुक्त भोगको भोगते हुए उनका छह लाख पचास हजार चौबीस पूर्व समय बीत गया।

घत्ता—एक दूसरे दिन, "दर्पणतलमें मुखको देखते हुए उन्होंने ऐसा कुछ देखा कि जिससे दग्ध संसार सुखोंमें उनका मन विरक्त हो गया ॥७॥

---

७. १. AP चरुवं। २. A इट्ठं सिट्ठं; P णिट्ठं सिट्ठं। ३. A सव्वं भद्दं। ४. A °तोरणवारं। ५. P तवसम°। ६. P सउतुंगो.। ७. AP पण्णासद्दसहासा। ८. AP हूयउ। ९. P पारावारि वारि। १०. P °संदोहं। ११. P ससोहं। १२. A जेणित्थु दट्ठु संसारसुहि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८

आवेप्पिणु पंजलिहत्थएहिं दूराउ पणा[1]मियमत्थएहिं ।
पंचमगइसंमुहुं मउज्झुणीहिं पडिसा[2]रिउ आहंडलमुणीहिं ।
मुहपयलमाणधारासिवेहिं अहिसिंचिउ विहु अज्जुणणिवेहिं ।
कल्लाणाहरणविहूसियंगु प[3]रदिण्णदाणु णं वरमयंगु ।
वरचंदु सणंदणु णिहिउ रज्जि तहिं कालइ सुरहयविविहवज्जि ।
सिवकंखइ पहु सिवियहि च[4]डिण्णु स[5]ऽवत्तुवणंतरि सम[6]वइण्णु ।
दयविच्छिण्णीगरुईणिसीहि पूसम्मि कसणएयारसीहि ।
अणुराहाणक्खत्तावयारि णिण्णेहत्तणु जुंजिउ सरीरि ।
णिल्लूरियि मंदिरमोह[7]वासु लुंचिवि घल्लिउ सिरकेस[8]वासु ।
णिक्खंतु लेवि छट्ठोववासु सु[9]हुं पावइयउ रायहं सहासु ।
तहुं[10] को वि ण मित्तु ण को वि वेसु मज्झत्थु महत्थु विसुद्धलेसु ।
दंडग्गविलंबियचेलमयरि अवरहि दिणि पइसइ णलिणणयरि ।

घत्ता—णो[11]उ करयलि पत्तलि पत्तु ण वि णउ पइ णेउरघोसणु ॥
णउ भूरिभूइ मु[12]रकुंडियउ णउ म[13]ससिरेहाभूसणु ॥८॥

८

हाथ जोड़े हुए दूरसे प्रणामके लिए मस्तिष्कको झुकाते हुए, कोमल स्वरवाले श्रेष्ठ इन्द्रोंने उन्हें प्रोत्साहन दिया। जिनके मुखसे धाराजल निकल रहे हैं ऐसे धारा कलशोंसे अभिषेक किया गया। कल्याणके आभूषणोंसे विभूषित-अंग वह ऐसे मालूम होते थे मानो परदिण्णदान (दूसरोंको जिसने दान, या मदजल दिया हो ऐसा) मातंग (महागज) हो। उसने अपने पुत्र वरचन्द्रको राज्यमें स्थापित किया। देवों द्वारा बजाये गये विविध वाद्योंके उस कालमें मोक्षकी आकांक्षासे प्रभु शिविकापर चढ़े और सर्वर्तु वनके भीतर अवतीर्ण हुए। पूस माहकी, दया (कल्याण दीक्षा) से विस्तीर्ण, कृष्ण एकादशी की रात्रिमें अनुराधा नक्षत्रका अवतार होनेपर, वह शरीरसे स्नेहहीन हो गये, अर्थात् उन्होंने दीक्षा ग्रहण कर ली। घरके मोह और वर्षोंको दूर कर तथा सिरके बालोंको उखाड़कर फेंक दिया। छठा उपवास करते हुए और संन्यास लेते हुए एक हजार राजा भी सुख-पूर्वक संन्यासी हो गये। उनका न तो कोई मित्र था और न कोई द्वेष्य। वह मध्यस्थ महार्थ और विशुद्ध लेश्यावाले थे। दूसरे दिन, जिसमें दण्डोंके अग्रभागमें वस्त्रध्वज लगे हुए हैं, ऐसे नलिन नामक नगरमें वह प्रवेश करते हैं।

घत्ता—न करतलमें पत्तल, न पात्र है और न पैरोंमें घुँघरुओंकी ध्वनि है, न प्रचुर भस्म है और न अकुटिल भौंहें हैं और न श्मश्रुरेखाका भूषण है ॥८॥

८. १. A पणाविय° । २. A पडिवारिउ । ३. P परिदिण्ण° । ४. P चडंतु । ५. A संपत्तु । ६. P समयवंतु । ७. P मोहपासु । ८. AP सिरि केसपासु । ९. A सहुं । १०. P तहु मित्तु अमित्तु ण को वि देसु । ११. P ण वि । १२. AP णउ कुंडियउ । १३. A ससिरेहा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

हुंकारु ण मुयइ ण देहि भणइ   णउ सण्णइ णउ गंधव्वु झुणइ ।
परमेसरु पंचायारसारु   दक्खवइ वीरु भिक्खावयारु ।
जा छुडु जि भवणप्रंगणु पइट्ठु   ता सोमयत्तराएण दिट्ठु ।
कर मउलिवि करेवि उरुत्तरीउ   संचिउ पुण्णंकुरपवरबीउ ।
काएं वयणें सुद्धें मणेण   आहारदाणु तहु दिण्णु तेण ।
दुंदुहिसरु सुरसरु पुप्फविट्ठि   घणु वरिसिउ हूई रयणविट्ठि ।
तहिं चोज्जइं पंच समुग्गयाइं   पालंतु संतु संतइं वयाइं ।
थिउ तिण्ण मास छम्मत्थु तांव   णायावणिरुहतलु पत्तु जांव ।
फग्गुणि दिणि सत्तमि किण्हवक्खि   अवरण्हइ तहिं णिक्खवणरिक्खि ।
छट्ठेणुववासें केवलक्खु   उप्पाइउं णाणु विवज्जियक्खु ।

घत्ता—कल्लाणि चउत्थइ जइवइहि सुरयणु दिसहिं ण माइउ ।।
अहिरामें अहिणवभत्तिवसु अहिहु अहीसरु आइउ ।।९।।

१०

लोयालोयविलोयणणाणं सिरिणाहं   थुणइ मियंको अक्को सक्को मुणिणाहं ।
ससहरकंतं पयडियदंतं कंकालं   हत्थे सूलं खंडकवालं करवालं ।

९

न हुंकार करते हैं, और न यह कहते हैं कि 'दो'। न क्लान्त होते हैं, न गन्धर्व गाते हैं, फिर भी पाँच प्रकारके आचारोंमें श्रेष्ठ वीर परमेश्वर (चन्दप्रभु) भिक्षाके अवतारको दिखाते हैं। जैसे ही वह शीघ्र घरके आँगनमें प्रवेश करते हैं, वैसे ही राजा सोमदत्तने उन्हें देख लिया, हाथ जोड़कर और उत्तरीयको उरपर करते हुए उसने पुण्यरूपी अंकुरोंके प्रवर बीज इकट्ठे कर लिये। शुद्ध मन-वचन-कायसे उनके लिए उसने आहार दान दिया। दुन्दुभिस्वर, देवोंका साधुवाद, पुष्प-वृष्टि धन बरसा और रत्नोंकी वर्षा हुई। इस प्रकार वहाँ पांच आश्चर्य प्रकट हुए। शान्त व्रतोंका परिपालन करते हुए जब वह छद्मस्थ तीन माह स्थित रहे तो वह नागवृक्षकी तलभूमिपर पहुँचे। फागुन माहके कृष्णपक्षकी सप्तमीके दिन, अपराह्नमें अनुराधा नक्षत्रमें छठे उपवासके द्वारा उन्हें इन्द्रियोंसे रहित केवल नामका ज्ञान केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

घत्ता—उन यतिवरके चौथे कल्याणमें देवता लोग दिशाओंमें नहीं समा सके। सौन्दर्यसे अभिनव भक्तिके वशीभूत होकर नागराज भी पृथ्वीको लक्ष्य करके आया ।।९।।

१०

चन्द्र, सूर्य और इन्द्र लोकालोकका अवलोकन करनेवाले ज्ञानसे युक्त लक्ष्मीके पति मुनिनाथ (तीर्थंकर) की स्तुति करते हैं, 'जो चन्द्रमाके समान कान्तिवाले हैं, जिनके दांत प्रकट हैं, जो

---

९. १. A reads *a* as *b* and *b* as *a*. । २. AP पंगणु । ३. A सोमदत्त° । ४. A करु मउलि करेविणु रंतरिउ; P कर मउलिकरेविणु उत्तरीउ । ५. A सिंचिउ । ६. AP पुण्णंकुरु । ७. AP वरिसिवि । ८. A उप्पायउं; P उप्पण्णउं । ९. A अहहु ।

१०. १ A हत्थे संडं फूलकवंडं करवालं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कडिहि रवाला किंकिणिमाला झणंझणिया[2] पासे रामा मुद्धा[3] सामा घणथणिया।
मईरावाणं[4] मिट्ठं खाणं मृगमासं[5] दाढाचंडं कुद्धं तोंडं जणतासं।
पेयावासो रक्खसभीसो णियठाणं चित्तविचित्तं रम्मं चम्मं परिहाणं।
एसो वेसो देवे जाणं धम्माणं हाणी[6] उज्झियसुत्तो हिंसाजुत्तो रयखाणी[7]।
जे सरगायण[8]वायणणच्चणलद्धरसा वामच्छीणं रत्ता मत्ता कामवसा।
कट्ठा दुट्ठा[9] णिट्ठाणट्ठा[10] णायचुया मइमिच्छेणं मइतुच्छेणं ते वि थुया।
संसरमाणो भवभम[11]भग्गो भुत्तदुहो भो चंदप्पह दरिसियसुप्पहे[12] तुह विमुहो।
पइं ण मुणंतो पइं ण थुणंतो कयमाओ आसो मेसो महिसो हंसो[13] हं जाओ।
छिंदण भिंदण कप्पण पउलण घयतलणं पत्तो तिरिए पुणरवि णरए णिद्दलणं।
परघरवासं परेकयगासं[14] कंखंतो णीरसपिंडं तिलखलखंडं[15] भक्खंतो।
परलच्छीओ धवलच्छीओ सलहंतो अलहंतो णियहंतो दीणो हं होंतो।
कउलवियक्के जोइणिचक्के रइधरणी[16] लोयणगामिय हा मइं रमिया परघरिणी।

घत्ता—मइं विप्पें होइवि[17] आसि भवि पसु मारिवि पलु भुत्तउं॥
गंडयहु हड्डु हरिणयहु अइणु[18] देव पवित्तु पवुत्तउं॥१०॥

अस्थियोंसे युक्त हैं, जिनके हाथमें त्रिशूल है, खण्डित कपाल और तलवार है, कमरमें शब्दयुक्त झनझन करती हुई किंकिणीमाला है, पासमें सघन स्तनों की मुग्धा श्यामा है, मदिरापान है, पशुमांसका मीठा खाना है, जो दाढ़ोंसे प्रचण्ड, क्रुद्ध भूखवाले और जनोंको त्रस्त करनेवाले हैं, राक्षसोंसे भयंकर मरघट जिनका अपना निवास है। चित्र-विचित्र सुन्दर चर्म जिनका परिधान है। जिनका इस प्रकारका रूप है, ऐसे देवके ज्ञानमें धर्मकी हानि है। शास्त्रविहीन, हिंसासे सहित वह पापकी खान हैं। जो स्वरोंके गाने-बजाने और नाचनेमें रस प्राप्त करते हैं और कामके वशीभूत होकर सुन्दरियोंमें रत और मत्त हैं, जो कठोर दुष्ट, निष्ठासे भ्रष्ट न्यायसे च्युत हैं, बुद्धिहीन मिथ्यादृष्टिके द्वारा उनकी भी स्तुति की जाती है। संसारमें परिभ्रमण करनेवाला भवभ्रमणसे भग्न, दुःखको भोगनेवाला वह, सुपथके प्रदर्शक हे चन्द्रप्रभ, तुमसे विमुख है। वह तुम्हें नहीं मानता है, तुम्हारी स्तुति नहीं करता है, माया करनेवाला वह, मैं अश्व-मेष-महिष और हंस हुआ हूँ। छेदा जाना, भेदा जाना, काटा जाना, पकाया जाना, घीमें तला जाना (इन्हें) तिर्यंचगतिमें प्राप्त करता है, फिर नरकमें वह दला जाता है। दूसरेके घरमें निवास, दूसरेका दिया भोजन चाहता हुआ, नीरस आहार तिलखलके खण्डोंको खाता हुआ दूसरेकी धवल आँखोंवाली स्त्रीकी प्रशंसा करता हुआ, नहीं पाकर अपनी हत्या करता हुआ मैं दीन हुआ हूँ। चार्वाकोंके एक भेद योगिनीचक्रमें अफसोस है कि मैंने रतिकी भूमि देखी और परस्त्रीका रमण किया।

घत्ता—मैंने विप्र होकर, जन्ममें पशु मारकर मांसका भक्षण किया हुआ है। गेंडे की हड्डियों और हरिणोंके चर्मको हे देव, मैंने पवित्र कहा है ॥१०॥

---

२. A झणिझुणिया। ३. A मुद्धा। ४. P मइरापाणं। ५. AP मिगमासं। ६. AP omit हाणी। ७. AP रयखाणं। ८. AP सुरगायण°। ९. AP तुट्ठा। १०. A णिट्ठाणट्ठा। ११. AP भवभय°। १२. A °सुहपय; P °सुहपह। १३. AP हंसो महिसो। १४. P कयपरगासं। १५. A °खलखंडं। १६. A रइघरिणी। १७. विप्पहु होइवि। १८. AP हड्डु हरिणहु अयणु।

११

णिद्धम्महं मांसाहारियाहं रसलोलहं णियपरवेइरियाहं ।
तुहुं देव ण होसि सुसामि जाहं अजिणु वि अजिणहं चुकइ ण ताहं ।
मह्यालइ गाइ वि जासु वज्झ हो हो किं वेएं तेण मज्झ ।
एंवहिं सुदयावर तुहुं जि सरणु तुह पायमूलि महुं होउ मरणु ।
बलदेवहं अग्गइ देहि तिण्णि तहु गणहर सुयहर सहस दोण्णि ।
जे परमविराय वसंति रण्णि ते तहु मुणिसिक्खुव लक्ख दोण्णि ।
णेहु सहसइं पुणु चउरो सयाइं सिक्खंति सत्थु गुरुसम्मयाइं ।
अट्ठसहसइं सावहिलोयणाहं अट्ठारहसहस णिरंजणाहं ।
ते चोद्दस विकिरियागुणीहिं वसुसहसइं मणपज्जवमुणीहिं ।

घत्ता—पिंडीदुमु चमरइं दिव्वझुणि कुसुमवरिसु सियछत्तइं ॥
भामंडलु दुंदुहि सुरवरहिं जिणचिंधाइं णिउत्तइं ॥११॥

१२

भयसहसइं छसय विवाइयाहं छलहेउजाइकुलघाइयाहं ।
भणु असीयसहासइं तिण्णि लक्ख संजमधारिणिहिं वहंति दिक्ख ।
सावयहं लक्ख गुत्तीसमाण ते अणुवयणारिहिं वयपमाण ।

११

हे देव, जो धर्महीन, मांसाहारी, रसलोलुप स्वपरके शत्रु हैं, आप उनके स्वामी नहीं हैं। जिन भगवान्से रहित जिन्होंने मृगचर्म नहीं छोड़ा, उनके आप स्वामी नहीं हैं। यज्ञमें जिसके लिए गाय वध्य है, हो-हो! उस वेदसे मुझे क्या करना। हे सुदयावर, इस समय तुम्हीं मेरी शरण हो, तुम्हारे चरणोंके मूलमें मेरी मृत्यु हो। उनके तेरानबे गणधर थे, दो हजार पूर्वधारी थे, जो परम विरक्त और वनमें निवास करते थे, ऐसे उनके दो लाख चार सौ शिक्षक मुनि थे जो गुरुसम्मत शास्त्रोंकी शिक्षा देते थे। आठ हजार अवधिज्ञानी थे। निर्विकार केवलज्ञानी (आठ हजार सहित अट्ठारह हजार अर्थात् १० हजार) दस हजार, विक्रिया-ऋद्धिके धारक मुनि चौदह हजार, और मनःपर्यय-ज्ञानी आठ हजार थे।

घत्ता—अशोक वृक्ष, चामर, दिव्यध्वनि, पुष्पवर्षा, श्वेतछत्र, भामण्डल, दुन्दुभि जिनवरके ये चिह्न देवताओं द्वारा कहे गये हैं ॥११॥

१२

छल जाति हेतु समूह का खण्डन करनेवाले सात हजार छह सौ वादी मुनि थे। तीन लाख अस्सी हजार संयम को धारण करनेवाली आर्यिकाएँ दीक्षाको धारण करती हैं, तीन लाख श्रावक

११. १. P मंसाहारि° । २. P परवेरियाहं । ३. AP सुदयावरु । ४. A omits portion from सुयधर down to मुणि in 6 *b*; K writes it in marg । ५. A दहसहसइं । ६. A adds after this; चउसहस ताहं पुव्वंधराहं । ७. A दोसहसइं । ८. P जाणिय दहसहस । ९. P ते चउदस । १०. A रिदुसयइ सुविविकिरिया ।

१२. १ A तासु; K तासु but corrects it to छसय । २. P जाउ । ३. A चउरासीसहसइं । ४. P तेहिं अणुवय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवहं देविहिं[5] णउ छेउ अत्थि तेलोक्कसूरु केवलगभत्थि ।
चउवीसहं[6] पुव्वंगहं विहीणु अण्णु वि मासहिं तिहिं मुणहि झीणु ।
वसुमइ विहरिवि तेणेक्कु पुव्वु संबोहिवि मणुयसमूहु भव्वु ।
संमेयहु सिहरु समारुहेवि थिउ जोउ मासु पेरंतु लेवि ।
णामइं गोत्तइं वेयणिययाइं आउट्ठिदिसरिसइं लहु कयाइं ।
कम्मइयतेयअ[7]उयारियाइं तिण्णि वि अंगइं ओसारियाइं ।

घत्ता—सियपक्खहु फग्गुणसत्तमिहि परमविसुद्धिइ[8] रिद्धउ ॥
जेट्ठहि णिट्ठियमलु[9] बहुरिसिहिं सहुं चंदप्पहु सिद्धउ ॥१२॥

१३

णोहस्स[1] णिव्वाणि पंचमइ कल्लाणि ।
तूराइं वज्जंति मंगलइं गिज्जंति ।
थोत्ताइं किज्जंति दाणाइं दिज्जंति ।
दीणाइं सं[2]जंति दुरियाइं खिज्जंति ।
चंदणइं[3] सीयलइं सुरहियइं परिमलइं[4] ।
जिणतणुहि घिप्पंति[5] घुसिणेण[6] सिप्पंति ।
अग्गिंद पणमंति मउडोह[7] दिप्पंति ।
दीवोहं[8] दिज्जंति ।

थे। अणुव्रतों का पालन करनेवाली नारियां (आर्यिकाएँ) पाँच लाख थीं। देवों और देवियोंका अन्त नहीं था। केवलज्ञानरूपी किरणवाले त्रैलोक्य सूर्य जिन चौबीस पूर्वांगोंसे रहित और भी उनमें तीन माह कम समझो। एक पूर्व तक धरतीपर विहार कर और भव्य मनुष्यसमूहको-सम्बोधित कर सम्मेदशिखरपर आरोहण कर एक माह पर्यन्तका योग लेकर, नाम-गोत्र वन्दनीय को आयुके समान स्थितिवाला कर, औदारिक-तैजस और कार्मण तीनों शरीरोंको उन्होंने हटा दिया।

घत्ता—फागुन माह के शुक्लपक्षकी सप्तमीके दिन परम विशुद्ध ज्येष्ठा नक्षत्रमें मलको नाश करनेवाले चन्द्रप्रभु अनेक मुनियोंके साथ सिद्ध हो गये ॥१२॥

१३

स्वामीके पाँचवें कल्याण निर्वाण होनेपर नगाड़े बजते हैं। मंगल गीत गाये जाते हैं, स्तोत्र रचे जाते हैं, दान दिया जाता है, दीन सुखको प्राप्त हो जाते हैं, दुरित नष्ट हो जाते हैं, शीतल चन्दन और सुरभित परिमल जिनके शरीरपर डाले जाते हैं, केशरसे उसका लेप किया जाता है, अग्नीन्द्र

५. AP देविउ। ६. AP चउवीसइं पुव्वंगहं। P °अउदारियाइं। ८. विसिद्धिइ। ९. A णिट्ठिवि।

१३. १. A णाणस्स णिव्वाण। २. AP सज्जंति। ३. वंदणइं। ४. A सुरहीअइंधणइं; P सुरहियइं इंधणइं। ५. A खोणियहि घिप्पंति। ६. AP लिप्पंति। ७. A मुणि हुववहं देंति; P मणिहुयवहं देंति। ८. AP omit दीवोह दिज्जंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धूवोह[९]धूमेण [१०]णाणाविहोएण[११] ।
महुयररविल्लाइं पंजलिहिं फुल्लाइं ।
घल्लंति देविंद वण्णंति णाइंद ।
जीहासहासेहिं विब्भमविलासेहिं ।
देवीउ णच्चंति सिद्धं समच्चंति ।
[१२]णविऊण तं तित्थु सो सयलु सुरसत्थु ।
जिह[१३] गुणकहाकारि पत्तो पुलोमारि ।
सग्गं सलीलेण करिणा मयालेण ।
[१४]ससिकंतिदंतेण धीरं[१५] रसंतेण ।

घत्ता—इय[१६] भरहखेत्तणर[१७]यदियहु जगचंदुज्जयचंदहु ॥
किं[१८] पुप्फवंतु हउं जडु करमि चंदप्पहहु जिणिंदहु ॥१३॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे चंदप्पहणिव्वाणगमणं णाम छायालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४६॥

॥ चंदप्पह[१९]चरियं समत्तं ॥

प्रणाम करते हैं, उनके मुकुटसमूह प्रज्वलित होते हैं, दीपके समूह दिये जाते हैं, धूप समूहके धुएँ और विशिष्ट भोगोंके साथ देवेन्द्र अपने हाथोंकी अंजलियोंसे, भ्रमरके शब्दोंसे युक्त पुष्प बरसाते हैं। नागेन्द्र अपनी हजारों जीभोंसे स्तुति करते हैं, देवियाँ विभ्रम विलासोंके साथ नृत्य करती हैं तथा देवकी समर्चा करती हैं। वह समस्त सुरसमूह उस तीर्थंकी वन्दना कर उसी प्रकार स्वर्गको गया जिस प्रकार इन्द्र लीलावाले मदालस चन्द्रकान्तिके समान दाँतवाले धीरे-धीरे गरजते हुए हाथीके साथ स्वर्ग गया।

घत्ता—जो यहाँ भरतक्षेत्रके लोगोंके लिए दिवस और विश्वरूपी कुमुदके लिए चन्द्र हैं ऐसे चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रके वर्णनमें जड़ कवि पुष्पदन्त क्या करे? ॥१३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका चन्द्रप्रभ निर्वाणगमन नामक छियालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४६॥

---

९. A धूमोहणीलाउ। ११. AP णिग्गंति जालाउ। ११. AP add aftar this : णिरसियअणंगाइं, डज्झंति ·अंगाइं। १२. AP णमिऊण तं तेत्थु। १३. AP जिण°। १४. A ससिकंतदंतेण। १५. A वीरं। १६. A इह। १७. AP भरहखेत्ति णर°। १८. किम। १९. AP omit this line।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ४७

सुविहिं सुविहिपयासणं   सयमहवंदियसासणं[1] ॥
भुवणणलिणवणदिणयरं   वंदे[2] णवमं जिणवरं ॥ध्रुवकं॥

१

णहाखित्ततारं[3]   सवण्णेण तारं ।
सुहामोयसासं   सया जस्स सासं ।
पदिट्ठं दिसासुं   रिसिं रक्खियासुं ।
अरीणं अगम्मं   पमोत्तूण गं मं ।
हयं जेण कम्मं   जगे जस्स कम्मं ।
गयासाविहाणं   णिहाणं विहाणं ।
सुरिदद्दिधीरो   सभत्ताण धीरो ।
पयोहीगहीरो   अकंतंगहीरो ।
दिहीगाइगोवो   अमोहो विगोवो[4] ।
सकारुण्णभावो   जणुग्घुट्ठभावो ।
कुसिद्धंतवारो   सुदिट्ठंतवारो[5] ।
ण जो मोहभंतो   ण जम्मोहवंतो ।

संधि ४७

सुविधिका प्रकाशन करनेवाले, इन्द्रके द्वारा जिनका शासन वन्दनीय है ऐसे भुवनरूपी कमलवनके लिए दिवाकर नौवें तीर्थंकर सुविधि (पुष्पदन्त) को मैं नमस्कार करता हूँ।

१

जिन्होंने अपने नखोंसे आकाशके तारोंको तिरस्कृत कर दिया है, जो अपने वर्णसे स्वच्छ हैं, जिनके श्वास सुख और आमोदमय हैं, जिनका मुख सदैव शोभामय है, जिन्होंने दिशामुखोंको उपदिष्ट किया है, जो प्राणियोंके प्राणोंको रक्षा करनेवाले हैं, जिन्होंने शत्रुओंके लिए अगम्य भूमि और लक्ष्मी छोड़कर कर्मोंका नाश किया है, विश्वमें जिनका काम (नाम) है। जिनका विधान और धर्मोपदेश विधान फल की इच्छासे रहित है। जो सुमेरुपर्वतकी तरह गम्भीर हैं, जो अपने भक्तोंके लिए बुद्धि देते हैं, जो समुद्रकी तरह गम्भीर हैं, जो शरीरसे स्त्रीका त्याग कर देनेवाले महादेव हैं। जो धृतिरूपी गायकी रक्षा करनेवाले गोप (विष्णु) हैं। मोह और गर्वसे रहित हैं; जो कारुण्य भावसे युक्त हैं, जो लोगोंको पदार्थका स्वरूप बतानेवाले हैं, खोटे सिद्धान्तोंका निवारण करनेवाले और अनन्त स्वरूपोंका अन्त देखनेवाले हैं। जो मोहसे भ्रान्त नहीं हैं और न जन्मके

P gives, at the beginning of this Samdhi, the stanza: वरमकरोदपार° for which see note on page 45 A and K do not give it.

१. १. PT सुविहियसासणं । २. P वंदिवि । ३. A णहुक्खित्ततारं । ४. A अगोवो । ५. P सुसिद्धंतपारो ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

णमामो अणंतं   रईमोयणं तं ।
जिणं पुप्फयंतं   जिणा पुप्फयं तं ।
ण हत्थेण छित्तं[६]   दयाधम्मँछित्तं ।
सया जस्स सीलं   बुहाणं सुसीलं ।
पयासेइ संतो   खणेणं इसंतो ।
महीदिण्णमारो   कओ जेण मारो ।

घत्ता—तहु वरचरियविसेसयं   आयण्णहु महिमासयं ॥
मेल्लहु मोहविडंबणं   अथिरं घर घरिणी[८] धणं ॥१॥

२

दीवि खरंसुदीवि कुसुमियतरु   पुक्खरद्धि पुव्वामरमहिहरु ।
पुव्वविदेहि तासु मंथरगइ   णीरगहिर सीयल[१] सीयाणइ ।
णवलवंगपल्लवसुरहियजले[२]   मज्जमाणगज्जिर[३]वरमयगल[४] ।
खयरीसिहिणघुसिणरसपीयल   गुरुतरंगघोलिरमहुलिहचल ।
तडवरविडविपडियणाणाहल   कीलियमहिसवंदहयणाहल ।
देहँणिलोलमाणसूयरउल   पक्खितुंडपविहंडियसयदल ।
जिणपडिमा इव सावयसंगिणि   किं वण्णिज्जइ दिव्वतरंगिणि ।
उत्तरि तीरि[९] ताहि हयखलवइ   अत्थि भूमि णामे पुक्खलवइ ।

युक्त हैं, ऐसे रतिका मोचन करनेवाले अनन्त जिन पुष्पदन्तको मैं नमस्कार करता हूँ। जिन्होंने कामदेवको अपने हाथसे नहीं छुआ। जिनका शील सदैव दयाभावसे स्पृष्ट है और पण्डितोंके लिए सुशील (व्रतों) का प्रकाशन करनेवाला है। धरतीपर प्राणियोंको मृत्यु देनेवाले विद्यमान कामदेवको जिन्होंने एक क्षणमें नष्ट बाणोंवाला बना दिया।

घत्ता—ऐसे उन पुष्पदन्तके सैकड़ों महिमावाले श्रेष्ठ चरित्र विशेषको सुनो। मोहकी विडम्बना अस्थिर घर-गृहिणी और घरको छोड़ो ॥१॥

२

सूर्यकी तीव्र किरणोंसे दीप्त पुष्करार्ध द्वीपमें कुसुमित वृक्षोंवाला पूर्व सुमेरुपर्वत है। उसके पूर्वविदेहमें मन्थरगतिवाली जलसे गम्भीर शीतल शीतोदा नदी है। जिसका जल नवलवंगोंके पल्लवोंसे सुरभित है, जिसमें नहाते हुए और गर्जित शब्दवाले मैगल हाथी हैं, जो विद्याधरियोंके स्तनोंके केशररससे पीली है, जो बड़ी-बड़ी लहरोंपर व्याप्त भ्रमरोंसे चंचल है, जिसमें तटवर्ती वृक्षोंके नाना फल गिरे हुए हैं, जिसमें भैंससमूह, अश्व और भील क्रीड़ा कर रहे हैं, जिसमें शूकर-कुल कीचड़से खेल रहा है, जिसमें पक्षिसमूहके द्वारा कमल खण्डित कर दिये गये हैं, जो जिन प्रतिमाके समान सावयसंगिनी (श्रावक संगिनी, श्वापद संगिनी) है, ऐसी उस दिव्य नदीका क्या वर्णन किया जाये। उसके उत्तर तटपर खल-राजाओंका नाश करनेवाली पुष्कलावती नामकी भूमि है।

---

६. A छिण्णं । ७. छिण्णं । ८. A घरणी ।

२. १. AP सीयल । २. A °जले; P °जलु । ३. P °गज्जिय° । ४. A °मयगले; P °मयगलु । ५. A °पलिय° । ६. AP महिसविंद° । ७. A दहिणीलोल° । ८. °सिंगिणि । ९. A उत्तरतीरे ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पुरि णहसिरि व भमालाकंतिहि पंडु [10]पुंडरिंकिणि घरपंतिहि ।
राउ महापउमउ पउमाणणु पउमविलोयणु पउमामाणणु ।

घत्ता—करतरवारिवियारिया जेण रिऊ संघारिया ।
णिवडिय सूर वणंगया णासिवि भीरु वणं गया ॥२॥

३

परियाणिय णिव अत्थाणत्थहु एक्कहिं दिणि तहु अत्थाणत्थहु ।
आवेप्पिणु अक्खिउ वणवालें तूंव वणु भूसिउं तिहुवणवालें ।
तं णिसुणिवि सो रइयरहंतहु वंदणहत्तिइ गउ अरहंतहु ।
वंदिउ वंदणिज्जु जो वंदहुं इंदचंदणाइंदणरिंदहुं ।
जिह जिह तेणें देउ णिज्झाइउ तिह तिह सो णिव्वेउ पराइउ ।
भिच्चलोउ दूसणु परलोयहु भोउ गणिउ सरिसउ फणिभोयहु ।
णारि मारि भीसण तें दिट्ठी हियवइ विसयविरत्ति पइट्ठी ।
पुत्तहु बालकमलदलणेत्तहु देवि धरत्ति झत्ति धणयत्तहु ।
मुक्कउं घरु बहुदुक्खहं भंडउं लइयउं व्रउ संसारतरंडउं ।

घत्ता—सुयरंतो[7] जिणपुंगमं इसि प्राणिंदियसंजमं ॥
पालइ मुक्कणियंगउ सुयएयारहअंगउ ॥३॥

उसमें गृहपंक्तियोंसे सफेद पुण्डरीकिणी पुरी नक्षत्रमाला की कान्तिसे आकाशलक्ष्मीकी तरह जान पड़ती है, उसमें कमलके समान आँख, हाथ और मुखवाला महापद्म नामका राजा था।

घत्ता—जिसके द्वारा हाथकी तलवारसे विदारित और संहारित शूरवीर शत्रु घायल होकर गिर पड़े और भागकर वनमें चले गये ॥२॥

३

अर्थ-अनर्थको जाननेवाले उस राजाके दरबारमें आकर एक दिन वनपालने कहा, "हे राजन्, वन तीन कालकी शोभासे विभूषित हो गया है।" यह सुनकर वह कामदेवका अन्त करनेवाले अरहन्तको वन्दनाभक्ति करनेके लिए गया। इन्द्र, चन्द्र, नागेन्द्र और नरेन्द्रोंके समूहके द्वारा वन्दनीय उनकी उसने वन्दना की। जैसे-जैसे उस राजाने देवका ध्यान किया, वैसे-वैसे वह निर्वेदको प्राप्त हो गया। (उसने सोचा) कि भृत्यलोग परलोकके लिए दूषण हैं, उसने भोगोंको नागके फनकी तरह समझा, उसने नारीको भीषण मारीके रूपमें देखा, उसके हृदयमें विषयोंके प्रति विरक्ति प्रवेश कर गयी। बालकमलके समान आँखोंवाले अपने पुत्र धनदत्तको शीघ्र धरती देकर अनेक दुःखोंके पात्र घरका परित्याग कर दिया, और संसारसे तारनेवाले व्रतको स्वीकार कर लिया।

घत्ता—जिनश्रेष्ठका स्मरण करते हुए वह मुनि प्राण और इन्द्रियोंके संयम और कामदेवसे रहित एकादश श्रुतांगोंका पालन करते हैं ॥३॥

---

१०. A पुंडरिगिणि ।

३. १. AP णिव । २. AP तं णिसुणेवि रइय° । ३. A वंदणभत्तिइ । ४. P देउ तेण । ५. P धरित्ति वत्ति । ६. AP वउ । ७. A सुमरंतो जिणपुंगवं; P सुमरंतहो जिणपुंगमं । ८. AP पाणिंदियं° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

णारीचिंतणु णे करइ दंसणु　　णउ संभासणु णउ करफंसणु ।
गंधु मल्लु सरु राउप्पायणु　　णउ अइमत्तपाणरसभोयणु ।
तं परिहरइ वत्थु जहिं रोसहु　　होइ सूइ माणाइयदोसहु ।
भाविवि भावणाउ णयजुत्तिउ　　दंसणसुद्धिविणयसंपत्तिउ ।
कम्मु अहम्मु णियाणु णिसिद्धउं　　तित्थयरत्तगोत्तु तें बद्धउं ।
मुउ संणासणेण जोईसरु　　जायउ प्राणयकप्पि सुरेसरु ।
अद्धाइजहत्थतणु सुंदरु　　वीससमुद्दमाणजीवियधरु ।
मुयइ सासु सुहणिहि दहमासहिं　　भुंजइ वीसहिं वरिससहासहिं ।
ओहिणाणमाणेण परिक्खइ　　धूमप्पह महि जाव णिरिक्खइ ।
कालें कालाणणु संप्राविइ[11]　　थिइ छम्माससेसि तहु जीविइ ।

घत्ता—दिण्णविवक्खासंकयं　　मुहसोहाजियपंकयं ॥
सुहलियसुहमाणियसिवं　　भणइ कुलिसि दविणाहिवं ॥४॥

५

जंबुदीवि रविदीवयदरिसइ　　भरहें भुत्तइ भारहवरिसइ ।
मंडुधरियपरमहिवइवंदिहि　　णरभरियहि णयरिहि काकंदिहि ।
कासवगोत्तहु गुत्तससंकहु　　वइरिरणंगणि वज्जियसंकहु ।

४

वह न तो नारीका चिन्तन करते और न दर्शन। न भाषण और न हाथ से संस्पर्श, न राग को उत्पन्न करनेवाले गन्ध-माल्य और स्वर, और न प्राणोंको अत्यन्त मत्त बनानेवाले रसभोजन। उस वस्तुका परित्याग कर देते, जिससे मानादि दोषों और क्रोधकी उत्पत्ति होती। दर्शनविशुद्धि, विनय-सम्पन्नता आदि नययुक्त भावनाओंका चिन्तन कर, कर्म-अधर्म और निदानका निषेध कर उन्होंने तीर्थंकर गोत्रका बन्ध कर लिया। संन्यासमरणसे मरकर वह योगीश्वर प्राणतस्वर्गमें सुरेश्वर हुए। साढ़े तीन हाथका सुन्दर शरीर। बीस सागर प्रमाण जीवको धारण करनेवाला, सुखनिधि वह दस माहमें साँस छोड़ता और बीस हजार वर्षमें भोजन करता। वह अवधिज्ञानके द्वारा धूमप्रभ नरक पर्यन्त भूमिको जानता। समयके साथ कालकी अवधि समाप्त होनेपर तथा उसका जीवन छह माह शेष रह जानेपर।

घत्ता—शत्रुपक्षको शंका उत्पन्न करनेवाले, तथा अपने मुखकमलोंको जीतनेवाले सुफलित सुख और शिवको माननेवाले कुबेरसे इन्द्रने कहा—॥४॥

५

जिसमें सूर्यरूपी दीपक दिखाई देता है ऐसे जम्बूद्वीपमें भरतके द्वारा भुक्त भारतवर्षमें, जहाँ बलपूर्वक राजारूपी बन्दियोंको पकड़ रखा है, ऐसी आदमियोंसे संकुल काकन्दी नगरीका,

४. १. P करइ ण। २. A °पाणु रस°। ३. P वासु। ४. A णियाणि। ५. AP पाणयकप्पि। ६. A अद्धाहियतिहत्थ°; P आहुट्ठ जि हत्थ°। ७. P °माणु। ८. P सुहीणिहि। ९. A दसमासहिं। १०. P ओहिणाणमाणेण। ११. AP संपाविइ।
५. १. P मंड°।

मुत्ताहलमंडियसुग्गीवहु इक्खाउहु रायहु सुग्गीवहु ।
वासवकुलिसु व मज्झे खामहि जसरामहि देविहि जयरामहि ।
विद्धंसियदुद्धरमणसियसरु होसइ देउ णवमतित्थंकरु ।
जाहि ताहं तुहुं दुज्जण [3]जूरहि चिंतियँ सयल मणोरह पूरहि ।
करि चंगउं पुरु घरु सुहदंसणु ता जक्खेण दुक्खविद्धंसणु ।
णिम्मिउ णयरु काइं वण्णिज्जइ जहिं मँणिकिरणविरोहें भिज्जइ ।
भाणुबिंबु तहिं परु किं सीसइ तेएं रयणि ण वासरु दीसइ ।
घत्ता—पयगयरंगविहंतियं[8] पोमरायमणिपंतियं ।।
ढंकइ जत्थ वहुल्लिया किं सा चंदगहिल्लिया ।।५।।

६

कज्जलु णयणि देंति हरिणीलहु आरूसइ किरणावलि कालहु ।
दंतपंति ससियंतकरोहें दप्पणयलि ण णियंति समोहें ।
भणइ घरिणि सहियउ सरलच्छउ एंवहि दसण ण धोयवि णिच्छउ ।
जोयवि घरि मोत्तियरंगावलि अवर ण बंधेइ गलि हारावलि ।
णीलउं णेत्तु ण णिहिउं णियच्छइ मरगयदित्ति मयच्छि दुगुंछइ ।

कश्यपगोत्रीय शशांकगुप्त नामक, शत्रुओंके प्रांगणमें आशंकाओंसे रहित, गुप्तशशांक, जिसका कण्ठ मुक्तामालाओंसे शोभित है, ऐसे इक्ष्वाकुवंशके राजा सुग्रीवकी वज्रायुधकी तरह मध्यमें क्षीण तथा यशसे रमणीय जयरामा नामकी देवीसे, कामदेवके दुर्धर्ष बाणोंको नष्ट करनेवाले नौवें तीर्थंकरका जन्म होगा। जाओ तुम शीघ्र दुश्मनोंको सताओ और चिन्तित समस्त मनोरथोंको पूरा करो। देखनेमें शुभ सुन्दर नगर बनाओ। तब कुबेरने दुखोंका नाश करनेवाले नगरकी रचना की। उसका क्या वर्णन किया जाये? जहाँ मणिकिरणोंके विरोधसे सूर्यबिम्बका तिरस्कार किया जाता है वहाँ दूसरेके विषयमें क्या कहा जाये? तेजके द्वारा वहाँ न रात जान पड़ती है, और न दिन।

घत्ता—चरणोंमें लगे हुए राग (लालिमा) को नष्ट करनेवाली पद्मरागमणियोंकी पंक्तिको जहाँ वधू आच्छादित कर देती है, क्या वह चन्द्रमाके द्वारा अभिभूत है? (क्या चन्द्रमारूपी ग्रह उसे लग गया है?) ।।५।।

६

कोई आँखोंमें काजल लगाती हुई, हरिनील और काले मणियोंकी किरणावलीपर क्रुद्ध हो उठती है। वह चन्द्रकान्तमणिके किरणसमूह से दन्तपंक्तिको दर्पणतलमें अपनी भ्रान्तिके कारण नहीं देखती। वह गृहिणी, सरल आँखोंवाली सखीसे कहती है कि इस समय मैं निश्चयपूर्वक दाँत नहीं धोऊँगी। एक और नारी घरमें मोतियोंकी रंगावली देखकर अपने गलेमें हारावली नहीं बाँधती। अपने स्थापित नीले नेत्रोंको नहीं देख पाती और वह मृगनयनी मरकतमणिकी

२. A णवमु। ३. P दूरहि। ४. P तहु घरि घणय मणोरह। ५. A पुरवरु। ६. P काइं णयरु।
७. A माणिक्ककिरणविहि। ८. AP °विहत्तियं।
६. १. A ससिअंत°; P ससिकंत°। २. P. बद्धइ। ३. A णीलणेत्तु णं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कक्केयणकुट्टियलइ पेच्छिवि भुंज भुंज णियभासइ पुच्छिवि ।
दिण्णउ मुहबिंबाहरतंबइ सिसुणा कूरकवलु पडिबिंबइ ।
अण्णु वि रंगंतउ सुत्तुट्ठिउ थणइ थण्णरसगहणुक्कंठिउ ।
मणिमहियलगयतणु पडिमुल्लउ दोमायउं चिंतइ डिंभुल्लउ ।
जं घरसिहराहयणहभायउ कणयघडिउ पुरु पीयलछायउ ।
णिच्चु जि अमुणियसंझारायउ सुरहिसुसीयलदाहिणवायउ ।
घत्ता—तहिं रयणंसुकरालइ सोवंती सयणालइ ॥
अम्माएवि महासइ पेच्छइ सिविणयमंतइ ॥६॥

७

णायं णाइल्लं णायारिं णारायणियं णरमणहारिं ।
णाणाफुल्लं मालाजमलं णिसियरयं णेसरयं विमलं ।
जायंयजुम्मं सिरिणिवजुम्मं पोमसरं पोमासियपोमं ।
पालंतुग्गयवेलावारं पारं पंडुरपाणियफारं ।
पीढं चामीयरसेहीरं णाइहरं णाइंदागारं ।
दीहमऊहं रयणसमूहं णिद्धं णिद्धूमं हुयवाहं ।

दीप्तिकी निन्दा करती है । नीलरत्नकी भित्तिको देखकर अपनी भाषा (शिशुभाषा) में 'खाओ खाओ' पूछकर बच्चेने मुखके बिम्बाधरसे ताम्र प्रतिबिम्बको भातका कौर दे दिया । एक और सोकर उठा हुआ बालक, खेलते-खेलते माँ का दूध पीनेकी उत्कण्ठासे चिल्लाता है । लेकिन मणि-महीतलमें प्रतिबिम्बित तनुको देखकर भूल गया, और बालक सोचता है कि दो माताएँ हैं । जो अपने गृहशिखरोंसे आकाशभागको आहत करता है, स्वर्णनिर्मित और पीली कान्तिवाला है, जो प्रतिदिन सन्ध्यारागको नहीं जानता, और जिसमें सुरभित शीतल और दक्षिण पवन बहता है ।

घत्ता—ऐसे उस नगरमें रत्नकिरणोंसे मिश्रित शयनतलमें सोती हुई महासती अम्बादेवी स्वप्न-परम्पराको देखती है ॥६॥

७

गज, बैल, मनुष्योंके लिए सुन्दर लक्ष्मी, नाना पुष्पोंकी दो मालाएँ, विमल चन्द्रमा और सूर्य, मत्स्ययुग, लक्ष्मीसे युक्त कुम्भयुगल, लक्ष्मीसे अधिष्ठित कमलोंका सरोवर—जिसका तट-समूह बाँधोंके बाहर निकला हुआ है और जिसके पानीका विस्तार सफेद है, ऐसा समुद्र; सोनेके सिंहोंका पीठ (सिंहासन); स्वर्गविमान और नागभवन, लम्बी किरणोंवाला रत्नसमूह, स्निग्ध और निर्धूम अग्नि ।

---

४. P परिबिंबइ । ५. A मणिमहिगयतणु णिरु पडिमुल्लउ; P मणिमहिगयतणु परिबिंबुल्लउ । ६. AP सुसीयलु । ७. AP रम्माए वि ।

७. १. P णायल्लं । २. A °जुवलं । ३. AT जलयरजुम्मं । ४. AP पालंतुंगयवेलावारं (P वारं) । ५. P णायहरं । ६. A adds after this : ऊइयपंचवीयं एवहं । ७. A adds after this : जालामालाजडियदिसोहं ।

घत्ता—इय वर[8]सिविणयमालियं जयरामाइ णिहालियं ॥
पइणो तीए सिट्ठ[9]यं तेण वि फलमुवदिट्ठयं[10] ॥७॥

८

दयाभावजुत्तो [1]तुमं चारुपुत्तो ।
हले होहि दीसो अणीसो मुणीसो ।
परस्सोवयारी जिणो णिज्जियारी ।
तओ तम्मि काले महातूर[2]रोले ।
तिलोयस्स पुज्जा स[3]ई का वि लज्जा ।
मई कंति बुद्धी सिरी खंति सिद्धी ।
ससिंगारभारा पघोलंतहारा ।
गुणुत्तालभावा सकंचीकलावा ।
तुलाकोडिपाया विइण्णंगराया ।
दिही दीहरच्छी परा का वि लच्छी ।
पवण्णा णिवासं जिणं[4]बाह पासं ।
कया गब्भसुद्धी इमीहिं महिद्धी ।
धणेसो पहिट्ठो हिर[5]ण्णं पवुट्ठो ।
रिऊमाससमेरं धरेउं[6] समेरं ।
अमंदो णिवंदो[7] चुओ प्रा[8]णइंदो ।

घत्ता—फग्गुणमासे पत्तए पक्खे ससियरदित्तए ॥
णवमीदियहि पवित्तए देवें[9] मूलणक्खत्तए ॥८॥

घत्ता—इस प्रकार जयरामाने स्वप्नमालिका देखी। उसने पतिसे कहा। उन्होंने भी उसके फलका कथन किया ॥७॥

८

कि तुम्हारा दयासे युक्त सुन्दर पुत्र होगा। हे हला, अनीश, मुनीश, दूसरोंका कल्याणकारी, शत्रुओंका नाश करनेवाले जिन; तब उस समय कि जब महातूर्य बज रहा था, त्रिलोककी पूजनीय सती कोई लज्जा, (ह्री), कान्ति, मति (बुद्धि), सिद्ध होती हुई श्री, शृंगारके भारसे दबी हुई, हारको आन्दोलित करती हुई लक्ष्मी, गुणोंसे ऊँचे भाववाली कांची कलापसे युक्त, पैरोंसे घुँघरू पहने हुए अंगराग विकीर्ण करती हुई लम्बी आँखोंवाली कोई श्रेष्ठ लक्ष्मी जिननाथके निवासस्थान पर पहुँचीं। इनके द्वारा महान् ऋद्धिवाली गर्भशुद्धि की गयी। छह माहकी अपनी मर्यादा तक कुबेरने प्रसन्नतासे धनकी वर्षा की। अमन्द मनवन्दनीय प्राणत इन्द्र-च्युत हुआ और।

घत्ता—फागुन माहके कृष्णपक्षकी नवमीके दिन मूलनक्षत्रमें ॥८॥

---

८. A वरि । ९. A सिट्ठियं । १०. A °दिट्ठियं ।

८. १. AP तुहं । २. तूरराले । ३. A सुई काषि; P सयं कावि । ४. P जिणंबाय । ५. P सुवण्णेण वुट्ठो ।
६. A रमंतो समेरं । ७. P णिमंदो । ८. AP पाणइंदो । ९. A देउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

जिणो णारिदेहे थिओ दिव्वणाणो सुरिंदाण वंदेहिं वंदिज्जमाणो।
णिहीकुंभहत्था पणच्चंति जक्खा वरिट्ठा सुवण्णं दहट्ठेव पक्खा।
पमोत्तूण संसारवित्थारदुग्गं पवण्णम्मि चंदप्पहे मोक्खमग्गं।
समुद्दाण कोडीण सीरीसमाणं सुसुण्णं[1] गयं एत्तियं कालमाणं।
तओ मग्गसीसे णिसीसंसुसेएं[2] पहिल्ले दिणे जायओ जायसेएं[3]।
जिणिंदस्स जम्मे जियाराइवग्गो ससक्को असेसो वि सोहम्मसग्गो।
ण सामाइ[4] खे खीणपावो महप्पो विमाणेहिं जाणेहिं ईसाणकप्पो।
सणाईकुमारो[5] स माहिंदणामो विलंबंतसोहंत[6]मंदारदामो।
समं बंभणाहेण बंभुत्तरेसो णहुड्डीणगिव्वाणसोहाविसेसो।
चलो चल्लिओ लंतवो लच्छिधामो असट्ठेण काविट्ठवो तुट्ठिकामो।
ससुक्को महासुक्कदेववग्ग[7]गामी सयारो सहारो सहस्सारसामी।
समुद्धाइओ आणओ पाणइंदो[8] जगुद्धारणो आरणो अच्चुइंदो।
ससी वासरीसो[9] रहुब्बद्धकेऊ बुहो अंगिरारो सणी राहु केऊ।
दियंतं गयाणंदभेरीणिणाया पुरिं पाइया[10] सामराणं णिहाया।
णिवो वंदिओ तेहिं काकंदिवालो[11] करे ढोइओ कित्तिमो को वि बालो।

९

देवेन्द्रोंके समूहके द्वारा वन्दनीय देव जिन नारीदेहमें आकर स्थित हुए। निधिकलश अपने हाथमें लेकर यक्ष नृत्य किया और अठारह पक्षों तक धनकी वर्षा की। संसारके विस्तार दुर्गको छोड़कर चन्द्रप्रभ स्वामीके मोक्षमार्गमें प्रवृत्त होनेपर, नब्बे करोड़ सागर पर्यन्त समय बीतनेपर मार्गशीर्ष शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके दिन जिनेन्द्रके जन्ममें, शत्रुवर्गका विजेता, इन्द्र सहित समस्त सौधर्म स्वर्ग आकाशमें नहीं समा सका। निष्पाप और माहात्म्यवाला ईशान स्वर्ग विमानों और यानोंसे, जो लटकती हुई मन्दारपुष्प मालाओंसे शोभित है, ऐसे सानत्कुमार और महेन्द्र स्वर्ग, ब्रह्म स्वर्गके इन्द्रके साथ ब्रह्मोत्तर स्वर्गका इन्द्र (कि जिसकी आकाशमें उड़ते हुए देवोंसे शोभा विशेष है) लक्ष्मीसे युक्त चंचल लान्तव स्वर्ग तथा बिना किसी कपट भावसे सन्तुष्ट काम कापिष्ट स्वर्ग चल पड़ा। शुक्र वर्गके साथ महाशुक्र स्वर्गका अग्रगामी देव (इन्द्र), सतार स्वर्ग और हारसहित सहस्रार स्वर्गका स्वामी आनत और प्राणत स्वर्ग दौड़ पड़ा, विश्वको धारण करनेवाला आरण और अच्युत स्वर्ग भी। चन्द्रमा, सूर्य, जिसके रथ पर पताका बँधी हुई है ऐसा बुध, बृहस्पति, शनि, राहु और केतु आये। आनन्दभेरीके निनाद दिशाओंमें फैल गये। लोकपालों-के समूह उस नगरीमें पहुँचे। उन्होंने काकन्दी नगरका पालन करनेवाले उस राजाको नमस्कार

९. १. AP ससुण्णं। २. A सुसेओ। ३. A जायसेओ। ४. AP संमाइ। ५. P सणाइंकुमारो। ६. AP विलोलंतसोहंत°। ७. AP °देववक्क°। ८. AP पाणइंदो। ९. P वासरेसो। १०. AP पाइया। ११. AP काकिंदिवालो।

असामण्ण[12]लायण्णभारम्मयाए जणेऊण भंति[13] मणे अम्मयाए ।
ति[14]णाणी तिसुद्धो सुलेसासहावो णिओ मंदरं देवदेवेहिं देवो ।
घत्ता—पंडुसिलोवरि ण्हाणियं पूयाविहिसंमाणियं ॥
[15]णविऊणं अरहंतयं [16]पुप्फदंतभयवंतयं ॥९॥

१०

ते सुरवर लंघिवि गयणंतरु ते लेप्पिणु पडिआया तं पुरु ।
जणणिहि करयलि णिहियउ जइ[1]वइ गउ आणंदु पणच्चिवि सुरवइ ।
कालें जंतें वड्डिउ सायरु वड्ढिउ णं सिये[2]पक्खइ सायरु ।
वड्ढिउ सुकइहि कव्वालाउ व वड्ढिउ सुमुणिहिं णाणसहाउ व ।
वड्ढिउ उवसमवेल्लिहि कंदु व वड्ढिउ अमे[3]यकलहिं णवँ[4]यंदु व ।
वड्ढिउ धम्मदि[5]वोडहु तेउ व वड्ढिउ भवसयरहरहु सेउ व ।
कुंदुज्जलतणु अइं[6]सयभूयउ बाणासणसउ तुंगु पहूयउ ।
सिसुलीलाइ पओसियदिव्वहं गय पण्णाससहस तहु पुव्वहं ।
पच्छइ पत्तु पायसासणु सइं उच्छउ किं सीसइ मणुएं मइं ।
जं चिंतंतउ सुरगुरु गुप्पइ तहिं महुं मइ णउ किं पि विसप्पइ ।
लक्खणलक्खियँ[7]वरतणुलट्ठिहि पट्टबंधु जा[8]इउ परमेट्ठिहि ।

किया, और उसके हाथमें कोई भी कृत्रिम बालक दे दिया। असामान्य लावण्यके भारसे युक्त माताके मनमें भ्रान्ति उत्पन्न कर तीन ज्ञानधारी तथा मन-वचन-कायसे शुद्ध शुभलेश्याके स्वभाववाले देवदेवको देवेन्द्रोंके द्वारा मन्दराचल ले जाया गया।

घत्ता—पाण्डुकशिलाके ऊपर अभिषिक्त पूजाविधिसे सम्मानित सूर्य और चन्द्रमाकी आभावाले अरहन्तको नमस्कार कर—॥९॥

१०

सुरवर आकाशको पार करते हुए उन्हें वापस लेकर उस नगर आये। यतिपति जननिधि जिनको हथेलीपर रखकर तथा आनन्दसे नृत्य कर इन्द्र वापस चला गया। समय बीतनेपर वह आदरपूर्वक बढ़ने लगे मानो शुक्ल पक्षमें सागर बढ़ रहा हो। वह सुकविके काव्यालापकी तरह बड़े हो गये, सुमुनिके ज्ञानस्वभावकी तरह बड़े हो गये, उपशमकी लताके अंकुरकी तरह बड़े हो गये, अमलकलाओंसे चन्द्रमाके समान बड़े हो गये। सूर्यके तेजके समान वह बड़े हो गये, संसार-रूपी समुद्रके सेतुके समान बड़े हो गये, स्वर्णको तरह अत्यन्त उज्ज्वल, उनका शरीर सौ धनुष प्रमाण ऊँचा और प्रचुर था। इस प्रकार बालक्रीड़ामें उनके देवोंको सन्तुष्ट करनेवाले पचास हजार पूर्व वर्ष बीत गये। उसके बाद इन्द्र स्वयं आया। उस उत्सवका मुझ मनुष्यके द्वारा क्या वर्णन किया जाये। जिसके वर्णनमें स्वयं बृहस्पति व्याकुल हो उठता है, उसमें मेरी मति बिलकुल भी नहीं चलती। लाखों लक्षणोंसे युक्त शरीरलतावाले परमेष्ठीके लिए पट्ट बांध दिया गया।

१२. P असावाण° । १३. A भंती । १४. A तिणाणी तिलेसो तिसुद्धो सुहावो । १५. AP णमिऊणं । १६. AP पुप्फयंत° ।

१०. १. P जयवइ । २. AP सियवक्खइ । ३. A अमयकलिहिं । ४. P णवचंदु व । ५. A धम्मु दयादह-भेउ व; P धम्मदिवायरतेउ व । ६. P अइसंभूयउ । ७. P °परतणु° । ८. AP जायउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—माणंतहु सिरियंगइं[९] अट्ठवीसपुंव्वंगइं[१०] ॥
पुव्वहं पुणु सविलासइं पण्णासेव सहासइं[११] ॥१०॥

११

तेत्थु तासु वोलीणइं जइयहुं उक्क पडंती दिट्ठी तइयहुं ।
तं जोइवि जिणणाहु वियक्कइ कोलहु[१] कलिहि ण कोइ वि चुक्कइ ।
जणणमरण[२]परिवट्टणलक्खणु एउ तिजगु परिणवइ पडिक्खणु[३] ।
जं जं कांइं वि णयणहिं[४] दीसइ उक्का इव तं तं खणि णासइ ।
अथिरु सव्वु भणु कहिं रइ कीरइ तो वि चित्तु विसयासइ हीरइ ।
वइसाणरु इंधणतणपवणें ण समइ कंडु णक्खकंडुयणें[५] ।
भोएं इंदियतित्ति ण पूरइ वड्ढइ दुट्ठ तिट्ठ मइ जूरइ ।
इय चिंतंतु णाहु संभाविउ अमरमुणीसरेहिं बोल्लाविउ[६] ।
चारु चारु पइं जिणवर जाणिउं सासयवित्तिहिं हियवउ आणिउं ।
घत्ता—ता धयवीईराइयं विउलपत्तपच्छाइयं ॥
पुंडरीयमालाधरं सोहइ गयणंगणसरं ॥११॥

घत्ता—राज्यश्रीके अंगोंको मानते हुए उनके पचास हजार पूर्व और अट्ठाईस पूर्वांग समय विलासपूर्वक बीत गया ॥१०॥

११

जब उनका इतना समय बीत गया, तो उन्होंने एक उल्काको गिरते हुए देखा। उसे देखकर जिननाथ विचार करते हैं—यमसे युद्ध करते हुए कोई नहीं बचता, जनन-मरण और परिवर्तनके लक्षणवाला यह त्रिलोक प्रतिक्षण बदलता रहता है। नेत्रोंसे जो-जो कुछ भी दिखाई देता है, उल्काके समान वह एक क्षणमें नष्ट हो जाता है, जहाँ सब कुछ अस्थिर है, बताओ वहाँ कहाँ रति की जाये। फिर हृदय विषयकी आशाके द्वारा अपहृत किया जाता है। आग ईन्धन-स्वरूप शरीर और हवासे, और खाज नाखूनोंसे खुजलानेसे नष्ट नहीं होती। भोगसे इन्द्रिय तृप्ति नहीं होती। दुष्ट तृष्णा बढ़ती है और मति पीड़ित होती है। इस प्रकार विचार करते हुए स्वामी-की सम्भावना कर अमरमुनीश्वरों (लौकान्तिक देवों) ने आकर कहा—हे जिनवर! आपने सुन्दर जाना और शाश्वत वृत्तियोंसे अपनेको अनुशासित किया।

घत्ता—तब इतनेमें ध्वजरूपी तरंगोंसे शोभित, विपुल पात्रों (पत्तों वाहनों) से आच्छादित पुण्डरीकों (कमलों और छत्रों) की माला धारण करनेवाला आकाश प्रांगणरूपी सरोवर शोभित हो उठा ॥११॥

९. A सिरिअंगयं। १०. A °पुव्वंगयं। ११. A सहस्सइं।

११. १. A कालहु कालि ण वि को चुक्कइ। २. A °मरणु परि°। ३. A परिक्खणु। ४. A कायमि णयणहं। ५. A °कंडमणें। ६. A बोलाविउ।

१२

सुरवरकरयलपहयइं तूरइं   खीरमहुंण्णवि[1] भरियइं खीरइं ।
णविउ ण्हविउ भावें तित्थंकरु   घणवाहें घणेण णं महिहरु ।
दिव्वेंदुगुल्लयाइं[2] परिहेप्पिणु   परमसिद्धसंतइहि णवेप्पिणु ।
सुमइहि रज्जु समप्पिवि राणउ   सूरप्पहसिवियहि आसीणउ ।
गउ णडंतणाणाखयरामर   वियसियपुप्फइ पुप्फवणंतरि ।
तहिं मायेंसिरि[3] मासि सिसिरहु भरि   सियँपाडिवइ[4] वरुणदिसि दिणयरि ।
कुडिलकेस णिक्कुंडिलें[5] लुंचिवि   घल्लिय ते तियसिंदें अंचिवि ।
जाइवि अमर पवरमयरालइ   जयकारिउ विज्जाहरमालइ ।
छट्ठुववासु पयासु करेप्पिणु   थिउ णिवसहसें[6] सहुं तउ लेप्पिणु ।
घत्ता—वित्थारियतवसिहिसिहं ससरीरे वि हु णिप्पिहं ॥
उज्झियरइसंकप्पयं   पडिवण्णं जिणकप्पयं ॥१२॥

१३

अवरहिं वासरि संतकसायउ   हासकासजससससिसुच्छायउ[1] ।
सइलेंणयरु[2] मुणिभिक्खहि ढुक्कउ   पुप्फमित्तरायहु घरि थक्कउ ।
तहु तहिं उप्पण्णउं अच्छेरउ   पंचपयारु मणोरेंहगारउ[3] ।

१२

देववरोंके हाथोंसे नगाड़े बज उठे । क्षीर समुद्रसे जल भरा जाने लगा । इन्द्रने नमन किया, तीर्थंकरका भावसे अभिषेक किया, मानो मेघने महीधरका अभिषेक किया हो । दिवा वस्त्र पहनाकर, परम सिद्ध सन्ततिको प्रणाम कर, सुमतिको राज्य समर्पित कर राजा सूर्यप्रभा शिविकामें बैठ गये । नृत्य करते हुए नाना विद्याधर और देव विकसित पुष्पोंसे युक्त पुष्पवनमें पहुँचे । वहाँ मार्गशीर्ष शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके दिन, सूर्यके पश्चिम दिशामें पहुँचनेपर अपने घुँघराले बालोंको उन्होंने निष्कपट भावोंसे उखाड़ डाला । इन्द्रने पूजा कर उन्हें क्षीरसागरमें फेंक दिया । विद्याधर समूहने जय-जयकार किया । छठा उपवास कर, एक हजार राजाओंके साथ तप ग्रहण कर स्थित हो गये ।

घत्ता—जिसमें तपरूपी अग्नि विस्तारित की गयी है, जो अपने ही शरीरमें निष्प्रभ है, जिसमें रतिकी संरचनाका परित्याग कर दिया गया है, ऐसे जिनाचरणको उन्होंने स्वीकार कर लिया ॥१२॥

१३

एक दूसरे दिन हास्य, काश, यश और चन्द्रमाके समान कान्तिवाले शान्तकषाय वह शैलनगरमें मुनिचर्याके लिए पहुँचे । वहाँ पुष्यमित्र राजाके घर ठहर गये । वहाँ उसे पाँच सुन्दर

---

१२. १. A महण्णव° । २. APT °दुगूलयाइं । ३. A मायसिरमासि; P मागसिरि मासि । ४. A पडिवए; P पडिवाए । ५. P णिकुडिल्लें । ६. AP णिवसहसें ।
१३. १. P °ससिजस° । २. AP सयलणयरु । ३. P मणोहरु° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउवरिसइं गलियइं छम्मत्थहु　णायरुक्खतलि मुणियपयत्थहु ।
कत्तियमासि विसुद्धहि बीयहि　दिवसक्खइ गिव्वाणपगीयहि ।
लोयालोयपलोयणदीवउ　जायउ देवहु अप्पसहावउ ।
केवलणाणु सो जि लइ भण्णइ　अण्णें जीवहु कहिं परमुण्णइ ।
जं बुद्धें सुण्णउं जि पयासिउं　जं विप्पेण बंभु णिद्देसिउं ।
जं कउलें अंबरु आहासिउं　जं सइवेण सिवत्तु समासिउं ।
जं कविलें णिक्किरिउं णिउत्तउ　णिग्गुणु णिच्चविसुद्धु अकत्तउं ।
जं सुरगुरुणा णत्थि पउत्तउं　जं अणंतु अच्छइ अविहत्तउं ।
तं खं देवें सुसिरु विसिट्ठउ　अप्पाणाउ विहिण्णउं दिट्ठउ ।
घत्ता—एयाणेयविवाइणा　पुप्फदंतजिणजोइणा ॥
जेउं कुसुमपिसक्कयं　पहि णिहियं तेलोक्कयं ॥१३॥

१४

इंदेण जलणेण[1]　वरुणेण पवणेण ।
फणिणा कुबेरेण　चंदेण सूरेण ।
दसदिसिहिं आएण　सुरवरणिहाएण ।
थोत्तं पढंतेण　थुउ जिणवरो तेण ।
तुहुं धोयरइरेणु　तुहुं कामदुहधेणु ।
तुहुं बंधु हयदप्पु　तुहुं माय तुहुं बप्पु ।
जे दुट्ठ पाविट्ठ　णिकिट्ठ जेड धिट्ठ ।

आश्चर्य उत्पन्न हुए। जब चार वर्ष बीत गये, तो नागवृक्षके नीचे, पदार्थोंको जाननेवाले छद्मस्थ देवको कार्तिक मासकी देवोंके द्वारा प्रगीत द्वितीयाके दिनका अन्त होनेपर लोकालोकके अवलोकन-का दीप आत्मस्वभाव प्राप्त हो गया। लो, उसीको केवलज्ञान कहा जाता है, किसी दूसरे ज्ञानके द्वारा परम उन्नति कहाँ? जिसे बुद्धने शून्य प्रकाशित किया है, जिसे ब्राह्मणने ब्रह्मके रूपमें विशेष कथन किया है, जिस कौलने (मीमांसक) स्वर्ग कहा है, जिसे शैवने शिवत्व कहा है, जिसे कपिल (सांख्य) ने निष्क्रिय, निर्गुण, नित्य विशुद्ध और अकर्ता कहा है, जिसे चार्वाकने नास्ति (नहीं है) कहा है, और जो अनन्त और अविभक्त (अखण्डित) है, देवने उस अन्तःशून्य विशिष्ट अपनेको पृथक् करके देख लिया।

घत्ता—एकानेक विवादी पुष्पदन्त जिनयोगीने (इस प्रकार) सारे संसारको कामरूपी पिशाचको जीतनेके लिए रास्तेपर लगा दिया ॥१३॥

१४

इन्द्र, अग्नि, वरुण, पवन, नागराज, कुबेर, चन्द्र, सूर्य और दसों दिशाओंसे आये सुरवर-समूहने स्तोत्र पढ़ते हुए जिनवरकी स्तुति की—"तुमने रतिरूपी रेणुको धो लिया है, तुम कामरूपी धनु हो, तुम हतदर्प बन्धु हो, तुम माँ हो, तुम बाप हो। जो दुष्ट, पापिष्ठ, निकृष्ट, जड़ और ढीठ

४. AP कवलें। ५. A संखें। ६. P अक्कत्तउं। ७. A अप्पाणाउ विभिण्णउं; P अप्पसहावें जाएं।
८. AP पुप्फयंत°। ९. P पहि णीयं।
१४. १. P adds after This : जमदिसिकुमारेण; णेरइयभावेण। २. P जण घेट्ठु।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

उम्मग्गि वट्टंति महु मज्जु घोट्टंति।
अलियं पयंपंति कामेण कंपंति।
परवहु णिहालंति पारद्धि खेलंति[3]।
लोहेण[4] भज्जंति परहणु ण वज्जंति।
रोसेस वड्ढंति खग्गाइं कड्ढंति।
जे मासु भक्खंति ते पइं ण पेक्खंति।
मूढा ण वंदंति णिच्चं पि णिंदंति।
संचरइ जणु[5] छम्मु पइं मुइवि कहिं धम्मु।
बहुजणणजलसेउ पइं मुइवि को देउ।

घत्ता—मिच्छापरिणामग्गहे लग्गं घणतमदुव्वहे[6]।
णिवँडंतं[7] ण उवेक्खियं जगडिंभं पइं रक्खियं ॥१४॥

१५

समवसरणि जिणु संठिउ जावँहिं[1] अट्ठासी[2] हुय गणहर तावँहिं।
पण्णारहसय वज्जियसंगहं परमरिसिहिं जाणियपुव्वंगहं।
एक्कलक्खु सहुं पंचावण्णहिं सहसहिं पंचसईसंपण्णहिं।
सिक्खुयाहिं[3] णिम्महियरईसहं अट्ठसहस चउसय ओहीसहं।
सत्तसहस केवलणाणालहं तेरहसहसइं विक्किरियालहं।
भयसहास वयसय मणपज्जय णाणधारि दोसासय दुज्जय।
वईतंडियपच्चुत्तरदाइहिं[4] रिदुसहसइं रिदुसयइं विवाइहिं।

उन्मार्गपर चलते हैं, मधु और मद्य खाते हैं, झूठ बोलते हैं, कामसे काँपते हैं, परवधूको देखते हैं, शिकार खेलते हैं, लोभसे भग्न होते हैं, परधनको नहीं छोड़ते, क्रोधसे भड़कते हैं, तलवारें निकाल लेते हैं और जो मांस खाते हैं वे तुम्हें नहीं देख सकते। मूर्ख तुम्हारी वन्दना नहीं करते, नित्य तुम्हारी निन्दा करते हैं, जन क्षमा धारण करता है, आपको छोड़कर कहाँ धर्म है, संसाररूपी जलके लिए सेतु हो, तुम्हें छोड़कर कौन देव हो?

घत्ता—मिथ्या परिणामका जिसमें आग्रह है ऐसे घनतमरूपी दुष्पथमें लगे हुए, गिरते हुए विश्वरूपी बालककी तुमने उपेक्षा नहीं की, उसकी रक्षा की ॥१४॥

१५

जैसे ही जिनवर समवसरणमें विराजमान हुए, तो उनके अठासी गणधर हुए। परिग्रहसे रहित पूर्वांगोंको जाननेवाले पन्द्रह सौ परममुनि, एक लाख पचपन हजार पाँच सौ शिक्षक थे। कामदेवको नष्ट करनेवाले आठ हजार चार सौ अवधिज्ञानी थे। केवलज्ञानके धारी सात हजार थे, विक्रियाऋद्धिके धारक तेरह हजार थे, सात हजार पाँच सौ मनःपर्ययज्ञानके धारक थे।

३. P खेल्लंति। ४. P reads *a* as *b* and *b* as *a*। ५. A जणछम्मु; P जहिं छम्मु। ६. P दुप्पहे। ७. A णिवडंतउ।

१५. १. P adds after this : एए मुणि संजाया तावँहिं, इंदचंदविसहरमणहर। २. P अट्ठासीस जाया गणधर। ३. AP सिक्खुवाहं। ४. AP वयतंडिय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहुं असीइसहसइं णिरवज्जहं लक्खइं तिण्णि पउत्तइं अज्जहं ।
दोण्णि लक्ख पालियघरधम्महं मणुयहं मणुइहिं पंच सुसोम्महं ।
अमरच्छरउलाइं गयसंखइं तिरियइं पुणु कहियाइं ससंखइं ।
इय एत्तियलोएं संजुत्तहु भुवणत्तयराईवयमित्तहु ।
महि विहरंतहु धम्मु कहंतहु पुप्फदंतदेवहु अरहंतहु ।
अट्ठवीसपुव्वंगविहीणउ पुव्वहं एक्कु लक्खु तहिं झीणउं ।
घत्ता—मासमेत्तु मुणिगणजुओ फणिदेवासुरणरथुओ ।।
लंबियपाणि मणोहरे थिउ संमेयमहीहरे ।।१५।।

१६

आउसमाणइं णामइं गोत्तइं करिवि वेयणीयाइं णिहित्तइं ।
दंडकवाडरुजगजगपूरइं विरइवि मुक्कइं तिण्णि सरीरइं ।
तेजइओरालियकम्मइयइं जाइं विमुक्कइं पुणु वि ण लइयइं ।
उव्वेल्लिवि कड्ढिवि आउंचिवि जीवपएस सयलघण संचिवि ।
चउसमयंतयालु थिउ देहइ भद्दवए सुक्कट्ठमिदियहइ ।
अवरण्हइ सहुं मुणिहिं सहासें सिद्धउ जिणु जणजयजयघोसें ।
पुज्जिय तणु चउविहहिं सुरिंदहिं वंदिउ इंदपडिंदणरिंदहिं ।
गइ देवाहिदेवि अववग्गहु गउ सुरयणु णीसेसु वि सग्गहु ।

वितण्डावादियोंको प्रत्युत्तर देनेवाले वादी मुनि छह हजार छह सौ, तीन लाख अस्सी हजार निरवद्य आर्यिकाएँ थीं, दो लाख गृहस्थ धर्मका पालन करनेवाले श्रावक थे और सुसौम्या पाँच लाख श्राविकाएँ थीं। अमरों और अप्सराओंका कुल असंख्यात था परन्तु तिर्यंच ससंख्य कहे गये हैं। इस प्रकार इन लोगोंसे संयुक्त तथा भुवनत्रयरूपी कमलके लिए सूर्यके समान अरहन्त पुष्पदन्तकी धरतीपर विहार और धर्मोपदेशका कथन करते हुए अट्ठाईस पूर्वांग रहित एक लाख पूर्व समय बीत गया।

घत्ता—मुनिसमूहसे सहित, नागदेव और असुरोंसे संस्तुत हाथ ऊँचा किये हुए वह सुन्दर सम्मेद शिखर पर्वतपर स्थित हो गये ।।१५।।

१६

आयुकर्म, नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका उन्होंने नाश कर दिया और दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरणकी रचना कर उन्होंने तीनों शरीर छोड़ दिये। जब उन्होंने तैजस, औदारिक और कार्मण शरीरको छोड़ दिया तो उन्हें दुबारा ग्रहण नहीं किया। एकत्रित, आकर्षित और संकोचित कर समस्त सघन जीवप्रदेशोंको संचित कर चार समयके अन्तराल (दण्ड, कपाट, प्रतर और लोक-पूरण) तक, देहमें स्थित रहकर, भाद्रपदके शुक्लपक्षके उत्कृष्ट अष्टमीके दिन अपराह्णमें एक हजार मुनियोंके साथ, लोगोंके जयघोषके साथ जिन सिद्ध हो गये। चार प्रकारके देवेन्द्रोंने उनके शरीरकी पूजा की। इन्द्र-प्रतीन्द्र-नरेन्द्रोंने वन्दना की। देवाधिदेवके मोक्ष जानेपर समस्त देवसमूह भी स्वर्ग चला गया।

५. A करंतहुं । ६. AP पुप्फयंत° । ७. A लहो झीणउं; P परिखीणउं । ८. A मासमेत्त° ।
१६. १. P णामयं । २. A दंडकवालरुजगजग°; P दंडकवाडपयरजग° । ३. P तेजोरालियअरुकम्म° ।
४. A जोयविमुक्कइं; P जाएवि मुक्कइं । ५. AP सिहि दिण्ण सिहिंदहिं ।

घत्ता—जिह भरहस्स समीरिओ रिसहेणंगयवयरिओ ॥
तिह मइं तुह कहिओ इमो पुप्फदंतजिणपुंगमो ॥१६॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकव्वे पुप्फदंतणिव्वाणगमणो णाम सत्तचालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४७॥
॥ जिणपुप्फयंतचरियं समत्तं ॥

घत्ता—जिस प्रकार ऋषभनाथने कामके शत्रु भरतसे कहा था, उसी प्रकार जिनवर श्रेष्ठ पुष्पदन्तका यह चरित मैंने तुमसे कहा ॥१६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका पुष्पदन्त निर्वाणगमन
नामका सैंतालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४७॥

---

६. P भरहहो । ७. A पुप्फयंत° । ८. P सत्तयालीसमो । ९. AP omit the line ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ४८

आउच्छणदच्छ सेच्छिणियच्छियधम्मपह[1] ॥
सुणि सेणियराय सीयलणाहहु तणिय कह ॥ ध्रुवकं ॥

१

जो परिपालियतिरयणो पयजुयपाडियसुरयणो ।
तिक्खं वारियदुक्खहं जस्स वयं परदुक्खहं ।
बुहतोसो परमागमो जेण कओ परमागमो ।
कणयकमल[2]कोसाइओ अविणस्सरसिरिसाइओ ।
जो पिहियासवदारओ णग्गो णिग्घरदारओ ।
णासियणिंदायारओ पोसियपंचायारओ ।
अमुणियवणियाय[3]ल्लओ जो दयाइ अल्लल्लओ ।
जस्स पईंसइ[4] जइयणो वसहएहिं णिज्जइ[5] यणो ।
जेव तेव उग्गयगयं धरियं जीवेणंगयं ।
तं वीहच्छं पूइयं गंधमल्लविहिपूइयं ।
तइ वि खलं खइ तावयं होइ ण हो चत्तावयं ।
एत्थ सणेहं सीसया जस्स[6] कुणंति ण सीसया ।

सन्धि ४८

श्री गौतम स्वामी कहते हैं—पूछनेमें चतुर तथा धर्मकी प्रभाको अपनी आँखोंसे देखनेवाले हे श्रेणिकराजा, तुम शीतलनाथकी कथा सुनो।

१

जो तीन रत्नों (सम्यक् दर्शन, ज्ञान और चारित्र) का पालन करनेवाले हैं, जिनके चरणोंमें सुर समूह प्रणत है, जिनका व्रत तीव्र तथा दुष्पापका निवारण करनेवाला है, तथा दूसरोंके लिए कठिन है, जो अत्यन्त सन्तुष्ट हैं, और श्रेष्ठ लक्ष्मीके कारण हैं, जिन्होंने परमागमोंकी रचना की है, जो स्वर्णकमलकी कर्णिकाके समान हैं, जो अविनश्वर श्रीकी साधना करनेवाले हैं, जिन्होंने आस्रवके द्वारको ढक दिया है, जो वस्त्रहीन और गृहद्वारसे रहित हैं, जिन्होंने नीच आचरणका नाश कर दिया है, जिन्होंने पाँच आचारोंका परिपालन किया है, जिन्होंने स्त्रियोंके कटाक्षोंकी उपेक्षा की है, तथा जो दयासे अत्यन्त आर्द्र हैं, जिनसे यति जन अत्यन्त आलोकित होते हैं, जिस प्रकार वृषभेन्द्रों द्वारा शकट ढोया जाता है, उसी प्रकार जीवोंके द्वारा रोगोंसे युक्त शरीर ढोया जाता है, जो बीभत्स और दुर्गन्धयुक्त है, गन्धमाल्य विधिसे पवित्र होते हुए भी जो दुष्ट, नश्वर और सन्तापदायक है, जो आपत्तियोंसे रहित नहीं है ऐसे शरीरमें जिसके शिष्य रति नहीं करते,

१. १. AP सच्छणियच्छिय° । A °पालिय° । २. A कणयकलस° । ३. वणियापल्लओ । ४. A पयासइ; P य भासइ । ५. A णिज्जियणो; P णिज्जइअणो । ६. A जत्थ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जं दट्ठुं सक्काणणं महुसमयम्मि व काणणं।
वियँसइ ससहररा हयं[7] कमलं पिव रविभाहयं।
जो वणवासि वसी यलं वयणं चंदणसीयलं।
जस्स पसाया सीयलं हवइ णविवि तं सीयलं।
घत्ता—गुणभद्दगुणीहिं जो संथुउ गुणगरुयगइ[8]॥
दहमउ जिणणाहु हउं वि थुणविं[9] सो दिव्वजइ ॥१॥

२

उत्तुंगकोलखंडियकसेरु[1] पुक्खरवरदीवइ पुव्वमेरु।
तहु पुव्वविदेहइ वहइ विमल णइ कीलमाणकारंडजुयल।
खरदंडसंडदलछइयणीर डिंडीरपिंडपंडुरियतीर।
दरिसियपयंडसोंडाललील लोलंतथूलकल्लोलमाल।
जुज्झंतचडुलकरिमयरणिलय परिभमियगहीरावत्तवलय।
जलपक्खालियतडसाहिसाह[2] णामेण सीय सीयल सगाह।
दाहिणइ धण्णसंछण्णसीम[3] उवयंठि ताहि संठिय सुसीम।
जससिधवलियदिक्कवालु तहि णयरिहि णरवइ पुहइपालु।

जिन्हें देखकर देवेन्द्रका मुख उसी प्रकार विकसित हो जाता है, जिस प्रकार वसन्तकालके आनेपर कानन, और सूर्यकी प्रभासे आहत होकर कमल खिल जाता है, जो वनमें निवास करते हैं, आत्माके वशीभूत हैं, जिनके वचन चन्द्रमाके समान शीतल हैं, जिन्हें नमस्कार कर मनुष्य शान्त हो जाता है—

घत्ता—गुणभद्र जो आचार्यके गुणसे संस्तुत हैं, जो गुणोंसे महान् गतिशील हैं, ऐसे उन दसवें जिननाथ दिव्ययति शीतलनाथको मैं प्रणाम करता हूँ ॥१॥

२

जहाँ उन्नत सुअर जड़ोंको खण्डित करते हैं, पुष्करद्वीपमें ऐसा पूर्व सुमेरु पर्वत है। उसके पूर्वविदेहमें पवित्र सीता नामकी नदी बहती है, जिसमें हंसयुगल क्रीड़ा करता है, जिसका जल कमलसमूहसे आच्छादित है, फेनोंके समूहसे जिसके तट धवल हैं, जिसमें प्रचण्ड जलगजोंकी क्रीड़ा दिखाई देती है, जिसमें चंचल स्थूल लहरोंकी माला है, जो लड़ते हुए गजों और मगरोंका घर है, जिसमें गम्भीर जलावर्तोंके समूह परिभ्रमित हैं, जिसके तटवर्ती वृक्षोंकी शाखाओंको जलोंसे प्रक्षालित कर दिया है, और जो ग्राहोंसे युक्त है, ऐसी उस सीता नदीके दक्षिण तटपर धान्योंसे आच्छादित ऐसी सुसीमा नामकी नगरी स्थित है। उस नगरीका यशरूपी चन्द्रसे

७. A विहसइ। ८. AP गुणगरुवमइ। ९. P हउं थुणामि सो।
२. १. A उत्तंग°; P उत्तुंगु। २. P °तडि साहिसाह। ३. A °सच्छण्ण°।

[4]परिहातियतिवलिइ जणियसोह दावियरोमावलिअंकुरोह[5] ।
घणथणहल कौंतल[6]भसलसाम कयपत्ता[7]वलि अहिजणियराम ।
पियविडविवेढणु[8]ब्भासकाम कोमलिय सरस संदिण्णकाम ।
णं पवरअणंगहु तणिय वेल्लि णं तासु जि केरी हत्थभल्लि ।
सूहव सारंगसिलिंबयच्छि तहु वल्लह देवि वसंतलच्छि ।
सा सुललियंगि पंचत्तु पत्त णीसासविवज्जिय पिहियणेत्त ।
अवलोयवि चिंतइ सामिसालु णिप्फलु मोहंधहुं मोहजालु ।
मुय मेरी पिय पयडीकए[9]हिं हसइ व दसणेहि णिसिक्किएहिं ।
तोडेप्पिणु णिब्भरु णेहवासु अकहंति दुक्क परजम्मवासु ।
अप्पणिय एह मइं भणिय काइं इह परियणसयणइं जाइं जाइं ।
संचियणिय[10]कम्मवसंगयाइं जाहिंति एंव सव्वाइं ताइं ।
एक्कें मइं जाएवउं णियाणि तो वरमइ जुंजमि अरुहणाणि ।
जं अच्छिवि पुणु वि विणासभाउ[11] तं मुयइ एंव भणेवि राउ ।

घत्ता—करु देंति विहेय कुंभिणि व्व तोसियजणहु ॥
कुंभिणि ढोएवि चंदण[12]णामहु णंदणहु ॥२॥

दिग्मण्डलको आलोकित करनेवाला पृथ्वीपाल नामका राजा था। उसकी मृगशावककी आँखोंके समान आँखोंवाली वसन्तलक्ष्मी नामकी प्रिया थी, जो परिखात्रय (तीन खाइयों) के समान त्रिवलिसे शोभावाली थी, जो रोमावलीके अंकुरसमूहवाली थी, जो सघन स्थनरूपी फलोंसे युक्त थी, जो कुन्तलरूपी भ्रमरोंसे सुन्दर थी, की गयी पत्र-रचनावलीसे जो अत्यन्त सौन्दर्य उत्पन्न करनेवाली थी। जिसमें प्रियरूपी वृक्षको घेरनेकी उत्कृष्ट शोभा और इच्छा थी, जो अत्यन्त कोमल, सरस और कामनाओंकी पूर्ति करनेवाली थी ऐसी जो मानो प्रवर कामदेवकी लता है, जो मानो उसीके हाथकी मल्लिका है, लेकिन सुन्दर अंगोंवाली वह मृत्युको प्राप्त हो गयी, निःश्वास-से रहित उसकी आँखें बन्द हो गयीं। उसे देखकर वह स्वामीश्रेष्ठ विचार करता है कि मोहसे अन्धोंका मोहजाल व्यर्थ है, मेरी मरी हुई प्रिया क्रीड़ाशून्य निकले हुए दाँतोंसे जैसे हँस रही है, अपने परिपूर्ण स्नेहपाशको तोड़कर जैसे वह कुछ भी नहीं कहती हुई दूसरे जन्मवासमें पहुँच गयी है। मैंने इसे अपनी क्यों कहा? यहाँ जितने भी स्वजन और परिजन हैं, वे सब अपने संचित कर्मके वशीभूत होकर जायेंगे। जब अन्तमें मैं अकेला जाऊँगा, तो अच्छा है कि मैं अरहन्तके श्रेष्ठज्ञानमें अपनेको नियुक्त करूँ। और जो विनाशभाव है उसे छोड़ देना चाहिए, यह कहकर वह राजा—

घत्ता—कर (सूँड़ और कर) देती हुई हथिनीके समान पृथ्वी लोगोंको सन्तुष्ट करनेवाले अपने चन्दन नामक पुत्रको देकर (वह)—॥२॥

४. A विरइयणायरणरमणणिरोहु । ५. A °अंकुरोहु । ६. P °कुंतल° । ७. P कयवत्तावलि । ८. A वेढणब्भास°; P °वेडढणु°; । ९. A पयडीकिएहि । १०. A °णियकम्म° । ११. A विणासु भाउ; P विणासिभाउ । १२. चंदणणामें ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

मुणिवरु जायउ संसारकूलि आणंदमहामुणिपायमूलि ।
सीउ[1]द्धरोमु गयसीहरोलि णिवसइ गिरिवरकुहरंतरालि ।
गुलु[2] सप्पि दुद्धु तेरंगु[3] तेल्लु वियडीउ ण भुंजइ जइ वेंसिल्लु[4] ।
पालेइ[5] पारत्तिउ मेरुधीरु णवकोडिविसुद्धउ बंभचेरु ।
उवयरणगहणि[6] णिक्खेवणेसु परिहरइ दोसु रिसि भोयणेसु ।
जोयइ तसथावर मग्गचरणि उच्चारखेलपस्सावकरणि[7] ।
तं जंपइ जेण ण पावबंधु संजमभारालंकरियखंधु ।
तवु करिवि तिव्वु[8] णिम्मुक्ककामु[9] बंधेप्पिणु तं तित्थयरणामु[10] ।
आराहण भयवइ संभरेवि सो अवसणु कयणिरसणु मरेवि ।
माणिक्ककडयचेंचइयबाहु संजायउ आरणि अमरणाहु ।
बावीससमुद्द[11]पमाणियाउ तिरयणिसरीरु[12] वण्णेण सेउ ।

घत्ता—तहु पक्ख दुवीस अवहिय[13] सासहु परिगणिय ॥
तइवरिससहास आहारंतरु मुणिभणिय ॥३॥

३

संसारके तटस्वरूप आनन्द महामुनिके चरणमूलमें जाकर मुनि हो गया। ठण्डसे जिसके रोम खड़े हो गये हैं ऐसा वह गज और सिंहोंके शब्दोंवाले गिरिवरके कुहरोंके भीतर निवास करता है, गुड़-घी-दूध-दही-तेल तथा विकृतियाँ, मधु-मांस मद्य और नवनीत आदि वस्तुओंको आत्मवशी वह यति नहीं खाता। मोक्षार्थी और सुमेरुपर्वतके समान धीर वह नौ प्रकारसे विशुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन करता है। उपकरणोंके ग्रहण करने और निक्षेपण तथा भोजनमें वह मुनि दोषोंका परिहार करता है। मार्गकी चर्यामें बोलने, थूकने और प्रस्रवण करनेमें त्रस-स्थावरको देखकर चलता है, इस प्रकार बोलता है जिससे पापबन्ध नहीं होता। संयमके भारके लिए जो समर्थ आधारस्तम्भ है। कामसे मुक्त वह तीव्र तप तपकर, तीर्थंकर नामप्रकृतिका बन्ध कर भगवती अराधना कर दिगम्बर वह निराहार मरकर, जिसके बाहु माणिक्यके केयूरोंसे शोभित हैं ? आरण स्वर्ग ऐसा इन्द्र हुआ। उसकी आयु बाईस सागर प्रमाण थी, तीन हाथ उसका शरीर था, और उसका वर्ण श्वेत था।

घत्ता—बाईस पक्षमें वह श्वास लेता था और बाईस हजार वर्षमें आहार ग्रहण करता था जैसा मुनियोंके द्वारा कहा गया है ॥३॥

---

३. १. A सीहु व्व रोमगय° । २. P गुडु । ३. A नेरंगु and gloss दधि; T णेरंगु दधि । ४. रसल्लु । ५. A पारइ पारत्तउ । ६. A °गहण° । ७. P °पस्सवणकरणि । ८. A तित्थु णिम्मुक्कं । ९. AP °काउं । १०. AP °णाउं । ११. P °पमाणुआउ । १२. A °सरीर । १३. AP अविहिय ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

णिरुवमसुहसंपावणखणेण रमणीरमणु[1] वि सारइ मणेण ।
सो कहिं वि ण मेल्लइ सुक्कलेस जिणु पणवइ गेण्हइ चरणसेस ।
परियाणइ पेच्छइ तमपहंतु अट्ठगुणसारु महिमा महंतु ।
उदुंमाससेसि[2] जीवियपमाणि आघोसइ सयमहु उदुंविमाणि[3] ।
भो गुज्झय बुज्झहि भमियसरहि किं बहुएं जंबूदीवें[4] भरहि ।
मलययदुमसुरहिउ[5] मलयदेसु जहिं णरहिं परिट्ठिउ अमरवेसु ।
रइकइयवकीलाकोच्छराउ जहिं कामिणीउ णं अच्छराउ ।
जहिं कामधेणुणिह गोहणाइं जहिं कप्परुक्खें[6] रिद्धइं वणाइं ।
जहिं णिच्चमेव मंगलणिणद्दु तहिं पुरवरु णामें रायभद्दु ।
रणरंगतुंगमायंगसीहु दढरहु णरिंदु जयजयसिरीहु ।
मुहयंदो[7] हामियरुंदचंद महएवि तासु णामें सुणंद ।
विसहरवंदारयवंदवंदु एयहं णंदणु होसइ जिणिंदु ।
जज्जाहि तावँ[8] तुहुं करहि तेंव संभवइ णयरु[9] घरु दिव्वु जेंव ।

घत्ता—ता वइसवणेण तं पट्टणु कंचणु[10] घडिउं ॥
मणिकिरणकरालु सग्गखंडु णावइ पडिउं ॥४॥

४

अनुपम सुखकी संप्राप्तिके क्षणवाले मनसे वह स्त्रीरमण करता है, वह अपनी शुक्ल-लेश्याका कभीका परित्याग कर चुका है, जिनको प्रणाम करता है और उनके चरणरूपी अक्षतोंको ग्रहण करता है। तमप्रभा नरक तक वह देखता है और जानता है, आठ गुणोंसे युक्त और महिमामें महान्। उसके जीवन प्राणके छह माह शेष रहनेपर इन्द्र अपने ऋतु विमानमें कहता है—"हे कुबेर, जिसमें श्वापद परिभ्रमण करते हैं ऐसे जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें मलयवृक्षोंसे सुरभित मलय-देश है। जहाँ मनुष्योंने अमररूप बना रखा है। रतिकी कैतवक्रीड़ामें दक्ष स्त्रियाँ ऐसी मालूम होती हैं, मानो अप्सराएँ हों। जहाँ गोधन कामधेनुके समान हैं। जहाँ वन कल्पवृक्षोंसे सम्पन्न हैं। जहाँ मंगल शब्द प्रतिदिन होते हैं, वहाँ राजभद्र नामका नगर है। उसमें युद्धके रंगमें ऊँचे गज और सिंहोंके समान तथा विजयलक्ष्मीके इच्छुक दृढ़रथ नामका राजा था। उसकी अपने मुखचन्द्रसे विशालचन्द्रको तिरस्कृत करनेवाली सुनन्दा नामकी महादेवी थी। नागराजों और देवोंके समूहके द्वारा वन्दनीय जिनेन्द्र, इनके पुत्र होंगे। तुम जाओ और वहाँ इस प्रकार करो कि जिससे दिव्य घर और नगर उत्पन्न हो जायें।

घत्ता—तब कुबेरने स्वर्णमय नगरकी रचना की, जैसे मणिकिरणोंसे उन्नत स्वर्गखण्ड गिर पड़ा हो ॥४॥

४. १. A °रमण। २. AP उडुमास°। ३. AP उडुविमाणि। ४. P जंबूदीवि भरहि। ५. AP मलयद्दुम°। ६. A कप्परुक्खणिद्धइं। ७. मुहइंदो। ८. P ताहं। ९. A णवरु। १०. AP कंचणघडिउं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५

जहिं दीसइ तहिं सोवण्णभवणु जहिं दीसइ तहिं वणसुरहिपवणु।
जहिं दीसइ तहिं हरिणीलणीलु जहिं दीसइ तहिं वररमणिलीलु।
जहिं दीसइ तहिं मंडवु विचित्तु जहिं दीसइ तहिं घुसिणावलित्तु।
जहिं दीसइ तहिं मुत्तावलिल्लु जहिं दीसइ तहिं णवतोरणिल्लु।
जहिं दीसइ तहिं कप्पूररेणु जहिं दीसइ तहिं गज्जियकरेणु।
जहिं दीसइ तहिं थियकामधेणु जहिं दीसइ तहिं वज्जंतवेणु।
जहिं दीसइ तहिं वीणारवालु जहिं दीसइ तहिं अलिउलवमालु।
जहिं दीसइ तहिं चलचिंधचवलु जहिं दीसइ तहिं ससियंतधवलु।
जहिं दीसइ तहिं विविहुच्छवोहु जहिं दीसइ तहिं कयरच्छसोहु।
जहिं दीसइ तहिं णच्चियमऊरु जहिं दीसइ तहिं सिरिविहवफारु।

घत्ता—जहिं दीसइ तेत्थु पुरवरु जणमणु रावइ॥
पियमहि सरीरु जिह तिह चंगउं भावइ॥५॥

६

तहिं विजयणंदिरे णिवणिहेलणे सुंदरे।
णयंगि सियणेत्तिया रयणमंचए सुत्तिया।
णिएइ छेउओयरी सिविणए इमे सुंदरी।

५

जहाँ दिखाई देता है वहाँ स्वर्णभवन है, जहाँ दिखाई देता है वहाँ वनका सुरभित पवन है। जहाँ दिखाई देता है हरे और नील मणियोंसे नील है, जहाँ दिखाई देता है वहाँ उत्तमस्त्रियोंकी लीला है, जहाँ दिखाई देता है वहाँ विचित्र मण्डप है, जहाँ दिखाई देता है वहीं केशरसे विलिप्त है, जहाँ दिखाई देता है, वहाँ मुक्तावलियाँ हैं, जहाँ दिखाई देता है वहाँ नव तोरण हैं, जहाँ दिखाई देता है कपूर की धूल है, जहाँ दिखाई देता है गरजते हुए हाथी हैं, जहाँ दिखाई देता है, वहाँ स्थित कामधेनुएँ हैं। जहाँ दिखाई देता है वहाँ बजते हुए वेणु हैं, जहाँ दिखाई देता है वीणाके शब्दका निनाद है, जहाँ दिखाई देता है वहाँ भ्रमरकुल कलकल है, जहाँ दिखाई देता है वहाँ चंचल चिंधोंसे चपल है। जहाँ दिखाई देता है, वहाँ चन्द्रकान्तकी धवलता है। जहाँ दिखाई देता है वहाँ विविध उत्सवोंका समूह है। जहाँ दिखाई देता है, वहाँ की गयी रथ्या शोभा (मार्ग शोभा) है। जहाँ दिखाई देता है, वहाँ नाचते हुए मयूर हैं। जहाँ दिखाई देता है, वहाँ श्री और वैभवका विस्तार है।

घत्ता—जहाँ दिखाई देता है, वहाँ वह नगर जनमन-रंजन करता है। जिस प्रकार प्रियतमाका शरीर अच्छा लगता है, उसी प्रकार वह नगर अच्छा लगता है॥५॥

६

वहाँ विजयसे आनन्दित होनेवाले राजाके सुन्दर भवनमें रत्नमंचपर सोती हुई, नतांगी और श्वेतनेत्रवाली कृशोदरी वह सुन्दरी स्वप्नमें यह देखती है, जो मदजल झर रहा है और जिसपर

५. १. AP णव°। २. P adds after this: जहिं दीसइ तहिं खेयरह कीलु, जहिं दीसइ तहिं सुरवरहिं मेलु। ३. A मंडव। ४. P चलचिंधु चवलु। ५. AP सिरिविविहफारु।
६. १. AP विजयमंदिरे। २. A छउओवरी; P तुच्छओयरी। ३. AP इमं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गयं गलियमयजलं भमियभिंगकोलाहलं ।
विसं रसियपेसलं खरखुरग्गखयभूयलं ।
करालणहभइरवं कयरवं च कंठीरवं ।
कुसेसयणि[4]वासिणिं [5]सिरिमुविंदसीमंतिणिं[6] ।
पसूयसयमालियं भमँर[7]पंतियाकालियं ।
विहुं विहियजामिणिं खरयरं खचूडामणिं ।
झसाण जुयलं चलं कुडजुयं ससंकामलं ।
सरोरुहसरोवरं मयरमंदिरं गज्जिरं ।
मइंदर्[8]पवरूढयं रयेण[9]चित्तियं पीढयं ।
पुरंदरणिहेलणं भवणमुज्जलं भावणं ।
महारयणरासियं सिहिणमुरुसिहुब्भासियं ।
घत्ता—इय पेच्छिवि ताए रायहु गंपि [10]समासियउं ॥
सिविणियफलु[11] तेण कंतहि कंतें भासिउं ॥६॥

७

जस्स छत्तत्तयं जस्स लोयत्तयं ।
वहइ दासित्तणं कुणइ गुणकित्तणं ।
मणिमयरकुंडलो जस्स आहंडलो ।
घिविवि णवकुवलयं णवइ कमकमलयं ।
सो तुहं तणुरुहो चंडि होही सुहो ।
देवदेवो जिणो खंतिपोमिणिइणो ।

मँडराते हुए भ्रमरोंका कोलाहल हो रहा है, ऐसा मदगज, गर्जनामें बड़ा चतुर और तीव्र खुरोंके अग्रभागसे भूतल खोदता वृषभ, विशाल नखोंसे भयंकर, शब्द करता हुआ सिंह, विष्णुकी पत्नी और कमलमें निवास करनेवाली लक्ष्मी, भ्रमरपंक्तिसे शोभित पुष्पमालाएँ, रात्रिको करनेवाला चन्द्रमा, आकाशका चूड़ामणि सूर्य, मत्स्योंका चंचल युग्म; चन्द्रमाकी तरह स्वच्छ कुम्भयुग्म, कमलोंका सरोवर, गरजता हुआ समुद्र; सिंहोंपर आरूढ़, रत्ननिर्मित आसन (सिंहासन), इन्द्रका निकेतन, उज्ज्वल भावन-भवन ? (यहाँ नाग लोकका उल्लेख नहीं है); महारत्नराशि और प्रचुर ज्वालाओंसे भास्वर अग्नि ।

घत्ता—यह देखकर उसने जाकर राजासे निवेदन किया । उसने भी अपनी कान्ताको स्वप्नोंका फल बताया ॥६॥

७

हे सुन्दरी, जिनके तीन छत्र हैं, तथा त्रिलोक जिनका दासत्व वहन करता है और गुण कीर्तन करता है, मणिमय मकराकृति कुण्डलोंवाला इन्द्र, नवकमल अर्पित कर जिनके चरणकमलों की वन्दना करता है, ऐसे वह शुभ देव देव, शान्तिरूपी कमलिनीके लिए सूर्य, जिन तुम्हारे पुत्र होंगे । बुद्धि कान्ति श्री लक्ष्मी कीर्ति ह्री, गर्भशोधन करनेवाली देवांगनाएँ आयीं, मत्तगजगामिनी

---

४. P °णिवासिणी । ५. A सिरि उविंद° । ६. P °सीमंतिणी । ७. AP भवर° । ८. A मयंदसुर°; P मइंदसिर° । ९. AP रयणणिम्मियं । १०. P समासिउं । ११. AP सिविणय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुद्धि [1]कंती सिरी लच्छि [2]कित्ती [3]हरी ।
गब्भसुद्धीयरी अमरवरसुंदरी ।
मत्तगयगामिणी राइणो [4]सामिणी ।
ताहिं संसेविया तित्थणाहंबिया ।
दुक्खपक्खक्खया हेमवुट्ठी कया ।
वित्तएणं सयं जाव छम्मासयं ।
आइमासंतरे किण्ह[5]पक्खंतरे ।
अट्ठमीवासरे रविकिरणभासुरे ।
रिक्खए रूढए उत्तरासाढए ।
माउयासंगओ गब्भवासं गओ ।
तत्थ जंभारिणा वेरिसंघारिणा ।
मण्णिऊणं [6]पइं पुंजियं [7]दंपइं ।
सोत्तकोडीसमे वारिहीणं गमे ।
णाणवि[8]द्धंसयं पल्लचोत्थंसयं ।
सं[9]जमे संमए णट्ठए धम्मए ।
पुप्फदंतंतरे माहमासे वरे ।
छीण[10]मालंछणे बारसिल्ले दिणे ।
णंददेवीसुओ विस्सजोए हुओ ।
तांव संतोसिओ आगओ कोसिओ ।
अग्गि वाऊ [11]सही दंडधारोवही[12] ।
रिंछवाहो परो वा[13]रुणोसामरो ।
पोमसंखाहिवो सूलपाणी भवो ।
चमर वइरोयणो भाणु मयलंछणो ।
सयल देवा खणे तूसमाणा मणे ।
आग[14]या तं पुरं राइणो मंदिरं ।

राजाकी स्वामिनी तीर्थंकरकी माताकी उन्होंने सेवा की। कुबेरने स्वयं दुखपक्षका नाश करनेवाली स्वर्णवृष्टि छह माह तक की। चैत्र माहके कृष्णपक्षके सूर्यकी किरणोंसे आलोकित अष्टमीके दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्रके रूढ़ होनेपर, वह माताके उदरमें गर्भवासको प्राप्त हुए। उस अवसरपर शत्रुओं का संहार करनेवाले इन्द्रने स्वामीको मानकर दृढ़रथ दपतिकी पूजा की। नौ करोड़ प्रमाण सागर, समय बीतनेपर, तथा पल्यके चौथाई भाग तक (जन्मके पूर्व) ज्ञानका विध्वंस, संयम और सम्यक्त्व और धर्मका नाश होनेपर पुष्पदन्तके बाद माघ कृष्ण द्वादशीके दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्रके विश्वयोगमें नन्दादेवीको पुत्रकी उत्पत्ति हुई। इन्द्र अत्यन्त सन्तुष्ट होकर आया, अग्नि वायु और इन्द्रसे भयभीत यम रीछपर सवार एक और देव, वारुण सामर कुबेर शूलपाणि शिव चामर वैरोचन सूर्य और चन्द्र आदि सभी देवता मनमें सन्तुष्ट होकर, राजाके उस घर आये।

७. १. A कित्ति। २. A कंति। ३. AP हिरी। ४. P भामिणी। ५. A कण्हपक्खंतरे। ६. AP पई। ७. AP पुज्जिओ दंपई। ८. A °विद्धंसियं। ९. A संयमे। १०. A छीलमालंछणे but records a *p* in second hand : झीणमयलं छणं इति वा पाठः। ११. सिही। १२. A तिही। १३. A वारुणो सामरो। १४. A आगयं तं पुरं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—उत्तुंगु सुवंसु कणयच्छवि गहमालियउ ॥
जिणमेरु सुरेहिं मेरुगिरिहि संचालियउ ॥७॥

८

तम्मि सेलसिंगए   पंडुपत्थरंगए ।
वंदिओ[2] जसंसिओ   वज्जिणा णिवेसिओ ।
धम्मतित्थरायओ   दुक्खतोयपोयओ ।
सीयलेण सीयलो   वारिणा गुणामलो ।
सिंचिओ महुच्छवे   देवदुंदुहीरवे ।
देहदित्तिपिंगलं   सव्वलोयमंगलं ।
णीयबालकंदलं   चारु सच्छविच्छुलं[3] ।
रायहंससमाणियं   जाइ ण्हाणवाणियं ।
दिव्ववाससुंदरे   मंदरस्स कंदरे ।
कक्करे विलंबियं   चंचरीयचुंबियं ।
किंणरेहिं वंदियं   दाणवाहिणंदियं ।
संचुयं लयाहरे   णायसुंदरीसिरे ।
भग्गतोंडमंडणं   पावपंकखंडणं ।
झ त्ति धावमाणयं   धोयदंतिदाणयं ।
सित्तखेयरीवरं   अक्खकीलियाहरं ।

घत्ता—जं एंव वहंतु भरइ सिहरिविवरंतरइं ॥
तं जिणण्हाणंबु हणउ भवियजम्मंतरइं ॥८॥

घत्ता—जो ऊँचा है, सुवंशवाला और स्वर्ण आभावाला है, ग्रहोंसे घिरा हुआ है, ऐसे जिनश्रेष्ठको देवेन्द्रोंने सुमेरुपर्वतके लिए संचालित किया ॥७॥

८

वहाँ शैल शिखरके पाण्डुकशिलाके अग्रभागपर, यशसे अंकित वन्दनीय जिनवरको इन्द्रने स्थापित कर दिया। देवताओंके नगाड़ोंकी ध्वनियोंसे युक्त महोत्सवमें धर्म तीर्थराज दुखरूपी जलके लिए जहाज स्वरूप शीतलनाथका शीतलजलसे अभिषेक किया गया। शरीरकी कान्तिसे पीला, सब लोगोंके लिए मंगलप्रद, जिसके द्वारा, नव अंकुर ले जा रहे हैं, ऐसा सुन्दर स्वच्छ और विच्छुरित तथा राजहंसोंसे सम्मानित, दिव्यवासोंसे सुन्दर, ऐसा महाभिषेकजल गिरि कन्दराओंमें विलीन हो गया। भ्रमरोंके द्वारा चुम्बित, किन्नरोंके द्वारा वन्दनीय दानवोंके द्वारा अभिनन्दनीय लतागृहोंमें नागसुन्दरियोंके सिरोंपर च्युत, भग्नमुखोंके लिए अलंकार स्वरूप, पापरूपी कीचड़को काटनेवाला, शीघ्र दौड़ता हुआ, हाथियोंके मदजलोंको धोनेवाला, विद्याधरियोंके वरोंको अभिषिक्त करनेवाला इन्द्रियोंका क्रीड़ा घर।

घत्ता—जब इस प्रकार वह अभिषेक जल भरत क्षेत्र और पहाड़ोंके विवरोंमें बहता है तो वह सैकड़ों होनेवाले जन्मान्तरोंको नष्ट कर देता है ॥८॥

८. १. A पत्थरंगए। २. P वंदिउं। ३. A °भविच्छलं। ४. A ण्हवणपाणियं; P ण्हवणवाणियं। ५. A संधुयं। ६. A जक्खि°; P जक्ख°; T अक्ख°। ७. A जिणवरण्हाणंबु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

९

तं सइं हेट्ठामुहुं जइ वि जाइ उद्धुद्धु तो वि भव्वाइं णेइ।
सक्केण करिवि अहिसेयभद्दु आणिउ जिणपुंगमु रायभद्दु।
णिहियउ महएविहि पाणिपोमि णं इंदिंदिरु पप्फुल्लपोमि।
वंदिवि कुमारु भावें तिणाणि गउ सग्गावासहु कुलिसपाणि।
जायउ जुवाणु देवाहिदेउ किं वण्णमि रूवें मयरकेउ।
जसु एक्कु वि देहावयउ णत्थि मेसहु उवमिज्जइ कॅव हत्थि।
किं जिणहु अण्णु उवमाणु को वि कइयणु जंपइ धिट्ठिमइ तो वि।
हेमच्छवि संगरभीसणाइं तणुमाणें णवइ सरासणाइं।
पुव्वहं तरुणत्तें परिवडंति जा पंचवीससहसाइं जंति।
करिवसहविमाणावाहणेण तांवावेप्पिणु हरिवाहणेण।
अहिसिंचिवि देवहु पट्टु बद्ध णारीयणणेहें सो वि बद्धु।
महि माणंतहु पुव्वहं गयाइं पण्णाससहासइं णिग्गयाइं।
तेणेक्कहिं दिणि कीलावणंति कीलंतें णवकमलोयरंति।

घत्ता—खरदंडकरंडि पिंडियतणु करलालियउ।
णं सिरितावच्छु मुउ छप्परणु णिहालियउ ॥९॥

९

यद्यपि वह स्वयं नीचा मुख करके जाता है, फिर भी भवोंको ऊपरसे ऊपर ले जाता है। अभिषेक कल्याण करनेके बाद इन्द्र उन्हें राजभद्र नगर ले आया। उन्हें महादेवीके करकमलमें इस प्रकार दे दिया, मानो खिले हुए कमलपर भ्रमर हो। तीन ज्ञानके धारी कुमारकी वन्दना कर इन्द्र अपने निवास स्वर्ग चला गया। देवाधिदेव युवक हो गये, रूपमें कामदेवके समान उनका क्या वर्णन करूँ परन्तु कामको एक भी शरीरावयव नहीं है। मेषसे हाथीकी तुलना किस प्रकार की जाये? क्या जिनका कोई दूसरा उपमान है? फिर भी धृष्टमति कविजन तब भी उपमान कहता है, स्वर्णके समान कान्तिवाले वह शरीरके मानसे युद्धमें भयंकर नब्बे धनुषके बराबर थे। तरुणाईमें जब पच्चीस हजार पूर्व वर्ष बीत गये, तो हाथी, बैल और विमानोंको वाहन बनानेवाले इन्द्रने आकर—अभिषेक कर उन्हें राजपट्ट बाँध दिया। वह स्वयं भी भारी स्नेहमें बँध गये। इस प्रकार धरतीका उपभोग करते हुए उनके पचास हजार वर्ष बीत गये। एक दिन क्रीड़ावनमें क्रीड़ा करते हुए कमलके भीतर उन्होंने—

घत्ता—कमल कोशमें करसे लालित और गोल शरीर मरा हुआ भ्रमर देखा मानो तमाल वृक्षका पुष्प हो ॥९॥

---

९. १. AP भवियाइं। २. P °पुंगवु। ३. A मसयहु। ४. A °सहसाइं होंति। ५. A °विवाणावाहणेण। ६. A माणंतहु। ७. A हयाइं। ८. P ताणेक्कहि। ९. A तं सिरि°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०

जं दिट्ठु[1] मओ महुयरु सणालि　　मयरंदालुद्धउ आरणालि ।
ता चिंतइ जिणु सिरिरसवसाहं　　अलिविहि होसइ अम्हारिसाहं ।
हो धिगिधिगत्थु धणु घरु कलत्तु　　जणु सयल मोहमइराइ मत्तु ।
खणि णच्चइ खणि गायइ सरेहिं　　खणि रोवइ उरु ताडइ करेहिं ।
खणि णिद्धणु खणि विहवत्ति थाइ　　उत्ताणाणणु[2] गव्वेण जाइ ।
हउं सुकइ सुहडु हउं चाइ भोइ　　हउं सूहउ हउं णिप्फण्ण[3]जोइ ।
हउं चंगउ एंव भणंतु[4] मरइ　　जोणीमुहेसु संसरइ सरइ ।
जहिं जहिं उप्पज्जइ तहिं जि बंधु　　अण्णाणछण्णु णउ णियइ अंधु ।
सहुं जाइ ण परियणसयणसत्थु　　संसारि ण[5] कासु वि को वि एत्थु ।
भासंतइं संजयसंम्मयाइं[6]　　ता पत्तइं सुरवरगुरुसयाइं ।
अणुकूलिउ तेहिं तिलोयणाहु　　तांवाइउ सामरु अमरणाहु ।
तें ण्हवणु करिवि पहु महिउ जेंव　　हउं जडु कइ किंकिरि[7] कहमि तेंव ।

घत्ता—णियगोत्तहियत्तु पुणु पुणु हियवइ भावियउ ॥
संताणि सडिंभु णरणाहेण णिरूवियउ ॥१०॥

१०

जब उन्होंने नाल सहित कमलमें मकरन्द (पराग) के लोभी भ्रमरको मरा हुआ देखा तो जिन सोचने लगे, लक्ष्मीरूपी रसके लोभी हम लोगोंकी भी भ्रमर जैसी हालत होगी। हो-हो, धन, स्त्री और घरको धिक्कार, समस्तजन मोहरूपी मदिरासे मतवाला हो रहा है। वह (जन-समूह) क्षणमें नाचने लगता है, क्षणमें स्वरोंसे गाने लगता है, क्षणमें रोता है और हाथोंसे अपने उरको पीटने लगता है। क्षणमें दरिद्र हो जाता है, और क्षणमें वैभवमें स्थित होकर अपने सिर ऊंचा कर गर्वसे चलता है। मैं सुकवि हूँ, मैं सुभट हूँ, मैं त्यागी हूँ, मैं भोगी हूँ। मैं सुभग हूँ, मैं योगी हूँ। मैं अच्छा हूँ, यह कहता हुआ मृत्युको प्राप्त होता है, और योनिके मुखोंमें रतिपूर्वक भ्रमण करता है। जहां-जहां उत्पन्न होता है, वहां-वहां बन्धको प्राप्त होता है, अज्ञानसे आच्छादित वह अन्धा कुछ नहीं देखता। परिजन और स्वजनका समूह साथ नहीं जाता। संसारमें यहां कोई किसीका नहीं है। तब संयम और सम्यक्त्वकी घोषणा करते हुए लौकान्तिक देव वहां आये। उन्होंने त्रिलोकनाथको तपके लिए अनुकूलित किया। इतनेमें देवोंके साथ देवेन्द्र आ गया। उसने अभिषेक कर प्रभुकी जिस प्रकार पूजा की मैं जड़कवि उसका किस प्रकार वर्णन करूँ।

घत्ता—अपने गोत्रके हितका उन्होंने मनमें बार-बार विचार किया, और नरनाथने कुल-परम्परामें अपने पुत्रको स्थापित कर दिया ॥१०॥

---

१०. १. A दिट्ठउ महुयरु मउ सणालि; P मुउ मुणालि । २. A उत्ताणणु जणु गव्वेण जाइ; P खणि उत्ताणणाणु गव्वेण । ३. AP णिप्पण्णु । ४. A भणंति । ५. AP ण कोइ वि कासु एत्थु । ६. A संजयसंयमाइं; P संजयसंगमाइं । ७. A किर कह कहमि ।

११

सुक्कंकहि सिवियहि चडिवि चलिउ सुरयणु जयजय पभणंतु मिलिउ।
ओइण्णु सहेउयवणि महंतु चरियावरणइं कम्मइं खवंतु।
माहम्मि मासि तिमिरेण कालि बारहमइ दिणि जायइ वियालि।
छट्ठोववासु सड्ढइ करेवि सहुं रायसहासें दिक्ख लेवि।
अवरहि दिणि णहयलल्लग्गसिहरु भिक्खाइ पइट्ठु अरिट्ठणयरु।
णउ एयहु हियवउ सुण्णघडिउ णउ भक्खइ पलु णियपत्तपडिउ।
णउ परिहइ चीवरु रंगरिद्धु वहु का वि भणइ णउ देहि णारि।
घत्ता—णउ धरइ पिणाउ णउ फणिकंकणु फुरियकरु॥
हुंकारु ण देइ णउ उच्चारइ गेयसरु॥११॥

१२

णउ णडइ ण दावइ ढक्कसद्दु वहु का वि भणइ णेउ एहु रुद्दु।
सुरवहुरएण रइयाइं जाइं वयणाइं णत्थि चत्तारि ताइं।
णउ कहइ वेउ पसुहणणडंभु वहु का वि भणइ णेउ एहु बंभु।
वहु का वि भणइ णेउ चक्कपाणि ण पउंजइ दाणवप्राणहाणि।
णारायणु एहु ण होइ माइ जाणमि विक्खायउ भुवणभाइ।

११

शुक नामकी शिविकामें चढ़कर वह चले। सुरजन जय-जय कहते हुए इकट्ठे हो गये। चारित्रावरणी कर्मोंका नाश करते हुए वह महान् सहेतुक उद्यानमें उतरे। माघ कृष्ण द्वादशीके दिन, सन्ध्याकालमें श्रद्धासे छठा उपवास कर एक हजार राजाओंके साथ दीक्षा लेकर दूसरे दिन जिसके अग्र शिखर आकाशसे लगे हुए हैं, ऐसे अरिष्टनगरमें भिक्षाके लिए गये। (उन्हें देखकर कोई वधू कहती है)—कि इनका हृदय शून्यसे निर्मित नहीं है, (यह शून्यवादी नहीं हैं), यह अपने पात्रमें पड़े हुए पल (मांस) को नहीं खाते। रंगसे समृद्ध यह चीवर नहीं पहनते हैं? कोई वधू कहती है कि यह बुद्ध नहीं हैं। इनके पास तलवार नहीं है, यह कंकाल धारण करनेवाले नहीं हैं, न इनके हाथमें कपाल है और न शरीरमें स्त्री है।

घत्ता—यह पिनाक धारण नहीं करते, न नागोंका कंकण और स्फुरित हाथ है? यह न हुंकार देते हैं और न गीतस्वरका उच्चारण करते हैं? ॥११॥

१२

न नृत्य करते हैं और ढक्का शब्दका प्रदर्शन करते हैं। कोई वधू कहती है कि यह रुद्र नहीं है। सुरवधू (तिलोत्तमा अप्सरा)के द्वारा जिनकी रचना की गयी है, ऐसे वे चार मुख इनके नहीं हैं, पशुवधके अहंकारवाले वेदोंका कथन भी यह नहीं करते। कोई वधू कहती है कि यह ब्रह्मा नहीं हैं। कोई वधू कहती है कि यह चक्रपाणि (विष्णु) नहीं हैं—क्योंकि यह दानवोंके प्राणोंकी हानिका प्रयोग नहीं करते हैं, हे मां, यह नारायण नहीं हैं, मैं इन्हें विख्यात विश्वबन्धु जानती

११. १. AP सुक्कक्कइ। २. A ओयण्णु; P अवइण्णु। ३. P बारहवइ। ४. A जायउ। ५. P सद्धइ। ६. P फलु। ७. A णियपत्ति पडिउ। ८. A °रिद्दु।

१२. १. P णहु। २. AP पाणहाणि। ३. AP जाणिवि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरहंतु भडारउ दोसमुक्कु घरॅप्रंगणि प्रंगणि जाव ढुक्कु ।
अब्भागयवित्तिवियाणएण ता णविवि पुणव्वसुराणएण ।
तहु किउ भोयणु पासुयविहीइ नृवॅ संपीणिउ अक्खयणिहीइ ।
नृवॅसिरि कुसुमाइं णिवाइयाइं सुरणियॅरहिं तूरइं वाइयाइं ।
घत्ता—संवच्छर तिण्णि छम्मत्थु जें महि हिंडियउ ।।
विल्लहुं तलि देउ घाइचउक्कें छड्डियउ ।।१२।।

१३

तावायउ सुरयणु करइ थोत्तु संभरइ विरुद्धउ जिणचरित्तु ।
जइ तुहुं गोवालु णियारिचंडु तो काइं णत्थि करि तुज्झ दंडु ।
जइ पइं कुडिलत्तणु मुक्कु ईस तो काइं तुहारा कुडिल केस ।
जइ तुहुं संसारहु णिरु विरत्तु तो किं तेरॅउ इहु अहरु रत्तु ।
जइ तुहुं मुक्कउ संगग्गहेण तो किं तुह तिजगपरिग्गहेण ।
जइ तइं विद्धंसिउ सयलु कामु तो किं तुहुं पुणु संपण्णकामु ।
जइ तुहुं सामिय संजमपयासि तो किं कॅमु कमलहु उवरि देसि ।
तुह णाहासियइं ण जइ पडंति तो किं एयइं चमरइं पडंति ।

हूँ। इतनेमें दोषोंसे मुक्त भट्टारक अरहन्त घरोंके आँगन-आँगनमें पहुँचे। तब अभ्यागतकी वृत्तिके जानकार राजा पुनर्वसुने प्रणाम कर प्रासुक विधिसे उन्हें भोजन कराया। राजा अक्षय निधिसे प्रसन्न हो गया। राजाके सिरपर कुसुम गिर गये। देवोंके द्वारा तूर्य (नगाड़े) बजाये गये।

घत्ता—तीन वर्ष तक वह छद्मस्थ भावसे धरती पर घूमे फिर बेल वृक्षके नीचे स्वामी वह चार घातिया कर्मोंके द्वारा छोड़ दिये गये ।।१२।।

१३

तब देवसमूह आकर स्तुति करता है और विरुद्धरूपमें (विरोधाभास शैली) जिनचरित्रका स्मरण करता है, "यदि तुम अपने शत्रुके लिए प्रचण्ड (कर्मरूपी शत्रुके लिए प्रचण्ड) गोपाल (ग्वाला, इन्द्रियोंके संयमके पालक) हो, तो तुम्हारे हाथमें दण्ड क्यों नहीं है? हे ईश, यदि तुमने कुटिलताको छोड़ दिया है, तो तुम्हारे केश कुटिल क्यों हैं। यदि तुम संसारसे एकदम विरक्त हो, तो तुम्हारे अधर अधिक रक्त क्यों हैं? यदि तुम परिग्रहके आग्रहसे मुक्त हो तो तुम्हें तीनों लोकोंके परिग्रहसे क्या? यदि तुमने समस्त कामको ध्वस्त कर दिया है, तो तुम सम्पन्न काम क्यों हो? हे स्वामी, यदि तुम संयमका प्रकाशन करनेवाले हो तो कमलोंके ऊपर अपने पैर क्यों रखते हो? हे नाथ, यदि तुम्हारे आश्रित लोगोंका पतन नहीं होता है, तो ये चमर तुम्हारे ऊपर क्यों

४. AP रायहु घरपंगणि जाव ढुक्कु। ५. AP फासुय°। ६. AP णिव। ७. AP णिव°। ८. A °णियरें। ९. A बेल्लिहि तलि।

१३. १. P has before it : उप्पायउ केवलु जयपयविख, पूसहु चउदसि पढमिल्लपक्खि। २. A गोवाल। ३. A P तेरउ अहरग्गु रत्तु। ४. A P पइं। ५. A तो पुणु किं तुह। ६. A P संपुण्णकामु। ७. A कम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जें[8] पइं जि रउद्दइं दूसियाइं तो आसणि किं सीहइं थियाइं।
जइ रयणइं तुह तिण्णि वि पियाइं तो तुहुं[9] किर णिरलंकारु काइं।

घत्ता—थेणत्तु णिसिद्धु जइ तुहुं तो कंकेल्लितरु ॥
अच्छरकरसोह हरइ काइं कयदलपसरु ॥१३॥

१४

तुहुं माणुसु[1] भुवणि पसिद्धु जइ वि माणवियपयइ तुह णत्थि तइ वि।
जइ कासु वि पइं णउ दंडु कहिउ तो किं छत्तत्तइ फुरइ अहिउ।
जइ रूसहि तुहुं सरमग्गणाहं तो किं ण देव कुसुमच्चणाहं।
जइ वारिउ पइं परि घाउ एंतु[2] तो किं हम्मइ[3] दुंदुहि रसंतु।
जइ पइं छड्डिय मंडलहु तत्ति तो किं पुणु भामंडलपवित्ति।
कहिं एक्कदेसरुहु[4] तुह महेस केहिं[5] बहुजणभासइ मिलिय भास।
ण वियाणहुं तेरउ दिव्वचारु सोहम्माहिवइ सणक्कुमारु[6]।
इय वंदिवि वेण्णि वि संणिविट्ठ देवेण सिट्ठि णीसेस दिट्ठ।

घत्ता—एयासी तासु जाया जाणियधम्मविहि ॥
गणहर गणणाह गुरुयण गुरुमाणिक्कणिहि ॥१४॥

पड़ते हैं? यदि रौद्र लोग तुम्हारे द्वारा दूषित कर दिये गये हैं, तो फिर तुम्हारे आसनमें सिंह क्यों हैं। यदि तुम्हें तीन (सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र) प्रिय हैं, तो तुम अत्यन्त निरलंकार क्यों हो?

घत्ता—यदि तुमने चोरीका निषेध किया है तो तुम्हारा अशोक वृक्ष अपने पत्ते फैलाकर अप्सराओंकी शोभाका अपहरण क्यों करता है ॥१३॥

१४

यद्यपि तुम विश्वमें प्रसिद्ध मनुष्य हो, फिर तुम्हारी प्रकृति मानवीय प्रकृति नहीं है। यदि तुमने विश्वमें किसीके लिए दण्ड नहीं कहा, तुम्हारे छत्रत्रयमें वह अधिक क्यों चमकता है? यदि तुम कामदेवके बाणोंसे अप्रसन्न होते हो, तो हे देव, पुष्पोंकी पूजासे तुम अप्रसन्न क्यों नहीं होते हो? यदि तुमने दूसरेपर आघात करना मना कर दिया है तो बजते हुए नगाड़ोंपर आघात क्यों किया जाता है? यदि तुमने मण्डलों (देशों) में तृसिका परित्याग कर दिया है तो फिर तुममें भामण्डलोंकी प्रवृत्ति क्यों है? एक देशमें उत्पन्न होनेवाले महेश, तुम कहाँ, और बहुजनोंकी भाषासे मिली हुई तुम्हारी भाषा कहाँ? हम तुम्हारे दिव्य आचरणको नहीं जानते।" सौधर्म और सानत्कुमार स्वर्गोंके इन्द्र, इस प्रकार वन्दना कर दोनों बैठ गये। देव (शीतलनाथ) ने समस्त सृष्टिका कथन किया।

घत्ता—उनके धर्मविधिको जाननेवाले और गुरुरूपी माणिक्य निधिवाले महान् इक्यासी गणोंके स्वामी गणधर हुए ॥१४॥

८. A जइ; P जं। ९. A P तो तुहु।

१४. १. A माणसु। २. A P देंतु। ३. A हम्मइ किं। ४. A एक्कदेस तुहु तुहु महेस; P एक्कदेस सुहं तुहुं महेस। ५. A किं बहुजणभासइ; P किं बहुजणभासहि। ६. A P सणंकुमारु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५

महरिसिहिं महाचरणायराहं चउदहसय पुव्वंगा[1]हराइं ।
एक्कूणसट्ठिसहसइं सयाइं दुइ सिक्खहुं सिक्खा[2]वहि रयाइं ।
भयसहसइं दोसय सावहीहिं पुणु सत्तसहासइं केवलीहिं ।
बारहस[3]हसइं वेउव्वियाहं इच्छियइं सरूवइं होंति जाहं ।
पंचेव[4] ताइं णयसयजुयाइं मणपज्जयवंतहं संथुयाइं ।
सयसत्तपमाणुज्जोइयाहं तहु पंचसहासइं वाइयाहं ।
इय एक्कु लक्खु जायउ जईहिं लक्खाइं तिण्णि वरसंजईहिं ।
सावयहं लक्ख दो सुहमईहिं चत्तारि लक्ख जहिं सावईहिं ।
तेहिं देवहं बुज्झिय केण संख संखेज्ज तिरिय हयसंककंख ।
भाभासुरु भव्वंभोयभाणु सहुं एत्तिएहिं महि विहरमाणु ।
सो पुव्वसहासइं पंचवीस अतिवरिसइं उ[6]म्मोहेवि सीस ।
संमेयसेलि हल्लंततालि सहुं भिक्खुस[7]हासें हरिणवालि ।
सतवप्पहावपरिवियलियासु थिउ देहविसग्गें एक्कु मासु ।

घत्ता—आसोइ पवण्णि पुव्वासाढसिय[8]ट्ठमिहि ॥
अवरण्हइ सिद्धु थिउ मेइ[9]णियहि अट्ठमिहि ॥१५॥

१५

महान् आचरणको धारण करनेवाले और पूर्वांगधारी महर्षि चौदह सौ थे। शिक्षा-विधिमें रत शिक्षक उनसठ हजार दो सौ, अवधिज्ञानी सात हजार दो सौ, केवलज्ञानी सात हजार, इच्छित रूप धारण करनेवाले विक्रिया ऋद्धि-धारक बारह हजार, मनःपर्ययज्ञानके धारक सात हजार पाँच सौ, वादी मुनि पाँच हजार सात सौ थे। इस प्रकार एक लाख मुनि थे। श्रेष्ठ संयमवाली आर्यिकाएँ तीन लाख थीं। दो लाख श्रावक और चार लाख श्राविकाएँ थीं। वहाँ देवोंकी संख्या कौन जान सका। शंका और आकांक्षासे रहित तिर्यंच संख्यात थे। प्रभासे भास्वर और भव्यरूपी कमलोंके लिए सूर्यके समान जिन, इन लोगोंके साथ धरतीपर विहार करते हुए, तीन वर्ष कम, एक हजार पचीस वर्ष पूर्व तक मिथ्यादृष्टि शिष्योंको सम्बोधित कर, आन्दोलित ताल वृक्षोंवाले, और मृगोंका पालन करनेवाले वे सम्मेदशिखर पर्वतपर पहुँचे। एक हजार मुनिके साथ, अपने तपके प्रभावसे आशाओंको गलानेवाले वह, एक माहके लिए प्रतिमायोगमें स्थित हो गये।

घत्ता—आश्विन शुक्ला अष्टमीके दिन पूर्वाषाढ़ नक्षत्रमें अपराह्णके समय वे आठवीं भूमि (सिद्धशिला) में जाकर स्थित हो गये ॥१५॥

१५. १. AP पुव्वंगायराहं । २. A सिक्खावइ यियाइं; P सिक्खावहि रियाइं । ३. A बारहसयाइं । ४. A पंचेव ताइं णवसंजुयाइं; P सत्तेव ताइं वयसंजुयाइं । ५. A reads *a* as *b* and *b* as *a* । ६. A उम्मोहिय वि सीस । ७. A भिक्खसहासें । ८. A सियछट्ठिमिहि । ९. A मेइणियइ ।

१६

वज्जट्ठितुलाघणघडियगेहु सिहिदेवहिँ दड्ढउ देवदेहु ।
अवरेक्कहिँ फुल्लइं घल्लियाइं अण्णहिँ कव्वइं उव्वेल्लियाइं ।
अवरेक्कहि किउ जयणंदघोसु[1] अण्णहिँ णच्चिउं मणणयणतोसु ।
अवरेक्कहिँ थुउ संसारहारि अण्णहिँ हयँ[2] झल्लरि पडह भेरि ।
अवरेक्कहिँ पणमिउ[3] मोक्खगामि अण्णहिँ वंदिय जिणसिद्धभूमि[4] ।
अण्णहिँ अण्णण्णइं साहियाइं वाहणइं मेहवहि वाहियाइं ।
गय णियणिलयहु सुर विहवफार जिणगुणकहरंजियहियसार ।
गयणयलि चरंति[5] चवंति एंव जगि कम्मबंधु को महइ[6] एंव ।
घत्ता—णिक्किरिउ करिवि मणवयणंगइं परिहरिवि ॥
थिउ सीयलसामि मोक्खमहापुरि पइसरिवि ॥१६॥

१७

पसियउ परमेसरु परमसमणु[1] अम्हहं[2] वि तहिं जि संभवउ गमणु ।
पुणु अक्खइ गणहरु सेणियासु सम्मत्तरयणरुइसेणियासु ।
गयलेसि परिट्ठिइ णाणसेसि णिव्वाणु पराइउ सीयलेसि ।
तित्थंति तासु विच्छिण्णधम्मु पसरिउ जणवइ रयमइलु कम्मु ।
विणु वत्तारयसोयारएहिं भव्वेहिं भवण्णवतारएहिं[3] ।

१६

वज्रर्षभनाराच संहननसे गठित शरीरवाले देवके देहको अग्निकुमार देवोंने जला दिया। कुछ देवोंने फूलोंकी वर्षा की, कुछ और देवोंने काव्योंका उच्चारण किया। कुछ और देवोंने 'जय' और 'बढ़ो'का घोष किया। कुछ और देवोंने मन और नेत्रोंको आनन्द देनेवाला नृत्य किया। कुछ और देवोंने संसारका नाश करनेवाले उनकी स्तुति की। कुछ और देवोंने झल्लरी, पटह और नगाड़ोंको बजाया। कुछ और देवोंने मोक्षगामी उन्हें प्रणाम किया, कुछ और देवोंने जिनसिद्ध भूमिकी वन्दना की। दूसरोंने दूसरोंसे कुछ-कुछ कहा और आकाशपथमें वाहनोंको चलाया। वैभवके विस्तारसे युक्त तथा जिनके गुण-कथनसे अपने हृदयको रंजित करनेवाले देव अपने-अपने विमानोंमें चले गये। वे आकाशतलमें चलते हैं और कहते हैं कि विश्वमें कौन इस प्रकार कर्मोंका नाश करता है।

घत्ता—मन, वचन और शरीरको छोड़कर और निष्क्रिय होकर शीतल स्वामी मोक्षरूपी महानगरीमें प्रवेश करके स्थित हो गये ॥१६॥

१७

परमेश्वर परमश्रमण प्रसन्न हों कि जिससे हमारा भी वहाँ गमन सम्भव हो। पुनः गौतम गणधर सम्यक्त्वरूपी रत्नकी कान्तिपरम्परावाले राजा श्रेणिकसे कहते हैं, "लेश्यासे रहित, ज्ञानशेष शीतलनाथके निर्वाण प्राप्त कर लेने पर उनके तीर्थके अन्तमें वक्ताओं, श्रोताओं और संसार रूपी समुद्रसे तारनेवाले भव्योंके बिना, धर्मसे विच्छिन्न और पापसे मलिन कर्म फैल गया। जो

---

१६. १. AP जयणंदिघोसु । २. A झल्लरि हय पडह । ३. AP कय बहुविहविहूइ । ४. AP जिणदेहभूइ । ५. AP चडंति । ६. A मुयइ ।

१७. १. A परमसरणु । २. A अम्हइं । ३. AP भवंतर° ।

पुरगामणयरसोहाणिवेसि　　मलययसुरहिइ तहिं मलयदेसि ।
पडिवक्खलक्खसंजणियतासु　　भद्दिलपुरि सिरिभद्दावयासु ।
कालें जंतें कुलगयणचंदु　　घणरहु णामें जायउ णरिंदु ।
णीहारसरिसजसविमलकंति　　तहु सच्चकित्ति णामेण मंति ।
अत्थाणमज्झि उवविट्ठु राय　　एक्कहिं दिणि दाणालाव जाय ।

घत्ता—आहासइ रुद्दु भूरिसम्मु जिणधम्मचुउ ॥
सालायणमुंडु णामें अण्णु वि जासु सुउ ॥१७॥

१८

गोदाणभूमिदाणंतराइं　　कच्चोलइं थालइं मणहराइं ।
सोवण्णइं रयणइं अंबराइं　　फलछेत्तइं धवलहरइं पुराइं ।
हय[1] गय रहवर पीणत्थणीउ　　कण्णा कलवीणालाव[2]विणीउ ।
वरदब्भपवित्तंकियकराहं　　जो देइ णरेसँ[3] दिएसराहं ।
सो कणयविमाणहिं विण्हुलोउ　　संपावइ[4] माणइ दिव्वु भोउ ।
तं णिसुणवि पभणइ सच्चकित्ति　　कहिं कामुउ कहिं परलोयवित्ति ।
कहिं णिंबहु कहिं अंबयफलाइं　　कहिं खरयरसिल कहिं सयदलाइं ।
कहिं खीरु महुरु कहिं राइयाउ　　बंभणमईउ कुविवेइयाउ ।
मग्गइ[5] मंचउ वरभूमि हेमु　　मग्गइ कुमारि भुंजइ सकामु ।
मुइ डिंभइ उयरु हणंतु रडइ　　अण्णाणिउ भवसंसारि पडइ ।

पुरों, गाँवों और नगरोंकी शोभाका निवेश है तथा मलयज सुरभिसे युक्त है, ऐसे मलय देशके भद्रिलपुर नगरमें लाखों प्रतिपक्षोंको संत्रासे उत्पन्न करनेवाली लक्ष्मी और कल्याणका घर, अपने कुलरूपी गगनका चन्द्रमा घनरथ नामका राजा हुआ। उसका, नीहारके समान यश और विमलकान्ति वाला सत्यकीर्ति नामक नया मन्त्री हुआ। एक दिन जब राजा अपने दरबारमें बैठा हुआ था, उसकी दानके बारेमें बातचीत हुई।

घत्ता—जिन धर्मसे च्युत रौद्रभाव धारण करनेवाला भूरिशर्मा, और उसका शालायन मुण्ड नामका पुत्र, कहता है ॥१७॥

१८

गोदान भूमिदानादि, पानपात्र, सुन्दर थालियाँ, स्वर्ण, रत्न और वस्त्र, फल, क्षेत्र, धवल गृह और पुर, अश्व गज रथवर पीनस्तनी वीणाकी तरह सुन्दर आलाप करनेवाली कन्याएँ, जो अपने श्रेष्ठ दर्भमुद्रिकासे अंकित हाथोंसे, हे राजन्! ब्राह्मणेश्वरोंको देता है, वह स्वर्णविमानोंसे विष्णुलोक जाता है और दिव्य भोगका आनन्द लेता है। यह सुनकर सत्यकीर्ति कहता है—'कहाँ कामुक, और कहाँ परलोक वृत्ति? कहाँ नीम और कहाँ आम्रके फल? कहाँ कठिन शिला, और कहाँ कमलदल? कहाँ सुन्दर खीर, और कहाँ राजिका? ब्राह्मणकी बुद्धि खोटे विवेकसे भरी हुई है। वह मंच, वरभूमि और सोना माँगता है, वह कुमारी माँगता है, और सकाम भोग करता है। पुत्रके मरने पर पेट पीटता हुआ रोता है; और इस प्रकार अज्ञानी संसारमें भ्रमण करता है।

४. AP तासु ।
१८. १. P गय हय । २. A °लावणीउ । ३. AP णरेसु । ४. AP संपावइ । ५. AP मग्गइ वरु मंचउ भूमि हेमु ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

घत्ता—भक्खइ मृगमासु सुज्झइ पिपलफंसणिण ॥
णिउ णरयहु लोउ णिग्घिणबंभणसासणिण ॥१८॥

१९

अण्णाणिणि पसु पुण्णेण रहिय बंधणताडणदुक्खेण गहिय ।
जा गाइ चरंति अमेज्झु खाइ सा किं संफासें सुद्धि देइ ।
पाणिउ तणुसंगें होइ मुत्तु सोत्तिय तं वुच्चइ किह पवित्तु ।
कयप्राणिवग्गणिप्राणियाइ किं एयँइ धुत्तकहाणियाए ।
जइ देइ देउ तो होउ चाइ कुच्छियदाणें सग्गहु ण जाइ ।
दिज्जइ सुपत्तु जाणिवि सणाणु सुय भेसहु अभयाहारदाणु ।
भाविज्जइ जीवदयालु भाउ पुज्जिज्जइ सामिउ वीयराउ ।
णियमिज्जइ कुवहि चरंतु चित्तु वज्जिज्जइ परधणु परकलत्तु ।
घत्ता—जसु दिण्णइ दाणि होइ महंतु अणंतु फलु ॥
तं उत्तमु पत्तु पणवंतहं परियलइ मलु ॥१९॥

२०

जे वज्जियपुत्तकलत्तणेह दुद्धरमलपडलविलित्तदेह ।
अपरिग्गह जे गिरिगहणणिलय भयलोहमोहमयमाणविलय ।
जे णिवडिय भव्वुद्धरणलील उवसग्गपरीसहसहणसील ।

घत्ता—वह पशुका मांस खाता है और पीपल वृक्षको छूनेसे अपनेको शुद्ध करता है। निर्दय ब्राह्मण-शासनके द्वारा लोग नरकमें ले जाये जाते हैं ? ॥१८॥

१९

वह मात्र अज्ञानी और पुण्यसे रहित है। बन्धन ताड़न और दुःखसे गृहीत है। जो गाय जब चरती है तो अभक्ष्य खाती है, वह स्पर्शसे शुद्धि कैसे दे सकती है, शरीरके संगसे पानी मूत बन जाता है, फिर ब्राह्मण उसे (मूतको) पवित्र कैसे कहता है ? जिसमें प्राणीवर्गको निष्प्राण किया जाता है ऐसी इस धूर्तकथासे क्या ? यदि देव देता है, तो त्यागसे क्या ? खोटे दानसे वह स्वर्ग नहीं जा सकता ? ज्ञानपूर्वक सुपात्रको जानकर शास्त्र औषधि अभय और आहारदान देना चाहिए। जीवोंके प्रति दयाभावकी भावना करनी चाहिए। वीतराग स्वामीकी पूजा करनी चाहिए। कुपथमें जाते हुए मनको रोकना चाहिए। परधन और पर-स्त्रीका त्याग करना चाहिए।

घत्ता—जिसको दान देनेसे महान् और अनन्त फल होता है, ऐसे उत्तम पात्रको प्रणाम करनेवालोंका मल दूर हो जाता है ॥१९॥

२०

जो पुत्र और कलत्रके स्नेहसे रहित हैं, जो दुर्धर मल पटलसे अलिप्त देह हैं, परिग्रहसे रहित जो गहन गिरिरूपी घरवाले हैं, भय लोभ मोह मद और मानको नष्ट करनेवाले हैं, जो संसारमें गिरे हुए भव्योंका उद्धारलीला वाले हैं, उपसर्ग और परीसहको सहन करनेवाले हैं, जो

६. AP मिगमासु । ७. AP पिप्पल° ।

१९. १. A अण्णाणि । २. A होइ । ३. AP कयपाणिवग्गणिप्पाणियाइ । ४. A एणइ । ५. A सुणाणु । ६. A परहणु । ७. पणवंतहु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे अरिबंधवहुं मि समसहाव णिग्गंथ णिरंजण मुक्कगावें।
दिज्जइ जोग्गउ आहारु ताहं मज्झण्णि पइट्ठहं मुणिवराहं।
सत्थेण णाणु अण्णेण भोउ[2] फलु दाणसूरु णृव[3] लहइ लोउ।
अभयोसहेहिं परियलइ रोउ ण कया वि णिहालइ दुक्खजोउँ[4]।
ता सालायणमुंडेण उत्तु दावहि तेरउं सिद्धंतसुत्तु।
विणु आगमेण किं तुहुं पमाणु माणवु पायडमाणवसमाणु।
पडिउत्तरु दिण्णउं सावएण इह सीयलपरमेसें गएण।
अम्हारउं सासणु णत्थि बप्प जं रुच्चइ तं तुहुं चवहि विप्प।
णरणाहु पयंपइ[5] तुह सुईउ दावहि दियवरदावियगईउ।

घत्ता—ता कुणयरएण विप्पें जिणमउ णिरसियउं॥
सइं विरइवि कव्वु आणिवि रायहु दरिसियउं॥२०॥

२१

रइयाइं ललियाइं कव्वाइं भणिऊण देहीणं[1] संदेहबुद्धीउ जणिऊण।
तव्वासराओ तहिं दुट्ठहिययाइं णिद्धम्ममग्गम्मि कम्मेण णिहियाइं।
गुरु[2]देवपडिकूलणुप्पण्णगावाइं वड्ढंतसुविचित्तमिच्छत्तभावाइं।
कयपियरमिसगसियपसु[3]पेसिगासाइं पयलंत[4]महुसोमपाणा[5]हिलासाइं।
गोदाणभूदाणदढबद्धतिट्ठाइं उड्डिय[6]करग्गाइं किविणाइं दिट्ठाइं[7]।

शत्रु और मित्रमें समान स्वभाववाले हैं, निर्ग्रन्थ निरंजन और गर्वसे मुक्त हैं, मध्याह्नमें आये हुए ऐसे मुनियोंको योग्य आहार देना चाहिए। शास्त्रसे ज्ञान होता है, और अन्नसे भोग होता है। हे राजन्, दानशूर व्यक्ति संसारमें फल पाता है। अभय और औषधियोंसे रोग नष्ट होता है। और कभी भी वह दुःखका योग नहीं देखता। इसपर शालायन मुण्ड बोला—तुम अपना सिद्धान्त सूत्र बताओ, आगमके बिना तुम्हारा क्या प्रमाण? मनुष्य तो प्राकृत मानवके समान है। तब उस श्रावकने प्रत्युत्तर दिया, परमेश्वर शीतलनाथके मोक्ष चले जाने पर हे सुभट, हमारा शासन नहीं है, हे विप्र, इसलिए तुम्हें जो कहना हो वह कहो। तब राजा घनरथ कहता है—जिसमें द्विजवरों की श्रेष्ठ गति बतायी गयी है, तुम अपने ऐसे शास्त्र बताओ।

घत्ता—तब कुनयमें रत उसने जिनमतका निरसन किया। स्वयं काव्यकी रचना कर और लाकर उसने राजाको दिखा दिया॥२०॥

२१

रचे हुए सुन्दर काव्य कहकर, शरीरधारियोंमें सन्देह उत्पन्न कर उस दिनसे वहाँ दुष्ट हृदय कर्मके द्वारा धर्महीनमार्गमें लगा दिये गये। गुरुदेवको प्रतिकूल करनेमें जिन्हें अहंकार उत्पन्न हो गया है, जिनके सुविचित्र मिथ्यात्वभाव बढ़ रहे हैं, पितरोंके बहाने किये गये यज्ञमें जिन्होंने पशुओंकी मांसपेशियोंको खाया है। जिनमें मधु और सोमपान करनेकी इच्छा तीव्रतम

२०. १. AP गलियगाव। २. P पवणु; P adds after thes : वलतुलिउं णाइं तेलोक्कभवणु। ३. AP णिव। ४. P adds: पच्चेल्लिउ पावइ सरसु भोउ। ५. AP पजंपइ।

२१. १. A देहेण। २. A देवगुरुकूलणुप्पणगव्वाइं; P देवगुरुपडिकूलणुप्पण्णगावाइं। ३. A °अयमासगासाइं। ४. A पयडंत°। ५. P °सोमपाणा°। ६. A उड्डिय°। ७. AP विट्ठाइं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणवंतणिंदिरइं णियकुलमयंधाइं दुग्गंधरसभरियणवदेहरंधाइं ।
मयहड्डचट्टिरइं पाणियसउच्चाइं हिंसाइ घडियाइं पब्भट्ठसच्चाइं ।
धरियक्खसुत्ताइं मृगचम्मभूसाइं पालासदंडाइं कासायवासाइं ।
धणधरणिघरपणइणीमोहमूढाइं छक्कम्मगंभीरजरकूवछूढाइं ।
दुद्धोट्टदुप्पोसपोसणपयट्टाइं सुयसत्थवित्थारविलसियमरट्टाइं ।
आसवमयावेसपसरियविडंबाइं जीवंति दीणाइं बंभणकुडुंबाइं ।

घत्ता—गयसीयलदेवि भरहि जाय परपत्तविहि ॥
संपीणइ विप्पु पुप्फदंत पणवंत सिहि ॥२१॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सीयलणाहणिव्वाणगमणं णाम अट्ठयालीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥४८॥

॥ सीयलणाहचरियं समत्तं ॥

है। गोदान और भूदानमें जिनकी तृष्णाएँ बँधी हुई हैं। जो करका अगला भाग आये हुए कृपण की तरह दिखाई देते हैं, गुणवानोंकी निन्दा करनेवाले तथा अपने कुलके लिए जो मदान्ध हैं। जिनकी नवदेह दुर्गन्ध रससे भरित है। मृगकी हड्डियोंको चाटनेवाले, पानीसे पवित्र होनेवाले, हिंसासे रचित, सत्यसे भ्रष्ट, अक्षसूत्र धारण करनेवाले, मृगचर्मसे भूषित, पलाश दण्ड धारण करनेवाले, और गेरुए वस्त्र पहिननेवाले, धन भूमि घर और प्रणयिनीके मोहसे मूढ़ छह कर्म रूपी गम्भीर पुराने कूपमें पड़े हुए, मधु और मांसके पोषणमें लगे हुए—श्रुत शास्त्रोंके विस्तारमें विलसित अहंकारवाले ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ और यतिके रूपमें जो लोकको प्रवंचित करनेवाले हैं, ऐसे दीन ब्राह्मण-कुल जीवित रहते हैं।

घत्ता—शीतलनाथके निर्वाण प्राप्त कर लेने पर भरतक्षेत्रमें दूसरे पात्रोंकी विधि फैल गयी (पुष्पदंत कवि कहता है) कि आगको प्रणाम करता हुआ विप्र प्रसन्न होता है ॥२१॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका शीतलनाथ निर्वाण गमन नाम का अड़तालीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४८॥

---

८. A मयहुंडचंडिरइं; P मयहड्डचड्डिरइं। ९. A मयचम्म°; P मिगचम्म°। १०. A दुग्घुट्टदुघोस°। ११. AP आसवमयावेस°। १२. A अट्ठतालीसमो। १३. AP omit the line।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ४९

दहमउ गुरु मई तुह कहिउ देउ मोक्खमाणससरहंसु ॥
अवरु वि सुणि सेणिय भणमि एयारहमउ जिणु सेयंसु ॥ध्रुवकं॥

१

जासु ण मुक्का मारें मग्गण जो जाणइ जीवहं गुण मग्गण ।
जेण ण खंडणु किउ चारित्तहु तवपब्भारें णिच्चारित्तहु ।
जो ण वडिउ संसारसमुद्दइ मुद्दिउ जेण तिलोउ समुद्दइ ।
अकयइ णिच्चइ पडिमारूवइ जासु ण रमइ दिट्ठि तूयरूवइ ।
जो णाणें पेक्खइ णीसेसु वि पयजुयलइ णिवडइ जसु सेसु वि ।
जो सुकियमहिर्यम्महु विसहरु जो पंचिंदियविसहरविसहरु ।
जेण राउ मेल्लविय भुयंगय जासु ण पत्तावलि वि भुयंगय ।
भालि ण दिज्जइ जसु तिलउल्लउ जो अप्पणु तिहुयणि तिलउल्लउ ।

सन्धि ४९

(श्री गौतम गणधर कहते हैं)—"मैंने तुम्हें दसवें गुरु (तीर्थंकर) शीतलनाथके विषयमें बताया कि जो मोक्षरूपी मानसरोवरके हंस हैं। हे श्रेणिक, और भी सुनो—मैं ग्यारहवें श्रेयांस जिनका कथन करता हूँ।"

१

जिसपर कामदेवने अपने तीर नहीं छोड़े, जो जीवके गुणस्थानों और मार्गणाओंको जानता है। जिसने चारित्रका खण्डन नहीं किया, तपके प्रभावसे जो शत्रुभावसे रहित हैं, जो संसाररूपी समुद्रमें नहीं गिरते, जिसने अपनी मुद्रासे त्रिलोकको मुद्रित किया है। जिसकी दृष्टि, अकृत्रिम नित्य प्रतिमारूप और स्त्रीरूपमें रमण नहीं करती, जो ज्ञानके द्वारा सब कुछ देख लेते हैं, जिनके चरण युगलमें शेष संसार पड़ता है, जो पुण्यरूपी वृक्षके लिए मेघ हैं और पाँच इन्द्रियरूपी विषधरों के विषका अपहरण करनेवाले हैं, जिन्होंने रागरूपी विट को छोड़ दिया है, जिसपर टेढ़ी पत्रावली

A has, at the beginning of this Saṃdhi, the following stanza :—

सया सन्तो वेसो भूसणं सुद्धसीलं
सुसंतुट्ठं चित्तं सव्वजीवेसु मेत्ती ।
मुहे दिव्वा वाणी चारुचारित्तभारो
अहो खण्डस्सेसो केण पुण्णेण जाओ ॥ १ ॥

This stanza is found in P at the beginning of Samdhi L. K does not give it anywhere ।

१. १. AP सुणु । २. APT तियरूवइ । ३. P adds after this : दुरविमुक्कउ बंधविसेसु वि, समभणु बहुधणेसु णीसेसु वि. । ४. A महिजम्महु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो परिहइ ण कयाइ वि कंकणु णउ फंसइ सचित्तउं कं कणु।
णिच्चेलक्कु जेण पडिवण्णउं जइ वि चीरु चंगउं पडिवण्णउं।
तो वि ण परिहइ जो णिण्णेहलु जो ढोयइ णरि णिरु णिण्णे हलु।
तहु देवहु संचियसेयंसहु पयजुयलउ वंदिवि सेयंसहु।

घत्ता—पुणु अक्खमि तहु तणिय कह किंत्ति वियंभउ महु जगगेहि ॥
पुक्खरवरदीवंतरइ सुरदिसि मेरुहि पुव्वविदेहि ॥१॥

२

सालतमालतालतरुसंकडि सीयतरंगिणिपवरुत्तरतडि।
कच्छउ देसु देससिरिसंकुलु वियसियकमलकोसरयपरिमलु।
कलववडियकलेविं कयकलयलु दुमफुल्लासियफुल्लंधुयचलु।
तहिं खेमउरु काइं वण्णिज्जइ जहिं पिययमु पणएं कलहिज्जइ।
सरु वायरंणि णवर संधिज्जइ तणु विरहेण ण वाहिइ झिज्जइ।
णहवणु ण वणु जेत्थु भडभंडणि केसगहणु बिंबाहरचुंबणि।
अत्थसमप्पणि जहिं पयविग्गहु जइयणि णउ सावज्जपरिग्गहु।
जहिं णिण्णासिय परमंडलवइ पासबद्ध णं घरमंडलवइ।

भी नहीं है, जिसके भालपर तिलक नहीं दिया जाता, जो स्वयं त्रिभुवनमें तिलक स्वरूप हैं, जो कभी भी कंकण नहीं पहनते, जिनका अपना चित्त जल और बीजका स्पर्श नहीं करता, जिन्होंने अचेलकत्व (अपरिग्रहत्व) स्वीकार कर लिया है, यद्यपि वस्त्र पटी (रेशमी वस्त्र) के समान रंगवाला है, तब भी वह नहीं पहनते। जो स्नेह रहित हैं, फिर भी निम्न ऊँच मनुष्यको (स्वर्गादि) फल देते हैं, कल्याणका संचय करनेवाले देव श्रेयांसके चरणोंकी वन्दना कर।

घत्ता—फिर मैं उनकी कथा कहता हूँ कि जिससे विश्वरूपी घरमें मेरी कीर्ति फैले। पुष्करवर द्वीपकी पूर्व दिशामें सुमेरुपर्वतके पूर्व विदेह में ॥१॥

२

सीता नदीके साल तमाल और ताड़ वृक्षोंसे परिपूर्ण विशालतटपर, देश-लक्ष्मीसे व्याप्त कच्छ देश है, जिसमें विकसित कमल-कोशोंका रजमल है। धान्य विशेषके वृक्षोंपर बैठे हुए गौरैया-पक्षियोंका कलकल स्वर हो रहा है, जो वृक्षोंके फूलोंपर बैठे हुए भ्रमरोंसे चंचल हैं। उसमें क्षेमपुर नगर है। उसका क्या वर्णन किया जाय, जहाँ प्रियतमसे प्रणयमें ही कलह किया जाता है (अन्यत्र कलह नहीं है)। जहां व्याकरणमें ही सर (स्वर और सर) का संधान किया जाता है, अन्यत्र सरोंका संधान नहीं किया जाता; जहाँ विरहसे ही शरीर कृश होता है, रोगसे नहीं; जहाँ नखोंके व्रण ही हैं, योद्धाओंकी भिड़न्तमें जहाँ व्रण नहीं होते। बिम्बाधरोंके चूमने ही में जहाँ केशग्रहण होता है, अन्यत्र केशग्रहण नहीं होता है। जहां अर्थों और पदवाक्योंके समर्पण (सम्पादन) में पद विग्रह (पदोंका विग्रह, प्रजाका विग्रह) होता है, अन्यत्र आर्थिक लेन-देनमें प्रजाका झगड़ा नहीं होता, जहाँ जैनोंमें सावद्य परिग्रह नहीं होता, जहाँ शत्रुमण्डलके राजा इस प्रकार

५. AP सचित्तउं। ६. AP तो णवि। ७. A जइ णिण्णेहलु।
२. १. A देससरिसंकुलु। २. A °कलेवि°; P °कलंबि°। ३. P ण पर। ४. A जइयणि तउ सावज्ज-परिग्गहु; P णउ परअत्थहरणि कयविग्गहु। ५. P णित्तासिय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहिं चोरारिमारिदालिद्दइं पासंडाइं वि णत्थि रउद्दइं ।
तहिं राणउ णलिणालयमाणणु णलिणप्पहु णामें णलिणाणणु ।
घत्ता—भयभीयइं महिहिणिवडियइं जीय[6] देव सविणउ जंपंति ।।
जासु पयावें तावियइं परणरणाहसयइं कंपंति ।।२।।

३

कलयलंतचलकलकोइलगणि तावण्णहिं[1] दिणि सहसंबयवणि ।
पेच्छिवि जिणु अणंतु वणवालें विण्णत्तउ सिरंगय[2]भुयडालें ।
तहु तहिं तवसिहिड्डुयवम्मीसरु गुणदेवहं भवदेवहं ईसरु ।
परमप्पउ पसण्णें[3] परमेसरु आयउ देउं[4] धम्मचक्केसरु ।
तं णिसुणेवि तेण तित्थंकरु जाइवि वंदिउ दुरियखयंकरु ।
बुज्झिवि धम्मु अहिंसालक्खणु चिंतिवि बंधमोक्खविहिलक्खणु ।
देवि सुपुत्तु महिहिं परिरक्खणु सइं रिसि हूयउ राउ वियक्खणु ।
चरणमूलि जइवरहु अणंतहु चरइ मग्गि दुग्गमि अरहंतहु ।
घत्ता—णीलकिण्हलेसउ [5]मुयइ काउलेस दूरें वज्जंतु ।।
सुक्कलेस मुणिवरु धरइ भीमें तवतावें खिज्जंतु ।।३।।

संत्रस्त और पाशबद्ध हैं, मानो घरके कुत्ते हों। जहाँ चोर शत्रु मारी और दारिद्र्य और भयंकर पाखण्डी नहीं हैं। उसमें लक्ष्मीको भोग करनेवाला और कमलके समान मुखवाला नलिनप्रभु नामका राजा था।

घत्ता—जिसके प्रतापसे सन्तप्त होकर, सैकड़ों शत्रुराजा काँप उठते और भयभीत होकर धरतीपर गिरकर 'हे देव आपकी जय हो, विनयके साथ यह कहते हैं ।।२।।

३

इतनेमें एक दिन, जिसमें चंचल कोकिल-समूह कलकल कर रहा है, ऐसे सहस्राम्ब नामक वनमें अनन्त जिनको देखकर, वनपालने अपनी भुजारूपी डालें सिरसे लगाते हुए, उससे निवेदन किया, "हे देव (उद्यानमें) तपकी आगमें कामदेवको नष्ट करनेवाले गुणदेवों और विश्वदेवोंके ईश्वर परमात्मा प्रसन्न परमेश्वर और धर्मचक्रेश्वर देव आये हुए हैं," यह सुनकर, उसने जाकर पापोंका नाश करनेवाले तीर्थंकरकी वन्दना की। तथा अहिंसा लक्षणवाले धर्मको समझकर एवं बन्ध और मोक्षकी विधि तथा लक्षणका विचार कर, अपने पुत्रको भूमिके रक्षण का भार सौंपकर, वह विचक्षण राजा स्वयं ऋषि हो गया। वह, मुनिवर अनन्तनाथके चरणमूलमें दुर्गम चर्यामार्गमें विचरण करने लगा।

घत्ता—वह कृष्ण और नील लेश्या छोड़ देता है, कायक्लेशका दूरसे परित्याग करता है। वह मुनिवर शुक्ल लेश्या धारण करता है और भीम तपतापमें वह अपनेको क्षीण करता है ।।३।।

६. A जीव ।

३. १. A तावण्णयदिणि । २. A सिरि गय° । ३. AP पसण्णु । ४. AP देव । ५. AP मुयउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

मंदरधीरु वीरु दिहिपरियरु इत्थिअत्थनि[1]वथेणकहंतरु ।
ण भणइ ण सुणइ णिप्पिहुं[2] णीरउ एयारहवरंगसिरिधारउ ।
कोहु लोहु माणु[3] वि मुसुमूरइ मायाभावु होंतु संचूरइ ।
चक्खुसोत्तरसफासणघाणइं जिणइ हणइ दुक्कियसंताणइं ।
विहुणिवि णिवइ णिद्द[4] सहुं पणएं अप्पउं भूसइ रिसि रिसिविणएं ।
ण सरइ पुव्वकालें[5]रइकीलणु ण करइ दंतपंतिपक्खालणु ।
णहखंडणु सरूवपरि[6]पुंछणु करयलवट्टि सरीरणियच्छणु ।
हसणु भसणु भूभंगु ससंसणु पाणिणट्टु[7] परगुणविद्धंसणु ।
साहिलासु सवियारउ दंसणु णियडणिसण्ण[8]हरिणसंफंसणु ।
णक्खछोडि तणुमोडि ण इच्छइ परमसाहु लिहियउ[9] इव अच्छइ

घत्ता—बंधिवि तित्थयरत्तु तहिं दंसणसुद्धिइ तोडिवि भंति ॥
अच्चुइ पुप्फुत्तरणिलइ जायउ सुरवरु ससहरकंति ॥४॥

५

आउ दुवीससमुद्द[1]पमाणइं कालें[2] गिलियइं दुक्कपमाणइं ।
तहु छम्मासु परिट्ठिउ जइयहुं अक्खइ जक्खहु सुरवइ तइयहुं ।
जंबुदीवि भरहि सीहउरइ धणकणजणगोहणगुणपउरइ ।

४

धैर्य ही जिनका परिग्रह है ऐसी मंदराचलके समान धीर वीर निस्पृह एवं निष्पाप वह, स्त्री भोजन नृप और चौर्य कथाको न सुनते हैं और न कहते हैं, ग्यारह श्रेष्ठ श्रुतांगोंकी शोभाको धारण करनेवाले वह, क्रोध लोभ और मानको भी नष्ट कर देते हैं, चक्षु श्रोत्र जिह्वा स्पर्श और घ्राण इन्द्रियोंको जीत लेते हैं, और पापकी शृंखलाको नष्ट कर देते हैं। प्रणयके साथ, वह निद्राको भी नष्ट कर देते हैं, और वह मुनि ऋषिकी विनयसे स्वयंको विभूषित करते हैं, वह पूर्वकालकी रतिक्रीड़ाकी याद नहीं करते, और न दन्तपंक्तिका प्रक्षालन करते हैं, नखोंका खण्डन, अपने स्वरूपका मार्जन, करतल रूपी वर्तिकासे शरीरको देखना, हँसना बोलना, भ्रूभंग करना श्वास लेना, हाथ हिलाना, परगुणोंका नाश करना, अभिलाषापूर्वक और विकारके साथ देखना, निकट बैठे हरिणोंका स्पर्श करना, नख छोटे करना, शरीर मोड़ना, वह नहीं चाहते। परम साधु चित्रलिखितकी तरह, स्थित रहते हैं।

घत्ता—वहाँ, दर्शन विशुद्धिसे भ्रान्तिको नष्ट कर और तीर्थंकर प्रकृतिका बंधकर, अच्युत स्वर्गके पुष्पोत्तर विमानमें वह चन्द्रमाकी कान्तिवाले देव हो गये ॥४॥

५

उसकी आयु बाईस सागर पर्यन्त थी। समयके साथ नष्ट होने पर उसका भी अन्त आ पहुँचा। जब उसके छह माह शेष रह गये, तब इन्द्र कुबेरसे कहता है, 'जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें

---

४. १. A इत्थिअत्तिणिव° and gloss अत्ति भोज्यं; P इत्थिअत्थणिव। २. A P णिप्पिहु। ३. A P मोहु। ४. P णिद्दे। ५. A पुव्वकालि। ६. P परिपेच्छणु। ७. A पाणिणिद्द। ८. A °णिसण्णहं हरिणहं फंसणु; P °णिसण्णहं णवि संफंसणु। ९. P लिहिउ इव।

५. १. AP °समाणइं। २. A कालि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आइदेवकुलसंतइ[3]जायउ विट्ठु णाम राणउ विक्खायउ।
णंदादेवि तासु घरसामिणि कामसुहंकरि णं सुरकामिणि।
तणुरुहु तेओहामियदिणयरु एयहं दोहं वि होसइ जिणवरु।
ताहं तुरिउं तुहुं करि भल्लारउं रयणफुरंतु णयरु चउदारउं।
धणएं पुरु पविणिम्मिउं तेहउं मणुयहिं वण्णहुं जाइ ण जेहउं।
घत्ता—ता णज्जइ दिणु णिच्चु जहिं जा सरे[5]वरि कमलइं वियसंति॥
वरमणिकिरणहिं तोंतडिय उग्गय रवियर णउ दीसंति॥५॥

६

तहिं सयणालइ [1]सिरिअइसइयइ पच्छिमरयणिहि णिद्दं[2]धइयइ।
पुण्णचंदसोहियमुहयंदइ सिविण[3]पंति अवलोइय णंदइ।
अविर[4]यगलियदाणधारालउ भमियसिलिम्मुहोलिसोंडालउ।
वालहिसण्हाककुखुरमणहरु सउरहेउ रुइरंजियससहरु।
कुडिलणहरु भइरवरुं[5]जणरवु गिरिगुहणीहरंतु कंठीरवु।
कण्णतालहयमहुलिहविं[6]दहिं सिरि सरि सिंचिज्जंति करिंदहिं।
मालाजुयलु भिंग[7]पियकेसरु मा णिसिमं[8]डणु भासुरु णेसरु।
कलसजुय[9]लु णवकमलु सकोमलु मीणमिहु[10]णुं जलकीलाचंचलु।

धन जन कण और गोधन और गुणोंसे प्रचुर सिंहपुरमें, आदिदेवकी कुल परम्परामें उत्पन्न विष्णु नामका विख्यात राजा है। उसकी गृहस्वामिनी नन्दादेवी है। काममें शुभंकर वह सुरकामिनी-की तरह है। अपने तेजसे दिनकरको तिरस्कृत करनेवाले जिनवर इन दोनोंके पुत्र होंगे। इसलिए तुम शीघ्र रत्नोंसे चमकता हुआ चारद्वारों वाला नगर बनाओ। कुबेरने इस प्रकारके नगरकी रचना की कि जिसका मनुष्योंके द्वारा वर्णन नहीं किया जा सका।

घत्ता—जहाँ सरोवरमें नित्य ही कमल खिलते हैं इसलिए दिन जान नहीं पड़ता, श्रेष्ठ मणिकिरणोंसे मिश्रित ऊगी हुई भी सूर्यकिरणें दिखायी नहीं देतीं॥५॥

६

वहाँ श्री से अतिशय भरपूर रात्रिके अन्तिम प्रहरमें शयनतलपर नींदमें सोयी हुई नंदादेवी स्वप्नमाला देखती है। अविरत झरती हुई मदधारासे युक्त और भ्रमण करती हुई भ्रमरपंक्तिवाला महागज, पूंछ गलकम्बल ककुद् और खुरोंसे सुन्दर और कान्तिसे चन्द्रमाको रंजित करनेवाला वृषभ, कुटिल नख और भयंकर गर्जन शब्दवाला पहाड़की गुफासे निकलता हुआ सिंह, अपने कानोंके तालोंसे मधुकर समूहको आहत करते हुए गजेन्द्रों द्वारा सिर पर अभि-षिक्त श्री; भ्रमर और पोली केशरसे युक्त मालायुगल, लक्ष्मी ? और रात्रिका मण्डन (चन्द्रमा), भास्वर सूर्य, कोमल नवकमलोंसे सहित कलशयुगल, जलक्रीड़ासे चंचल मीनयुगल, सरोवर, समुद्र,

३. AP °संतए जायउ। ४. A पुरु विण्णिम्मिउ। ५. A सरवरकमलइं।

६. १. A णिरु अइसइयइ। २. AP णिद्दंधइ। ३. A सिविणयतइ; T तइ पंक्तिः। ४. AP अविरल°।
५. A भइरवभंजणरउ। ६. A वंदहिं। ७. A भिंगु पिय°। ८. A °मंडलु। ९. AP कलसजमलु।
१०. A मीणजुयलु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरु सरराासि चारुसीहासणु[11] देवालउ फणिभवणु फणीसणु।
माणिक्कोहु मोहमालालउ[12] सिहि णहयलि जलंतु चलजालउ।
घत्ता—एंव णिहालिवि चंदमुहि चंदकंति सुहदंसणपंति ॥
जाइवि भासइ भूवइहि सुंदरि सुविहाणइ विहसंति ॥६॥

७

महिवइ मेहघोसु णिच्चप्फलु कहइ महासइहि सिविणयफलु।
जसु आणइ हरि अच्छइ गच्छइ जो सयरायरु लोउ णियच्छइ।
जो परु अप्पउं परहु पयासइ जासु दोसु तिलमेत्तु ण दीसइ।
सासयसोक्खसरोरुहछप्पउ सो अरहंतु संतु परमप्पउ।
तेरइ गब्भइ अब्भउ होसइ ता रोमंचिय णच्चिय सा सइ।
वुट्ठु कुबेरु[1] देवु णवणिहिहरु जा छम्मास तांव[2] चामीयरु।
कंतिकित्तिसिरिहिरिदिहिबुद्धिउ देविउ देविहि कियं[3]तणुसुद्धिउ।
आयउ जायउ जणे[4]उच्छाहउ सग्गउ संचुउ अच्चुयणाहउ।
घित्तसुरासुरपंकयविट्ठिहि जेट्ठहु मासहु किण्हेहि[5] छट्ठिहि।
सवणि[6] सुरिक्खइ पच्छिमरत्तिहि थिउ उयरंतरि पत्थिवपत्तिहि।
जक्खणिहित्तइ दुक्खणिवारइ पुणु णवमास[7] सित्त वसुहारइ।

सुन्दर सिंहासन, देवलोक, नागराजका नागलोक, मयूखमालासे युक्त माणिक्य-समूह, चंचल ज्वालाओं वाली आकाशमें जलती हुई आग।

घत्ता—चन्द्रमुखी और चन्द्रमाके समान कान्तिवाली और शुभ दन्तपंक्तिवाली वह यह देखकर, दूसरे दिन सबेरे जाकर हँसती हुई उन्हें राजाको बताती है ॥६॥

७

मेघके समान ध्वनिवाले निश्चल राजा उस महासतीको स्वप्नोंका फल बताते हैं कि जिसकी आज्ञासे इन्द्र बैठता और चलता है; जो सचराचर लोक देख लेते हैं, श्रेष्ठ जो स्वपरका प्रकाशन करते हैं, जिसके तिलके बराबर भी दोष दिखाई नहीं देता, जो शाश्वत मोक्षरूपी सरोवरके भ्रमर हैं वह अरहंत सन्त परमेश्वर तुम्हारे गर्भसे बालक होंगे। तब वह सती रोमांचित होकर नाच उठी। जब छह माह रह गये, तो नवनिधियोंको धारण करनेवाले कुबेरने स्वर्णवृष्टि की। देवीकी शरीर-शुद्धि करनेवाली कान्ति, कीर्ति, श्री, ह्री, धृति और बुद्धि आदि देवियाँ आयीं। लोगोंमें उत्साह फैल गया। अच्युत स्वर्गके स्वामी वह स्वर्गसे च्युत हुए। ज्येष्ठमाहके कृष्णपक्षमें जिसने सुरासुरोंमें कमलवृष्टि की है ऐसी छठीके दिन, श्रवण नक्षत्रमें रात्रिके अन्तिम प्रहरमें राजाकी पत्नीके उदरमें वे स्थित हो गये। यक्षके द्वारा की गयी दुःखका निवारण करने वाली धनकी धाराने फिर नौ माह तक सिंचन किया।

११. A सिंहासणु। १२. A मोहु मालालउ।
७. १. A कुबेरदेउ। २. A जाम। ३. AP कय°। ४ AP जणि उच्छाहउ। ५. A कण्हपक्खछट्ठिहि। ६. A सवणसुरिक्खइ। ७. AP णवमासु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—छावट्ठिलक्खछव्वीसहिं वि वरिससहासहिं रिद्धउँ ॥
सायरसउ छड्डिवि कोडि गय थक्कउ पुणु पल्लेद्धउ ॥७॥

८

जइयहुं वट्टइ णिव्वुइ सीयलि णट्ठउ अरुहधम्मु धरणीयलि ।
तइयहुं तिहिं णाणहिं संजुत्तउ पुव्वजम्मि भावियरयणत्तउ ।
फग्गुणि एयारहमे वासरि णिच्चमेव खिज्जंतइ ससहरि ।
विण्हुजोइ उप्पण्णउ जोइउ मायइ तारहिं णयणहिं जोइउ ।
आवेप्पिणु भत्तिइ तरुणीलहु मेहलविरइयतारामालहु ।
सिहरकुहरथियखगरामालहु अमरवरेसें णिउ सुरसेलहु ।
णिहियउ पावपडलणिण्णासणि पंडुसिलायलि पंचासासणि ।
उत्त मंत विहि सयल करेप्पिणु खीरंभोणिहिखीरु लएप्पिणु ।

घत्ता—सायकुंभमयकुंभकर एंति गयणि णच्चंति णवंति ॥
खीरवारिधारासयहिं देवदेउ भावेण ण्हवंति ॥८॥

९

सुरपेल्लिउ णं डोल्लइ मंदरु कलसहं सहसइं लेइ पुरंदरु ।
अलिझंकारइं सरलइं सदलइं कलसि कलसि संणिहियइं कमलइं ।
कमलि कमलि आसीणइं हंसइं हंसइं कयकलसरणिग्घोसइं ।

घत्ता—जब सौ सागर और छियासठ लाख छब्बीस हजार वर्ष कम एक सागर प्रमाण समय बीत गया, और जब आधापल्य समय रह गया ॥७॥

८

कि जब शीतलनाथ निर्वाणको प्राप्त हुए थे और अर्हंतधर्म धरतीतल पर नष्ट हो गया था। तब तीन ज्ञानसे युक्त पूर्व जन्ममें रत्नत्रयको भावना करनेवाले योगी श्रेयांस फागुन माहके कृष्ण पक्षकी एकादशीके दिन कि जब चन्द्रमा प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा था, विष्णु योगमें उत्पन्न हुए। उन्हें माँ ने अपनी उज्ज्वल आँखोंसे देखा। भक्तिसे आकर इन्द्र उन्हें वृक्षोंसे नीले, जिसकी मेखला तारावलियोंसे शोभित है, जिसके शिखर-कुहरोंमें विद्याधर स्त्रियाँ स्थित हैं, ऐसे सुमेरु-पर्वतकी पापपटलको नष्ट करनेवाली पाण्डुकशिलाके सिंहासनपर उन्हें रख दिया। उक्त समस्त मन्त्रविधि पूरी कर, और क्षीरसमुद्रका जल लेकर।

घत्ता—स्वर्णमय घड़े हाथमें लिये हुए देव आते हैं, आकाशमें नाचते और प्रणाम करते हैं, क्षीर जलकी सैकड़ों धाराओंसे भावपूर्वक देवदेवका अभिषेक करते हैं ॥८॥

९

देवोंसे प्रेरित मन्दराचल मानो डगमगा उठता है; इन्द्र हजारों कलशोंको लेता है, प्रत्येक कलशपर भ्रमरोंसे झंकृत सरल और सदल कमल रखे हुए हैं, कमल-कमलपर हंस बैठे हुए हैं, हंस

८. A सिट्ठउ; P सिद्धउ। ९. A पुण्णट्ठउ।
८. १. A फग्गुणएयारहमइ। २. AP विण्हुजोइ; T विण्हुजोए ज्येष्ठानक्षत्रे। ३. AP °वलइय। ४. A पावपडलु। ५. A पंडसिलायलि। ६. A संगलु सासणि।
९. १. P डोलइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे कलसर ते किरं[2] वम्महसर वम्महारि विइं[3]वियणरामर।
वम्महसरवरेंहि जणु दारिउ जणवएण हियवइ जिणु धारिउ।
जिणु सिसु मयणहु अज्जु वि संकइ तेण जि रइ थणजुयलु ण ढंकइ।
करइ कामु धणुगुणटंकारउ पसरइ अच्छरउलहं वियारउ।
बहुएं सेयंसेण णिउत्तउ सयमहेण सेयंसु पउत्तउ।
आणिवि णयरु समप्पिउ मायहि तणयालोयणवियसियछायहि।
पणवेप्पिणु दुक्कियघणपवणहु गयउ पुलोमं[4]पिसुणु णियभवणहु।
कालें जंतें वत्थुपमाणउ[5] वड्ढिउ पुरि तइलोक्कहु राणउ।

घत्ता—हेमच्छविहि भडारहु जं दिट्ठउ [6]तं णेय रहंति ॥
तासु असीइ[7]सरासणइं गणहर तणुपरिमाणु कहंति[8] ॥९॥

१०

एकवीसलक्खइं बालत्तें घल्लियाइं वरिसहं खेलंतें।
पुणु पुज्जिउ पोलोमीकंतें किउ रज्जाहिसेउ गुणवंतें।
रज्जु करंतहु कामरसद्दहं दोचालीसलक्ख गलियद्दहं।
एहउ अवसरु जायउ जइयहुं णाइं कीलोवणि तहिं तइयहुं।
दिट्ठउ तंबिरपल्लवु चूयउ मयणहुयासहु बीयउ हूयउ।
सो णं जालहिं जलइ णिरारिउ विरहीयणु तें ताविउ मारिउ।

भी कलस्वरमें निर्घोष कर रहे हैं, उनके जो सुन्दर स्वर थे वे मानो कामदेवके तीर थे, जो मर्मका भेदन करनेवाले और मनुष्य और देवोंको विदारित करनेवाले थे। जब कामदेवके तीरोंने लोगोंको विदीर्ण कर दिया तो उन्होंने जिनको अपने हृदयमें धारण कर लिया। जिनदेव बालक हैं, तब भी कामदेव आज ही शंकित है, इसी कारण रति अपने स्तनयुगलको नहीं ढकती। कामदेव अपने धनुषकी डोरीकी टंकार करता है, उससे अप्सराकुलमें विकार फैल जाता है। अनेक कल्याणोंसे नियुक्त प्रभुको इन्द्रने श्रेयांस कहा। नगरमें लाकर उसने, उन्हें पुत्रको देखनेसे जिनकी कान्ति विकसित हो गयी है, ऐसी माँ को सौंप दिया। पापरूपी बादलोंके लिए पवन उनको प्रणाम कर इन्द्र अपने विमानमें चला गया। समय बीतनेपर, उपमानसे रहित त्रिलोकके राजा वह नगरमें बड़े हो गये।

घत्ता—आदरणीय उनकी स्वर्णछविको जिसने देखा वह रह नहीं सका। गणधर उनके शरीरका प्रमाण अस्सी धनुष प्रमाण बताते हैं ॥९॥

१०

खेल-खेलमें उनकी बाल्यावस्थाकी इक्कीस लाख वर्ष आयु बीत गयी। फिर देवेन्द्रने उनकी वन्दना की और गुणवान् उसने उनका राज्याभिषेक किया। राज्य करते हुए, कामरससे आर्द्र उनके बयालीस लाख वर्ष बीत गये। जब उनका यह अवसर आया तो स्वामीने क्रीड़ावनमें लाल-लाल पल्लवोंका आम्रवृक्ष इस प्रकार देखा, मानो वह कामरूपी अग्निका बीज हो। वह मानो ज्वालाओंसे जल रहा था, इसी कारण उसने विरहीजनको सन्तप्त और आहत

२. A किल ते; P ते किल। ३. A °णिइविय°। ४. P पुलोमविसुणु। ५. AP वत्थुवमाणउ; T वत्थुअम्मोणउ। ६. P तं तें अरहंतें। ७. P असीसरासणइं। ८. P कहंतें।

१०. १. AP पणवंतें। २. AP णाइं कीलंतें वणि तइयहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुणु कोइलु कलसद्दें गज्जइ णं वसंतपहु पडहउ वज्जइ ।
रुणुरुणंतु अप्पाणु ण चेयइ महुयरु महु पिएँवि णं गायइ ।
ता परमेसरु मणि मीमंसइ अम्हारउं वणु अण्णु जि दीसइ ।
कालें कंटइयउं अंकुरियउं पल्लवियउं कुसुमोलिहिं भरियउं ।
फलिउं फलावलीहिं णं पणवइ एही सयलहु लोयहु परिणइ ।
परिणमंतु जगु णिविसु ण थक्कइ परिणामहु जडु जीउ ण चुक्कइ ।

घत्ता—जगु परिणामें दूसियउ णिप्परिणाम सिद्ध परमेट्ठी ॥
हो हो अथिरेणेण महुं णिच्चल तेत्थु णिरुंभिवि दिट्ठी ॥१०॥

११

ता संपत्त तेत्थु सुरवरगुरु तेहिं तुरिउ पडिबोहिउ जगगुरु ।
सो आहंडलु तं सुरमंडलु तं अच्छरउलु मणिमयकुंडलु ।
आयउं पुणु वि ण्हवणु किउं देवहु णिट्ठियचरियावरणविलेवहु ।
विमलें सिवियाजाणें णिग्गउ णाहु मणोहरु णंदणवणु गउ ।
फग्गुणि कसणि एयारसिदियहइ दियहाहिवि अवरासासंगइ ।
सवणरिक्खि उवसमियकसायउ भूवइ मुक्कभूइभूभायउ ।
उववासद्दुवेण रिसि जायउ सिद्धत्थउ पुरु भिक्खहि आयउ ।
णंदणरिंदें एंतु पडिच्छिउ सुद्धपिंडु तहु तेण पयच्छिउ ।

किया था। फिर कोयल कलकल शब्दमें गरज उठती है मानो वसन्त राजा अपना नगाड़ा बजा रहे हैं। भ्रमर गुनगुन करता हुआ, स्वयं नहीं चेतता, मानो वह मधु पीकर गा रहा है, तब परमेश्वर अपने मनमें विचार करते हैं कि हमारा वन तो आज दूसरा दिखाई दे रहा है। यह कालसे कंटकित और अंकुरित पल्लवित और पुष्पपंक्तियोंसे भरा हुआ है और फलकी कतारोंसे लदा हुआ मानो झुकता है, यही समस्त लोककी परिणति है। परिणमन करता हुआ यह विश्व एक क्षणके लिए नहीं रुकता और परिणामसे यह जड़ जीव एक पलके लिए नहीं चूकता।

घत्ता—यह विश्व परिणामसे दूषित हैं केवल सिद्ध परमेष्ठी परिणामसे रहित हैं। यह अस्थिरता रहे रहे, मैं अपनी निश्चल दृष्टिको वहीं अवरुद्ध करूँगा ॥१०॥

११

तब इतने लोकान्तिक देव वहाँ आ गये। उन्होंने तुरन्त वहाँ विश्वगुरुको सम्बोधित किया। वही इन्द्र, वह सुरसमूह, वह मणिमय कुण्डलवाला अप्सरा कुल, वहाँ आया। चारित्रावरण कर्मके अवलेपको नष्ट करनेवाले देवका फिर अभिषेक किया गया। पवित्र शिविकायानमें बैठकर देव निकले और स्वामी सुन्दर नन्दन वनमें पहुँचे। फागुन माहके कृष्णपक्षकी एकादशीके दिन, सूर्यके पश्चिम दिशामें प्रवेश करनेपर श्रवण नक्षत्रमें, जो ऐश्वर्य और धरतीके भावसे मुक्त हैं, ऐसे वह उपशान्तकषाय राजा दो उपवासोंके साथ मुनि हो गये। वह सिद्धार्थ नगरमें आहारके लिये गये।

३. AP पिएइ। ४. P कंटइयउं कुरियउं। ५. A परिणवंतु। ६. AP परमेट्ठिहि। ७. A होहो।
८. A णिच्चल तेसु णिरुंभिवि दिट्ठिहि; P णिच्चलत्तेसु णिरुंभिवि दिट्ठिहिं।
११. १. A °वरणु। २. AP विमलि। ३. A भूयई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुइ वरिसइं विहरेप्पिणु महियलि पुव्विल्लइ वणि तुंबुरुतरुतलि ।
माहहु मासहु णिच्चंदइ दिणि छेइल्लइ सवणइ मयलंछणि ।
अवरण्हइ तिरत्तसंजुत्तहु अचलियपत्तलपविउलणेत्तहु ।
घत्ता—संभूयउं केवलु तहु विमलु णाणु तेण[4] तेलोक्कु वि दिट्ठु ॥
पत्तउ सामरु अमरवइ जिणु थुणंतु महु भावइ[5] धिट्ठु ॥११॥

१२

तुहुं जि देउ तुह णवइ पुरंदरु तुहुं थिरु तुह पीढुल्लउ मंदरु[1] ।
तुहुं तवुग्गु[2] तुह बीहइ दिणयरु कंतिवंतु तुहुं तुह ससि किंकरु ।
तुहुं गहीरु वरुणेणाणंदिउ तुहुं अग्गिहणग्गिहि धणएं वंदिउ ।
तुहुं रयतरुसिहि सिहिणा सेविउ तुहुं जि मंति[3] मंतीसहिं भाविउ ।
तुह पायग्गहिं वाउ विलग्गउ तो वि ण[4] तुहुं पहु वाएं भग्गउ ।
तुहुं जमपासवसेण ण बद्धउ जमु तुह सेवाविहिपडिबद्धउ ।
तुहुं जि कालु कालहु कालुत्तरु तुहुं विवाइ वाइहिं दिण्णुत्तरु ।
सव्वु वि जाणसि पेच्छसि जेण जि तुहुं जि सव्वु सव्वाहिउ तेण जि ।
घत्ता—अट्ठपाडिहेरयसहिउ अट्ठमहाधयपंतिसमेउ ॥
समवसरणि थिउ परमजिणु कहइ समत्थ[5]पयत्थहं भेउ ॥१२॥

नन्द राजाने उन्हें आते हुए देखा, उसने उन्हें विशुद्ध आहार दिया, दो वर्ष तक धरतीपर विहार कर पूर्वोक्त वनमें तुम्बरु वृक्षके नीचे माघ कृष्ण अमावास्याके दिन, अपराह्णमें श्रवण नक्षत्रमें तीन रातके उपवाससे युक्त एवं अविचलित पलक विशाल नेत्रवाले ।

घत्ता—उन्हें विमल केवलज्ञान उत्पन्न हो गया । उससे उन्होंने तीनों लोकोंको देख लिया । इन्द्र देवों सहित आया । जिनकी स्तुति करता हुआ वह ढीठ मुझे (कवि को) अच्छा लगता है ॥११॥

१२

देव तुम्हीं हो, तुम्हें इन्द्र नमस्कार करता है, तुम स्थिर हो, तुम्हारा पीठ मन्दराचल है । तुम तपसे उग्र हो, तुमसे दिनकर डरता है, तुम कान्तिवान् हो, चन्द्रमा तुम्हारा किंकर है । वरुणके द्वारा आनन्दित तुम वरुण हो, तुम पापरूपी वृक्षोंके लिए अग्नि और अग्निके द्वारा सेवित हो, तुम्हीं बृहस्पति हो, और बृहस्पतियोंके द्वारा भावित हो, वायु तुम्हारे पैरोंसे लगी हुई है, हे देव तब भी तुम वाए (वायु और वाद) से भग्न नहीं होते; तुम यमरूपी पाशसे आबद्ध नहीं हो, यम तुम्हारी सेवाविधिके लिए प्रतिबद्ध है, तुम्हीं कालके लिए काल हो और कालसे श्रेष्ठ हो, वादियोंके लिए उत्तर देनेवाले तुम विवादी हो, जिस कारणसे तुम सबको जानते और देखते हो, इसी कारण तुम सब, और सबसे अधिक हो ।

घत्ता—आठ प्रातिहार्योंसे युक्त आठ महाध्वजपंक्तियोंसे सहित, समवसरणमें स्थित परम जिन समस्त पदार्थोंके भेदोंका कथन करते हैं ॥१२॥

४. A omits तेण । ५. A विट्ठु ।
१२. १. P मंदिरु । २. A तवग्गु; P तवंगु । ३. AP मंतु । ४. AP पहु तुहुं । ५. A समत्थु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३

कुंथुपमुह पयणावियसुरवर तासु सट्ठिसत्तारह गणहर ।
रिसिहिं विणासियघोराणंगहं तेरहसयइं धरियपुव्वंगहं ।
अडदालइं जि सहासइं भिक्खुहुं दुसईए संजुत्तइं सिक्खुहुं ।
छहसहास अवहीपरियाणहं तेत्तिय भणु मणपज्जवणाणहं ।
ते च्चिय पंचसयाहिय संतहं केवलचक्खुणिहालणवंतहं ।
एयारहसहास वेइकिरियहं पंच वि वाइहिं बहुणयभरियहं ।
पयडियदुम्महवम्महमारिहिं संजमचारिणीहिं वरणारिहिं ।
एक्कु लक्खु वीसेव सहासइं दो लक्खइं सावयहं पयासइ ।
चउलक्खइं देसव्वअधारिहिं माणवमाणिणीहिं मणहारिहिं ।
अमर असंख तिरिक्ख णिरिक्खिय सहुं संखाइ जिणिंदें अक्खिय ।
एक्कवीस तहिं वरिसहुं लक्खइं बिहिं वरिसहिं विरहियइं ससोक्खइं ।
सुरवइरइयइ जणसुहसूइइ महि विहरिवि अरहंतविहूइइ ।

घत्ता—गिरिसंमेयहु मेहलहि लंबियकरयलु एक्कु जि मासु ।
जिह सो तिह तणु परिहरिवि अवरु वि संठिउ मुणिहिं सहासु ॥१३॥

१४

जीवेप्पिणु कयतिहुयणहरिसहं जिणु चउरासीलक्खइं वरिसहं ।
पहु सावणपुण्णिवहि जणिट्ठहि चंदि परिट्ठिइ गंपि धणिट्ठहि ।

१३

जो सुरवरोंके द्वारा प्रणम्य हैं ऐसे कुंथु प्रमुख, उनके सत्तर गणधर थे, घोर कामदेवका नाश करनेवाले पूर्वांगोंको धारण करनेवाले तेरह सौ मुनि थे, अड़तालीस हजार दो सौ शिक्षक मुनि थे, अवधिज्ञानी छह हजार थे और इतने ही अर्थात् छह हजार मनःपर्ययज्ञानी थे, केवलज्ञानरूपी आँखसे देखनेवाले केवलज्ञानी छह हजार पाँच सौ थे। विक्रिया-ऋद्धिको धारण करनेवाले ग्यारह हजार मुनि थे। पाँच हजार बहुनयधारक वादी मुनि थे। प्रगट दुर्मद कामदेवका नाश करनेवाली संयमधारण करनेवाली आर्यिकाएँ एक लाख बीस हजार थीं। दो लाख श्रावक थे। देशव्रत धारण करनेवाली मनुष्योंके द्वारा मान्य सुन्दर श्राविकाएँ चार लाख थीं। देव असंख्य थे और तिर्यंच संख्यात थे, ऐसा जिनेन्द्रने कथन किया है। दो वर्ष कम एक लाख इक्कीस वर्ष तक सुखपूर्वक, इन्द्रके द्वारा रचित जनके शुभ की सूचक अरहन्त की विभूतिके साथ धरतीपर विचरण कर।

घत्ता—सम्मेदशिखरके कटिबन्धपर हाथ लम्बे कर एक माहके लिए जिस प्रकार वह, उसी प्रकार दूसरे एक हजार मुनि अपने शरीरका परित्याग कर प्रतिमायोगमें स्थित हो गये ॥१३॥

१४

त्रिभुवनको हर्ष उत्पन्न करनेवाले चौरासी लाख वर्ष तक जीवित रहकर, श्रेयांस जिन, श्रावण शुक्ला की लोगोंको आनन्द देनेवाली पूर्णिमाके दिन चन्द्रके धनिष्ठा नक्षत्रमें स्थित होनेपर,

---

१३. १. A अडदालसहासइं भिक्खुयाहं । २. A दुइसइसंजुत्तइं । ३. AP °परिमाणहं । ४. A केवलिचक्खु । ५. A वेकिरियहं; P विकिरियहं । ६. A °धम्महं वम्महं° । ७. AP संजमधारिणीहिं । ८. A समक्खइं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिव्वुउ[1] कम्मपडलपरिमुक्कउ अट्ठमु धरणिवीढु खणि ढुक्कउ।
देहपुज्ज किय[2] दससयणेत्तें करपंजलिघल्लियसयवत्तें।
कलु विरसंतिहिं भंभाभेरिहिं णच्चंतिहिं गोरिहिं गंधारिहि।
उव्वसि[3]रंभतिलोत्तिमणारिहिं सुरकामिणिहिं विइण्णवियारहिं।
तुंबुरुणारयझुणिझंकारहिं तेंहिं[4] पणवंतहिं जलणकुमारहिं।
णाणा[5]विहपुप्फाइं व घित्तइं सीयलचंदणजलेण व सित्तइं।
दिण्णइं दीवधूव अपमाणइं[6] णीलीकयअमरंगणजाणहिं।
दीवुं[7] धूमु जो गयणि व लग्गउ णाइं हुयासकलंकु विणिग्गउ।
जिण[8]तणुसेवइ पंकु पणासइ सच्चउं भासइ माय सरासइ।
णविवि णिसिद्धिं[9] भत्तिअणुराएं जंतें जंपिउ सुरसंघाएं।

घत्ता—भरहि पणट्ठउ उद्धरिउ विणिवारेप्पिणु कुसमयकम्मु ॥
सेयंसें बहुसेययरु कुंदपुप्फदंतें जिणधम्मु ॥१४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकव्वे सेयंसणिव्वाणगमणं णाम एकूणपण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥४९॥

॥ [10] सेयंसजिणचरियं समत्तं ॥

कर्मपटलसे परिमुक्त वह निवृत्त हो गये। एक क्षणमें आठवीं भूमि पर जा पहुँचे। अपने हाथोंसे जिसने शतपत्र फेंके हैं, ऐसे इन्द्रने उनकी देह पूजा की। सरस बजते हुए, भंभा भेरी आदि वाद्यों के साथ, नाचती हुई गोरी गांधारी उर्वशी रंभा तिलोत्तमा आदि स्त्रियोंको विकार-उत्पन्न करनेवाली कामिनियों, तुम्बर और नारद की ध्वनियोंकी झंकारोंके साथ, वहाँ प्रणाम करते हुए अग्निकुमार देवोंके द्वारा पुष्पांजलियाँ डाली गयीं और शीतल चन्दनसे सिक्त, आकाशके प्रांगणमें स्थित यानोंको नीला बनानेवाली दीप-धूप दी गयी। दीपका धुँआ आकाशमें इस प्रकार लग गया, जैसा आगका कलंक निकल गया हो। माता सरस्वती ठीक ही कहती हैं कि जिनवरके शरीरकी सेवा करनेसे पंक नष्ट हो जाता है, भक्तिके अनुरागसे मनुष्यकी सिद्धिको प्रणाम कर, जाते हुए सुरसमूहने उक्त बात कही।

घत्ता—खोटे सिद्धान्त और आचरणका निवारण कर, भरतक्षेत्रमें नष्टप्राय बहुश्रेयस्कर जिनधर्मका कुन्द पुष्पके समान दाँतोंवाले श्रेयांस जिनने उद्धार किया ॥१४॥

इस प्रकार त्रसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त
द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का श्रेयांस
निर्वाण-गमन नामक उनचासवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४९॥

---

१४. १. A णिव्वुइ° । २. P किय । ३. A उव्वसरंभ° । ४. AP सिहि संधुक्किय । ५. AP omit this line and the following । ६. AP add after this : घित्तइं चंदणवंदणकट्ठइं; जलियइं णाहहु अंगइं दिट्ठइं । ७. AP णीलु धूमु गयणंगणि लग्गउ । ८. A P जिणु° तणु। ९. A णिसिहि । १०. AP omit this line ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ५०

तहिं सेयंसहु तित्थि दढ[1]भुयबलदप्पिट्ठहं ॥
णिसुणहि सेणियराय रणु हयकंठतिविट्ठहं ॥ ध्रुवकं ॥

१

इह जंबूदीवि वरभरहखेत्ति | चवलो[2]लिचंदणामोयवंति ।
मयमत्तमहिसजुज्झ[3]वियमद्दि | गज्जंतगामगोवालसद्दि ।
गोउलपयधाराधायपहिइ | मंथा[4]णयमंथियथद्धदहिइ ।
पिक्कंतधण्णसंछण्णसीमि | णिरु णियड[5]णियडसंकिण्णगामि ।

सन्धि ५०

"हे श्रेणिकराज, तुम श्री श्रेयांसके तीर्थंकालमें अपने दृढ़ बाहुबलसे गर्वीले अश्वग्रीव और त्रिपृष्ठका युद्ध सुनो।"

१

जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रमें मगध देश है जो चंचल भ्रमरोंके समान चन्दनवृक्षोंके आमोदसे युक्त है, जो मदमत्त भैंसोंके युद्धसे विमर्दित है, जो गरजते हुए ग्रामगोपालोंके शब्दोंसे युक्त है, जहाँ गोकुलोंकी दुग्धधारासे पथिकजन सन्तुष्ट हैं, जिसमें मथानोसे गाढ़ा दही मथा जा रहा है; जिसकी सीमाएँ पके हुए धान्योंसे आच्छादित हैं, जहाँ गाँव पास-पास बसे हुए हैं, जिसमें जो रखानेवाली

Mss. A and P have the following stanza at the beginning of this Saṃdhi :—

भास्वानेककलावतोऽस्य च भवेद्यन्नाम तन्मङ्गलं
सर्वस्यापि गुरुर्बुधः कविरयं चक्रे क्रयं च क्रमः ।
राहुः केतुरयं द्विषामिति दधत्साम्यं ग्रहाणां प्रभुः
संप्रत्योदयमातनोति भरतः सर्वस्य तेजोधिकः ॥ १ ॥

K does not give it anywhere. In addition, P has also सया सन्तो बेसो भूसणं सुद्धसीलं etc. which in A is found at the beginning of IL for which see page 130. In addition, P has जगं रम्मं हम्मं दीवओ चन्दबिम्बं for which see page 165 of Vol. I. In addition, P has the following stanza :—

दीनानाथधनं सदाबहुजनं प्रोत्फुल्लवल्लीवनं
मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम् ।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियं
क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः ॥ १ ॥

A gives this stanza at the beginning of LII. K does not give it anywhere ।

१. १. AP दिढभुय° । २. AP चललवलि° । ३. AP °जुज्झणविमद्दि । ४. AP मंथाणमंथिह थडद्दहिइ । ५. A णियलणियल° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जववालिणिरवमोहियकुरंगि णवगंधसालिणिवडियविहंगि ।
सरिसरवरजलकल्लोलमालि सयदलणिलीणभसलउलणीलि ।
वसुमइमहिलासोहाणिवेसि कयदुग्गहणिग्गहि मगहदेसि ।
रायगिहणयरि पहु विस्सभूइ तहु लहुयउ भाइ विसाहभूइ ।
पढमहु जइणी मृगणयण भज्ज बीयहु लक्खण णामें मणोज्ज ।
पइरमियइ जइणिइ विस्सणंदि जणियउ लक्खणइ विसाहणंदि ।
सुय जाया बेण्णि वि णवजुवाण अच्छंति जाम सुहुं भुंजमाण ।
ता राएं ससियरधवलदेहु गयणयलि पलोइउ सरयमेहु ।

घत्ता—णं खलमित्तसणेहु[12] सो सहसत्ति विलीणउ ।।
डहु संसारु भणंतु चित्ति[13] चवक्किउ राणउ ।।१।।

२

जंपइ पहु जिणगुण संभरंतु सत्तंगरज्जसिरि परिहरंतु ।
जिह[1] णट्ठउ पवणें[2] एहु मेहु णासेसइ तिह कालेण देहु ।
होसंति सिढिलें[3] संधिप्पएस होसंति हंसहिमवण्ण केस ।
होसंति णयण सुहिरूवभंत होसंति हत्थ णित्थामवंत ।
होसंति सुणिव्ववसाय पाय मुहकुहरहु णिग्गेसइ[4] ण वाय ।

(कृषक बालिका) के शब्दसे हरिण मुग्ध हैं, जिसमें नवगन्धसे युक्त धान्योंपर पक्षी गिर रहे हैं, जो नदियों और सरोवरोंकी लहरोंसे युक्त है, जो कमलोंमें व्याप्त भ्रमरकुलसे श्याम है, जो वसुमतीरूपी महिलाकी शोभाका घर है, तथा जो दुष्टोंका निग्रह करनेवाला है, ऐसे मगध देशको राजगृह नगरीमें राजा विश्वभूति और उसका छोटा भाई विशाखभूति हैं। पहले की कमलनयनी जैनी पत्नी थी। दूसरे की लक्ष्मणा नामकी सुन्दर स्त्री थी। पतिके द्वारा रमण की गयी पहली जैनी पत्नीने विश्वनन्दीको जन्म दिया, जब कि दूसरी लक्ष्मणाने विशाखनन्दीको। दोनोंके पुत्र नवयुवक हो गये। वे सुखपूर्वक भोग करते हुए रह रहे थे कि राजाने आकाशतलमें चन्द्रमाके समान सफेद शरीर शरद् मेघ देखा।

घत्ता—वह शीघ्र ही इस प्रकार विलीन हो गया, मानो खलजनका स्नेह हो, इस संसारको आग लगे—यह कहता हुआ राजा अपने मनमें चौंक गया ।।१।।

२

जिन भगवान्के गुणोंका स्मरण करता हुआ और सप्तांग राज्यश्रीका परिहार करता हुआ वह कहता है कि "जिस प्रकार पवनसे यह मेघ नष्ट हो गया, उसी प्रकार समयके साथ यह शरीर नाशको प्राप्त होगा। जोड़ोंके प्रदेश ढीले हो जायेंगे और बाल हंस तथा हिमकी तरह सफेद हो जायेंगे। नेत्र सुहृदोंके रूपको देखनेमें भ्रान्ति करेंगे। हाथ शक्तिसे रहित हो जायेंगे। पैर व्यवसायसे रहित होंगे। मुखरूपी कुहरसे वाणी नहीं निकलेगी। हे भाई, तुम राज करो, मैंने (यह) तुम्हें

६. A भसलोलिणीलि। ७. AP मिगणयण। ८. P भज्जा। ९. P मणोज्जा। १०. A संचियधवलदेहु। ११. A पलोयउ। १२. P °सिणेहु। १३. A चित्त चमक्किउ।
२. १. AP जिम। २. P पमणें। ३. A सिथिलि। ४. A णिगेसइ।

तुहुं करहि रज्जु मइं दिण्णु भाय   रक्खेज्जसु णियकुलकित्तिछाय ।
ता थिउ संताणि विसाहभूइ   णिग्गेवि गउ काणणु विस्सभूइ ।
महि विहवसारु जरतणु गणेवि   जोईसरु सिरिहरु गुरु थुणेवि ।
सहुं भव्वणरिंदहं तिहिं सएहिं   थिउ अप्पउ महिवि महव्वएहिं ।
एत्तहि विसाहभूई सुराउ   सो विस्सणंदि जुवराउ जाउ ।

घत्ता—णंदणवणि कीलंतु हणइ मुणालें घरिणिउ ॥
पसरियदीहकरग्गु मत्तउ णं करि करिणिउ ॥२॥

३

काहि वि मयरंदें करइ तिलउ   काहि वि वेल्लीहरि देइ णिलउ ।
क वि सिंचियें जलगंडूसएण   क वि जोयइ णवजोव्वणमएण ।
काहि वि कामु व कुसुमोहु घिवइ   क वि पणयकुविय अणुणंतु णवइ ।
काहि वि करलीलाकमलु हरइ   क वि लेवि सरोवरणीरि तरइ ।
छाइयससिसूरमऊहमालि   काहि वि लिहक्कइ णीलइ तमालि ।
दीसइ काइ वि कररुह फुरंतु   काइ वि करि धरियउ दर हसंतु ।
पारोहइ क वि दोलायमाण   अवलोइय वडजक्खिणिसमाण ।
क वि बंधिवि मोत्तियदामएण   हय कुवलएण कयकामएण ।
साहाररसिल्लउं कणयवत्तु   काहि वि तरुपल्लवु दिण्णु रत्तु ।

दिया, तुम अपने कुलकी कीर्तिछाया रखना।" विशाखभूति उसको राज्य परम्परामें बैठ गया। विश्वभूति घरसे निकलकर वनमें चला गया। धरती और वैभव श्रेष्ठको जीर्ण तृणकी तरह समझ कर वह योगीश्वर श्रीधर गुरुकी स्तुति कर सैकड़ों भव्य राजाओंके साथ अपनेको महाव्रतोंसे विभूषित कर स्थित हो गया। इधर विशाखभूति सुन्दर राजा हो गया तथा विश्वनन्दी युवराज हो गया।"

घत्ता—नन्दनवनमें क्रीड़ा करते हुए कभी वह पत्नीको मृणालसे मारता है, मानो मदमत्त गज अपनी फैली हुई सूँड़से हथिनीको मार रहा हो ॥२॥

३

कभी मकरन्दसे तिलक करता, कभी लतागृहमें उसे बैठाता, कभी जलके कुल्लेसे उसे सींचता, कभी नवयौवनके मदसे उसे देखता, कभी कामके समान कुसुमके फूलोंको उसपर डालता, कभी प्रणयसे कुपित उसे मनाता हुआ नमस्कार करता। कभी लीला कमलका हरण करता, और कभी उसे लेकर सरोवरके तीरको पार करता। कभी, जिसने सूर्य और चन्द्रमाकी किरणोंको आच्छादित कर लिया है ऐसे नीले तमाल वनमें छिप जाता है, कभी उसकी चमकती हुई अँगुलियाँ दिखाई देती हैं, कभी हाथसे पकड़कर कुछ मुसकराता है, कभी वह वटके प्रारोहों पर झूलती है, और वटवृक्षकी यक्षिणीके समान दिखाई देती है, कभी काम कर लेनेके बाद, मोतीकी मालासे बाँधकर कुवलयसे आहत करता है। कभी सहकारके रससे आर्द्र कमलपत्र और कभी लाल वृक्षपत्र देता है।

५. A णिग्गवि । ६. A ठिउ । ७. A रज्जेहि विसाहभूई सराउ; P एत्तहि विसाहभूई सुराउ । ८. P हण्णइ । ९. AP करि णं ।
३. १. A काहि मि । २. AP सिंचइ । ३. AP जोइय । ४. A करि लीला° । ५. AP लेइ ।

घत्ता—णं वणि णलिणि दुरेहु अच्छइ णिच्चँ पइट्ठउ ॥
इय सो तेत्थु रवंतु लक्खणजाएं दिट्ठउ ॥३॥

४

तओ तं णियच्छेवि राएंगएणं वणुस्साहिलासं गहीरं गएणं ।
घरं गंपि सो गोमिणीमाणणेणं पिऊ पत्थिओ पुण्णचंदाणणेणं ।
सया चायसंतोसियाणेयवंदी जहिं कीलए णिच्चसो विस्सणंदी ।
वणं देहि तं मज्झ रायाहिराया महामंतिसेणावईवंदपाया ।
ण देमि त्ति मा जंप णिब्भिण्णकण्णं अहं देव गच्छामि देसंतमण्णं ।
णरिंदेण उत्तं वणं देमि णूणं तुमं जाहि मा पुत्त उव्विग्गठाणं ।
दुमंते रमंतो मयच्छीण मारो पुणो तेण कोक्काविओ सो कुमारो ।
खणेणेय पत्तो समित्तो णवंतो पिउव्वेण संबोहिओ णायवंतो ।
महं भाउणा णेहवासेण दिण्णं तुमं पत्थिवो तुज्झ रज्जं रवण्णं ।
कुलीणा तुमं चेय मण्णंति सामिं तुमं थाहि सीहासणे भुंज भूमिं ।
अहं जामि पच्चंतवासाइं घेत्तुं बलुद्दामथामें रिऊ पुत्त हंतुं ।
तओ जंपियं तेण तं मज्झ पुज्जो तुमं देव तायाउ आराहणिज्जो ।
थिराणं कराणं पयासेमि सत्तिं अहं जामि गेण्हामि कूरारिवित्तिं ।

घत्ता—मानो वनमें कमलिनी और भ्रमर नित्य रूपसे प्रवेश करके स्थित हों । इस प्रकार रमण करते हुए उन्हें लक्ष्मणाके पुत्र विशाखनन्दीने देखा ॥३॥

४

उस समय उस राजपुत्रको देखकर उसके मनमें वनकी गम्भीर अभिलाषा उत्पन्न हो गयी । घर जाकर लक्ष्मीके द्वारा मान्य और पूर्ण चन्द्रमाके समान मुखवाले कुमारने अपने पितासे प्रार्थना की, "जिसने अपने त्यागसे अनेक चारणोंको सन्तुष्ट किया है, ऐसा विश्वनन्दी जहाँ नित्य क्रीड़ा करता है, महामन्त्री और सेनापतिके द्वारा वन्दनीय चरण हे राजाधिराज, वह उपवन मुझे दीजिए, 'मैं नहीं देता हूँ', कानोंको भेदन करनेवाला ऐसा मत कहो (नहीं तो) हे देव मैं देशान्तर चला जाऊँगा ।" राजाने कहा, "मैं निश्चित रूपसे वन दूँगा । हे पुत्र, तुम खेद जनक स्थानको मत जाओ ।" फिर उसने, मृगनयनियोंके लिए कामदेवके समान, क्रीड़ा करते हुए कुमारको खोटे विचार से बुलाया । एक क्षणमें अपने मित्रके साथ उपस्थित प्रणाम करते हुए न्यायवान उस पुत्रसे चाचाने कहा, "भाईके द्वारा स्नेहके कारण दिया गया यह सुन्दर राज्य तुम्हारा है । तुम राजा हो । कुलीन लोग तुम्हींको राजा मानते हैं । तुम सिंहासनपर बैठो और धरतीका भोग करो । मैं सीमान्तके निवासियोंको पकड़नेके लिए और सेनाकी उद्दाम शक्तिसे, हे पुत्र, शत्रुका नाश करनेके लिए जाता हूँ ।" तब उस कुमारने उससे कहा, "तुम मेरे पूज्य हो । हे देव, तुम तातके द्वारा आराधनीय थे । मैं अपने स्थिर हाथोंकी शक्ति प्रकाशित करूँगा, मैं जाता हूँ और क्रूर राजाओंकी वृत्ति ग्रहण करता हूँ ।"

६. A णलिणदुरेहु । ७. P णिच्चु ।

४. १. A माणिणीमाणणेणं । २. A वणे देहि । ३. A वरं देवि णूणं । ४. AP सिंहासणे । ५. A रिउं पुत्त ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—एंव भणेवि कुमारु अप्पउं विणएं भूसिवि ॥
गउ पच्चंतनृवाहं उवरि जांव आरूसिवि ॥४॥

५

ता पहुणा पणयविमद्दणासु दिण्णउं णंदणवणु णंदणासु ।
पइसरहुं ण देंतु कयंतलीलु तें मारिउ सुहिउज्जाणवालु ।
संगाममहोवहिभीममयरु आयण्णिवि पडियाइयउ इयरु ।
दट्ठाहरदंधु रत्तणेत्तु भासइ आरूसिवि जइणिपुत्तु ।
अइसंधिवि महुं वणु लइउं जेंव थिरु एंवहिं भायर थाहि तेंव ।
वीसासिवि किं हम्मइ पसुत्तु किं पित्तिएण ववसिउं अजुत्तु ।
लक्खणहि सूणु भयभावणडिउ तं पेच्छिवि दुट्ठु कविट्ठि चडिउ ।
महिवलयविसट्टणतडयडंतु भज्जंतहिं मूलहिं कडयडंतु ।
विवरंतसप्पचोंभेललंतु उड्डंतहिं पक्खिहिं चलवलंतु ।
उत्तुंगु अहंगु सुदुण्णिरिक्खु उम्मूलिउ रिउणा समउं रुक्खु ।
अच्छोडइ किर महिवीढि जांव णासंतु दिट्ठु पडिवक्खु तांव ।
भडु पवणगमणु मग्गाणुलग्गु धरणासइ चलपसरियकरग्गु ।
घत्ता—पुणरवि दुग्गु भणेवि आसंघिवि थिउ वइरिउ ॥
तेण मुट्ठिघाएण खंभु सिलामउ चूरिउ ॥५॥

घत्ता—कुमार इस प्रकार कहकर और अपनेको विनयसे भूषित कर, जबतक सीमान्त राजाओंपर क्रुद्ध होकर गया ॥४॥

५

तबतक राजाने प्रणयका नाश करनेवाले अपने पुत्रको नन्दनवन दे दिया। नन्दनवनमें प्रवेश नहीं देनेवाले तथा यमके समान लीलावाले सुधी उद्यानपालको उसने मार डाला। (इतनेमें) संग्रामरूपी समुद्रका भयंकर मगर दूसरा (विश्वनन्दी) यह सुनकर वापस आ गया। अपने आधे ओठ चबाता हुआ लाल-लाल आंखोंवाले जैनी पुत्र (विश्वनन्दी) क्रोधमें आकर कहता है कि जिस प्रकार कपट करके तुमने मेरा वन ले लिया है, हे भाई, वैसे ही तुम इस समय स्थिर हो जाओ। विश्वास देकर क्या सोते हुए आदमीको मारना चाहिए, चाचाने यह अनुचित काम कैसे किया? लक्ष्मणाके पुत्रको भयके भावसे कम्पित देखकर वह दुष्ट कपित्थ वृक्षपर चढ़ गया। धरतीवलयके ध्वस्त होनेसे तड़तड़ करता हुआ, टूटती हुई शाखाओंसे कड़कड़ करता हुआ, बिलोंके भीतरके साँपोंकी चोभल (?) (केंचुल) से विलसित, उड़ते हुए पक्षियोंसे चंचल, ऊँचा अखण्ड और अत्यन्त दुर्दर्शनीय वृक्षको उसने शत्रु सहित उखाड़ दिया। जबतक वह उसे धरतीपर पछाड़ता है तबतक उसे शत्रु भागता हुआ दिखाई दिया। वह वीर भी पवनगतिसे उसको पकड़नेकी आशासे हाथमें फैली हुई चंचल तलवार लिये हुए मार्गमें उसका पीछा किया।

घत्ता—फिर भी दुर्ग समझकर, शत्रु उसका (शिलाका) सहारा लेकर बैठ गया। उसने मुट्ठीके आघातसे उस शिलातलको चूर-चूर कर दिया ॥५॥

---

६. AP °णिवाहं ।

५. १. AP देंति । २. A ता मारिउ । ३. AP दट्ठाहरोट्ठु । ४. A अहिसंघिवि । ५. A तडयलंतु । ६. A °चोभल° । ७. A उत्तंग ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६

पुणु दलिइ खंभि परिगलियमाणु वेणु मेल्लिवि हरिणु व धावमाणु ।
णीसासवेयवड्ढियकिलेसु णीसत्थहत्थ[3] णिम्मुक्ककेसु ।
अवलोइवि भाइ पलायमाणु करुणारसि थक्कउ सुहडभाणु ।
पभणइ मा णासहि आउ आउ तहिं अवसरि पत्तउ तहिं जि राउ ।
जुवरायहु कहइ विसाहभूइ लइ लइ सुंदर तेरी विहूइ ।
इहु जाउ जाउ किं आयएण किं कुच्छियपुत्तें जायएण ।
सिलफोडणभुयमाहप्पदप्प अइसंधिओ सि महुं खमहि बप्प ।
जइणिंददिक्ख महुं सरणु अज्जु परिपालहि तुहुं अप्पणउ रज्जु ।

घत्ता—बंधववइरकरीहि णिव्विण्णउ नृवरिद्धिहि ॥
पुत्त पडिच्छहि पट्टु हउं लग्गमि तवसिद्धिहि ॥६॥

७

खग्गें मेहें किं णिज्जलेण तरुणा सरेण किं णिप्फलेण ।
मेहें[1] कामें किं णिद्दवेण मुणिणा कुलेण किं णित्तवेण ।
कव्वें णडेण किं णीरसेण रज्जें भोज्जें किं परवसेण ।
दव्वें भव्वें किं णिव्वएण धम्में राएं किं णिद्दएण ।
तोणें कणिसें किं[2] णिक्कणेण चावें पुरिसें किं णिग्गुणेण ।

६

खम्भेके टूटनेपर, वन छोड़कर गलितमान हरिणके समान दौड़ते हुए, निःश्वासके वेगसे जिसका क्लेश बढ़ रहा है, ऐसे शस्त्ररहित हाथवाले और मुक्तकेश भागते हुए भाईको देखकर वह सुभटसूर्य करुणा रसमें डूब गया। वह कहता है—हे भाई, मत भागो, आओ-आओ। उसी अवसरपर वहाँ राजा आया। विशाखभूति युवराजसे कहता है—"हे सुन्दर, तुम अपना ऐश्वर्य ले लो, यह पुत्र पुत्र क्यों हुआ ? इस कुत्सित पुत्रके होनेसे क्या। शिला फोड़नेवाली-भुजाओंके दर्पवाले हे सुभट, क्षमा करो, तुम्हारे साथ कपट किया। आज मुझे जैन दीक्षा शरण है। तुम अपने राज्यका पालन करो।"

घत्ता—इस प्रकार भाइयोंमें शत्रुता उत्पन्न करानेवाली राजाकी ऋद्धिसे वह विरक्त हो गया। हे पुत्र, मैं तपसिद्धिके मार्गमें लगूँगा ॥६॥

७

बिना पानीके मेघ और खड्गसे क्या ? निष्फल (फल और फलक) से रहित वृक्ष और फलसे क्या ? द्रवण (क्षरण) रहित मेघ और कामसे क्या ? तपसे रहित मुनि अथवा कुलसे क्या ? नीरस काव्य अथवा नटसे क्या ? परवश राज्य अथवा भोजनसे क्या ? निर्व्रय (व्यय और व्रतसे रहित) द्रव्य अथवा भव्यसे क्या ? णिक्कण (अन्न और बाणसे रहित) बल और तरकस-

६. १. A वणु। २. AP णीसासु। ३. AP °हत्थु। ४. A रसथक्कउ। ५. वइरकरीहे णिविण्णउ। ६. AP णिवरिद्धिहि। ७. K हहउं।
७. १. A पेम्में; P पेमें। २. P omits किं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हउं णिग्गुणु अवरु वि मज्झु तणउ   कवडेण जेहिं[3] तुह भग्गु पणउ ।
वियसियपंकयसंणिहँमुहेण   पडिजंपिउं जइणीतणुरुहेण ।
हो जोव्वणेण हो उववणेण   हो परियणेण हो हो धणेण ।
हो पट्टणेण सुहवट्टणेण   हो सीमंतिणिथण[5]घट्टणेण ।
सहुं सयणहिं जहिं संभवइ वइरु   पित्तिय तहिं ण वसमि हउं वि सुइरु ।
महु जणणें दिण्णी तुज्झु पुहइ   जो रुच्चइ सो तुहुं करहि नृवइ[7] ।
मइं पुणु जाएवउं कहिं वि तेत्थु   णिवसंति दियंबर विंझि जेत्थु ।

घत्ता—तं णिसुणिवि राएण जइ वि चित्ति अवहेरिउ ॥
तो वि परायइ कज्जि पुत्तु रज्जि वइसारिउ ॥७॥

८

वइसणइ[1] वइट्ठु विसाहणंदि   सविसाहभूइ गउ विस्सणंदि ।
संभूइ सूरि पणवेवि[2] पवित्तु   दोहिं वि पडिवण्णउं रिसिचरित्तु ।
चिरु कालु चरेप्पिणु चारु चरणु   किउ पित्तिएण संणासमरणु ।
उप्पण्णु महासुक्काहिहाणि   मणिमयविमाणि धयधुव्वमाणि ।
सहभूयभूरिभूसाविहाणि   सोलहसमुद्दजीवियपमाणि ।
परमंडलवइवाहिणिहि छइउ   एत्तहि वि रायगिहणयरु लइउ ।

से क्या ? निर्गुण (गुण और डोरीसे रहित) चाप (धनुष) और पुरुषसे क्या ? एक तो मैं निर्गुण हूँ, दूसरे कपटके कारण मेरा स्नेह तुमसे भंग हो गया है। तब कमलके समान, जिसका मुखकमल खिला हुआ है, ऐसे उस जैनीपुत्रने प्रत्युत्तर दिया, "यौवन रहे, उपवन रहे, परिजन रहे, धन रहे, नगर रहे, सुखवर्तन रहे, सीमन्तिनियोंके स्तनोंका संघर्ष रहे कि जिससे स्वजनोंके साथ वैर उत्पन्न होता है, हे चाचा, मैं वहाँ अधिक समय नहीं रहूँगा। मेरे पिताने तुम्हें धरती प्रदान की है, तुम्हें जो अच्छा लगे तुम उसे करो, मैं तो अब वहीं जाऊँगा कि जहाँ विन्ध्याचलमें दिगम्बर मुनि निवास करते हैं।

घत्ता—यह सुनकर राजाने यद्यपि अपने मनमें इसकी उपेक्षा की तो भी कार्य आ पड़नेपर उसने पुत्रको राज्यमें बैठा दिया ॥७॥

८

विशाखनन्दी राज्यमें बैठा। विश्वनन्दी विशाखभूति सहित चला गया। सम्भूति मुनिको प्रणाम कर दोनोंने मुनिचरित ग्रहण कर लिया। बहुत समय तक सुन्दर चरित्रका पालन कर चाचाने संन्यासमरण किया। वह ध्वजोंसे कम्पित महाशुक्र नामक मणिमय विमानमें उत्पन्न हुआ। अनेक भूषा-विधान उसे साथ-साथ उत्पन्न हुए। उसकी आयुका प्रमाण सोलह सागर पर्यन्त था। शत्रुमण्डलके राजाकी सेनाके द्वारा आच्छादित राजगृह नगर भी यहाँ ले लिया गया।

---

३. A कवडेण जेण। ४. A °संमुहमुहेण। ५. P थणथडढ्णेण। ६. A महु सयणहिं जं संभवइ वइरु। ७. AP णिवइ।

८. १. A वइसणे; P वइसेणइ। २. A पणवेवि चित्तु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

लक्खणणंदणु[3] हयसिरिविलासु थिउ महुरहिं जाइवि कयणिवासु ।
अणवरयबुद्धिसंधियमणेण जीवइ कासु वि मंतित्तणेण ।
घत्ता—एत्थु ण किज्जइ दप्पु लच्छि ण कासु वि सासय[4] ॥
जे गय गयखंधेहिं ते पुणु[5] पायहिं गय[6] ॥८॥

९

मुणि विस्सणंदि ता तहिं जि कालि मज्झण्हवेलि खरकिरणजालि ।
कयपक्खमासदीहोववासु कंकालसेसु गयरुहिरमासु ।
तं पुरवरु सो चरियहि पइट्ठु अहिणवपसूयगिट्ठिइ णिहट्ठु[1] ।
णिट्ठाणिट्ठिउ जइवरवरिट्ठु णिवडंतु तेण पिसुणेण दिट्ठु ।
वेसासउहयलि परिट्ठिएण बहुजम्मणमरणुक्कंठिएण ।
उवहसिउ साहु पत्थिवचरेण पइं रुक्खें[2] खंभ भग्गा करेण ।
चिरु एंवहिं गाइविहट्टियंगु पडिओ सि विहंडियमाणसिंगु ।
णिग्गुण णिग्घिण दुज्जण सगाव खद्धो सि मज्झ पावेण पाव ।
घत्ता—तं णिसुणिवि सवणेणं[3] बद्धउं रोसणियाणउं ।
आगामिणि भवि तुज्झु हसियहु करमि समाणउं ॥९॥

नष्ट हो चुका है श्रीविलास जिसका ऐसा लक्ष्मणाका पुत्र मथुरामें घर बनाकर रहने लगा। जिसमें अनवरत बुद्धिके सन्धानमें मन रहता है, ऐसा किसीका मन्त्रित्व करते हुए वह जीवित रहता है।

घत्ता—इस संसारमें घमण्ड नहीं करना चाहिए क्योंकि लक्ष्मी किसीके पास शाश्वत नहीं रहती। जो कभी हाथीके कन्धों पर चढ़ते हैं, वे फिर पैरों चलते हैं ॥८॥

९

जिन्होंने एक पखवाड़ेका लम्बा उपवास किया है, जो कंकालशेष हैं, जिनका रुधिर और मांस जा चुका है ऐसे मुनि विश्वनन्दी, उसी समय सूर्यकी प्रखर किरणोंसे युक्त मध्याह्न वेलामें उस नगरमें चर्याके लिए प्रविष्ट हुए। उन्हें नयी प्रसूतवती गायने गिरा दिया। तपस्यासे क्षीण उन मुनिवरको वेश्याके सौधतलपर बैठे हुए उस दुष्टने गिरते हुए देखा। अनेक जन्म और मरणोंके लिए उत्सुक उसने साधुका उपहास किया कि भूतकालमें राजाके रूपमें तुमने हाथसे वृक्ष और खम्भोंको नष्ट किया था। इस समय गायके द्वारा विखण्डित शरीर और खण्डित गर्वशिखर तुम पड़े हुए हो। हे निर्गुण, निर्घिन, दुर्जन, सगर्व पाप, तुम मेरे पापसे नष्ट हुए हो।

घत्ता—यह सुनकर श्रमणने क्रोधसे यह निदान किया कि आगामी भवमें मैं तुम्हारी हँसीका समान फल बताऊँगा ॥९॥

३. A °णंदण। ४. P सासया। ५. A P ते पुणुरवि। ६. P गया।
९. १. AP णिहिट्ठु। २. रुंक खंभ। ३. AP समणेण।

१०

कयपच्चक्खाणपयासणेण तावहिं वि मरिवि संणासणेण।
जहिं तायभाउ जायउ अदीणु एहु वि दूसहतवचरणखीणु।
तहिं दे[1]हमइ कप्पि मणोहिरामि दहछहजलणिहिबद्धाउधामि।
उप्पण्णउ सल्लें[2]हियंतरंगु कम्मेण ण किज्जइ कासु भंगु।
ते बिण्णि वि सुरवर बद्धणेह ते बिण्णि वि लायण्णंबुमेह।
ते बिण्णि वि णिच्चु जि सह वसंति ते बिण्णि वि तारतुसारकंति।
ते विण्णि वि णं तिव्वंसुजोय ते बिण्णि वि कयकीलाविणोय।
ते बिण्णि वि दिवि अच्छंति जांव ए[3]त्तहि वि अवरु संभवइ तांव।
णिव्वेएं लइउ विसाहणंदि जिणतवतावें तावेवि बोंदि।
माणिक्कमऊहोहामियक्कि संभूयउ सो वि महंतसुक्कि।

घत्ता—एयहं दोहं वि ताहं देवहं वियलियहरिसइं॥
थक्कउ आउपमाणु जइयहुं कइवयवरिसइं॥१०॥

११

तइयहुं वेयड्ढारूढियाहि विज्जा[1]हरउत्तरसेढियाहि।
अलयाणयरिहि पहु मोरगीउ थिरथोरबाहु सद्दूलगीउ।
देव वि रणरंगि तसंति जासु णीलंजणपह महएवि तासु।
जो चिरु विसाहणंदि त्ति भणिउ सो ताइ पुत्तु हरिगीउ जणिउ।

१०

प्रत्याख्यानका प्रकाशन करनेवाले संन्याससे मृत्युको प्राप्त होकर, जहाँ उसका अदीन चाचा उत्पन्न हुआ था, असह्य तपश्चरणसे क्षीण वह भी शल्यको अपने मनमें धारण कर सोलह सागर आयु प्रमाणवाले सुन्दर सोलहवें स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। कर्मके द्वारा किसका नाश नहीं किया जाता। वे दोनों ही देव एक दूसरेके प्रति स्नेहसे प्रतिबद्ध थे। वे दोनों ही लावण्यरूपी जलके मेघ थे। वे दोनों ही प्रतिदिन साथ रहते थे। वे दोनों ही स्वच्छ तुषारकी तरह कान्तिवाले थे। वे दोनों ही सूर्य-चन्द्रमाके समान थे। वे दोनों ही क्रीड़ा विनोद करनेवाले थे। वे दोनों जबतक स्वर्गमें थे, यहाँ भी तबतक दूसरी घटना हो गयी। विशाखनन्दीको वैराग्य हो गया। वह भी जिनवरके तपतापसे तपकर माणिक्यकी किरणोंके समूहसे सूर्यको तिरस्कृत करनेवाले महाशुक्र स्वर्गमें देव हुआ।

घत्ता—इतनेमें इन दोनों देवोंका भी विगलित है हर्ष जिनमें ऐसे कई वर्षोंका आयु प्रमाण रह गया॥१०॥

११

विजयार्ध नामसे प्रसिद्ध विद्याधरोंकी उत्तरश्रेणिकी अलकापुरी नगरीमें स्थिर और स्थूल बाहु तथा सिंहके समान गरदनवाला मयूरग्रीव नामका राजा हुआ। जिससे युद्धमें देव भी त्रस्त रहते हैं, ऐसे उसकी नीलांजन प्रभा नामकी महादेवी थी। जो पहले विशाखनन्दी कहा गया था,

---

१०. १. AP दहमि कप्पि सुमणा° । २. A सल्लहयंतरंगु । ३. AP एत्तहे वि ।

११. १. P वेज्जाहर° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाएण तेण णवजोव्वणेण करलालियसिरिरामाथणेण ।
पडिवक्खलक्खवलदुम्महेण[2] ।
अहिवलयणिलयकंपावणेण चंदक्कबिंबभीसावणेण ।
खयरिंदविंदकंदावणेण भूगोयरपुरसंतावणेण ।
सरणागयजणपविपंजरेण करिणा इव दाणोल्लियकरेण ।
काणीणदीणकुलदिहिकरेण सुहवत्तणजियमणसियसरेण ।

घत्ता—आसग्गीवें तेण रिउ हय हरिणा[3] इव करि ॥
असिधारइ तासिवि गहिय तिखंड वसुंधरि ॥११॥

१२

उग्गयपयावरवियरकरालु वसुमइ भुंजंतु पईहु कालु ।
विद्धंसियवरसुहडावलेवु परिवड्ढिउ[1] सो पडिवासुएवु ।
तित्थयरपवित्तियतित्थणिरहि ता पविउलजंबूदीवभरहि ।
बहुरमणिरमणसंपण्णविसइ परिपालियधम्मि सुरम्मि विसइ ।
पोयणपुरु सुरपुरसोहहारि तहिं वसइ णराहिउ दंडधारि ।
भुवणेक्कसीहु सव्वोवयारि णामेण पयावइ णिज्जियारि ।
तहु पढमदेवि जयवइ पसण्ण णं विवरविणिग्गय णायकण्ण ।
अण्णेक्क चारु वित्थिण्णरमण मृगेणयण[2] मृगावइ मंदगमण ।
दोहिं वि दीविय महि तिमिरजूर णिसि सिविणइ दिट्ठा चंदसूर ।

वह उसका अश्वग्रीव नामसे पुत्र उत्पन्न हुआ जिसने अपने हाथसे लक्ष्मीरूपी रामाके स्तनोंका लालन किया है। जो प्रतिपक्ष लक्षसेनाका नाश करनेवाला है, जो पृथ्वीवलयरूपी घरको कँपानेवाला है, जो सूर्य-चन्द्रके बिम्बके समान भीषण है, जो विद्याधर राजाओंको रुलानेवाला है, जो मनुष्योंके नगरोंको सन्त्रास देनेवाला है, शरणागत मनुष्योंके लिए जो वज्रपंजरके समान है, जो हाथीके समान दानसे (मदजल और दान) आर्द्रकर (गीली सूँड़ अथवा हाथ) है, जो कन्यापुत्रों और दीनकुलोंके लिए भाग्यविधाता है, जिसने अपने शुभ आचरणसे कामदेवके तीरोंको जीत लिया है।

घत्ता—ऐसे उस अश्वग्रीवने उसी प्रकार शत्रुको नष्ट कर दिया है जिस प्रकार सिंह हाथीको नष्ट कर देता है। उसने अपनी तलवारकी धारसे सन्त्रस्त कर त्रिखण्ड धरती ले ली ॥११॥

१२

उद्गत प्रताप जो सूर्य किरणोंकी तरह भयंकर है ऐसा वह लम्बे काल तक धरतीका भोग करता हुआ तथा श्रेष्ठ सुभटोंके अहंकारको नष्ट करनेवाला वह प्रतिवासुदेव बन गया। तब तीर्थंकरोंके द्वारा प्रवर्तित तीर्थोंसे जो पवित्र है, ऐसे विशाल जम्बूद्वीपमें भरत क्षेत्र है। वहाँ जिसमें अनेक स्त्री-पुरुष विषयोंसे परिपूर्ण हैं, और जिसने धर्मका परिपालन किया है, ऐसे सुन्दर देशमें सुरपुरकी शोभाको धारण करनेवाला पोदनपुर नगर है। उसमें दण्डको धारण करनेवाला, भुवनका एकमात्र सिंह सबका उपकार करनेवाला और शत्रुविजेता प्रजापति नामका राजा था। उसकी प्रथम पत्नी प्रसन्न जयवती थी, जो मानो विवरसे निकली हुई नागकन्या थी। एक और दूसरी

---

२. AP add after this : पलयाणलजालादुस्सहेण । ३. A करिणा विय ।
१२. १. AP जा वड्ढिउ । २. AP मिगणयण मिगा° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिवडवि अणुहुंजियसुहसयाउ ते दो वि देव देवासयाउ।
पित्तियभत्तिज्जय बद्धपणय संजाया सुंदर ताहं तणय।
जइवइहिं जाउ हिमं[3]सियसरीरु वलं[4]हद्दु बालु णं छुं[5]इहीरु।
णारित्तणगुणघडियहि सईहि हुउ कण्हु जि कण्हु मृगावईहि[6]।
जयवंतु एक्कु तहिं विजं[7]उ गणिउं[9] बीयउ पुणु विट्ठु तिविट्ठु भणिउ[8]।

घत्ता—बेण्णि वि सह खेलंति भुयबलदूसियं[10]दिग्गय॥
भरहदियंतपयासि [11]पुप्फदंत णं उग्गय॥१२॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए
महामव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे बलएववासुदेवउप्पत्ती णाम
पण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५०॥

अत्यन्त सुन्दर मृगनयनी, मन्दगामिनी सुन्दर मृगावती थी। दोनों ही मानो धरतीपर अन्धकार-को नष्ट करनेवाली दीपिकाएँ थीं। उन्होंने रात्रिमें स्वप्नमें सूर्यको देखा। जहाँ सैकड़ों सुखोंका भोग किया है ऐसे देवाश्रयसे वे दोनों प्रणयबद्ध देव (चाचा और भतीजे) उनके सुन्दर पुत्र हुए। जयवतीके हिमके समान सफेद शरीरवाला बालक बलभद्र हुआ जो मानो बालचन्द्र था। तथा नारीत्वके गुणसमूहसे घटित सती मृगावतीसे कृष्ण कृष्ण हुए (श्याम वासुदेव हुए)। जयसे युक्त एकको वहाँ विजय कहा गया और दूसरेको विष्णु त्रिपृष्ठ।

घत्ता—अपने बाहुबलसे दिग्गजोंको दूषित करनेवाले वे दोनों साथ-साथ खेलते थे, वे ऐसे लगते थे मानो दिगन्तको प्रकाशित करनेवाला नक्षत्रसमूह उत्पन्न हुआ हो ॥१२॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका बलदेव-वासुदेव उत्पत्ति नाम का पचासवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५०॥

३. A हिमसयं। ४. AP बलएउ। ५. A छुहहीरु; P छुड्डु हीरु। ६. AP मिगावईहि। ७. P विज्जउ। ८. A भणिउ। ९. A गणिउ। १०. P °भूसिय। ११. AP पुप्फयंत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ५१

माणुसइं गिलंतु भुयबलविक्कमसारें ॥
पंचाणणु भीमु मारिउ रायकुमारें ॥ध्रुवकं॥

१

पायणिवायपणोवियमहियल पविमलकमलालंकियउरयल ।
पंकयकुलिसकलसलक्खणधर रायहंससेवियें णं सुरसर ।
पोरिसपवररयणरयणायर सम वड्ढिय ते बिण्णि वि भायर ।
जायासीधणुतणु गुणमणिणिहि असिजालाकैरालखलकुलसिहि ।
धवल कसण सविणयपीणियजण णावइ सरयसमय सावणघण ।
कायकंतिधवलियकालियणह णं गंगाणइ जउँणा जलवह ।
तेहिं बिहिंहिं सो सहइ महीसैरु बिहिं पक्खहिं णं पुण्णिमवासरु ।
जांवच्छइ हरिवीढि णिसण्णउ देसमहंतउ ता अवइण्णउ ।
सो पभणइ चंगउ पालियपय भो णिवमउडकोडिलालियपय ।

सन्धि ५१

बाहुबलके पराक्रममें श्रेष्ठ राजकुमार (छोटे भाई) ने मनुष्योंको खानेवाले (आदमखोर) भयंकर सिंहको मार दिया।

१

पैरोंके निपातसे जिन्होंने धरतीको हिला दिया है, जिनका उरतल पवित्र कमलोंसे अलंकृत है, जो कमल वज्र और कलशके लक्षणोंको धारण करनेवाले हैं, जो मानो मानसरोवरकी तरह, राजहंसों (श्रेष्ठ राजाओं, श्रेष्ठ हंसोंसे सेवित हैं) जो पौरुष रूपी श्रेष्ठ रत्नोंके समुद्र हैं, ऐसे वे दोनों बड़े भाई साथ-साथ बढ़ने लगे (बड़े होने लगे)। अस्सी धनुष प्रमाण शरीरवाले वे दोनों गुणसमूहके निधि थे। अपनी तलवाररूपी ज्वालासे वे, शत्रुकुलके लिए अग्निके समान थे। अपनी विनयसे लोगोंको प्रसन्न करनेवाले गोरे और श्याम, वे दोनों जैसे क्रमशः शरद् और श्रावण समयके मेघ थे। अपने शरीर की कान्तिसे आकाशको धवल और श्याम बनानेवाले वे मानो गंगा नदी और यमुना नदीके जलपथ थे। उन दोनोंसे वह राजा ऐसा शोभित था मानो दो पक्षों (शुक्ल, कृष्णपक्ष) से युक्त पूर्णिमाका दिन हो। जब वह सिंहासनपर बैठा हुआ था कि एक मन्त्री उसके पास आया। वह बोला—"हे प्रजापालक, सब कुछ ठीक है, राजाओंके करोड़ों मुकुटोंसे लालितचरण हे देव,

---

A has, at the beginning of this Samdhi the stanza जगं रम्मं हुम्मं etc. for which see foot-note on page 139. P and K do not give this stanza here.

१. १. AP °वणामिय° । २. AP णं सेविय सरवर । ३. A असिधाराकराल° । ४. A जवणा । ५. AP बिहिं मि । ६. A महीहरु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेहीरउ रुंजंतु[7] पडुक्कइ[8] माणुसु चित्तालिहिउ ण चुक्कइ[9]।
कंदमाणु खगभयवेविरमणु देवदेव खद्धउ सयलु वि जणु।
तं णिसुणिवि पडिलवइ पयावइ भो भो मंति चारु तेरी मइ।

घत्ता—जो ण करइ राउ पयहिं रक्ख सो केहउ ॥
खणि णासिवि जाए संझाराएं जेहउ ॥१॥

२

जो गोवालु गाइं[1] णउ पालइ सो जीवंतु दुद्धु ण णिहालइ।
इट्ठु महेली जो णउ रक्खइ सुरयसोक्खु सो कहिं[2] किर चक्खइ।
जो मालारु[3] वेल्लि णउ पोसइ सो सुफुल्लु[4] फलु केंव लहेसइ।
जो कइ ण करइ मणहारिणि कह सो चिंतंतु करइ अप्पइ[5] वह।
जो जइ संजमजत्त[6] ण याणइ सो णग्गउ णग्गत्तणु माणइ।
जो पहु पयहिं पीड णउ फेडइ[7] सो अप्पणु अप्पाणउं पीडइ।
जांवि[8] रसंतु सीहु सइं मारविं देसहु पडिय मारि णीसारविं।
एंव भणेवि लेवि असि दारुणु जावुट्ठिउ णरिंदु कोवारुणु।"
ता पंजलियरु विजउ पजंपइ[9] पइं कुद्धेण ताय जगु[10] कंपइ।
दे आएसु देव हउं गच्छमि अज्जु मइंदहु पलउ णियच्छमि।

एक गरजता हुआ सिंह आता है, जो चित्रलिखित मनुष्यों तकको नहीं छोड़ता। विनाशके भयसे काँपते हुए मनवाले और रोते हुए सब लोगों को, हे देवदेव, उसने खा डाला है।" यह सुनकर राजा प्रजापति कहता है—"हे मन्त्री, तुम्हारी बुद्धि सुन्दर है।"

घत्ता—"क्योंकि जो प्रजाकी रक्षा नहीं करता, वह राजा शीघ्र उसी प्रकार नष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार संध्या राग नष्ट हो जाता है ॥१॥

२

जो गोपाल गायका पालन नहीं करता, वह जीते जी उसका दूध नहीं देख सकता, अपनी प्रिय पत्नीकी जो रक्षा नहीं करता, वह सुरति क्रीड़ाका सुख कहाँ पा सकता है? जो मालाकार (माली) लताका पोषण नहीं करता वह सुन्दर फूल और फल किस प्रकार पा सकता है, जो कवि सुन्दर कथा नहीं करता वह विचार करता हुआ भी अपनी हत्या करता है। जो मुनि संयमकी मात्रा नहीं जानता, वह नंगा है, और नग्नत्वको ही सब कुछ मानता है। जो राजा प्रजाकी वेदना नष्ट नहीं करता वह अपनेसे अपनी हत्या करता है, इसलिए मैं स्वयं जाता हूँ और गरजते हुए सिंहको स्वयं मारता हूँ। देशमें आयी हुई मारीको बाहर निकालता हूँ। यह कहकर और भयंकर तलवार लेकर क्रोधसे लाल-लाल राजा जब तक उठा, तबतक अंजली जोड़कर विजय बोला, "हे राजन्, आपके क्रुद्ध होनेसे जग काँप जायेगा? आदेश दीजिए देव, मैं जाता हूँ?

७. भुंजंतु। ८. P पडुक्कउ। ९. P चुक्कउ।

२. १. P गोवि। २. AP किर कहिं। ३. P मालायारु। ४. P सफुल्लु। ५. A अप्पव्वह; P अप्पा-वह। ६. A संजमु जुत्ति; P संजमजत्ति। ७. A फेडइ। ८. A सो वि रसंतु। ९. A पयंपइ। १०. AP जगु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पेसिउ जणणें चल्लिउ हलहरु तें सहुं चलिउ भाइ दामोयरु ।
णरकवालकंकालणिरंतरु पत्ता केसरिगिरिकुहरंतरु ।

घत्ता—भडरोलहु सीहु कुंदच्छवि उद्धाइउ ॥
भाइहिं आवंतु णं कयंतंजंसु जोइउ ॥२॥

३

तिक्खणक्खणिक्खवियमयगलो पयविलग्गमुत्ताहलुज्जलो ।
रत्तसित्तकेसरसडालओ सिसुमियंकदाढाकरालओ ।
महिसमणुयपलकवलभोयणो सिहिफुलिंगपिंगलविलोयणो ।
कुडिललुलियलंगूलचिंधओ णासगहियपडिसुहडगंधओ ।
कंठरावणिद्दलियदिक्करी परिसो सरोसेण केसरी ।
बहुबलक्कमियवीरविक्कमं जाव देइ किर सीरिणो कमं ।
तांव तेण लहुएण भाइणा लोयजीवदाणेक्कदाइणा ।
विसतमालकालिंदिकंतिणा करजुवं पि वामेण पाणिणा ।
मयवइस्स धरियं बला बलं बलिविरोहिणो कस्स मंगलं ।
उच्छलंतदंतावलीसियं दाहिणेण हत्थेण णिहयं ।
ताडिओ मुहे पाडिओ हरी संसिओ महीसेहिं सो हरी ।
माहवेण कयणिवविदोहेओ दड्ढदेहिदेहंघिवो हुओ ।

आज मैं सिंहका प्रलय देखूँगा।" पिताके द्वारा प्रेषित बलभद्र चला, उसके साथ भाई दामोदर चला। मनुष्योंके कपाल और हड्डियोंसे परिपूर्ण, सिंह की पर्वत गुफामें वे लोग पहुँचे।

घत्ता—स्वर्णके समान कान्तिवाला सिंह योद्धाओंके हल्लेसे दौड़ा। दोनों भाइयोंने उसे आते हुए यम-भय की तरह देखा ॥२॥

३

जिसने अपने तीखे नखोंसे मदगजोंको आहत किया है, जो झरते हुए मोतियोंसे उज्ज्वल है, जो लाल और श्वेत अयालसे युक्त है, बालचन्द्रके समान दाढ़ोंसे जो भयंकर है, महिष और मनुष्योंके मांसका जिसका भोजन है, आगके स्फुलिंगके समान जिसके नेत्र पीले हैं, जो टेढ़ी और चंचल पूँछकी पताकावाला है, जो प्रतिसुभट (शत्रु) की गन्ध अपनी नाकसे ग्रहण करनेवाला है, अपने कण्ठके शब्दसे जिसने दिग्गजका शब्द नष्ट कर दिया है, इस प्रकारका वह सिंह क्रोधपूर्वक बहुबलसे वीरोंके पराक्रमको आक्रान्त करनेवाला जबतक श्रीबलभद्रके ऊपर पैर दे तबतक लोक जीवनदानमें एक मात्र दानी तथा विष तमाल और यमुनाके समान कान्तिवाले उस छोटे भाईने उस सिंहके दोनों पैर और अयाल बलपूर्वक पकड़ लिये। बलवानसे विरोध करनेवाले किसका भला हुआ है ? उछलती हुई दन्तावलीकी सफेदीको उसने दायें हाथसे दलित कर दिया। मुखमें आहत किया। सिंह पीड़ित हो उठा। राजाओंने वासुदेवकी प्रशंसा की। इस प्रकार माधव, ने, जिसने राजासे विद्रोह किया है ऐसे दग्ध देहीके देह स्वरूप उस वृक्षको आहत कर दिया।

११. A कयंतजमु; P कयंतु जसु । १२. P जोविउ ।

३. १. AP बहुबलक्कमिय° । २. AP add after this : बाहुदंडबलतुलिय (A तुडिय) दंतिणा, करुहंसुपविरइयसुवलयं, वामएण चल (A वल) चरणजुवलयं, सुहडसंगरुव्वूढमाणिणा । ३. AP कर-जुयं । ४. A मइवइस्स । ५. AP बलविरोहिणो । ६. AP विदोहओ । ७. A हुओ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—जो पयसंताउ पलयसिहि व्व पलित्तउ ॥
सो णिहउ मयारि लोहियसलिलें सित्तउ ॥३॥

४

करतलप्पचूरियदुग्घोट्टइ[1] णियबलु कसिवि सीहकसवट्टइ ।
सुरसीमंतिणिकामुक्कोयणु लहिवि विजयलच्छिहि[2] अवलोयणु ।
आया ते तं पुणरवि पोयणु णं ससहर दिणयर गयणंगणु ।
पयहिं पडंतवऊहिय[3] तायं दोण्णि मेह णं संझाराएं ।
पुणु आउच्छिउ दाणववइरिउं[4] किह केसरिकिसोरु पइं मारिउ ।
तं णिसुणेवि तेण अवगण्णिउं णाविउं सीसु ण अप्पउ वण्णिउ ।
गरुयउ सगुणपसंसइ[5] लज्जइ ऊणउ गुणथुइमइरइ मज्जइ ।
एंव ताहं बुहुसंपयसारा जंति दियह सुमणोरहगारा ।
तावेक्कहिं दिणि परमणहारउ कंचणवेत्तपाणि पडिहारउ ।
कहइ णरिंदहु विणु आयासें आयउ एक्कु पुरिसु आयासें ।
कंठयकडयमउडकुंडलधरु ण वियाणमि किं सुरु किं णहयरु ।
वारवार महुं वयणु णिरिक्खइ तुह कमकमलालोयणु[6] कंखइ ।

घत्ता—जइ अवसरु अत्थि तो[7] सो पइसारिज्जइ ॥
जं भासइ किं पि तं णरेस णिसुणिज्जइ ॥४॥

घत्ता—प्रजाका सन्तापकारी जो प्रलयकी अग्निकी तरह प्रज्वलित था वह मारा गया सिंह रक्तरूपी जलसे सिक्त हो उठा ॥३॥

४

हथेलीके प्रहारसे हाथीके चूर कर लेनेपर, सिंहरूपी कसौटीपर अपना बल कसकर, देवबालाओंको कामोत्कण्ठा उत्पन्न करनेवाला विजयलक्ष्मीका उत्पन्न कटाक्ष प्राप्त कर वे दोनों पोदनपुर नगर आ गये, मानो आकाशमें सूर्य और चन्द्रमा आ गये हों। पैरोंपर गिरते हुए उन दोनोंका पिताने आलिंगन किया, मानो सन्ध्यारागने मेघका आलिंगन किया हो। फिर उसने दानवराजके शत्रुसे पूछा कि तुमने सिंहके बच्चेको किस प्रकार मारा। यह सुनकर उसने उसकी उपेक्षा की, उसने सिर झुका दिया परन्तु अपना वर्णन नहीं किया। महान् या भारी आदमी अपनी गुण-प्रशंसासे लज्जित होता है, छोटा आदमी गुणस्तुतिकी मदिरासे मतवाला हो जाता है। इस प्रकार प्रचुर सम्पत्तिसे श्रेष्ठ तथा सुन्दर मनोरथोंसे परिपूर्ण उनके दिन बीतने लगे। इतनेमें एक दिन दूसरेके मनका हरण करनेवाला हाथमें स्वर्णदण्ड लिये हुए प्रतिहारी राजासे कहता है कि बिना किसी आयासके एक आदमी आकाशमार्गसे आया है। कण्ठा-कटक मुकुट और कुण्डल धारण किये हुए है, मैं नहीं जानता कि कोई नभचर है या देव। बार-बार मेरा मुख देखता है, और तुम्हारे चरणकमलको देखनेकी इच्छा करता है।

घत्ता—यदि अवसर हो तो उसे प्रवेश दिया जाये, और वह जो कुछ भी कहता है, हे नरेश, उसे सुना जाये ॥४॥

---

८. AP णिहय ।

४. १. A °दुघोट्टइ । २. A सजयलच्छिहि । ३. A पडंत विजोहिय; P पडंत विगूहिय; T अवगूहिय आलिङ्गितौ । ४. AP °वेरिउ । ५. A °पसंसण लज्जइ । ६. करकमला° । ७. P तो ।

५

महिणाहेण उत्तु पइसारहि　　पुरिसु सं[1]सामिकज्जरहसारहि ।
ता कणइल्लें आणिवि दाविउ　　खयरु णवंतु अउव्वु विहाविउ ।
तहु पणवंतहु णियडउ आसणु　　दरिसिउं मणिगणकिरणुब्भासणु ।
इट्ठु भणिवि जाणिउं मुहराएं　　[2]पियवयणहिं संभासिउ राएं ।
कहिं होंतउ सुंदरणिकेयउ　　को तुहुं कह[3]सु कासु किं आयउ ।
अक्खइ वि[4]ऍयरु पालियखोणिहि　　रुप्पयगिरिवरदाहिणसेणिहि ।
णमिकुलणहयलवलयहु णेसरु　　रिद्धिइ णं सयमेव सुरेसरु ।
रहणेउरपुरवरपरमेसरु　　देव जल[5]णजडि णाम खगेसरु ।
वाउवेय पिययम लीलागइ　　अक्ककित्ति तणुरुहु णं रइवइ ।
धूय सयंपह किं वण्णिज्जइ　　मुहससिजोण्हइ चंदु वि खिज्जइ ।

घत्ता—थण[6]हारें भग्गु जाहि मज्झु किसु सोहइ ॥
णहपंतिपहाइ तारापंति ण रेहइ ॥५॥

६

करकम[1]लयइं कुमारिहि रत्तइं　　ताइं कुमारसहासइं रत्तइं ।
णाहिहि जइ गंभीरिम दीसइ　　तें [2]मुणिहिं वि गंभीर[3]त्तु णासइ ।
[4]भालवट्टु पट्टु व रइरायहु　　चिहुरकुडिलकोडिल्लु व आयहु ।

५

महीनाथने कहा कि अपने स्वामीके कार्यरूपी रथका निर्वाह करनेवाले उस पुरुषको भीतर प्रवेश दो। तब प्रतिहारीने उसे बुलाकर दिखाया। प्रणाम करता हुआ वह विद्याधर सुन्दर दिखाई देता था। प्रणाम करते हुए उसे मणिकिरण-समूहसे आलोकित आसन पास ही दिखाया गया। इष्ट समझकर उसने मुखके भावसे जान लिया। राजाने प्रिय शब्दोंमें उससे बातचीत की कि तुम्हारा सुन्दर घर कहाँ है, तुम कौन हो, किसके हो। यहाँ क्यों आये? विद्याधर कहता है कि धरतीका पालन करनेवाले विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीमें हे देव, ज्वलनजटी नामका राजा है, जो नमिकुलके आकाशमण्डलका सूर्य है, ऋद्धिमें जो मानो स्वयं इन्द्र है और रथनूपुर नगरका परमेश्वर है। लीलापूर्वक चलनेवाली उसकी वायुवेगा नामकी प्रियतमा है। और पुत्र अर्ककीर्ति है जो मानो कामदेव है। उसकी कन्या स्वयंप्रभाका क्या वर्णन किया जाये? वह अपने मुखरूपी चन्द्रमाकी ज्योत्स्नासे जो चन्द्रमाको भी खिन्न कर देती है।

घत्ता—स्तनभारसे भग्न जिसका दुबला पतला मध्यभाग नखपंक्तिप्रभासे इस प्रकार शोभित है, मानो तारापंक्ति शोभित हो ॥५॥

६

कुमारीके कररूपी कमल रक्त (लाल) हैं। उनसे हजारों कुमार अनुरक्त हैं। उसकी नाभिमें जो गम्भीरता दिखाई देती है, उससे मुनियोंकी भी गम्भीरता नष्ट हो जाती है। उसका

---

५. १. AP सुसामि° । २. AP पियवयणहिं । ३. P कासु कहसु कहिं । ४. A वइयरु । ५. A जडणजडि । ६. AP थणभारें ।

६. १. AP °कमलयइं । २. AP तहि । ३. AP गंभीरिम । ४. A मालबद्धु पट्टु व; P भालवट्टु वट्टु व ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सुरणरविसहरहियवियारा णयण विसिह णं तासु जि केरा ।
जाहि रूवसिरि णं परपराइय सा फुल्लंति वेल्लि जिह जोइय ।
ताएं धीय बीय णं चंदें बोल्लिउं सज्जणणयणाणंदें ।
दुम्मयमलकलंकपक्खालणि मंतिहिं अग्गइ मंतिणिहेलणि ।
भो संभिण्ण णिसुयजोइससुय भणु भणु कासु घरिणि होसइ सुय ।
भणु भणु भव्व मज्झु भवियव्वइं पइं दिट्ठाइं अणेयइ दिव्वइं ।
देहदित्तिणित्तेइयचंदइं केवलणाणधरइं रिसिवंदइं ।
ता संभिण्णें भणिउं णिसामहि मइं चिरु पुच्छियउ संजय सावहि ।
दाहिणभरहि सुरम्मइ मंडलि घरसिहरालिंगियरविमंडलि ।

घत्ता—पोयणपुरि राउ जसु जसु देवहिं गिज्जइ ॥
पालियसम्मत्तु जो जिणणय पडिवज्जइ ॥६॥

७

चिरु पुरुएवहु दिग्गयगामिहि जो बाहुबलि पुत्तु जगसामिहि ।
भरहु जेण भुयदंडहिं भामिउ जो जायउ पंचमगइगामिउ ।
पुरिसपरंपराहि तहु जायउ णाम पयावइ जो विक्खायउ ।
जयवइ तासु देवि गरुयारी अवर मृगावइ प्राणपियारी ।
अचल पबलभुयतोलियगुरुगिरि ताहं बिहिं वि जाया हलहर हरि ।

भालपट्ट कामदेवका पट्ट है । उसके बालोंका कुटिल कौटिल्य भी इसीका है । सुर-नर और विषधरोंके हृदयका विदारण करनेवाले उसके नेत्र भी कामदेवके ही तीर हैं । जिसकी रूपलक्ष्मी दूसरोंके द्वारा पराजित नहीं है, वह खिली हुई लताके समान देखी जाती है, पितासे पुत्री ऐसी लगती है जैसे चन्द्रमासे द्वितीया । सज्जनोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले राजाने दुर्मद-मल-कलंकका प्रक्षालन करनेवाले मन्त्रणाघरमें मन्त्रियोंसे कहा, "हे ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन करनेवाले संभिन्न (मन्त्री), बताओ-बताओ यह कन्या किसकी गृहिणी होगी । हे भव्य, तुम मेरा भवितव्य बताओ, तुमने अनेक दिव्य शरीरकी कान्तिसे चन्द्रमाको कान्तिहीन कर देनेवाले केवलज्ञानधारी ऋषि-समूह देखे हैं ।" तब संभिन्न मन्त्रीने कहा "सुनाता हूँ, मैंने बहुत पहले संजय नामक अवधिज्ञानी मुनिसे पूछा था । (और उन्होंने कहा था), दक्षिण भरतक्षेत्रके सुन्दर देशमें जिसमें कि गृहशिखरोंसे सूर्यमण्डल आलिंगित है,

घत्ता—पोदनपुर नगरमें राजा है, जिसका यश देवोंके द्वारा गाया जाता है । सम्यक्त्वका पालन करनेवाला जो जिननयको स्वीकार करता है ॥६॥

७

प्राचीन समयमें पुरुदेवके दिग्गजगामी विश्वस्वामी (ऋषभदेव) का जो बाहुबलिदेव पुत्र था, जिसके द्वारा भरतदेव अपने भुजदण्डोंके द्वारा घुमा दिया गया था, और जो मोक्षगामी हुए थे, उसीकी पुरुष परम्परामें उत्पन्न प्रजापतिके नामसे विख्यात राजा है । जयवती उसकी बड़ी पत्नी है और दूसरी प्राणप्यारी मृगावती है । उन दोनोंसे, अपने प्रबल बाहुओंसे मन्दराचल-

५. A णवर पराइय । ६. A णिसुणि जोइससुय; P णिसुणि जोइयसुय । ७. A णित्तेयइं । ८. A °घरियरिसि° । ९. AP पुच्छिउ ।
७. १ AP °सामिउ । २. A जइवय । ३. AP मिगावइ पाण° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विजय तिविट्ठु णाम णिट्ठुर[४]कर समरभार[५]किणकसणियकंधर।
एहु तुरंगगलु[६] रिउ[७] तहु केरउ आसि विसाहणंदि विवरेरउ।
एत्थुप्पण्णउ पुण्णविवाएं मारेवउ मृगवइ[८]यहि जाएं।
भुयहिं कोडिसिल संचालेवी वसुह तिखंड तेण पालेवी।
परियणसयणहं तुट्ठि जणेवी अण्णु तुहारी सुय परिणेवी।
उ[९]हयसेढिविज्जाहरराएं पइं होएव्वउं तासु पसाएं।
एंव देव हियवइ संचारिउ संभिण्णें संबंधु वियारिउ।
घत्ता—ता महुं णाहेण बंधुसिणेहु[१०] गवेसिउ॥
हउं णामें इंदु तुम्हहं दूयउं पेसिउ॥७॥

८

अवरु वि पहु तेरउं पहुठाणउं अम्हारउं पाइक्कणिवाणउं।
रिसहहु कच्छमहाकच्छाहिव जिह भरहहु णमि[१]विणमि खगाहिव।
तिह सिहिजडि रविकित्ति तुहारा जिव सुहि जिंव पुणु पेसणगारा।
तं णिसुणिवि णरवइ रोमंचिउ आणंदें परिवारु पणच्चिउ।
सीरिं पुण्णें[२] सव्व पोमाइय हरिणा णियभुयदंड पलोइय।
पुणु सो दूयउ पहुणा पुज्जिय तेण वि तक्खणेण गउं[३] सज्जिउ।

को तौलनेवाले और अचल बलभद्र और नारायण उत्पन्न हुए हैं। विजय और त्रिपृष्ठ नामके वे कठोरकर और समरभार उठानेके कारण श्याम कन्धेवाले हैं। यह अश्वग्रीव तुम्हारा शत्रु है; जो विपरीत करनेवाला विशाखनन्दी था। अपने पुण्यके विपाकसे वह यहाँ उत्पन्न हुआ है, जो मृगावतीके पुत्र (त्रिपृष्ठ) के द्वारा मारा जायेगा। वह अपने बाहुओंसे कोटिशिलाका संचालन करेगा, और उसके द्वारा त्रिखण्ड धरतीका पालन किया जायेगा। वह परिजन और स्वजनोंको सन्तोष देगा और तुम्हारी पुत्रीसे विवाह करेगा। उसके प्रसादसे तुम दोनों श्रेणियोंके विद्याधर राजा होगे।" इस प्रकार देवके हृदयमें यह संचारित किया, और फिर संभिन्नने सम्बन्धका विचार किया।

घत्ता—तब मेरे स्वामीने बन्धुके स्नेहकी खोज की और मैं इन्दु नामका दूत तुम्हारे पास भेजा गया॥७॥

८

और भी हे प्रभु, तुम्हारा प्रभुस्थान है और हमारा पाइक्क (पदाति सेवक) के रूपमें निर्माण (रचना) है। जिस प्रकार ऋषभनाथके कच्छ और महाकच्छ राजा थे, जिस प्रकार भरतके नमि और विनमि विद्याधर राजा थे, उसी प्रकार ज्वलनजडी और अर्ककीर्ति तुम्हारे हैं। जिस प्रकार वे सज्जन हैं उसी प्रकार आज्ञा करनेवाले हैं। यह सुनकर राजा रोमांचित हो गया। आनन्दसे परिवार नाच उठा। बलभद्रने सबकी प्रशंसा की। नारायण (त्रिपृष्ठ) ने अपने भुजदण्डको देखा। राजाने उस दूतका आदर सत्कार किया। और उसने भी तत्काल अपने जाने

४. A णिट्ठुर°। ५. A °भारकसणंकियकंधर। ६. A तुरंगकंठु। ७. A omits रिउ। ८. AP मिगवइयहि। ९. AP उभय°। १०. AP °सणेहु।

८. १. AP णमि°। २. A पुण्णसत्ति; P पुण्ण सत्त। ३. A गउ; P गमु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूगोयरहुं गयणु कहिं गोयरु इय चिंतिवि णरणाहिं सायरु ।
संताणागयपणयपयासउ तासु जि हत्थि दिण्णु संदेसउ ।
घत्ता—खँग सुर सिज्झंति कामधेणु घरि दुब्भइ ॥
जं दूरु दुसज्झु तं जगि पुण्णें लब्भइ ॥८॥

९

इंददूयवयणइं आयण्णिवि बंधुसणेहु सहियवइ मण्णिवि ।
सहुं तणएं तणयाइ पसण्णइ अहिणवमुग्गंमणोहरवण्णइ ।
उद्धचलंतचमरवित्थारें विहवगहीरें सहुं परिवारें ।
ओसारियरवियरसंताणहिं आवेप्पिणु विमाणजंपाणहिं ।
महुरसवसरुणुंरुंटियमहुयरि कीरकुररसिहिपियमाहविसरि ।
मंदमंदमायंदावलिघणि पोयणपुरबाहिरणंदणवणि ।
जायवेयजडि एक्कहिं वासरि थिउ विज्जापहावविरइयघरि ।
जिणपयपंकयपणवियसीसहु इंदें जाइवि कहिउं महीसहु ।
आयउ इट्ठु सुट्ठु उक्कंठिउ तं णिसुंणिवि सहुं सुयहिं ण संठिउ ।
पहु मंडलियणिसेविउ चल्लिउ इयरेण वि खगदप्पु पमेल्लिउ ।
अवरोप्परहुं बे वि गय संमुह णाइ तरंगिणिणाह सुहारुह ।
मिलिय बे वि दीहरपसरियकर बेण्णि वि सज्जण णं दिसकुंजर ।

की तैयारी की। मनुष्योंके लिए आकाश किस प्रकार गम्य हो सकता है, यह विचार कर राजा प्रजापतिने सादर परम्परासे आगत प्रणयको प्रकाशित करनेवाला सन्देश उसके हाथमें दिया।

घत्ता—विद्याधर और देव सिद्ध हो जाते हैं कामधेनु घरमें दुही जाती है, जो दूर और असाध्य है, वह विश्वमें पुण्यसे पाया जा सकता है ॥८॥

९

इन्दु दूतके वचन सुनकर और अपने हृदयमें बन्धुके स्नेहको मानकर, अपने पुत्र और प्रसन्न अभिनव मृगके समान वर्णवाली कन्याके साथ जिसके ऊपर चलते हुए चमरोंका विस्तार है, ऐसे वैभवसे गम्भीर परिवारके साथ, जिन्होंने सूर्यकी किरणपरम्पराको हटा दिया है ऐसे विमान और जंपानोंके द्वारा आकर, ज्वलनजटी विद्याधर, एक दिन, जिसमें मधुरसके वशसे मधुकर गुनगुन कर रहे हैं, जिसमें कीर कुरर मयूर और कोकिलोंका स्वर है, जो मन्द-मन्द आम्रवृक्षावलीसे सघन है, और जिसमें विद्याके प्रभावसे घर बना लिये गये हैं, ऐसे पोदनपुरके बाहर नन्दनवनमें ठहर गया। जिसने जिनपद-कमलोंमें अपना सिर नत किया है, ऐसे राजा प्रजापतिसे जाकर इन्दु दूतने कहा कि (तुम्हारा) इष्ट अत्यन्त उत्कण्ठित होकर आया है। यह सुनकर, वह अपने पुत्रोंके साथ संस्थित नहीं रहा। अपनी मण्डलीसे सेवित राजा चला। दूसरेने भी अपना विद्याधर होनेका अहंकार छोड़ दिया। वे दोनों, एक दूसरेके सामने गये, मानो समुद्र और चन्द्रमा हों। अपने दोनों लम्बे हाथ फैलाकर वे मिले। वे दोनों ही सज्जन थे मानो दिग्गज हों।

४. P खग्ग सुर।
९ १. A °मग्गमणोहर°। २. A रुणुरुंटियमहुवरि; P रणुरुंटिय°। ३. A णिसुणि सहुं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—णियजणणविइण्णु परियाणिवि भूभंगउं ॥
रायहु रविकित्ति णविउ पणाविवि अंगउं ॥९॥

१०

हरिबलेहिं ससुरउ जयकारिउ तेण सिणेह[1]साहि वड्ढारिउ।
भुयभूसणकरमंजरिपिंगिउं[2] सालउ गाढं[3]गाढु आलिंगिउ।
हरिसंसुयजलेहिं संसित्तउ सयल णिसण्ण सुमंतु पउत्तउ।
दिणयरु तवइ खवइ जिणु कम्मइं वम्महु सल्लइ वाणहिं वम्मइं।
सायरु गिलइ सयलसरिसोत्तइं ससहरु पीणइ जणवयणेत्तइं।
भंजणसत्ति महंत समीरहु बलु अइअतुलु तिविट्ठकुमारहु।
एत्थु ण किं पि बप्प कोऊहलु णहं[4]चवेडचप्पियकुंजरकुलु।
एंव सीहु को करहिं णिपीलइ कोडिसिलायलु जइ संचालइ।
तं[5] जाणहुं होसइ पुण्णाहिउ हरि हरिबंदियणा[6]णिहिं साहिउ।
आसग्गीवजीवउड्डावणु ध्रुवुं[7] माणेसइ तरुणिहि जोव्वणु।
घत्ता—महियर खयरिंद एहु मंतु विरएप्पिणु ॥
जहिं तं सिल[8]रयणु तहिं गय कण्हु लएप्पिणु ॥१०॥

घत्ता—अपने पिताके द्वारा किये भ्रूभंगको जानकर अर्ककीर्तिने राजाको प्रणाम कर अपना सिर झुका लिया ॥९॥

१०

नारायणकी सेनाने ससुरका जय-जयकार किया। उससे उनका स्नेहरूपी वृक्ष बढ़ गया। बाहुओंके आभूषणोंकी किरण-मंजरीसे पीले सालेका प्रगाढ़ आलिंगन कर लिया। हर्ष के आंसुओं-के जलसे सींचे गये सब लोग बैठ गये। (यह) सुमन्त्र कहा गया कि दिनकर तपता है, जिन कर्मका नाश करते हैं, कामदेव, बाणोंसे मर्मको छेदता है। समुद्र, समस्त नदियोंके स्रोतोंको अपनेमें समो लेता है। चन्द्रमा जनपदके नेत्रोंको प्रसन्न करता है। पवनमें बहुत बड़ी भंजन शक्ति है, त्रिपृष्ठ कुमारमें अतुल बल है, हे सुभट, इसमें जरा भी कुतूहलकी बात नहीं। अपने नखोंकी चपेटसे गजकुलको चोपनेवाले सिंहको कौन अपने हाथोंसे निष्पीडित कर सकता है? यदि यह कोटिशिलातलको संचालित कर सकते हैं, तो हम लोग जानेंगे कि इन्द्रके द्वारा वन्दित ज्ञानियोंके द्वारा कथित नारायण पुण्याधिक होंगे। अश्वग्रीवके जीवको उड़ानेवाले यह निश्चयसे तरुणीके यौवन मानेंगे?

घत्ता—मनुष्य और विद्याधर यह मन्त्र रचकर, जहाँ वह शिलारत्न था वहाँ नारायणको लेकर गये ॥१०॥

१०. १. AP सणेह° । २. A °पिंगउ । ३. AP गाढु गाढु । ४. तहो चवेड° । ५. AP तो । ६. AP °णाणहिं।
७. AP धुवु । ८. P सिलरम्म ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

णिद्ध अद्धजोयणविस्थिण्णी णाणावणतरुवरसंछण्णी ।
जिणपयसेवा इव फलभाइणि बहुमुणिलक्खमोक्खसुहदाइणि ।
पुण्ण पवित्त पावखयगारी दीसइ सिल णं सिद्धिभडारी ।
कहिं वि दंतिदंतग्गहिं खंडिय सीहणहरचुयमोत्तियमंडिय ।
कहिं वि पलिप्पइ जालावलणें किडिदाढाणिहसणरुहजलणें ।
कहिं वि जक्खिपयघुसिणें लिप्पइ चंदकंतजलधारइ धुप्पइ ।
कहिं वि णीलगलणियरहिं णीलिय वणयवधूमंधारें मइलिय ।
कहिं वि फुरइ घणतिमिरविमुक्कहिं सप्पफडाकडप्पमाणिक्कहिं ।
कहिं वि भमियमृगणाहिमओहें सुरहिय सेविय भमरसमूहें ।
कहिं वि वियंभिय सुइसुहगारव किंणरगेयवेणुवीणारवं ।
सा परियंचेप्पिणु अंचेप्पिणु सिद्धसेस राएहिं लएप्पिणु ।

घत्ता—पुणु भणिउ अणंतु पेक्खहुं सिल उण्णावहि[11] ॥
हयकंठकयंतु होसि ण होसि व[12] दावहि ॥११॥

१२

ता सिल उच्चायंतहु कण्हहु दुज्जणदेहवियारणतण्हहु ।
पवरकरिकरायारहिं बाहहिं पाहाणुट्टियभूसणरेहहिं ।

११

स्निग्ध आधे योजन विस्तीर्ण, तरह-तरहके वनवृक्षोंसे आच्छन्न, जिनपदकी सेवाके समान फलकी भाजन, अनेक लाखों मुनियोंको मोक्ष-सुख देनेवाली। पुण्यसे पवित्र और पापका क्षय करनेवाली। वह शिला ऐसी दिखाई देती है मानो सिद्धिरूपी भट्टारिका हो। कहींपर वह हाथियोंके दाँतोंके अग्रभागसे खण्डित थी, कहींपर सिंहोंके नखोंसे च्युत मोतियोंसे अलंकृत थी। कहींपर ज्वालाके जलनेसे प्रज्वलित थी, कहींपर सुअरकी दाढ़ोंके संघर्षणसे उत्पन्न ज्वालासे, कहींपर यक्षिणीके पैरोंकी केशरसे रंजित है, और चन्द्रकान्त मणिकी जलधारासे धुली हुई है, कहींपर मयूरोंके समूहसे नीली, और दावाग्निके धुएँसे काली। कहींपर सघन अन्धकारसे मुक्त, सर्पके फनसमूहके माणिक्योंसे चमकती है। कहींपर घूमते हुए कस्तूरीमृगके मदसमूहसे सुरभित है और भ्रमर समूहसे सेवित है, कहींपर पवित्रता, सुख और गौरव फैल रहा है और किन्नरोंके द्वारा गाये वेणु और वीणाके शब्द हैं। उसकी परिक्रमा और पूजा कर और राजाओंके द्वारा अक्षत लेकर—

घत्ता—नारायणसे फिर कहा गया हम देखें, तुम शिला उठाओ और बताओ कि वह अश्वग्रीवके लिए यम होगी या नहीं होगी ? ॥११॥

१२

जिसे दुर्जन देहके विदारणकी तृष्णा है, ऐसे तथा शिलाको उठाते हुए कृष्णकी, प्रवर गजकी सूँड़के समान तथा पत्थरपर लिखी गयी भूषण-रेखाओंवाली बाहुओंसे हरिण उरतलपर गिर पड़े।

---

११. १ AP अट्टद्जोयण° । २. A फलुभाविणि; P फलभाविणि । ३. AP °जलणें । ४. A लिपइ । ५. A णीलमणिणियरहिं । ६. P वणदव° । ७. AP मृगणाहि° । ८. AP सुरहिपसेविय । ९. A °गारउ । १०. °वीणारउ । ११. A उच्चावहि; P ओचावहि । १२. A दावइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उरयलि णिवडियाइं सारंगइं दसदिसि वहिवि गयाइं विहंगइं ।
पंतिणिबद्धइं कसिणइं अरुणइं णं रिउकामिणिकंठाहरणइं ।
दिट्ठइं णायउलाइं चलंतइं णं अरिअंतइं लंबललंतइं ।
गेरुयवाणिउं वियलिउं रत्तउं रुहिरु णाइ वइरिहि णिग्गंतउं ।
हंसपंति णहमंडलि धावइ पडिभडट्ठिमाला इव भावइ ।
भमरामेलउ णीलउ लोलइ रोसहुयासधूमु णं घोलइ ।
दलियइं मलियइं वेल्लीभवणइं णावइ खलयणपट्टणभवणइं ।
णट्ठइं कीलासुरणिउरुंबइं णिग्गयाइं णं सत्तुकुडुंबइं ।

घत्ता—उद्दंडकरेहिं सिल कण्हें उच्चाइय ॥
पडिसत्तुधरित्ति हरिवि णाइं दक्खालिय ॥१२॥

१३

उच्चाइय सिल सोहइ तहु करि अट्ठमभूमि व भुवणत्तयसिरि ।
जं चालिय सिल सिरिरमणीसें तं सो संथुउ जलणजडीसें ।
संथुउ अवरु पयावइ राएं संथुउ बहुमहिवइसंघाएं ।
संथुउ लंगलहररविकित्तिहिं संथुउ सुरणरविसहरपत्तिहिं ।
एंवहिं तुहुं जि देव महिराणउ तुज्झु पुरिसु जगि णत्थि समाणउ ।

विहंग डरकर दसों दिशाओंमें भाग गये। पंक्तिबद्ध काले और लाल वे ऐसे मालूम होते थे मानो शत्रुकामिनियोंके कण्ठाभरण हों। चलते हुए नागकुल ऐसे दिखाई दिये, मानो शत्रुओंकी चंचल आँतें हों। गिरता हुआ लाल-लाल गेरूका जल ऐसा मालूम होता है मानो शत्रुका निकलता हुआ खून हो। हंसोंकी कतार आकाशमण्डलमें उड़ती है मानो शत्रु योद्धाओंकी अस्थिमाला हो, नीला भ्रमरसमूह इस प्रकार मँड़राता है, मानो क्रोधरूपी आगका धुआँ व्याप्त हो रहा हो। लताभवन चूर्ण-चूर्ण होकर मैले हो गये, मानो दुष्टजनोंके नगर और भवन हों। क्रीड़ासुरोंके समूह इस प्रकार नष्ट हो गये मानो शत्रुओंके कुटुम्ब निकल पड़े हों।

घत्ता—कृष्णने अपने ऊँचे हाथोंसे शिलाको उठा लिया जैसे उसने प्रतिशत्रुकी धरतीका हरण कर दिखाया हो ॥१२॥

१३

उठायी गयी शिला उसके हाथमें ऐसी दिखाई देती है जैसे भुवनत्रयके सिरपर मोक्षभूमि हो। जब लक्ष्मीरूपी रमणीके पति नारायणने शिलाको चलायमान कर दिया तो ज्वलनजटीने उनकी स्तुति की, बलभद्र और सूर्यके समान कीर्तिवाली सुर-नर और विषधरोंकी पंक्तिने स्तुति की—"हे देव, इस समय तुम्हीं पृथ्वीके राजा हो, जगमें तुम्हारे समान दूसरा पुरुष नहीं है, तुम पुरुषोत्तम हो, तुम धरतीको धारण करनेवाले हो, गिरते हुए भाइयोंके लिए तुम आधारस्तम्भ हो,

१२. १. AP किसिणइं। २. AP °वाणिउ। ३. AP रुहिरु। ४. णावइ। ५. AP उडंड्ड°। ६. AP कण्हेणुच्चालिय।

१३. १. AP °विसहरपंतिहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुहुं पुरुसोत्तमु तुहुं धरणीहरु णिवडंतहं बंधहुं लग्गणतरु ।
तुहुं इक्खाउवंसवरधयवडु तुह पडिमल्लु णत्थि तिहुवणि भडु ।
साहु साहु तुह सोहइ विक्कमु अण्णहु एहउ कासु परक्कमु[3] ।
एम भणंतहं घोसगहीरइं कउ कलयलु दिण्णइं जयतूरइं ।
परिमलबहलइं वण्णविचित्तइं अमरहिं पंजलिकुसुमइं घित्तइं ।
चंडहिं भुयदंडहिं पडिपेल्लिय पुणु सिल माहवेण तहिं घल्लिय ।
मालालंकिइ मउडि पसत्थइ कालभवित्ति णाइ रिउमत्थइ ।

घत्ता—खगमहिवइणाह वणु मेल्लिवि पडिआइय ॥
हरिबलसंजुत्त पोयणणयरु पराइय ॥१३॥

१४

अहिवंदिय दहिअक्खयसेसहं पुरि पइसंतहं ताहं णरेसहं ।
मंदिरि मंदिरि मंगलकलयलु णच्चइ कामिणि घुम्मइ मद्दलु[2] ।
मंदिरि मंदिरि छडरंगावलि बज्झइ तोरणु चित्तधयावलि ।
मंदिरि मंदिरि कलस सउप्पल णिहिय वयणविलुलियपल्लवदल ।
ता तहिं जंपइ पुरणारीयणु सुहयालोयणपयडियघणथणु ।
का वि भणइ इहु राउ पयावइ एहु खगाहिउ रहणेउरवइ ।
का वि भणइ इहुं[3] सो संकरिसणु हलहरु हलि अकरंतु वि करिसणु ।
का वि भणइ इहु सो णारायणु जेण सयंपहाहि हित्तउं मणु ।

तुम इक्ष्वाकुकुलके श्रेष्ठ ध्वजपट हो, तुम्हारे समान प्रतिभट त्रिभुवनमें नहीं है। साधु-साधु, तुम्हें पराक्रम शोभा देता है। और दूसरे किसका ऐसा पराक्रम हो सकता है?" इस प्रकार कहते हुए उनका कलकल शब्द होने लगा, गम्भीर घोषतूर्य बजा दिये गये। परिमलोंसे प्रचुर रंगबिरंगी कुसुमांजलियाँ देवों द्वारा छोड़ी गयीं। प्रचण्ड बाहुदण्डों द्वारा प्रेरित उस शिलाको माधव (त्रिपृष्ठने) वहीं इस प्रकार रख दिया, मानो मालासे अंकित मुकुट और प्रशस्त शत्रु मस्तकपर मानो काल—भवितव्यता हो।

घत्ता—विद्याधरों और मनुष्योंके राजा वन छोड़कर वापस आ गये और त्रिपृष्ठकी सेनासे संयुक्त वे पोदनपुर पहुँचे ॥१३॥

१४

दही, अक्षत और निर्माल्यसे नगरमें प्रवेश करते हुए उन नरेशोंकी अभिवन्दना की गयी। घर-घरमें मंगल कलकल होने लगता है। कामिनी नृत्य करती है। मृदंग बज उठता है। घर-घरमें षड्रंगावली होने लगती है, तोरण और रंगबिरंगी ध्वजमाला बांधी जाने लगती है। घर-घरमें, जिनके मुखपर पल्लवदल मर्दित हैं, ऐसे कमल सहित कलश रख दिये गये हैं। तब वहाँ, सुन्दरके अवलोकनमें जिसके सघन स्तन प्रकट हुए हैं, ऐसा पुरनारीजन कहता है। कोई कहती है कि यह राजा प्रजापति है। यह विद्याधर राजा रथनूपुरका स्वामी है, कोई कहती है, हे सखी, यह वह हलधर (बलभद्र) है जो कर्षण नहीं करते हुए भी हलधर (किसान) हैं। कोई कहती है कि यह वह

२. A इक्खाकवंस°; P इक्खाववंस°। ३. A परिक्कमु। ४. °कियमउडपसत्थइ।
१४. १. A पुरपयसंतहं; P पुरि पयसंतहं। २. A मंदलु। ३. AP पहु। ४. AP अकरंतउ करिसणु।
५. P सयंपयाहि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जेण सिलायलु णहि संचालिउ जेण जसेण गोत्तु उज्जालिउ।
दीसइ रूवें वम्महु जेहउ पइ पुण्णहिं जइ लब्भइ एहउ।

घत्ता—तं पुरु पइसिवि विरइयपणयपसायहिं॥
वड्ढारिउ णेहु खगवइमहिवइरायहिं॥१४॥

१५

बिहिं बि विवाहु तेहिं पारद्धउ कउ मंडउ रयणंसुसिणिद्धउ[1]।
खंभि खंभि पज्जलियपईवहिं लंबियमोत्तियदामकलावहिं।
पवणुद्धूयचिंधपब्भारहिं मरगयमालातोरणदारहिं।
वज्जंतहिं पडुपडहहिं संखहिं णाणावाइत्तेहिं असंखहिं।
कामिणिकरयलघल्लियसेसहिं दियवरदेवदिण्णआसीसहिं।
वियसियसयदलसरलदलच्छें णियसुहिवच्छलेण सिरिवच्छें।
परिणिय[2] सुंदरेण सा सुंदरि गउ चरु जहिं णिवसइ जगकेसरि।
राउ मऊरगीवणिवतणुरुहु खयरमउडचुंबियपयसररुहु।
अद्धचक्कि चक्कंकियकरयलु दढभुयजुयअंदोलियपरबलु।
भणिउ तेण महिकामिणिमाणेंगु[3] भुयणवणंतवासिपंचाणणु[4]।
देव तुरंगगीव बुहणिरसिउं[5] णिसुणि णिसुणि सिहिजडिणा विलसिउं।

नारायण है कि जिसने स्वयंप्रभाके मनका हरण कर लिया है। जिसने शिलातलको आकाशमें घुमा दिया, जिसने अपने यशसे गोत्रको उज्ज्वल किया, जो रूपमें कामदेवके समान है, यदि पुण्योंसे इस प्रकारका पति पा लिया जाये।

घत्ता—उस नगरमें प्रवेश कर जिन्होंने प्रणय-प्रसार किया है ऐसे विद्याधर-राजा और मनुष्य-राजामें बहुत बड़ा स्नेह हो गया॥१४॥

१५

उन दोनोंने विवाह प्रारम्भ किया। उन्होंने रत्नकिरणोंसे स्निग्ध मण्डपकी रचना की। खम्भे-खम्भेपर प्रज्वलित प्रदीपों, लटकती हुई मुक्तामालाओंके समूहों, हवासे उड़ती हुई ध्वजके प्रभारों, मरकत मालाओंके तोरणद्वारों, बजते हुए पडुपटहों-शंखों और असंख्य नाना वाद्यों, कामिनियोंके करतलों द्वारा डाले गये निर्माल्यों, द्विजवर देवोंके द्वारा दिये गये आशीर्वादोंके साथ, जिनकी आँखें विकसित कमलके समान सरल हैं ऐसे, तथा अपने सुधीजनोंके प्रति वत्सल सुन्दर नारायणने उस सुन्दरीसे विवाह कर लिया और दूत वहाँ गया जहाँ विश्वकेशरी, मयूरग्रीव राजाका पुत्र, जिसके चरणकमल विद्याधरोंके मुकुटोंसे चुम्बित हैं, ऐसा चक्रसे अंकित करतलवाला और दृढ़ बाहुबलसे शत्रुसेनाको आन्दोलित करनेवाला अर्ध चक्रवर्ती राजा (अश्वग्रीव) रहता था। भूमिरूपी स्त्रीके द्वारा मान्य और संसाररूपी वनके भीतर निवास करनेवाले उससे उसने कहा, "हे देव अश्वग्रीव, ज्वलनजटीकी पण्डितोंके द्वारा निरस्त चेष्टा सुनिए। आप जैसे विद्याधर राजाको

१५. १. A रयणंसुसमिद्धउ; P रयणसुसमिद्धउ। २. AP परणिय। ३. A °माणण। ४. A पंचाणण।
५. P तुहुं णिरसिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पइं णहयरणरणाहु पमाइवि पोयण[6]पुरवइपुत्तहु जाइवि।
सामण्णहु वियलियगुणणियरहु कण्णारयणु दिण्णु भूमियरहु।
घत्ता—अह सो सामण्णु भणहुं ण[7] जाइ खगाहिव॥
जें मारिउ सीहु चालिय सिल वसिकय णिव ॥१५॥

१६

तं णिसुणिवि णरणाहु विरुद्धउ णं केसरि गयगंधविलुद्धउ।
धगधगधगधगंतु चंचलसिहु घयधाराहिं सित्तु णं हुयवहु।
रत्तणेत्त[1]रुइराविय दसदिसु पुप्फयंतु णं फणि आसीविसु।
णं जेंउ[2] तिहुयणगिलणकयायरु पर[3]सिरिहर असिवरपसरियकरु।
चवइ सरोसु भिउडिभँड[4]भीसणु करतलप्पताडियरयणासणु[5]।
अज्जु जलणजडि मारिवि संगरि घिवमि कयंतवयण[6]विवरंतरि।
सहुं जावँाएं[7] देमि दिसाबलि भुक्खइ भग्गउ धवुँ[8] पावउ कलि।
तहिं अवसरि पालियनृव[9]सासणु रायसहासहिं मग्गिउ पेसणु।
ते णउ पेसइं[10] सइं संचल्लिउ पहु हरिमस्समंति[11] बोल्लिउ।
जो मयवइजीविउं उद्दालइ कोडिसिलायलु जो संचालइ।
सो सामण्णु ण होइ णिरुत्तउं तुम्हहुं अप्पणु जाहुं ण जुत्तउं।

छोड़कर तथा जाकर पोदनपुर नगरके राजाके अत्यन्त सामान्य, गुणसमूहसे रहित, पुत्रको मनुष्य होते हुए भी कन्यारत्न दे दिया।"

घत्ता—अथवा उस सामान्यका हे राजन्, वर्णन नहीं किया जा सकता कि जिसने सिंहको मार डाला, शिलाको चला दिया और राजाको अपने वशमें कर लिया ॥१५॥

१६

यह सुनकर नरनाथ (अश्वग्रीव) विरुद्ध हो उठा मानो हाथी की गन्धका लोभी सिंह हो, धक-धक-धक जलती हुई चंचल शिखावाली, घृत धाराओंसे सींची गयी मानो आग हो, लाल-लाल नेत्रोंकी कान्तिसे दसों दिशाओंको रंजित करनेवाला आशीविष, पुष्पके समान दाँतवाला मानो नाग हो, जो मानो त्रिभुवनको निगलनेमें आदर रखनेवाला, दूसरेकी श्रीका अपहरण करनेवाला, असिवरसे हाथ फैलाये हुए यम हो। वह क्रोधमें आकर भौंहोंसे भटोंके लिए भयंकर हाथके प्रहारसे सिंहासनको प्रताड़ित करनेवाला वह कहता है कि मैं आज युद्धमें ज्वलन जटीको मारकर, यमके मुखविवरके भीतर डाल दूँगा और दामादके साथ उसको दिशाबलि दूँगा। भूखसे नष्ट यम तृप्ति प्राप्त कर लेगा। उस अवसरपर नृपशासनका पालन करनेवाले उससे हजारों राजाओंने आज्ञा माँगी। परन्तु उसने नहीं भेजा, वह स्वयं चला। हरिश्मश्रु मन्त्रीने उससे कहा कि जो सिंहके जीवका नाश करता है, जो कोटिशिलाको चलाता है, वह निश्चय ही सामान्य व्यक्ति नहीं है। इसलिए तुम्हें स्वयं जाना उचित नहीं है।

६. AP पोयणपुरिवइ। ७. P omits ण।

१६. १. AP रत्तणेत्तु। २. AP जमु। ३. A °सिरहर°। ४. AP भिउडिभय°। ५. P मयणासणु। ६. AP कयंतदंतविवरंतरि। ७. AP जामाएं। ८. A धव; P धउ। ९. AP णिवसासणु। १०. AP पेसिय। ११. P हरिमंसुमुमंतिहिं बोलिउ; P गरिमस्समुमंतिहिं बोलिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—हयकंठें उत्तु विउस ण किं पि विवाएं ॥
किं सूरहु को वि वड्डिमु दीसइ तेएं ॥१६॥

१७

मज्झु वि पासिउं[1] को[2] जगि सूरउ   को महिवइ वरवीरवियारउ।
रयणमाल बद्धी मंडलगलि   हउं अवगण्णिउ जाइवि महियलि।
जेण कण्ण दिण्णी भूगमणहं   सो पइसरउ सरणु सिहिपवणहं।
सो पइसरउ सरणु देविंदहु   सो पइसरउ सरणु धरणिंदहु।
सो हउं कड्ढिवि[3] अज्जु जि फाडमि   वइवसपुरवरपंथें धाडमि।
सवणायण्णियपावससद्दें   सिल चालिज्जइ किं ण बलद्दें।
सीहु सीहु सोंडें सोसिज्जइ   एयहिं साहसेहिं लज्जिज्जइ।
तरुणीमग्गणचाडुयवंतें   किं वेहाविउ सो वरइत्तें।
मणिकुंडलमंडियगंडयलइं   दोहं वि तोडमि रणि सिरकमलइं।
एंव चवेवि धीरु हुंकारिवि   णिग्गउ मंतिमंतु अवहेरिवि।
संदाणियविमाण[4]परिवाडिहिं   परिवारिउ विज्जाहरकोडिहिं।
ओरुंजंतिहिं आहवभेरिहिं   जुयखइ[5] णाइ रसंतिहिं मारिहिं।
णं सायरु मज्जायविमुक्कउ   महिहरमेहल रुंभिवि थक्कउ।

घत्ता—अश्वग्रीव बोला, हे विद्वान्, विवादमें कुछ भी नहीं है, क्या तेजमें कोई भी सूर्यसे बड़ा दिखाई देता है ॥१६॥

१७

मेरी तुलनामें संसारमें कौन बड़ा है? कौन राजा वरवीरोंका विदारण करनेवाला है? कुत्तेके गलेमें रत्नोंकी माला बाँध दी गई, और मेरी उपेक्षा की गयी। धरतीतलपर जाकर जिसने भूमिपर चलनेवालोंके लिए कन्या दी है, वह आज पवन और आगमें प्रवेश करे, वह देवेन्द्रकी शरणमें जाये, वह धरणेन्द्रकी शरणमें प्रवेश करे, उसे मैं खींचकर आज ही फाड़ डालूँगा और यमपुरके मार्गपर भेज दूँगा। जिसने अपने कानोंमें प्रावृट्-शब्द सुना है ऐसे बैलके द्वारा शिलाका संचालन क्यों न किया जाये? सीह और सीधु (सिंह और मद्य) का शोषण शौंड (मद्यप और गज) के द्वारा किया जाता है, इन साहसोंके द्वारा लज्जा आती है, युवती माँगनेके लिए चापलूसी करनेवाले वरदत्तने इस प्रकारकी गर्जना क्यों की? जिसके गण्डतल मणिकुण्डलोंसे मण्डित हैं, ऐसे दोनों सिर-कमलोंको तोड़ूँगा। यह कहकर और हुंकारकर वह धीर मन्त्रीके मन्त्रकी अवहेलना करके गया। प्रदर्शन किया गया है विमानोंकी परम्पराका जिसमें ऐसी विद्याधरोंकी श्रेणियोंके द्वारा वह घेर लिया गया। बजते हुए युद्धके नगाड़ोंके साथ, युगक्षयमें जैसे बजती हुई मारियोंके साथ मानो समुद्र मर्यादाहीन हो उठा हो। और मानो महीधरकी मेखलाको रुद्ध कर बैठ गया हो।

---

१७. १. AP पासि। २. P को वि जगि। ३. A कड्ढमि। ४. AP °विवाण°। ५. A जुगखइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—इह दाहिणभरहि वणि जलंततणुसारइ[6] ॥
आवासिउं सेण्णु पुप्फदंतकरवारइ ॥१७॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए
महाकव्वे तिविट्ठसिंघमारणकोडिसिलुच्चायणं[7] णाम एक्कवण्णासमो
परिच्छेओ समत्तो ॥५१॥

घत्ता—इस प्रकार दक्षिण भरतक्षेत्रके वनमें जिसमें कि तृणसमूह जल गया है, तथा सूर्य-चन्द्रमाकी किरणोंको रोकनेवाले वनमें उसने सैन्यको ठहरा दिया ॥१७॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का त्रिपृष्ठके द्वारा
सिंहमारण और कोटिशिला उत्तालन नामक इक्यावनवाँ परिच्छेद
समाप्त हुआ ॥५१॥

---

६. A जलतणकणसारइ; P जलवणकणसारइ। ७. AP कोडिसिलासंचालणं तिविट्ठुविवाहकल्लाणं णाम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ५२

दलियारिंदकरि रूसिवि हरि खगकुलभवणपईवहु ॥
चिरभववइरवसु आलद्धमिसु भिडिउ गंपि हयगीवहु ॥ध्रुवकं॥

१

दुवई—खुहियखगिंदविंदकिंकररवगज्जियगंधसिंधुरो ॥
जाव तिखंडखोणिपरमेसरु चल्लिउ तुरयकंधरो ॥

तावेत्तहि पोयणणामणयरि भूगोयरवइघरवसियखयरि ।
पणवियसिरेण मउलियकरेण सिहिजडिहि सिट्ठु जाइवि चरेण ।
भो खगवइ णिरु अण्णायवट्टि तुज्झुप्परि आयउ चक्कवट्टि ।
आरुट्ठउ कण्णाकारणेण जं एव समासिउ चारणेण ।
तं सुणिवि पयावइ तेण भणिउ अम्हहिं सुहुं सुत्तउ सीहु वणिउ ।
सो उट्ठिउ एवहिं बलमहंतु धणुलंगूलउ सरणहरवंतु ।
असिजीहापल्लव ऊललंतु मंतिज्जइ एवहिं सो ज्जि मंतु ।
उवसमइ जेण सो कूरचित्तु ता सस्सुएण सहसति वुत्तु ।

सन्धि ५२

शत्रुगजोंका नाश करनेवाले नारायण और बलभद्र पूर्वभवके वैरके वशीभूत होकर और बहाना पाकर क्रोधपूर्वक विद्याधरकुल वलयके प्रदीप अश्वग्रीवसे जाकर भिड़ गये।

घत्ता—क्षुब्ध विद्याधरेन्द्र-समूहके अनुचरोंके शब्दसे जिसका गन्धहाथी गर्जित है, ऐसा त्रिखण्ड धरतीका स्वामी अश्वग्रीव जबतक चला—

१

तबतक, यहाँ जिसमें मानवराजाके घर विद्याधर बसे हुए हैं, ऐसे पोदनपुर नगरमें सिरसे प्रणाम करते हुए और हाथ जोड़कर दूतने ज्वलनजटीसे जाकर कहा—"हे विद्याधरराज, अत्यन्त अन्यायी चक्रवर्ती राजा तुम्हारे ऊपर आया है। कन्याके कारण वह तुमसे क्षुब्ध है।" जब दूतने इस प्रकार संक्षेपमें कथन किया तो उसने (ज्वलनजटीने) प्रजावतीसे कहा कि "हमने सुखसे सोते हुए सिंहको घायल कर दिया है, बलसे महान् इस समय धनुष जिसकी पूँछ है और जो तीररूपी नखोंसे युक्त है, ऐसा वह अपनी तलवाररूपी जिह्वाको लपलपाता हुआ उठ खड़ा हुआ है, इस समय वही मन्त्र करना चाहिए जिससे क्रूरचित्त वह शान्त हो जाये। आग वहीं

A gives, at the beginning of this Saṃdhi, the stanza दीनानाथधनं etc. for which see page 139. P gives it at L. K does not give it anywhere.

१. १. AP °वंद° । २. AP °सेंधुरो । ३. AP °घरि वसिय° । ४. A सो खगवइ । ५. अण्णायवत्ति । ६. A आवइ । ७. A तं णिसुणि । ८. A सुहि । ९. A धुणिउ; P वणिउ । १०. A सुम्मएण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तइ जलइ जलणु जइ णत्थि वारि जइ णत्थि संति तो पडइ मारि।
भो आणइ मरणु पहाणवइरु [11]भो एत्थु ण णिज्जइ कालु सुइरु।
पहु लहु दीसइ जुंजेवि सामु ता विहसिवि भासइ पढमे[12]रामु।

घत्ता—सज्जणु उवसमइ खलु किं खमइ बोल्लंतहुं[13] सुइमिट्ठउं।
घिउ हुयवह[14]मिलिउं जललवजलिउं बप्प कि ण पइं दिट्ठउं ॥१॥

२

दुवई—मित्त तिविट्ठि रुट्ठि गिरिधीर वि एंति ण वइरिणो रणं ॥
किं विसहंति दंति हरिणाहिवखरकररुहवियारणं ॥
जइयहुं अहिवलयविलंबमाण[1] वणि उच्चाइय सिल इलसमाण[2]।
मइं जाणिउं तइयहुं कहिं[3] वि कालि देवहुं पेक्खंतहं भडवमालि।
तोडेसइ हयकंधरहु सीसु रत्तच्छिवत्तु[4] भूभंगभीसु।
को हालाहलु जीहाइ कलइ को करयलेण हरिकुलिसु[5] दलइ।
को गयणि जंतु अहिमयरु खलइ को णियबलेण धरणियलु तुलइ।
को कालु कयंतहु माणु मलइ को जलणि णिहित्तु वि णाहिं जलइ।
को फणिवइफण[6]मणिणियरु हरइ को पडिय विज्जु सीसेण धरइ।
को भंडइ सहुं महुं भायरेण तो[7] जंपिउ मंति सायरेण[8]।

जलती है जहाँ पानी नहीं होता, जहाँ शान्ति नहीं होती तो वहाँ आपत्ति आती है, प्रधानका वैर, मृत्युको लाता है, अरे यहाँ बहुत समय नहीं बिताना चाहिए। हे प्रभु, मिलनेसे शीघ्र साम दिखाई देगा।" (यह सुनकर) तब प्रथम राम (बलभद्र विजय) ने हँसकर कहा—

घत्ता—सज्जन शान्त होता है, कानोंको मीठा लगनेवाला बोलनेपर भी क्या दुष्ट क्षमा करता है? हे सुभट, आगसे मिला हुआ (जलता हुआ) और जलकणोंसे मिला हुआ घी क्या तुमने नहीं देखा? ॥१॥

२

हे मित्र, त्रिपृष्ठके क्रुद्ध होनेपर भी पहाड़की तरह धीर वैरी रणमें नहीं आते। सिंहके द्वारा तीखे नखोंसे विदारणका क्या गज उपहास करते हैं? जब सर्पमण्डलसे अवलम्बित पृथ्वी जैसी शिलाको उसने उठाया था, तभी मैंने जान लिया था कि देवोंके देखते हुए, योद्धाओंके कोलाहलके बीच किसी भी समय वह अश्वग्रीवके लाल-लाल आँखोंवाले तथा भ्रूभंगसे भयंकर सिरको तोड़ेगा? विषको जीभसे कौन छूता है? करतलसे इन्द्रके वज्रको कौन चूर-चूर कर सकता है; आकाशमें जाते हुए सूर्यको कौन स्खलित कर सकता है? कौन अपनी शक्तिसे पृथ्वीको तौल सकता है? कौन काल और यमके मानको मैला कर सकता है? कौन आगमें रखे जानेपर भी, नहीं जलता? नागराजके फनके मणिसमूहका अपहरण कौन कर सकता है? गिरती हुई बिजलीको कौन धारण कर सकता है? मेरे भाईके साथ कौन युद्ध कर सकता है? तब सागर मन्त्री बोला—"हे बलभद्र और चन्द्रमाके समान कान्तिवाले, आपने जैसा जो जाना है, उसमें जरा भी

११. AP धुउ। १२. A पढमु रामु। १३. A बोल्लंतहो। १४. A हुववहमिलिउ; P हुयवहि मिलिउ।
२. १. A °विलंबमाणे। २. A °समाणे। ३. AP तहिं। ४. AP रत्तच्छिवंतु। ५. A °कुलिसु। ६. A फणिवइफणिमणु। ७. AP तो। ८. A मंतें सायरेण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भो सीराउह तुहिणयरकंति जं पइं जाणिउं तिह तं ण भंति ।
लइ तो वि देव किज्जइ परिक्ख उवइसहु कुमारहु मंतसिक्ख ।
बीयक्खराइं मणि संभरंतु आसीणु सत्तरत्तें[9] तुरंतु ।
जइ साहइ विज्जादेवयाउ तो करइ परहं मरणावयाउ ।
विज्जासाहणविहिभेयभिण्णु ता ससुरएण उवएसु दिण्णु ।
थिउ झाणारूढउ हलि उविंदु सत्तमदिणि कंपाविउ फणिंदु ।
घत्ता—विज्जाजोइणिउ वरदाइणिउ हरिरामहुं[10] पणवंतिउ ॥
रिउजमदूइयउ[11] खणि आइयउ देहु णियमु पभणंतिउ ॥२॥

३

दुवई—गारुडविज्ज पुज्जं[1] संसाहिय हरिणा भुवणखोहिणी ॥
अवरं[2] महंतसत्तुसंचूरणि पवरं[3] वि णाम रोहिणी ॥
खग्गथंभणी[4] बलणिसुंभणी[5] ।
गयणचारिणी तिमिरकारिणी ।
सीहवाहिणी वइरिमोहणी ।
वेयगामिणी दिव्वकामिणी ।
विवरवासिणी णायवासिणी ।
जलणवरिसिणी सलिलसोसणी[6] ।
धरणिदारणी[7] कुडिलमारणी ।
बंधमोयणी विविहरूविणी ।
मुक्ककोंतला[8] लोहसंखला ।
छइयदसदिसी कालरक्खसी ।

भ्रान्ति नहीं। तब भी हे देव, लो, परीक्षा कर लीजिए; कुमारके लिए मन्त्रशिक्षाका उपदेश दीजिए; वह तुरन्त सात रात तक बैठकर बीजाक्षरोंका ध्यान करता हुआ यदि विद्यादेवियाँ सिद्ध कर लेता है, तो वह दूसरोंके लिए मरणरूपी आपत्ति कर सकता है।" तब ससुरने विद्या-साधनकी विधिके रहस्यसे परिपूर्ण उपदेश उसे दिया। बलभद्र और नारायण ध्यानमें लीन होकर बैठ गये। सातवें दिन नागराज कम्पायमान हो उठा।

घत्ता—वर देनेवाली विद्यारूपी योगिनियाँ बलभद्र और नारायण (विजय और त्रिपृष्ठ) को प्रणाम करती हुई शत्रुके लिए यमदूतीकी तरह, 'आदेश दो' कहती हुई आयीं ॥२॥

३

नारायणने संसारको क्षुब्ध करनेवाली पूज्य गारुड़विद्या सिद्ध कर ली। एक और दूसरी महान् शत्रुको चूर करनेवाली रोहिणी नामकी महान् विद्या सिद्ध कर ली। खड्गस्तम्भिनी, वननिशुंभिनी; आकाशगामिनी, अन्धकारकारिणी, सिंहवाहिनी, वैरीमोहिनी, वेगगामिनी, दिव्यकामिनी, विवरवासिनी, नागवासिनी, ज्वलनवर्षिणी, सलिलशोषिणी, भूमिविदारिणी, कुटिलमारिणी, बन्धमोचनी, विविधरूपिणी, मुक्तकुन्तला, लोहश्रृंखला, दसदिशा-आच्छादिनी,

९. AP सत्तरत्तिउ। १० A हरिरायहो। ११. P दूइओ।
३. १. A पुंज। २. A सयल महंत सत्त°; P सयलमहंतु सत्तु°। ३. AP अवर वि। ४. AP °थंभिणी।
५. AP °णिसुंभिणी। ६. AP °सोसिणी। ७. P °दारिणी। ८. AP विविहकुंतला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वयणपेसला विजयमंगला ।
रिक्खमालिणी तिक्खसूलिणी ।
चंदमउलिणी सिद्धवालिणी ।
पिंगलोयणा धुणियफणिफणा ।
थेरि थुरुहुरी घोर[9]घोसिरी ।
भीरुभेसिरी पलयदंसिरी ।
इय सणामहं दिण्णकामहं ।

घत्ता—पंच समागयइं विज्जहं[10] सयइं दक्खवंति सवसित्तणु ॥
तोसियवासवहं बलकेसवहं घरि करंति दासित्तणु ॥३॥

४

दुवई—विज्जागमणमुणिइ हरिपोरिसि पसरियसिरिविलासए ॥
णिहय पयाणभेरि जगभइरव वियलिइ सयणसंसए ॥
विज्जाहरमहिहरणाह बे वि जल[3]णजडि पयावइ धुरि करेवि ।
चलियइं सेण्णइं रिउरणमणाइं बलएववासुएवहं तणाइं ।
णहु कंपइ कंपंतहिं धयहिं महि हल्लइ गच्छंतहिं गएहिं ।
रह चिक्कवंत चल चिक्करंति पडिवक्खमरणु णं वज्जरंति ।
जाएं हरिखुरधूलीरएण धूसरिउ सूरु दूरंगएण ।
भडरोलें सुत्तुट्ठिउ कयंतु छत्तहिं संछण्णउं दहदियंतु ।
जोइय जणेण परवीरजूर सोमुग्गदेह णं चंद सूर ।

कालराक्षसी, वचनपेशला, विजयमंगला, ऋक्षमालिनी, तीक्ष्णशूलिनी, चन्द्राच्छादिनी, सिद्ध-पालिनी, पिंगलोचना, फणीफणध्वननी, स्थविरा, स्थूलघरा, घोरघोषिणी, भीरुभीषिणी, प्रलय-दर्शिनी इन नामोंवाली और कामनाओंको प्रदान करनेवालीं—

घत्ता—एक सौ पांच विद्याएँ अपनी अधीनता उसके लिए दिखाती हैं। और इन्द्रोंको सन्तुष्ट करनेवाले बलभद्र और नारायणके घर दासता करती हैं ॥३॥

४

विद्याओंके आगमनसे नारायणका पौरुष ज्ञात होनेपर तथा लक्ष्मीका विलास फैलनेपर और स्वजनोंका संशय दूर होनेपर विश्वभयंकर प्रयाण-भेरी बजा दी गयी। दोनों विद्याधरराजा और महीधरराजा ज्वलनजटी और प्रजापतिको आगे कर शत्रुसे युद्ध करनेका मन रखनेवाली बलदेव और वासुदेवकी सेनाएँ चलीं। काँपती हुई ध्वजाओंसे आकाश काँप उठता है, गजोंके चलनेपर धरती काँप उठती है। रथके चिक्कार करनेपर धरती चीत्कार कर उठती है, मानो शत्रुपक्षकी मृत्युको घोषित कर रहे हों। दूर तक गयी हुई, घोड़ोंके खुरोंकी धूलिरजसे सूर्य धूसरित हो गया। योद्धाओंके शब्दसे सोया हुआ यम उठ बैठा। दसों दिशाएँ छत्रोंसे आच्छन्न हो गयीं। शत्रुवीरोंको सतानेवाले उन्हें लोगोंने इस प्रकार देखा, मानो सौम्य और उग्रदेहवाले चन्द्र-सूर्य हों;

९. AP °घोसिणी । १०. A विज्जइं सयइं ।
४. १. P °गमणु मुणिइ । २. A सइणसंसए । ३. A जलणजडि । ४. P घर ।

णं अट्टहास बहलंधयार णं उवसमरस सिंगारभार।
गच्छंतवारणारूढदेह हलहर हरि णं सियअसियमेह।
झल्लरिमुइंगकाहलरवेण दियहेहिं गंपि सचउच्छवेण।
कुसुमियपियालककोलएलि तहिं थक्क संदणावत्तसेलि।
घत्ता—पवणचलंतियहिं धयपंतियहिं णहु णं उप्परि घुलियउं॥
णच्चियणिवणडिहिं पिहुपडकुडिहिं खोणीयलु चित्तलियउं॥४॥

५

दुवई—चिंचिणिचारचूयचवचंपयचंदणबद्धकुंजरे॥
थिइ पडिबलि तुरंगहिलिहिलिरवे सयडावत्तगिरिवरे॥
जोएवि सिविरु णवघणसरेहिं विण्णविउ णवेप्पिणु चरणरेहिं।
अरिपुरवरघरसंदिण्णडाहु विज्जाहरभूयरभूमिणाहु।
आढत्तउ जिणु वम्महसरेहिं आढत्तउ आहंडलु णरेहिं।
आढत्तउ खज्जोएहिं भाणु आढत्तउ तरुणियरें किसाणु।
आढत्तउ केसरि जंबुएहिं आढत्तउ जउ जीवियचुएहिं।
आढत्तउ गयवरु गद्दहेहिं आढत्तउ मंतुग्गमु गहेहिं।
आढत्तउ रइवइ कइयवेहिं आढत्तउ मोक्खु वि जडतवेहिं।
भो देवदेव संधियसरेहिं आढत्तउ तुहुं णियकिंकरेहिं।

मानो अट्टहास और सघन-अन्धकार हों, मानो शान्तरस और शृंगारभार हो, चलते हुए गजोंपर आरूढ शरीर बलभद्र और नारायण ऐसे मालूम होते हैं, मानो सफेद और काले मेघ हों। झल्लरी मृदंग और काहलोंके शब्दोंसे और युद्धके उत्साहके साथ कुछ दिनों तक चलकर वे, जिसमें प्रियाल अशोक और एला वृक्ष खिले हुए हैं, ऐसे स्यंदनावर्त पर्वतपर वे ठहर गये।

घत्ता—हवासे चलती हुई ध्वजपंक्तियोंसे मानो ऊपर आकाश घूम उठा और नीचे नाचती हुई राजनर्तकियों और विशाल पटकुटियोंसे धरतीतल रंग-विरंगा हो उठा॥४॥

५

जिसमें, चिंचिणी चार आम्र घौ चम्पक और चन्दन वृक्षोंसे हाथी बँधे हुए हैं और घोड़ोंके हिनहिनानेका शब्द हो रहा है, ऐसे शकटावर्त पहाड़पर शत्रुसेना ठहर गयी। नवघनके समान स्वरवाले चर मनुष्योंने शिविर देखकर, प्रणामकर राजासे निवेदन किया—"जिसने शत्रु नगरोंके घरोंको आग लगा दी है और जो विद्याधर मनुष्योंकी भूमियोंके स्वामी हैं, ऐसे हे देवदेव, कामदेवके बाणोंने जिनवरको आक्रान्त किया है, मनुष्योंने इन्द्रको आक्रान्त किया है, जुगनुओंने सूर्यको आक्रान्त किया है, तरुसमूहने आगको आक्रान्त किया है, सियारोंने सिंहको आक्रान्त किया है, जीवनसे च्युत लोगोंने यमको आक्रान्त किया है, गधोंने गजवरको आक्रान्त किया है, ग्रहोंने मन्त्रके उद्गम-को आक्रान्त किया है, कपटोंने कामदेवको आक्रान्त कर लिया है, जड़तपस्वियोंने मोक्षको आक्रान्त किया है, जिन्होंने अपने तीरोंका सन्धान कर लिया है ऐसे अपने ही अनुचरोंने तुम्हें

---

५. A सिंगारहार। ६. P समरु°। ७. AP णिवणडि°।
५. १. A °चारुचूयघव°; P °चारचूयघय। २. A पडिबलतुरंग°। ३. AP जमु। ४. A पत्तंगमु। ५. AP कइवएहिं। ६. P जडभवेहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहणेउरवइ णरवइ सबंधु सहुं णंदणेण चंदाहिचिंधु।
अण्णेक्कु पयावइ पोयणेसु आरुट्ठु सुट्ठु खयकालवेसु।
अण्णेक्कु मुसलि तहिं कसणवासु अण्णु वि जो दिट्ठउ पीयवासु।
किं अक्खमि पहुसामत्थु तासु देव वि संकाइ णवंति जासु।
घत्ता—णिसुणिवि तुह चलणु खलयणमलणु देवयाउ साहेप्पिणु॥
वलइयधणुवलय णं खयजलय थिय महिहरि आवेप्पिणु॥५॥

६

दुवई—चवइ खगिंदचंदु करवालविहंडियतुरयकरिसिरे॥
रत्ततरंतमत्तरयणीयरि णिहणवि रिउं रणाइरे॥
ता कहइ मंति णामें विहाउ जगडिंभहु एवहिं तुहुं जि ताउ।
जइ आणालंघणु कयउ तेहिं सुय दिण्ण पडिच्छिय पत्थिवेहिं।
एहउ आयारु णराहिवाइं पेसिज्जउ दूयउ को वि ताहं।
सो दूयउ जो भासापवीणु सो दूयउ जो पंडिउ अदीणु।
सो दूयउ जो अहिमाणि दाणि सो दूयउ जो मियमहुरवाणि।
सो दूयउ जो गंभीरु धीरु सो दूयउ जो णयवंतु सूरु।
सो दूयउ जो परचित्तलक्खु सो दूयउ जो पोसियसपक्खु।
सो दूयउ जो बुज्झियविसेसु सो दूयउ जो सुविसिट्ठवेसु।

आक्रान्त किया है। रथनूपुरका स्वामी अपना बन्धु राजा (ज्वलनजटी), तथा पुत्रके साथ, चन्द्रमाके समान उज्ज्वल सर्पध्वजवाला एक दूसरा पोदनपुरका स्वामी प्रजापति क्षयकालके रूपमें तुमपर अत्यन्त क्रुद्ध है। एक ओर विजय बलभद्र नीलवस्त्रोंवाला है और दूसरा जो पीले वस्त्रोंवाला दिखाई देता है, मैं उसकी प्रभुसामर्थ्यका क्या वर्णन करूँ? देव भी शंकासे उसे नमन करते हैं।

घत्ता—तुम्हारे दुष्टजनोंका मर्दन करनेवाले प्रस्थानको सुनकर, विद्यादेवियोंको सिद्ध कर, जिन्होंने धनुषकी प्रत्यंचाओंको तान लिया है, ऐसे वे, मानो क्षयकालके मेघोंके समान पर्वतपर आकर ठहर गये हैं॥५॥

६

तब विद्याधर राजा कहता है, 'जिसमें घोड़ों और हाथियोंके सिर तलवारसे खण्डित होते हैं, तथा रक्तमें निशाचर तैरते हैं, ऐसे युद्धप्रांगणमें, मैं शत्रुको मारूँगा।" इसपर विधाता नामका मन्त्री कहता है, "इस समय विश्वरूपी बालकके तुम पिता हो, यदि उन राजाओंने आज्ञाका उल्लंघन किया है और दी हुई कन्याको स्वीकार कर लिया है, तो महाधिपोंका यही आचार है कि उनके पास कोई दूत भेजा जाये। दूत वह है जो भाषामें प्रवीण हो, वह दूत है जो विद्वान् और अदीन हो, वह दूत है जो स्वाभिमानी और दानी है, वह दूत है जो मधुर वाणी बोलनेवाला है, वह दूत है जो गम्भीर और धीर है, वह दूत है जो नीतिवान् और शूर है। वह दूत है जो दूसरेके मनका ज्ञाता है, वह दूत है जो अपने पक्षका समर्थन करनेवाला है, वह दूत है जो विशेषको

७. A चंदाहचिंधु; T चंदाहविंबु चन्द्रनागबिंबाः। ८. A आरुढु।
६. १. A खगिंदचंडु। २. A णिहणिवि। ३. A मियमहुरवाणिं। ४. A अभिमाणि दाणि। ५. A सारु।
६. A सुविसुद्धवेसु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सो दूयउ जो कयसंधिणामु सो दूयउ जो दज्जरियसामु ।
सो दूयउ जो णिद्दिट्ठमंतु सो दूयउ जो कुलजाइवंतु ।
सो दूयउ जो [7]उवइट्ठदंडु सो दूयउ जो संगा[8]मचंडु ।
सो दूयउ जो रिउहिययसूलु सो दूयउ पेसिउ रयणचूलु ।
णिवसंतगरुयखंधाररोलु तं गच्छिवि गिरिगहणंतरालु
पणवेवि ते[9]णं पालियविसिट्ठु अत्थाणि णिविट्ठु तिविट्ठु दिट्ठु ।
घत्ता—दूएं वज्जरिउं पहु विप्फुरिउ दिव्वपुरिस[10]गुणजाणउ ॥
गुणिग[11]हणुज्जि तुहुं अणुहुंजि सुहुं पेक्खु णवेप्पिणु राणउ ॥६॥

७

दुवई—जा [1]मग्गिय णिवेण खगसुंदरि सा तुह होइ सामिणी ॥
देवि खमंसणिज्ज सा कामहि किं कामंध कामिणी ॥
मा रसउ काउ चप्पिवि कवालु भक्खंतु म गिद्ध भडंतजालु ।
मा सरसयणीयलि सुयउ ताउ मा पोयणपुरवरु खयहु जाउ ।
मा उट्ठउ रहचूरणणिहाउ भज्जंतु म चामरछत्तकेउ ।
दीसउ मा सयणहं मरण[2]हेउ रस[3]वसससमुद्दकंकालसेउ ।
मा रुहिरु कालवेयालु पियउ मा सूरकित्ति जमकरण णियउ ।
मा करउ मि[4]गावइ पुत्तदुक्खु मा छिज्जउ[5] हलहर[6]कप्परुक्खु ।

जाननेवाला है, वह दूत है जो विशिष्ट वेशवाला है, वह दूत है जो सन्धान करना जानता है, वह दूत है जो 'साम'का कथन करनेवाला है, वह दूत है जिसने दण्डका उपदेश दिया हो, वह दूत है जो कुलीन और जातिवाला हो, वह दूत है जो युद्धमें प्रचण्ड हो, वह दूत है जो शत्रुके लिए हृदय-का काँटा हो। ऐसा वह रत्नचूड़ नामका दूत भेजा गया। जिसमें निवास करते हुए स्कन्धावारका भयंकर शब्द है, ऐसे उस गिरिके गहन अन्तरालमें जाकर, उसने प्रजाका पालन करनेवाले दरबारमें आसनपर बैठे हुए त्रिपृष्ठको देखा।

घत्ता—दूतने कहा—"हे प्रभु, विकसित दिव्य पुरुषके गुणगणके ज्ञाता गुणी व्यक्तिको ग्रहण करनेमें ओजस्वी तुम सुखका भोग करो और प्रणाम कर राजासे मिल लो ॥६॥

७

और जो राजा (अश्वग्रीव) ने विद्याधर सुन्दरी माँगी है, वह तुम्हारी स्वामिनी होती है। जो देवी तुम्हारे द्वारा नमन करने योग्य है, उस स्त्रीको हे कामान्ध तू क्यों चाहता है? तुम्हारे सिरपर बैठकर न बोले, योद्धाओंके आँतोंके जालको गीध न खायें, तुम्हारे पिता तीरोंके शयनीय-तलपर न सोयें, पोदनपुर नगर क्षयको प्राप्त न हो, रथोंके चूर्ण होनेका शब्द न हो, चमर-छत्र और ध्वज नष्ट न हों, स्वजनोंके मरणका कारण रस और मज्जाके समुद्रमें कंकाल सेतु दिखाई न दे, कालरूपी बेताल रुधिर न पियें, शूरकी कीर्तिको यमके अनुचर न देखें। मृगावती पुत्रके दुःख-

७. P उवइट्ठइंडु। ८. P संगामि चंडु। ९. A ते वि। १०. A °पुरिसु। ११. AP गुणिगहणिज्जु।
७. १. A मग्गिय खगेण णिवसुंदरि। २. AP मरणभेउ। ३. A संगरसमुद्द। ४. AP मिगावइ।
५. A छिज्जइ। ६. AP हलहरु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहुदोहबहलधूमोहमलिणि जलणजडि पडउ मा पलयजलणि ।
रायहु ढोयहि सा तुहुं कुमारि मा हक्कारहि णियगोत्तमारि

घत्ता—जाणियणयणिवहु कयवइरिवहु मंतबलु वि जो बुज्झइ ॥
जेण तिखंडधर जिय ससुरणर तेण समउं को जुज्झइ ॥७॥

८

दुवई—म करि कुमार किं पि रोसुब्भडवयणे बलिसमप्पणं ॥
करगयकणयवलयपविलोयणि हो किं णियहि दप्पणं ॥
तं सुणिवि भणिउं विट्ठरसवेण भो चारु चारु भासिउं णिवेण ।
अण्णाणु हीणु मज्जायचत्तु मग्गंतु ण लज्जइ परकलत्तु ।
भरहहु लग्गिवि रिद्धीसमिद्धु रायत्तणु कुलि अम्हहं पसिद्धु ।
सो घेइं पुणु जायउ विहिवसेण विणडिउ परणारीरइरसेण ।
संताणागय महुं तणिय धरणि किं णक्खत्तें जइ तवइ तरणि ।
दप्पिट्ठु दुट्ठु णवणायभट्ठु मरु मारिवि घिवमि तुरंगकंठु ।
तं णिसुणिवि दूएं वुत्तु एंव पाउसि कालंबिणि रसइ जेंव ।
किं वरिसइ भुवणु भरंति तेंव बोल्लंतु ण संकहि बप्प केंव ।

को न करे, बलभद्रका कल्पवृक्ष नष्ट न हो, स्वामी द्रोहके प्रचुर अन्धकारके समूहसे मलिन प्रलयाग्निमें ज्वलनजटी न पड़े, इसलिए वह कुमारी तुम राजाके लिए दे दो, अपने गोत्रके लिए तुम आपत्तिका आह्वान मत करो।"

घत्ता—जिसने नयसमूहको जान लिया है, जिसने शत्रुका वध किया है और जो मन्त्र-बलको भी जानता है, *जिसने तीन खण्ड धरती जीत ली है, देवों और मनुष्यों सहित, उससे युद्ध* कौन कर सकता है ॥७॥

८

"हे कुमार, क्रोधसे उद्भट मुखवाले उसके लिए बलि समर्पण मत करो, हाथमें स्थित कनकवलयको देख लेनेपर तुम दर्पण क्या ले जाते हो?" यह सुनकर बलभद्रने कहा—"अरे, राजाने बहुत सुन्दर कहा। अज्ञानी नीच और मर्यादाहीन उसे, परस्त्रीको माँगते हुए, लज्जा नहीं आती। भरतसे लेकर ऋद्धिसे समृद्ध राज्यत्व हमारे कुलमें ही प्रसिद्ध रहा है। विधिके विधानसे, परनारी-के रतिरसके कारण प्रवंचित वह (अश्वग्रीव) फिर उत्पन्न हुआ है। कुलपरम्परासे धरती हमारी है। जबतक सूर्य तपता है, नक्षत्रोंसे क्या? दर्पिष्ठ दुष्ट और नृप न्यायसे भ्रष्ट अश्वग्रीवको मैं मारकर फेंक दूँगा।" यह सुनकर दूतने इस प्रकार कहा, "पावस ऋतुमें जिस प्रकार कादम्बिनी (मेघमाला) गरजती है, क्या वह उसी प्रकार बरसकर विश्वको भर देती है। हे सुभट, तुम्हें बोलते हुए संकोच क्यों नहीं हो रहा है?

७. AP तुहुं सा। ८. A घरा।

८. १. A रोसुक्कडवयणावलिसमप्पणं; P रोसु भडवयणि। २. P कणगवलय°। ३. A विट्ठुरसवेण। ४. A रयणत्तयकुलि। ५. AP पइं, but K घइं and gloss पादपूरणार्थे। ६. AP जायउ पुणु। ७. AP णिवणाय°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—अग्गइ घणथणिहिं सीमंतिणिहिं[9] रणु बोल्लंतहुं चंगउं ॥
अच्छउ असि अवरु पहुकरपहरु तुह ण सहइ[10] ललियंगउं ॥८॥

९

दुवई—भासइ विस्ससेणु[1] भो जाहि म जंपहि चप्फलं जणे ॥
तुह पइणो महं पि दीसेसइ बाहुबलं रणंगणे ॥
तं णिसुणिवि दूयउ गउ तुरंतु　　कोवग्गिजालमालाफुरंतु ।
हयगीवहु कहइ अहीणमाणु　　परमेसर रिउ पोरिसणिहाणु ।
अहिणवविसट्टकंदोट्टणेत्तु　　ण समप्पइ तं परिणिउं कलत्तु ।
संधाणु ण इच्छइ गरुडकेउ　　दीसइ भीसणु णं धूमकेउ ।
जिह सक्कइ तिह विज्जाबलेहिं　　भिडु मुसलहिं सूलहिं सव्वलेहिं ।
ता पभणइ पहु पीडियकिवाणु　　एवहिं हउं सोहमि जुज्झमाणु ।
किंकर णिहणंतहं णत्थि छाय　　मा को वि भणेसइ हय वराय ।
अविहेयविहंडणि कवणु दोसु　　उग्घोसहु लहुं रणरहसघोसु ।
दुद्दमदणुदप्पविमद्दणेण[2]　　एत्तहि वि मृगावइणंदणेण[3] ।
अवलोयहुं अवलोयणिय विज्ज　　पेसिय खगपुंगव[4] वंदणिज्ज ।
भडथडगयघडरहसंपउण्णु[5]　　आइय जोइवि पडिवक्खसेण्णु ।

घत्ता—सघन स्तनोंवाली स्त्रियोंके सम्मुख युद्ध बोलते हुए अच्छा लगता है, तलवार रहे, स्वामीके कर का प्रहार तुम्हारा सुन्दर शरीर नहीं सहन कर सकता" ॥८॥

९

तब त्रिपृष्ठने कहा, "अरे तू जा, लोगोंकी चपलता की बात मत कर। तुम्हारे राजा और मेरा बाहुबल युद्धके आँगनमें दिखाई देगा।" यह सुनकर दूत क्रोधकी ज्वालमालासे तमतमाता हुआ तुरन्त गया। वह अश्वग्रीवसे कहता है कि शत्रु अधिक मानी और पौरुषका निधान है। अभिनव विकसित कमलके समान नेत्रोंवाला वह, उस अपनी विवाहिता पत्नीको समर्पित नहीं करता। वह गरुड़ध्वजो सन्धि नहीं चाहता। वह भीषण दिखाई देता है, मानो धूमकेतु हो। जिस तरह सम्भव हो, उस प्रकार विद्याबलों, मूसलों, शूलों और सब्बलोंसे लड़िए। तब अपनी तलवारको पीड़ित करता हुआ राजा कहता है कि इस समय मैं युद्ध करता हुआ शोभित होता हूँ। अनुचरोंको मारनेमें कोई यश नहीं है, कोई यह नहीं कहे कि दीनहीनोंको मार दिया गया। अविनीतोंको मारनेमें कोई दोष नहीं। शीघ्र ही युद्धका हर्षवर्धक घोष करो। दुर्दम दानवोंके दर्पको कुचलनेवाले मृगावलीके पुत्रने भी यहाँपर, विद्याधर श्रेष्ठोंके द्वारा वन्दनीय अवलोकिनी विद्याको देखनेके लिए प्रेषित किया। भडघटा, गजघटा और रथोंसे सम्पूर्ण प्रतिपक्ष सैन्यको देखनेके लिए वह आयी।

---

८. A °घणिहे। ९. A सीमंतिणिहे। १०. AP सहेइ।
९. १. AP वीससेणु हो। २. P °दणुद्दप्प°। ३. AP मिगावइ°। ४. P खगपुंगम। ५. AP °रहहयपउण्णु।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

घत्ता—कण्हहु देवयहिं पुण्णागयहिं गुणपणामसंपण्णउं ॥
सत्ति अमोहमुहि तूसवियसुहि धणु सारंगु विइण्णउं ॥९॥

१०

दुवई—आणिवि सुरवरेहिं चिरु रक्खिउ मंगलझुणिणिणाइओ ॥
जलयरु पंचयण्णु कोत्थुहमणि असि हरिणो णिवेइओ ॥

अण्णु वि गय हय गय दिण्ण तासु	कोमुइ णामें दामोयरासु ।
बलएवहु लंगलु मुसलु चारु	गय चंदिमं णामें हत्थियारु ।
दसदिसवहधाइयकिरणजाल	दिण्णी उरि घोलइ रयणमाल ।
कंचणकवयंकिउ धवलदेहु	णं संझाराएं सरयमेहु ।
गुणेंणविउ सरासणु धरिउ केंव	मुट्ठिहि माइउं सुकलत्तु जेंव ।
सेयइं चिंधइं उप्परि चलंति	णं कित्तिवेल्लिपल्लव ललंति ।
छत्तइं णं जयजससिपयाइं	णं गोमिणिपोमिणिपंकयाइं ।
धरियइं पाइक्कहिं पंडुराइं	विणिवारियदिवसाहिवकराइं ।
दीहरदाढावियडाणणेहिं	रहवरु कड्ढिउ पंचाणणेहिं ।
पक्खरिय सत्ति हिलिहिलिहिलंत	कयसारिसेज्ज गय गुलुगुलंत ।
हणु हणु भणंत मच्छरविमीस	संणद्ध सुहड पणवियहलीस ।
रणतूरसहासइं ताडियाइं	कुलगिरिवरसिहरइं पाडियाइं ।

घत्ता—पुण्यसे आयी हुई देवियोंने प्रत्यंचाके नमनसे युक्त बलवान् धनुष और सज्जनोंको सन्तुष्ट करनेवाली अमोघमुखी शक्ति कृष्ण (नारायण त्रिपृष्ठ) को प्रदान की ॥९॥

१०

देवोंने चिरकालसे सुरक्षित तथा मंगल ध्वनिसे निनादित पांचजन्य शंख, कौस्तुभ मणि और तलवार नारायणके लिए निवेदित की। और भी गदा, हाथी, घोड़े और कौमुदी नामका शस्त्र उन दामोदरके लिए दिया। जिसकी किरणोंका जाल दसों दिशाओंमें फैल रहा है ऐसी दी हुई रत्नमाला उनके उरपर पड़ी हुई है। सोनेके कवचसे अंकित धवल शरीर वह ऐसे मालूम होते हैं, मानो सन्ध्यारागसे शरद् मेघ शोभित हो। प्रत्यंचासे झुका हुआ धनुष उन्होंने इस प्रकार रखा, मानो जैसे मुट्ठीसे सुकलत्रको माप लिया हो। श्वेत चिह्न उनके ऊपर चलते हैं, मानो कीर्ति-रूपी लताके पत्ते शोभित हों। जययशरूपी चन्द्रके स्थानभूत छत्र ऐसे मालूम होते हैं मानो पृथ्वी-रूपी लक्ष्मीके कमल हों; सूर्यकी किरणोंका निवारण करनेवाले उन सफेद छत्रोंको अनुचरोंने उठा लिया। लम्बी दाढ़ोंसे विकट मुखवाले सिंहोंने रथवरोंको खींच लिया। कवच पहने हुए सप्ताश्व हिनहिना उठे, पर्याणसे सज्जित गज चिंग्घाड़ने लगे। मत्सरसे भरे हुए और 'मारो-मारो' कहते हुए तथा जिन्होंने बलभद्रको प्रणाम किया है, ऐसे योद्धा तैयार होने लगे। युद्धके हजारों नगाड़े बजाये जाने लगे तथा कुलगिरियोंके शिखर टूटकर गिरने लगे।

६. AP °संपुण्णउ। ७. AP सत्तियमोहमुहि।
१०. १. A हयरह दिण्ण। २. AP चंदियणामें। ३. A दहदिहहवधाहिय°; P दहदिसिवहधाइय। ४. P गुणणमिउ। ५. A P कय सज्ज सारि। ६. P वाडियाइं।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

घत्ता—गेज्जावलिमुहलि रुंजिय[7]भसलि अरिकरिंदपसरियकरि ॥
अविर[8]यगलियमइ हरि मत्तगइ चडिउ सीहु णं महिहरि ॥१०॥

११

दुवई—थक्को धयवडम्मि पक्खुग्गयपवणुड्डवियपडिणिवो ॥
चलचंचेल[1]चुंचुंबियचंद[2]क्कधरो खगाहिवो ॥

संणद्धु पयावइ दीहबाहु   असितडिहरु णं खयसलिलवाहु ।
उ[3]च्चारिवि जिणवरणाममंतु   संणाहु लइउ मणि जिगिजिगंतु ।
हुयवहजडि हुयवहफुरणतिव्वु   तहु तणुरुहु भुयबलगहियगव्वु ।
पहरणइं लेंतु रणदारुणाइं   दिव्वइं वाय[4]व्वें वारुणाइं ।
संचोइउ कुंजरु गज्जमाणु   णउ गेण्हइ दिण्णउं देहताणु ।
[5]णिच्चिंचें रोमंचएण   कंपाविय रिउ कंपियधएण ।
भडु को वि ण खग्गहु देइ हत्थु   परपहरणहरे[6]णि सया समत्थु ।
भडु को वि ण लावइ घुसिणु अंगि   रावे[7]सइं तणु रिउरुहिरु अंगि ।

घत्ता—हरिसें को वि णरु थिरथोरकरु धणुह[8]रु जं जं णावइ ॥
पीडिउं कडयडें[9]इ मोडिवि पडइ तं तं थावें[10]हुं णावइ ॥११॥

घत्ता—जो गलेके आभूषणसे मुखर है, जिसपर भ्रमर गूँज रहे हैं, शत्रु गजवरपर जिसकी सूँड़ प्रसरित है, जिससे अविरत मदजल गिर रहा है; ऐसे मत्त गजपर नारायण त्रिपृष्ठ चढ़ गया मानो सिंह पहाड़पर चढ़ गया हो ॥१०॥

११

जिसके पंखोंसे उत्पन्न पवनसे शत्रुनृप उड़ चुके हैं, जिसने अपने चंचल मुखसे सूर्य और चन्द्रमाके विमानोंको छू लिया है, ऐसा गरुड़ ध्वजपटपर स्थित हो गया। दीर्घ बाँहोंवाला प्रजापति तैयार होने लगा मानो तलवाररूपी बिजली धारण करनेवाला प्रलय मेघ हो। जिनवरके नामरूपी मन्त्रका मनमें उच्चारण कर जिगजिगाता हुआ (चमकता हुआ) कवच ले लिया। अग्निके स्फुरणके समान तीव्र ज्वलनजटी, अपने बाहुबलमें गर्व रखनेवाले उसके पुत्र अर्ककीर्तिने युद्धमें दारुण दिव्य वायव्य और वरुण, अस्त्र ले लिये। उसने गरजते हुए हाथीको प्रेरित किया। उसने दिया गया देहत्राण (कवच) नहीं पहना। नित्य ऊँचे रहनेवाले रोमांच और काँपते हुए ध्वजसे उसने शत्रुको कँपा दिया। कोई योद्धा तलवारपर हाथ नहीं देता, क्यों वह शत्रुके हथियार छीननेमें सदा समर्थ रहता है। कोई सुभट अपने शरीरपर केशर नहीं लगाता, वह युद्धमें शत्रुके खूनसे अपने शरीरको रंजित करेगा।

घत्ता—कोई मनुष्य हर्षसे धनुषको धारण करनेवाले अपने स्थिर और स्थूल हाथको जिस-जिसपर धनुष झुकाता है वह पीड़ित होकर कड़कड़ कर उठता है, टूटकर गिर पड़ता है, वह शक्ति सहन नहीं कर पाता ॥११॥

७. A रंजियभसलि । ८. AP अविरल° ।
११. १. AP °चंचेलचंचुचुंबिय° । २. A °चंदक्कधरो । ३. A उच्चाइवि । ४. AP वायव्वइं ।
५. A णिच्चेच्चुचें रोमं°; P णिच्चिचच्चें सररोमं° T णिच्चिचच्च निरन्तरम् । ६. AP °हरणु सया ।
७. AP लावेसइ । ८. P धणहरु । ९. A कडयलइ । १०. P थामहु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२

दुवई—विहसिवि सुहडु भणइ लइ गच्छमि दारियकरिवरिंदहो ॥
काइं सरासणेण किं खग्गें महुं रणवणि मइंदहो ॥
भडु को वि भणइ जइ जाइ जीउ तो जाउ थाउ हुडु पहुपयाउ।
भडु को वि भणइ रिउं एंतु चंडु मइं अज्जु करेव्वउ खंडखंडु।
भडु को वि भणइ पविलंबियंति मइं हिंदोलेव्वउं दंतिदंति।
भडु को वि भणइ हलि देइ ण्हाणु सुइदेहें दिज्जइ प्राणदाणु।
भडु को वि भणइ किं करहि हासु णिग्गवि सिरेण रिणु पत्थिवासु।
भडु को वि भणइ जइ मुंडु पडइ तो महुं रुंडु जि रिउं हणवि णडइ।
भडु पियहि सरसु वज्जरइ कामि हउं रणदिक्खिउ सरु मोक्खगामि।
भडु को वि भणइ असिधेणुयाहि जसदुद्धु लेमि णरसंथुयाहिं।
भडु को वि भणइ हलि छिण्णु जइ वि महुं पाउ पडइ रिउसउंहुं तइ वि।
भडु को वि सरासणदोसु हरइ सरपत्तइं उज्जुय करिवि धरइ।
भडु को वि बद्धतोणीरजुयलु णं गरुडसमुद्धुयपक्खपडलु।
भडु को वि भणइ कलहंसवाणि महुं तुहुं जि सक्खि सोहग्गखाणि।
घत्ता—परबल अब्भिडिवि रिउसिरु खुडिवि जइ ण देमि रायहु सिरि॥
तो दुक्कियहरणु जिणतवचरणु चरविं घोरु पइसिवि गिरि ॥१२॥

१२

कोई सुभट हँसकर कहता है कि लो, मैं जाता हूँ। जिसने करिवरेन्द्रोंको विदारित किया है, ऐसे मुझ मृगेन्द्रको युद्धरूपी वनमें धनुष और तलवारसे क्या? कोई योद्धा कहता है कि यदि जीव जाता है तो जाये, यदि प्रभुका प्रताप स्थिर रहता है। कोई सुभट कहता है, मैं आज आते हुए प्रचण्ड शत्रुको खण्ड-खण्ड कर दूँगा। कोई सुभट कहता है कि जिसमें आँतें लटक रही हैं, ऐसे हाथीके दाँतपर मैं झूलूँगा। कोई सुभट कहता है—हे सखी, जल्दी स्नान दो। मैं पवित्र शरीरसे प्राणदान दूँगा? कोई सुभट कहता है कि तुम हँसी क्यों करती हो, मैं अपने सिरसे राजाके ऋणका शोधन करूँगा। कोई सुभट कहता है कि यदि मेरा सिर गिर जाता है, तो मेरा धड़ ही शत्रुको मारकर नाचेगा। कोई कामी सुभट अपनी प्रियासे यह सरस बात कहता है कि मैं युद्धमें दीक्षित मोक्षगामी सर (स्मर और तीर) हूँ। कोई सुभट कहता है कि मैं लोगोंके द्वारा संस्तुत असि रूपी धेनुका (छुरी) से यशरूपी दूध लूँगा। कोई सुभट कहता है कि हे सखी, यदि मैं छिन्न भी हो जाता हूँ तब भी मेरा पैर शत्रुके सम्मुख पड़ेगा। कोई सुभट अपने धनुषका दोष दूर करता है, और तीरोंके पत्रोंको सीधा करके धारण करता है। बांध लिया है तूणीरयुगल जिसने, ऐसा कोई सुभट ऐसा जान पड़ता है, मानो गरुड़को दोनों पक्षपटल निकल आये हों। कोई योद्धा कहता है कि हे कलहंसके समान बोलनेवाली और सौभाग्यकी खान, तुम मेरी गवाह हो।

घत्ता—शत्रुसेनासे भिड़कर, शत्रुशिर काटकर यदि मैं राजाको लक्ष्मी नहीं देता, तो मैं घोर वनमें प्रवेश कर पापको हरण करनेवाले जिनवरका तपश्चरण करूँगा ॥१२॥

---

१२. १. P करेव्वउ। २. P हिंदोलिव्वउ। ३. A P सुइदेहइं। ४. A P पाणदाणु। ५. A P तुंडु। ६. A सरिसु। ७. A P रिउसमुहुं। ८. A P गरुडु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३

दुवई—लुहि लोयणाइं मुद्धि मा रोवहि हलि भत्तारवच्छले ॥
बंधवि तुह हयारिकरिमोत्तियकंठिय कंठकंदले ॥

पडिविट्ठुविट्ठुणिव्वाहणाहं संणज्झंतहं बिहिं साहणाहं ।
वहु कासु वि देइ ण दहियतिलउ अहिलसइ वइरिरुहिरेण तिलउ ।
वहु कासु वि खिवइ ण अक्खयाउ खलेवइ करिमोत्तियअक्खयाउ ।
वहु कासु वि करइ ण धूवधूमु मग्गइ पडिसुहडमसाणधूमु ।
वहु कासु वि णप्पइ कुसुममाल इच्छइ ललंति पिसुणंतमाल ।
वहु कासु वि ण थवइ हत्थि हत्थु तुह लग्गउ गयघडणारिहत्थु ।
वहु को वि ण झुणइ सुमंगलाइं आवेक्खइ अरिसिरमंगलाइं ।
वहु कासु वि णउ दावइ पईवु भो कंत तुहुं जि कुलहरपईवु ।
वहु कासु वि पारंभइ ण णट्टु संचिंतइ सत्तुकबंधणट्टु ।
वहु का वि ण जोयइ किं सिरीइ पिययमु जोएवउ जयसिरीइ ।

घत्ता—वहु पभणइ भणमि हउं पइं गणमि तो तुहुं महुं थण पेल्लहि ॥
भग्गइ णिययबलि जइ भडतुमुलि खग्गु लेवि रिउ पेल्लहि ॥१३॥

१४

दुवई—वालालुंचि करिवि जुज्झेज्जसु विसरिसवीरगोंदले ॥
अरिकरिदंतमुसलि पउ देप्पिणु देज्जसु कुंभमंडले ॥

१३

हे मुग्धे, आँखें पोंछ लो, रोओ मत । हे पतिप्रिया सखी, मैं मारे गये शत्रुगजके मोतियोंकी कण्ठमाला तुम्हारे गलेमें बाँधूँगा ? इस प्रकार वासुदेव और प्रतिवासुदेवका निर्वाह करनेवाली तैयार होती हुई सेनाओंमें-से वधू किसीको दहीका तिलक नहीं देती, वह शत्रुके रक्तसे तिलककी इच्छा करती है । वधू किसीके ऊपर अक्षत नहीं डालती, वह गजमुक्तारूपी अक्षतोंकी अभिलाषा करती है, वधू किसीके लिए धूपका धुआँ नहीं करती, वह शत्रु सुभटोंके मरघटका धुआँ माँगती है । वधू किसीके लिए सुमनमाला अर्पित नहीं करती, वह दुष्टोंकी आँतोंकी झूलती हुई माला चाहती है । कोई वधू मंगलोंका उच्चारण नहीं करती, वह शत्रुओंके सिररूपी मंगलोंकी अपेक्षा करती है । वधू किसीको दीपक नहीं दिखाती (वह कहती है) हे स्वामी, तुम्हीं कुलघरके प्रदीप हो । किसीकी वधू नृत्य प्रारम्भ नहीं करती, वह शत्रुके धड़के नृत्यकी चिन्ता करती है । कोई वधू देखती तक नहीं है कि श्रीसे क्या ? प्रियतम विजयलक्ष्मीके द्वारा देखा जायेगा ?

घत्ता—वधू कहती है कि अपनी सेना नष्ट होनेपर यदि तुम सैनिकोंकी भीड़में तलवार लेकर शत्रुको पीड़ित करते हो, तो मैं कहती हूँ कि मैं तुम्हें मानती हूँ और तुम मेरे स्तनोंको पीड़ित कर सकते हो ॥१३॥

१४

असामान्य वीरोंके उस युद्धमें तुम खूब भिड़कर युद्ध करना । शत्रुगजके दाँतरूपी मूसलपर

---

१३. १. P पडिविद्धु । २. AP कंखइ but K खलवइ and gloss अभिलषति । ३. A ललंत । ४. A गयघडि । ५. AP कासु वि ण कुणइ मंगलाइं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुंजरघडघल्लियमुहवडाइं वंसग्गविलंबियधयवडाइं ।
कुंकुमचंदणचच्चियभुयाइं परिहियमणिकंचणकंचुयाइं ।
करलुहियगहियबहुपहरणाइं णियसामिकज्जि[1] णिच्छयमणाइं ।
काणीणदीणढोइयधणाइं भडकलयलबहिरियतिहुवणाइं ।
विलुलंतचित्तणेत्तंचलाइं अहिणंदियकलसजलुप्पलाइं ।
चलचरणचारचालियधराइं डोल्लावियगिरिविवरंतराइं ।
ढलहलिय[2]घुलियवरविसहराइं भयतसिर[3]रसियघणवणयराइं ।
झलझलियवलिय[4]सायरजलाइं जलजलियकालकोवाणलाइं ।
पयहयरयछइयणहंतराइं अणलक्खियहिमयरदिणयराइं ।
करिवाहणाइं सपसाहणाइं[5] हरिहरिग्गीवाहिवसाहणाइं ।
आयइं[6] अण्णण्णहु संमुहाइं असिदाढालइं[7] णं जंवमुहाइं[8] ।

घत्ता—संचोइयगयइं वाहियहयइं रणरसहरिसविसट्टइं ।।
दूरुज्झियभयइं उब्भियधयइं बे वि बलइं अब्भिट्टइं ।।१४।।

१५

दुवई—बेण्णि वि दुद्धराइं दुणिरिक्खइं कयणियपहुपणामइं ।।
कण्णाहरणकरणरणलग्गइं[1] जयसिरिगहणकामइं ।।

पैर देकर कुम्भमण्डलपर पैर रखना। जिसमें हस्तिघटापर मुखपट डाल दिये गये हैं मानो बाँसोंके अग्रभागपर ध्वजपट अवलम्बित हैं, भुजाएँ केशर और चन्दनसे अंचित हैं, जिन्होंने मणियों और सोनेके कंचुक पहन रखे हैं, जिन्होंने साफ किये हुए बहुत-से हथियार हाथमें ले रखे हैं, अपने स्वामी-के कार्यमें जो निश्चितमन हैं, जिनमें कानीनों और दीनोंको धन दिया गया है, जिन्होंने योद्धाओंकी कलकल ध्वनिसे त्रिभुवनको बहरा कर दिया है, जिनमें चित्त और नेत्रांचल उपमर्दित हैं, और कलश जल तथा कमल अभिनन्दित हैं, चंचल चरणोंके संचरणसे धरती चलायमान कर दी गयी है, पहाड़ोंके विवरान्तोंको हिला दिया गया है, जिनमें बड़े-बड़े साँप गिरकर चक्राकार घूम रहे हैं, भयसे त्रस्त घनवनचर चिल्ला रहे हैं, समुद्रका जल झलझलाकर मुड़ रहा है, कालरूपी कोपाग्नि प्रज्वलित हो उठी है, पैरोंसे आहत धूलसे आकाशका भाग आच्छादित है और जिसमें सूर्य और चन्द्रमा दिखाई नहीं दे रहे हैं, जिनमें प्रसाधनोंसे सहित हाथियोंके वाहन हैं, ऐसे नारायण और अश्वग्रीव राजाके सैन्य एक दूसरेके आमने-सामने आ गये जो मानो तलवाररूपी दाढ़ोंसे यममुखों के समान थे।

घत्ता—गज चला दिये गये, अश्व हाँक दिये गये, उत्साह और हर्षसे विशिष्ट, भयको दूरसे ही मुक्त ध्वज ऊपर उठाये हुए दोनों सैन्य आपसमें भिड़ गये ।।१४।।

१५

दोनों ही दुर्धर दुर्दर्शनीय और अपने स्वामीको प्रणाम करनेवाले थे, कन्याके अपहरण

---

१४. १. A °कज्जणिच्छय° । २. AP हलहलिय° । ३. AP भयरसियतसिय° । ४. AP °वलिय° । ५. P सुपसाहणाइं । ६. P आयहिं । ७. AP °दाढा इव । ८. AP जममुहाइं ।
१५. १. AP °रणि लग्गइं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णरचरणचारचारियगयाइं हरिखरखुर[2]वडणुग्गयरयाइं ।
अब्भिडिय सुहड गय कायराइं रवपूरियदिसगयणंतराइं ।
सावल्लभल्ल[3]झसससल्लियाइं सोणियजलधारारेल्लियाइं ।
लुलियंतकोंत[4]भिण्णोयराइं करवालखलणखणखणसराइं ।
चल[5]मुक्कचक्कदारियउराइं लउडी[6]हयचूरियरहधुराइं ।
णिवडंतछत्तधयचामराइं णिव[7]कडयमउडमणिपिंजराइं ।
कयखगविमाणसंघट्टणाइं किंकिणिमालादलवट्टणाइं ।
विज्जाहरविज्जा[8]वारणाइं सरपूरियमारियवारणाइं ।
जंपाणकवाडविहट्टणाइं मंडलियमाणणिल्लोट्टणाइं ।
घत्ता—दिण्णालिंगणइं कयतणुवणइं दंतपंतिदट्ठोट्ठइं ॥
लुंचियकोंतलइं बिण्णि वि बलइं जिह मिहुणइं तिह दिट्ठइं ॥१५॥

१६

दुवई—तो हरिगीवरायसेणावइ धूम[2]सिहो पधाइओ ॥
सिरिहरिमस्सुवीरस[3]हिउ हरिसेण[4] जगे ण माइओ ॥

तेण घाइयं महिणिवाइयं ।
विलुलियंतयं पडियदंतयं ।
पहरजज्जरं लग्गभयजरं ।

करनेके युद्धमें लगे हुए, और विजयश्रीको पानेकी कामनावाले थे। जिसमें मनुष्योंके चरणोंके संचारसे गज चलाये जा रहे हैं, जिसमें घोड़ोंके तीव्र खुरोंके पतनसे धूल उड़ रही है। सुभट आपसमें भिड़ गये, और कायर भाग गये। शब्दोंसे दिशाएँ और गगनांतर भर गये। जो वावल्ल, भाले और झसोंसे पीड़ित हैं, रक्तरूपी जलधाराओंसे सराबोर हैं, जिनमें आँतें कटी हुई हैं, और भालोंसे पेट फाड़ दिये गये हैं, लाठियोंके प्रहारोंसे रथधुराएँ चकनाचूर कर दी गयी हैं, जिनमें छत्र-ध्वज और चमरोंका पतन हो रहा है, जो राजाओंके कटक और मुकुटमणियोंसे पीले हैं, जो विद्याधर विमानोंसे टकरानेवाले हैं, जिनमें किंकिणियाँ और मालाएँ चकनाचूर हो रही हैं। विद्याधरोंके द्वारा विद्याओंका निवारण किया जा रहा है, तीरोंसे पूरित महागज मारे जा रहे हैं, जंपाणोंके किवाड़ नष्ट कर दिये गये हैं, और माण्डलीक राजाओंका मान नष्ट हो रहा है।

घत्ता—जिन्होंने एक दूसरेको आलिंगन दिया है, एक दूसरेके शरीरोंपर घाव किये हैं, जो दाँतोंकी पंक्तियोंसे अपने ओंठ चबा रहे हैं, बाल नोंच रहे हैं, ऐसे दोनों सैन्य उसी प्रकार लड़ रहे हैं जिस प्रकार मिथुन ॥१५॥

१६

तब राजा अश्वग्रीवका सेनापति धूमशिख दौड़ा। श्रीहरिश्मश्रु नामक वीरसे सहित वह हर्षके कारण संसारमें नहीं समा सका। उसने आघात किया। धरतीपर गिरा दिया, आँखें छिन्न-

२. P °खुरखणणु। ३. A °भल्लसरसल्लियाइं; P °भल्लरससल्लियाइं। ४. A °कंतभिण्णो°। ५. A वरमुक्क°। ६. P लउडियहयचूरीरह°। ७. AP णिव°। ८. A विज्जाकारणइं। ९. AP °कुंत°।
१६. १. A ता हयगीव;° P तो हयगीव°। २. A धूमसिहोवधाइओ। ३. A P °मस्सुवीररससहिउ। ४. A हरिसें जगे ण माइओ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दारिओयरं　　छिण्णगलछिरं ।
रत्ततंविरं　　चंम्मलंबिरं ।
विहिविणिंदिरं　　कलुणकंदिरं ।
धित्तचामरं　　तुट्टपक्खरं ।
फुट्टमद्दलं　　मुक्ककोंतलं ।
विहुरवेंभलं　　णिग्गंयं बलं ।
बद्धमच्छरं　　तोसियच्छरं ।
कडुयजंपिरं　　धीरँकंपिरं ।
रुंडणच्चिरं　　कुंर्तखंचिरं ।
भडवियारणं　　कुंभिदारणं ।
भिडियवारणं　　सिरणिलूरणं ।
सुहडकलयलं　　गहियहुलहुलं ।
चम्मभिंदिरं　　गत्तछिंदिरं ।
कवयसंजुयं　　णियवि संजुयं ।
सुरपसंसिरं　　धुणियँगयसिरं ।
भग्गर[10]हँवरं　　पडियहयवरं ।
खग्ग[11]खणखणं　　दारुणं [12]रणं ।
पक्खिसंकुलं　　रक्खसाउलं ।
दंतिदंतयं[13]　　[14]छिण्णछत्तयं ।

घत्ता—माहवबलवइणा कयरणरइणा णिययसेण्णु साहारिउं ।
कुलु विहिविणडियउं दिसिविहडियउं पुत्तेण व उद्धारिउं ॥१६॥

भिन्न हो गयीं। दांत गिर पड़े (टूट गये)। लोग प्रहारसे जर्जर हो उठे, भयज्वरसे पीड़ित पेट फाड़ दिया गया; गले और सिर काट दिये गये। रक्तसे लाल हो उठे, चर्म लटक गये, विधिकी निन्दा करने लगे, करुण विलाप होने लगा, चमर फेंक दिये गये, कवच टूटने लगे, मृदङ्ग फूल गये, केश बिखर गये, कष्टसे विह्वल सैन्य निकल पड़ा। ईर्ष्या करनेवाला, अप्सराओंको सन्तुष्ट करनेवाला, कटु बोलनेवाला, धैर्यको कँपानेवाला, धड़ोंको नचानेवाला, भालोंको खींचनेवाला, योद्धाओंका विदारक, हाथियोंको विदीर्ण करनेवाला, गजोंसे लड़नेवाला, सिरोंको काटनेवाला, सुभटोंके कलकलसे युक्त, शूलोंको हाथोंमें लेनेवाला, चर्मका भेदन करनेवाला, शरीरको छेदनेवाला, कवचसे सहित, देवोंसे प्रशंसित, छिन्न गज सिरवाला, भग्नरथवरोंवाला, घिरे हुए अश्ववरों सहित, तलवारोंसे खनखनाता हुआ, पक्षियोंसे संकुल, राक्षसोंसे आकुल, गजदंतोंसे युक्त छिन्नछत्र दारुण रण देखकर।

घत्ता—युद्धसे रति करनेवाले माधवके सेनापतिने अपने सैन्यको ढाँढस बँधाया, जैसे भाग्यसे प्रवंचित और दिशाओंमें विभक्त कुटुम्बका पुत्रने उद्धार किया हो ॥१६॥

५. P चम्मलंबिरं। ६. P भिग्गयं। A K write in margin the portion beginning with बद्धमच्छरं down to छिण्णछत्तयं। ७. P धीरु कंपिरं। ८. P कुंतयंचिरं। ९. A धुणिविं गयसिरं। १०. AP °रहभरं। ११. A भग्गखणखणं; P खग्गसणसणं। १२. P घणं। १३. P दँतिदंतयं। १४. A छिण्णछिण्णयं; P adds विहुरविभलं, भग्गयं च (ब ?) लं।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

१७

दुवई—भीमपरक्कमेण भीमेण वि णासियभीमवइरिणा[1] ।।
पच्चारिय भिडंत भड बेण्णि वि सुरवहुहियमहारिणा[2] ।।
हरिमस्सु[3] काइं पइं मंतु दिट्ठु   किं मग्गिउ परतिय[4]रयणु इट्ठु ।
हक्कारिउ किं णियपाणणासु[5]   एवहि पइसेसहु सरणु कासु ।
कुद्धइ तिविट्ठि भुवणेक्कसीहि   तडितरल[6]दीहकरवालजीहि ।
ता धूमसिहें भासिउ सरोसु   घरदासि हरंतहं[7] कवणु दोसु ।
पहिलउं[8] पहुणा भुत्ती मणेण   पच्छइ तुम्हहुं दिण्णी अणेण ।
सिहिजडिणा सामिविरोहणेण   किं एएं जडसंबोहणेण ।
दरिसावमि तुह जमरायथत्ति   लइ पहरु पहरु जइ अत्थि सत्ति ।
ता बे वि लग्ग ते सेण्णणाह   बेण्णि वि सुरकरिकरसरिसबाह ।
बेण्णि वि चालियदिक्चक्कवाल   बेण्णि वि जयकारियसामिसाल ।
बेण्णि वि उग्गामियचावदंड   बेण्णि वि आमेल्लियकुलिसकंड ।
बाणेहिं बाण णहयलि खलंति   तें[9]णिहसणरुह हुयवह जलंति ।
पुणु भीमें मुक्कउ अद्धयंदु   धूमसिहहु णं अट्ठमउ चंदु ।
रिउदेहमेहि सो पइसरंतु   दिट्ठउ सुहिणयणहु तमु करंतु ।
घत्ता—मारिवि धूमसिहु खयकालणिहु खणि हरिमस्सु णिहत्तउं[10] ।।
णवर करंतु कलि भड देंतु बलि असणिघोसु संपत्तउ ।।१७।।

१७

भीम पराक्रमवाले, तथा भयंकर शत्रुओंको नष्ट करनेवाले, तथा सुरवधुओंके हृदयका अपहरण करनेवाले भीमने लड़ते हुए दोनों सुभटोंको पुकारा, "हे हरिश्मश्रु, तुमने यह कौन-सा मन्त्र देखा? तुमने इष्ट परस्त्रीरत्न क्यों माँगा? अपने प्राणोंके नाथको तुमने क्यों पुकारा? इस समय तुम, भुवनके एकमात्र सिंह, बिजलीके समान लम्बी करवालरूपी जीभवाले त्रिपृष्ठके क्रुद्ध होनेपर किसकी शरणमें जाओगे?" तब धूमशिखने गुस्सेमें आकर कहा, कि गृहदासीके अपहरणमें क्या दोष? पहले राजाने इसका मनचाहा उपभोग किया। फिर उसने यह तुम्हें प्रदान की। स्वामी विरोधी ज्वलनजटीके द्वारा इस मूर्खतापूर्ण सम्बोधनसे क्या? मैं तुम्हें यमराजकी स्थिरता दिखाऊँगा, यदि तुममें शक्ति हो तो शीघ्र प्रहार करो," तब दोनों सेनापति आपसमें लड़ गये। वे दोनों ही हाथीकी सूँड़के समान बाहुवाले थे, वे दोनों ही दिक्चक्ररूपी मण्डलको चलानेवाले थे, दोनों अपने स्वामी श्रेष्ठकी जय बोल रहे थे; दोनोंने ही अपने चापदण्ड उठा लिये थे, दोनों ही वज्रतीर छोड़ रहे थे। आकाशमें तीरोंसे तीर स्खलित हो रहे थे, उनके संघर्षणसे उत्पन्न आग जल रही थी, फिर भीमने अपना अर्धेंदु तीर फेंका, जो मानो धूमशिखके लिए आठवाँ चन्द्र हो, शत्रुके शरीरकी मेधामें प्रवेश करता हुआ वह, सुधीजनोंके नेत्रोंमें अन्धकार उत्पन्न कर रहा था।

घत्ता—धूमशिखको मारकर, एक क्षणमें क्षयकालके समान हरिश्मश्रुको आहत कर दिया। तब केवल अशनिवेग युद्ध करता हुआ और सुभटोंकी दिशा बलि देता हुआ वहाँ पहुँचा ।।१७।।

---

१७. १. A °वइरिणो। २. A °हारिणो। ३. A P हरिमस्सु। ४. A P परतिय°। ५. A P पाणणासु। ६. A °तरड°। ७. A हणंतहं। ८. A P पहिलो पहुणा। ९. A तं णिहसिवि णर हुयवह। १०. AP णिहित्तउ।

१८

दुवई—सो जियसत्तु णाम धरणीसें जममुहकुहरि ढोइओ ॥
सरविसहरणिरुद्धु[1] वरपरिमलु[2] चंदणतरु व जोइओ ॥

तओ कंपणेसो समुप्पण्णरोसो ।
महेणं महंतो णहंतं पिहंतो ।
कराइड्ढं[3]चावो महाभीमभावो ।
सदप्पं चवंतो सरोहं[4] सवंतो ।
धए णिल्लुणंतो गइंदे हणंतो ।
हए कप्परंतो णरे चप्परंतो ।
जवेणं चरंतो रणे[5] वावरंतो ।
परं णिक्किवेणं जएणं णिवेणं ।
खुरुप्पेण भिण्णो कयंतस्स दिण्णो ।
जयस्सावलुद्धो जमो[6] णं विरुद्धो ।
रउद्दारिमद्दो पहू खेयरिंदो ।
पियारत्तचित्तो सयं झ त्ति पत्तो ।
मरुद्धूयचिंधो सतोणीरखंधो[7] ।
दिसालग्गकित्ती तहिं अक्ककित्ती ।
थिओ अंतराले भडाणं वमाले ।

घत्ता—तेण ससामियहु गयगामियहु रूसिवि दिण्णउ उत्तरु ॥
देव पराइयहि कारणि तुयहिं[8] किं आढत्तउ संगरु ॥१८॥

१८

भूमिके स्वामीने जितशत्रु उसे यमके मुखरूपी कुहरमें डाल दिया। सररूपी विषधरोंसे निरुद्ध, श्रेष्ठ परिमलवाला वह चन्दन वृक्षके समान दिखाई दिया। उस समय उत्पन्न हुआ है क्रोध जिसे ऐसा इन्द्रसे भी महान् अकम्पन नामका राजा आकाशको आच्छादित करता हुआ, हाथमें धनुष खींचता हुआ महाभयंकर भाववाला, सदर्प बोलता हुआ, तीरसमूह गिराता हुआ, ध्वजोंको काटता हुआ, हाथियोंको मारता हुआ, अश्वोंको काटता हुआ, मनुष्योंको पराजित करता हुआ, वेगसे चलता हुआ, युद्धमें व्यापार करता हुआ (आया)। परन्तु उसे जय नामक कठोर राजाने खुरपेसे काट डाला और यमको दे दिया। मानो यशका लोभी यम ही विरुद्ध हो उठा हो। भयंकर शत्रुओंका मर्दन करनेवाला राजा, प्रियामें अनुरक्त चित्त विद्याधरेन्द्र राजा (अश्वग्रीव) स्वयं शीघ्र पहुँचा। तब जिसका ध्वजचिह्न हवामें उड़ रहा है, जिसके कन्धे तूणीर सहित हैं, जिसकी कीर्ति दिशाओंसे जा लगी है, ऐसा अर्ककीर्ति वहाँ योद्धाओंके कोलाहलपूर्ण अन्तरालमें स्थित हो गया।

घत्ता—उसने गजगामी अपने स्वामीको उत्तर दिया कि हे देव, परायी स्त्रीके कारण आपने युद्ध क्यों प्रारम्भ किया? ॥१८॥

---

१८. १. A P °णिरुद्ध। २. A °परिमल। ३. AP कराइद्ध°। ४. AP सरोसं वहंतो। ५. A omits this foot. ६. P जमो णाविरुद्धो। ७. P सतोणीरकंधो। ८. AP तियहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९

दुवई—लज्जिज्जइ रणेण णित्तेएं दुज्जसमलिणकारिणा ॥
ओसरु जाहि राय किं एएं पुरिसगुणोहहारिणा ॥

ता भणिउ समरभरधुर[1]भुएण णीलंजणपहदेवीसुएण ।
रे अक्ककित्ति गुरुसिक्खवंतु लज्जहि ण केंव विप्पिउ चवंतु ।
तुह ताएं अवरु वि पइं सदप्प जं आणालंघणु कयउं बप्प ।
तहु लग्गउ हउं णियपरिहवासु सस तेरी पुणु मणु हरइ कासु ।
ता रविकित्ति दीवियदियंतें[2] सुपिसक्क मुक्क धगधगधगंत[3] ।
खगणाहहु खंडिउ चावदंडु गुणवंतु तो वि किउ खंडखंडु[4] ।
अण्णेक्कु सरासणु झ त्ति लेवि राएण तासु बाणें[5] हणेवि ।
चूडामणि पाडिउ विप्फुरंतु णं णहयलि[6] णिवडिउ रवि तवंतु ।
मारुयचलंतचलमयरकेउ[7] तावंतरि थक्कउ कामदेउ[8] ।
बंधंतु ठाण संधंतु बाणु[9] तेणक्ककित्ति [10]मारिज्जमाणु ।
रक्खियउ पयावइराणएण धणुवेयविवेयवियाणएण ।
केसरिणा णं तासिउ[11] कुरंगु किउ[12] पाराउट्ठउ तें अणंगु ।
ससिसेहरेण पहु पोयणेसु मेहें पच्छाइउ णं दिणेसु ।
अंतरि पइसिवि तिणयणु तिसूलि सिहिजडिणा णिज्जिउ चंदमउलि ।

१९

अपयश और मलिनताके कारणभूत, तेज रहित युद्धसे तुम्हें लज्जित होना चाहिए। हे राजन्, तुम हट जाओ। पुरुषके गुणसमूहका अपहरण करनेवाले इस युद्धसे क्या? तब यह सुनकर, युद्धका भार उठानेमें समर्थभुज नीलांजना और प्रभादेवीके पुत्रने कहा, "हे महान् शिक्षावाले अर्ककीर्ति, प्रिय बोलनेवाले तुम्हें लज्जा क्यों नहीं आती? हे सुभट, तुम्हारे पिता और तुमने जो घमण्डपूर्वक आज्ञाका उल्लंघन किया है, उससे अपने पराभवसे आहत हुआ हूँ। तुम्हारी बहन फिर किसका मन अपहरण करती है। तब अर्ककीर्तिने दिशाओंको दीपित करनेवाले धकधक करते हुए तीर छोड़े।" उसने विद्याधर राजाके धनुषको खण्डित कर दिया। गुणवान् (डोरी सहित) भी उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। तब राजाने शीघ्र एक और धनुष ले लिया, और तीरसे आहत कर चमकता हुआ चूड़ामणि इस प्रकार गिरा दिया, मानो आकाशतलमें तपता हुआ सूर्य हो। जिसका हवासे चलता हुआ चंचल मकरध्वज है, ऐसा कामदेव इतनेमें बीचमें आकर स्थित हो गया। लक्ष्य बाँधता हुआ, सरसन्धान करता हुआ, उसके द्वारा मारा जाता हुआ अर्ककीर्ति धनुर्वेदके विवेकको जाननेवाले प्रजापति राजाके द्वारा ऐसे बचा लिया गया, मानो सिंहके द्वारा त्रस्त हरिण बचा लिया गया हो। उसने कामदेवको पराङ्मुख कर दिया। चन्द्रशेखरने पोदनपुर राजाको उसी प्रकार घेर लिया जिस प्रकार मेघने सूर्यको आच्छादित कर लिया हो। ज्वलनजटीने भीतर प्रवेश कर त्रिनयन त्रिशूलधारी चन्द्रशेखरको जीत लिया।

१९. १. AP °धुरभुएण। २. A °दियंति। ३. A °धगंति। ४. AP खंडु खंडु। ५. AP बाणेहिं हणेवि। ६. A णहयलणिवडिउ। ७. A reads *a* as *b* and *b* as *a*। ८. AP कामएउ। ९. A बंधंतु तोणु। १०. P पारिज्जमाणु। ११. AP णासिउ। १२. A थिउ पारद्धिउ गहउ अणंगु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—किंकरु[13] हयगलहु पालियछलहु कोवें कहिं वि ण माइउ ॥
णामें णीलरहु णं कूरगहु अवरु खयरु उद्धाइउ ॥१९॥

२०

दुवई—पभणइ चावपाणि रे सिहिजडि जं पइं दुक्कयं[1] कयं ॥
तं हयगीवदेवपयपंकयदोहफलं समागयं ॥

हो किं बोल्लमि मारमि[2] घल्लमि ।
एंव चवेप्पिणु भुय विहुणेप्पिणु ।
आउहु दावइ धावइ पावइ ।
किंकरि किंकरि कुंजरि कुंजरि ।
खरखुरखयधरि हरिवरि हरिवरि ।
णयणाणंदणि संदणि संदणि ।
चप्पिवि लग्गइ रंगइ णिग्गइ ।
थामें वग्गइ भंडणु मग्गइ ।
पइसइ दूसइ रुंजेइ[3] रूसइ ।
हिंसइ तासइ दीसइ णासइ ।
दुक्कइ हक्कइ कोक्कइ थक्कइ ।
रिउं पच्चारइ चूरइ जूरइ ।
खलइ णिवारइ दारइ मारइ ।
करिकरचंडिहिं लालापिंडिहिं[4] ।
दंतादंतिहिं कोंताकोंतिहिं ।
णरकिलिविंडिहिं[5][6] ।

घत्ता—तब छलका कपट करनेवाले अश्वग्रीवका (एक ओर) अनुचर क्रोधसे कहीं नहीं जा सका । नामसे नीलरथ वह मानो क्रूरग्रह हो, एक ओर विद्याधर दौड़ा ॥१९॥

२०

हाथमें धनुष लिये हुए वह कहता है—"हे ज्वलनजटी, तूने जो पाप किया है, अश्वग्रीव देवके चरणकमलोंके द्रोहका वह फल तेरे पास आ गया है । अरे मैं बोलता क्या हूं, मैं मारता हूं, फेंकता हूं," यह कहकर अपने बाहु ठोंककर वह आयुध दिखाता है, दौड़ता है, उछलता है । अनुचर अनुचरपर, गज गजपर, तीव्र खुरोंसे क्षय धारण करनेवाले अश्ववर अश्ववरपर । नेत्रोंके लिए आनन्ददायक स्यन्दन स्यन्दनपर । चांप कर लगता है, चलता है, निकलता है, स्थैर्यसे क्रुद्ध होता है, युद्ध मांगता है, प्रवेश करता है, दूषित करता है, गरजता है, रूठता है, हिंसा करता है, त्रस्त करता है, दिखाई देता है, छिप जाता है, कठिन काम करता है, हकारता है, पुकारता है, ठहरता है, शत्रुको ललकारता है, चूर-चूर करता है, पीड़ित करता है, स्खलित करता है निवारण करता है, विदीर्ण करता है, मारता है, हाथीकी सूंड़के समान प्रचण्ड, गजमुखोंके अग्रिमकाष्ठों, दांतों,

१३. A किंकर ।

२०. १. AP दुक्कियं । २. AP मारिवि । ३. A भंजइ । ४. A णायभुवदंडहिं । ५. A किलिवंदिहिं ।
६. AP add after this : दंडादंडिहिं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केसाकेसिहिं पासपासिहिं।
उवलाउवलिंहि मुसलामुसलिंहि।
इय सो जुज्झिउ भीमुँहउज्झिउ।
दुंदुहिसद्दें ता बलहद्दें।
अरि हक्कारिउ दइवें पेरिउ।
सो वि पराइउ चावविराइउ।
णं णवजलहरु विद्धउ हलहरु।
तेण उरत्थलि उट्ठियकलयलि।
कंपियणियबलि हरिसियपरबलि।
बाहुसहाएं जयवइजाएं।
सीरें ताडिउ उद्धु जि फाडिउ।
णीलरहाहिवि हुइँ कइ जयरवि।
घत्ता—णाणाणहयरहिं संधियसरहिं सहयहिं सगयहिं सरहहिं ॥
वेढिउ जिण्वहरु दूसहपसरु बलुं चित्तंगयपमुहहिं ॥२०॥

२१

दुवई—मायासो[1]हणाइं मयवंतहं माणियपहुपसायहं ॥
एक्कें हलहरेण रणि जित्तइं सत्तसयाइं रायहं ॥
सुं[2]यरिवि पहुदिण्णी तुप्पं[3]धार केण वि विसहिय रिउखग्गधार।
सिरु छिण्णउं णिग्गय रत्तधार गय एंव बप्प धाराइ धार।
केण वि सुं[4]यरिवि पहुअग्गं[5]पिंडु इच्छिउ पडंतु णियमासपिंडु।
केण वि सुयं[6]रिवि पहुचीरु रम्मु मण्णिउ लंबंतु सदेहचम्मु।

भालों, मनुष्यकी भुजाओं-भुजाओं (मह किलिविडिहिं), बालों-बालों, नागपाशों-नागपाशों, उपल-उपलों, मूसल-मूसलोंसे, भयरहितमुख वह नीलरथ इस प्रकार लड़ा। दुन्दुभि-शब्दसे बलभद्रने शत्रुको ललकारा। दैवसे प्रेरित और धनुषसे शोभित वह भी आ गया। उसने हलधरको उरस्थलमें विद्ध कर दिया, जैसे नवजलधर हो। कल-कल होने लगा। अपनी सेना काँप उठी। शत्रुसेना हर्षित हो उठी। तब जिसकी बाहु सहायक हैं, ऐसे जयावतीके पुत्रने हलसे ताड़ित कर उसे आधा फाड़ दिया। इस प्रकार नीलरथाधिपके आहत होनेपर और जय शब्द करनेपर—

घत्ता—अपने सरोंका सन्धान किये हुए अश्वों, गजों और रथोंके साथ चित्रांगद प्रमुख नाना विद्याधरोंने असह्य प्रसारवाले सैन्य और बलभद्रको घेर लिया ॥२०॥

२१

अकेले बलभद्रने मायावी सेनावाले, अहंकारी प्रभुका प्रसाद माननेवाले सात सौ राजाओंको युद्धमें जीत लिया। प्रभुके द्वारा दी गयी घीकी धाराकी याद कर किसीने शत्रुकी खड्गधाराको सहन कर लिया। सिर छिन्न हो गया। रक्तकी धारा बह निकली। कितने ही बेचारे भट धारा-धारामें ही चले गये। किसीने प्रभुके प्रथम आहारपिण्डको समझकर गिरते हुए अपने ही

७. A भीउहउज्झिउ। ८. A सयलहिं। ९. A बलचित्तंगयं।
२१. १. P °साहणेहिं। २. A सुमरिवि; P सुअरिवि। ३. A रुप्पधार। ४. A सुमरिउ; P सुमरिवि। ५. AP °अग्गपिंडु। ६. A सुमरिवि; P सुअरिवि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केण वि सुयरिवि पहुदिण्णु गाँउं   छड्डिउं णियजीवियभूयगाउं।
केण वि सुयरिवि पहुचामराइं   सलहियइं पक्खिपक्खंतराइं।
पहुसुकियभरहु वंकेवि वयणु   केण वि पडिवण्णउं बाणसयणु।
केण वि सुयरिवि पहुछत्तछाहि   आसंघिय घणसरपुंखछाहि।
केण वि [10]सुमरिवि पत्थिवपसाउ   चक्खिउ अरिवीरपहारसाउ।
केण वि सुयरिवि पहुपालियाइं   मयगलकुंभयलइं [11]फालियाइं।
दुव्वारवइरिमग्गणविहत्तु   भल्लारउं धीरउं रायरत्तु।
कासु वि रणमंदिर[12]सामिणीइ   हियवउं लइयउं सिवकामिणीइ[13]।

घत्ता—कासु वि सिरकमलु ओट्ठउड[14]दलु गिद्धु सचंचुइ चालइ॥
परितोसियजणहु महिवइरिणहु णं मोल्लवणु णिहालइ ॥२१॥

२२

दुवई—ता सहस त्ति पत्तु हरिकंधरु पभणइ तसियवासवो॥
भो भो कहसु कहसु कहिं अच्छइ सो महु वइरि केसवो॥

ता उत्तु कण्हेण भो मेइणीराय   सोहं रिऊ केसवो एहि णिण्णाय।
जाणिज्जए अज्ज दोण्हं पि रूसेवि   को हणइ सिरु लुणइ रणरंगि पइसेवि।
कुद्धेण सिरिकुमुइणीपुण्णयंदेण[1]   अलयाउरीसेण खेयरणरिंदेण।
संगामरामारइच्छाणिउत्तेण   तं सुणिवि पडिलविउं सिहिगीवपुत्तेण।

मांसबिन्दुकी इच्छा की। किसीने सुन्दर प्रभु वस्त्रकी चिन्ता कर लटकते हुए अपने ही देहचर्मको बहुत माना। किसीने स्वामीके द्वारा दिये गये गाँवकी याद कर अपने जीवन और इन्द्रियोंका गाँव छोड़ दिया। किसीने स्वामीके चमरोंकी याद कर पक्षियोंके पक्षान्तरोंकी सराहना की। प्रभुके पुण्यसे भरे हुए मुखको टेढ़ा कर किसीने बाणोंका शयन स्वीकार कर लिया। किसीने स्वामीकी छत्रच्छायाकी याद कर सघन तीरोंकी पुंख-छायाका आश्रय ले लिया। किसीने राजाके प्रसादकी याद कर शत्रुके वीर प्रहारके स्वादको चख लिया। किसीने प्रभुके द्वारा पालित और स्फारित मैगल गजोंके कुम्भस्थलोंकी याद कर दुर्निवार शत्रुके तीरोंसे विभक्त राजामें अनुरक्त धैर्यको अच्छा समझा। किसीके हृदयको रणरूपी मन्दिरकी स्वामिनी शिवा(शृगालिनी)रूपी कामिनीने ले लिया।

घत्ता—किसीके सिररूपी कमल और ओष्ठपुटरूपी दलको गीध अपनी चोंचसे चालित करता है, मानो जनोंको परितोषित करनेवाले राजाके ऋणके मूल्यको देख रहा है ॥२१॥

२२

तब सहसा अश्वग्रीव वहाँ पहुँचता है, और इन्द्रको सतानेवाला वह कहता है कि और बताओ-बताओ, वह-वह मेरा दुश्मन नारायण कहाँ है? तब नारायणने कहा, 'हे पृथ्वीराज, वह मैं तुम्हारा शत्रु केशव हूँ। हे न्यायहीन, आज यह जाना जायेगा कि हम दोनोंके रूठनेपर कौन युद्धरंगमें प्रवेश कर मारता है और सिर काटता है?' तब लक्ष्मीरूपी कुमुदिनीके पूर्ण चन्द्र अलकापुरीके स्वामी विद्याधरराजा, संग्रामरूपी स्त्रीसे रमणकी इच्छा रखनेवाले मयूरग्रीवके

---

७. A गाउ; P गामु। ८. A उड्डिउ। ९. A °गाउ; P °गामु। १०. A सुअरिउ; P सुअरिवि। ११. A पालियाइं। १२. A °सामिणीहिं। १३. A कामिणीहिं। १४. A उट्टउलदलु।

२२. १. AP पुण्णइंदेण।

कण्णा[2]मुहालोयसुहदिण्णराएण भग्गो सि किं मित्त वरइत्तवाएण।
रत्तो सि किं मूढ गयण[3]यरबालाहि ओसरसु मा पडसु खग्गग्गिजालाहि।
णवकंदकालिंदिभसलउलकालेण कोवारुणच्छेण भंगुरियभालेण।
जम्मंतराबद्धवइराणु[4]बंधेण पडिवॅत्तु[5] पडिकण्हु चलगरुलचिंधेण।
परदविणपरधरणिपरघरिणिकंखाइ णडिओ सि पाविट्ठ किं चोरसिक्खाइ।
एवं पजंपंत कंपवियं[6]महिवट्ठ करिदंतपरिहट्टु[7]भुयदंडसुपवट्ठ।
दप्पिट्ठ णिरु रुट्ठ दट्ठोट्ठ भडजेट्ठ ते बे वि अब्भिट्ट वईकुंठ[8]हयकंठ।
ते बे वि मणिमउडकुंडलसुसोहिल्ल ते बे वि कोदंडमंडलविलासिल्ल।
ते बे वि णं सीह लंबवियलंगूल ते बे वि णं लग्ग रुंजंत[9] सद्दूल।
ते बे वि विसविसम ते बे वि तडितरल ते बे वि मरुचवल ते बे वि कुलधवल।

घत्ता—बेण्णि वि दाणणिहि सिरितोसविहि मयपरवस उज्झियभय॥
बेण्णि वि दीहकरें[10] गंभीरसर रणि लग्गा[11] णं दिग्गय॥२२॥

२३

दुवई—बेण्णि वि अच्छरच्छिविच्छोहें[1]णियच्छियबद्धमच्छरा॥
बेण्णि वि णं जलंतपलयाणल बेण्णि वि णं सणिच्छरा॥

पुत्र (अश्वग्रीव) ने कहा कि हे मित्र, जिसमें कन्याके मुखालोकसे शुभ राग दिया गया है, ऐसी अभिनव वरकी बातसे क्या तुम भग्न हो गये हो ? हे मूर्ख, विद्याधर बालामें तुम क्यों अनुरक्त हुए, तुम हट जाओ, तुम खड्गरूपी आगकी ज्वालामें मत पड़ो। (इसपर) श्रावण मेघ, यमुना और भ्रमरकुलके समान कृष्ण, तथा क्रोधसे अरुण आँखोंवाले, टेढ़े भालवाले, तथा जन्मान्तरके बँधे हुए बैरके अनुबन्धसे युक्त और चंचल गरुडध्वजवाले नारायण त्रिपृष्ठने प्रतिकृष्ण (अश्वग्रीव)से कहा—"दूसरेके धन-धरती और स्त्रीकी आकांक्षा है जिसमें, ऐसी चोरशिक्षा द्वारा हे पापिष्ठ, तू क्यों प्रतारित है ?" यह कहते हुए और महीपृष्ठको कँपाते हुए हाथीके दाँतोंसे संघर्षित भुजदण्डोंसे प्रबल दर्पसे भरे हुए अत्यन्त क्रुद्ध, ओठ चबाते हुए योद्धाओंमें बड़े वे दोनों प्रति-नारायण अश्वग्रीवसे भिड़ गये। वे दोनों ही मणिमय मुकुट और कुण्डलोंसे शोभित थे, वे दोनों ही धनुषमण्डलसे विलास करनेवाले थे। वे दोनों ही मानो लम्बी पूँछवाले सिंह थे। वे दोनों ही इस प्रकार युद्धमें लग गये मानो गरजते हुए सिंह हों, वे दोनों विषसे विषम और बिजलीकी तरह तरल थे, वे दोनों ही कुलधवल थे।

घत्ता—वे दोनों ही दानकी निधि, श्री और सन्तोषके विधाता, मदके वशीभूत और भयसे रहित थे। वे दोनों ही लम्बे हाथवाले गम्भीरस्वर रणमें इस प्रकार भिड़ गये मानो दिग्गज हों॥२२॥

२३

वे दोनों ही देवांगनाओंके नेत्रोंकी चपलताको देखनेके लिए ईर्ष्या धारण करनेवाले थे। वे

२. A कण्हो महा°। ३. P गयणयलबालाहि। ४. AP °णुबंधेण। ५. A पडिलविउ। ६. कंपइय महिपट्ठ। ७. A °पविहट्ठ°। ८. P वइकुंठ°। ९. A रुजंतसद्दल। १०. A दीहरकर। ११. A लग्ग णं।

२३. १. P °विच्छोहा णियच्छिय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रिउणा ण णिट्ठविउ   कण्हेण पट्ठविउ ।
जहिं सप्पु तहिं गरुलु   जहिं अग्गि तहिं सलिलु ।
जहिं सिहरि तहिं कुलिसु[2]   जहिं तुरउ तहिं महिसु ।
जहिं विडवि तहिं जलणु   जहिं मेहु तहिं पवणु ।
जहिं रत्ति तहिं दियहु   जहिं सीहु तहिं सरहु ।
जहिं कालु[3] सोंडालु   तहिं कुडिलु[4] दाढालु ।
केसरि पवित्थरइ   णहरेहिं उत्थरइ ।
जहिं भीमु वेयालु   तहिं मंतु[5] असरालु ।
जुंजेवि[6] कोवेण   गोविंददेवेण ।
रिउणो णिहित्ताउ   विज्जाउ जित्ताउ ।
जुज्झेवि भूवेहिं   पडिवक्खरूवेहिं ।

घत्ता—बहुँरूविणिए[7] सुरकामिणिए खगवइ भणिउ ण सक्कमि ।।
हलहरसिरिहरहं पहरणकरहं माणु मलंतु[8] चवक्कमि ।।२३।।

२४

दुवई—जंपिउं हयगलेण किं केण वि तिहुयणि धीरु हीरए ।।
महुं णियबाहुदंडथिरसहयर[1] पइं किर काइं कीरए ।।
तेणेव भणेप्पिणु मुक्क सत्ति   मेहें चलविज्जु व धगधगंति ।
गयणयलि एंति उरयलि घुलंति[2]   चल पलयकालजाल[3] व जलंति ।
विप्फुरिय धरिय दामोयरेण   संकेयागय णारि व णरेण ।

दोनों ही जलती हुई प्रलयाग्नि थे। वे दोनों ही मानो शनिश्चर थे। नारायण त्रिपृष्ठने जो तीर प्रेषित किया, शत्रु उसे नष्ट नहीं कर सका। जहाँ साँप है, वहाँ विष है, जहाँ आग है, वहाँ जल है, जहाँ पर्वत है, वहाँ वज्र है, जहाँ अश्व है, वहाँ महिष है, जहाँ वृक्ष है, वहाँ आग है, जहाँ मेघ है, वहाँ पवन है, जहाँ रात है, वहाँ दिन है, जहाँ सिंह है, वहाँ श्वापद है, जहाँ मतवाला कृष्णगज है, वहाँ क्रूर दाढ़ोंवाला सिंह फैलता है और नखोंसे उछलता है। जहाँ भीम वेताल है वहाँ विशाल मन्त्र है। क्रोधसे युक्त गोविन्ददेव (त्रिपृष्ठ) ने शत्रुके द्वारा फेंकी गयी विद्याको, प्रतिपक्षरूप (अश्वग्रीवरूप) राजाओंसे युद्ध कर जीत लिया।

घत्ता—देवविद्या बहुरूपिणीने विद्याधर राजासे कहा कि हाथमें अस्त्र लेनेवाले बलभद्र और नारायण (विजय और त्रिपृष्ठ) का मैं कुछ नहीं कर सकती, उनका मान मर्दन करते हुए चौंकती हूँ ।।२३।।

२४

अश्वग्रीवने कहा, "क्या त्रिभुवनमें किसीके द्वारा धैर्यका अपहरण किया जा सकता है, मेरे बाहुरूपी दण्डको स्थिर सहचरी तुम्हारे द्वारा यह क्या किया जा रहा है ?" उसने यह कहकर शक्ति छोड़ी जो मेघके द्वारा चंचल बिजलीकी तरह धकधक करती हुई, आकाशतलमें आती हुई उरतलपर व्याप्त होती हुई, चंचल प्रलयकालकी ज्वालाकी तरह जलती हुई, विस्फुरित वह,

---

२. A कुडिलु । ३. A कोलु । ४. AP कुडिल । ५. A मंति । ६. A जुंझेवि; P जं जं वि । ७. P has पुणु before बहु° । ८. AP मलंति चम° ।

२४. १. P °सहयरए अवरि काइं । २. AP पडंति । ३. AP °जालेव पडंति ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

चंदणचच्चियकुसुमंचियंगु परिमलमिलंतगुमुगुमियभिंगु।
उग्गमिउ णाइं जगखइ खयक्कु पुणु पडिवक्खें करि लेवि चक्कु।
बोल्लियउ पयावइपुत्तु एम्व एवहिं पइं णउ रक्खंति देव।
गोवालवाल अविवेयभाव दे देहि कण्ण मा मरहि पाव।
इय भणिवि तेण घल्लिउ रहंगु तं पेक्खिवि केण ण दिण्णु भंगु।
तं देवि पयाहिण पहयतासु चडियउ दाहिणकरि केसवासु।
गहगहियदिवायरलील वहइ णं हरिसुहमहिरुहकुसुमु सहइ।
आयासहु णिवडिउ पुप्फवासु रिउ कण्हिं पबोल्लिउ सो सहासु।
संभरु तुहुं जिणवरणाहचरणु अहवा लइ महुं पइसरहि सरणु।
ता भणइ सुहडु रणरंगदुक्कु हउं मण्णमि एउं कुलालचक्कु।

घत्ता—पइं पुणु मणि गणिउं चंगउ भणिउं भिक्खागयहु ससंकहु॥
तिव्वछुहामहणु गरुयउं गहणु तिलखलखंडु वि रंकहु॥२४॥

२५

दुवई—अज्ज वि सिसुमयच्छि महु अप्पिवि करि घणपेणइसंधणं॥
मा पावहि कुमार तरुणत्तणि ताडणमरणबंधणं॥
असहंतेणं रिउणा दिण्णं ससवणसूलं दुव्वयणं।
काउं वयणं डसियाहरयं भूभंगुरतंबिरणयणं।

दामोदरके द्वारा उसी प्रकार पकड़ ली गयी, जिस प्रकार संकेतसे आयी हुई स्त्री मनुष्यके द्वारा पकड़ ली जाती है। तब शत्रुने हाथमें चक्र उठा लिया, जो चन्दनसे चर्चित और फूलोंसे अर्चित था, जिसके सौरभसे मिलकर भ्रमर गुनगुना रहे थे, जो ऐसा लगता जैसे विश्वके क्षयके लिए प्रलय सूर्य हो। और उसने प्रजापतिके पुत्रसे कहा—"इस समय देव भी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते। हे अविचारशील गोपाल बालक, कन्या दे दे, हे पाप, स्वयं मत मर।" यह कहकर उसने चक्र छोड़ दिया। उसे देखकर किसने खण्डन नहीं दिया (कौन आहत नहीं हुआ), वह चक्र त्रासको आहत करनेवाले केशव (त्रिपृष्ठ) के हाथपर प्रदक्षिणा देकर चढ़ गया। वह राहुसे ग्रस्त सूर्यकी लीलाको धारण करता है, मानो नारायणके सुखरूपी कल्पवृक्षके कुसुमकी तरह शोभित है, आकाशसे पुष्पवर्षा हुई। कृष्ण (त्रिपृष्ठ)ने हँसीपूर्वक शत्रु (अश्वग्रीव) से कहा, तुम या तो जिनवरनाथके चरणोंका स्मरण करो, अथवा लो मेरी शरणमें आओ। तब युद्ध उत्साहसे भरा हुआ वह सुभट कहता है, मैं इसे कुम्हारका चक्र मानता हूँ।

घत्ता—तुमने इसे मणि समझ लिया, ठीक ही कहा है कि भिक्षाके लिए आये हुए सशंक दरिद्र व्यक्तिके लिए भूखका नाश करनेवाला तिलखलका टुकड़ा भी भारी और दुर्लभ होता है॥२४॥

२५

आज भी तुम शिशुमृगनयनी मुझे सौंपकर प्रगाढ़ स्नेह सन्धि कर लो। हे कुमार, तुम तारुण्य (यौवन) में ताडन-मरण और बन्धनको प्राप्त मत करो। इस प्रकार शत्रुके द्वारा दिये गये,

---

४. A जुगखयखयंकु; P जुगखइ खयक्कु। ५. A जाव। ६. A पहयरासु; P पहपयासु। ७. A लहु।
२५. १. AP ॅपणयसंधणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हरिणा दित्तं[2] घित्तं चक्कं सहसाराधाराजलियं
हयगलगलकंदलयं दलियं वहलं कीलालं गलियं।
कुंडलकिरणं फुरियकवोलं कं कुंभिणिवलयइ पडियं
णं सरसं तामरसं सदलं कालमरालाहिवखुडियं।
कामिणिकारणि कलहं[3]समत्तो परणरकरसरहयगत्तो
आसग्गीवो वियलियजीवो सत्तमणरयं[4] तं पत्तो।
णहयरविसहरमहिमणुएहिं सामि भणेप्पिणु संगहिओ
जयजयरवपूरिउ[5] भुवणेहिं हरि हलहरसहिओ महिओ।
हिंडिवि दाहिणभरहतिखंडे णरवइ सवसं को ण णिओ
मागहदेवो वरतणुणामो अवि य पहासो तेण जिओ।
दिणयरकित्ति हुयवहजडिणा हलिणा तस्स पयावइणा
वद्धो पट्टो विउले भाले मंगलविलसियजणरइणा।
पवर[6]पयावाकंपियभुवणो असिवरदूसियकूरमई[7]
णियकुलं[8]कुवलयकुवलयवंधू जाओ कण्हो चक्कवई।
उहसेढीणं रायं[9] काउं जलणजडिं ससुरं खयरं
आओ गुरुयणपणविय[10]सीसो पुणरवि तं पोयणणयरं।

घत्ता—लइ दीसइ पवरु एउ वि अवरु णिच्छयणियमणिउत्तउं॥
इह सुपुरिसचरिउं बहुगुणभरिउं जगि आढत्तु समत्तउं॥२५॥

अपने कानोंके लिए त्रिशूलके समान दुर्वचनोंको सहन नहीं करते हुए, तथा अपना मुख दंशिताधरों एवं भौंहोंसे भंगुर और लाल आँखोंवाला कर नारायण दीप्त हजारों आराओंकी धाराओंसे प्रज्वलित चक्र छोड़ दिया। अश्वग्रीवका गला और कपाल कट गया। प्रचुर रक्त बह गया। कुण्डलकी किरणोंवाला स्फुरित कपोलवाला उसका मस्तक भूमण्डलपर इस प्रकार गिर पड़ा मानो कालरूपी हंसराजके द्वारा तोड़ा गया सदल सरस रक्तकमल हो। स्त्रीके लिए कलहसे मतवाला, शत्रु मनुष्यके हाथके चक्रसे आहत, नष्टजीव अश्वग्रीव सातवें नरक गया। विद्याधरों, नागों और मनुष्योंने स्वामी कहकर उस (त्रिपृष्ठ) को स्वीकार कर किया। विश्वोंने जयजय शब्दसे पूरित तथा बलभद्र सहित हरिकी पूजा की। दक्षिण भरतखण्डमें भ्रमण कर उसने किस राजाको अपने वशमें नहीं किया? वरतनु नामका मागधदेव और प्रभासको भी उसने जीत लिया। दिनकरके समान कीर्तिवाले ज्वलनजटी, बलभद्र और प्रजापति तथा जिसमें मंगलके कारण लोगोंकी रति विलसित है ऐसे अर्ककीर्तिने उसके विशाल भालपर पट्ट बाँध दिया। जिसके प्रचुर प्रतापसे भुवन प्रकम्पित है, जिसके असिवरसे क्रूरमति दूषित कर दिया है, जो अपने कुलरूपी कुमुद और पृथ्वीमण्डलका बन्धु है, ऐसा वह त्रिपृष्ठ चक्रवर्ती हो गया। अपने ससुर विद्याधर ज्वलनजटीको विजयार्धकी दोनों श्रेणियोंका राजा बनाकर गुरुजनोंके प्रति अपना सिर झुकानेवाला वह फिर उस पोदननगर पहुँचा।

घत्ता—लो यह दूसरी बात भी महान् दिखाई देती है कि निश्चयरूपसे अपने मनमें कहा गया बहुगुणोंसे भरित जगमें आदृत सुपुरुष-चरित समाप्त हो गया॥२५॥

---

२. A घित्तं दित्तं चित्तं। ३. P कलहु। ४. A णरए तं पत्तो। ५. AP पूरिय। ६. A पवर°। ७. A कूरगई; P कूरमइं। ८. AP णियकुलणहयल°। ९. A राउं काउं। १०. A °पणमिय°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६

दुवई—मणहरभद्दलक्खणायारहं णहयल[1]लग्गकुंभहं ॥
दोचालीसलक्ख मायंगहं अरिकरिवरणिसुंभहं ॥

तेत्तिय रह रणभरजोत्तियाउ पायालहु कोडिउ तेत्तियाउ ।
जलथलगयणंतरजंगमाहं णव[2]कोडिउ जाइतुरंगमाहं ।
जंभारिपीलुलीलागईउ महएविउ अट्ठ महासईउ ।
णिरु पीणपीवरुण्णयथणीहिं सोलह सहास सीमंतिणीहिं ।
सोलह सहास देसंतराहं सोलह सहास गोउय[3]वराहं ।
सोलह सहास घरि पत्थिवाहं सोलह सहास खेडाहिवाहं ।
तह[4] णव सहास मेच्छाहिवाहं पण्णास सहस दोणामुहाहं ।
चउवीस सहस वरपट्टणाहं सत्तेव सहस संवाहणाहं ।
छत्तीस सहस साहिय पुराहं वसुसमसहास जक्खामराहं ।
पच्चंतणिवासहं णिवइ[5] णयइं पण्णास णिउत्तइं तिण्णि सयइं ।
गिरितरुजलवाहिणिसंगमाइं[6] चउदह वणदुग्गइं दुग्गमाइं[7] ।
गामहं कोडिउ अडदाल जासु किं अक्खमि संपय वप्प तासु ।
जा णाम सयंपह इट्ठणारि जा णहयरणाहहु हुइय मारि ।

घत्ता—तहि परमेसरिहि रइरससरिहि हरिणा हरिसरवण्णा ॥
पहिलउ सिरिविजउ बीयउ विजउ तणय दोण्णि उप्पण्णा ॥२६॥

२६

जो सुन्दर भद्रलक्षण धारण करनेवाले हैं, जिनके कुम्भस्थल आकाशतलसे लगते हैं, और जो शत्रुगजोंका नाश करनेवाले हैं, ऐसे दो लाख चालीस हजार हाथी उसके पास थे। उतने ही युद्धभारमें जोते हुए रथ थे। पैदल सैनिक भी उतने ही करोड़ थे। जल, थल और आकाशमें चलनेवाले नौ करोड़ घोड़े थे। ऐरावतकी चालकी तरह चलनेवाली आठ महासती देवियाँ थीं। अत्यन्त स्थूल और उन्नत स्तनोंवाली सोलह हजार स्त्रियाँ थीं। सोलह हजार देशान्तर, सोलह हजार नाटकवर, सोलह हजार गृह पार्थिव ? सोलह खेडाधिपति, नौ हजार म्लेच्छ राजा, पचास हजार द्रोणमुख, चौबीस हजार उत्तम पट्टन, सात हजार संवाहन, छत्तीस हजार और यक्ष अमरोंके आठ हजार नगर कहे गये हैं। तीन सौ पचास सीमान्त राजा उसके प्रति नत थे। गिरितरुओं और नदियोंसे युक्त चौदह दुर्गम वन दुर्ग थे। जिसके पास एक करोड़ अड़तालीस गाँव थे, मैं अकिंचन कवि उसका क्या वर्णन करूँ ? जो उसकी स्वयंप्रभा नामकी प्रिय पत्नी थी, वह विद्याधरोंके लिए मारी सिद्ध हुई।

घत्ता—रतिरूपी रसकी नदी उस परमेश्वरीसे हर्षसे सुन्दर हरि (त्रिपृष्ठ) को दो पुत्र उत्पन्न हुए—पहला श्रीविजय और दूसरा विजय ॥२६॥

२६. १. A णहयरग° । २. A णव भणियउ जाइ° । ३. P णउणयवराहं । ४. AP तहो । ५. A णिवइ णियइं । ६. A °संगमाहं । ७. °दुग्गमाहं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७

दुवई—ता सिहिजडि सपुत्तु परिपुच्छिवि हरि हलहर पयावई ॥
गउ रहणेउरम्मि दढं जिणगुणसुमरणसमियदुम्मई ॥

सो तहिं ए एत्थु वसंति जांव   बहुकालहिं णहयरु ढुक्कु तांव ।
सो पुच्छिउ हरिताएण कुसलु   सुहुं अच्छइ जिणपयपोमभसलु ।
असहायसहेज्जउ सच्चसंधु   खयराहिउ गुणि महु परमबंधु ।
तं सुणिवि तेण खयरेण उत्तु   मेल्लिवि खगणिवचक्केसरत्तु ।
थिरु धरिवि पंचपरमेट्ठिसेव   महिवइ ससुरउ पावइउ देव ।
एयइं वयणइं आयण्णियाइं   सज्जणचरियइं मणि मण्णियाइं ।
ता एण सहहि संसं णियाइं   इंदियसुहाइं अवगण्णियाइं ।
सणएण पयावइपत्थिवेण   आउच्छिय तणुरुह बे वि तेण ।
अणुहुत्तउं इच्छिउं पुत्तसोक्खु   एवहिं संसाहमि परममोक्खु ।
लइ जामि रण्णु[3] पावज्ज लेमि   वयसंजमभारहु खंधु देमि ।
हरिहलहरमउडणिरुद्धपाउ   परिथिउ थिउ केंव वि णाहिं ताउ ।
णिम्मुक्कमाणमायामएहिं   णरणाहहं सहुं सत्तहिं सएहिं ।
परिसेसिवि मंदिरमोहवासु   वउ लइउं पासि पिहियासवासु ।

२७

तब ज्वलनजटी अपने पुत्र नारायण, बलभद्र और प्रजापतिसे पूछकर, जिनके गुणोंके स्मरणसे जिसकी दुर्मति शान्त हो गयी है, ऐसा वह राजा अपने रथनूपुर नगर चला गया। जब वह वहाँ और ये यहाँ इस प्रकार रह रहे थे तो बहुत समयके बाद एक विद्याधर वहाँ आया। नारायणके पिताने उससे कुशल समाचार पूछा कि जिनवरके चरणकमलोंका भ्रमर असहायोंकी सहायता करनेवाला, सत्यप्रतिज्ञ, गुणी विद्याधर राजा मेरा श्रेष्ठ बन्धु सुखसे तो है। यह सुनकर उस विद्याधरने कहा कि विद्याधरराज और चक्रेश्वरत्व छोड़कर पंचपरमेष्ठीकी स्थिर सेवा स्वीकार कर वह ससुर राजा हे देव, प्रव्रजित हो गये हैं। राजाने ये वचन सुने और सज्जनके चरित्रोंको उसने माना। उसने सभामें इसकी प्रशंसा की तथा इन्द्रिय सुखोंकी निन्दा की। उस न्यायशील राजा प्रजापतिने अपने दोनों पुत्रोंसे पूछा कि मैंने इच्छित पुत्रसुखका अनुभव कर लिया है, इस समय अब परम सुखकी साधना करूँगा। लो मैं प्रव्रज्या लेकर वनमें जाता हूँ। तथा व्रत और संयमके भारको मैं अपना कन्धा दूँगा। बलभद्र और नारायणके मुकुटोंसे जिसके पैर अवरुद्ध हैं, ऐसा वह राजा और पिता किसी भी प्रकार रुका नहीं। मान-माया और मदसे रहित सात सौ राजाओंके साथ घरके मोहवासका परित्याग कर उसने पिहिताश्रव मुनिके पास व्रत ग्रहण कर लिया।

२७. १. AP णहयरु। २. A सुह अच्छइ। ३. A रण्णि। ४. AP संजमु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

घत्ता—थिउ परिहरिवि जणु पॅयसेवि वणु णिच्चमेव णिच्चलमइ ॥
अट्ठ वि णिद्धुणिवि कम्मइं जिणिवि गउ सिवपयहु पयावइ ॥२७॥

२८

दुवई—एत्तहि णिसियविसमअसिधारातासियणरवरिंदहो ॥
चउरासीदि लक्ख गय वरिसहं तहिं पुरवरि उविंदहो ॥

दीहासीचावपमाणगत्तु अण्णहिं दिणि भोयसुहें अतित्तु ।
णिद्धम्मचित्तु णिल्लुत्तणाणु वड्ढंतमहंतरउद्दझाणु ।
जिह सुत्तउ तेंव जि कण्हलेसु मुउ कण्हु जमहु किर को ण वेसु ।
उप्पणउ तमतमपहि तमोहि पंचविहदीहदूसहदुहोहि ।
तेत्तीससमुद्दपमाणु आउ पंचसयसरासणतुंगकाउ ।
जायउ णारउ णारयहं गम्मु भणु कवणु ण मारइ भीमकम्मु ।
सइं रुयइ सयंपह कंत कंत अतुलबल देव हयगलकयंत ।
उट्ठुट्ठि णिहालहि सुहिमुहाइं दीहइ णिद्दइ सुत्तो सि काइं ।
बलएवहु धाहारुण्णएण लोय वि रुयंति कारुण्णएण ।
णिसुणेवि साहुवयणामयाइं णिज्झाइवि जिणपयपंकयाइं ।
पियविरहें हुयवह पइसरंति वारेवि सयंपह अणुमरंति ।

घत्ता—लोगोंका परित्याग कर निश्चल और निश्चित मति वनमें प्रवेश कर प्रजापति आठों ही कर्मोंको नष्ट कर और जीतकर शिवपदको प्राप्त हुआ ॥२७॥

२८

यहांपर पैनी और विषम असिधारासे जिसने नरवर राजाओंको त्रस्त किया है, ऐसे उस उपेन्द्र त्रिपृष्ठके उस नगरमें चौरासी लाख वर्ष बीत गये। उसके शरीरका प्रमाण अस्सी धनुष था। एक दिन वह भोगसुखसे अतृप्त हो उठा, धर्मसे रहित चित्त और ज्ञानसे लुप्त उसका रौद्रध्यान निरन्तर बढ़ रहा था। जैसे ही वह सोया वैसे ही कृष्णलेश्यावाला वह कृष्ण (नारायण त्रिपृष्ठ) मर गया। यमका द्वेष्य कौन नहीं होता। वह पाँच प्रकारके दीर्घ दुखोंके समूह अन्धकारसे भरे तमतमप्रभा नगरमें उत्पन्न हुआ। उसकी आयु तैंतीस सागर प्रमाण थी। पाँच सौ धनुष प्रमाण ऊँचा उसका शरीर था। नारकियोंके लिए गम्य वह नारकी हुआ। बताओ भीमकर्म किसको नहीं मारता। स्वयंप्रभा स्वयं, 'प्रिय-प्रिय' कहकर रोती है कि हे अतुलबल देव, अश्वग्रीव! उठो-उठो सुधीजनोंके मुखोंको देखो, तुम लम्बी नींदमें क्यों सोये हुए हो? बलभद्रके दहाड़ मारकर रोनेसे करुणाके कारण लोग भी रो पड़ते हैं। फिर साधु वचनामृतको सुनकर जिनवरके चरण-कमलोंका ध्यान कर प्रिय विरहके कारण आगमें प्रवेश करती हुई तथा अनुशरण (पतिके बाद

५. AP पइसरिवि वणु। ६. A णिट्ठुविवि।
२८. १. AP चउरासी वि। २. AP वद्दंतरउद्दमहंतझाणि। ३. P कम्ने ण दोसु। ४. A विहपंचदोहं°
५. AP केम ण मारइ। ६. A संरुयइ। ७. P पियविरहएं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिरिविजयहु बंधिवि रायपट्टु वणु रायसहासहिं सहुं पयट्टु ।
गुरु करिवि महारिसि कणयकुंभु तउ चिण्णउ सीरिं[८] रईणिसुंभु[९] ।
घत्ता—गउ मोक्खहु विजउ जिणधम्मधउ[१०] तेएं भरहु भडारउ ॥
सोसियमोहरसु भुवणंतजसु पुप्फयंतसरवारउ ॥२८॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे विजयतिविट्ठहयगीवकहंतरं
णाम दुवण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५२॥

मरण) करती हुई स्वयंप्रभाको मनाकर, श्रीविजयको राजपट्ट बाँधकर, एक हजार राजाओंके साथ वह वनमें चला गया । रतिका नाश करनेवाले महाऋषि कनककुम्भको अपना गुरु बनाकर बलभद्रने तप ले लिया ।

घत्ता—जिनधर्म दृढ़ तेजसे नक्षत्रोंको ढकनेवाला, आदरणीय मोहरसका शोषण करनेवाला, भुवनकी सीमाओं तक यशवाला, कामदेवके बाणोंका नाश करनेवाला विजय मोक्षके लिए गया ॥२८॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त
द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस महाकाव्यका
बावनवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५२॥

८. A सीरें । ९. AP रयणिसुंभु । १०. A जिणधम्मरओ ।

संधि ५३

पणविवि देवहु णेयंतणिउंजियदिट्ठिहि ॥
वासवपुज्जहु सिरिवासुपुज्जपरमेट्ठिहि ॥ ध्रुवकं ॥

१

जो कल्लाणसयालओ मायाभावसयालओ ।
हरिणवंदपहुआसणो कुणयकुडंगहुयासणो ।
कणयरकविलणिवारणो अज्जुणवारिणिवारणो ।
दुविहकम्मकयणिज्जरो सुहयावयवो णिज्जरो ।
जो णिण्णासियभयजरो[1] दाणालो जिणकुंजरो ।
जंस्स[2] अणंतं वीरियं अवि णं[3] हणइ णियवइरियं ।
जो ण महइ दियवइरियं मज्जे जेण ण ईरियं ।
सुत्तं जस्स ण मंसए पाए जस्स णमंसए ।
अरइयरइणिव्वाणओ झसकेऊ[4] णिव्वाणओ ।
बारहमो तित्थंकरो पणयाणं तित्थंकरो ।
जो जम्मंबुहिपोयओ वसिकयहरिकरिपोयओ ।
बुज्झियवत्थुवियप्पयं तं णमिउं परमप्पयं ।
भणिमो तस्स महाकहं चिण्णं तेण तवं कहं ।

सन्धि ५३

जिनकी दृष्टि एकान्तमें नियुक्त नहीं है, और जो इन्द्रके द्वारा पूज्य हैं, ऐसे श्री वासुपूज्य देवको मैं प्रणाम करता हूँ।

१

जो कल्याण परम्पराओं के शोभन घर हैं, जिनमें मायाभाव सदाके लिए लय हो गया है, जिनके आसनमें सिंह है, कुनयरूपी वृक्षोंके लिए जो अग्नि हैं, जो कणयर और कपिलका निवारण करनेवाले और श्वेत छत्रको धारण करनेवाले हैं, जिन्होंने दो प्रकारके कर्मोंकी निर्जरा की है, जो सुन्दर शरीरावयववाले और जरासे रहित हैं, जिन्होंने भयरूपी ज्वरका नाश कर दिया है, जो दानके घर और श्रेष्ठ जिन हैं, जिनके पास अनन्तवीर्य है, फिर भी जो अपने शत्रुका हनन नहीं करते, जो ब्राह्मणोंके वेदोंका सम्मान नहीं करते, जिनका सिद्धान्त न मदिरामें है और न मांसमें, जिसने रतिसुखकी रचना नहीं की है, जो बाण रहित है, ऐसा कामदेव जिनके चरणोंमें नमस्कार करता है, जो प्रणतोंके लिए तीर्थ बनानेवाले हैं, जो बारहवें तीर्थंकर हैं, जो जन्मरूपी समुद्रके लिए जहाज हैं, जिन्होंने अश्व-गजादिके समूहको वशमें कर लिया है, जिन्होंने पदार्थोंके भेदको

---

१. १. भवजरो । २. AP जस्साणंतं । ३. A णिहणइ । ४. AP झसकेओ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुलबलजाईसामयं मोत्तुं जम्मं सामयं ।
काउं देहं खामयं जिह लद्धं मोक्खामयं ।

घत्ता—तिह हउं भासमि सुणि सेणिय किं सिरिगावें ।।
जिणगुणचिंतइ चंडालु वि मुच्चइ पावें ।। १ ।।

२

पुक्खरवरदीवद्धए मणुउत्तरगिरिरुद्धए ।
तडउग्गयसुरदारुणो इंददिसासियमेरुणो ।
पुव्वविदेहे जण[1]रुई पीणियखग[2]उलसंतई ।
तत्थ[3] वारिमंथरगई सीया णाम महाणई ।
पायवसुरहिसमीरए तीए दाहिणतीरए ।
संतोसियणरवरमई वरदेसो वच्छावई ।
घरसिरकयणहसाइयं उच्छवपडहणिणाइयं ।
धुयधयमालाराइयं रयणउरं रयणाइयं ।
तहिं[4] राओ पउमुत्तरो जो सीलेण जगुत्तरो ।
देवी तस्स मयच्छिया णामेणं धणलच्छिया ।
दोण्हं जणियाणंगओ दीहो कालो णिग्गओ ।
तलतमालतालीघणे आसीणो पुरउववणे ।
सत्तुमित्तसमचित्तओ अरुहो तित्थपवत्तओ ।

समझ लिया है, ऐसे उन परमात्माको मैं नमस्कार करता हूँ। उनकी महाकथाको मैं कहता हूँ कि किस प्रकार उन्होंने तप स्वीकार किया। किस प्रकार कुल-बल-जाति और लक्ष्मीके मद और व्याधिसहित जन्मको छोड़कर और शरीरको कृश बनाकर मोक्षरूपी अमृत उन्होंने प्राप्त किया।

घत्ता— उस प्रकार मैं कहता हूँ, हे श्रेणिक ! लक्ष्मीके गर्वसे क्या, जिनके गुणोंका चिन्तन करनेसे चाण्डाल भी पापसे मुक्त होता है ॥१॥

२

मानुषोत्तर पर्वतसे अवरुद्ध पुष्करार्ध द्वीप है। जिसके तटपर देवदारु वृक्ष उगे हुए हैं ऐसे पूर्वदिशामें आश्रित पूर्वमेरुके पूर्व विदेहमें लोगोंको अच्छी लगनेवाली, पक्षिकुलकी परम्पराको सन्तुष्ट करनेवाली, जलसे मन्द-मन्द बहनेवाली सीता नामकी नदी है। उसके वृक्षोंसे सुरभित पवनवाले, दक्षिण तीरपर नरश्रेष्ठोंकी मतिको सन्तुष्ट करनेवाला वत्सकावती देश है। उसमें रत्नपुर नामका नगर है, जो गृहरूपी सिरोंसे आकाशका आस्वाद करनेवाला है, जिसमें उत्सव नगाड़ोंका शब्द हो रहा है, जो हिलती हुई पताकाओंसे शोभित है और रत्नोंसे विजटित है। उसमें पद्मोत्तर नामका राजा था जो शीलमें विश्वमें श्रेष्ठ था। मृगके समान नेत्रवाली उसकी धनलक्ष्मी नामकी देवी थी। कामदेवको जाननेवाले उनका बहुत-सा समय बीत गया। तल, तमाल और ताली वृक्षोंसे सघन नगर-उपवनमें विराजमान, शत्रु और मित्रमें समान चित्त रखनेवाले तीर्थ-

---

२. १ A जणरई। २. A खगउडसंतई। ३. AP तेत्थु। ४. P तहिं मि राउ पउमुत्तरो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धम्मसलिलसिंचियधरो महिओ तेण जुयंधरो ।
मुणिओ वत्थुविभेयओ उप्पण्णउ णिव्वेयओ ।
दाउं परिपालियखमं धणमित्तस्स कुलक्कमं ।
सह णिवेहिं साहियमणो सममण्णियतणकंचणो ।
जाओ राओ मुणिवरो गिरिगहणे लंबियकरो ।
चरइ तवं सो जेरिसं को किर वण्णइ तेरिसं ।

घत्ता—णिरु णिप्पिहमइ परमेसरु पंथहु लग्गउ ॥
जिह देहें[५] रिसि चित्तेण वि तिह सो णग्गउ ॥ २ ॥

३

माणसे असक्कयाइं पंच पंच एक्कयाइं ।
बुज्झिउं सुयंगयाइं ताविउं णियंगयाइं[१] ।
इंदियाइं पीडिऊण दुक्कियाइं साडिऊण ।
अज्जिऊण चारु चित्तु तित्थणाहणामु गोत्तु ।
भाविऊण संतणाणु झाइऊण धम्मझाणु ।
उज्झिऊण खाणु पाणु तेण मुक्कु झ त्ति पाणु ।
णिग्गओ सरीरयाउ णं रईसरीरयाउ ।
जम्मसायरे पडंतु दुक्खविब्भमे घडंतु ।
चंदकंतकंतिसुक्कि जायओ महंतसुक्कि ।
सोलसण्णवप्पमाउ पोमलेसु सुब्भतेउ ।

प्रवर्तक धर्मरूपी जलसे धरतीको सिंचित करनेवाले अरहन्त युगन्धरको उसने पूजा की। पदार्थके भेदको उसने समझा। उसे निर्वेद उत्पन्न हो गया। जिसमें पृथ्वीका परिपालन किया जाता है, ऐसी कुलपरम्परा (कुलराज्य) अपने पुत्र (धनमित्र) को देकर, राजाओंके साथ अपने मनको साधते हुए, तृण और स्वर्णको समान मानते हुए वह राजा मुनिवर हो गया। गहन वनमें अपने हाथ लम्बे कर वह जिस प्रकारके तपका आचरण करता है, उसका वैसा वर्णन कौन कर सकता है ?

घत्ता—अत्यन्त निस्पृह-मति वह परमेश्वर अपने मार्गपर लग गये। जिस प्रकार वह शरीरसे ऋषि (नंगे) थे उसी प्रकार मनसे भी ॥२॥

३

अचिन्तित पाँच पापों और इन्द्रियोंको एक किया। श्रुतांगोंको समझा। अपने अंगोंको सन्तप्त किया। इन्द्रियोंको पीड़ित कर, दुष्कृतोंको नष्ट कर, सुन्दर विचित्र तीर्थंकर नामका गोत्र अर्जित कर, अपने मनमें ज्ञानकी भावना कर, धर्मध्यानका ध्यान कर, खान-पान छोड़कर उसने शीघ्र प्राणोंका त्याग कर दिया। शरीरसे इस प्रकार निकला मानो रतिरूपी नदीके वेगसे निकला हो। जन्मरूपी सागरमें पड़ता हुआ, दुःखोंके विलासमें होता हुआ, चन्द्रकान्तकी कान्तिके समान सफेद महाशुक्र विमानमें उत्पन्न हुआ। सोलह सागर प्रमाण आयुवाले उसकी पद्मलेश्या थी, और वह

५. A देहेण ।

३. १ A ताविओ-।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हारदोरसोहमाणु अट्ठअद्धहत्थमाणु ।
अट्ठअट्ठपक्खसासु पुण्णचंदसंणिहासु ।
चोत्थभूयलंतलक्खु सद्दजायकामसोक्खु ।
घत्ता—सोलहसहसहं गय वरिसहं एक्कसु भुंजइ ॥
जो सो सुरवरु बुहहियवउं किं णउ रंजइ ॥ ३ ॥

४

लेसमासजीवियम्मि दिव्वपुंगमे थियम्मि ।
जक्खणाहु भासुरेण बोल्लिओ सुरेसरेण ।
जंबुदीवि भाणुभासि भारहम्मि अंगदेसि ।
दोक्खलक्खलोट्टणम्मि चंपणामपट्टणम्मि ।
अत्थि दव्वपुज्जराउ सत्तुसीसदिण्णपाउ ।
तस्स पत्ति कामवित्ति वल्लहा जयावइ त्ति ।
ताहं होइ इंदियारि अंगओ अहम्महारि ।
जाहि देव सोक्खजुत्ति ता धणाहिवेण झ त्ति ।
णिम्मियं पुरं वरेहिं मोत्तिएहिं कब्बुरेहिं ।
कंजछण्णवावियाहिं दीहियाहिं खाइयाहिं ।
फुल्लगुंछवच्छएहिं कूवएहिं कच्छएहिं ।
तीरिणीतलायएहिं चित्तदारभायएहिं ।
हट्टटिंटचच्चरेहिं गामगोहदुच्चरेहिं ।

शुभ्र तेजवाला था। हार-डोरसे शोभित चार हाथ प्रमाण शरीर, आठ-आठ पक्षमें श्वास लेनेवाला और पूर्णचन्द्रके समान मुखवाला। चौथी नरकभूमिके अन्त तक देखनेवाला (अवधिज्ञानसे); उसे शब्दमात्रसे कामसुख मिल जाता था।

घत्ता—जो, जब सोलह हजार वर्ष निकल जाते तो एक बार भोजन करता, वह देववर पण्डितोंके हृदयका रंजन क्यों नहीं करता ? ॥३॥

४

जब दिव्यशरीरमें स्थित उसका छह माह जीवन शेष रह गया, तो भास्वर देवेन्द्रनाथने यक्षनाथसे कहा कि 'सूर्यसे प्रकाशित जम्बूद्वीपके भारतमें अंगदेशके लाखों दुःखोंको नष्ट करनेवाले चम्पा नामक नगरमें शत्रुओंके सिरपर पैर रखनेवाला वसुपूज्य नामका राजा है, उसकी पत्नी (प्रिया) जयावती कामवृत्ति है। उन दोनोंके इन्द्रियोंका शत्रु और अधर्मका हरण करनेवाला पुत्र होगा। इसलिए सुखयुक्तिवाले हे देव, तुम जाओ।' तब कुबेरने शीघ्र जाकर श्रेष्ठ चित्र-विचित्र मोतियोंसे नगरकी रचना की। कमलोंसे आच्छादित वापियों, लम्बी-लम्बी खाइयों, फूलोंके गुच्छेवाले वृक्षों, कूपों, कच्छों (कछारों), नदियों, तालाबों, चित्रित द्वारभागों, बाजारों, द्यूतगृहों, चौराहों, ग्राम्य-

---

२. P °पक्खमासु।

४. १. जंबुदीवभाणुभासि। २. A होहि इंदियारि; P होहिंदिदियारि। ३. A देहि सोक्ख°। ४. AP फुल्लगोच्छ°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीहरत्थमग्गएहिं वोमें[५]मग्गलग्गएहिं ।
धूवगंधसुंदरेहिं सत्तभूमिमंदिरेहिं ।
घत्ता—एहउ सोहइ जं पुरु तहिं घरि सुंहुं[६] सुत्तइ ॥
सिविणयसंतइ पविलोइय पंकयणेत्तइ ॥ ४ ॥

५

हत्थि दाणवारिवाहरत्त[१]मत्तछप्पओ गोवई विसाणघायभग्गसालिवप्पओ ।
केसरी मयंधगंधकुंभिकुंभदारणो णक्खजोण्हियामिलंतमोत्तियंसुवारणो ।
हंसकामिणीहिं सेवियारविंदवासिरी पुंडरीयवामणेहिं सिंचिया महासिरी ।
पारियायपोमपोंभलं परायसंमुयं मत्तभिंगसंगयं ललंतमालियाजुयं ।
णासियंधयारओ वरो[२] विहावरीवई कंजबंधवो सरम्मि दिण्णपोमिणीरई ।
पेमें[३]भेंभला चला णिरंतरं वियारिणो कीलमाणया महासरंतरे विसारिणो ।
वारि[४]वारपूरियं सरोरुहेहिं अंचियं कुंभजुम्मयं पवित्तचंदणेण चच्चियं ।
पंकयायरो चलंतलच्छिणेउरारवो णीरघुम्मिरो तरंगभंगुरो महण्णवो ।
सीह[५]मंडियासणं रणंतकिंकिणीसरं इंदमंदिरं वरं महाफणीसिणो घरं ।
पुंजओ मणीण दित्तिरंजियावणीयलो धूमचत्तओ पलित्तओ सिहाचलोणलो ।

प्रमुखोंके लिए चलनेमें कठिन लम्बी गलियों और मार्गों और आकाशमार्गसे लगे हुए धूप-गन्धसे सुन्दर सातभूमिवाले घरोंसे—

घत्ता—वह नगर शोभित था। वहाँ घरमें सुखसे सोती हुई कमलनयनी जयावती स्वप्नमाला देखती है। ॥४॥

५

मदजलके प्रवाहमें अनुरक्त मत्त भ्रमर जिसपर हैं, ऐसा हाथी जिसने सींगोंके आघातसे क्षेत्रखण्डको खोद डाला है, ऐसा गोपति (बैल); मदान्ध गन्ध गजके कुम्भस्थलका विदारण करनेवाला तथा नखोंकी ज्योतिसे मिलती हुई मोतियोंकी किरणोंका निवारण करनेवाला सिंह, हंसिनियोंके द्वारा सेवित, कमलोंमें निवास करनेवाली, पुण्डरीक और वामन दिग्गजोंके द्वारा अभिषिक्त महालक्ष्मी; पारिजात और कमलोंसे मिश्रित, परागकी भूमि, मतवाले भ्रमरोंसे युक्त विलसित पुष्पमाला युग्म; जिसने अन्धकारका नाश किया है ऐसा श्रेष्ठ चन्द्रमा, सरोवरमें जिसने कमलिनियोंको कान्ति दी है ऐसा कमलबन्धु (सूर्य); प्रेमसे विह्वल, चंचल निरन्तर विचरण करनेवाली क्रीड़ा करती हुई महासरोवरमें मछलियाँ; जलसमूहसे पूरित, कमलोंसे अंचित, पवित्र चन्दनसे चर्चित कुम्भयुगल; जिसमें चलती हुई लक्ष्मीके नूपुरोंका शब्द हो रहा है ऐसा सरोवर तरंगोंसे भंगुर और जलसे आलोड़ित समुद्र; सिंहोंसे अलंकृत आसन (सिंहासन); जिसमें किंकिणियोंका स्वर है ऐसा इन्द्रविमान और महानागका श्रेष्ठ घर। जिसने अपनी दीप्तिसे अवनीतलको रंजित किया है ऐसा मणियोंका समूह; धूमसे रहित, शिखाओंसे चंचल प्रदीप्त आग।

---

५. AP वोमधामलग्गएहिं । ६. A सुहि सुत्तइ ।

५. १. A °रंतमत्त° । २. A हिमाहिवो णिसावई । ३. A पिमविंभला । ४. AP तारवारिपूरियं ।
५. A सीहवीढियं रणंत° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—सिविणय जोइवि देविइ णियणाहहु भासिउं ॥
तेण वि तप्फलु[१] णिच्चप्फलु तहि उवएसिउं ॥ ५ ॥

६

णाणचक्खुणा जो णिरिक्खए जो जयं असेसं पि रक्खए।
पोसए पिए दुव्वसामिए सुंदरी हले मज्झखामिए।
सो तुमम्मि होही जिणेसरो भव्वजीवराईवणेसरो।
सक्कपेसिया देविया सिरी कंति कित्ति बुद्धी सई हिरी।
आगया घरं देहसोहणं ताहिं तम्मि तिस्सा कयं घणं।
तिण्णि तिण्णि मासे घणी वसो वुट्ठओ सुवण्णंभपाउसो[१]।
मेहजाललीलापयासए पावणम्मि आसाढमासए।
छट्ठए दिणे किण्हपक्खए[२] तित्थणाहसंखम्मि रिक्खए।
चरणकमलजुयणवियपण्णओ गब्भकंजकोसे णिसण्णओ।
पुणु पयत्थसममासमेरओ णिच्च सवइ कणयं कुबेरओ।
घत्ता—चउसंखाहिइ जलणिहिपण्णासइ ढलियइ ॥
पल्लहु तिज्जइ भायम्मि धम्मि परिगलियइ ॥ ६ ॥

७

गइ सेयंसइ सिवसरहंसइ[१]।
मासइ फग्गुणि पक्खइ तमघणि।
कंपियतिहुवणि चउदहमि दिणि।

घत्ता—स्वप्नोंको देखकर देवीने अपने स्वामीसे कहा और उसने भी उसे उसका नित्यफल-वाला-फल बताया ॥५॥

६

जो ज्ञानरूपी आँखसे देखते हैं, जो अशेष जगकी रक्षा करते हैं, हे दूबकी तरह श्यामांगी, कृशोदरी सुन्दरी, पोषण देनेवाली प्रिये, ऐसे वह भव्य जीवरूपी कमलोंके सूर्य जिनेश्वर तुममें उत्पन्न होंगे। इन्द्रके द्वारा प्रेषित देवियाँ श्री, कान्ति, कीर्ति, बुद्धि, सती और ह्री घर आयीं, और उन्होंने उसका उसी समय खूब देह शोधन किया। मेघजालकी लीलाको प्रकाशित करनेवाले, पवित्र आषाढ़ माहके कृष्णपक्षके छठीके दिन, चौबीसवें शतभिषा नक्षत्रमें जिनके चरणकमल युगलको नाग प्रणाम करता है, ऐसे वह गर्भरूपी कमलकोशमें स्थित हो गये। फिरसे कुबेरने नौ माहकी अवधि तक नित्य धनकी वर्षा की।

घत्ता—चौवन सागर समय बीतनेपर, अन्तिम पल्यके तीसरे सागरमें धर्मका उच्छेद होने पर—॥६॥

७

शिवरूपी सरोवरके हंस श्रेयांसके चले जानेपर, फागुन माहके कृष्णपक्षमें, जिसमें त्रिभुवन

---

१. A तं फलु णिच्चफलु।

६. १. A सुवण्णंबुपाउसो। २. A कण्हपक्खए।

७. १. P सिवभर°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुरियविओयइ वारुणजोयइ ।
उप्पण्णो इणु बारहमो जिणु ।
हरिसोल्लियमणु पत्तो सुरयणु ।
चंपापुरैवरं णविऊणं घैरं ।
णिज्जियसयदलि जणणीकरयलि ।
बुद्धिणिसुंभयं मायाडिंभयं ।
गहिऊणं पहुं रइभिसिणीविहुं ।
सक्केणं तउ कुं भैणिउं गउ ।
लग्गणमेरुणो सिहरं मेरुणो ।
गंतुं गयेमलि पंडुसिलायलि ।

घत्ता—णाहु थवेप्पिणु जियतारहारणीहारहिँ ॥
ण्हविउ सुरिंदहिँ घडवियलियचंदिरधारहिँ ॥ ७ ॥

८

पुज्जिवि वंदिवि तिजगगुरुणिवराणियहि खेयर विसहर सुरेरमणिसंमाणियहि ।
तणयालोयणतुट्ठियहि [2]तुच्छोयरिहि आणिवि देउ समप्पियउ करि मायरिहि ।
इंदें रुंदाणंदवसु तिह णच्चियउं जिह महिचलणें फणिउलु विंभियकुंचियउं ।
पणविवि परमं परमपरं णेहि चलियधओ सहुं परिवारें सग्गवई सुरलोउ गओ ।
अण्णहु पासि ण सत्थविही कत्थइ सुणइ सव्वउ कलउ सलक्खणउ अप्पणु मुणइ ।

कम्पित है, ऐसे चतुर्दशीके दिन, पापसे विमुक्त चारणयोगमें बारहवें जिनवर (सूर्य) उत्पन्न हुए। हर्षसे उल्लसित मन देवसमूह वहाँ पहुँचा, और चम्पापुर वर तथा घरको प्रणाम कर कमलकुलको जीतनेवाले जननीके करतलमें, बुद्धिको भ्रममें डालनेवाले मायावी बालकको रखकर, रतिरूपी कमलिनीके लिए सूर्य प्रभुको लेकर, इन्द्र 'कुं' कहकर गजको प्रेरित कर आकाशको छूनेवाले सुमेरु पर्वतके शिखरपर जानेके लिए चला। मलरहित पाण्डुक शिलातलपर—

घत्ता—स्वामीको स्थापित कर, स्वच्छ हार और नीहारोंको जीतनेवाली घड़ोंसे गिरती हुई चाँदनीके समान धाराओंसे सुरेन्द्रोंने उनका अभिषेक किया ॥७॥

८

उनकी पूजा और वन्दना कर; त्रिजगके श्रेष्ठ राजाकी रानी, विद्याधर, विषधर और देवस्त्रियोंके द्वारा सम्माननीय पुत्रको देखकर सन्तुष्ट होनेवाली कृशोदरी माताके हाथमें लाकर देवको दे दिया। इन्द्रने विशाल आनन्दके वशीभूत होकर इस प्रकार नृत्य किया, कि जिससे धरती काँपनेके कारण नागकुल विस्मयसे संकुचित हो गया। परमश्रेष्ठ जिनको प्रणाम कर, चंचलध्वज स्वर्गपति (इन्द्र) अपने परिवारके साथ इन्द्रलोक चला गया। वह किसी दूसरेके पास कहीं भी

२. A पुरवरे। ३. A घरे। ४. A तं भणिओ; P कुं भणिओ। ५. A गयगले। ६. A has ता before णाहु।

८. १. A सुररमणी°; सुरवररमणी°। २. A छउओयरिहि; P तुच्छओयरिहि। ३. AP विंभय°। ४. A णहचलिय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरिसि विसुद्धबुद्धिसहिइ हयदुट्ठमइ सावयसीलि परिट्ठियउ गब्भट्ठमइ ।
कालें वड्ढंतहु गुणेहिं जाणियमणुहि जायइ माणु सरासणइं सत्तरि तणुहि ।
कुंअरत्तें परमेसरहो कीलाणिरयं अट्ठारह संवच्छरहं तहु लक्ख गयं ।

घत्ता—णवघुसिणछवि करणुज्झियणाणपहायरु ॥
णिव कुलमहिहरे उग्गउ णं बालदिवायरु ॥ ८ ॥

९

एक्कहिं दिणि णिव्वेयउ भासइ तउ करमि जेण पुणु वि संसारि असारि ण संसरमि ।
लोयंतियसुरवंदहिं लहु संबोहियउ माणवदाणवदेवहिं ण्हविवि पसाहियउ ।
फुल्लियफलियमहीरुहरंजियसउयणहु सिवियाजाणारूढउ गउ मणहरवणहु ।
कयचउत्थु मज्झत्थु महत्थु महंतमइ मणपज्जवपरियाणियमाणुसमणविगइ ।
फग्गुणि कसणि चउद्दसिदिणि विरएं लइउ सयभिसहइ सायण्हइ सो सइं पावइउ ।
तेण समउं संसारहु णिव्विण्णइं वरइं सयइं णिवहं पावइयइं छहछाहत्तरइं ।
तिक्खु चरित्तु चरंते पाउ गलत्थियउं मोहसमुद्दु रउद्दु सुदुम्महु मंथियउ ।
कामहु पंच वि चंडइं कंडइं खंडियइं इंदियदुट्ठकुडुंबइं मुणिणा दंडियइं ।

शास्त्रविधि नहीं सुनते, लक्षण सहित समस्त कलाओंका स्वयं विचार करते हैं। गर्भसे आठवें वर्षमें विशुद्ध शुद्ध बुद्धिसे सहित, दुष्ट बुद्धिका नाश करनेवाले हैं वह श्रावकधर्ममें दीक्षित हुए। समयके साथ गुणोंसे बढ़ते हुए, मनःपर्ययज्ञानको जाननेवाला उनका शरीर सत्तर धनुषके मानका हो गया। उन परमेश्वरके कौमार्यमें क्रीड़ामें रत अठारह लाख वर्ष बीत गये।

घत्ता—नवकेशरके समान छविवाले, तथा इन्द्रियोंसे रहित ज्ञानरूपी सूर्यवाले वह, हे राजन् (श्रेणिक), कुलरूपी पर्वतपर मानो बाल दिवाकरके रूपमें उत्पन्न हुए ॥८॥

९

एक दिन विरक्त होकर वह कहते हैं कि मैं तप करूँगा जिससे मैं इस असार संसारमें संसरण न करूँ। लौकान्तिक देवोंने तत्काल सम्बोधित किया और मानवों तथा दानव देवोंने अभिषेक कर उनका प्रसाधन किया। शिविकायानपर आरूढ़ होकर जहाँ पुष्पित और फलित वृक्षोंपर गुंजन करते हुए भ्रमर हैं, ऐसे मनोहर उद्यानमें वह गये। जिन्होंने मनःपर्ययज्ञानसे मनुष्य और श्रमणकी चेष्टाओंको जान लिया है, ऐसे महार्थ मध्यस्थ और महामति, एक उपवास कर फागुन माहके कृष्णा चतुर्दशीके दिन, विरक्तिसे परिपूर्ण, उन्होंने सायंकाल शतभिषा नक्षत्रमें प्रव्रज्या ले ली। उनके साथ संसारसे विरक्त छह सौ छिहत्तर राजाओंने दीक्षा ग्रहण कर ली। तीव्र तपका आचरण करते हुए उन्होंने पापको नष्ट कर दिया, और अत्यन्त दुर्मद भयंकर मोह-समुद्रका मन्थन कर डाला। कामके पाँचों प्रचण्ड तीरोंको उन्होंने नष्ट कर दिया। मुनिने दुष्ट

५. A वट्टंतें । ६. A कुमरत्तें; P कुवरत्तें । ७. AP °णिरया । ८. AP गया । ९. A णं उग्गउ ।
९. १. A ण पइसरमि । २. A सिवियाजाणइ रूढउ । ३. P माणविगइ । ४. A फग्गुणकसणचउद्दसिदिणि° ।
५. AP सविसाहइ । ६. A चरइं । ७. A °छाहंतर° । ८. A सुसंमुद्दु । ९. P °कुटुंबइं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंगउं सुत्तु धरेप्पिणु मणपुरवरु थविउं दिहिपायारु[10] रएप्पिणु रिउबलु[11] विहविउं।
विसयकसायहं चोरहं कुहिणिउ दूसियउ रयणत्तयभाभारें लोउ पयासियउ।
घत्ता—बीयइ वासरि पइसरिवि महाणयरंतरि॥
भिक्खहि कारणि परिभमइ जईसरु घरि घरि॥९॥

१०

आवंतु भडारउ भावियउ सुंदरराएं पोराावियउ।
तहु मंदिरि सहसा वित्थरिउं पंचविहु वियंभिउं अच्छरिउं।
थिउ एक्कु वरिसु रिसि तिव्वतवि णिज्जूरियभवसंभवविभवि।
णिद्धाडियमाडियमोहरइ ससहरि विसाहणक्खत्तगइ।
माहम्मि सुद्धबीयहि बलिउ घणघाइचउक्कु विणिद्दलिउ।
उववासिएण वासरि गमिइ दिणयरि वारुणदिसि संकमिइ।
धुव्विल्लइ वणि चवचूयचलि उप्पायउ णाणु कयंवतलि।
णियगोमिणिगारव संखरव घंटारव हरिरव पडहरव।
महिविवर गयण वण सग्ग घर णहि धाइय आइय बहु अमर।
विज्जाहर आइय कुसुमकर भूगोयर कंपाविय सधर।
घत्ता—तं परमप्पउं ललियक्खरलद्धविसेसहिं॥
वंदइ सुरवइ णाणाविहथोत्तसहासहिं॥१०॥

इन्द्रियरूपी कुटुम्बको दण्डित किया तथा अच्छी तरह सोते हुए मनरूपी पुरवरको पकड़कर स्थापित किया। धैर्यरूपी प्राकारकी रचना कर शत्रुबलको खण्डित किया। विषयकषायरूपी चोरोंकी गलीको दूषित कर दिया, रत्नत्रयकी प्रभाके भारसे लोकको प्रकाशित कर दिया।

घत्ता—दूसरे दिन महानगरके भीतर प्रवेश कर वह यतीश्वर आहारके लिए घर-घर परिभ्रमण करते हैं ॥९॥

१०

सुन्दर राजाने आते हुए आदरणीयकी पूजा की और पारणा करायी। उसके प्रासादमें शीघ्र ही पांच प्रकारके विस्तृत आश्चर्य उत्पन्न हुए। वह महामुनि एक वर्ष तक जिसमें संसारमें जन्म लेनेकी सम्पत्ति नष्ट हो गयी है, ऐसे तीव्रतपमें स्थित रहे। जिन्होंने मोहरज उखाड़कर नष्ट कर दिया है ऐसे, वह माघ माहके शुक्लपक्षके द्वितीयाके दिन विशाखा नक्षत्रमें चार घन घातिया कर्मोंका नाश कर देते हैं। उपवाससे दिन बितानेपर और सूर्यके पश्चिम दिशामें ढलनेपर, धव और आम्रवृक्षोंसे चंचल पूर्वोक्त उद्यानमें कदम्ब वृक्षके नीचे ज्ञान उत्पन्न हो गया। अपनी लक्ष्मीके गौरवसे युक्त शंखशब्द, घण्टाशब्द, हरिशब्द और पटह शब्द, धरतीके विवरों, गगन, वन, स्वर्ग और घरोंमें फैल गये। बहुतसे देव आकाशमें दौड़े और वहाँ आये। हाथमें कुसुम लेकर विद्याधर आये। पृथ्वी सहित भूगोचर काँप उठे।

घत्ता—सुन्दर अक्षरोंसे जिन्होंने विशेषता प्राप्त की है, ऐसे नानाविध स्तोत्रोंसे इन्द्र उन परमात्माकी वन्दना करता है ॥१०॥

१०. P °पावारु। ११. रिउदलु।

१०. १. A पराविय‍उ। २. P °विडवि। ३. A वासवदिसि। ४. P चवभूयचलि। ५. P कलंबयलि। ६. AP आइय धाइय। ७. AP विज्जाहर वियसियकुसुमकर। ८. A लद्धहिं सेसहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

जीह समीहइ भोयणउं   दिट्ठि वि महिलालोयणउं ।
कण्णहिं इच्छिउ गेयरसु   णासु गुणाहियगंधवसु ।
फासु वि मउसयणइं महइ   करणइं पंच जीउ वहइ ।
ताइं मणेण जि पट्ठवइ[1]   विसयहं उवरि परिट्ठवइ ।
पसरियविविहसुहालसउ   मोहँ[2]मइरमयपरवसउ ।
कुप्पइ तप्पइ णीससइ   णडइ रडइ गायइ हसइ ।
णाणाजम्महिं आइयउ   पेम्मँ[3]पिसाएं छाइयउ ।
कुलबलविहवगव्वगहिउ   गुरुयणकहियसीलरहिउ ।
उम्मग्गेण जि संचरइ   पइं ण भडारा संभरइ ।
तुहुं तिहुयणअब्भुद्धरणु   तुहुं जि देव विउसहं सरणु ।
तुहुं जिण गुणमाणिक्कणिहि   तुहुं घोरपावकंतारसिहि ।
तुहुं जणमणवेयाँ[4]लहरु   अच्चुयसुहहलतियसतरु ।
जो पइं पणवइ सुद्धमई   सो पावइ[5] णिव्वाणगई ।

घत्ता—वाईसरिवइ रिदुसट्ठिसमं जसु गणहर ॥
बारहसयमिय पुव्वंगधारि तहु मुणिवर ॥११॥

११

"जीभ भोजनकी इच्छा करती है, दृष्टि स्त्रीको देखना चाहती है, कानोंके द्वारा गीत-रस चाहा जाता है, नाक गुणोंसे अधिक गन्धके अधीन होती है, स्पर्श भी मृदु शय्याओंको महत्त्व देता है, इस प्रकार पाँच इन्द्रियोंको जीव धारण करता है। मनके द्वारा उनको प्रेरित करता है, और विषयोंमें उन्हें प्रवृत्त करता है, प्रसरित बहुसुखोंमें वह (जीव) आसक्त होता है, तथा मोहरूपी मदिराके मदके अधीन हो जाता है। वह क्रुद्ध होता है, सन्तप्त होता है, निःश्वास लेता है, व्याकुल होता है, रोता है, गाता है, हँसता है, नाना जन्मोंमें आया हुआ (यह जीव) मोहरूपी पिशाचसे अभिभूत होता है। कुल, बल और वैभवके अहंकारसे गृहीत गुरुजनोंके द्वारा कहे गये शीलसे रहित वह खोटे मार्गसे ही चलता है। हे आदरणीय, वह तुम्हारा स्मरण नहीं करता। आप त्रिभुवनका उद्धार करनेवाले हैं, हे देव, आप ही विद्वानोंकी शरण हैं, हे जिन, आप गुणरूपी माणिक्योंकी निधि हैं, आप भयानक पापरूपी कान्तारके लिए आग हैं, आप जनमनके अन्धकार-को दूर करनेवाले हैं, आप अच्युत सुखरूपी फलके लिए कल्पवृक्ष हैं, जो शुद्धमति तुम्हें प्रणाम करता है, वह निर्वाणगति प्राप्त करता है।"

घत्ता—जिनके छियासठ गणधर थे और बारह सौ पूर्वांगके धारी मुनिवर थे ॥११॥

---

११. १. A अट्ठवइ । २. A मेहमयरमय°; P मोहमइरामय° । ३. A पेमविसाएं । ४. A °वेयण्णहरु । ५. P adds लहु after पावइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२

पंचतीस चउसहसइं दुइसय सिक्खुयहं पंचसहस जलणिहिसय सावहिभिक्खुयहं ।
छहसहास सव्वण्हुहुं दह वेउव्वियहं लेसासमइं सहासइं मणपज्जयवियहं ।
सायरसहसइं दोसय वाइहिं णयधरहं एंव होंति बाहत्तरिसहसइं जइवरहं ।
एक्कु लक्खु छहसहसइं संजमधारिणिहिं लक्ख चयारि समासिय घरवयचारिणिहिं ।
दोण्णि लक्ख गुणवंतहं संतहं सावयहं संखेज्जउ गणु[1] घोसिउ काणणसावयहं ।
जिणवरवयणणिहालणणिहयभवावयहं[2] संख णत्थि तहिं आयहं देवहं देवियहं[3] ।
चउपण्णास जि लक्खइं वरिसविहीणाइं वरिसहं विहरिवि महियलि भवसमरीणाइं ।
हरिकयकणयकुसेसयउयरिविइण्णपउ संबोहेप्पिणु भव्वइं चंपाणयरु गउ ।

घत्ता—णिज्जियणियरिउ वरधम्मचक्कि मुणिराणउ ।
पलियंकासणु अंतिमझाणम्मि[4] णिलीणउ ॥१२॥

१३

भद्दवयहु स[1]सयभिसहहि सेयचउद्दसिहि तिण्णि वि अंगइं गलियइं तासु महारिसिहिं[2] ।
अवरण्हइ चउणवइहिं रिसिहिं समेउ जिणु जायउ सिद्धु भडारउ ववगयजम्मरिणु ।
सक्कि अग्गिकुमारहिं जयजयकारियउं अंगु अणंगीहूयहु तहु सक्कारियउ ।
आहंडलधणुमंडलमंडियघणवणइ कहइ पुरंदरु देवहं जंतु णहंगणइ ।

१२

उनतालीस हजार दो सौ शिक्षक मुनि थे। पाँच हजार चार सौ अवधिज्ञानी मुनिवर थे। छह हजार केवलज्ञानी और दस हजार विक्रियाऋद्धिके धारी मुनि थे। छह हजार मनःपर्ययज्ञानी, चार हजार दो सौ वादीश्वर मुनि थे। इस प्रकार (उनके साथ) बहत्तर हजार मुनिवर थे। एक लाख छह हजार संयम धारण करनेवाली आर्यिकाएँ थीं। गृहस्थ धर्मका पालन करनेवाली श्राविकाएँ चार लाख थीं। गुणवान् श्रावक दो लाख थे। व्रतसहित तिर्यंच संख्यात कहे गये हैं। जिनवरके मुखको देखने मात्रसे जिन्होंने संसारकी आपत्तियोंका नाश किया है ऐसे वहाँ आनेवाले देवी-देवताओंकी संख्या नहीं थी। एक वर्ष कम चौवन लाख संसारश्रमसे हीन वर्षों तक धरती-तलपर विहार कर, इन्द्रके द्वारा रचित स्वर्णकमलके ऊपर पैर देकर चलनेवाले वह भव्योंका सम्बोधन करनेके लिए चम्पानगर गये।

घत्ता—जिन्होंने अपने शत्रुको जीत लिया है, ऐसे श्रेष्ठ धर्मचक्रवर्ती मुनिराज पर्यंकासनमें स्थित अन्तिम ध्यानमें लीन हो गये ॥१२॥

१३

भाद्र शुक्ला चतुर्दशीके दिन उन महाऋषिके तीनों ही शरीर गल गये। अपराह्णमें चौरानबे मुनियोंके साथ, जन्मरूपी ऋणसे रहित आदरणीय वह जिन सिद्ध हो गये। इन्द्र और अग्निकुमार देवोंने उन्हें जयजयकार किया, अनंगीभूत हुए उनके शरीरका दाह-संस्कार कर दिया गया। इन्द्रधनुष मण्डलसे मेघवाले आकाश के प्रांगणमें जाता हुआ इन्द्र देवोंसे कहता है कि प्रभु

१२. १. A गुण। २. A भवावहहं। ३. P देवयहं। ४. AP °झाणे।

१३. १. A सविसाहहे कसणे°; P सुविसाहहे कसणे°; K records a *p* as in AP। २. P महासिहि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहु बाहत्तरि वच्छरलक्खइं अच्छियउ　　एवहिं हूयउ णिक्कलु इह ण णियच्छियउ।
एम मरइ को पंडियपंडियवरमरणु[३]　　जेण ण पुणु वि पयट्टइ बहुभवसंभरणु[४]।
हउं वि एउं संचिंतमि जइ णरभवु लहमि　　तो खरतवमंथाणें कम्मदहिउं महमि।
अप्पउ णामें[५] चोप्पडु तं छिण्णउं करमि　　वासुपुज्जपरमेट्ठिहि मग्गे संचरमि।

घत्ता—भरहहु होंतउ जिणचरियइं तियसहं संधिवि ॥
गउ हरि सग्गहु णहि[६] पुप्फदंत उल्लंघिवि ॥१३॥

इति महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे वासुपुज्जणिव्वाणगमणं
णाम तिवण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५३॥

बहत्तर लाख वर्ष रहे, इस समय जाकर वह मुक्त हुए, तुमने यह नहीं देखा। इस प्रकार पण्डितोंमें महापण्डित-मरण कौन मरता है कि जिससे दुबारा जीव संसारकी अनेक जन्म-परम्परामें नहीं पड़ता। मैं भी यही सोचता हूँ कि यदि मैं मनुष्य जन्म पा सकूँ तो तीव्रतपरूपी मथानीसे कर्मरूपी दहीका मन्थन करूँगा, और ज्ञानसे जो आत्मा तथा स्निग्धत्व (रागतत्त्व) है उसे छिन्न करूँगा, तथा वासुपूज्य परमेष्ठीके मार्गपर चलूँगा।

घत्ता—इस प्रकार भरतसे लेकर जिनचरितोंको इन्द्रसे कहकर इन्द्र आकाशमें नक्षत्रोंको लाँघकर स्वर्ग चला गया ॥१३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका वासुपूज्य निर्वाण
गमन नामका तिरपनवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५३॥

---

३. P °मरणे। ४. P °संसरणे। ५. A णाणं। ६. A omit णहि।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

संधि ५४

सिरिवासुपुज्जजिणतित्थि तहिं चिरपरिहवआरुट्टहु ॥
करि लुद्धउ णं हरि हरिवरहु तारउ भिडिउ दुविट्ठहु ॥ध्रुवकं॥

१

दुवई—इह दीवम्मि भरहि वरविंझपुरम्मि महारिमारणो ॥
णरवइ विंझसत्ति विंझो इव पालियमत्तवारणो ॥

मयणाहीमंडणु तणु मैयलइ जहिं कप्पूररेणु णहु धवलइ ।
जहिं कामिणि चामरु संचालइ जहिं देवंगु वत्थु परिघोलइ ।
जहिं भूसणमणिकिरणावलियउं दसदिसासु बहुवण्णउ घुलियउं ।
तहिं अत्थाणि णिसण्णउ राणउ इंदफणिंदखगिंदसमाणउ ।
ता संपत्तउ चरु सुमहुरगिरु सो पभणइ पयजुयपणमियसिरु ।
भत्तवित्तगोमहिसीपउरइ एत्थु जि भरहखेत्ति कणयउरइ ।
तुहुं सुहि गुणविसेसतोसियमइ जाणहि किं ण सुसेणु महीवइ ।
तासु वेस णामें गुणमंजरि णं सरचूयकुसुममयमंजरि ।
रूवु ताहि मइं दिट्ठउं जेहउं उव्वसिरंभहं दुक्करु तेहउं ।

सन्धि ५४

श्री वासुपूज्यके तीर्थकालमें पूर्वजन्मके पराभवसे क्रुद्ध हरिवर द्विपृष्ठसे तारक भिड़ गया, मानो क्षुब्ध सिंह गजवरसे भिड़ गया हो ।

१

इस जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रमें श्रेष्ठ विन्ध्यनगरमें बड़े-बड़े शत्रुओंको मारनेवाला विन्ध्य-शक्ति नामका राजा था जो विन्ध्याचलके समान बड़े-बड़े मतवाले हाथियोंका पालन करनेवाला था । जहाँ कस्तूरी शरीरको मलिन करती है (वहाँके लोगोंका चरित्र मलिन नहीं होता), जहाँ कपूरकी धूल आकाशको धवल बनाती है, जहाँ स्त्री चामर ढोरती है, जहाँ देवांग वस्त्र पहने जाते हैं, जहाँ भूषणमणियोंकी रंग-बिरंगी किरणावलियाँ दसों दिशाओंमें व्याप्त हैं, वहाँ दरबारमें इन्द्र-नागेन्द्र और विद्याधरेन्द्रके समान राजा बैठा हुआ था । वहाँ अत्यन्त मधुर वाणीवाला दूत पहुँचा । दोनोंके चरणोंमें प्रणाम करते हुए उसने कहा—"अन्न-धन-गाय और भैंसोंसे प्रचुर इस भरत क्षेत्रमें कनकपुर है । अपने गुणविशेषसे सन्तुष्टमति सुधी राजा सुषेणको क्या तुम नहीं जानते ? उसकी गुणमंजरी नामकी वेश्या है, जो मानो कामदेवरूपी आम्रवृक्षकी कुसुममय मंजरी है । उसका जैसा रूप मैंने देखा है, वैसा रूप उर्वशी और रम्भाके लिए भी कठिन है ?

१. १. AP मइलइ । २. AP °खगिंदफणिंद° । ३. P तुहुं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—णउ मयकलंकपडलें मलिणु ण धरइ खयवंकत्तणु ॥
मुहुं[4] मुद्धहि चंदें समु भणमि जइ तो कवणु[5] कइत्तणु ॥१॥

२

दुवई—मत्तकरिंदमंदलीलागइ णरमणणलिणगोमिणी ॥
किं वण्णमि णरिंद सा कामिणि कामिणियण[1]सिरोमणी ॥

दिस बिंबाहररंगें रावइ	करुहपंति पईवहिं दीवइ ।
कुंचियकेसहं कंतिइ कालइ	माणिणि माणवमहुयरमालइ ।
सुललियवाणि व सुकइहि केरी	जहिं दीसइ तहिं सा भल्लारी ।
पढइ चारु पोसियपत्थावउ	गायइ सुंदरि कण्णसुहावउ ।
णच्चइ बहुरसभावणिउत्तउं	सा जइ लहहि कह व मइं वुत्तउं ।
तो संसारहु पइं[2] फलु लद्धउं	सयलु वि तिहुवणु तुज्झु जि सिद्धउं ।
ससिजोण्हाहीणें किं गयणें	णासाविरहिएण किं वयणें ।
लवणजुत्तिवियलेण व भोज्जें	ताइ विवज्जिएण किं रज्जें ।

घत्ता—तं णिसुणिवि राएं मंतिवरु देवि उवायणु पेसियउ[3] ॥
घरु जाइवि तेण सुसेणपहु पियवायइ संभासियउ[4] ॥२॥

घत्ता—वह मृगलांछनके पटलसे मलिन नहीं होती, वह क्षय और वक्रताको धारण नहीं करती, फिर भी यदि मैं उस मुग्धाके मुखको चन्द्रमाके समान कहता हूँ तो इसमें कौन-सा कवित्व है ? ॥१॥

२

मतवाले करीन्द्रकी मन्दलीलाके समान गतिवाली वह कामिनी मनुष्यके मनरूपी कमलकी शोभा और कामिनी-जन की शिरोमणि है। उसका क्या वर्णन करूँ ? उसके बिम्बाधरोंके रंगसे दिशा अनुरंजित होती है, नख पंक्तिके प्रदीपोंसे आलोकित होती है, घुँघराले बालोंकी कान्तिसे काली होती है। वह मानवरूपी मधुकरोंकी मालासे मानिनी है, वह सुकविकी सुन्दर वाणीके समान है, वह जहाँ-जहाँ दिखाई देती है वहीं कल्याणमयी है। वह सुन्दर सुभाषित युक्तियोंको पढ़ती है, वह सुन्दरी कानोंको सुहावना लगनेवाला गाती है। अनेक रसों और भावोंसे परिपूर्ण नृत्य करती है। यदि उसे तुम किसी प्रकार पा सकते हो, तो मैं कहता हूँ कि तुमने संसारका फल पा लिया और समस्त त्रिभुवन सिद्ध हो गया। चन्द्रमाकी ज्योत्स्नासे रहित आकाशसे क्या ? नाकसे रहित मुखसे क्या ? लवणयुक्तिसे रहित भोजनसे क्या ? इसी प्रकार उस सुन्दरीसे रहित राज्यसे क्या ?"

घत्ता—यह सुनकर, राजाने मन्त्रीवरको उपहार देकर भेजा। उसने घर जाकर प्रियवाणीमें राजा सुषेणसे सम्भाषण किया ॥२॥

४. AP महुं। ५. AP कमणु।
२. १. AP कामिणिजण°। २. AP फलु पइं। ३. AP पेसिउ। ४. AP संभासिउ।

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

३

दुवई—जो तुहुं विंझसत्ति सो दोहं मि भेउ ण लक्खिओ मए ॥
इहु कल्लोलणिवहु इहु जलणिहि केण विहत्तओ जए ॥

एक्कु जीउ विहिणा गंभीरइं पर रइंयइं भिण्णाइं सरीरइं ।
जं तहु केरउ तं तुम्हारउं जं तेरउ तं तासु जि केरउं ।
एत्थु ण किज्जइ चित्तु अधीरउं णेहणिबंधणु बंधुंहिं सारउं ।
णिरुवयारु तं णासइ सुंदरि देहि समित्तहु तुहुं गुणमंजरि ।
ता पहुणा दूयउ णिब्भच्छिउ एहुउ बंधु बप्प कहिं अच्छिउ ।
घंरि सीमंतिणीउ जो मग्गइ अवसें सो धणपाणहु लग्गइ ।
दरिसियरइरसकरणालिंगण जाहि ण दूयं देमि पणयंगण ।
तें वयणें पुरु गंपि तुरंतउ णियकुलसामिहि कहइ महंतउ ।
हंसवंसवीणारवभासिणि देव ण देइ सुसेणु विलासिणि ।

घत्ता—आयण्णवि दूयहं जंपियइं णेहु चिराणउ भंजिवि ॥
अब्भिट्टु सुसेणहु विंझपुरणरवइ सीहु व रुंजिवि ॥३॥

४

दुवई—बेण्णि वि चरणरेहिं संचोलिय बेण्णि वि ते महाबला ॥
वरणारीकएण गणियारिरया इव भिडिय मयगला ॥

३

"जो तुम हो, वही विन्ध्यशक्ति है दोनोंमें मैंने कोई भेद नहीं देखा ? यह लहरोंका समूह है और यह जलनिधि है, जगमें कौन उसे विभक्त कर सकता है ? एक ही जीव है, परन्तु विधाताने गम्भीर विभिन्न शरीरोंकी रचना की है। जो उसका है, वह तुम्हारा है और जो तुम्हारा है, वह उसीका है। इसमें किसी प्रकार अपने चित्तको अधीर नहीं बनाना चाहिए। बन्धुओंका स्नेह निबन्धन ही सार है। अनुपकार उस स्नेहका नाश कर देता है। इसलिए सुन्दरी गुणमंजरी तुम अपने मित्रके लिए दे दो।" तब राजा सुषेणने दूतकी भर्त्सना की—"हे सुभट, यह बन्धु कहाँ है, जो घरकी स्त्री माँगता है, वह अवश्य ही (बादमें) धन और प्राणोंसे भी लग सकता है। जिसने रति-रस उत्पन्न करनेवाले आलिंगनोंको प्रदर्शित किया है, ऐसी प्रणयांगना नहीं दूँगा, हे दूत, तुम जाओ।" इन वचनोंसे दूत शीघ्र नगर जाकर अपने स्वामीसे कहता है कि हे देव, हंस-वंश और वीणाके शब्दके समान बोलनेवाली विलासिनी गुणमंजरीको सुषेण नहीं देता है।

घत्ता—दूतोंके कथनोंको सुनकर और अपने पुराने स्नेहको भंग कर विन्ध्यपुरका राजा सिंहके समान गरजकर सुषेणसे भिड़ गया ॥३॥

४

दोनों ही दूत पुरुषोंसे संचालित थे। वे दोनों ही महाबल थे। श्रेष्ठ नारीके लिए हथिनोंमें

---

३. १. A पररइयं। २. AP कीरइ। ३. P बंधहे। ४. A घरसीमंतिणि। ५. AP देमि दूय।

४. १. संचारिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोहुं वि साहणाइं आलग्गइं   चालियचक्कइं तोलियखग्गइं ।
खलियरहंगइं मलियतुरंगइं   दलियधुरग्गइं दूसियमग्गइं ।
मोडियदंडइं लुयधयसंडइं   खंडियमुंडइं णच्चियरुंडइं ।
जूरियपत्तइं चूरियछत्तइं   दारियगत्तइं णिग्गयरत्तइं ।
लूरियताणइं हयजंपाणइं   उड्डियप्राणइं कयसिरदाणइं ।
हुंकारंतइं हक्कारंतइं   उरगयकोंतइं चललुलियंतइं ।
मग्गणभिण्णइं तिलु तिलु छिण्णइं   सेयवसिण्णइं रत्तकिलिण्णइं ।
विरसु चवंतइं वम्मु छिवंतइं   संक मुयंतइं संकु घिवंतइं ।
हत्थिणिसुंभइं फाडियकुंभइं   जोहं[2]णिरुंभइं जयजसु[3]लंभइं ।
घत्ता—ता सरिवि सुसेणें सरिबलें सरहिं णिरंतरु भिण्णउं ।
जमदूयहं भूयहं भुक्खियहं णाइ दिसाबलि दिण्णउं ॥४॥

५

दुवई—ताव सुसेणमुक्कबाणावलिविहडियणिविडगयघडं ॥
हरिसंचलणदलेणणिट्ठुरखुर[2]फाडियधवलधयवडं ॥
छंडियकिवाणु   गलियाहिमाणु ।
लंबंतकेसु   जणजणियहासु ।
पत्तावमाणु   दिसि धावमाणु ।
धयछत्तछण्णु   पेच्छवि स[3]सेण्णु ।
पडिभडकयंतु   धाइउ तुरंतु ।

अनुरक्त मतवाले हाथियोंके समान भिड़ गये । दोनोंकी सेनाएँ भिड़ गयीं, चक्र चलाती हुईं और खड्ग तोलती हुईं । चक्र स्खलित हो गये, अश्व दलित होने लगे । धुराग्रभाग चूर-चूर होने लगे । मार्ग दूषित होने लगे । दण्ड मुड़ने लगे । ध्वजसमूह कटने लगे । मुण्ड कटने लगे । धड़ नाचने लगे । वाहन पीड़ित हो उठे । छत्र चूर-चूर हो गये । शरीर विदीर्ण हो गये, रक्त बह निकला । अश्व और जंपाण त्राण (कवच) रहित हो गये । प्राण उड़ने लगे । सिरोंका दान किया जाने लगा । हुंकारते हुए, हंकारते हुए । भाले उरमें घुसने लगे । चंचल आँतें लुढ़कने लगीं । तीरोंसे छिन्न-भिन्न होकर तिल-तिल कटने लगा । पसीनेसे भींग गये, रक्तसे लिप्त हो गये । विरस बोलते हुए, कवच छेदते हुए, शंका छोड़ते हुए, अस्त्र ग्रहण करते हुए, हाथियोंको नष्ट करते हुए, कुम्भस्थलोंको फाड़ते हुए, योद्धाओंको रोकते हुए, जय और यशको पाते हुए ।

घत्ता—तब सुषेणने तीरोंसे शत्रुसेनाको लगातार छिन्न-भिन्न कर दिया, मानो उसने भूखे यमदूतों और भूतोंको दिशाबलि दी हो ॥ ४ ॥

५

तबतक सुषेणके द्वारा छोड़ी गयी बाणावलीसे सघन गजघटा विघटित हो गई । अश्वोंके संचालन और दलनके कारण कठोर खुरोंसे धवल ध्वजपट फाड़ दिये गये । जिसने तलवार छोड़ दी है, जिसका अभिमान खण्डित हो चुका है, केश बिखर चुके हैं, जिसने लोगोंमें हास्य उत्पन्न

---

२. AP जोहणिसुंभइं । ३. AP जयजसलंभइं; P adds aftr this: कित्तिवियंभइं । ४. AP °बलु
५. १. AP °वलण° । २. AP °फालिय° । ३. A ससेणु ।

३३

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

बलपबलसत्ति भडु विंझसत्ति ।
रिउ भणिउ तेण रे रे णिहीण ।
दे देहि णारि मा गिलउ मारि ।
सहुं परियणेण पइं रणि खणेण ।
तं सुणवि सत्तु इयरेण वुत्तु ।
गुणणिहियबाणि मइं जीवमाणि ।
को रमइ तरुणि कमि पँडिय हरेँणि ।
जो हरिहि हरइ सो झ त्ति मरइ ।
इय जंपमाण बेण्णि वि समाण ।
विंधंति वीर पुलइयसरीर ।
फणिवइपमाण बाणेहिं बाण ।
णहि पडिखलंति छत्तहिं पडंति ।
धय णिल्लुणंति सारहि हणंति ।
हय कप्परंति पुणु चप्परंति ।
हणु हणु भणंति अंगइं वणंति ।
सहसा मिलंति विहडेवि जंति ।
पडिवलिवि एंति थिर गिरि व थंति[9] ।
ता गयविलासु विंझाहिवासु ।

घत्ता—संधाणु ण लक्खहुं सक्कियउं चवलसरावलि देंतहु ॥
गउ णासवि तासु सुसेणु रणि णं वम्महु अरहंतहु ॥५॥

किया है, जो वाहनोंसे अप्रमाण है, दिशामें दौड़ रहा है, जिसके ध्वजछत्र छिन्न हो चुके हैं, ऐसा अपना सैन्य देखकर शत्रुयोद्धाके लिए कृतान्त तथा बलसे प्रबल शक्तिवाला विन्ध्यशक्ति तुरन्त दौड़ा। उसने शत्रु सुषेणसे कहा, "रे नीच, नारी दे दे, तुझे परिजनोंके साथ एक क्षणमें कहीं मारि न खा ले।" यह सुनकर दूसरेने कहा, "जिसकी डोरीपर बाण है, ऐसे मेरे जीवित रहते हुए कौन उस रमणीका भोग कर सकता है, जो पैरोंपर पड़ी हुई हरिणीको सिंहसे छीनता है, वह शीघ्र ही मृत्युको प्राप्त होता है।" इस प्रकार कहते हुए वे दोनों ही समान (योद्धा) पुलकित शरीर होकर एक दूसरेको बेधते हैं। नागराजके समान बाणोंसे बाण आकाशमें स्खलित होते हैं, छत्रोंसे छत्र गिर पड़ते हैं, ध्वज कट जाते हैं, सारथि मारे जाते हैं, अश्व काटे जाते हैं, पुनः आक्रमण किये जाते हैं, मारो-मारो कहते हैं, अंगोंको घायल करते हैं, सहसा मिलते हैं और विघटित होकर जाते हैं। मुड़कर आते हैं, स्थिर गिरिके समान स्थिर होते हैं। गत विलास होकर—

घत्ता—सन्धानको लक्षित करनेमें समर्थ नहीं हो सका। चंचल तीरोंकी आवली देते हुए उससे युद्धमें सुषेण उसी प्रकार नष्ट हो गया, जिस प्रकार अरहन्त देवसे कामदेव नष्ट हो जाता है ॥५॥

---

४. AP वडिय। ५. P हरिणि। ६. AP °पमाणु। ७. AP बाणु। ८. P adds after this: रोसें जलंति। ९. A छंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६

दुवई—बंधुविओयसोयमलिणाणण पइपरिहववियेइया ॥
तेण णिवेण धरिय गुणमंजरि गुणमहुयरणिसेविया ॥
इह[1] वरभरहखेत्ति विक्खायउ खत्तियधम्मधुरंधरु जायउ।
मित्तु सुसेणहु संतोसियमणु राउ महापुरि मारुयसंदणु।
णिसुणेप्पिणु णियइट्ठु पलाणउ हिमहयकमलसरु व विद्दाणउ।
घणरहणामहु वसुमइ देप्पिणु कोहु लोहु मउ मोहु मुएप्पिणु।
सुव्वयजिणहु पासि वउ लेप्पिणु मुउ कालें संणासु करेप्पिणु।
पाणयकप्पि सक्कु[3] सो हूयउ वीससमुद्दजीवि वररूवउ।
तासु जि गुरुहि पासि उवसंतें दुद्धरु संजमभारु वहंतें।
बारहविहतवतावणखीणें बद्धु णियाणु अणेण सुसेणें।
मेरुतुंगमाणुण्णइ ढालिय जेण मज्झु माणिणि उद्दालिय।
जइ तवतरुवरहलु पाएँसमि[4] तो तं पुरिमजम्मि मारेसमि।
एंव सरंतु सरंतु जि णिट्ठिउ सकलुसमइ संलेहणि संठिउ।
वरवंदारयवंदविणूयउ [6]तेत्थु जि सग्गि सो वि संभूयउ।

घत्ता—रमणीयहि मंदरमेहलहि णीलिरुम्मिगिरिकंदरि ॥
गयणयलि सयंभूरमणजलि ते रमंति सरिसरवरि ॥६॥

६

बन्धु-वियोगके शोकसे मलिनमुखी और पतिके पराभवसे कम्पित तथा गुणरूपी मधुकरोंसे सेवित गुणमंजरीको उस विन्ध्यशक्ति राजाने पकड़ लिया। इस श्रेष्ठ भरत क्षेत्रमें क्षात्रधर्ममें धुरन्धर और विख्यात, सन्तोषित मन, सुषेणका मित्र, महापुरीका राजा मारुतस्यन्दन था। वह अपने मित्रका पलायन सुनकर हिमसे आहत कमल सरोवरके समान खिन्न हो गया। धनरथ नामक अपने पुत्रको धरती देकर क्रोध, लोभ, मद, मोहको छोड़कर, सुव्रत जिनके पास व्रत ग्रहण कर, समय आनेपर संन्यासके साथ मरकर, वह प्राणत स्वर्गमें इन्द्र हुआ। सुन्दर रूपवाला बीस सागर पर्यन्त जीनेवाला। उसीके गुरुके पास उपशान्तभाव धारण करते हुए, कठोर संयमभावका आचरण करते हुए बारह प्रकारके तप-तापसे अत्यन्त क्षीण इस सुषेणने यह निदान बाँधा कि "जिसने मेरी सुमेरुपर्वतके समान ऊँचे मानवाली उन्नतिका पतन किया और पत्नीका अपहरण किया, यदि मैं तपरूपी वृक्षका फल पाऊँ, तो मैं अगले जन्ममें उसको मारूँगा।" यह स्मरण करते-करते वह निष्ठामें लग गया। सकलुषमति वह संलेखनामें स्थित हो गया। श्रेष्ठ देवोंके समूहके द्वारा संस्तुत वह भी उसी स्वर्गमें उत्पन्न हुआ।

घत्ता—रमणीय मन्दराचलकी मेखला और नीलरुक्मी पर्वतकी कन्दरा, आकाशतल, स्वयम्भूरमण समुद्रके जल और सरित सरोवरमें वे दोनों क्रीड़ा करने लगे ॥६॥

---

६. १. AP इय। २. AP पाणय°। ३. AP सग्गि। ४. AP पावेसमि। ५. A पुरिसु। ६. AP तेत्थु वि सो सग्गि संभूयउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

दुवई—बिण्णि वि सह वसंति विहरंति वि विलुलियकुसुमसेहरा ॥
बिण्णि वि परममित्त ते सुरवर सुररमणीमणोहरा ॥
एत्तहि चिरु संसारु[1] भमेप्पिणु　　विंझसत्ति जिणलिंगु लएप्पिणु ।
तेरहविहु चारित्तु चरेप्पिणु　　णिरसणविहिमग्गेण मरेप्पिणु ।
अच्छरकरयललालियचामरु　　जायउ दिव्वदेहु कप्पामरु ।
देवहं ताहं बिहिं मि दिवि जइयहुं　　संखसमाउसु संठिउ तइयहुं ।
जंबुदीवि छुहपंकियगोउरु[2]　　भरहि भोयवड्ढणु णामें पुरु ।
तहिं सिरिमाणउ राणउ सिरिहरु　　सिरिमइदेविसिहिणसंगयकरु ।
विंझपुराहिउ सग्गहु आयउ　　एयहं बिहिं[3] मि पुत्तु संजायउ ।
जयसिरिसीमंतिणिभत्तारउ　　जससससंककिरणावलितारउ ।
कोक्किउ सो णियताएं तारउ　　वसिकयसव्वदेसकंतारउ ।
तारयताराणाहें घित्तइं　　असिकरेण रिउतिमिरइं जित्तइं ।
घत्ता—मंडलियहं मयमाहप्पियहं सिरि पाडिवि समसुत्ती[4] ॥
तिहिं खंडहिं मंडिय मेइणिय चप्पिवि दासि व भुत्ती ॥७॥

८

दुवई—अप्पडिहयपयावकंपावियसयलदिसाविहायए ॥
सपवणतरणिवरुणवइसवणभयंकरि तम्मि जायए ॥
तावेत्तहि बहुसोक्खपवट्टणि　　इह भारहि दारावइपट्टणि ।

७

जिनका कुसुम-शेखर (कामदेव) आन्दोलित है ऐसे वे दोनों साथ रहते हैं। वे दोनों ही परममित्र सुरस्त्रियोंके लिए सुन्दर हैं। यहाँ विन्ध्यशक्ति भी बहुत समय तक संसारमें भ्रमण कर और जिनदीक्षा धारण कर, तेरह प्रकारके चारित्र को पाल कर, अनशन विधिसे मरकर जिसपर अप्सराओंके हाथोंसे चमर ढोरे जा रहे हैं ऐसे दिव्य शरीरवाला कल्पामर हुआ। जब वे दोनों देव वहाँ थे, तभी समान संख्याकी आयुवाला वह वहाँ रहा। जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रमें चूनेसे पुता है गोपुर जिसका ऐसा भोगवर्द्धन नामका नगर था। उसमें लक्ष्मीको माननेवाला श्रीधर नामका राणा था जिसके हाथ अपनी श्रीमती नामकी देवीके स्तनोंपर रहते थे। विन्ध्यशक्ति राजा स्वर्गसे च्युत हो इन दोनोंका पुत्र हो गया। जयश्री सीमन्तिनीके स्वामी यशरूपी चन्द्रमाकी किरणावलीसे स्वच्छ उसे पिताने तारक कहकर पुकारा। तारकरूपी चन्द्रमाके असिरूपी हाथसे आहत शत्रुरूपी अन्धकार जीत लिया गया।

घत्ता—मद और माहात्म्यसे युक्त माण्डलीक राजाओंके सिरपर वज्र गिराकर तीन खण्डोंसे अलंकृत धरतीको चाँपकर वह दासीकी तरह उसका भोग करने लगा ॥७॥

८

अपने अप्रतिहत प्रतापसे समस्त दिशा-विभागोंको कँपानेवाले तथा पवन सहित सूर्य, वरुण और वैश्रवणके समान भयंकर उसके उत्पन्न हो चुकनेपर, यहाँ भारतमें अनेक सुखोंका प्रवर्तन

---

७. १. AP संसारे। २. AP छुहपंकय। ३. AP बिहं मि। ४. A सवसुत्ती।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

पढमजिणेसरवंसविहूसणु खलखत्तियबलदप्पविणासणु।
रिउछवग्गसिप्पीरहुयासणु बंभणराहिउ[1] बंभपयासणु।
मंदगमण वीणारववाणी तासु सुहद्द सुहद्दगिसेणी।
सिविणइ ताइ[2] दिट्ठु संपयहरु[3] दससययरु अवरु वि सियदिणयरु।
आसि वाउरहु जो सो आयइ पाणइंदुसुउ जणियउ मायइ।
अण्णु[4] सुसेणु सूणु सग्गचुउ बीयउ[5] उववादेविहि दढभुउ।
अचल दुविट्ठु णाम ते सुंदर णं केलास णीलमणिमहिहर।
धवलउ एक्कु एक्कु अलिकालउ एक्कु सुसीलु एक्कु दुल्लीलउ[6]।
गरुउ एक्कु एक्कु सिरिमाणणु एक्कु सुभीमु एक्कु सोमाणणु।
एक्कु चंदु णं एक्कु दिवायरु हलहरु एक्कु एक्कु दामोयरु।
घत्ता—ते बेण्णि वि भायर भुवणरवि जोइवि रोसविमीसिउ॥
महिणाहहु जाइवि तारयहु तहु चरेहिं आहासिउं॥८॥

९

दुवई—णं सियकसणपक्ख हलिसिरिधव[1] बेण्णि वि धवलसामला॥
दारावइणरिंदवरतणुरुह गिरिवर[2]धरणभुयबला॥
वइवसभउंहाभंगुरभावइं दोहिं मि सिद्धइं दिव्वइं चावइं।
दोहिं मि गयउ रयणविप्फुरियउ विज्जादेविउ पेसणयरियउ।

करनेवाली द्वारावती नगरीमें, प्रथम जिनेश्वर आदिनाथके वंशका भूषण, दुष्ट क्षत्रियोंके बलदर्पका नाश करनेवाला, छह प्रकार शत्रुरूपी तिनकोंके लिए अग्नि, ब्रह्मको प्रकाशित करनेवाला ब्रह्म नामका राजा था। उसकी मंदगामिनी, वीणाके शब्दके समान बोलनेवाली, कल्याणोंकी नसैनी सुभद्रा नामकी देवी थी। स्वप्नमें उसने सम्पत्तिको धारण करनेवाला सूर्य और चन्द्रमा देखा। उसका जो वायुरथ प्राणत इन्द्र था उसे इस माँने पुत्रके रूपमें जन्म दिया। सुषेण भी स्वर्गसे च्युत होकर, उपमा (उषा) देवीसे दूसरा दृढ़भुज पुत्र हुआ। अचल और द्विपृष्ठ नामक वे दोनों सुन्दर ऐसे जान पड़ते थे मानो कैलास और नीलमणि पहाड़ हों। एक गोरा था और एक भ्रमरकी तरह काला था। एक सुशील था और एक खोटी लीलावाला था। एक भारी था और एक लक्ष्मीको माननेवाला था। एक भीम था और एक सुन्दर मुखवाला था। एक चन्द्रमा था और एक दिवाकर था। एक बलभद्र था और एक दामोदर था।

घत्ता—विश्वरवि और क्रोधसे मिश्रित उन दोनों भाइयोंको देखकर चरोंने जाकर उस महीनाथ तारकसे कहा—॥८॥

९

"बलभद्र और नारायण दोनों मानो श्वेत और कृष्णपक्ष तथा धवल और श्याम हैं। द्वारावती-नरेन्द्रके वे श्रेष्ठपुत्र गिरिवरको धारण करनेमें समर्थ बाहुबलवाले हैं। उन दोनोंको

८. १. P बंभु। २. AP दिट्ठु ताइ। ३. AP संपययरु। ४. A सुसेणसूणु। ५. AP बीयउ वायादेविहि। ६. K दुस्सीलउ but correctrs it to दुल्लीलउ।

९. १. P रिरिहर। २. °वरधण°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लंगलमुसलसंखकर दुद्धर ते भिडंति जहिं केसरिकंधर ।
तहिं थरहरइ मरइ रिउ ण सरइ करु असिवरहु कया वि ण पसरइ ।
अण्णु वि अत्थि वइरिजूरावणु गंधहत्थि णावइ अइरावणु ।
ताहं लील दीसइ विवरेरी णउ गणंति ते आण तुहारी ।
भग्गा सइं सुहडत्तणवाएं तं आयण्णिवि जंपिउ राएं ।
संगरु करिवि हूँरमि करिरयणइं गलियंसुयइं सुहद्दहि णयणइं ।
लुहउ बंभु हयपुत्तविओएं डज्झउ सोसिउ दूसहसोएं ।
मइं विरुद्धि जगि को वि ण जीवइ जँउ वि मरणु समरंगणि पावइ ।

घत्ता—महुं कमकमलाइं ण संभरइ जो रायत्तणु मग्गइ ॥
सो ससयेण परियणपरियरिउ जमपुरपंथें लग्गइ ॥९॥

१०

दुवई—इय गज्जंतु राउ णिजेमंतिहिं बोल्लिउ हो ण जुज्जए ॥
किं कलहेण तांव पडिवक्खहं महिवइ दूउ दिज्जए ॥
सो गंधपीलु सुरदंतिसीलु ।
सिद्धाइं जाइं रयणाइं ताइं ।
सो दिव्वु संखु तं धणु असंखु ।
जइ तुज्झु देंति पेसणु करंति ।
तो ते जियंति णं तो मरंति ।

यमकी भौंहोंके भंगुरभाववाले दिव्य धनुष सिद्ध हैं। दोनोंके पास रत्नोंसे स्फुरित गदा है और आज्ञा माननेवाली देवियाँ हैं। दोनोंके हाथमें हल-मूसल और शंख हैं, दोनों कठोर हैं। सिंहके समान कन्धेवाले वे दोनों जहाँ लड़ते हैं वहाँ शत्रु थर्रा जाता है, मर जाता है, सामना नहीं कर पाता। असिवरपर उनका हाथ कभी नहीं जाता। एक और उनके पास शत्रुओंको सतानेवाला गन्धहस्ती है, जो मानो ऐरावत है। उनकी लीला तुम्हारे विरुद्ध दिखाई देती है, वे तुम्हारी आज्ञाकी परवाह नहीं करते। अपने सुभटत्वकी हवासे वे स्वयं भग्न हैं।" यह सुनकर राजाने कहा, "मैं युद्ध करके गजरत्नोंका हरण करूँगा।" सुभद्राके गलिताश्रु नेत्रोंको ब्रह्मा पोंछे, मृतपुत्रके वियोगसे वह जले, और असह्य शोकसे शोषित हो। मेरे विरुद्ध होनेपर संसारमें कोई जीवित नहीं रहता, यम भी युद्धमें मुझसे मृत्युको प्राप्त होता है।

घत्ता—जो मेरे चरणकमलोंकी याद नहीं करता और राजत्व चाहता है वह स्वजनों सहित परिजनोंसे घिरा हुआ यमपुरके रास्ते लगता है ॥९॥

१०

इस प्रकार गरजते हुए राजासे मन्त्रियोंने कहा—"यह युक्त नहीं है; कलहसे क्या? शत्रुओंके पास दूतको भेज दीजिए। ऐरावतके शीलवाला वह गन्धहस्ति, और जितने रत्नसिद्ध हुए हैं वे, वह दिव्य शंख, वह असंख्य धन, यदि वे तुम्हें देते हैं और आज्ञा मानते हैं, तभी वे जीवित रहते

३. A हरेवि; P हरेमि। ४. P जमु। ५. A सो सयणसपरियण°; P सो सयणपरियण°।
१०. १. AP णियमंतिहि। २. AP गंधिपीलु। ३. AP °लीलु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[4]तो दिण्णु दूउ कल्लाणभूउ।
दारावईसु भीमारिभीसु।
जाएवि तेण मउलियकरेण।
कुलकुमुयचंदु दिट्ठउ उविंदु।
दूएण उत्तु सुणु[5] मंतसुत्तु।
भुयबलविसालु कुलसामिसालु।
संभरहि देउ रायाहिराउ।
गिरितुंगमाणु ताराहिहाणु।
भडवरवरिट्ठ तुहुं भो दुविट्ठ।
मेल्लिवि[6] दुआलि मा करहि रालि[7]।
तुहुंईपिएण सहु सामिएण।
खयरिंद जासु वच्चंति पासु।
इच्छंति सेव असितसिय देव।
तहु कवणु मल्लु मुइ रोससल्लु।
ढोइवि करिंदु पवणहि णरिंदु।

घत्ता—ता भणिउं दुविट्ठें रुट्ठएण सामि महारउ हलहरु ॥
अण्णहु सामण्णहु माणुसहु हउं होसमि किं किंकरु ॥१०॥

११

दुवई—जो मइं भणइ भिच्च[1] परु दुम्मइ दूयय तासु सीसयं ॥
तोडमि रणि तड त्ति मणिकुंडलमंडियगंडएसयं ॥
कायकंतिओहामियससहरु तहिं अवसरि भासइ जिं०वाहरु।

हैं नहीं तो मारे जाते हैं।" तब उसने कल्याणभूति नामक दूतको भीम शत्रुओंके लिए भयंकर द्वारावतीके राजाके पास भेजा। उसने जाकर और अपने दोनों हाथ जोड़कर अपने कुलरूपी कुमुदके चन्द्र उपेन्द्रसे भेंट की। दूत बोला, "आप मन्त्रसूत्र सुनिए। हे देव, बाहुबलसे विशाल कुलके स्वामीश्रेष्ठ गिरिके समान उन्नतवान तारक नामके राजाधिराजकी आप याद करें और योद्धावरोंमें श्रेष्ठ हे द्विपृष्ठ, तुम भी खोटी चाल छोड़कर पृथ्वीके प्रिय स्वामीके साथ झगड़ा मत करो। विद्याधरराजा, जिसका सामीप्य चाहते हैं, जिसकी तलवारसे त्रस्त देव उसकी सेवाकी इच्छा करते हैं, उसका प्रतिमल्ल कौन है? तुम क्रोधकी शल्य छोड़ दो। करिवर ले जाकर तुम राजाको प्रणाम करो।"

घत्ता—तब द्विपृष्ठने क्रुद्ध होते हुए कहा, "मेरे स्वामी बलभद्र हैं। क्या मैं किसी दूसरे सामान्य मनुष्यका अनुचर हो सकता हूँ? ॥१०॥

११

जो मुझे भृत्य कहता है, हे दूत, वह मेरा दुश्मन है; मैं युद्धमें मणिकुण्डलोंसे मण्डितगण्ड देशवाले उसके सिरको तड़ करके तोड़ डालूँगा।" अपनी शरीरकान्तिसे चन्द्रमाको पराजित करनेवाले

---

४. A ता। ५. A सुणि। ६. AP मेल्लहि। ७ P राडि।

११. १. AP भिच्चु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहरणरुक्खराइसंछण्णउं णिवकामिणिवडजक्खिरवण्णउं ।
लंबललंतचिंधकोमलदलु चलचामरहंसावलिअविरलु ।
करिगिरिवरु लोहियजलणिज्झरु उग्गयचित्तछेत्तइंदीवरु ।
सुहडंतावलिविसहरचुंभलु गयणविलग्गकोंतवंसत्थलु ।
दूय राउ जइ मग्गइ कुंजरु तो पइसउ सो समरवणंतरु ।
रुट्ठदुविट्ठसीहसरणक्खहं तहिं णउ चुक्कइ लुंकविवक्खहं ।
इहु वारणु तहु जीवियवारणु भयगारउ वच्छयलवियारणु ।

घत्ता—तं णिसुणिवि दूएं जंपियउं महुं एहउ मणि भावइ ॥
हरि तारयसरहहु कमि पडिउ अचल चलंतु ण जीवइ ॥११॥

१२

दुवई—जासु तसंति एंति पणवंति थुणंति वि देवदाणवा ॥
तासु ण गहणु किं पि तुम्हारिस विबल वरायमाणवा ॥
तो कण्हें जंपिउं पेसुण्णउं जाहि दूय मा जंपहि सुण्णउं ।
तं णिसुणिवि दूयउ णिग्गउ गउ कहइ ससामिहिं णउ अप्पइ गउ ।
दुट्ठु दुविट्ठु धिट्ठु रणु कंखइ तंबच्छिहिं करवालु णिरिक्खइ ।
सेव ण करइ ण सो पइं मण्णइ णियसंमुहुं सिरिछिंछैइ सण्णइ ।
भणइ ण भयवसेण वसि होसमि चाउ दंति करि वरु ढोएसमि ।

बलभद्र उस अवसरपर कहते हैं, "हे दूत, जो प्रहरणरूपी वृक्षराजियोंसे आच्छन्न है, नृपकामिनियों-रूपी वट-यक्षिणियोंसे सुन्दर है, जिसपर लम्बे और हिलते हुए ध्वजरूपी कोमल पत्ते हैं, जिसपर अविरल चलचामरोंकी हंसावली रहती है, जिसमें रक्तरूपी जलका निर्झर है, उठे हुए विचित्र छत्ररूपी कमल हैं; जो सुभटोंकी आँतोंरूपी हंसावलीसे बीभत्स है, जिसका सुन्दर वंशस्थल आकाशको छूता है, ऐसे हाथीको यदि हे दूत, वह राजा माँगता है तो उसे तुम समररूपी वनान्तरमें भेज दो। क्रुद्ध द्विपृष्ठरूपी सिंहके तीररूपी शत्रुओंको लुप्त करनेवाले बाणोंसे वह नहीं चूकेगा। यह वारण (गज) उसके जीवनका वारण करनेवाला है, भयकारक और वक्षस्थलका निवारण करनेवाला है।"

घत्ता—यह सुनकर दूतने कहा, "मेरे मनमें यह आता है कि नारायण, तारकरूपी श्वापदके चरणोंमें पड़ा हुआ, हे अचल, चलता हुआ जीवित नहीं रहेगा" ॥११॥

१२

देव और दानव जिससे त्रस्त होते हैं, आते हैं, प्रणाम करते हैं और स्तुति करते हैं, उसको कोई भी नहीं पकड़ सकता। तुम जैसे बलहीन बेचारे मानवोंकी क्या ?" यह सुनकर नारायणने कठोर बात कही कि "हे दूत, व्यर्थ बकवास मत करो, तुम जाओ।" यह सुनकर दूत निकलकर चला गया। उसने अपने स्वामीसे कहा कि वह अपना हाथी नहीं देता। दुष्ट और ढीठ द्विपृष्ठ युद्धकी आकांक्षा रखता है, अपनी लाल-लाल आँखोंसे तलवारको देखता है, न वह तुम्हारी सेवा करता है और न तुम्हें मानता है; अपने सामने श्रीरूपी पुंश्चलीका सम्मान करता है, मदके वशमें

---

२. चित्तछत्तु । ३. AP लुक्कु । ४. P जंपिउं ।
१२. १. A तो । २. AP दूउ गउ णिग्गउ । ३. A छेंछइ ।

दंतमुसलजुयलें पेल्लावमि   एम हत्थि हउं तहु रणि दावमि ।
रायत्तणु महुं पुणु संकरिसणु   अह व करइ पियबंभु[४] सुदरिसणु ।
अण्णु राउ जइ होइ कुसुंभइ   अण्णु राउ संझापारंभइ ।
अण्णु राउ अहरहु तंबोलें   अण्णु राउ छिंदमि[५] करवालें ।
हउं किं घेप्पमि अण्णें राएं   ता पडिजंपिउं तारयराएं[६] ।

घत्ता—हरिकरिभडलोहियकयछडइ दूय ण वड्डिम[७] बोल्लमि ॥
रणरंगि दुविट्ठहु अट्ठियइं पिट्ठु करेप्पिणु घल्लमि ॥१२॥

१३

दुवई—एम भणंतु चलिउ हयगयरहणरभरणमिय[१]धरयलो ॥
हयसंगामतूरबहिरियदिसबहलुच्छलियकलयलो ॥

हरिखुरखयधूलीरयछाइउ   दसदिसु खंधावारु ण माइउ ।
थिउ दारावइणियडउ जावहिं   णिग्गय सज्जणहरिबल तावहिं ।
सकरि सगरुडचिंध रहसुब्भड   सहरि गिरिंदधीर सुमहाभड[२] ।
गयमलधवलकमलकज्जलणिह   कायतेयणिज्जियखयसिहिसिह ।
खयरणरामरसेवियपयजुय   दंतिदंतणिम्मूलणखमभुय ।
रयणमालकोत्थुहजलयरधर   सीरसरासणसुरपहरणकर ।

होकर यह नहीं कहता कि मैं वशमें हो जाऊँगा, हाथमें धनुष लेकर हाथीके ऊपर पहुँचूँगा। दाँतके समान मूसलयुगलसे उसे प्रेरित करूँगा, इस प्रकार मैं उसे युद्धमें हाथी दिखाऊँगा। राज्यत्व तो केवल मेरा बलभद्र करेगा, अथवा फिर सुदर्शनीय प्रिय ब्रह्म करेगा। यदि कुसुम्भ वृक्षमें दूसरा राग (रंग) होता है, यदि सन्ध्याके प्रारम्भमें दूसरा राग होता है, यदि पान खानेसे अधरोंपर दूसरा राग होता है; इसी प्रकार यदि मेरा अन्य राग (राजा) होता है तो मैं तलवारसे उसे काट दूँगा। क्या मैं दूसरे राजाके द्वारा ग्रहण किया जाऊँगा ?" तब तारक राजा कहता है—

घत्ता—"हे दूत, मैं बड़ी बात तो नहीं करता, परन्तु जिसमें घोड़ा, हाथी और योद्धाओंके द्वारा लाल-लाल छटा की गयी है, ऐसे रणरंगमें मैं द्विपृष्ठकी हड्डियोंको पीसकर फेंक दूँगा" ॥१२॥

१३

इस प्रकार कहता हुआ जिसने घोड़ा, हाथी, रथ और मनुष्योंके भारसे धरतीको नमित कर दिया है, ऐसा वह चला। युद्धके नगाड़ोंके आहत होनेपर दिशाओंको अत्यन्त बहिरा बनाता हुआ कलकल शब्द होने लगा। घोड़ोंके खुरोंसे आहत धूलरजसे आच्छादित सैन्य दसों दिशाओंमें कहीं भी नहीं समा सका। जबतक वह द्वारावतीके निकट ठहरता है, तबतक सज्जन नारायणका सैन्य बाहर निकला, हाथियों, गरुड़ध्वज चिह्नोंके साथ और हर्षसे उद्भट; और अश्वोंके साथ। गिरीन्द्रके समान धीर मलरहित धवल कमल और काजलके समान, शरीरकी कान्तिसे प्रलयाग्निकी ज्वालाओंको जीतनेवाले, जिनके पैर विद्याधर, नर और देवों द्वारा पूजित हैं, जो महागजोंके दाँतोंको उखाड़नेमें सक्षम बाहुओंवाले हैं; जो रत्नमाला, कौस्तुभ और शंखको धारण करनेवाले

४. AP पिउबंभु। ५. AP छिण्णमि। ६. A तारायराएं। ७. AP वड्डिमु।
१३. १. AP °णविय°। २. A समहाभड।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भइसुभद्दउवायाणंदण[3] दुद्दमदाणववंदविमद्दण ।
जिह जिह तारएण अवलोइय तिह तिह मइ विंभयवहि ढोइय ।
बलपब्भारें मेइणि हल्लइ विसहरु तसइ रसइ विसु मेल्लइ ।

घत्ता—करिकारणि तारयमाहवहं सेण्णइं संमुहुं ढुक्कइं ॥
लग्गइं पक्कलपाइक्कमुहमुक्कहक्कलल्लक्कइं ॥१३॥

१४

दुवई—दसदिसिवहपयासिजसलुद्धइं मुहमरुभमियभेमरयं ॥
धणुगुणमुक्कमंदसरजालइं कयसुरणियरडमेरयं[2] ॥
जायघायलोहियभरियंगइं आइरंगरंगंततुरंगइं ।
भडताडियपाडियमायंगइं झसतिसूलकरवालपसंगइं ।
वज्जमुट्ठिफोडियसीसक्कइं णीसारियमत्थयमत्थिक्कइं ।
दंडदलियवियलियपासुलियइं चलियइं वल्ललियइं पडिवलियइं ।
पित्तसेंभसोणियजलण्हायइं असिगिहसणसिहिसिहवसु आयइं ।
मोडियकडियल[3]कोप्परठाणइं विहडियदेहसंधिसंठाणइं ।
संघारियसामंतसहासइं मंयमंडलियमउडभाभासइं ।
परिपोसियसिववायसगिद्धइं सिरिमहिरामारमणपलुद्धइं ।

हैं; जो हल, धनुष तथा देव-अस्त्र जिनके हाथमें हैं, दुर्दम दानवसमूहका दमन करनेवाले हैं, ऐसे कल्याणी सुभद्रा और उषाके पुत्रोंको जैसे-जैसे तारकने देखा, वैसे-वैसे उसकी मति आश्चर्यपथमें चकरा गयी। सेनाके भारसे धरती हिल उठती है, विषधर त्रस्त होता है, चिल्लाता है और विष छोड़ता है।

घत्ता—हाथीके लिए तारक और माधवकी सेनाएँ आमने-सामने पहुँचीं। प्रगल्भ भृत्योंके मुखसे बोले गये हकारने और ललकारनेके शब्दोंसे युक्त वे दोनों लड़ने लगीं ॥१३॥

१४

जो दसों दिशापथोंमें प्रकाशित यशकी लोभी हैं, जो मुखकी हवासे भ्रमरोंको उड़ा रही हैं, जो धनुष-डोरीसे मन्द सरजाल छोड़ रही हैं; जिन्होंने देवसमूहके साथ युद्ध किया है, जिनके अंग घावसे उत्पन्न रक्तसे भरे हुए हैं, जिसमें अश्व युद्धके उत्साहमें चल रहे हैं, योद्धाओंसे ताड़ित गज गिर रहे हैं, जो झस-त्रिशूल और करवालसे युक्त हैं, जिनमें वज्रमुट्ठियोंसे शिरस्त्राण तोड़े जा रहे हैं, जहाँ मस्तकोंसे मस्तक निकाले जा रहे हैं, जहाँ दण्डसे दलित और विगलित पसुरियाँ चलती हैं, गीली होती हैं और मुड़ती हैं। पित्त, श्लेष्मा और शोणित-जलमें स्नात वे तलवारोंकी रगड़से उत्पन्न अग्निकी ज्वालाके वशीभूत हो गयी हैं। जिनके कटितल और हाथका मध्यभाग-स्थान मुड़ गया है, देहके सन्धिस्थान विघटित हो गये हैं, सामन्तोंके सहायक मारे जा चुके हैं, जो मरे हुए माण्डलीक राजाओंके मुकुटोंकी कान्तिसे भास्वर हैं, जिन्होंने शृंगाल-वायस और गिद्धोंको सन्तुष्ट किया है, जो लक्ष्मी, मही और स्त्रीके रमणके लोभी हैं।

३. AP °सुभद्दावाया° । ४. AP °विंद° । ५. AP रसइ तसइ ।
१४. १. AP °भमरइं । २. AP °डमरइं । ३. A °कडयल° । ४. A मुय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—अरिरुहिरतोयतण्हायतणु पक्खिहिँ पक्खझडप्पियउं ॥
उम्मुच्छिउ को वि महासुहडु लग्गउ वइरिहिँ विप्पियउं ॥१४॥

१५

दुवई—परिफुडकरडगलियमयधारालालसभसलसद्दए ॥
को वि करिंददंतजुयसयणइ सुत्तउ मरणणिद्दए ॥

लद्धवीरभंडणमहामिसे　　घारचंचुभक्खियणरामिसे ।
उच्छलंतवीसढवसारसे　　कालदूयरक्खसमहाणसे ।
पहरभग्गगयभीरुमाणुसे　　हम्ममाणभडभमियतामसे ।
पुव्ववइरसंबंधदारुणे　　वणगलंतवणरुहवणारुणे ।
खयररायसंघायमारणे　　तारएण हरि कोक्किओ रणे ।
कंतदंतगिरिभित्तिदारुणो　　जेम बप्प दिण्णो ण वारणो ।
बंधुकण्णकडुयं सुविप्पियं　　जेम दूयपुरओ पयंपियं ।
अज्जु बाल किं णेवँ जुज्झसे　　संतमंतिमंतं ण बुज्झसे ।
धरणिणाहजयलच्छिधारिणा　　भणिउ महिवई दाणवारिणा ।
दीण पंचभूयहं ण लज्जसे　　मम पुरो तुमं काइं गज्जसे ।
रायवायगव्वेण वग्गसे　　परहणाइं किं मुक्ख मग्गसे ।
इय भणेवि मुक्का तिणा सरा　　पुंखलग्गहुंकारवरसरा ।

घत्ता—शत्रुके रुधिररूपी जलसे आर्द्रशरीर, पक्षियोंके द्वारा पंखोंसे आक्रान्त तथा शत्रुओंसे बुरी तरह लड़ता हुआ कोई सुभट मूर्च्छित हो गया ॥१४॥

१५

स्पष्ट रूपसे गण्डस्थलसे झरती हुई मदधाराकी लालसासे जिसमें भ्रमरशब्द हो रहा है, ऐसे नींदमें कोई सुभट हाथीदाँतोंकी शय्यापर सो गया। जिसमें वीरोंके युद्धका बहाना ढूँढ़ लिया गया है, जिसमें गीधोंकी चोंचोंसे मनुष्योंका मांस खाया जा रहा है, जिसमें वीसढ ? वसा और रस उछल रहा है, जो कालदूतरूपी महाराक्षसका रसोईघर है, जिसमें प्रहारसे भग्न होकर भीरु मनुष्य चले गये हैं, आक्रमण करते हुए योद्धा रौद्रभावसे घूम रहे हैं, जो पूर्व वैरके सम्बन्धसे अत्यन्त दारुण है; जिसमें घावोंसे रक्तरूपी जल बह रहा है, जिसमें विद्याधर राजाओंके समूहकी हिंसा की जा रही है, ऐसे युद्धमें तारकने हरि (द्विपृष्ठ) को ललकारा, "हे सुभट, अपने कान्तदाँतोंसे पहाड़की दीवारके भेदनमें दारुण गज तुमने जिस प्रकार नहीं दिया, तथा जिस प्रकार तुमने भाईके कानोंको कटु लगनेवाले अप्रिय कथन दूतके सामने किया; हे मूर्ख, उसी प्रकार तुम क्या नहीं युद्ध करते, शान्तिके मन्त्रिमन्त्रको क्यों नहीं समझते ?" तब पृथ्वीनाथकी विजयलक्ष्मीको धारण करनेवाले दानवोंके शत्रु (द्विपृष्ठ) ने राजासे कहा, "हे दीन, पाँच महाभूतोंसे शर्म नहीं आती, तुम मेरे सामने क्यों गरजते हो। राज्यरूपी बातके गर्वसे तुम घमण्ड करते हो। रे मूर्ख, तुम पराया धन क्यों माँगते हो ?" यह कहकर उसने पुंखके साथ जिसमें हुंकारका स्वरवर लगा हुआ है ऐसे

१५. १. AP पडिकरि°; K पडिकरि but corrects it to परिफुड° । २. AP महारसे । ३. AP °रसावसे । ४. AP °माणसे । ५. A °दारणो । ६. A जेण । ७. AP तेम । ८. AP पहरणाइं; K पहरणाइं but corrects it to परहणाइं ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

एंते तारएणं वियारिया वइरिवाण बाणेहिं वारिया ।
णाइं णाय णाएहिं कयफणा लोहवंत[10] पिसुण व्व णिग्गुणा ।
घत्ता—पडिकण्हें कण्हहु पट्ठविउ अलयहउ उद्दामउ ।।
अइदीहरु कालउ पंचफडु भीयरु मारणकामउ ।।१५।।

१६

दुवई—सो गरुडेण हणेवि खणि घेल्लिउ पडिबलजलणवारिणा ।।
मायातिमिरपडलु तो पेसिउ तहु हुंकरिवि वइरिणा ।।
तं पि विवक्खलक्खखयकालें हरिणा णासिउं रवियरजालें ।
इय दिव्वाउहपंतिउ छिण्णउ बहुयउ लक्खकोडिसयगण्णउ ।
पुणु बहुरूविणिविज्जपहावें जुज्झिउ पडिहरि कुडिलसहावें ।
सा वि पणट्ठ जणद्दणपुण्णें सिरिमइतणएं अंजणवण्णें ।
लेवि चक्कु करि भामिवि वुत्तउं देहि हत्थि मा मरहि णिरुत्तउं ।
ता पडिलविय उवायापुत्तें किं ससहरु जिप्पइ णक्खत्तें ।
जइ ण धरमि रहंगु सइं हत्थें तो पइसमि हुयवहु परमत्थें ।
मरु को मरइ संढ तुह घाएं मुक्कु चक्कु तो तारयराएं ।

तीर छोड़े। आते हुए उन तीरोंको तारकने विदारित कर दिया। शत्रुके बाणोंका उसने बाणोंसे निवारण कर दिया, जैसे नागोंके द्वारा फन उठाये हुए नाग हों। वे तीर लोहवन्त (लोहेसे बने, लोभयुक्त) और दुष्टकी तरह, निर्गुण (डोरी रहित—गुणरहित थे)।

घत्ता—प्रतिकृष्ण तारकने द्विपृष्ठके ऊपर उद्दाम अत्यन्त दीर्घ काला पाँच फनका भयंकर मारनेकी इच्छावाला जलसर्प फेंका ।।१५।।

१६

उसे द्विपृष्ठने शत्रुबलकी ज्वालाके लिए जलके समान गरुड़ बाणसे एक क्षणमें नष्ट कर दिया। तब दुश्मनने हुंकार करते हुए उसके ऊपर मायावी (कृत्रिम) अन्धकारका पटल फेंका। उसे भी विपक्षके लक्ष्यके लिए क्षयकालके समान सूर्यकिरण जालसे नारायणने नष्ट कर दिया। इस प्रकार सैकड़ों लाख करोड़से गुणित बहुत-सी दिव्य आयुधपंक्तियाँ छिन्न हो गयीं। फिर प्रतिनारायण बहुरूपिणी विद्याके प्रभावसे और अपने कुटिल स्वभावसे लड़ता रहा। वह विद्या भी जनार्दनके पुण्य और श्यामवर्ण श्रीमतीके पुत्र द्वारा नष्ट कर दी गयी। तब उसने अपना चक्र हाथमें लेकर और घुमाकर कहा कि "हाथी दे दो, निश्चय ही तुम मत मरो।" इसपर द्विपृष्ठने प्रत्युत्तर दिया, "क्या नक्षत्रके द्वारा चन्द्रमा जीता जा सकता है; यदि मैं तुम्हारे चक्रको अपने हाथमें ग्रहण नहीं करता, तो मैं वास्तवमें अग्निमें प्रवेश करूँगा। मूर्ख नपुंसक, तुम्हारे आघातसे कौन मरता है।" तब तारक राजाने चक्र छोड़ा।

---

९. A एंति । १०. P लोहवंता ।

१६. १. A सो घल्लिउ । २. A तहि पेसिउ । ३. A हुववहि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—रक्खंतहं णियवइणिब्भयहं पहरणेहिं पहरंतहं ॥
तं आयउ सयलहं पत्थिवहं झ त्ति धरंत धरंतहं ॥१६॥

१७

दुवई—देवासुरणरिंदफणिखेयरकिंणरदप्पहारयं ॥
भुयणुज्जोयकारि माणिक्कमऊहविराइयारयं ॥

भाणुबिंबु णं किरणहिं जडियउं[1]   वासुएवकरणियडइ पडियउं ।
धरिवि तेण करि जंपिउं एहउं   एवहिं तुज्झु सरणु कहिं केहउं ।
करहि केर बलएवहु केरी   अणुहुंजहि संपय गरुयारी ।
ता पडिसत्तु चवइ विहसेप्पिणु   मंडाखंड भिक्खं[2] पावेप्पिणु ।
जिह णच्चइ संतोसें देसिउ   तिह तुहुं एण रहंगें हरिसिउ[3] ।
रासहु होइवि हत्थिहि लग्गइ   वायसु होइवि गरुडहु विग्गहि[4] ।
पत्थरु होइवि मेरु व मण्णहि   अप्पउ वारु वारु किं वण्णहि ।
रे गोवालबाल णउ लज्जहि   महुं अग्गइ भडवाएं भज्जहि ।

घत्ता—लइ रक्खउ तेरउ सीरहरु एवहिं मारमि लग्गउ ॥
किं चुक्कइ काणणि केसरिहि दिट्ठिपंथि णिब्बंडिउ[5] मउ[6] ॥१७॥

घत्ता—अपने स्वामीको निर्भय बनानेवाले रक्षकोंके अस्त्रोंसे प्रहार करते हुए और समस्त राजाओंके पकड़ते हुए भी वह चक्र आया ॥१६॥

१७

देव, असुर, नरेन्द्र, नाग, विद्याधर और किन्नरोंका दर्प हरण करनेवाला, विश्वको आलोकित करनेवाला, माणिक्य किरणोंसे शोभित आराओंवाला, किरणोंसे विजड़ित सूर्यबिम्बके समान वह चक्र वासुदेवके हाथके निकट आकर ठहर गया। उसने उसे हाथमें लेकर यह कहा कि "बताओ इस समय तुम्हारी शरण कौन है? तुम बलभद्रकी आज्ञा मानो और अपनी भारी सम्पत्तिका भोग करो।" तब प्रतिशत्रु तारक हँसकर कहता है, "अपूपखण्ड भीखमें पाकर देशी आदमी जैसे सन्तोषसे नाच उठता है, वैसे ही तुम इस चक्रसे प्रसन्न हो रहे हो, गधे होकर तुम सिंहसे लड़ते हो। कौआ होकर गरुड़से युद्ध करते हो, पत्थर होकर अपनेको मेरु समझते हो, अपने आपको रोको-रोको, स्वयंका क्या वर्णन करते हो? रे-रे ग्वाल बच्चे, शर्म नहीं आती। मेरे आगे सुभट हवा भग्न करना चाहता है।

घत्ता—ले तू अपने बलभद्रको बचा, इस समय लड़ते हुए उसे मारता हूँ। क्या जंगलमें सिंहके दृष्टिपथमें आया हुआ मृग बच सकता है?" ॥१७॥

---

१७. १. A जलियउ। २. A भिक्खु। ३. P रहसिउ। ४. AP वग्गहि। ५. AP णिवडिउ। ६. AP गउ।

१८

दुवई—एव भणेवि धीरु विसविसमविसण्णवणिसियअसिवरं ॥
अरिकरिकुंभकं[1]लियधवलुज्जलमोत्तियपंतिदंतुरं ॥

थक्कउ करयलेण उग्गामिवि ता सिरिरमणें णहयलि भामिवि ।
मुक्कु चक्कु ढुक्कउ रिउकंठहु णावइ[2] अत्थसिहरिउवकंठहु ।
जाइवि दिणयरबिंबु णिमण्णउं[3] लोहियलित्तउं लोहियवण्णउं ।
ससयणसज्जणदिण्णसुहेल्लिहि फुल्लु णाइं हरिसाहसवेल्लिहि ।
हसिय[4]पुसिय[5]परणरवइरायहु पडिउ सीसु तारयणरणाहहु ।
खग्गें वसिकिउ लोउ असेसु वि मागहु वरतणु जित्तु पहासु वि ।
जिह महि सिद्धी अद्धु तिविट्ठहु तिह हूई णिवै[6]रिद्धि दुविट्ठहु ।
उ[7]त्तंगत्तें धणु सो सत्तरि जीविउं वरिसलक्ख बाहत्तरि ।
पावें पाविउ सत्तमु महियलु तहिं अवसरि णिय[8]मणि चिंतइ बलु ।
जहिं पडिकेसउ तहिं गउ केसव कालें णडियउ णिवडइ वासवु ।
एम भणेप्पिणु पासि तिगुत्तहु व्रउं[9] लइयउं समत्थु[10] समचित्तहु ।
[11]बहुरिसिवंदें समउ समाहिउ केवलणाणसिरीइ [12]पसाहिउ ।

१८

इस प्रकार कहकर वह धीर विषके समान विषम जलवाले, समुद्रके समान पैनी और शत्रुगजोंसे स्खलित धवल उज्ज्वल मोतियोंकी पंक्तिकी दाँतोंवाली तलवार हाथमें उठाकर स्थित हो गया। इतनेमें नारायणने आकाशमें घुमाकर चक्र छोड़ा। वह शत्रुकण्ठपर इस प्रकार पहुँचा, मानो जैसे अस्ताचलके निकट जाकर दिनकरका बिम्ब निमग्न हो गया हो, लोहित (लालिमा और रक्त) से लिप्त लाल-लाल रंगका। जैसे वह स्वकीय जनरूपी भ्रमरोंको सुख देनेवाली नारायणके साहसरूपी लताका फूल हो, जिसने शत्रुराजाओंका उपहास और नाश किया है, ऐसे तारक राजाका सिर गिर पड़ा। नारायणने तलवारसे अशेष लोगोंको अपने वशमें कर लिया, उसने मागध, वरतणु और प्रभासको भी जीत लिया। जिस प्रकार त्रिपृष्ठके लिए आधी धरती सिद्ध हुई थी, उतनी ही नृप ऋद्धि द्विपृष्ठकी भी हुई। ऊँचाईमें वह सत्तर धनुष था और उसका जीवन बहत्तर लाख वर्षका था। पापसे उसे सातवें नरक जाना पड़ा। उस अवसर बलभद्र अपनेमें विचार करते हैं कि जहाँ नारायण गया, वहीं प्रतिनारायण गया। कालसे प्रतारित इन्द्रका भी पतन होता है। यह कहकर उसने समचित्त त्रिगुप्त मुनिके पास समर्थ व्रत ग्रहण कर लिया। बहुत-से मुनिसमूहके साथ सावधान वह केवलज्ञानरूपी लक्ष्मीसे प्रसाधित हो गया।

---

१८. १. AP °गलिय° । २. A णं रवि अत्थ° । ३. A णिवण्णउ । ४. P हसिउ पुसिय° । ५. A पुसिउ । ६. A णिव मत्ति दुविट्ठहु । ७. AP उत्तुंगत्तें । ८. AP चिंतइ णियमणि बलु । ९. AP वउ । १०. A समत्तु णियचित्तहु । ११. AP °रिसिविंदहिं । १२. P पहासिउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—गउ मोक्खहु अचलु अकंपमइ[१३] भरहणरेसरवंदिउ ॥
जोइसविमाणवासियपवर [१४]पुप्फदंतसयवंदिउ ॥१८॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे अचलदुविट्ठतारयकहंतरं णाम चउवण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५४॥

घत्ता—अकम्पित बुद्धि भरतेश्वरके द्वारा वन्दित अचल मोक्षके लिए गया, ज्योतिष विमानोंमें निवास करनेवाले प्रवर नक्षत्रोंके द्वारा वन्दनीय ॥१८॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका अचल द्विपृष्ठ तारक कथान्तर नामका चौवनवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५४॥

---

१३. A अकंपमणु । १४. A पुप्फयंत ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ५५

तवसिरिराइ[1]यहु मुणिझाइयहु सयमहमहियप[2]याव‍हु ॥
वंदिवि कमजमलु[3] णिज्जियकमलु विमलहु विमलसहावहु ॥ध्रुवकं॥

१

णरउलमहिलं   वज्जियमहिलं ।
जेण विरइयं   भोयविरइयं ।
सत्थं सारं   वयणंसारं ।
जस्स गहेउं   हिंसाहेउं ।
णट्ठसमोहं   वड्ढियमोहं ।
काउं समयं   मयमाणमयं ।
पत्ता णरयं   जे[4] त्ताणरयं ।
भुवणमहीसं   कह लहिही सं ।
पइं परिहीणं   जिण पडिही णं ।
णारयविवरे   णविए विवरे ।
णासइ गरयं   जणियंगरयं ।
ण हु उलुहंते   सरणमहं ते ।
देव पइट्ठो   तं मह[5] इट्ठो ।

सन्धि ५५

जो तपरूपी लक्ष्मीसे शोभित हैं, मुनियोंके द्वारा जिनका ध्यान किया गया है, जिनका प्रताप इन्द्रके द्वारा पूजित है, जो विमल स्वभाववाले हैं, ऐसे विमलनाथके कमलोंको पराजित करनेवाले चरणकमलोंकी मैं वन्दना करता हूँ।

१

जिन्होंने नरकुलोंको पृथ्वी प्रदान की है, जो महिलासे रहित हैं और जिन्होंने भोगसे विरहित परमार्थभूत सार्थक वचनांशवाले शास्त्रकी रचना की है। जो हिंसाके कारणभूत समता-समूहके नाशक मोहवर्धक शास्त्रको ग्रहण कर तथा मान और मद बढ़ानेवाले शास्त्रकी रचना कर उसमें अनुरक्त होते हैं, वे नरकको प्राप्त होते हैं। जो विश्व, बुद्धिविहीन है वह सुख कैसे प्राप्त कर सकता है। हे जिन, आपसे रहित यह विश्व निश्चित रूपसे नरकमें पड़ेगा, गरुड़के द्वारा कामभाव-को उत्पन्न करनेवाला विष ध्वस्त नहीं किया जा सकता। उल्लुओंके हन्ता कौओंके निकट मेरी शरण नहीं है। हे देव, मैं तुम्हारी शरणमें हूँ, वही मुझे इष्ट है। गृहेन्द्रोंको त्रस्त करनेवाला महेन्द्र

१. १. A सिरिरायहु । २. AP पहावहु; K पहावहु but corrects it to पयावहु । ३. AP °जुवलु । ४. A जे ताणरयं; P जेत्ताणरयं । ५. A महु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इय थुइवायं　　करइ सुवायं ।
तसियगहिंदो　　जस्स महिंदो ।
तं गुणविमलं　　णविउं विमलं ।
हयमोहंगं　　तस्स कहंगं ।
भणिमो सरसं　　वारियसरसं ।

घत्ता—तेरहमउ अवरु जणसंतियरु सुत्तगोंफसोमालइ ॥
अंचमि णरहियइ खयविरहियइ जिणु कव्वुप्पलमालइ ॥१॥

२

धादइसंडइ परिभमियहरि　　पुव्वामरगिरिगंभीरदरि ।
तहिं पुव्वविदेहि तरंतकरि　　सीयों णामें अत्थि सरि ।
तहि दाहिणकूलि कलंबहरि　　णवसत्तच्छयछाइयमिहिरि ।
फलरसवहरुक्खसोक्खसयरि　　रम्मयवइदेसि महाणयरि ।
पहु पउमसेणु पउमारमणु　　णवजोव्वणु रमणीमणदमणु ।
कयलीदलवीयणसीयरइ　　दिसिउग्गयसरसरसीयरइ ।
मंदाणिलचालियकुसुमरइ　　अण्णहिं दिणि वणि पीइंकरइ ।
वयणुग्गयधीरधम्मज्झुणिहि　　पायंति य सव्वगुत्तमुणिहि ।

जिन विमलनाथकी इस प्रकार शोभन स्तुति वचनोंकी रचना करता है, ऐसे गुणोंसे पवित्र उनको मैं नमन करता हूँ। तथा मोहको नष्ट करनेवाले, सरस परन्तु काम सुखसे रहित उनके कथांगका कथन करता हूँ।

घत्ता—जनशान्तिके विधाता तेरहवें जिनवर विमलनाथकी मैं कवि पुष्पदन्त मनुष्योंका हित करनेवाली सुन्दरतम उक्तियोंसे रचित, क्षयसे रहित काव्यरूपी कमलमालासे अर्चना करता हूँ ॥१॥

२

जिसमें सूर्य परिभ्रमण करता है ऐसे धातकीखण्डमें पूर्व सुमेरपर्वतकी गम्भीर घाटी है। उसके पूर्वविदेहमें, जिसमें गज तैरते हैं ऐसी सीता नाम की नदी है। उसके दक्षिण किनारेपर कदम्ब वृक्षोंको धारण करनेवाला जिसमें नव सप्तपर्णी वृक्षोंसे सूर्य आच्छादित है और जो फलरसके प्रवाहवाले वृक्षोंके कारण सुखदायक है ऐसे रम्यकवती देशमें महानगरी है। उसमें राजा पद्मसेन था। लक्ष्मीसे रमण करनेवाला वह नवयुवक और रमणियोंके मनका दमन करनेवाला था। एक दूसरे दिन, जो कदली वृक्षोंके पत्तोंके पंखोंसे शीतल है, जिसमें सरोवरोंके शीतल जलकण दिशाओंमें उड़ रहे हैं, जिसमें मन्द पवनसे कुसुमपराग आन्दोलित हैं, ऐसे पीतंकर नामके वनमें, जिनके मुखसे धीर धर्मध्वनि निकल रही है ऐसे सर्वगुप्ति नामके मुनिके चरणोंमें अपने पुत्र

६. AP °गुंफसोमालइ; T गोंफ° ।
२. १. AP अवरविदेहि । २. AP सीओया । ३. P °मिहरि । ४. A °रिसवहुभक्खसोक्खसयरि; °रसबहुरुक्खसोक्खसयरि । ५. P धम्मु झुणिसि । ६. A सव्वगुत्ति° ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

संपयपइ पउमणाहु करिवि आरंभडंभविहि परिहरिवि ।
थक्कउ रिसिदिक्खइ दिक्खियउ एयारह अंगइं सिक्खियउ ।
घत्ता—मलु उड्डावियउ समु भावियउ पंकयसेणें घणघणु ॥
पक्खि व पंजरइ दुक्कियविरइ धम्मज्झाणि धरिउँ[7] मणु ॥२॥

३

सुकिउ भववासकिलेसहरु आवज्जिवि तित्थयरत्तयरु ।
मुउ मुक्काहारु विसुद्धमइ हुउ सहसारइ सहसारवइ ।
अट्ठारहजलहिपमाउधरु[1] चउरयणिसरीरु[2] अरोयजरु ।
णवमासहिं एक्कसु सो ससइ परमाणुय[3] वर मणेण गसइ ।
णवणवसहसहिं[4] संवच्छरहं सुहुं जणइ णिएवि मुहुं अच्छरहं ।
जावंजणमहि ता णाणगइ तहु गुण किं वण्णइ खंडकइ ।
तें[5] दीहु कालु दिवि संचरिउं जइयहुं अयणंतरु ऊवरिउं ।
तइयहुं पढमिंदें लक्खियउं सहस त्ति कुबेरहु अक्खियउं ।
इह भरहखेत्ति कंपिल्लपुरि पुरुदेववंसि विम्हवियसुरि[6] ।
कयवम्मु राउ तहु घरणि जय णं विहिणा वम्महवित्ति कय ।
घत्ता—ताहं महागुणहं बेण्णिं वि जणहं होसइ भवणि भडारउ ॥
कम्ममणोरहहं अट्ठारहहं णियदोसहं[7] खयगारउ ॥३॥

पद्मनाथको सम्पत्तिके स्थानपर नियुक्त कर, आरम्भ और दम्भकी विधिको छोड़कर स्थित हो गया। मुनिदीक्षासे दीक्षित उसने ग्यारह अंगोंका अध्ययन किया।

घत्ता—पद्मसेनने मलका नाश किया, समताका सघन चिन्तन किया। पिंजड़ेमें स्थित पक्षीकी तरह पापसे विरत धर्मध्यानमें उसने मन लगाया ॥२॥

३

संसारवासके क्लेशको दूर करनेवाले पुण्य और तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध कर निराहार विशुद्धमति वह मर गया तथा सहस्रार स्वर्गमें इन्द्र हुआ। उसकी आयु अट्ठारह समुद्र प्रमाण थी। ज्वर और रोगसे रहित उसका चार हाथ शरीर था। नौ माहमें एक बार वह साँस लेता। अट्ठारह हजार वर्षमें मनसे परमाणुओंका भोजन करता, अप्सराओंका मुख देखनेसे उसे सुख उत्पन्न हो जाता। जहाँ तक अंजनाभूमि (नरकभूमि) है वहाँ तक उसके ज्ञानकी गति है। यह खण्डकवि पुष्पदन्त उसके गुणोंका क्या वर्णन करता है। वह लम्बे समय तक स्वर्गमें संचार करता रहा। जब उसके छह माह शेष बचे तब प्रथम स्वर्गके इन्द्रने जान लिया और अचानक कुबेरसे कहा, "इस भरत क्षेत्रके कापिल्य नगरमें देवोंको विस्मित करनेवाले पुरुदेव वंशमें कृतवर्मा नामका राजा है, उसकी गृहिणी जया है जो मानो विधाताने कामदेवकी वृत्ति बनायी हो।

घत्ता—महागुणवाले उन दोनोंके घरमें आदरणीय जिन उत्पन्न होंगे, कर्मोंके मनोरथों और अट्ठारह अपने दोषोंका क्षय करनेवाले ॥३॥

---

७. AP धरियउ ।

३. १. P °जलहिपरमाउ° । २. A चउरयण° । ३. A परमाणुवरसुमणेण । ४ A सहसइं । ५. A तं ।
६. AP विंभइयसुरि । ७. AP दोहं मि ।

४

जक्खाहिव तुरियउं जाहि तुहुं　　करि पुरु घरि[1] चिंतिउं[2] भोयसुहुं ।
ता पुरवरु णिहिणाहें विहिउं　　णं सग्गखंडु धरणिहि णिहिउं ।
दहिकुट्टिमयलजियसरयघणु　　गयणग्गलग्गमणिमयभवणु ।
वणरुक्खराइसुरहियपवणु　　वणरुहसं[3]ररयकलहंसयणु ।
सयणागमहरिसियपउरयणु　　रयणंसुजालजियतियसधणु ।
धणु दिज्जइ जेंहिं बहुदेसियहं　　सियरहियहं णिच्चपवासियहं ।
सियसिहरबद्धधयपाडलिउं　　पाडलपूयै[5]फलदुमललिउं ।
ललियंगपसाहियकामियणु　　कामियणपरोप्परदिण्णमणु ।
घत्ता—णरणियराउलइ तहिं राउलइ जयदेविइ सुंहसुत्तइ[6] ।।
सिविणावलि णिसिहिं उग्गयदिसिहिं दीसइ कोमलगत्तइ ।।४।।

५

करि दाणजलोल्लकवोलयलु　　ढेक्कंतुं[1] वसहु जियवसहबलु ।
पंचाणणु रुइहयहारमणि　　अरविंदणिलय माहवरमणि ।
दुइ सुमणालउ मालउ खयलि　　हिमयर अहिमयरुग्गय विउलि ।
तिमि दोण्णि[2] रमंत[3] तरंत जलि　　संणिहिय मणोरम धरणियलि ।
दो कलस ससलिलं[4] सकमल सदल　　णलिणालय मयरालय विमल ।

४

हे यक्षराज, तुम शीघ्र जाओ और धरतीपर नगर और चिन्तित सुख उत्पन्न करो।" तब कुबेरनाथने पुरवरकी रचना की मानो स्वर्गखण्डको ही धरतीपर रख दिया गया हो। जिसमें स्फटिक मणियोंके तल द्वारा शरद् मेघ जीत लिया गया था, जिसके मणिमय भवन गगनतलको छूते थे, जहाँ वनवृक्षराजिसे पवन सुरभित था, जिसके कमलसरोवरोंमें कलहंससमूह रत हैं, जहाँ स्वजनोंके आगमसे प्रचुर जन प्रसन्न होते हैं, जहाँ रत्नोंके किरणजालसे देवोंका धन जीत लिया गया है, जहाँ बहुत-से देशी लोगों तथा धन रहित नित्य प्रवासियोंको धन दिया जाता है, जहाँ श्रीशिखरों पर रंगबिरंगी पताकाएँ हैं, जो पाटल पूगफल (सुपाड़ी) वृक्षोंसे सुन्दर है, जहाँ कामिनीजन सुन्दर अंगोंसे प्रसाधित हैं, जहाँ कामी लोग एक दूसरे पर मन देते हैं—

घत्ता—मनुष्य समूहसे संकुल उस राजकुलमें सुखसे सोयी हुई कोमल देहवाली जयदेवी प्रभातके समय रात्रिमें स्वप्न देखती है ।।४।।

५

मदजलसे आर्द्र कपोलतलवाला हाथी, बैलोंका बल जीतनेवाला गरजता हुआ हाथी, अपनी कान्तिसे हारमणिको तिरस्कृत करनेवाला सिंह, कमलघरवाली लक्ष्मी, आकाशतलमें दो पुष्पमालाएँ, आकाशमें उगे हुए चन्द्रमा और सूर्य, जलमें तैरती और क्रीड़ा करती हुई दो मछलियाँ, दल, कमल और जलसे सहित धरतीपर रखे हुए सुन्दर दो कलश, स्वच्छ सरोवर और समुद्र,

---

४. १. AP घर। २. A चिंतियभोयसुहं। ३. A °सिरिरयवलहंसगणु। ४. AP तहिं। ५. A पाडलपूईफल। ६. AP सुहं सुत्तए।

५. १. A ढिकंतु। २. A दोण्ण। ३. AP तरंत रमंत। ४. P कलस सलिल।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

आसंदी हरिणरायधरिय अमरिंदवसहि पहपरियरिय ।
णाइणिगिज्जंतगेयमुहलु णाइंदहु केरउं सउहयलु ।
मणिरासि सिहाहिं फुरंतु सिहि सिविणोलि णिहालिय दिण्णदिहि ।

घत्ता—सा सीमंतिणिय पीणत्थणिय दंसणु दइयहु भासइ ॥
देउ[5] णराहिवइ पडिवुद्धमइ तं फलु ताहि समासइ ॥५॥

६

पयपुंडरीयजुयणे[1]वियसुरु अरहंतु अणंतु तिलोयगुरु ।
मयरद्धयधयणिल्लूरणउ परमेसरि होसइ तुह तणउ ।
इंदाएसें णिम्मच्छरउ एत्थंतरि आयउ अच्छरउ ।
जयदेविहि देहु पसंसियउ गब्भासयदोसु विहंसियउ ।
छम्मासु हेमधाराधरहिं वरिसिउ जक्खहिं णं जलहरहिं ।
जेट्ठहुं मासहु तमदसमिदिणि उत्तरभद्दवयइ हिमकिरणि ।
रयणेहिं सुरेहिं संथुयचरिउ करिरूवें गब्भि समोयरिउ ।
णिहिकलसस विक्कउं[2] पयडियउं णवमास पुणु वि वसु णिवडियउं ।
जइयहुं सायरसम तीस गय मिच्छत्तें दूसिय सयल पय ।
पल्लंतपणट्ठइ धम्मि[3] वरि णिव्वुइ बारहमइ तित्थयरि ।
कंचणचूलालिहियंबुहरि तइयहुं कयवम्महु तणइ घरि ।

सिंहके द्वारा धारण की गयी बैठक (सिंहासन), प्रभासे आलोकित देवविमान, नागिनोके द्वारा गाये गये गीतसे मुखर नागका भवनतल, रत्नराशि और ज्वालाओंसे जलती हुई आग। इस प्रकार भाग्यशाली स्वप्नावली देखी ।

घत्ता—पीनस्तनोंवाली वह सीमन्तिनी अपने पतिसे कहती है। प्रतिबुद्धमति नरराज देव उसका फल उसे बताते हैं ॥५॥

६

जिनके चरणकमलोंमें देव नमन करते हैं ऐसा अरहन्त अनन्त त्रिलोकगुरु कामदेवका नाश करनेवाला पुत्र, हे परमेश्वरी, तुम्हारे उत्पन्न होगा। इसी बीच इन्द्रके आदेशसे मत्सरसे रहित अप्सराएँ वहाँ आयीं। उन्होंने जयादेवीकी प्रशंसा की और गर्भाशयके दोषको दूर किया। जलधरों-की भाँति यक्षोंने छह माह तक स्वर्णमेघोंकी वर्षा की। ज्येष्ठ माहके शुक्ल पक्षको दसमीके दिन, उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें चन्द्रमाके रहनेपर, रत्नों और देवों द्वारा संस्तुत चरित्र, देव हाथीके रूपमें गर्भमें अवतरित हुए। (कुबेरने) निधिकलशोंमें अपना विक्रम प्रकट किया और नौ माह तक और धनकी वर्षा हुई। जब बारहवें तीर्थंकरके निर्वाण कर लेनेपर तीस सागर-प्रमाण समय बीत गया तब समस्त प्रजा मिथ्यात्वसे दूषित हो गयी। एक पल्य पर्यन्त धर्मके नष्ट होनेपर कृतवर्माके स्वर्णशिखरोंसे मेघोंको छूनेवाले घरमें तब—

५. P ताउ ।
६. १. AP °णमिय° । २. A °कलसविमुक्कउ । ३. A धम्मवरि ।

घत्ता—माहचउँत्थिहि वँड्ढियससिहि सिवजोयइ जिणु जायउ ॥
संदणहयगयहिँ लंबियधयहिँ चउदिसु सुरयणु आइउ ॥६॥

७

मायासिसु मायहि ढोइयउ　　सक्कें जिणवयणु पलोइयउ ।
कर मउलिवि पणविवि परमपरु　　पुणु भत्तिइ लेविणु तित्थयरु ।
करि पेल्लिउ चल्लिउ गयणयलि　　पडुपडहभेरिढक्कामुहलि ।
लंघेविणु रविससिमंडलइं　　णं णहयललच्छिहि कुंडलइं ।
गउ तेत्तहिँ जेत्तहिँ पंडुसिल　　णिरु णिम्मल णावइ सिद्धइल ।
मंदरगिरिसिरि विरइउं ण्हवणु　　तहु देवँहिँ पुज्जिय दिव्वतणु ।
पंडुरि ससहरकररासिहरि　　आणेप्पिणु णिहियउ जणँणिघरि ।
सिसु संसिवि जय चिरु सुकयतव　　गय णच्चिवि णायहु णायभव ।
कालेण पवड्ढिउ जिर्णु तरुणु　　गरुयारउ हूयउ सट्ठिधणु ।
सहसट्ठुत्तरमियलक्खणइं　　तहु दिट्ठइं बहुयइं वेंजणइं ।
वण्णेण वि सहइ सुवण्णणिहु　　हो किं मइं वण्णिज्जइ अरिहु ।
परमेसहु माणियबालवय　　वरिसहं पण्णारह लक्ख गय ।
पुणु सयमहेण पणविवि ण्हविउ　　रायत्तणि तिजगराउ थविउ ।

घत्ता—माघशुक्ला चतुर्थीके दिन शिवयोगमें जिनका जन्म हुआ। अपने लम्बे ध्वजों तथा रथों और गजोंके द्वारा चारों दिशाओंसे देव आये ॥६॥

७

इन्द्रने मायावी बालक माताको दे दिया और जिनवरका मुख देखा। हाथ जोड़कर, परमश्रेष्ठको प्रणाम कर फिर भक्तिसे तीर्थंकरको लेकर, वह हाथीको प्रेरित कर, पटु-पटह-भेरी और ढक्काओंसे मुखर आकाशमें चला। आकाशरूपी लक्ष्मीके कुण्डलोंके समान सूर्यचन्द्रको लांघकर वह वहाँ गया जहाँ पाण्डुक शिला थी, अत्यन्त निर्मल जैसे सिद्धशिला हो। मन्दराचल पर्वतके शिखरपर अभिषेक किया गया। देवोंने उनके दिव्य तनकी पूजा की। चन्द्रमाकी किरण-राशिका हरण करनेवाले माताके धवल घरमें लाकर उनको स्थापित कर दिया। "हे सुकृततप, चिरकाल तक तुम्हारी जय हो" इस प्रकार शिशुकी प्रशंसा कर देवता लोग अपने-अपने स्वर्गोंमें चले गये। समयके साथ जिन भगवान् बढ़ने लगे। तरुण जिन साठ धनुष प्रमाण हो गये। एक हजार आठ लक्षण और बहुत-से व्यंजन (सूक्ष्म चिह्न) उनके शरीरपर दिखाई दिये। वर्णमें वह स्वर्णके समान शोभित थे। अरे मैं अरहन्तका क्या वर्णन करूँ। परमेश्वरके द्वारा भुक्त बालकपन-की आयु पन्द्रह लाख वर्ष बीत गयी। पुनः इन्द्रने प्रणाम कर उनका अभिषेक किया और उन्हें

---

४. A °चउद्दसिहिं; P चउत्थिसिइ। ५. AP वड्ढिय°।
७. १. P भत्ति। २. देव६। ३. AP जणणिहरि; K जणणिकरे but corrects it to जणणिघरि। ४. A जिण तरुणु। ५. A अट्ठोत्तरसयमिय°; P सट्ठुत्तरसयमिय°। ६. A तहु णवसयसंखइं; P तहु तवसयसंखहं।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

वरिसहं वसिहूई दिण्णकरा तिउणियदहलक्खइं भुत्त धरा।
घत्ता—तुहिणविणिग्गमणि महुआगमणि तीरोसँरियजलोलउ।
रविकिरणहिं हणिवि हिमकण धुणिवि गिंभें जित्तु सियालउ ॥७॥

८

अवलोइवि सो दलवट्टियउ कालेण कालु पल्लट्टियउ।
पहु चिंतइ अणुदिणु परिणवइ[1] जणु सो वि ण जुंजइ धम्ममइ[2]।
चिरु चित्तु दुचित्तहु णीणियउं दिवि दिव्वभोयसुहुं माणियउं।
पुणु जीविउ जम्मणु आणियउं तिहिं णाणहिं तिहुवणु जाणियउं।
इंदियवसेण ण विवेइयउं हा मइं वि ण अप्पउं चेइयउं।
धण[3]पुत्तकलत्तहिं मोहियउ मयरद्धयबाणहिं जोहियउ।
अच्छइ ण णियच्छमि किं पि किहँ[4] अण्णमणु अण्णु अण्णाणु जिहँ[5]।
ता संबोहिउ लोयंतियहिं अहिसित्तउ सुरवरपंतियहिं।
किउ देवयत्तसिवियारुहणु गउ झ त्ति सहेउयणाम वणु।
घत्ता—माहचउत्थियहि ससहरसियहि छोवीसमि[6] णक्खत्तइ ॥
सहुं सहसें णिवहं इच्छियसिवहं थिउ जिणु जइँणचरित्तइ[7] ॥८॥

राज्यगद्दी (राज्यत्व) पर स्थापित किया। तीनगुना दस—अर्थात् तीस लाख वर्ष उन्होंने धरती-का भोग किया।

घत्ता—हेमन्तके निर्गमन और वसन्तके आगमनपर ग्रीष्म-ऋतुमें सूर्यकिरणोंसे हिमकणोंको नष्ट कर जिसके तीरसे जल समूह हट गया है ऐसे शीतकालको जीत लिया ॥७॥

८

उस (शीतकाल) को ध्वस्त देखकर प्रभु विचार करते हैं कि "कालके द्वारा काल बदल दिया गया। मनुष्य प्रतिदिन बदलता रहता है फिर भी वह धर्ममतिसे युक्त नहीं होता। पहले मैंने चित्तको दुराचरणसे निकाला था, तथा स्वर्गमें दिव्यभोगोंका उपभोग किया। फिर जीवन जन्मको प्राप्त हुआ। ज्ञानसे त्रिभुवनको जान लिया। लेकिन इन्द्रियोंके वशीभूत होकर मैंने विवेकसे काम नहीं लिया। हा, मैंने स्वयंको नहीं चेताया। मैं धन, पुत्र और कलत्रमें मोहित हूँ, कामदेवके बाणोंके द्वारा देखा गया हूँ। किसी भी वस्तुको मैं किसी प्रकार विद्यमान (स्थिर) नहीं देखता हूँ। अज्ञानीके समान भ्रान्त चित्त मैं अन्य हूँ।" तब लौकान्तिक देवोंने सम्बोधित किया और देवोंकी पंक्तियोंने अभिषेक किया। उन्होंने देवदत्ता नामक शिविकापर आरोहण किया और वह शीघ्र ही सहेतुक नामक उद्यानमें पहुँचे।

घत्ता—माघशुक्ला चतुर्थीके दिन छब्बीसवें उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें शिवकी इच्छा रखनेवाले एक हजार राजाओंके साथ वह जिन जैनचरित्रसे स्थित हो गये ॥८॥

७. A तीरोसरिउ।

८. १. AP परिणमइ। २. AP धम्मे मइ। ३. AP धणचित्त°। ४. A किहा। ५. A जिहा। ६. A बावीसमि and gloss श्रवणनक्षत्रे। ७. A जइचारित्तइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

तहिं दिणि जयवइ उववासियउ मणपज्जवणाणें भूसियउ ।
बीयइ दिणि आयउ णंदउरु णंदेण णमंसिउ पुरिसपुरु ।
झाणाणलहुयवम्मीसरहु आहारु दिण्णु परमेसरहु ।
मणिपुंजें ढंकिउ तासु गिहु तहिं चोज्जु वियंभिउं पंचविहु ।
छउमत्थे मेइणियलु भमिवि संवच्छर तेण तिण्णि गमिवि ।
दिक्खावणि जंबूरुक्खयलि माहम्मि मासि ससियरधवलि ।
छट्ठइ दिणि दिवसभाइ अवरि छव्वीसमि जायइ उडुपवरि ।
देवें केवलु उप्पाइयउं तियसउलु ण कत्थइ माइयउं ।
गयणग्गलग्गमाणिक्कसिहु संपत्तउ दहविहु अट्ठविहु ।
छाइयणहमंडलु पंचविहु सोलहविहु तेत्थु वि तं तिविहु ।

घत्ता—थुणइ सुराहिवइ कुसुमइं घिवइ अरुहहु उप्परि पायहं ॥
जिण तुहुं गयमलिणि हियवयणलिणि वसहि रिसिहिं हयरायहं ॥९॥

१०

बत्तीसहं इंदहं तुहुं हियइ तुहुं संसेविउ सासयसियइ ।
तुहुं चंदु ण चंदु विमलवहणु तुहुं सूरु ण सूरु वि णिड्डहणु ।
तुहुं सरहि ण सरहि वि खारजडु तुहुं हरु णउ हरु वि पमत्तु णडु ।

९

उसी दिन जगत्पतिने उपवास किया और मनःपर्ययज्ञानसे विभूषित हो गये। दूसरे दिन वह नन्दपुर गाँव आये। उन श्रेष्ठ पुरुषको नन्दने नमस्कार किया। ध्यानकी अग्निमें कामदेवको भस्म करनेवाले परमेश्वरको उन्होंने आहार दिया। रत्नसमूहसे उसका घर आच्छादित हो गया। वहाँ पाँच आश्चर्य प्रकट हुए। छद्मस्थ रूपमें धरतीमें विहार कर उन्होंने तीन साल बिता दिये। माघ शुक्ला षष्ठीके दिन, दीक्षावनमें हो जम्बूवृक्षके नीचे दिनके अन्तिम भागमें, छब्बीसवें उत्तराभाद्र नक्षत्रमें देवको केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। देवकुल कहीं भी नहीं समा सका। जिनके माणिक्योंकी शिखाएँ आकाशतलको छू रही हैं, ऐसे आठ प्रकार और दस प्रकारके देव आये। और आकाशमण्डलको आच्छादित करनेवाले पाँच, सोलह और तीन प्रकारके देव वहाँ आये।

घत्ता—देवेन्द्र स्तुति करता है, और अरहन्तके चरणोंके ऊपर पुष्प वर्षा करता है कि "हे जिन, तुम मुनियोंके द्वारा रागको नष्ट करनेवालोंके मलसे रहित हृदयरूपी कमलमें बसते हो" ॥९॥

१०

तुम बत्तीसों इन्द्रोंके हृदयमें हो, तुम शाश्वत श्रीके द्वारा सेवित हो, तुम चन्द्र हो, चन्द्रमा विमलवाहनवाला नहीं है। तुम सूर्य हो, जलनेवाला सूर्य सूर्य नहीं। तुम समुद्र हो, खारे जलवाला

---

९. १. A जइवइ । २. AP णंदिउरु । ३. AP पुरिसवरु । ४. A छम्मत्थें । ५. A बावीसमि; P छावीसमि । ६. AP छाइउ णहमंडलु । ७. A गयरायहं ।

१०. १. A पमत्तगडु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पइं एहउ तेहउ जं कहमि　　तं हउं बुहलोइ हासु लहमि ।
जहिं अच्छइ तिजगु परिट्ठियउं　　जें रुद्धउं णिच्चलु संठियउं ।
संचलइ जेणं[2] जें परिणवइ　　जें णिच्चमेव चेयण वहइ ।
जं वण्णगंधरसफासधरु　　जं अवरु वि काइं वि चरु अचरु ।
पइं दिट्ठइ दीसइ तं सयलु　　तुट्टइ दढमोहलोहणियलु ।
पइं दिट्ठें मुच्चइ चउगइहि　　पहु होइ जीउ पंचमगइहि ।
तुह सुहि संपावइ परमु सुहुं　　वइरियँउ[3] णिरंतरु तिव्वु दुहुं ।
तुहुं पुणु दोहं मि मज्झत्थमणु　　इयँ[4] चोज्जु सहियवइ धरइ जणु ।
घत्ता—चेईहरवणहिं बहुतोरणहिं धयपंतिहिं पिहियँक्कें[5] ॥
परिहागोउरहिं सालहिं सरहिं समवसरणु किउ सक्कें[6] ॥१०॥

११

तहिं जाया णीसरंतझुणिहिं　　पण्णास पंच गणहरमुणिहिं ।
गज्जंतमेहगंभीरसर　　एयारहसयमिय पुव्वधर ।
छत्तीससहस पुणु पंचसय　　तीसुत्तर सिक्खुयँ[1] मुणियणय ।
चत्तारि सहस अडसयवरहं　　अणगारहं सव्वावहिहरहं ।
पणसहसइं अवरु वि पंचसय　　घोसंति साहु संजय विमय ।
केवलिहिं रिसिहिं मणपज्जयहं　　णवसहसइं वेउव्वणवयहं ।

समुद्र समुद्र नहीं है। तुम शिव हो, नृत्य करनेवाला और प्रमत्त शिव शिव नहीं है। उनको जो तुम जैसा मैं कहता हूँ तो मैं पण्डित समाजमें हास्यका पात्र बनता हूँ। जहाँ त्रिलोक प्रतिष्ठित है। जिसके द्वारा वह रुद्ध और निश्चल रूपसे संस्थित है, जिससे चलता है और परिणमन करता है, जिससे नित्यरूपसे वह चेतनाको धारण करता है। जो वर्ण-गन्ध-स्पर्श और रूपको धारण करता है; और भी जो दूसरा चर-अचर है, तुम्हें देखनेपर वह समस्त दिखाई देता है, और दृढ़ मोह-शृंखलाएँ टूट जाती हैं। तुम्हें देखनेसे जीव चार गतियोंसे छूट जाता है, हे स्वामी, मुझे पाँचवीं गति प्राप्त हो। तुम्हारा सुधि परम सुख प्राप्त करता है, और तुम्हारा शत्रु निरन्तर तीव्रतम दुःख प्राप्त करता है। लेकिन तुम दोनोंके प्रति मध्यस्थ मन रहते हो, लोग अपने हृदयमें इस आश्चर्यको धारण करते हैं।

घत्ता—सूर्यको ढकनेवाले इन्द्रने चैत्यगृहवनों, बहुतोरणों, ध्वजपंक्तियों, परिखा और गोपुरों, शालाओं और सरोवरोंके द्वारा समवसरणकी रचना की ॥१०॥

११

वहाँ उनके जिनसे ध्वनि खिर रही है, ऐसे पचपन गणधर मुनि हुए। गरजते हुए मेघके समान गम्भीर ध्वनिवाले ग्यारह सौ पूर्वधारी, छत्तीस हजार पाँच सौ तीस शिक्षक मुनि। चार हजार आठ सौ पूर्ण अवधिज्ञानवाले मुनि, पाँच हजार पाँच सौ साधु संयत विमद केवलज्ञानी कहे जाते हैं। पाँच हजार पाँच सौ मनःपर्ययज्ञानी थे। नौ हजार विक्रिया-ऋद्धि धारण करनेवाले

---

२. A जेण जं परि° । ३. A वइरिउ ण णिर° । ४. P इह । ५. A पिहियक्कहिं । ६. A सक्किहिं ।
११. १. A सिक्खिय ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सहसाइं तिण्णि छसासयइं   वाइहिं विद्धंसियपरममइं ।
संजइयहुं लक्खु तिसहससहिउं   सावयहं लक्खजुयलउं कहिउं ।
परियाणियजिणगुणपरिणइहिं   चत्तारि लक्ख तहु सावयहिं ।
तियसेहिं असंखहिं वंदियउ   संखेज्जतिरियअहिणंदियउ ।
तिवरिसरहियइं णडियच्छरहं   पण्णारह लक्खइं संवच्छरहं ।
महि हिंडिवि लोयतिमिरु लुहिवि   संमेयहु सिहरु समारुहिवि ।

घत्ता—आसाढट्ठमिहि कसणहि तमिहि परमप्पउ णिक्कलु हुउं[2] ॥
भरहमहीवइहिं फणिसुरवइहिं विमलु[3] पुप्फदंतहिं थुउं[4] ॥११

इति महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे विमलणाहणिव्वाणगमणं
णाम पंच[5]वण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५५॥

थे। तीन हजार छह सौ परमतका विध्वंस करनेवाले वादी मुनि थे। एक लाख तीन हजार संयमको धारण करनेवाली आर्यिकाएँ थीं। दो लाख श्रावक कहे गये हैं। जिनवरके गुणोंकी परिणतिको जाननेवाली चार लाख श्राविकाएँ थीं। असंख्यात देवोंके द्वारा वह वन्दनीय थे। और संख्यात तिर्यंचसमूह द्वारा वह अभिनन्दनीय थे। तीन वर्ष रहित, णडियच्छर (जिनमें अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं, या जो अप्सराओंको वंचित करनेवाली हैं ?) पन्द्रह लाख वर्ष धरतीपर परिभ्रमण कर लोकान्धकार नष्ट कर सम्मेद शिखरपर आरूढ़ होकर—

घत्ता—आषाढ़ माहके शुक्लपक्षकी अष्टमीके दिन, (उत्तराषाढ़ नक्षत्र में) भरतकी भूमिके राजाओं, नागराजाओं, देवेन्द्रों और नक्षत्रों द्वारा स्तुत वह विमल निष्कल परमात्मा हो गये ॥११॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त, महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका विमलनाथ निर्वाण
गमन नामका पचपनवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५५॥

---

२. AP हुवउ । ३. विमल । ४. AP थुयउ । ५. A पंचा° ।

३६

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

संधि ८६

सुरवंदहु विमलजिणिंदहु तित्थि भीमु पालियछलु ॥
रणि[1] अब्भिडियउ अमरिसि चडिउ महुहि सयंभु महाबलु ॥ध्रुवकं॥

१

दुवई—अवरविदेहि जंबुदीवासिइ सिरिउरि पिसुणदूसणो ॥
महिवइ णंदिमित्तु मित्तो इव णियकुलकमलभूसणो ॥

सो चिंतइ णियमणि णरवरिंदु — खइ सव्वु लोउ णं पुण्णिमिंदु[2] ।
धणु सुरधणु जिह तिह थिरु ण ठाइ — पणइणि पुणु अण्णहु पासि जाइ ।
भायर णियभायहु अवयरंति — कुलभवणि[3] कुलहु कलयलु करंति ।
किंकर चडुयम्मु रयंति तेव — सव्वस्सु पयच्छइ पुरिसु जेव ।
पोसंति णियंति सिसुं[4] ण्हवंति — मायाउ थण्णु आसोइ[5] देंति ।
भइणिउ बंधव बंधव भणंति — ता जाम उयरपूरणु लहंति ।
सिरिलंपडु धरदव्वावहरणु — तणुरुहु वि पडिच्छइ तायमरणु ।
जगि कासु वि को वि ण एत्थु अत्थि — मयगंधवसिं भमरेण हत्थि ।
गाइ वि सेविज्जइ वच्छएण — रंभासहं दुद्धहु कएण ।

सन्धि ८६

देवोंके द्वारा वन्द्य विमलनाथके तीर्थकालमें संग्राम प्रिय भीम और महाबली स्वयंभू अमर्षसे भरकर युद्धमें मधुसे भिड़ गये।

१

जम्बूद्वीपमें स्थित अपर विदेहके श्रीपुर नगरमें दुष्टोंके लिए दूषण नन्दीमित्र नामका राजा था जो मित्रके समान और अपने कुलरूपी कमलका भूषण था। वह श्रेष्ठ राजा अपने मनमें सोचता है कि विनाशकालमें समस्तलोक मानो पूर्णचन्द्रके समान है। जिस प्रकार इन्द्रधनुष, उसी प्रकार धन स्थिर नहीं रहता, कामिनी भी दूसरेके पास चली जाती है, भाई अपने भाईका अनादर करते हैं और कुलभवनमें अपने ही कुलसे कलह करते हैं। अनुचर इस प्रकार चापलूसी करते हैं कि जिससे पुरुष (मालिक) सब कुछ उन्हें दे डालता है। माताएँ आशासे बच्चेको देखती हैं, स्नान कराती हैं, पोषण करती हैं और अपना दूध पिलाती हैं। बहनें तभी तक भाई-भाई करती हैं कि जबतक उनकी उदरपूर्ति होती रहती है। लक्ष्मीका लम्पट पुत्र भी घरके धनका अपहरण और पिताके मरणकी इच्छा करता है। इस संसारमें किसीका कोई नहीं है। जैसे मदगन्धके वशसे भ्रमरके द्वारा हाथीकी और रँभाते हुए बछड़ेके द्वारा दूधके लिए गायकी सेवा

---

१. १. A omits रणि। २. A पुण्णमिंदु। ३. A कुलु भवणु कलहकलयलु; P कुलभवणि कुलहकलयलु।
४. A सुसंण्हवंति। ५. P आसाउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जणु इच्छइ सयलु सकज्जकरणु जीवहु पुणु जिणवरधम्मु सरणु ।

घत्ता—ईय बोल्लिवि रँज्जु पमेल्लिवि सोसिर्यभीमभवण्णउ ॥
जियकामहु सुव्वयणामहु पासि तेण लइयउं वउ ॥१॥

२

दुवई—जायउ सो मरेवि संणासें वम्महजलणपावसो ॥
पंचाणुत्तरम्मि तेत्तीसमहोवहिदीहराउसो ॥

भासइ गोत्तमु णियगोत्तसूरु पंचिंदियेरिउसंगामसूरु ।
सुणि सेणिय[3] कहमि मणोहिरामु पइ पइ वसंति पुरणयरगामु ।
गोजूहचिण्णसुहेरियतणालु इह भरहि देसु णामें कुणालु ।
तहिं सावत्थी पुरि वसणहेउ णिवसइ णरिंदु णामें सुकेउ ।
अवरु वि बलि तेत्थु जि अक्खकील पारद्ध बिहिं मि जूयारलील ।
चरँगमणछेज्जकड्ढणपवंचु वरघायदायघरहरणसंचु ।
जाणिवि र[9]वंति किर बे वि जाम एक्कें उड्डिउं[10] णियरज्जु ताम ।
हारंतउ सपुरु सकोसु देसु थिउ एक्कल्लउ काणीणवेसु ।

की जाती है इसी प्रकार सब लोग अपने कामकी इच्छा करते हैं। केवल जिनवरधर्म ही जीवकी शरण है।

घत्ता—यह कहकर और राज्य छोड़कर उसने कामको जीतनेवाले सुव्रत नामक मुनिके पास भीषण संसाररूपी समुद्रको जीतनेवाला व्रत ग्रहण कर लिया ॥१॥

२

कामरूपी ज्वालाके लिए पावसके समान वह संन्यासपूर्वक मरकर पाँचवें अनुत्तर विमानमें तैंतीस सागर प्रमाण लम्बी आयुवाला देव हुआ। गौतम मुनि कहते हैं—अपने गोत्रके लिए सूर्य, पाँच इन्द्रियोंरूपी शत्रुके लिए शूर हे श्रेणिक, मैं सुन्दर कथा कहता हूँ, सुनो। इस भरत देशमें कुणाल नामका देश है, जहाँ पग-पगपर पुर, नगर और ग्राम हैं। जहाँ गायोंका झुण्ड सुरभित तृणोंका आस्वाद लेता है। वहाँ श्रावस्ती पुरी है। उसमें जुआ आदि खेलनेवाला सुकेतु नामका राजा रहता था। एक और जुआ खेलनेवाला बलि नामका मनुष्य था। दोनोंने पासे खेलना शुरू किया। चर (दूसरेकी गोट मारना), गमन (अपनी गोटकी रक्षा करते हुए, दूसरेके घरसे अपने घरमें ले आना), छेज्ज (छेद्य) दूसरेकी गोट मारना, कड्ढन प्रवंच (दूसरोंसे बचाकर अपनी गोट ले आना), उत्तम घात और दाय ? देना, घरहरण (दो-तीन गोटोंसे दूसरेके घरको स्वीकार कर लेना, संच (दूसरेकी गोटके प्रवेशको रोकना) आदिको जानकर वे लोग तबतक खेले कि जबतक एकने अपना राज्य खो दिया। सुकेतु अपना पुर, कोश और देश हारकर अकेला दीनरूपमें रह गया।

६. P इउ । ७. AP मेइणि मेल्लिवि । ८. A सोसीय° ।

२. १. AP °पाउसो । २. AP जो इंदिय° । ३. A सेणि कहमि । ४. A णयर° । ५. A °सुरहिय° । ६. A भरहदेसि । ७. P वरगमण° । ८. A वरदायघाय°; P परदायघाय° । ९. P रमंति । १०. A केउं उड्डिउं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—णउ हय गय णउ संदण धय एक्कु जि वसणें णडियउ ॥
वारंतहं गुरुहुं महंतहं रायविलासहु पडियउ ॥२॥

३

दुवई—जे ण करंति देवगुरुभासिउं दुद्दमगव्वपरवसा ॥
ते णिवडंति एंव णिवरा भुवि दुज्जसमसिमलीमसा ॥

मायाविणीइ विब्भमहरीइ सेज्जातंबोलसुहंकरीइ ।
आजाणुविलंबियसाडियाइ वरं खज्जउ माणउ चेडियाइ ।
णीसेससोक्खणिद्धाडियाइ खणि खणि आयइ ण वराडियाइ ।
जूएण ण कासु वि कुसलु एत्थु गउ सो सुकेउ होइवि अवत्थु ।
वंदेवि सुदंसणु मुक्कवत्थु णाणेणालोइयसयलवत्थु ।
तउ लेप्पिणु थिउ लंबंतहत्थु चिंतवइ अट्टझाणेण गत्थु ।
जइ अत्थि फलु वि तवतिव्वकम्मि तो मारेसमि आगमियजम्मि ।
पाडेसमि मत्थइ तासु वज्जु बलि जेण महारउ जित्तु रज्जु ।
इय संभरंतु संणासणेण मुउ जायउ भूसिउ भूसणेण ।
लंतवि सुरु सुकियसोहमाणु चउदहसमुद्दजीवियपमाणु ।

घत्ता—णीसंगें जिणवरलिंगें बलि देवत्तु लहेप्पिणु ॥
असरालें जंतें कालें सुरणिलयाउ चवेप्पिणु ॥३॥

घत्ता—न उसके पास अश्व-गज थे और न स्यन्दन-ध्वज । वह अकेला था । महान् गुरुओंके मना करनेपर भी उसका राज्यविलाससे पतन हो गया ॥२॥

३

दुर्दमनीय अहंकारके वशीभूत होकर जो देव और गुरुका कथन नहीं करते, संसारमें अपयशरूपी स्याहीसे मैले उन राजाओंका पतन हो जाता है। मायासे विनीत, विभ्रमको धारण करनेवाली शय्या और ताम्बूल लिये अत्यन्त शुभंकरी, घुटनों तक लटकती हुई साड़ीवाली दासीके द्वारा मनुष्य खा लिया जाये, यह अच्छा है, परन्तु क्षण-क्षणमें इस बराटिका (कौड़ी) के द्वारा नहीं। इस संसारमें जुएमें किसीकी कुशलता नहीं है। वह सुकेतु निर्वस्त्र होकर चला गया। दिगम्बर तथा जिन्होंने ज्ञानसे समस्त वस्तुओंको देख लिया है, ऐसे सुदर्शन मुनिकी वन्दना कर तप ग्रहण कर, हाथ लम्बे कर आर्तध्यानसे ग्रस्त वह विचार करता है कि यदि तपके तीव्रकर्मका कुछ भी फल है तो मैं आगामी जन्ममें उस बलिको मारूँगा, उसके मस्तकपर वज्र गिराऊँगा, कि जिसने मेरा राज्य जीत लिया है। इस प्रकार स्मरण करता हुआ वह संन्याससे मर गया और भूषणोंसे अलंकृत तथा पुण्योंसे शोभमान वह लान्तव देव हुआ चौदह समुद्र पर्यन्त जीवनके प्रमाणवाला।

घत्ता—अनासंग जिनवर दीक्षासे देवत्व पाकर बलि भी प्रचुर समय बीतनेपर देवविमानसे च्युत होकर— ॥३॥

३. १. AP °गुरुजंपिउं। २. P °विडंबिय°। ३. P वरि। ४. AP मुक्कु वत्थु। ५. AP चोद्दस°। ६. AP °पवाणु। ७. P णीसग्गें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

दुवई—इह भरहम्मि रयणपुरि णरवइ णामें समरकेसरी ॥
वीणाकलपलावसंणिहझुणि घरिणी तस्स सुंदरी ॥
सो ताहं बिहिं मि दिग्गयणिणाउ लक्खणलक्खंकियदिव्वकाउ ।
सुउ जायउ मयरद्धयसमाणु महु णामें णं उग्गमिउ भाणु ।
तिसयलु महि णिज्जिय तेण केंव णिहिघडधारिणि घरदासि जेंव ।
तहिं कालि गहीरत्तें समुद्दु दारावइपुरवरि राउ रुद्दु ।
महएवि तासु णामें सुहद्द अण्णेक्क पुहइ पुहइ व्व भद्द ।
तहिं पढमइ जणियउ पढमपुत्तु अहमिंदु देउ सो णंदिमित्तु ।
बीयइ लंतवचुउ रिद्धिहेउ संजणियउ णंदणु सो सुकेउ ।
ते बेण्णि वि धम्मसयंभुणाम ते बेण्णि वि ससिरविसरिसधाम ।
ते बेण्णि वि रामसुसामदेह ते बेण्णि वि गरुयणिबद्धणेह ।
ते बे वि सिद्धविज्जासमत्थ ते बे वि दिव्वपहरणविहत्थ ।
ते बे वि विणिग्गयमलविलेव ते बे वि सीरहर वासुएव ।
घत्ता—गुणवंतहिं तेहिं सुपुत्तहिं दोहिं मि उज्जालियउ कुलु ॥
पईवंतहिं गयणि वहंतहिं णं ससिसूरहिं महियलु ॥४॥

५

दुवई—बेण्णि वि ते महंत बलवंत महाजस धोयदसदिसा ॥
बे वि मइंदगरुडवाहिणिवइ बे वि अचिंतसाहसा ॥

४

इस भारतके रत्नपुर नगरमें समरकेशरी नामका राजा हुआ। उसकी वीणाके सुन्दर आलापके समान सुन्दर ध्वनिवाली सुन्दरी गृहिणी थी। वह (बलि) उन दोनोंका दिग्गजके समान निनादवाला लाखों लक्षणोंसे अंकित दिव्य शरीर, कामदेवके समान सुन्दर मधु नामका पुत्र हुआ मानो सूर्य उगा हो। तीन खण्ड धरतीको उसने इस प्रकार जीत लिया जैसे वह निधिघट धारण करनेवाली गृहदासी हो। उसी समय द्वारावतीमें गाम्भीर्यमें समुद्रके समान रुद्र राजा हुआ। उसकी सुभद्रा नामकी महादेवी थी, एक और पृथ्वी देवी थी जो पृथ्वीकी तरह कल्याणी थी। वहाँ पहलीसे वह नन्दिमित्र अहमिन्द्र देव पहला पुत्र हुआ, दूसरीका वह सुकेतु ऋद्धिका हेतु लान्तवदेवसे च्युत होकर पुत्र हुआ। वे दोनों क्रमशः धर्म और स्वयम्भू नामवाले थे। वे दोनों ही चन्द्रमा और सूर्यके समान शरीरवाले थे। वे दोनों ही राम और श्यामके समान देहवाले थे। वे दोनों ही भारी स्नेहसे निबद्ध थे। वे दोनों ही मलविलेपसे विनिर्गत थे। वे दोनों ही बलभद्र और वासुदेव थे।

घत्ता—उन दोनों गुणवान् सुपुत्रोंने कुलको उज्ज्वल कर दिया, मानो आकाशमें जाते हुए प्रभासे युक्त चन्द्र-सूर्यने धरतीतलको आलोकित कर दिया हो ॥४॥

५

वे दोनों ही महान् बलवान्, महायशस्वी और दसों दिशाओंको धोनेवाले थे। दोनों ही गज

४. १. AP °लक्खंकिउ । २. AP सुभद्द । ३. लंतवि चुउ । ४. AP पवहंतहिं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयसिरिरामाउक्कंठिएण घरसत्तमभूमिपरिट्ठिएण ।
जणविंभयभावुप्पायणेण ए[1]क्कहिं वासरि णारायणेण ।
अवलोइउ चिंधचलंतमयरु पुरबाहिरि दूसावासणियरु ।
पुच्छिउ स[2]मंति भणु कासु सिमिरु दीसइ भूसणरुइरहियतिमिरु ।
दुव्वसणविसेसकयंतएण तं णिसुणिवि वुत्तु महंतएण ।
रमणीयप[3]एसपुराहिवेण मंडलियएं ससिसोमें णिवेण ।
भीएण देव परिहरिवि दप्पु महुणरणाहहु पेसियउ कप्पु ।
मायंग तुरय मणि दिव्व चीरु[4] कंकणकडिसुत्तयहारिहारु ।
असिकरकिंकररक्खिज्जमाणु ओहच्छइ एत्थु णिबद्धठाणु ।

घत्ता—विहसंतें भणिउं अणंतें पालियै[5]चाउव्वण्णहु ॥
जीवंतहु महु पेक्खंतहु जाइ कप्पु किं अण्णहु ॥५॥

६

दुवई—जिम लंगलि णरिंदु जिम पुणु हउं पुहविहि अवरु को पहू ॥
णिच्छउ घिवमि कुद्धकालाणणि पिक्कउ महु व सो महू ॥
ता मंतें वुत्तउ भो कुमार किं गज्जसि किर परतत्तियार ।
महुराउ भणहि महुघोट्ट काइं हा ण वियाणहि तुहुं तहु कयाइं ।
भयवंत णरेसर णिहिल वहिय महि जेण तिखंड बलेण गहिय ।

और गरुड़ सेनाके अधिपति थे। उन दोनोंका साहस अचिन्तनीय था। विजय-श्रीरूपी रमणीके लिए उत्कण्ठित घरकी सातवीं भूमिपर बैठे हुए, जिसे लोगोंमें विस्मयका भाव उत्पन्न करनेकी इच्छा हुई है, ऐसे नारायणने एक दिन नगरके बाहर जिसमें ध्वजसमूह हिल रहा है, ऐसा तम्बुओंका समूह देखा। उसने अपने मन्त्रीसे पूछा कि यह किसका शिविर है कि जो भूषणोंकी कान्तिसे अन्धकार रहित है। यह सुनकर दुर्व्यसन विशेषके लिए यमके समान मन्त्रीने कहा कि रमणीक प्रदेशके अधिपति शशिसोम नामक भयभीत माण्डलीक राजाने हे देव, दर्प छोड़कर मधु राजाके लिए 'कर' भेजा है। गज, तुरग, मणि, दिव्य वस्त्र, कंकण, कटिसूत्र और सुन्दर हार। जिनके हाथोंमें तलवारें हैं, ऐसे अनुचरोंके द्वारा रक्षित वह शिविर अपना स्थान बनाकर ठहरा हुआ है।

घत्ता—तब नारायणने हँसते हुए कहा—"चातुर्वर्ण्यका पालन करनेवाले मेरे जीवित रहते और देखते हुए क्या किसी दूसरेके लिए कर जा रहा है? ॥५॥

६

जिस प्रकार हलधर राजा है और जिस प्रकार मैं राजा हूँ, उसी प्रकार पृथ्वीपर और कौन राजा है? मैं निश्चय ही उस मधुको पके हुए मधुकी तरह क्रुद्ध कालके मुखमें फेंक दूँगा।" इसपर मन्त्री बोला—"दूसरोंकी तृप्ति करनेवाले हे कुमार, आप क्यों गरजते हैं? तुम राजा मधुको मधुका घूँट क्यों कहते हो? अफसोस है आप उसके किये हुएको नहीं जानते? उसने मदवाले सारे

५. १. AP एक्कम्मि दियहि। २. A सुमंति। ३. AP रमणीयवेस°। ४. A चारु। ५. A परिपालिय° with पर in the margin.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिज्जिय विज्जाहर जक्ख जेण   आहवि को जुज्झइ समउं तेण।
तं णिसुणिवि णीलणियासणेण[1]   पडिवयणु दिण्णु संकरिसणेण।
महु भाइहि रणि देव वि अदेव   तुहुं वण्णहि अरिवरु बप्प केंव।
पुरिसंतरु ण मुणहि णिव्विवेय   ता पेसिय किंकर उग्गतेय।
रणि हणिवि जिणिवि ससिसोममंति   रुंधिवि बंधिवि णं विंझदंति।
आणिय मायंग तुरंग करह   सोवण्णहार[2] वरवसह सरह।

घत्ता—आहरणइं पसरियकिरणइं कण्हहु अग्गइ घित्तइं ॥
पडिणेत्तइं वण्णविचित्तइं णं रिउअंतइं पित्तइं ॥६॥

७

दुवई—ससिसोमेण देव जं पेसिउ तं खल[1]दुक्खदाइणा ॥
हित्तउं तुज्झ दव्वु आवेंतउ[2] रुद्दसुएण राइणा ॥

इय णिसुणवि चरवयणाउ वयणु   किउ राएं मुहुं रत्ततणयणु[3]।
पट्ठविउ वओहरु गउ तुरंतु   धरणीतणयहु वज्जरइ मंतु।
किं भग्गउ वसुमइणाहमाणु   किं हित्तु हेमु आगच्छमाणु।
किं खलिउ गयणि दिणयरु भमंतु   आमंतिउ किं भुक्खिउ कयंतु।
हा हे विबुद्धि धगधगधगंतु   उच्चोल्लिहि अंगालउ[4] णिहित्तु।
किं तोडिउ केसरिकेसरग्गु   किं महिवइआणापसरु भग्गु।
आहव्वभावु परिहरहि दोसु   पट्ठवहि ससामिहि सव्वु कोसु।

राजाओंको समाप्त कर दिया, और जिसने बलपूर्वक तीन खण्ड धरती जीत ली है, उससे युद्धमें कौन लड़ सकता है ?" यह सुनकर नीलवस्त्रोंवाले बलभद्रने उत्तर दिया—"मेरे भाईके लिए युद्धमें देव भी अदेव है। हे सुभट, तुम शत्रुवरका किस प्रकार वर्णन करते हो। ऐ निर्विचार, तुम पुरुषान्तरको मत गिनो।" तब उग्र तेजवाले अनुचर भेज दिये गये। रणमें शशिसोम मन्त्रीको मारकर जीतकर विन्ध्यदन्तिकी तरह रौंधकर और बाँधकर हाथी, घोड़े, तुरंग, ऊँट, स्वर्णहार, श्रेष्ठ वृषभ और सरभ ले आये गये।

घत्ता—जिनकी किरणें प्रसरित हो रही हैं ऐसे आभरणोंको कृष्णके आगे डाल दिया गया, जो मानो रंगोंसे विचित्र शत्रुके नेत्र, या उसकी आँतें या पित्त हों ॥६॥

७

"शशिसोमने जो कुछ भेजा था आता हुआ वह सब तुम्हारा द्रव्य हे देव, खलोंको दुःख देनेवाले रुद्रपुत्र राजा (स्वयंभूने) छीन लिया।" इस प्रकार दूतके मुखसे वचन सुनकर राजा (मधु) ने मुख और आँखें लाल कर लीं। उसने दूत भेजा। वह तुरन्त गया। और पृथ्वीदेवीके पुत्रसे वह मन्त्रकी बात कहता है, "तुमने धरतीके स्वामीके मानको भंग क्यों किया ? आते हुए धनको तुमने क्यों छीना ? आकाशमें भ्रमण करते हुए दिनकरको स्खलित क्यों किया ? तुमने भूखे कृतान्तको आमन्त्रित क्यों किया ? हे निर्बुद्धि, तूने धकधक जलते हुए अंगारे को कटिवस्त्रमें क्यों रख लिया ? तुमने सिंहके अयालके अग्रभागको क्यों तोड़ा ? तुमने राजाकी आज्ञाके प्रसारको

---

६. १. A णीलणिवासणेण; P णीलणियंसणेण। २. A सोवण्णभार।

७. १. AP खलु दुक्ख°। २. AP आएंतउ। ३. P रत्ततणयणु। ४. A इंगालउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ता चवइ उविंदुप्पण्णरोसु दक्खालमि तहु असिवरु विकोसु।
जइ लोहिउ णउ पायमि पिसाय तो छित्ता लइ मइं धम्मपाय।
ता दूयहु मुहि णीसरिय वाय जिह जंपइ तिह को घिवइ घाय।

घत्ता—कहजोग्गइ महिलहुं अग्गइ सयलु वि गज्जइ णिययघरि।
जससंगहि जीवियणिग्गहि विरलउ पहरइ संगरि ॥७॥

८

दुवई—एंव चवंतु दूउ गउ रायहु कहियउ तेण वइयरो ॥
देव ण देइ कप्पु वसुहासुउ गलगज्जइ भयंकरो ॥
ता वासुएवस्स पडिवासुएवस्स।
दुंदुहिणिणायाइं रणभूमिआयाइं।
संणाहबद्धाइं णिद्दयइं कुद्धाइं।
सेण्णाइं जुज्झंति वीरेहिं रुज्झंति।
खग्गेहिं छिज्जंति कोंतेहिं भिज्जंति।
वम्माइं लुम्मंति रत्तेण तिम्मंति।
चम्माइं फुट्टंति[2] अट्ठियइं तुट्टंति[1]।
वूहाइं विहडंति मंडलिय णिवडंति।
अंतेहिं गुप्पंति खेयर समप्पंति।
वड्ढंतसमरट्टि गयदंतसंघट्टि।
गरुलेस महुराय उक्खित्त णाराय।
चिरवइरियालग्ग धणुवेयकयमग्ग।

क्यों रोका? युद्धभावके दोषको छोड़ो, अपने स्वामीके सब धनको भेज दो।" तब उत्पन्नरोष नारायण कहता है—"मैं उसे कोश (म्यान) रहित तलवार दिखाऊँगा, यदि मैंने उस लोभी पिशाचका पतन नहीं किया, तो लो मैंने बलभद्र धर्मके पैर छुए?" इसपर दूतके मुखसे यह बात निकली कि जिस प्रकार कोई बात करता है, उस प्रकार वह आघात कहाँ दे पाता है?

घत्ता—कथाके योगमें (प्रसंगमें) अपने घरमें महिलाओंके आगे सभी गरजते हैं। लेकिन जिसमें यशका संग्रह और जीवनका निग्रह है, ऐसे युद्धमें विरला ही प्रहार कर पाता है ॥७॥

८

इस प्रकार कहता हुआ दूत चला गया। उसने सारा वृत्तान्त राजासे कहा कि हे देव, वह कर नहीं देता। पृथ्वीरानीका बेटा भयंकर गरज रहा है। तब वासुदेव और प्रतिवासुदेवकी सेनाएँ आमने-सामने आ गयीं। उनमें नगाड़ोंकी ध्वनि हो रही थी, दोनों युद्धभूमिमें उपस्थित थीं, कवचोंसे सन्नद्ध थीं, निर्दय और क्रुद्ध थीं। सेनाएं लड़ती हैं, वीरोंके द्वारा अवरुद्ध कर ली जाती हैं, खड्गोंसे खण्डित होती हैं, भालोंसे भिदती हैं, कवच लुप्त होते हैं, रक्तसे आर्द्र होते हैं, चर्म फूटता है, हड्डियां टूटती हैं, व्यूह विघटित होते हैं, मण्डलाकार सेनाएँ गिरती हैं, आँतोंसे उलझते हैं, विद्याधर समर्पण करते हैं। जिसमें गजदन्तोंका संघट्टन है, ऐसे उस बढ़ते हुए समरमें, जो

८. १. AP तुट्टंति। २. AP फुट्टंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचाससरद्देहिं　　मायंगसीहेहिं ।
फणिपक्खिराएहिं　　मेहेहिं वाएहिं ।
पहरंति ते बे वि　　ता चक्कु करि लेवि ।
महुणा पजंपियउं　　किं दविणु महुं हियउं ।

घत्ता—किं धम्में गयभडकम्में जो पहरणु णावेक्खइ ॥
मइं कुद्धइ जयसिरिलुद्धइ एमहिं को पइं रक्खइ ॥८॥

९

दुवई—ता दामोदरेण रिउ दुंछिउ धम्मपहाणुआरिणा ॥
एण रहंगएण दारेठवउं तुहुं मइं कित्तिकारिणा ॥
तं सुणिवि　　भुय धुणिवि ।
मणहरिहि　　सुंदरिहि ।
विउसयण-　　कयथयण- ।
विणुएण　　तणुएण ।
खयकरणु　　रहचरणु ।
रणि मुक्कु　　खणि ढुक्कु ।
णहि चलिउं　　जलजलिउं ।
समियक्कु　　करि थक्कु ।
अहिणवहु　　केसवहु ।
तं धरिवि　　छलु भरिवि ।
दीहरेण　　मच्छरेण ।
विप्फुरिवि　　हुंकरिवि ।
माहवेण　　घणरवेण ।
तणु गणिउं　　अरिभणिउं ।

चिरकालीन वैरसे लिप्त है, और जिन्होंने धनुर्वेदमें प्रवृत्ति प्राप्त की है, ऐसे गरुडेश और मधुराजने तीर फेंके। सिंह-सरभ तीरों, गज-सिंह तीरों, नाग-गरुड़ तीरों और मेघ-वायु तीरोंसे वे दोनों प्रहार करते हैं। इतनेमें चक्र हाथमें लेकर मधु बोला—तुमने मेरे धनका अपहरण क्यों किया ?

घत्ता—जो अस्त्रको नहीं देखता, उस धर्म और गजयोद्धा कर्मसे क्या ? यशरूपी श्रीके लोभी मेरे क्रुद्ध होनेपर इस समय कौन तुम्हारी रक्षा करता है ? ॥८॥

९

तब दामोदरने दुश्मनको फटकारा कि धर्मपथका अनुकरण करनेवाले और कीर्तिकारी इस चक्रसे मैं तुम्हें मारूँगा ? यह सुनकर, अपनी भुजाएँ ठोककर, मनहरी—सुन्दरीके पुत्र, विद्वज्जनों द्वारा शब्दोंसे संस्तुत मधुने विनाश करनेवाला चक्र छोड़ा। वह एक क्षणमें पहुँचा। आकाशमें चला चमकता हुआ। शान्त सूर्यकी तरह अभिनव केशवके हाथमें स्थित हो गया। उसे धारण कर, साहस कर, भारी मत्सरके साथ विस्फुरित होकर, हुंकार कर, मेघके समान शब्दवाले माधव

९. १. दामोयरेण । २. P °पहाणुरायणा । ३. A जले जलिउ ।

३७

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

रे पाव करि सेव ।
दुहहरहु हलहरहु ।
पइं कालु दाढालु ।
सेवंतु घोरंतु ।
रूसेविउ उट्ठविउ ।
कंडुईवि छलु मुइवि ।
ओसरहि मा मरहि ।
घणघणइ काणणइ ।
पइसरिवि जिणु सरिवि ।
वेउ धरहि तउ करहि ।
ता चवइ चक्कवइ ।
सुरउद्द दालिद्द ।
डिंभस्स छुहियस्स ।
को कंदु आणंदु ।
मणि जणइ दिहि कुणइ ।
सयडंगु तुहुं तुंगु ।
महुं चंडु भुयदंडु ।
सकयत्थ दिव्वत्थ ।
मरु हणमि सिरु लुणमि ।

घत्ता—ता चक्कें महुमहमुक्कें महुवच्छत्थलु छिण्णउं ॥
करतंबें णं रविबिंबें कालउ अब्भु विहिण्णउं ॥९॥

१०

दुवई—पत्तउ महु मरिवि समरंगणि तमतमणामवसुमई ॥
जायउ अद्धचक्कि लच्छीहरु सुवणि सयंभु महिवई ॥

स्वयम्भूने उसे तिनका समझा, और दुश्मनसे कहा—रे पापी, दुःखका हरण करनेवाले बलभद्रकी सेवा कर। दाढ़ोंवाले घोर कालकी सेवा करते हुए तुमपर वह क्रुद्ध हो उठे हैं, अतः छल छोड़-कर और सन्तुष्ट होकर हट जाओ—मरो मत। सघन वनमें प्रवेश कर जिनकी शरणमें व्रत धारण करो और तप करो। तब चक्रवर्ती कहता है—हे भयंकर कंगाल! क्या चन्द्रमा भूखे बालकको मनमें आनन्द देता है? धीरज उत्पन्न करता है? तुम्हारा ऊँचा चक्र है, मेरा प्रचण्ड भुजदण्ड है, कृतार्थ और दिव्यार्थवाला। मगर, मैं मारता हूँ, सिर काटता हूँ।

घत्ता—नारायणके द्वारा मुक्त चक्रने मधुका वक्षःस्थल इस प्रकार छिन्न-भिन्न कर दिया मानो आरक्त किरणोंवाले सूर्यबिम्बने काले बादलको छिन्न-भिन्न कर दिया हो ॥९॥

१०

समरांगणमें मृत्युको प्राप्त कर तमतमप्रभा नामकी नरकभूमिमें पहुँचा। तथा राजा स्वयम्भू

४. AP तूसविउ । ५. A कंडएवि । ६. AP वउ । ७. P कुंदु । ८. A चंड । ९. A दंड ।
१०. १. P °णामि । २. P लच्छीहउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जलकीलइ वणकीलइ रमंतु　　अंगाइं कुसुमसयणइ घिवंतु।
भंडारवत्थुसारइं णियंतु　　मायंगतुरंगसमारुहंतु।
घवघवघवंतु[3] चलणेउराइं[4]　　माणंतु चारुअंतेउराइं[5]।
आसत्तु कामि णं भमरु गंधि　　मुउ हुउ अंतिमणरयंतरंधि।
णिवसेप्पिणु पुहईजणणिगब्भि　　हा हा सइंभु पडिओ सि सुब्भि।
सम्मत्तवंति मिच्छत्तविरइ　　मइं भायरम्मि जिणधम्मणिरइ।
बुद्धो सि ण कम्महु अत्थि मल्लु　　किं बद्धउ आसि णियाणसल्लु।
इय एव धम्मु विरएवि सोउ　　णंदणहु समप्पिवि सिरिविहोउ।
आउच्छिवि परियणु सयणु[6] लोउ　　दुज्जोउ व मेल्लिवि दिव्वभोउ।
पणवेवि विमलवाहणु जिणिंदु　　बहुरायहिं सहुं हूयउ मुणिंदु।
पावेप्पिणु करणविहीणणाणु　　भव्वयणि[7] णिउंजिवि[8] धम्मदाणु।

घत्ता—भरहेसरु पढमणरेसरु जिह तिह धम्मु वि दढभुउ॥
गउ मोक्खहु सासयसोक्खहु पुप्फदंतगणसंथुउ[9] ॥१०॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे धम्मसयंभुमहुकहंतरं[10]
णाम छप्पणगासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५६॥

विश्वमें लक्ष्मीको धारण करनेवाला अर्धचक्रवर्ती हो गया। जलक्रीड़ा और वनक्रीड़ामें रमण करते हुए, कुसुमोंके शयनतलोंपर अंगोंका निक्षेप करते हुए, भाण्डारकी श्रेष्ठ वस्तुएँ देखते हुए, हाथियों और घोड़ोंपर चढ़ते हुए, चंचल नूपुरोंको छम-छम बजाते हुए, सुन्दर अन्तःपुरोंको मानते हुए वह काममें उसी प्रकार आसक्त हो गया मानो गन्धमें भ्रमर हो। मरकर वह अन्तिम नरकमें उत्पन्न हुआ। माता पृथ्वीके गर्भमें रहकर हाहा, स्वयम्भू श्वभ्र नरकमें गया। मेरे भाई, सम्यक्दृष्टि, मिथ्यात्वसे विरत और जिनधर्ममें निरत होते हुए भी मैंने जान लिया कि कर्मसे शक्तिशाली कोई नहीं है। उसने निदान शल्य क्यों बाँधा था? इस प्रकार धर्म बलभद्र शोक कर तथा अपने पुत्र को श्रीविभोग समर्पित कर, स्वजन और परिजनोंसे पूछकर, खोटे ग्रहोंकी तरह दिव्यभोगको छोड़कर, विमलवाहन जिनेन्द्रको प्रणाम कर अनेक राजाओंके साथ वह मुनि हो गया। और इन्द्रियोंसे विहीन ज्ञान पाकर, भव्यजनोंमें धर्मदानका प्रयोग कर—

घत्ता—जिस प्रकार प्रथम नरेश्वर भरतेश्वर उसी प्रकार दृढ़भुज धर्म बलभद्र भी नक्षत्र-गण द्वारा संस्तुत शाश्वत सुखवाले मोक्षके लिए गया ॥१०॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यमें धर्म-स्वयम्भू-मधु
कथान्तर नामका छप्पनवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५६॥

---

३. A °घवंतचल°। ४. AP °णेउराइं। ५. AP माणंतु °सुहयअंते। ६. AP सयलु। ७. A भव्वयण। ८. AP णिजुंजिवि। ९. A पुप्फयंत°। १०. A महुमहुकहंतरं।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

संधि ५७

पुणु भासइ गोत्तमु सेणियहु दुद्धरदुक्खकिलेसमह ॥
सिरिविमलणाहजिणगणहरहं मंदरमेरुहुं तणिय कह ॥ध्रुवकं॥

१

जंबूदीवइ अवरविदेहइ माणवमिहुणयवड्ढियणेहइ ।
मंदचूयचंवचिंचिणिचारइ[1] सीओयाणइउत्तरतीरइ ।
देसु गंधमालिणि[2] जाणिज्जइ गाइहिं कंगुकणिसु जहिं खिज्जइ ।
भमरहिं वियलंतउं महु पिज्जइ पक्खिहिं कलरवु जहिं विरइज्जइ ।
जहिं माहिसु सरसलिलब्भंतरि ण्हाइ पउरपंकयरयपिंजरि ।
अहिणवपल्लवबेल्लीभवणइ गोव सुवंति पुप्फपत्थरणइ ।
गंधसालिपरिमलु दिस वासइ पूसउ[3] कं भुणंतु जहिं वासइ ।
णिइवि छेत्तवालिणिइ मुहुल्लउं जहिं पंथिय चवंति सरसुल्लउं ।
दहिउल्लउ जहिं कूरकरंबउ पवहि पवहि जिम्मइ अंबंबउ ।

घत्ता—तहिं देसि रवण्णु सुवण्णमउ णहविलग्गमंदिरसिहरु ॥
परिहापायारहिं परियरिउ वीयसोउ णामें णयरु ॥१॥

सन्धि ५७

पुनः श्री गौतम, श्रेणिकसे श्री विमलनाथ जिनके गणधरों—मन्दर और मेरुकी दुर्धर दुखोंको नष्ट करनेवाली कथा कहते हैं।

१

जम्बूद्वीपमें जहाँ मानव जोड़ोंका स्नेह बढ़ रहा है, जहाँ मन्द आम्र चव चिंचिणी और चारके वृक्ष हैं, ऐसे अपरविदेहमें सीता नदीके उत्तर तटपर गन्धमालिनी देश जाना जाता है। जहाँ गायोंके द्वारा कंगु और कणिश (अनाज) खाया जाता है। भ्रमरोंके द्वारा झरता हुआ मद पिया जाता है, और पक्षियोंके द्वारा कलरव किया जाता है। जहाँ महिषगण प्रचुर पंकजरजसे पिंजरित सरोवरोंके जलमें नहाता है। अभिनव पल्लव और लताओंके भवनोंमें ग्वाले पुष्पशय्याओंपर सोते हैं। गन्धसे श्रेष्ठ पराग जहाँ दसों दिशाओंको सुवासित करता है। जहाँ सुआ 'कं' शब्द कहता हुआ निवास करता है। जहाँ क्षेत्रकी रक्षा करनेवाली कृषक बालिकाओंके मुख देखकर पथिक मधुर और सरस गीत गान करते हैं। जहाँ भातसे मिला हुआ अत्यन्त खट्टा दही प्रत्येक प्याऊ पर खाया जाता है।

घत्ता—उस देशमें सुन्दर स्वर्णमय मन्दिर शिखरोंसे आकाशको छूनेवाला तथा परिखाओं और प्राकारोंसे घिरा हुआ वीतशोक नामका नगर है ॥१॥

---

१. १. AP चूयचविं° । २. A गंधुमालिणि । ३. A पूसउ कण चुणंतु; P पूसउ कणु चुणंतु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

रायमहारिसि मुक्कवियारउ सो सुयणायाणायवियारउ।
जाइ जणिउ सा धण्णी णिव सइ णरवइ वइजयंतु तहिं णिवसइ।
गेहिणि भव्व सव्वसिरि णामें सुय उप्पण्णा सुहपरिणामें।
संजयंतु अण्णेक्कु जयंतउ अणिहणजसधवलियतिजयंतउ।
सारसमिहुणसरालवणंतरि णासियसोय असोयवणंतरि।
एक्कहिं दिणि दक्खवियरहंतहु पयजुयलउं वंदिवि अरहंतहु।
धम्मु अहिंसावंतु सुणेप्पिणु अहिउल्लउं मुणिमग्गि थवेप्पिणु।
वइजयंतणामहु सद्देप्पिणु संजयंततणयहु महि देप्पिणु।
ते तिविहें णिव्वेएं लइय छिंदिवि मोहलोहदुल्लइय।
आमेल्लियणियसुललियजाया पिउ पुत्तय तिण्णि मि रिसि जाया
इय तवविहिहिं णिंति किर के बलु बप्पहु उप्पण्णउ जहिं केवलु।

घत्ता—तहिं आयहु देवहु फणिवइहि रूवु णिहालिवि हियग्रहरु॥
णिज्झायइ लुद्धु जयंतु मुणि जइ फलु देसइ सुतवतरु॥२॥

३

तो मज्झु वि एहउं लाएण्णउं होज्जउ भवि सोहग्गाइण्णउं।
एव णियाणणिबंधणबंधउ जणु तिहिं सल्लहिं सयलु वि खद्धउ।
मुउ जयंतु संपत्तइ कालइ जायउ विसहरिंदु पायालइ।

२

उसमें विकारोंसे मुक्त, राजाओंमें प्रधान, शास्त्र तथा न्याय-अन्यायका विचार करनेवाला राजा वैजयन्त निवास करता है। जिस सतीने उसे जन्म दिया, वह धन्य है। उसकी भव्य सर्वश्री नामकी गृहिणी थी। शुभ परिणामसे उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए, संजयन्त और जयन्त, जो अपने अनाहत यशसे तीनों लोकोंको धवलित करनेवाले थे। एक दिन जिसमें सारस दम्पतिका शब्दरूपी जल है, ऐसे अशोक वनमें, अन्तरायका अन्त दिखानेवाले अरहन्तके, शोकको नष्ट करनेवाले पदयुगलकी वन्दना कर, अहिंसामय धर्म सुनकर अपने हृदयको मुनिमार्गमें लगाकर, संजयन्तके पुत्र वैजयन्तको बुलाकर उसे धरती देकर वे तीनों (पिता वैजयन्त, संजयन्त और जयन्त) वैराग्यको प्राप्त हुए। मोह-लोभरूपी दुर्लताको काटनेके लिए अपनी सुन्दर पत्नियाँ छोड़कर पिता और दोनों पुत्र, तीनों ही मुनि हो गये। कितने लोग ऐसे हैं कि जो तपके द्वारा बलको प्राप्त होते हैं। वहाँ पिताको केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

घत्ता—वहाँ आये हुए देव, नागराजका सुन्दर रूप देखकर लोभी जयन्त मुनि अपने मनमें विचार करता है कि (उसका) सुतपरूपी वृक्ष यदि फल देता है— ॥२॥

३

तो वह आगामी जन्ममें मेरा सौभाग्यसे व्याप्त ऐसा लावण्य हो। इस प्रकार निदानके बन्धनसे बँधा हुआ मनुष्य तीनों शल्योंसे विनाशको प्राप्त होता है। समय पूरा होनेपर जयन्त

---

२. १. AP °तिजयंतहु। २. A जिणमग्गि। ३. T सुणेप्पिणु सुष्ठु नीत्वा। ४. AP दुल्लल्लिय। ५. A बप्पहं।

३. १. AP °बद्धउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जेण वएण मोक्खु पाविज्जइ तें संसारु केंव मग्गिज्जइ ।
मोहें मोहिउ लोउ ण याणइ काणणि कायोणंतिय[2] वीणइ ।
सवरुल्लउ किं मोत्तिउं बुज्झइ मिच्छाइट्ठिहि[3] दिट्ठि ण सुज्झइ ।
आहिंडंतसरह[4]पंचाणणि तावेक्कहिं दिणि भीसणकाणणि ।
णिज्जियराएं वज्जियकाएं संजयंतु थिउ पडिमाजोएं ।

घत्ता—मुणिमारउ धीरउ दुद्दरिसु दूसहु गुणसंणिहियसरु ॥
णियभामइ सामइ रामियउ णं रइरामइ कुसुमसरु ॥३॥

४

णहयलि विज्जुदाढु[1] विज्जाहरु विहरइ असिवरु वसुणंदयकरु ।
सुरहरु रिसिहि उवरि ण पयट्टइ दुज्जणमणु व णं जाव[2] विसट्टइ ।
ताव तेण अवलोइउं महियलु दिट्ठउ मुणिवरु मेरु व णिच्चलु ।
सुमरिवि पुव्ववइरु भुइ ढोइउ विज्जासामत्थेणुचाइउ ।
आणिउ तुंगसाहिसंघायइ भारहवरिसपुव्व[3]दिसिभायइ ।
हरिवइ करिवइ चामीयरवइ कुसुमवइ वि चंडवेयाणइ[4] ।
एयउ[5] मिलियउ जहिं तहिं पेल्लिउ पंचमहासरिसंगमि घल्लिउ ।
देसु असेसु तेण संचालिउ अच्छइ एत्थु[6] एक्कु मलमइलिउ ।
णग्गउ णिग्घिणु वसणोवायउ तुम्हइं रक्खसु भक्खहुं आयउ ।

मरकर पाताल लोकमें विषधरराज होता है। जिस व्रतसे मोक्ष पाया जा सकता है, उससे संसार क्यों मांगा जाता है? इस बातको मोहसे मोहित जन नहीं जानता। जंगलमें भील गुंजाकी प्रार्थना करता है, क्या वह मोतीको समझता है? मिथ्यादृष्टिके लिए दृष्टि नहीं दिखाई देती। जिसमें सरभ और सिंह भ्रमण करते हैं, ऐसे भयंकर जंगलमें एक दिन, जिसमें रागको जीत लिया गया है और शरीरका त्याग कर दिया गया है ऐसे प्रतिमायोगमें संजयन्त मुनि स्थित थे।

घत्ता—मुनिको मारनेवाला धीर, दुर्दर्शनीय, असत्य डोरीपर तीर चढ़ाये हुए, अपनी पत्नी श्यामासे इस प्रकार रमण करता हुआ मानो काम रतिके साथ रमण कर रहा हो ॥३॥

४

जिसके हाथमें वसुनन्दक नामकी श्रेष्ठ तलवार है, ऐसा विद्युद्दंष्ट्र विद्याधर आकाशतलमें विहार कर रहा था। उसका देव-विमान मुनिके ऊपर नहीं जा सका। दुर्जनके मनकी तरह जबतक उनका विमान विघटित नहीं हुआ, तबतक उसने धरतीतलको देखा, उसने मेरुके समान, मुनिवरको अचल देखा। अपने पूर्व वैरको याद कर उसने विद्याकी सामर्थ्यसे उसे उठा लिया तथा बाहुओंपर धारण कर लिया और उसे जो ऊँचे-ऊँचे वृक्षोंसे आच्छादित है, भारतवर्षके ऐसे पूर्वदिशा भागमें जहाँ हरिवती, करीवती, चामीकरवती, कुसुमवती और चण्डवेगा नदियाँ मिलती हैं, वहाँ फेंक दिया और इस प्रकार पाँच महानदियोंके संगमपर डाल दिया तथा अशेष देशमें यह बात फैला दी कि यहाँ एक मलसे मैला निर्दय दुःखजनक नंगा राक्षस तुम लोगोंको खानेके लिए

२. A कायाणंणिय। ३. A मिच्छाहिट्ठिहि। ४. P आहिंडंति सरह°।
४. १. A विज्जदाढु। २. AP जाव ण। ३. A °वरिसि पुव्व। ४. A कुसुमऽंडई व पाणइ; P कुसुमवइ वि चंडवियाणइ। ५. A जहि एयउ मिलियउ तहि पेल्लिउ। ६. AP एक्कु एत्थु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुम्मुहु दुट्ठबुद्धि विवरेरउ   हणहु कुणहु[7] जइ मंतु महारउ।
ता मणुयहिँ मुणिंदु कयरोसहिँ   ताडिउ उवलहिँ दंडसहासहिँ[8]।
घत्ता—थिरु[9] सत्तु मित्तु समभावि थिउ सुक्कझाणसंरुद्धमणु ।।
सो खवउ [10]खवयसेढिहि चडिउ तिणु वि ण मण्णइ णिययतणु ।।४।।

५

साहु भीमु उवसग्गु सहेप्पिणु   तिकलेवरणिबंधु मेल्लेप्पिणु[1]।
गउ तहिं जहिं[2] गउ पुणरवि णावइ   मुणिवरलील तिजगि को पावइ।
मारिज्जंतु वि वइरिसमूहें   जे कया वि विप्पंति ण कोहें[3]।
ताहं मि जणु पहरणु किं धारइ   जडु अप्पेणु[4] अप्पाणउं मारइ।
सहुं देवहिं भवभावणिसुंभइ   तहिं णिव्वाणपुज्जपारंभइ।
आयउ सो जयंतु उरजंगउ[5]   पेच्छिवि चिरबंधुहि पडियंगउ।
फुक्कारुड्डावियणहयंदें   आरूसेप्पिणु खणि धरणिंदें।
माणवणिवहु णिबद्धउ णायहिं   दिणि[6]हउ णीससंतु कसघायहिं।
अवरहिं वुत्तु फणिंद वियारहि   अम्हइं काइं भडारा मारहि।
उक्खयखग्गें मच्छरगाढें   एउं सव्वु विलसिउं तडिदाढें।
परियणसयणहिं सहुं थरहरियउ   ता णासंतु सत्तु सो धरियउ।

आया है। यदि तुम हमारी बात मानते हो तो दुर्मुख, दुष्टबुद्धि, विपरीत इसे मार डालो। तब क्रोध करते हुए मनुष्योंने उन मुनीन्द्रको पत्थरों और हजारों डण्डोंसे ताड़ित किया।

घत्ता—वह मुनि शत्रु-मित्रमें समभाव रखकर स्थित हो गये। शुक्लध्यानमें उन्होंने अपना मन संरुद्ध कर लिया। उस क्षपणक (मुनि)ने क्षपणक श्रेणीपर चढ़कर अपने शरीरको तिनकेके भी बराबर नहीं समझा ॥४॥

५

वह महासाधु उपसर्गको सहनकर, तीन शरीरके निबन्धनको छोड़कर वहाँ चले गये, जहाँसे जीव फिर लौटकर नहीं आता। तीनों लोकोंमें मुनिवरकी लीलाको कौन पा सकता है? शत्रुसमूहके द्वारा मारे जाते हुए भी जो कभी भी क्रोधके द्वारा अभिभूत नहीं होते ऐसे मुनियोंके ऊपर जन हथियार क्यों उठाता है? वह मूर्ख अपनेसे अपनेको मारता है। वहाँ देवोंके साथ संसारके भावका नाश करनेवाली निर्वाणपूजा प्रारम्भ की गयी। वह जयन्त धरणेन्द्र भी वहाँ आया। अपने चिरबन्धुके शरीरको पड़ा हुआ देखकर, फूत्कारसे जिसने आकाशके चन्द्रमाको उड़ा दिया है, ऐसे धरणेन्द्रने एक क्षणमें क्रुद्ध होकर नागोंसे मानव समूहको बाँध लिया और श्वास लेते हुए उन्हें कशाघातोंसे मार डाला। दूसरोंने कहा—"हे धरणेन्द्र, विचार करिये। हे आदरणीय, आप हमें क्यों मारते हैं? जिसने तलवार उठा रखी है तथा जिसमें प्रगाढ़ मत्सर है, ऐसे विद्युद्दंष्ट्रने यह सब चेष्टा की है।" तब परिजनों और स्वजनोंके साथ थर-थर काँपते और भागते हुए शत्रुको उसने पकड़ लिया।

---

७. P कुणाहु। ८. A दुट्ठसहासहिं। ९. AP थिउ। १०. AP खवगसेढिहि।

५. १. A मलेप्पिणु। २. AP जहिं सो गउ पुणु णावइ। ३. A मोहें। ४. AP अप्पाणउं अप्पुणु। ५. AP उरजंगमु। ६. A वणि हउ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

घत्ता—किर बंधिवि घिवइ समुद्दजलि ता फणिवइ दुम्मियहियउ ॥
आइच्चँपहावें सुरवरिण करुणं करेप्पिणु पत्थियउ ॥५॥

६

णायराय पहएं किं आएं लज्जिज्जइ णिहएण वराएं।
मुइ मुइ किं किर कलुससहावें पावयम्मु सइं खज्जउ पावें।
एत्थु ण को वि बंधु णउ वइरिउ पिसुणु ण होइ एहु उवयारिउ।
जेण सुसीलवंतु संताविउ मोक्खु तुहारउ भायरु पाविउ।
किर मुणि तवदुक्खिं तणु तावइ अण्णें किउ तं तहु णिरु भावइ।
इहु हिंसइ इहु धम्मि पयट्टइ चउजम्मंतरु दोहं वि वट्टइ।
तं णिसुणेवि रोसु मेल्लेप्पिणु चवइ अहीसरु सिरु विहुणेप्पिणु।
दारणमारणविहिविच्छिण्णउं भणु किह बिहिं मि वइरु संपण्णउं।

घत्ता—तं णिसुणिवि दरँदरिसियदसणदित्तिइ जगु धवलउं करइ ॥
कह देवदिवायराहु फणिहि बहुरसभावहिं वज्जरइ ॥६॥

७

भारहगोत्तखेत्तरक्खणवइ सीहसेणु सीहउरि महीवइ।
सयलकलाविण्णाणवियक्खण रामयत्त तहु देवि सलक्खण।

घत्ता—हाथ बाँधकर धरणेन्द्र पीड़ित हृदय उस विद्याधरको जबतक समुद्रजलमें फेंके, तबतक आदित्यप्रभ नामक सुरवरने करुणा करके उससे प्रार्थना की ॥५॥

६

"हे नागराज, इसको मारनेसे क्या ? इस बेचारेको मारनेसे आपको लज्जा आनी चाहिए। इसे छोड़ो, कलुषित परिणामसे क्या ? वह पापकर्मा स्वयं अपने पापसे खाया जायेगा। इस संसारमें न तो कोई भाई है और न कोई शत्रु। फिर यह दुष्ट नहीं है। यह उपकारी है कि जिसने सुशीलवन्तको सताया और उससे तुम्हारा भाई मोक्ष पा गया? मुनि तपके दुःखसे अपने शरीरको स्वयं तपाते हैं, यदि कोई दूसरा दुःख पहुँचाता है तो वह उन्हें अच्छा लगता है। यह हिंसा करता है और यह (मुनि) धर्ममें प्रवर्तन करता है। लेकिन देहत्याग द्वारा जन्मान्तर दोनोंका होता है।" यह सुनकर और क्रोध छोड़कर नागराज सिर हिलाकर कहता है—छेदन, मारण और भाग्यसे विछोह करानेवाला यह वैर दोनोंमें किस प्रकार हुआ।

घत्ता—यह सुनकर अपने दाँतोंकी दीप्तिसे वह जगको धवल करते हैं और आदित्यप्रभ देवकी कथा अनेक रसभावसे नागराजको बताते हैं ॥६॥

७

सिंहपुरमें भरतके गोत्र और क्षेत्रका रक्षणपति राजा सिंहसेन था। उसकी समस्त कलाओं

७. AP °आइच्चपहाहे। ८. A करुणु; P करणु।

६. १. P चउजम्मैं तरु देहविघट्टइ। २. A उप्पण्णउं। ३. AP दरदरिसिय°। ४. A देवदिवायरु तहो; P देउ दिवायराहु।

७. १. AP भारहखेत्ति खेत्त°। २. A रामदत्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढमु मंति सिरिभूइ विणीयउ   [3]सच्चघोसु अवरु वि तहिं बीयउ ।
विहसिय[4]सरलसरोरुहणेत्तउ   पउमसंडपुरि सेट्ठि सुदत्तउ ।
तहु गेहिणिहि सुमित्तहि हूयउ   भद्दमित्तु सिसु णिरुवमरूवउ ।
हिंडंतें जाएण जुवाणें   देसंतरु लंघिवि पहरीणें ।
तेण किरणसंताणसिणिद्धइं[5]   रयणदीवि वररयणइं लद्धइं ।
देसिएण सीहउरि वसंतें   सुद्धसहावें बहुगुणवंतें ।
तक्करभीएं रुइविच्छिण्णइं   सच्चघोसमंतिहि करि दिण्णइं ।

घत्ता—गउ अप्पणु पुणरवि णियघरहु लेवि सहायसमागयउ ।।
जा मग्गइ रयणइं णिहियाइं ताव लुद्धु लोहें हयउ ।।७।।

८

देइ ण मंति तासु पियरयणइं   णाइं विरत्तउ विडयणु णयणइं ।
वणिवरु[1] घरि घरि फुडु पुकारइ   खलु लच्छीमएण अवहेरइ ।
पुच्छिउ राएं[2] कालउ तंबउ   हित्तउ काइं वत्थुणिउरुंबउ ।
दीणु रुयंतउ णिच्चु जि दीसइ   पइं दूसइ अण्णाउ पघोसइ ।
घोसहि सच्चघोस किं जुत्तउं   तो[3] विहसेप्पिणु विप्पें वुत्तउं ।
हउं वि तुहुं वि जइ चोरु णिरुत्तउ   जणणि गिलइ जइ डिंभउ सुत्तउ ।

और विज्ञानोंमें विलक्षण और अच्छे लक्षणोंवाली रामदत्ता नामकी देवी थी । उसका प्रथम मन्त्री विनीत श्रीभूति था और दूसरा सत्यघोष था । सरल कमलसमूहका उपहास करनेवाले नेत्रोंवाला सुदत्त पद्मखण्ड पुरीका सेठ था । उसकी गृहिणी सुमित्रासे अनुपम रूपवाला भद्रमित्र नामक बालक हुआ । युवक होनेपर घूमते हुए देशान्तरको लाँघकर पथसे थके हुए उसने रत्नद्वीपमें किरण-परम्परासे स्निग्ध उत्तम रत्न प्राप्त किये । सिंहपुरमें निवास करते हुए दूसरे देशसे आये हुए गुणवान् और शुद्ध स्वभाववाले उसने चोरोंके भयसे कान्तिसे चमकते हुए वे रत्न सत्यघोष मन्त्रीके हाथमें दे दिये ।

घत्ता—वह स्वयं चला गया और अपने घरसे सहायक लेकर आ गया । और जबतक वह रखे हुए रत्नोंकी याचना करता है तबतक वह लोभी सत्यघोष लोभसे आहत हो गया ।।७।।

८

मन्त्री उसके प्रिय रत्नोंको नहीं देता, जैसे विरक्त विटजन अपने नेत्र नहीं देता । वह वणिक्वर घर-घर जाकर जोर-जोरसे पुकारता, लेकिन लक्ष्मीके मदसे वह उसकी उपेक्षा कर देता । एक दिन राजाने पूछा कि इसके काले-नीले रत्नोंका समूह क्यों हर लिया गया है ? यह दीन नित्य रोता हुआ दिखाई देता है । यह तुम्हें दोष लगाता है और अन्यायकी घोषणा करता है । बताओ सत्यघोष कि ठीक बात क्या है ? कि यह सुनकर ब्राह्मण मन्त्रीने हँसते हुए कहा—यदि मैं और तुम दोनों निश्चित रूपसे चोर हैं और यदि माँ अपने सोते हुए बच्चेको स्वयं खा लेती है तो

---

३. A सो च्चिय सच्चघोस पुणु भणियउ; P सोत्तिय सच्चघोसु तहिं भणियउ । ४. AP वियसियॅ; K वियसियॅ but corrects it to विहसिय । ५. AP सणिद्धइं ।

८. १. A वणि बरु पुंडरीउ पुक्कारइ । २. AP राएं वणिउ चवंतउ । ३. P तो ।

तो किं जियइ को वि[4] भुवणंतरि   एहु लयउ चोरेहिं वणंतरि।
हिंडइ दव्वपिसाएं भुत्तउ   जंपइ जं जि तं जि अवचित्तउ।
एहु चोरु[5] चिंततें[6] गहियउं   ता राएण वि तं सद्दहियउं
घत्ता—वणि डिंभसहासहिं[7] परियरिउ भमइ णयरि परिमुक्कसरु ॥
आरडइ करुणु सूरुग्गमणि णिवघरणियडइ[8] चडिवि तरु ॥८॥

९

मइं दिहिवंतइ सीलविसुद्धइ   ता महएविइ वुत्तु विरुद्धइ।
परवंचणगुणतग्गयचित्तहिं   महिवइमइ भामिज्जइ धुत्तहिं[1]।
णिरणुट्ठाणु दीणु दालिद्दिउ   अप्पणु जइ वि होइ सोहद्दिउ।
तहु जंपिउ ण को वि आयण्णइ   राउ वि णिद्धणवयणु ण मण्णइ।
णिवें[2] तुह मंदिरि चोरहं उण्णइ
एम चवेप्पिणु सुंदरु विहियउं   पासाहलउ पासि संणिहियउ।
पयहिं पडंतु संतु हक्कारिउ   आउ महंतु तहिं जि वइसारिउ।
दोहिं मि अक्खजूउ पारद्धउं   देविइ भल्लउं उत्तरु लद्धउं।
मज्झु जाइ णीसेसहु देसहु   तुज्झु वि[3] सुत्तहु दियवरवेसहु।
चामीयरसोहासोहिल्लहि   अवरु वि मुद्दइ[4] मणितेइल्लहिं।
बिण्णि वि एयइं भूसियगत्तइं   रायाणियइ छइल्लइ जित्तइं।
महियंगुलियइ वज्जुज्जलियइ[5]   सववीयउ सहुं अंगुत्थलियइ।

क्या कोई इस संसारमें जीवित रह सकता है ? यह वनके भीतर चोरोंके द्वारा लूट लिया गया है और द्रव्यपिशाचसे सताया हुआ यहाँ घूमता है। वह जो कुछ भी कहता है वह उद्भ्रान्त चित्तका कथन है। विचार करते हुए राजाने इसे सुन्दर समझ लिया और उसका विश्वास कर लिया।

घत्ता—हजारों बालकोंसे घिरा हुआ उन्मुक्त स्वरवाला वह वणिक् नगरमें घूमता फिरता। सूर्योदय होनेपर राजाके घरके निकट पेड़पर चढ़कर वह करुण स्वरमें चिल्लाता ॥८॥

९

तब भाग्यशालिनी शीलसे विशुद्ध महीदेवीने कुपित होकर मुझसे कहा, "दूसरोंको ठगनेके गुणमें दत्त-चित्त धूर्तोंके द्वारा राजाकी बुद्धि घुमा दी जाती है। जो निरुद्यम, दीन और दरिद्र है चाहे वह खुद कितना ही स्नेहयुक्त हो उसके कहेको कोई नहीं सुनता। राजा भी निर्धनके वचनको नहीं मानता। हे राजन्, तुम्हारे घरमें चोरोंकी उन्नति है।", यह सुनकर उसने एक सुन्दर बात की। वह द्यूतफलकके पास बैठ गयी। पैरोंपर पड़ते हुए उसने मन्त्रीको पुकारा और आये हुए मन्त्रीको उसने वहीं बैठा लिया। दोनोंने अक्षद्यूत प्रारम्भ किया। देवीने भी भला उत्तर पा लिया कि मेरे समस्त देश और तुम्हारे द्विजवर वेशके जनेऊ और स्वर्णशोभासे शोभित मणितेजसे युक्त अंगूठीका खेल (जुआ) होगा। शरीरको भूषित करनेवाली ये दोनों चीजें चतुर रानीने जीत लीं—बिजलीकी तरह चमकती हुई बहुमूल्य अँगूठीके साथ जनेऊ।

४. A omits वि। ५. A चोरु। ६. AP चिंततें। ७. A °सहासि। ८. AP णिवघरि णियडउं।

९. १. P तहिं। २. A adds this line in second hand; P omits it। ३. AP जि। ४. AP मुद्दहि। ५. AP विज्जुज्जलियइ; but gloss in T हीरदीप्त्या।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तं णिउणमईहिं समप्पियउं धाइहि[6] हियवउं हरिसियउं ॥
अहिणाणु महामंतिहिं तणउ भंडायारिहि[7] दरिसियउं ॥९॥

१०

पप्फुल्लियसुवत्तसयवत्तइ चिंधु पदंसिवि वुत्तउं धुत्तइ ।
अच्छइ गुरु राउलि अवलोयहि भद्दमित्तमाणिक्कइं ढोयहि ।
तो[1] कोसाहिवेण सामुग्गउ[2] अप्पिउ धाइहि वत्थुसमुग्गउ ।
गय सा तं लेप्पिणु[3] खणि तेत्तहि अच्छइ सणिवणिवाणी[4] जेत्तहि ।
जूयपवंचु पहुहि वज्जरियउ वसुविसेसु कुडिलें अवहरियउ ।
ता राएं पायावलिजडियइं अण्णइं रयणइं तहिं तोंतडियइं ।
पडिहारें आहूयउ वणिवरु लइ णियमाणिक्कइं पसरहि करु ।
भणिउं णरिंदें वणिउ णिरिक्खइ णियधणु किं ण को वि ओलक्खइ ।
लइयउ तेत्थु देणे[5] णियमणिगणु जिह मणिगणु तिह णरणाहहु मणु ।
दिण्णउं पुरमहल्लसेट्ठित्तणु पावइ[6] को ण सुइत्तें कित्तणु ।
मंतिणिरिक्कु ढुक्कु अवमाणहु कंसथालि खावाविउ छाणहु ।
सीसि तीस [7]खरटक्करघायहिं ताडिउ मल्लहिं कुंचियकायहिं ।
घत्ता—कसपहरपरंपरसुढियतणु वरवेयण[8]वड्ढियजरउ ॥
मुउ रायहु उप्परि कुवियमणु हुउ वसुवासइ विसहरउ[9] ॥१०॥

घत्ता—वे चीजें उसने अपनी निपुणमति धायको सौंप दी। वह मनमें हर्षित हुई। महामन्त्रीको इन पहचानोंको मैं भण्डारीको दिखाऊँगी ॥९॥

१०

खिले हुए मुखकमलवाली उस धूर्ताने पहचान बताकर कहा कि "गुरु राजकुलमें हैं, (यह) देखो और भद्रमित्रके माणिक्य दे दो।" तब कोषके अध्यक्षने रत्नोंसे परिपूर्ण पिटारा उसे दे दिया। वह उसे लेकर एक क्षणमें वहाँ गयी जहाँ उसके राजाकी रानी थी। उसने जुएका प्रपंच राजाको बताया और कुटिलतासे अपहृत किया गया धन भी। तब राजाने किरणावलिसे विजड़ित और दूसरे रत्न उसमें मिला दिये। प्रतिहारने वणिक्वर को बुलाया। "लो अपने रत्न ले लो।" राजाने कहा। वणिक् उन्हें देखने लगा। अपने धनको कौन नहीं पहचानता। उसने वहाँ अपने मणिगण ले लिये। जिस प्रकार उसने अपना मणिगण ले लिया, उसी प्रकार उसने राजाका मन भी जीत लिया। उसने उसे नगरके महाश्रेष्ठीका पद दिया। पवित्रतासे संसारमे कौन नहीं कीर्ति पाता? चोर मन्त्री अपमानको प्राप्त हुआ। काँसेकी थालीमें उसे गोबर खिलाया गया। संकुचित शरीर मल्लोंके तीव्र टक्करके आघातोंसे तीस बार सिरपर उसे ताड़ित किया गया।

घत्ता—कोड़ोंके आघातकी परम्परासे शून्यशरीर तथा अत्यधिक वेदनासे जिसे ज्वर बढ़ रहा है ऐसा वह सत्यघोष मन्त्री राजाके प्रति कुपित मन होकर भाण्डागारमें साँप हुआ ॥१०॥

६. A महिवइहियियउं । ७. P भडायारिहे ।

१०. १. P तो । २. A सावग्गउ; P सामग्गउ । ३. P लेप्पिणु तंखणि । ४. P सणिवइराणी । ५. P adds वि after तेण । ६. A पावइ को ण सइत्तें; P पावइ किं ण सुइत्तें । ७. A सीस तीस खरटक्करॱ; P सीसि तीस खरढक्करॱ । ८. A घणवेयणॱ; P वणवेयणॱ । ९. A विसहरु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

भीमु अगंधणकुलि संभूयउ णं जमपासउ णं जमदूयउ।
सिसुससिसरिसैविसमदाढाणणु धणणिहिकलसयवलइयणियतणु।
कज्जलेंकण्हलतंबिरलोयणु कोइलभसलकसणु मरुभोयणु।
फुक्करंतु दुम्मुहु अहि अच्छइ दीहरु कालु जाव तहिं गच्छइ।
ता राएण रिद्धिपरिउण्णउं मंतित्तणु धम्मिल्लहु दिण्णउं।
असणवणंतरि कंतारायलि धम्मणाममुणिवरपयजुयतलि।
सुणिवि धम्मु संसारहु संकिउ भद्दमित्तु जिणवरदिक्खंकिउ।
णियजणणिइ छुहियइ उवलद्धउ गहणि सुमित्तीवग्घिइ खद्धउ।
मरिवि महाबलु पडिबलमद्दणु मयवइसेणहु जायउ णंदणु।
सीहॅचंदु पहिलारउ भासिउ पुण्णयंदु तहु अणुउ पयासिउ।
रामयत्त बिहिं पुत्तहिं राहिय णं पुण्णिम रैविससिहिं पसाहिय।
अण्णहिं दिणि कुलकमलदिणेसरु दविणागारु णियंतु णरेसरु।

घत्ता—जो सच्चघोसु चिरु मंतिवरु बद्धवइरु हुउ सप्पु घरि॥
तें रूसिवि डकिउं भीसणिण णउलीयरणु करेवि करि॥११॥

११

अगंधण कुलमें पैदा हुआ भीम वह मानो यमका पाश या दूत था। उसका मुख शिशु-चन्द्रमाके समान और विषम दाढ़ोंवाला था। धन और निधिकलशोंसे अपने शरीरको लपेटे हुए था। उसके नेत्र कज्जलके समान काले और लाल-लाल थे। वह कोयल-भ्रमरके समान श्याम था। हवा उसका भोजन था। वह दुर्मुख साँप फूत्कार करता हुआ वहाँ रहता है। उसका लम्बा समय वहाँ बीत जाता है। राजाके द्वारा ऋद्धिसे परिपूर्ण मन्त्रिपद धमिल ब्राह्मणको दिया गया। असना नामक वनमें विमल कान्तार पर्वतपर धर्म नामक मुनिवरके चरणकमलोंके तलमें धर्म सुनकर भद्रमित्र संसारसे शंकित होकर जिनवरकी दीक्षामें दीक्षित हो गया। वह अपनी भूखी माँ सुमित्रा बाघिन द्वारा पा लिया गया और वह उसे खा गयी। वह मरकर सिंहसेनका शत्रुसेनाका मर्दन करनेवाला महाबली पुत्र हुआ। उसमें सिंहचन्द्र पहला कहा गया और दूसरा पूर्णचन्द्र उसका अनुज प्रकाशित हुआ। माँ रामदत्ता अपने दोनों पुत्रोंसे शोभित थी, मानो पूर्णिमा सूर्य और चन्द्रमासे प्रसाधित थी। किसी दूसरे दिन कुलकमलका सूर्य अपना कोशालय देख रहा था।

घत्ता—जो सत्यघोष प्राचीन मन्त्रीवर वैर बाँधकर घरमें साँप हुआ था, भीषण, उसने रूठकर और हाथमें नकुलीकरण कर उसे काट खाया॥११॥

११. १. P °सरिससविसदाढा°। २. A कज्जलकण्हिरतंबिर°; P कज्जलकज्जलतंबिर°। ३. A °वग्घिणिखद्धउ। ४. P सीहचंदु। ५. AP पुण्णचंदु। ६. AP ससिरविहिं। ७. AP णियत्तु। ८. P तं रूसिवि। ९. AP डंकिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२

मुउ सल्लइवणि जायउ करिवरु असणिघोसु णामें दीहरकरु।
णवर ससामिमरणि कुज्झंतें मंतसारु सयलु वि बुज्झंतें।
गारुडदंडएण गारुडिएं[1] फणि आवाहिय मच्छरचंडिएं[2]।
भणिउ काइं महुं वयणु णियच्छहु दीवुं[3] धरेप्पिणु णिलयहु गच्छहु।
ता पइसरिवि जलणि[4] अहि णिग्गय अकयदोस जे ते सयल वि गय।
पच्चारियउ इयरु मंतीसें राउ महारउ भक्खिवि रोसें।
एवहिं एम काइं अच्छिज्जइ जिम सिहि खज्जइ जिम विसु छिज्जइ[5]।
ता चिंतइ कुंभीणसु णियमणि अम्हइं जाया गोत्ति अगंधणि।
उग्गिलिउ[6] विसु केम गिलिज्जइ कुलसामत्थु केम मइलिज्जइ।

घत्ता—मरणि[7] वि संपण्णइ गरुयगरु कुलछलु माणु ण मेल्लियउ॥
जालावलिजलियइ विसहरिण अप्पउं हुयवहि घल्लियउ॥१२॥

१३

अट्टज्झाणमरट्टें[1] सो मुउ कालवणंतरि हुयउ चमरीमउ।
खंति हिरण्णवई वणि वंदिवि दुक्किउ पुणु पुणु णिंदिवि[2] गरहिवि।
रामयत्त पियदुक्खें भग्गी पंचमहव्वयचरियहि लग्गी।
सिंहचंदु[3] चिरु रज्जु करेप्पिणु पुरु धरित्ति णियभायहु देप्पिणु।

१२

वह मरकर सल्लकीवनमें करिवर हुआ, अशनिघोष नामका लम्बी सूँड़वाला। अपने स्वामीके मरनेसे क्रुद्ध होकर और समस्त मन्त्र रहस्य जानते हुए गारुडदण्ड नामक गारुडीने मत्सरसे भरकर सर्पोंका आह्वान किया (बुलाया) और कहा, "मेरा मुख क्या देखते हो, दीप धारण कर घरसे चले जाओ।" तब आगमें प्रवेश करते हुए सभी साँप चले गये, जिन्होंने दोष नहीं किया था वे सभी गये। तब मन्त्रीशने कहा, "तुमने क्रोधसे हमारे राजाको काट खाया। अब इस समय तुम्हें क्यों यहाँ रहना चाहिए, जिस तरह आग क्षय करती है उसी प्रकार विष भी क्षीण करता है।" इसपर वह साँप अपने मनमें सोचता है कि हम अगन्धन कुलमें उत्पन्न हुए हैं। उगले हुए विषको हम किस प्रकार खा सकते हैं? अपने कुल-सामर्थ्यको क्यों, किस प्रकार मलिन करें?

घत्ता—मृत्युको प्राप्त होनेपर भी उसने महान् कुलगर्व और मान नहीं छोड़ा। साँपने अपने-आपको ज्वालावलीसे जलती हुई आगमें डाल दिया॥१२॥

१३

आर्तध्यानसे मरकर वह साँप कालवनमें चमरीमृग पैदा हुआ। प्रियके विरहसे भग्न होकर रामदत्ता वनमें हिरण्यवती नामकी आर्यिकाकी वन्दना कर और पापकी बार-बार निन्दा और गर्हा कर पाँच महाव्रतोंकी चर्यामें लग गयी। सिंहचन्द्र भी चिरकाल तक राज्य कर और फिर

---

१२. १. A गारुडियइ। २. A चडियइ। ३. A दिव्वु धरेप्पिणु; । P दीउ धरेप्पिणु। ४. P जलिणि। ५. A चिज्जइ। ६. AP उग्गिलियउ। ७. AP ते मरणे वि होंतए गरुयरु कुलुच्छलु।
१३. १. A °ज्झाणमरणेण य सो मुउ। २. AP गरहिवि णिंदिवि। ३. AP सीहचंदु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्णचंदु भयवंतु णवेप्पिणु पवरदियंबरवित्ति लएप्पिणु ।
जायउ इंदियदप्पवियारणु मणपज्जयणाणिउ णहचारणु ।
रामयत्तदेवीइ मणोहरि दिट्ठउ काणणि ललियलयाहरि ।
वंदिउ वंदणिज्जु णियमायइ पुणु आउच्छिउ सुमहुरवायइ ।
कुच्छि सलक्खण एक महारी तुहुं जणिओ सि जाइ भववइरी ।
अज्ज वि अच्छइ काइं रमारउ धम्मु ण गेण्हइ भाइ तुहारउ ।
तं णिसुणेप्पिणु भणइ भडारउ णिसुणहि ससयणभववित्थारउ ।

घत्ता—कोसलविसयंतरि धणभरिउ वुड्ढगाउं वइपरियरिउ ।
तहिं आसि भूगायणु विप्पवरु महुरइ बंभणीइ धरिउ ॥१३॥

१४

सज्जणमोहणि णावइ वारुणि धीय बिहिं मि उप्पणी वारुणि ।
मरिवि मयायणु पुरि साकेयइ अइबलणामणरिंदणिकेयइ ।
सुमईदेविहि गब्भि समायउ पुरिसु वि थीलिंगत्तहु आयउ ।
धीय हिरण्णवइ त्ति य जायउ भुवणि वियंभइ कम्मविवायउ ।
पोयणपुरवरि रूवरवण्णी पुण्णयंदणरणाहहु दिण्णी ।
जा चिरु महुर सा जि तुहुं हुई रामयत्त दोहं मि सिरिदूई ।
भद्दमित्तु सुउ तुह उप्पण्णउ सीहइंदु हउं णेहिं भिण्णउ ।
वारुणि पुण्णयंदु जाणिज्जसु अम्मिइ मोहु हवंतु खमिज्जसु ।

धरती अपने भाइयोंको देकर ज्ञानवान् पूर्णचन्द्रकी वन्दना कर, प्रवर दिगम्बर दीक्षा ग्रहण कर, इन्द्रियोंके दर्पका विदारण करनेवाला मनःपर्ययज्ञानी और आकाशचारी हो गया। रामदत्ता देवीने सुन्दर ललित लतागृहमें उसे देखा। उनकी अपनी माताने वन्दनीय उनकी वन्दना की और अत्यन्त मधुर वाणीमें पूछा, "हमारी कोंखसे एक तुम सुलक्षण हुए थे, जो संसारका शत्रु हो गया। लेकिन तुम्हारा भाई (पूर्णचन्द्र) आज भी लक्ष्मीमें अनुरक्त है। तुम्हारा भाई धर्म ग्रहण क्यों नहीं करता ?" यह सुनकर वह आदरणीय कहते हैं कि अपने जनका भव विस्तार सुनो।

घत्ता—कोशल देशमें वृत्तिसे घिरा हुआ धनसे भरा हुआ वृद्ध गाँव है। उसमें मृगायन नामका ब्राह्मण है, जो मधुरा नामकी ब्राह्मणीके द्वारा वरित था ॥१३॥

१४

उन दोनोंको वारुणी नामकी कन्या उत्पन्न हुई जो सज्जनोंको मोहनेवाली जैसे वारुणी (सुरा) थी। वह विप्रवर मृगायण मरकर, साकेत नगरीमें अतिबल नामक राजाके घरमें सुमति देवीके गर्भमें आया। वह पुरुष होते हुए भी स्त्रीलिंगमें आया। वह हिरण्यवती नामकी कन्याके रूपमें विख्यात हुआ। कर्मका विपाक संसारको बढ़ाता है। रूपसे सुन्दर वह पोदनपुरमें पूर्णचन्द्र नामक नरनाथको दी गयी। जो पहले मधुरा थी वही तुम इस समय रामदत्ता हुई हो, तुम दोनों ही लक्ष्मीकी दूती हो। भद्रमित्र तुम्हारा पुत्र उत्पन्न हुआ और स्नेहसे भिन्न मैं सिंहचन्द्र हूँ।

४. A णएप्पिणु। ५. A समहुर°। ६. AP मिगायणु। ७. AP वरिउ।
१४. १. P मियाणणु। २. AP सुम्मइदेविहि। ३. A थीलिंगि तहु। ४. P पुण्णइंद°। ५. AP सीहचंदु। ६. AP खवेज्जसु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्णचंदु जो पोयणसामिउ भद्दबाहुगुरुणा उवसामिउ ।
जो तुह जणणु तुज्झु गुरु जायउ महुं वि सो जि सुर[7]पुज्जियपायउ ।
ताउ महारउ कंतु तुहारउ जायउ वणि वारणु दुव्वारउ ।
कूरतिरियजम्में संमोहिउ हणणकामु सो मइं संबोहिउ ।
घत्ता—ओसरु गयवर मयर[8]यभमर मा दूसहु दुक्किउ करहि ॥
किं णिहणहि णंदणु अप्पणउं सीहयंदु णउ संभरहि ॥१४॥

१५

ता जाइं[1]भरु जायउ कुंजरु दुद्धरु गिरिवरगेरुयपिंजरु ।
झायइ इहु रिसि तणुरुहु मेरउ हउं जायउ वणि करि विवरेरउ ।
जो[2] चिरु भुंजंतउ[3] रस णव णव सो एवहिं भक्खमि तरुपल्लव ।
जो चिरु सेवंतउं वरणारिउ तहु एवहिं ढुक्कउं[4] गणियारउ ।
जो चिरु चंदणकुंकुमलित्तउ सो एवहिं कद्दमि[5] पंगुत्तउ ।
जो चिरु सुहुं सोवंतउ तूलिहि सो ए[6]वहिं हउं लोलमि धूलिहि ।
जो चिरु देंतउ दाणु सुदीणहं सो एवहिं महुयरसंताणहं ।
जो चिरु जाणंतउ छग्गुण्णउं तें किह पुत्तें[7] णिहणु पडिवण्णउं ।
डज्झउ[8] देव एय तिरियत्तणु ता मइं भणिउं मुणेप्पिणु तहु मणु ।

वारुणिको तुम पूर्णचन्द्र जानोगी। हे माँ, होते हुए मोहको आप क्षमा कीजिए। पूर्णचन्द्र जो पोदनपुरका स्वामी था, उसे भद्रबाहु गुरुने शान्त कर दिया है। तुम्हारे जो पिता तुम्हारे गुरु हैं देवोंके द्वारा पूज्यपाद वह मेरे भी गुरु हैं। मेरे पिता तुम्हारे स्वामी हैं। वह वनमें दुर्वार वारण हुए हैं। क्रूर तिर्यंच जन्मसे मोहित मारनेकी कामनावाले उसे मैंने सम्बोधित किया है—

घत्ता—जिसके मदमें भ्रमररत हैं, ऐसे हे गजवर, दूर हटो, तुम असह्य पाप मत करो। तुम अपने पुत्रको क्यों मारते हो? क्या तुम सिंहचन्द्रको याद नहीं करते? ॥१४॥

१५

तब गिरिवरकी गेरुसे पीले कुंजरको जाति स्मरण हो गया कि यह मेरा पुत्र मुनि होकर ध्यान करता है, मैं वनमें विपरीत गज हुआ हूँ, जो पहले मैं नव-नवका भोग करता था वह मैं अब इस समय वृक्षके पत्ते खा रहा हूँ। जो पहले उत्तम नारियोंका सेवन करता था उसके पास इस समय हथिनी पहुँची है। जो पहले चन्दन और कुंकुमसे लिप्त होता था, वह इस समय मैं कीचड़में फँसा हुआ हूँ। जो पहले रुईपर सुखसे सोता था, वह मैं इस समय धूलमें लोटता हूँ। जो पहले अत्यन्त दीनोंको दान देता था, वह मैं इस समय मधुकर सन्तानको दान (मदजल) देता हूँ। जो मैं पहले षड्गुण राजनीति जानता था, हे पुत्र, उसने इस निधनत्वको कैसे स्वीकार कर लिया। हे देव, इस स्त्रीत्वमें आग लगे। तब मैंने उसके मनको जानकर कहा—

---

७. AP पुज्जियसुरपायउ। ८. A मयरसभमर।

१५. १. A जाईसरु; P जाएभरु; K जाईसरु but corrects it to जाइंभरु। २. P omits this line. ३. A P भुंजंतउ। ४. A ढुक्कहि। ५. A कद्दमहि। ६. A सो एमहि लोलिवि तणु; P सो एमहि लोलेमि तणु। ७. A तं किह णिहणु पुत्त पडि°; P तें किह णिहण पुत्त पडि°। ८. A डज्झउ देव एहु; P डज्झउ एउ देव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—मा णिहणहि पडिकरि गिरितरु वि जीव णिहालिवि पउ घिवहि ॥
गय भक्खहि णिवडियदुमदलइं परकलुसिउ पाणिउ पियहि ॥१५॥

१६

मारंतउ वि अण्णु मा मारहि अप्पउ संसारहु उत्तारहि ।
तो[1] कुंभत्थलणवियमुणिंदें थिरु व्रउ[2] पालिउं तेण गइंदें ।
बंभचेरु दिढु[3] णिच्चलु धरियउं जिणपायारविंदु संभरियउं ।
खविउ कलेवरु कायकिलेसें परियट्टंतें कालविसेसें ।
केसरितीरिणितडेंगउ[4] जइयहुं खुत्तउ दुद्दमि कद्दमि तइयहुं ।
णवरि[5] चमरिजम्मंतरमुक्कें पिसुणें अवरभवंतरढुक्कें ।
कुंभारोहणु करिवि सदप्पें भक्खिउ गयवइ कुक्कुडसप्पें ।
मुउ हुउ उवसमेण[6] सोक्खावहि सहसारइ सुरभवणि रविप्पहि ।
सिरिहरु देउ काइं वण्णिज्जइ एहउं जाणिवि धम्मु जि[7] किज्जइ ।
हुउ धम्मिलु वाणरु रोसुक्कडु मारिउ[8] तेण रणे सो कुक्कुडु ।
णियपावें पंकप्पहि पत्तउ अण्णु वि एव जि जाइ पमत्तउ ।
घत्ता—जणु जिणवरवयणु ण पत्तियइ खाइ मासु मारिवि पसु ॥
संतावइ साहु समंजस वि णिवडइ णरइ सकम्मवसु ॥१६॥

घत्ता—तुम प्रतिगजको मत मारो, गिरितरु और जीवको भी देखकर पैर रखो। हे गज, गिरे हुए द्रुमदलोंको खाओ और दूसरोंके द्वारा कलुषित पानी पिओ ॥१५॥

१६

दूसरेके मारनेपर भी तुम मत मारो, संसारसे अपना उद्धार करो। तब जिसने अपने कुम्भस्थलसे मुनीन्द्रको नमस्कार किया है, ऐसे उस गजने स्थिर व्रतका पालन किया। उसने दृढ़ ब्रह्मचर्यको धारण कर लिया और जिनवरके चरणकमलोंका स्मरण किया। कायक्लेशसे अपने शरीरको क्षीण कर डाला। समयविशेष आनेपर जब वह केशरी नदीके तटपर गया तो दुर्दम कीचड़में फँस गया। चमरीमृग जन्मान्तरसे मुक्त, दूसरे जन्ममें पहुँचे हुए दुष्ट कुक्कुट सर्पने कुम्भपर चढ़कर गजपतिको काट खाया। मरकर वह उपशम भावसे, जो सुखोंकी सीमा है, रविके समान जिसकी प्रभा है ऐसे सहस्रार स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। उस श्रीधर देवका क्या वर्णन किया जाये, यह जानकर हमें धर्म करना चाहिए। धर्मिल वानर हुआ और उसने युद्धमें क्रोधसे उत्कट उस सर्पको मार डाला। अपने पापसे वह पंकप्रभा नरकमें पहुँचा। दूसरा प्रमत्त जीव भी इसी प्रकार जाता है।

घत्ता—लोग जिनवरके वचनका विश्वास नहीं करते, पशु मारकर मांस खाते हैं। योग्य साधुको सताते हैं और अपने कर्मके वश नरकमें जाते हैं ॥१६॥

१६. १. AP तो। २. AP वउ। ३. AP चिरु। ४. P °तडु गउ। ५. AP णवर। ६. A दमसमेण। ७. A वि। ८. A मारिउ रण्णि तेण सो; P °मारिउ तेण रण्णि सो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७

गयमोत्तियइं दंतजुयसहियइं वणि सिगालभिल्लें संगहियइं ।
वणिय सत्थवाहहु हिमवण्णइं पुरसेट्ठिहि धणमित्तहु दिण्णइं ।
सीहसेणतणयहु जसधामहु धणमित्तेण वि छणससिणामहु ।
कारिय तेण तमीयरकंतिहिं णियमंचयहु पाय गयदंतहिं ।
णियसीमंतिणियहि रुइरिद्धइं मोत्तियाइं कोलग्गि णिबद्धइं ।
हो केत्तिउ संसारु कहिज्जइ जं चिंतंतहं मइ दुम्मिज्जइ ।
मोहमहंतइ णिद्दइ सुत्तउ अच्छइ सुहि णं मुच्छिउ सुत्तउ ।
जाहि अम्मि तुह वयणें जग्गइ पुण्णयंदु जिणधम्महु लग्गइ ।
णियणंदणमुणिवरवयणुल्लउ तं आयण्णिवि सवणसुहिल्लउ ।
गय मायरि तहिं जहिं तं पट्टणु जहिं सो राणउ वइरिविहट्टणु ।

घत्ता—पणवंतहु पुत्तहु परियणहु अज्जइ सुमहुरु साहियउं ।।
जिह राएं जाएं मयगलिण णिज्जणु गहणु पसाहियउं ।।१७।।

१८

जं धणमित्तें आणिउ आयउ पल्लंकहं पयजोग्गउ जायउ ।
तं दियमुसलजुवलु तहु केरउ मुत्ताहलणिउरुंबउ सारउ ।

१७

वनमें शृगाल नामक भीलने दोनों दाँतोंके साथ गजमोतियोंका संग्रह कर लिया और वणिक् सार्थवाह नगर सेठ धनमित्रको सफेद रंगके मोती और हाथीदांत दे दिये। धनमित्रने भी वे सिंहचन्द्रके पुत्र यशके घर पूर्णचन्द्रको दे दिये। उसने भी चन्द्रमाके समान कान्तिवाले गजदन्तों-से अपने पलंगके पाये बनवा लिये तथा कान्तिसे समृद्ध मोतियोंको अपनी पत्नीके गलेमें लगा दिये। अरे संसारका कितना कथन किया जाये? जिसका चिन्तन करते हुए बुद्धि पीड़ित हो उठती है? मोहकी महान् निद्रासे भुक्त सुधीजन स्थित है, मानो मूच्छित या सोया हुआ हो। हे माँ, तुम जाओ। तुम्हारे वचनोंसे पूर्णचन्द्र जागेगा और जिनधर्मसे लगेगा। अपने पुत्र मुनिवरके कानोंको सुखद लगनेवाले वचन सुनकर वह माता वहाँ गयी जहाँ वह नगर था और जहाँ शत्रुओं-का नाश करनेवाला वह राजा था।

घत्ता—प्रणाम करते हुए पुत्र और परिजनसे आर्यिकाने सुमधुर वाणीमें कहा कि किस प्रकार राजाने मैगल गजके रूपमें गहन वनका सेवन किया ।।१७।।

१८

जो धनमित्रने लाकर दिया और जो पलंगके पाये बने वह हाथीके दोनों दाँतरूपी मूसल हैं तथा श्रेष्ठ मुक्ताफल समूह उसका (गजका) है जिसे तुम प्रणयिनीके गलेमें देखते हो। हे पुत्र, तुम श्रावक व्रतोंका पालन करो। हे पुत्र, यह संसार बड़ा विचित्र है। हे पुत्र, राजा भी कर्मरत

१७. १. AP सिगालभिल्लें गहियइं। २. A °सीमंतिणिपहरुइरिद्धइं। ३. AP कंठग्गि। ४. A मुच्छियसुत्तउ। ५. A पुण्णइंदु। ६. A अज्जिए। ७. A णिज्जणगहणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पणइणिकंठइ[1] णिहिउ णिहालहि पुत्तय सावयवय परिपालहि ।
पुत्तय णिरु विचित्तु संसारउ पुत्तय पहु वि होइ कम्मारउ ।
ता हियवउ पिउणेहें[2] भिण्णउं दंतिदंतु अवरुंडिवि रुण्णउं ।
पुत्तें परिवारेण वि सोइउ कुसुमहिं अंचिवि हुयवहि ढोइउ ।
उवसमेण हूई पविमलमइ थिउ घरि[3] धम्मणिरउ सो णरवइ ।
रामयत्त सणियाण मरेप्पिणु कप्पु महंतु सुक्कु पावेप्पिणु ।

घत्ता—मंदारदामसोहियमउडु रयणाहरणवियारधरु[4] ॥
सा हूई रविसंणिहणिलइ रविभा[5]भासुरु सुरपवरु ॥१८॥

१९

पुणु फणिरायहु गुज्झु ण रक्खइ आइच्चाहु कहंतरु अक्खइ ।
कालें जंतें सुकियलीलइ वरवेरुलियविमाणि[1] विसालइ ।
पुण्णयंदु[2] पुण्णें उप्पण्णउ वेरुलियप्पहु तहिं[3] संपण्णउ ।
विसमविसमसरबाण णिवारिवि दंसणणाणचरित्तइं धारिवि ।
संभूयउ संतहि णिरवज्जहि सीहचंदु उवरिमगेवज्जहि ।
इह रययायलि दाहिणसेढिहि धरणितिलयपुरु[4] रूढउ रूढिहि ।
पइ अइवेउ पुरंधि सुलक्खण रामयत्त जा[5] चिरु सेवियवण ।
सा सग्गाउ ढलिय पंकयकर सुय उप्पण्णी णामें सिरिहर ।

होता है। तब पूर्णचन्द्रका हृदय अपने पिताके स्नेहसे भर गया। वह उन हाथीदाँतोंका आलिंगन कर खूब रोया। पुत्र और परिवारने इस प्रकार शोक मनाया तथा फूलोंसे उनकी पूजा कर उन्हें आगमें डाल दिया। उपशम भावसे उसकी बुद्धि निर्मल हो गयी। राजा अपने ही घरमें धर्ममें स्थित हो गया (धर्मका आचरण करने लगा), रामदत्ता निदानपूर्वक मरकर महान् शुक्र स्वर्गमें गयी।

घत्ता—सूर्यके समान देवविमानमें* जिसका मुकुट मन्दार पुष्पमालासे शोभित है, जो रत्नाभरणोंका विचार करता है, तथा सूर्यकी आभाकी तरह भास्वर है, ऐसा देववर हुई ॥१८॥

१९

वह दिवाकर देव धरणेन्द्रसे फिर भी छिपा नहीं रखता और उससे कथान्तर कहता है—समय बीतनेपर, जिसमें पुण्यलीला है, ऐसे विशाल वैदूर्य विमानमें वह पूर्णचन्द्र अपने पुण्यसे देव उत्पन्न हुआ। कामदेवके विषम बाणोंका निवारण कर तथा दर्शन, ज्ञान और चारित्रको धारण कर, सिंहचन्द्र शान्त निष्पाप उपरि ग्रैवेयकमें उत्पन्न हुआ। इस भरतक्षेत्रके विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीमें परम्परासे धरणीतिलकपुर नगर है। उसका राजा अतिवेग और रानी सुलक्षणा थी। पहले जिसने वनमें साधना की थी, ऐसी जो रामदत्ता थी, वह स्वर्गसे च्युत होकर कोमल

---

१८. १. A °कंठहो। २. A पियणेहें ३. A घरधम्मि णिरउ। ४. AP °वियारहरु। ५. A रविभाभासुर; P रविभासासुर।

१९. १. A °विमाणविसालइ। २. A पुण्णइंदु। ३. P तहिं जि संपण्णउ। ४. AP °तिलयपुरि। ५. A जा सेविय चिरु वण। * भास्कर विमानमें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिण्णी पिउणा दरिसियणामहु अलयाणाहहु वड्ढियकामहु ।
घत्ता—सो पुण्णयंदु दिवि देवसुहुं माणिवि [६]हयविहलत्तणउं ॥
णियकम्मविवाएं णिवडियउ पुणु पत्तउ महिलत्तणउं ॥१९॥

२०

दरिसियराएं हूई दुहहर सिरिहराहि सुय णामें जसहर ।
दिण्णी ताएं कामासत्तहु दिणयराहपुरि सूरावत्तहु ।
सीहसेणु करि सिरिह[१]रु भणियउ जो सो एयहिं दोहिं मि जणियउ ।
रस्सिवेउ णंदणु संमाणिवि सिरि ढोइवि सिरिकलसहिं ण्हाणिवि ।
[२]आदरिसेण पासि [३]हयदंदहु लइयउ वउ जइयहु [४]मुणियंदहु ।
तइयहुं सिरिजसहरउ विणीयउ पावइयउ तहिं मायाधीयउ ।
मुणिचरणारविंदरइमइयहि पासु वसंतियाहि गुणमइयहि ।
पवणुद्धूयधवलधयमालउं सिद्धसिहरु णामेण जिणालउं ।
थावरजंगमविरइयमेत्तिइ किरणवेउ गउ वंदणहत्तिइ ।
तहिं हरिचंदु भडारउ पेक्खिवि थिउ अप्पउ रिसिदिक्खइ दिक्खिवि ।
घत्ता—सो आयहिं सिरिहरजसहरहिं दोहिं वि गिरिगरुयंगु गुणि ॥
गुह[५]कुहरि णिसण्णु णिरिक्खियउ पलियंकेण णिसण्णु मुणि ॥२०॥

करवाली श्रीधरा नामकी कन्या हुई। पिताने उसे, जिसकी कामनाएँ बढ़ी हुई हैं ऐसे अलकापुरीके राजाको दे दिया।

घत्ता—वह पूर्णचन्द्र स्वर्गमें देवसुख मानकर, च्युत होकर अपने कर्मविपाकसे जिसने दारिद्र्यको नष्ट कर दिया है, ऐसे स्त्रीत्वको पुनः प्राप्त हुआ ॥१९॥

२०

वह राजा दर्शकसे श्रीधरा रानीको दुःखहरण करनेवाली यशोधरा नामकी कन्या हुई। वह सूर्याभपुर (पुष्करपुर) के काममें आसक्त राजा सूर्यावर्तको दी गयी। जो सिंहसेन (राजा) श्रीधर कहा गया, वह इन दोनोंसे रश्मिवेग नामका पुत्र हुआ। रश्मिवेगका सम्मान कर, उसे सिरपर उठाकर एवं श्रीकलशोंसे अभिषेक कर राजा दर्शकने द्वन्द्वोंका नाश करनेवाले मुनिचन्द्रके पास जब संन्यास ले लिया, तो माँ और बेटी विनीता श्रीधरा और यशोधराने भी मुनियोंके चरणारविन्दमें जिनकी बुद्धि तीव्र है, ऐसी गुणमती वसन्तिका आर्यिकाके पास प्रव्रज्या ग्रहण कर ली। जिसपर पवनसे धवल ध्वजमालाएँ आन्दोलित हैं ऐसा सिद्ध शिखर नामका जिनालय था। स्थावर और जंगम प्राणियोंके प्रति जिसमें मित्रताका भाव है ऐसी वन्दनाभक्तिके लिए रश्मिवेग वहाँ गया। वहाँ आदरणीय हरिश्चन्दको देखकर वह स्वयं मुनिदीक्षा लेकर स्थित हो गया।

घत्ता—गिरिकी तरह अत्यन्त ऊँचे तथा पर्यंकासनमें आसीन गिरिगुहामें बैठे हुए उन मुनिको इन दोनों श्रीधरा और यशोधराने देखा ॥२०॥

---

६. A विहवविहत्तणउं।

२०. १. P सिरहरु। २. A आदरसेण। ३. P हयदंडहु। ४. AP मुणिचंदहु। ५. A °कुहरणिसण्णु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१

वंदिवि खरतवतावें खीणउ ताउ तासु णियडइ आसीणउ ।
छुडु कम्मक्खयवयणु पयच्छिउ रयणत्तयहु कुसलु फुडु पुच्छिउ ।
ता सो तंबचूलफणि[1] णारउ णरयहु णीसरेवि हिंसारउ ।
दीहु कालु संसारु[2] सरेप्पिणु अण्णण्णइं अंगाइं धरेप्पिणु ।
जायउ अजयरु विसमखयालइ फुल्लियवउलकलंबतमालइ ।
मुहविससिहिमसिकयसारंगउ[3] मोडियविडवुड्डवियविहंगउ ।
फणताडणफोडियधरणीयलु[4] वयणरंधघल्लियवणमयगलु[5] ।
वइवसदंडु चंडु अवलोइवि खणि आहारु सरीरु पमाइवि ।
मरणि वि धीरत्तेण ण मुक्कइं[6] तिण्णि वि पावइयइं[7] थिरु थक्कइं[8] ।
अहिणा दढदाढहिं णिद्दलियइं कसमसंति चावंतें गिलियइं ।
हेमणिवासविसेसवरिट्ठइ उप्पण्णइं[9] मरेवि काविट्ठइ ।

घत्ता—तहिं रुययविमाणि मणोरमणि जायउ अमरु वेरंकपहु[10] ॥
सो अजयरु चोत्थइ णरयबिलि णिवडिउ मुणिवररइयवहु ॥२१॥

२२

चक्कउरइ जयलच्छिसहायहु णयवंतहु अवराइयरायहु ।

२१

तीव्र तपतापसे क्षीण उन मुनिकी वन्दना कर वे उसके निकट बैठ गयीं। शीघ्र ही उसने 'कर्मक्षय हो' ये शब्द कहे तथा रत्नत्रयकी कुशलताका प्रश्न पूछा। तब वह हिंसारत नारकी कुक्कुट सर्प नरकसे निकलकर लम्बे समय तक संसारमें परिभ्रमण कर, भिन्न-भिन्न शरीरको धारण करता हुआ, जिसमें बकुल-कदम्ब और तमाल वृक्ष खिले हुए हैं ऐसे विषम क्षयकाल वनमें अजगर हो गया। जिसने अपने मुखकी विषज्वालासे हरिणोंको काला कर दिया है, जिसने वृक्षोंको मोड़ दिया और पक्षियोंको उड़ा दिया है, अपने फनोंकी मारसे धरणीतलको फोड़ दिया है, जिसने अपने मुखरन्ध्रमें वनके मैगल गजोंको डाल लिया है, ऐसे यमके दण्डकी तरह प्रचण्ड उसे देखकर तथा एक क्षणमें शरीरके आहारकी कल्पना कर, परन्तु उन लोगोंने मरणमें भी धीरत्वको नहीं छोड़ा। वे तीनों संन्यास लेकर स्थित हो गये। अजगरने अपनी मजबूत दाढ़ोंसे उन्हें निर्दलित कर दिया और कसमसाते हुए उन्हें चबाकर निगल लिया। वे लोग हेमनिवास विशेषसे वरिष्ठ कापिस्थ स्वर्गमें मरकर उत्पन्न हुए।

घत्ता—वहाँ सुन्दर रूप्यक विमानमें सूर्यप्रभ देव हुआ। मुनिवरका वध करनेवाला वह अजगर चौथे नरकमें गया॥२१॥

२२

जिन भगवान्‌के गुणगणका स्मरण करता हुआ वह सिंहचन्द्र श्रेष्ठ उपरिमग्रैवेयकसे अवतरित

---

२१. १. AP तंबचूलु। २. P संसारि। ३. AP °सिहिसिहहयसारंगउ। ४. A फलताडण°। ५. P °वणयरपलु। ६. A मुक्कउ। ७. P पव्वइयइं थक्कइं। ८. A थक्कउ। ९. A उप्पण्णाइं। १०. अमरवरंकपहु।

आयउ जिणगुणगणु[1] सुयरंतउ पवरुवरिमगेवज्जहि होंतउ ।
सीहचंदु णं हुउ कुसुमाउहु सुंदरिदेविहि सुउ चक्काउहु ।
चित्तमाल तहु पियरायाणी णं मयरद्धयबाणणिसेणी ।
ताहं बिहिं मि णं पुण्णविहायउ[2] अक्कप्पहु सुरु तणुरुहु जायउ ।
जो चिरु रस्सिवेउ अजयरहउ एहु[3] जि सो णरजम्म[4]समागउ ।
णामें वज्जाउहु जयलंपडु समरंगणि पल्हत्थियगयघडु ।
पुहईतिलइ णयरि रवितेयहु पियकारिणि[5]दइयहु मइवेयहु ।
सिरिहर काविट्ठहु पब्भट्ठी रयणमाल सुय हूई दिट्ठी ।
दिण्णी कुलिसाउहहु सणेहें[6] पुणु पवहंतें कालपवाहें ।
घत्ता—कीलंतहं पेम्मपरव्वसहं ताहं तेत्थु पयंडियपणउ[7] ॥
सा जसहर सग्गहु ओयरिवि रयणाउहु हूई तणउ ॥२२॥

२३

पिहियासउ णवेवि अवराइउ तउ चरंतु संतत्तु पराइउ ।
रज्जु करेवि सुइरु चक्काउहु गउ तायहु जि सरणु वियसियमुहु ।
तेण कयउं भीसणु वम्महरणु चरमदेहु जाणइ विहिविहरणु ।
दूरुज्झियपरमहिलापरधणु सिरि भुंजिवि तेत्तिउ[1] पविपहरणु ।
दंसणणाणचरित्ति[2] अभंतउ बप्पहु पासि पुत्तु णिक्खंतउ ।

होकर चक्रपुरमें विजयरूपी लक्ष्मीके सहायक न्यायवान् अपराजित राजाकी पत्नी सुन्दरी देवीका चक्रायुध नामका पुत्र हुआ, जो मानो कामदेव था। चित्रमाला उसकी प्रिय रानी थी, जो मानो कामदेवके बाणोंकी नसैनी थी। उन दोनोंसे सूर्यप्रभ देव पुण्यविभागकी तरह उत्पन्न हुआ। तथा अजगरसे आहत जो पुराना रश्मिवेग था, वही मनुष्य जन्ममें आया हुआ विजयका लम्पट वज्रायुध है, जो युद्धके प्रांगणमें गजघटाको धराशायी कर देता है। जिसका तेज सूर्यके समान है ऐसे प्रियकारिणीके पति मतिवेगसे पृथ्वीतिलक नगरमें कापिष्ठ स्वर्गसे च्युत होकर श्रीधरा रत्नमाला नामकी कन्या होते हुए देखी गयी। वह वज्रायुधको दी गयी। फिर कालप्रवाहके बहनेपर—

घत्ता—जिसने विनय प्रकट की है, ऐसी वह यशोधरा स्वर्गसे अवतरित होकर क्रीड़ा करते हुए और प्रेमके वशीभूत उन दोनों (वज्रायुध और रत्नमाला) के रत्नायुध नामसे उत्पन्न हुई ॥२२॥

२३

अपराजित पिहितास्रवको नमस्कार कर तपका आचरण करते हुए शान्तिको प्राप्त हुए। चक्रायुध भी बहुत समय तक वहाँ राज्य कर, विकसित मुख वह भी अपने पिताकी शरणमें चला गया। उसने भीषण तप किया। चरम शरीरी वह चारित्रको जानता था। जिसने परस्त्री और परधन छोड़ दिया है ऐसे वज्रायुध भी उतनी ही लक्ष्मीका भोगकर तथा दर्शन-ज्ञान और

२२. १. A गुणगुण । २. A पुण्णणिहायउ । ३. A एहु जो सो । ४. AP णरजम्मि समागउ । ५. AP पियकारणे । ६. P सणाहें । ७. A पयलियपणउ ।

२३. १. A तित्तिउ; P तित्तउ । २. P °चरित्तहं भत्तउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खवइ पुराइउ कम्मु गयालसु   तहु सुउ रयणाउहु रइलालसु ।
माणइ सोक्खु ण तिप्पइ भोएं   णं मयरहरु[3] तरंगिणितोएं ।
जायवेउ णं तरुपब्भारें   अइरारिउ वित्थरइ वियारें ।
घत्ता—अण्णहिं दिणि पवरुज्जाणहरि गिरिसरिखेत्तविहूसियउ ॥
सिरिवज्जदंतमुणिणा जणहु तिहुयणमाणु पयासियउ ॥२३॥

२४

विजयमेहु णामें कुंभीसरु   णिव[1]कल्लाणकारि जलहरसरु ।
तं णिसुणिवि मुणिभासिउ कंखइ   दिण्णु वि मासगासु ण वि भक्खइ ।
मंतिविज्ज आउच्छइ राणउ   महु तंबेरमु किं विद्दाणउ ।
ताव तेहिं अवलोइउ जाइवि   लक्खिउ तणु गुणदोस पलोइवि[2] ।
जंगलकवलु णिबद्धु ण ढोइउ   पयघियकूरपिंडु संजोइउ ।
सो कवलिउ करिणा करु देंतें   वज्जदंतु पुच्छिउ महिवंतें ।
मत्थएण वंदिवि मुणिपुंगमु   मासु ण खाइ कइं तंबेरमु ।
कहइ महारिसि जियवम्मीसरु   एत्थु भरहि छत्तउरि णरेसरु ।
पीयं[3]भद्दु णामें णं वम्महुं   सइदेवीवइ णावइ सयमुहुं ।
घत्ता—पीइंकरु पुत्तु पसिद्धु जइ मंतिवि जाणिउं चित्तमइ ॥
कमला इव कमला तासु पिय तणुरुहु ताहं विचित्तमइ ॥२४॥

चारित्रसे अभ्रान्त पुत्र भी पिताके पास दीक्षित हो गया। आलस्यसे रहित पूर्वार्जित कर्मको वह नष्ट करता है, उसका रतिकी लालसा रखनेवाला पुत्र रत्नायुध खूब सुख मानता है, भोगसे तृप्त नहीं होता, जैसे समुद्र नदियोंके जलसे तृप्त नहीं होता, जैसे वृक्षसमूहसे आग अत्यन्त उद्दीप्त होकर फैल जाती है।

घत्ता—एक दूसरे दिन प्रवर उद्यानगृहमें श्री वज्रदन्त मुनिने गिरि, नदी और क्षेत्रसे विभूषित त्रिभुवन-विभाग लोगोंको बताया ॥२३॥

२४

राजाका विजयमेघ नामका जो कल्याणकारी और मेघके समान स्वरवाला गजराज था, यह सुनकर मुनिके कथनको चाहने लगता है और दिये हुए मांसके कौरको नहीं खाता। राजा मन्त्रियों और वैद्योंसे पूछता है कि मेरा हाथी दुबला क्यों हो गया है। तब उन लोगोंने जाकर देखा और गुणदोष देखकर उसकी परीक्षा की। उसे बँधा हुआ मांसका कौर नहीं दिया गया, दूध, घी और भातका आहार दिया गया। सूँड़ देते हुए हाथीने उसे खा लिया। राजाने सिरसे प्रणाम करते हुए मुनिश्रेष्ठ वज्रदन्तसे पूछा कि यह हाथी मांस क्यों नहीं खाता। कामदेवको जीतनेवाले महामुनि कहते हैं, इस भरतक्षेत्रके छत्रपुरमें प्रीतिभद्र नामका राजा था, जो मानो कामदेव था। (वह वैसा ही था) जैसे इन्द्राणीका पति इन्द्र।

घत्ता—जगमें उसका प्रीतिकर नामका प्रसिद्ध पुत्र था और मन्त्री भी चित्रमति था। उसकी पत्नी कमला कमला (लक्ष्मी) के समान थी। उन दोनोंका पुत्र विचित्रमति था ॥२४॥

---

३. A मयइरु । ४ AP अवरहिं दिणि ।

२४. १. A णवकल्लाण° । २. पलोयवि; P पलाइवि । ३. A पीइभद्दु; P पाइभद्दु ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२५

धीरु धम्मरुइ सिरिगुरु मणिवि　　धम्मु अहिंसिल्लउ आयण्णिवि ।
मणि पडिवज्जिवि गुत्तिउ तिण्णि वि　　पीइंकरु[1] विचित्तमइ विण्णि वि ।
गंय[2] रिसिवउ लेप्पिणु साकेयहु　　सत्तभूमिसउहावलिसेयहु ।
खीर[3]रिद्धि उप्पण्णी जेट्ठहु　　णिज्जियणियजीहिंदियचेट्ठहु ।
चंदसूर णावइ गयणंगणि　　बेण्णि वि चडिय छुडु जि घरं[4]गणि ।
बहुइववासरीणमुणिपंथिय　　ते धीसेणंइ[5] वेसइ पत्थिय ।
थाहु भणंतियाइ पणवेप्पिणु　　ण थिय भडारा विगय वलेप्पिणु ।
कामिणीइ अप्पाणउ गरहिउं　　किं जीविउ मुणिदाणें विरहिउं ।
पुच्छइ लहुयउ साहु ससंसउ　　[6]कि आयो से ण गहियउ गासउ ।

घत्ता—गुरु अक्खइ महुमासासियहं णिप्पिह कयपरलोयकिसि ।
अविणीयहं रायहं कामिणिहिं दिण्णु वि पिंडु ण लेंति रिसि ॥२५॥

२६

तहि विचित्तमइ सुमरंइ[1] रामहि　　गीओलंबियमोत्तियदामहि ।
मयणसरोहें हियवउं भिण्णेउं[2]　　जंपंतहं हुंकारइ सुण्णउं ।
गउ सहाउ तंहु[3] मेल्लिवि मंदिरु　　णं इंदीवरासु इंदिंदिरु ।

२५

धीर-धर्मरुचि श्री गुरुको मानकर तथा अहिंसा लक्षण धर्म सुनकर, मनमें तीन गुप्तियाँ स्वीकार कर, प्रीतिंकर और विचित्रमति दोनों मुनिदीक्षा लेकर, सात भूमिवाले प्रासादोंसे युक्त साकेत नगरके लिए गये। अपनी जिह्वेन्द्रियकी चेष्टाको जीतनेवाले जेठे (प्रीतिंकर) को क्षीणास्रव ऋद्धि उत्पन्न हुई। उन दोनोंने घरके आँगनमें उसी प्रकार प्रवेश किया, जैसे सूर्य-चन्द्रने आकाशमें प्रवेश किया हो। अनेक उपवासोंसे क्षीण उन मुनिमार्गियोंको बुद्धिसेना नामकी वेश्याने, 'ठहरिए' कहते हुए और प्रणाम करते हुए प्रार्थना की। परन्तु आदरणीय वे मुड़कर ठहरे नहीं चले गये। उस वेश्याने अपनी निन्दा की कि मुनिदानके बिना जीवनसे क्या? छोटे साधुसे उसने अपने संशयकी बात पूछी कि वे क्यों आये और आहार नहीं लिया।

घत्ता—गुरु कहते हैं—"मधु-मांस खानेवालोंसे विरक्त तथा परलोककी खेती करनेवाले मुनि अविनीत राजाओंकी स्त्रियोंके द्वारा दिये गये आहारको ग्रहण नहीं करते" ॥२५॥

२६

जिसकी गर्दनपर मोतियोंकी माला अवलम्बित है ऐसी उस रामा (वेश्या) को विचित्रमति याद करता है। कामके तीरोंसे उसका हृदय विदीर्ण हो गया। बोलनेवालोंसे खाली हुंकार कर

२५. १. AP समिदिउ पंच घरेप्पिणु बिण्णि वि; A adds a new line after this : पीईकरु विचित्तमइ बेण्णि वि in second hand. २. A रिसि गयवउ। ३. A खीणरिद्धि। ४. AP °पंगणि। ५. A ते विसणोयइ; P तेधेसिणीयइ। ६. A कि आयहो घरे गहिउ ण गासउ; P कि आयहे घरे गहिय ण गासउ। T supports the reading of K।

२६. १. सुउरइ। २. AP छिण्णउं। ३. AP मेल्लिवि तहि।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सिसुमृगणे[4]यणइ पीवरथे[5]णियइ वंदिउ सो पडिगाहिउ गणियइ ।
दिण्णउ तासु भोज्जु जं चंगउं विडसाहुहि संपीणिउ अंगउं ।
सरसवयणु तहिं तेण णिउंजिउं दड्ढउं चरियधण्णु जं पुंजिउं ।
रत्तु मुणेवि ताइ[6] अवहेरिउ णारिहिं भुवणि को ण किर मारिउ ।
तो गुणवंतु ताम गरुयत्तणु[7] जाम ण लग्गइ मणसियमग्गणु ।
णिग्गउ गउ परिहेप्पिणु राउलु विसयालुद्धउ जायउ आउलु ।

घत्ता—पलपाएं जाएं मिट्ठएंण[8] सूयारउ णिवमणि चडिउ ॥
कय कामिणि दविणें तेण वस रिसि चारित्तहु परिवडिउ ॥२६॥

२७

मरिवि तुहारउ जायउ कुंजरु महु भासंतहु तिहुवणपंजरु ।
एहु एवहिं जोउ जाइंभरु[1] तुहुं वि बप्प अप्पाणउ संभरु ।
ता रयणाउहेण[2] णियतणयहु रज्जु समप्पिउ पयडियपणयहु ।
तासु जि गुरुहि पासि[3] तउ चिण्णउं तहु मायाइ तं जि पडिवण्णउं ।
बिण्णि वि संतइं मायापुत्तइं अच्चुइ अणिमिसत्तु संपत्तइं ।
अजयरु[4] पंकप्पहणरयंतहु णीसरियउ कह कह व कयंतहु ।
दारुणभिल्लहु सुउ अइदारुणु मंगिहि सवरिहि हुउ करिमारणु ।
तेण पियंगुदुग्गि अवलोइउ तउ तवंतु वज्जाउहु घाइउ ।

देता। अपने मित्रको छोड़कर वह उसके घर गया, मानो भ्रमर कमलपर गया हो। शिशुमृगनयनी स्थूल स्तनोंवाली उस वेश्याने उसकी वन्दना की, पड़गाहा और जो अच्छा भोजन था वह उस साधुको दिया। उस कपटी साधुका शरीर पीड़ित हो उठा। उसने उससे सरस शब्दोंमें बात की और जो संचित चारित्र धन था उसे खाक कर दिया। उसे अनुरक्त देखकर वेश्याने उसकी उपेक्षा की। स्त्रियोंके द्वारा संसारमें कौन नहीं मारा जाता? मनुष्य तभी तक गुणवान् है और उसका बड़प्पन है कि जबतक उसे कामदेवके बाण नहीं लगते। वस्त्र पहनकर वह निकल गया और राजकुलके लिए गया।[1] विषयोंका लोभी वह आकुल हो उठा।

घत्ता—मीठा मांस पकानेके कारण वह रसोइया राजाके मनमें चढ़ गया। धन देकर उस वेश्याको वशमें कर लिया, और वह मुनि चारित्रसे भ्रष्ट हो गया ॥२६॥

२७

वह मर कर तुम्हारा हाथी हुआ। मेरे द्वारा त्रिलोकका ढाँचा बताये जानेपर इसको इस समय जाति स्मरण हुआ है। हे सुभट, तुम भी अपनी याद करो। तब विनय प्रकट करनेवाले अपने पुत्रको रत्नायुधने राज्य सौंप दिया, और उन्हीं गुरुके पास तप ग्रहण कर लिया। उसकी माताने भी तप ग्रहण कर लिया। दोनों शान्त माता और पुत्र अपलकमात्रमें अच्युत स्वर्ग पहुँच गये। अजगर भी पंकप्रभा नरकमें युद्ध करते हुए, नरकभवका अन्त करते हुए दारुण भील और मंगी भीलनीसे हाथियोंको मारनेवाला अत्यन्त भयानक पुत्र हुआ। उसने प्रियंगु द्रुमके नीचे तप

४. AP °मिगणयणइ। ५. AP °थणिइ। ६. A ताइ। ७. AP गुरुयत्तणु। ८. A सिट्ठएण।
२७. १. APT जाईसरु। २. A रयणाहिवेण। ३. AP पासु। ४. AP अजगरु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुउ सव्वत्थसिद्धि संपत्तउ   सवरु वि पावें णरइ णिहित्तउ ।
सत्तमि तमतमपहि भीसावणि   पंचपयारदुक्खदरिसावणि ।

घत्ता—धादइसंडइ सुरवरदिसहि मेरुहि परविदेहि सरइ ॥
गंधिलदेसि उज्झाउरिहि णरवइ अरुहदासु वसइ ॥२७॥

२८

कामहुयासहु णं कालंबिणि   सुव्वय[1] णामें तासु णियंबिणि ।
अवर[2] वि तहु जिणयत्त घरेसरि   अमरमहामयरहरहु णं सरि ।
अच्चुयचुय तेएं णं दिणयरु   रयणमाल रयणाउहु सुरवरु ।
बिहिं वि बेण्णि संजणिय तणूरुह   विजय विहीसण णवपंकयमुह ।
ते बेण्णि मि णं[3] छणससिसायर   ते बेण्णि वि बलकेसव भायर ।
बीयहु णरयहु गयउ विहीसणु   दुद्धरु तउ करेवि संकरिसणु ।
लंतवि जायउ देउ महामहु   आइच्चाहु हउं जि सो सुहवहु ।
सम्मइंसणसासणि लग्गउ   मइं संबोहिउ णरयहु णिग्गउ ।
जंबुदीवएरावयउज्झहि   सिरिवम्महु सीमहि तणुमज्झहि ।
सो केसवु दुहुं भुंजिवि आयउ   लच्छिधामु णामें सुउ जायउ ।
रिसिहि विणासियवम्महलीलहु   चिरु पावइयउ पासि सुसीलहु ।
पत्तउ बंभकप्पि मेल्लिवि तणु   अट्ठगुणड्ढिवंतु देवत्तणु ।

करते हुए वज्रायुधको देखा और उसे मार डाला। वह मरकर सर्वार्थसिद्धि पहुँचे। वह भील भी मरकर, भयंकर पाँच प्रकारके दुःखोंका प्रदर्शन करनेवाले तमतमप्रभा नामक सातवें नरकमें डाल दिया गया।

घत्ता—धातकीखण्डमें पूर्वदिशामें सुमेरुपर्वतके अपर विदेहमें गन्धिल देशकी अयोध्या नगरीमें भोगयुक्त राजा अर्हद्दास रहता था ॥२७॥

२८

कामदेवकी अग्निको शान्त करनेवाली मेघमालाके समान उसकी सुव्रता नामकी पत्नी थी और भी उसकी जिनदत्ता नामकी गृहेश्वरी थी, जो मानो क्षीरसमुद्रके लिए नदी हो। अच्युत स्वर्गसे च्युत होकर और तेजमें मानो दिवाकरके समान रत्नमाल और रत्नायुध सुरवर भाग्यसे दोनोंके पुत्र हुए—नवकमलके समान मुखवाले विजय और विभीषण नामसे। वे दोनों ही पूर्णचन्द्रमा और समुद्र थे, वे दोनों ही बलभद्र और नारायण थे। विभीषण दूसरे नरक गया और बलभद्र दुर्धर तपकर महाआदरणीय लान्तव देव हुआ। सुखावह वही मैं आदित्य नामका देव हूँ। मेरे द्वारा सम्बोधित होनेपर सम्यग्दर्शनके शासनमें लगकर वह नरकसे निकला और जम्बूद्वीपके ऐरावतक्षेत्रकी अयोध्या नगरीमें वह केशव दुःख भोगकर आया और श्रीवर्माकी कृशोदरी पत्नी सीमासे श्रीधर नामका पुत्र हुआ। कामदेवकी लीलाका नाश करनेवाले सुशील मुनिके पास उसने दीक्षा ली। और शरीर छोड़कर ब्रह्म स्वर्गमें आठ गुणोंमें निष्ठा करनेवाले देवत्वको प्राप्त हुआ।

२८. १. AP सुव्वइय। २. AP अवरु वि। ३. A णंदण ससिसायर।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

घत्ता—वज्जाउहु सव्वत्थहु चविवि संजयंतु जिणतवि णिरउ ॥
तुहुं हुउ जयंतु बंभाउ चुउ रिसि णियाणसल्लेण मुउ ॥२८॥

२९

णायराउ जाओ सि भयंकरु इयरु वि पाउ मुणिंदखयंकरु ।
अह[1]मणिबद्धाउसु अहगारउ अहि हूयउ अंतिममहिणारउ ।
पुणु बालु[2]यपहि बालु णिमण्णउ दुक्खपरंपराइ अइण्णउ ।
तसथावरतिरिक्खभव[3]जालइ णिवडिउ हिंडमाणु गयकालइ ।
पविउलअइरावइ णइतीरइ भूयरमणि काणणि गंभीरइ ।
गोसिंगें घरिणिहि संखिणियहि संखुब्भ[4]ेंउ समुद्दसंखिणियहि ।
तावसेण संजणियउ तावसु पंचहुयासणु सहइ सतामसु ।
दिव्वतिल[5]यपुरि खेयरराणउ जोइवि जंतउ सक्कसमाणउ ।
णाम सुमालि णिबंध णिबद्धउ अण्णाणें णियतवहलु लद्धउ ।
खगधरणीहरि उत्तरसेणिहि णहयलवल्लहपुरि सुहजोणिहि ।
विज्ज[6]दाढु खगु पिय विज्जुप्प[7]ह मुहससियरधवलियदसदिसिवह ।
ताहं बिहिं मि हियइच्छियरूवउ हरिणसिंगु मुउ सुउ संभूयउ ।
विज्ज[8]दाढु णामें दढयरभुउ जगदूयाणुरूउ भडसंथुउ ।

घत्ता—इहु भाइ तुहारउ गरुययरु मेरुधीरु परिचत्तभउ ॥
एएं जम्मंतरवइरिइण हउ परमेसरु मोक्खगउ ॥२९॥

घत्ता—वज्रायुध सर्वार्थसिद्धिसे च्युत होकर जिनतपमें निरत संजयन्त हुआ। और ब्रह्म स्वर्गसे च्युत होकर तुम निदान शल्यसे मरकर जयन्त हुए ॥२८॥

२९

मुनिका घात करनेवाला दूसरा भी भयंकर नागराज हुआ, पापकर्मसे आयु बाँधनेवाला, पाप करनेवाला नाग (सत्यघोष) सातवें नरकमें उत्पन्न हुआ। फिर दुःख परम्परासे विदारित वह मूर्ख बालुकाप्रभ नरकमें निमग्न हुआ। त्रस, स्थावर और तिर्यंचोंकी जन्मपरम्पराके जालमें पड़ा हुआ वह घूमता रहा। समय बीतनेपर विशाल ऐरावती नदीके किनारे भूतरमण नामक गम्भीर जंगलमें गोश्रृंग तपस्वीकी भाग्यहीन शंखिका पत्नीसे मृगशंख नामका तपस्वी हुआ। सतामस वह पंचाग्नि तप सहन करता है। दिव्य तिलकपुरमें इन्द्रके समान जाते हुए सुमालि नामक विद्याधरको देखकर उसने निदान बाँधा और उस अज्ञानीने अपने तपका फल पा लिया। विजयार्ध पर्वतकी सुखयोनी उत्तर श्रेणीमें विद्युद्दंष्ट्र विद्याधर और उसकी प्रिया विद्युत्प्रभा थी, जो अपने मुखरूपी चन्द्रमासे दसों दिशापथ धवलित करती थी। वह मृगश्रृंग मरकर उन दोनोंसे मनचाहे रूपवाला पुत्र हुआ। विद्युद्दंष्ट्र नामका दृढ़तर बाहुओंवाला, योद्धाओंके द्वारा संस्तुत और यमदूतके समान—

घत्ता—यह महान् मेरुके समान धीर और परित्यक्त-भय तुम्हारा भाई, पूर्वजन्मके शत्रु इसके द्वारा आहत होकर परमेश्वर होकर मोक्ष गया है ॥२९॥

२९. १. A अहमु। २. P बालय°। ३. A भयजालइ। ४. A हरिणसिगु हूयउ तवसिणियहि; P संखु व भवसमुद्दसंखिणियहि। ५. A °पुरखेयर। ६. A वज्जदाढु। ७. A विज्जप्पह। ८. P विज्जुदाढु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०

एहउ भवसंबंधु वियारिउ एत्थु केण किर को णउ मारिउ।
म करहि तुहुं जिणधम्मविरुद्धउं णियमहि हियवउं रोसाइद्धउं।
तं णिसुणिवि पडिजंपइ उरयरु तुह वयणेण ण मारमि खेयरु।
पइं जिणमग्गु मज्झु वज्जरियउ भवकद्दमि पडंतु उद्धरियउ।
तइ वि साहु उवसग्गणिरुंभणु[1] लइ कीरइ खलदप्पणिसुंभणु[2]।
एयहु कुलि सिज्झंतु[3] म विज्जउ पुरिसहं दुद्धरविहुरसहेज्जउं[4]।
णारिहिं सिज्झिहिंति णियमालइ संजयंतपडिमापयमूलइ।
मागहमंडलकुवलयचंदहु इंदभूइ पुणु कहइ णरिंदहु।
हिरिबंधणि[5] पयणियखयरिंदहु णामु करिवि हिरिमंतु गिरिंदहु।
मुइवि णिबद्धवइरवंदिग्गहु लहु णीसल्लु चविवि सपरिग्गहु।
गउ फणि संजयंतु मुणि वंदिवि रविआहउ सुरवरु अहिणंदिवि।
सुरु जाइवि सुहि संठिउ लंतवि आउमाणि वोलीणि सउच्छवि।

घत्ता—इह भरहखेत्ति उत्तरमहुरि पुरि अणंतवीरिउ णिवइ॥
लायण्णरूवसोहग्गणिहि णारि मेरुमालिणिय सइ॥३०॥

३०

यह संसार-सम्बन्ध विदारित हो गया। यहाँ किसके द्वारा कौन नहीं मारा गया। इसलिए तुम जिनधर्मके विरुद्ध आचरण मत करो, रोषसे भरे हुए अपने मनका नियमन करो। यह सुनकर अजगर उत्तर देता है कि तुम्हारे शब्दोंसे मैं इस विद्याधरको नहीं मारूँगा। तुमने मुझे जिनमार्ग बताया है। संसारकी कीचड़में डूबते हुए मेरा उद्धार किया है। तो भी उपसर्गका रोकना जरूरी है। लो, इस दुष्टके दर्पका विनाश किया जाता है। इसके कुलमें विद्या सिद्ध नहीं होगी। इसके कुलमें लोगोंके कठोर दुःख सहन करना होगा। परन्तु स्त्रियाँ नियमके घर संजयन्त मुनिकी प्रतिमाके चरणोंमें विद्या सिद्ध करेंगी। मागधरूपी मण्डलके कुलचन्द्र इन्द्रभूति गणधर पुनः राजा श्रेणिकसे कहते हैं कि विद्याधरोंको लज्जाके बन्धनमें रखनेके कारण, पहाड़का नाम ह्रीमन्त रखकर तथा बाँधे हुए शत्रुसमूहके बंधनोंको मुक्त कर, तुम निःशल्य रहो—यह कहकर अपने परिग्रहके साथ संजयन्त मुनिको वन्दना कर, दिवाकर देवका अभिनन्दन कर धरणेन्द्र चला गया। सज्जन देव जाकर लान्तव स्वर्गमें स्थित हो गया। उत्सवोंके साथ आयुका मान समाप्त होनेपर—

घत्ता—इस भरतक्षेत्रकी उत्तर मथुरा नगरीमें अनन्तवीर्य राजा था, उसकी लावण्य-रूप और सौभाग्यकी निधि मेरुमालिनी नामकी सती स्त्री थी॥३०॥

३०. १. AP उवसग्गु। २. AP °दप्पणणिसुंभणि। ३. A सिज्जंतु। A ४. दुद्धरु विहुर°; P दुद्धरि विहुरि। ५. A हरिवद्धणि पयलिय°; P हिरिबद्धणि पयलिय°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१

आइच्चाहु मोहमयमद्दणु हूयउ मेरुणामु तहु णंदणु।
णियकुलसंतइवेल्लिवराहें अमयवईहि तेण णरणाहें।
हुउ सपुण्णविहवेणुद्दामें धरणु चविवि सुउ मंदरु णामें।
आयण्णह विरएप्पिणु अंजलि एयहं सयलहं भणमि भवावलि।
सीहसेणु करि सिरिहरु सुरवरु रस्सिवेउ रवितेउ वरामरु।
वज्जाउहु अहमिंदु पियारउ संजयंतु दय करउ भडारउ।
महुर रामदत्त वि जाणिज्जइ भक्खराहु पुणु देउ भणिज्जइ।
सिरिहर पुणु वसुसमदिवि [1]अणिमिसु रयणमाल अच्चुयसुरु सहरिसु।
पुणु [2]विजयंकु वि आइच्चाहउ जाउ मेरु पुणु मुणिगणणाहउ।
वारुणि छणविहु [3]वेरुलियप्पहु जसहर काविट्ठइ [4]रूयप्पहु।
रयणाउहु अच्चुयउ विहीसणु सक्करवसुमइणारउ भीसणु।
सिरिधामउ [5]सुउ बंभणिवासउ णिउ जयंतु फणिवइविवरासउ।
पुणु [6]मंदरगुणिगणसंजुत्तउ सिरिभूइ वि फणि चमरि पवुत्तउ।

घत्ता—कुक्कुडफणि [7]चोत्थयणरयरुहु अजयरु पंकप्पहदुहिउ॥
समरुअउ सत्तमपुहविभउ अहि पुणु [8]सयलदुक्खगहिउ॥३१॥

३१

मोहमदका मर्दन करनेवाला दिवाकर नामका देव उसका मेरु नामका पुत्र हुआ। और वह धरणेन्द्र च्युत होकर अमृतवती रानीसे, अपनी कुलसन्ततिरूपी लताके श्रेष्ठ वर तथा सम्पूर्ण वैभवसे उद्दाम उस राजाका मन्दर नामका पुत्र हुआ। (आप लोग) अंजलि जोड़कर इन सबकी भवावलिको सुनिए। सिंहसेन हाथी, श्रीधर सुरवर, रश्मिवेग अर्कप्रभवदेव (रवितेज), वज्रायुध सर्वार्थसिद्धिमें प्यारा अहमेन्द्र और संजयन्त आदरणीय (गणधर) दया करें। मधुराको रामदत्ता जाना जाये, फिर उसे भास्कर देव कहा जाता है, फिर श्रीधरा, फिर आठवें स्वर्गमें देव, रत्नमाला सहस्रार स्वर्गमें अच्युतदेव, विजयसे युक्त वीतभय और आदित्यप्रभ देव, तथा मेरु नामका गणधरोंका स्वामी हुआ। वारुणीका जीव, पूर्णचन्द्र वैडूर्यदेव यशोधरा, कापिष्ठ स्वर्गमें रुचकप्रभ रत्नायुध अच्युत विभीषण, दूसरी शर्करा भूमिका भीषण नारकी, श्रीधर्मा, ब्रह्मस्वर्गका देव, जयन्त, विवरोंमें आश्रित रहनेवाला धरणेन्द्र, फिर गुणियोंके गणोंसे संयुक्त मन्दर गणधर हुआ। श्रीभूति भी (सत्यघोष) सर्प चमर कहा गया।

घत्ता—कुक्कुट सर्प, चौथे नरकका नारकी, अजगर, पंकप्रभानरकका नारकी, शवर, सातवें नरकका नारकी, साँप, फिर समस्त दुःखोंको ग्रहण करनेवाला॥३१॥

---

३१. १. AP अणमिसु। २. A विजयंतु वि। ३. A वेरुलिय°। ४. A भूयप्पहु। ५. AP सुउ। ६. A मंदरमुणिगण°; P मंदरि मुणिगण°। ७. A चउत्थइ णरइ हुहु। ८. A सव्वदुक्ख°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२

हिंडिवि भव[1]संसारि परव्वसु पच्छइ हरिणसिंगु[2] हुउ तावसु ।
विज्जु[3]दाढु मुणिमारणदुज्जणु हो डज्झउ दुक्कम्मवियंभणु ।
भद्दमित्तु पुणु केसरिससहरु पुणरवि उवरिमगेवज्जामरु ।
चक्काउहु सासयगइ[4]गामिउ देउ समाहि मज्झु रिसिसो[5]मिउ ।
णविवि विमलवाहणु तित्थंकरु तेरहमउ परमेट्ठि सुहंकरु ।
गणहर गु[6]णु परिपालिवि णीरय मोक्खहु बे वि मेरु मंदर गय ।
महु पसियंतु देंतु गुणदित्तइं सुद्धइं दंसणणाणचरित्तइं ।
णिच्चल होउ फुरियणहविमलइ भत्ति भवंतयारिकमकमलइ ।

घत्ता—कह णिसुणिवि मेरुहि मंदरहु विभियँ[7] भरहणराहिवइ ॥
थिय जिणवरपयसंणिहियमइ पुप्फ[8]यंतकरसरिसरुइ ॥३२॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे संजयंतमेरुमंदरकहंतरं[9]
णाम सत्त[10]वण्णासमो परिच्छेओ समत्तो ॥५७॥

३२

फिर परवश समस्त संसारमें परिभ्रमण कर बादमें मृगशृंग तापस हुआ । फिर मुनियोंको मारनेवाला दुर्जन विद्युत्दंष्ट्र हुआ । अरे, दुष्कर्मके विस्तारमें आग लगे । भद्रमित्र (सेठ) सिंहचन्द्र, फिर उपरिमग्रैवेयकका देव, फिर शाश्वतगतिगामी चक्रायुध ऋषिस्वामी देव मुझे समाधि प्रदान करें । शुभ करनेवाले परमेष्ठी तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथको प्रणाम कर, गणधर गुणका परिपालन कर निष्पाप मेरु और मन्दर दोनों मोक्ष चले गये । वे मुझपर प्रसन्न हों, तथा गुणोंसे प्रदीप्त शुद्ध दर्शन, ज्ञान और चारित्र मुझे दें । स्फुरित आकाशके समान निर्मल तथा संसारका अन्त करनेवाले उनके चरणकमलोंमें मेरी निश्चल भक्ति हो ।

घत्ता—मेरु और मन्दरकी कहानी सुनकर भरत राजा विस्मित हुए । नक्षत्रोंकी किरणोंके समान कान्तिवाले तथा जिनवरके चरणकमलोंमें अपनी बुद्धि रखनेवाले वह स्थित रह गये ॥३२॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका संजयन्त मेरु मन्दर कथान्तर नामका सत्तावनवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५७॥

---

३२. १. A °संसार° । २. A °सिंगसुउ । ३. AP विज्जुदाढु मुणिमारणु । ४. A सासयगय° । ५. P °सामिउ । ६. A गुण । ७. A विभिउ । ८. AP पुप्फदंत° । ९. A °कहंतरवण्णणं । १०. AP सत्तावण्णा° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ५८

जेणेक्कें कम्मविमुक्कें जगु तं तेहउं लक्खिउं ॥[1]
कयडंभहिं हरिहरबंभहिं जं जम्मि वि णं[2] सिक्खिउं[3] ॥ध्रुवकं॥

१

जो ण महइ जीवहं सासणासु   जें होंतें मेल्लइ सासणासु ।
मुज्झइ सम्मत्तं खाइएण   थुव्वइ देवोहें[4] खाइएण ।
णायंदणमंसियसासणासु[5]   तहु णिसदिव्वभासासणासु ।
जम्मंतरि[6] भावियभावणासु   संखोहियवितरभावणासु ।
समदिट्ठिदिट्ठकंचणतणासु   तवजलणदड्ढदुक्कियतणासु ।
णाणंतणिवेसियतिहुवणासु[7]   दिहिवइपरिरक्खियवयवणासु ।
उब्भियसियायवत्तत्तयासु   एक्काहियवरवत्तत्तयासु ।
पवयणवारियपेसियसुरासु[8]   कमकमलणमियदेवासुरासु[9] ।

सन्धि ५८

कर्मसे विमुक्त जिस एकने उस वैसे संसारको देख लिया कि जिसे (देखना) दम्भ करनेवाले विष्णु, शिव और ब्रह्मा जन्म लेकर भी उसे देखना नहीं सीख सके ।

१

जो जीवोंके प्राणोंका नाश नहीं चाहता, परन्तु जिसके होनेसे जीव लक्ष्मी और चंचलता छोड़ देता है, उसे क्षायिक-सम्यक्त्व दिखाई देने लगता है। आकाशसे आकर देवता जिसकी स्तुति करते हैं, जिनका शासन नागेन्द्रके द्वारा नमनीय है, जिनके शब्द सर्वभाषात्मक होते हैं, जिन्होंने जन्मान्तरमें सोलह भावनाओंका चिन्तन किया है, जिन्होंने व्यन्तर और भवनवासी देवोंको क्षुब्ध किया है, जो अपनी सम्यक् दृष्टिसे स्वर्ण और तृणको समान समझते हैं, जिन्होंने तपकी आगमें दुष्कृतरूपी तृणोंको जला दिया है, जिनके ज्ञानमें तीनों लोक निवेशित हैं, जिन्होंने धैर्यरूपी बागड़से व्रतरूपी वनकी रक्षा की है, जिनके ऊपर श्वेत आतपत्र उठे हुए हैं, जो एकसे अधिक वरवार्तासे आशाओंको तृप्त करनेवाले हैं, जिन्होंने अपने प्रवचनोंसे मांस-मदिराके सेवनका निषेध किया है, जिनके चरण-कमलोंमें देव और असुर नमन करते हैं।

A has, at the beginning of this saṃdhi, the following stanza:—

संजुडियजाणुकोप्परगीवाकडिबन्धणावयवो ।
अणुहवइ वेरियं तुज्झ जं पावइ लेहओ दुक्खं ॥ १ ॥

P and K do not give it anywhere ।

१. १. P लक्खियउं । २. AP ण वि सिक्खि° । ३ P सिक्खियउं । ४. A देवेहिं; P देवोहि । ५. AP णाइंद° । ६. A जम्मंतरभमिय° । ७. PT णाणंति णिवे° । ८. PT °पेसीसुरासु । ९. AP °णमिय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—हयधंतहु गुणवंतहु अणिमिसकेउकयंतहु ॥
भयवंतहु अरहंतहु पणविवि पयइं अणंतहुं ॥१॥

२

पुणु कहमि कहाणउं कामहारि तहु केरउं सासयसोक्खकारि।
धादइसंडहु पच्छिमदिसाइ विस्थिण्णे मेरुपुव्विल्लभाइ।
परिहापाणियपरिभमियमयरि मणितोरणवंति अरिट्ठणयरि।
पउमावल्लहु पउमरहु राउ तहु एक्कु दिवसु जायउ विराउ।
आणियसंमाणियदुज्जणाइ णीणियअवमाणियसज्जणाइ।
अविणीयइ धणमयविंभलाइ पवणाहयतणजलल वचलाइ।
बहुकवडडविडणिवरंजियाइ भंगुरभावें णं लंजियाइ।
महिवइलच्छिइ एयइ खलाइ मणवारणबंधणसंखलाइ।
बद्धउ हउं णिवसमि एत्थु काइं अणुसरमि सत्ततच्चाइं ताइं।
सिरि ढोयमि तणयहु घणरहासु संसारइ सरणु ण को वि कासु।
इय चिंतिवि पासि सयंपहासु वउ लइयउ छिंदिवि मोहपासु।

घत्ता—अविहंगइं धरिवि सुयंगइं एयारह जिणदिट्ठइं ॥
कयवसणइं इंदियपिसुणइं जिणिवि पंच दप्पिट्ठइं ॥२॥

घत्ता—ऐसे अन्धकारको नष्ट करनेवाले, गुणवान्, कामके लिए यम, ज्ञानवान् अनन्तनाथ अरहन्तके चरणोंको प्रणाम करता हूँ ॥१॥

२

और फिर कामको नाश करनेवाली उनकी शाश्वत सुख देनेवाली कथाको कहता हूँ। धातकीखण्डकी पश्चिम दिशामें विस्तीर्ण मेरुके पूर्वभागमें अरिष्ट नगर है, जिसके परिखाजलमें मगर परिभ्रमण करते हैं और जो मणितोरणोंसे युक्त है। उसमें पद्मादेवीका प्रिय राजा पद्मरथ था। उसे एक दिन विराग हो गया। जिसमें दुर्जनोंको लाया और सम्मानित किया जाता है, तथा सज्जनोंको निकाला और अपमानित किया जाता है, जो अविनीत और धनके मदसे विह्वल है, जो पवनसे आहत तृण और जलकणोंकी तरह चंचल है, जो अत्यन्त कपटपूर्ण दुष्टविटोंसे राजाका रंजन करती है, जो अपने कुटिलभावसे दासीके समान है, मनरूपी हाथीको बाँधनेके लिए शृंखलाके समान है, ऐसी इस दुष्ट राज्यलक्ष्मीसे बँधा हुआ मैं यहाँ क्यों निवास करता हूँ, मैं उन सात तत्त्वोंका अनुसरण करता हूँ। अपने पुत्र घनरथको वह लक्ष्मी देता हूँ। संसारमें कोई किसीकी शरण नहीं है। यह विचार कर उसने स्वयंप्रभ मुनिके पास जाकर मोहरूपी बन्धनको काटनेके लिए व्रत ग्रहण कर लिया।

घत्ता—जिनके द्वारा उपदिष्ट ग्यारह श्रुतांगोंको धारण कर और दुःख उत्पन्न करनेवाले दर्पिष्ठ इन्द्रियरूपी दुष्टोंको जीतकर—॥२॥

---

१०. A भयवंतहु गुण° । ११. A हयवंतहु अर° ।
२. १. AP पावहारि । २. A विस्थिण्णमेरु° । ३. A भावि । ४. A °वाणिय° । ५. P °परिसमिय° ।
६. AP दिवसि । ७. A °कवडणिविडमइरंजियाइ; P कवडणिविडरंजियाइ । ८. P ढोइवि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

बंधिवि तित्थंकरणामगोत्तु संणासें मुउ जइवइ पवित्तु ।
सो पंकयसंदणु णरवरिंदु सोलहमइ दिवि हूयउ सुरिंदु ।
बावीसमहोवहिपरिमियाउ तिकरद्धपाणिपरिमाणु काउ ।
पुप्फंतरपवरविमाणवासि तणुतेओहामियदुद्धरासि ।
बावीसहिं पक्खहिं कहिं वि ससइ हियएण देउ आहारु गसइ ।
जाणवि तेत्तियहिं जि वच्छरेहिं सेविज्जइ अमरहिं अच्छरेहिं ।
अवहीइ रूवविवित्थोरु ताँम पेच्छइ छट्ठउं णरयंतु जाम ।
किं वण्णमि सुरवइ सुक्कलेसु तहु जीविउ थिउ छम्मासमेसु ।
जइयहुं तइयहुं धम्मोवयारि वज्जरइ कुवेरहु कुलिसधारि ।
इह भरहखेत्ति साकेयणाहु पहु सीहसेणु थिरथोरबाहु ।
इक्खाउवंसु कूरारिकालु जयसामासुंदरिसामिसालु ।
घत्ता—लहु एयहुं दिणयरतेयहुं करहि धणय पुरवरु घरु ॥
तं इच्छिवि सिरिण पडिच्छिवि चलिउ जक्खु पंजलियरु ॥३॥

४

उज्झाउरि कणयं कहिं वि पीय कत्थइ ससियंतजलेहिं सीय ।
कत्थइ हरिणीलमणीहिं काल णं महियलि णिवडिय मेहमाल ।

३

तीर्थंकर नाम-गोत्रका बन्ध कर वह पवित्र मुनिवर मृत्युको प्राप्त हुए। वह पद्मरथ श्रेष्ठ राजा सोलहवें स्वर्गमें राजा हुआ। उसकी आयु बाईस सागर प्रमाण थी। साढ़े तीन हाथ ऊँचा उसका शरीर था। वह पुष्पोत्तर विमानका निवासी था, अपने शरीरके तेजसे दुग्धराशिको तिरस्कृत करनेवाला था। बाईस पक्षमें कभी साँस लेता था और उतने ही वर्षोंमें जानकर मनसे वह देव आहार ग्रहण करता था। वह देवों और अप्सराओंके द्वारा सेवनीय था। अवधिज्ञानके द्वारा छठे नरकके अन्त तक जहाँ तक रूपका विस्तार है, वहाँ तक वह देखता था। शुक्ललेश्यावाले उस देववरका मैं क्या वर्णन करूँ? जब उसका जीवन छह मास शेष रह गया तो धर्मका उपकार करनेवाला इन्द्र कुबेरसे कहता है कि इस भरतक्षेत्रके अयोध्या नगरमें स्थिर और स्थूल बाहुवाला साकेतका राजा सिंहसेन है। वह इक्ष्वाकुवंशीय क्रूर शत्रुके लिए कालके समान, जयश्यामा सुन्दरीका स्वामी श्रेष्ठ है।

घत्ता—दिनकरके समान तेजवाले इनके लिए हे कुबेर, तुम पुरवर और घर बनाओ। उसे अपने सिरसे चाहकर और स्वीकार कर कुबेर हाथ जोड़कर चला ॥३॥

४

वह अयोध्या नगरी कहीं स्वर्णसे पीली और कहीं चन्द्रकान्त मणियोंसे शीतल है। कहीं

---

३. १. A °णामु; P °णाउं। २. AP मुवउ। ३. A तिकरद्धपाणिपरिमाणकाउ; P तिकरद्दपणियपरिमाणकाउ। ४. AP पुप्फुत्तर°। ५. AP °विवाण°। ६. A रूउ वियारु। ७. A जाम। ८. ताम। ९. A जीविउ तहु। १०. A °वंसकूरारि°।

४. १. AP कणयं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कत्थइ थिय मरगय पोमराय णं आहंडलधणुदंडछाय ।
कत्थइ हल्लइ चिंधेहिं चलेहिं णं णच्चइ कामिणि करयलेहिं ।
णं गायइ भमरहिं रुणुरुणंति पारावयसद्दें णं कणंति[3] ।
पुरि अक्खइ खुत्तउ कामबाणु दरिसइ व कुसुमधूलीवियाणु ।
जा णिम्मिय पालियणिहिघडेण सा मइं वण्णिज्जइ किं[4] जडेण ।
तण्णयरीसहु पियगेहिणीइ सोहग्गमहाजलवाहिणीइ ।
हिमहासकाससंकासवासि णिद्दायंतिइ तलिमप्पएसि ।

घत्ता—सुहुं सुत्तइ पुण्णपवित्तइ रयणिहि पच्छिमजामइ ॥
अवलोइय मणि पोमाइय सिविणावलि जयसामइ ॥४॥

५

करडगलियमयधारओ करि गिरिभित्तिवियारओ ।
वसहो सण्हासोहिओ खुरलंगूलपसाहिओ ।
पविणिहणहरुक्केरओ विसमो सीहकिसोरओ ।
णवपंकयसरसामिणी गयवरण्हविया गोमिणी ।
गुमुगुमंतमहुयरचलं दामजुयं सुहपरिमलं ।
पुण्णो लच्छिसहोयरो गयणे उइउ दिवायरो ।
कीलाए उड्डीणया सरभमिरा पाढीणया ।
वयणसमप्पियसयदला कलसा दोण्णि समंगला ।

हरे और नीले मणियोंसे काली है, मानो धरतीपर मेघमाला आ पड़ी हो। कहीं मरकत और पद्मरागमणि थे, मानो इन्द्रधनुषके दण्डकी कान्ति हो। कहींपर चंचल ध्वजोंसे आन्दोलित थी, मानो कामिनी अपने चंचल हाथोंसे नाच रही हो, मानो गुनगुनाते हुए भ्रमरोंके बहाने गा रही हो, मानो कबूतरोंके शब्दोंसे शब्द कर रही हो, मानो वह नगरी लगे हुए कामबाणको बता रही हो, मानो कुसुम परागके विज्ञानको दिखा रही हो। जिसका निर्माण निधिकलशोंकी रक्षा करनेवाले कुबेरने किया हो, उसका वर्णन मुझ जैसे जड़ कविके द्वारा कैसे किया जा सकता है? सौभाग्य-महाजलकी नदी, उस नगरीके राजा की प्रिय गृहिणी, हिम हास कांसके समान पलंगपर निद्रामें ऊँघती हुई—

घत्ता—पुण्यसे पवित्र उसने सुखसे सोती हुई रात्रिके अन्तिम प्रहरमें स्वप्नावली देखी और मनमें प्रसन्न हुई ॥४॥

५

गण्डस्थलसे मद झरता हुआ और गिरिभित्तिका विदारण करनेवाला गज, गल कम्बलसे शोभित और खुर तथा पूँछसे प्रसाधित वृषभ, वज्रके समान नखोंके समूहवाला विषम सिंह किशोर, नवकमलोंके सरोवरकी स्वामिनी और गजवरोंके द्वारा अभिषिक्त लक्ष्मी, जो गुनगुन करते भ्रमरोंसे चंचल है ऐसा शुभपरिमलवाला मालायुग्म, पूर्ण लक्ष्मीसहोदर (चन्द्रमा), आकाशमें उगा हुआ सूर्य; क्रीड़ामें उड़ता हुआ और जलमें घूमनेवाला मत्स्ययुगल।

२. A चंधें। ३. P कुणंति। ४. P णउ। ५. A सुहसुत्तइ।
५. १. AP विसमउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वियसियतामरसायरो मयरकरिल्लो सायरो ।
गरुयं गयरिउआसणं सुरसउहं तमणासणं ।
णिद्धं[2] णायणिहेलणं काओयरकयकीलणं ।
दिसिवहपत्तमऊहओ चंचिररयणसमूहओ ।
पसरियजालाणियकरो विमलो मारुयसहयरो[3] ।

घत्ता—फलु बालहि सिविणयमालहि पुच्छंतिहि धवलच्छिहि ॥
पइ भासइ तणुरुहु होसइ तिजगणाहु तुह कुच्छिहि ॥५॥

६

रायहु घरु सयमहपेसणेण कंचीणिबद्धकिंकिणिसणेण ।
आगय सिरि हिरि दिहि कंति बुद्धि विरइय जयसामहि[1] गब्भसुद्धि ।
माणिक्ककिरणपसरियवियार छम्मास पडिय घरि कणयधार ।
कत्तियपडिवयदिणि चंदसुक्कि[2] रेवइणक्खत्ति मलोहमुक्कि ।
गयरूवें गंगापंडुरेण कयसुकयमहीरुहफलभरेण ।
अवइण्णु सुराहिउ गब्भवासि चउभेयदेवपुंजाणिवासि[3] ।
अहिसित्तइं मायापियरयाइं मंगलकलसहिं जिणगुणरयाइं ।
तिहुवणवइगुरुहि गुरुत्तणेण समलंकियाइं सुपहुत्तणेण ।

घत्ता—णच्चंतहिं मउ गायंतहिं करहयतूरणिणायहिं ॥
घरपंगणु दिसि गयणंगणु छायउ अमरणिकायहिं ॥६॥

जिनके मुखोंपर कमल समर्पित हैं ऐसे मंगल सहित दो कलश, विकसित कमलवाला सरोवर; मगररूपी हाथियोंसे भरा समुद्र। भारी सिंहासन, अन्धकारको नष्ट करनेवाला सुरविमान, स्निग्ध नागभवन कि जिसमें साँप क्रीड़ा कर रहे हैं, जिसकी किरणें दिशापथोंमें व्याप्त हो रही हैं ऐसा रंग-बिरंगा रत्नसमूह। जिसका ज्वाला समूह फैल रहा है ऐसा विमल अनल।

घत्ता—स्वप्नमालाके फलको पूछनेवाली धवलाक्षिणी बालासे पति कहता है कि तुम्हारी कोखसे त्रिजगस्वामी पुत्र होगा ॥५॥

६

इन्द्र की आज्ञासे करधनीमें बँधे हुए किंकिणियोंके शब्दोंके साथ श्री, ह्री, धृति, कान्ति और बुद्धि देवियाँ आयीं और उन्होंने जयश्यामाकी गर्भशुद्धि की। माणिक्य किरणोंसे जिसका विकार प्रसरित हो रहा है, ऐसी स्वर्णधारा छह माह तक घरमें बरसी। कार्तिक कृष्णा प्रतिपदाके दिन, मल समूहसे मुक्त रेवती नक्षत्रमें गंगाके समान सफेद गजरूपमें, किये गये पुण्यरूपी वृक्षके फलके भारके कारण वह सुरराज, चार प्रकारके देवोंके पूजा-निवास उस गर्भवासमें आया। जिनवरके गुणोंमें रक्त माता-पिताका मंगल कलशोंसे अभिषेक किया गया। तथा त्रिभुवनपतिके पिताको गुरुत्व और सुप्रभुत्वसे अलंकृत किया गया।

घत्ता—नाचते हुए, कोमल गाते हुए, हाथोंसे बजाये गये तूर्योंके निनादोंवाले अमरनिकायोंसे गृह-प्रांगण, दिशाएँ और आकाशरूपी प्रांगण आच्छादित हो गया ॥६॥

---

२. P दिट्ठं णाय° । ३. P सहोयरो ।

६. १. A जयसामहो । २. A चंदमुक्कि । ३. AP °पुज्जापवेसे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

पुणु वसुवरिसणविहवें गयाइं सत्तरइं दोण्णि वासरसयाइं ।
गइ विमलरिसीसरि दीहराइं जइयहुं गयाइं णवसायराइं ।
जइयहुं अंतिमपल्लहु तिपाय गय णिद्दयणासियधम्मछाय ।
तइयहुँ भवभूरुहसत्तहेइ णाणत्तयधारि महाविवेइ ।
जेट्ठहु मासहु तमकसणपक्खि बारहमइ दिणि णासियविवक्खि
उप्पण्णउ तिहुवणसामिसालु सुरवरसंछण्णु णहंतरालु ।
दावियसुरकामिणिणट्टलीलु अवयरिवि अमरवइ चडिवि पीलु ।
परियंचिवि तं पुरवरु विसालु जणणिहि करि देप्पिणु कवडबालु ।

घत्ता—उत्तुंगहु रुम्ममयंगहु सूयरखद्धकसेरुहि ।
गउ सुंदरु देउ पुरंदरु णाहु लएप्पिणु मेरुहि ॥७॥

८

भावालउ णच्चंतहिं णडेहिं खीरोयखीरधाराघडेहिं ।
अहिसित्तु भडारउ भावणेहिं वणसुरवरेहिं जोइसगणेहिं ।
वइमाणिएहिं वीणाहरेहिं गायउ वंदिउ मउलियकरेहिं ।
भूसिउ परिहाविउ अरुहु संतु णाणें अणंतु कोक्किउ अणंतु ।
आणेप्पिणु पुणु पुरवरु पसण्णु देविंदें देविहि देउ दिण्णु ।
पणविवि सुरवइ गउ णियविमाणु वड्ढइ सिसु णं सिसुसेयभाणु ।

७

पुनः धनकी वर्षाके वैभवसे नौ माह बीतनेपर, जब विमल ऋषीश्वरको (निर्वाण प्राप्त हुए) नौ सागर समुद्र समय हो गया और जब अन्तिम पल्यके भी जिसमें निर्दया (हिंसा) के द्वारा धर्मकी छाया नष्ट हो गयी है, ऐसे अन्तिम भागमें संसाररूपी वृक्षके लिए आग, तीन ज्ञानके धारी और महाविवेकशील त्रिभुवन श्रेष्ठ, ज्येष्ठ शुक्लाकी निर्विघ्न द्वादशीके दिन उत्पन्न हुए। आकाशका अन्तराल सुरवरोंसे आच्छन्न हो गया। जिसने देवकामिनियोंकी नृत्य-लीलाका प्रदर्शन किया है, ऐसा इन्द्र ऐरावतपर चढ़कर और नीचे आकर उस विशाल पुरवरकी प्रदक्षिणा कर, मायावी बालक माताको देकर—

घत्ता—और स्वामीको लेकर, "जिसमें सुअरों द्वारा अलकंक (कसेरू) खाया जाता है, ऐसे ऊँचे स्वर्णमय सुमेरु पर्वतपर गया ॥७॥

८

भावपूर्ण नृत्य करते हुए नटों और क्षीरोदकके क्षीरधारा-घटोंके द्वारा भवनवासी देवों, व्यन्तर देवों, ज्योतिषदेवों, वैमानिकदेवों और वीणा धारण करनेवालों (किन्नरों) ने हाथ जोड़े हुए अभिषेक किया, गाया और वन्दना की। शान्त अरहन्तको भूषित किया और वस्त्र पहनाये। ज्ञानसे अनन्त होनेके कारण उनका नाम अनन्त रखा गया। पुनः नगरमें आकर देवेन्द्रने

७. १. P विमलि रिसी° । २. A °भूरुहछेत्तहेउ । ३. A °कसिण° । ४. AP अवयरिउ । ५. A कवडवाडु ।
६. A भम्ममयंगहु ।

८. १. P omits वण° ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

जोण्हालउ णिहिलकलाउ लेंतु सुहदंसणु कुवलयदिहि करंतु ।
कामग्गितावविरथरु हरंतु अकलंकु अखंडु पसण्णकंतु ।
घत्ता—जिणु वरिसहं कयजणहरिसहं माणियइच्छियसोक्खइं ।।
जैहिं कुंवॅरत्तणि थिउ सिसुकीलणि तहिं सत्तद्ध जि लक्खइं ।।८।।

९

पुणु तहु कइ पत्ती मयणताउ सिरि मुच्छिय चमरहिं दिण्णु वाउ ।
सिंचिय अहिसेयघडंबुएहिं सच्चेयण कय मइवरणएहिं ।
उट्ठिय लहु सत्तंगइं धुणंति अरि सुहि मज्झॅत्थु वि मणि मुणंति ।
णियपरियणणिवसणु संवरंति मिलियहं मंडलियहं मणु हरंति ।
अवलोइय णाहहु खेउं देंति वच्छयलि विउलि लीलइ वसंति ।
पुज्जिउ सूहउ इंदाइएहिं सीसेण णमंसिउ दाइएहिं ।
भुंजंतहु संपयसुहसयाइं पणदहसमाहं लक्खइं गयाइं ।
पण्णाससरासॅण देह तुंगु तवणीयवण्णु णं णवपयंगु ।
णाणामहिवालयकुलसमग्गि सो रयणिहि थिउ अत्थाणमग्गि ।
घत्ता—तहिं राएं भवियसहाएं उक्क पडंति णिरिक्खिय ।।
गय चंचल जिह सा सयदल तिह णररिद्धि वि लक्खिय ।।९।।

प्रसन्न देवको माताके लिए दे दिया । इन्द्र प्रणाम करके अपने विमानमें चला गया । बालक इस प्रकार बढ़ने लगा मानो ज्योत्स्नाका घर पूर्ण कलाओंको ग्रहण करता हुआ शुभदर्शन कुवलय (पृथ्वीमण्डल—कुमुद समूह) को सौभाग्य देता हुआ बालचन्द्र हो । कामाग्निके तापका विस्तार करते हुए अकलंक अखण्ड एवं प्रसन्नकान्त—

घत्ता—जिनभगवान् लोगोंको हर्ष प्रदान करते, इच्छित सुखोंको भोगते तथा शिशुक्रीड़ा करते हुए जब कुमारावस्थामें रह रहे थे तो साढ़े सात लाख वर्ष बीत गये ।।८।।

९

फिर उनके लिए प्राप्त राजलक्ष्मी मदनसे तापको प्राप्त हुई । मूच्छित उसे चमरोंसे हवा दी गयी, अभिषेकके घटजलोंसे उसे अभिषिक्त किया गया, मन्त्रीवरोंके द्वारा सचेत किया गया । वह शीघ्र उठी (राज्यलक्ष्मी) और अपने सात अंगोंको (स्वामी अमात्यादि) को धुनती है, शत्रु सुधी और मध्यस्थका अपने मनमें ध्यान करती है, अपने परिजनरूपी वस्त्रका संवरण करती है, मिले हुए माण्डलीक राजाओंका मनहरण करती है, देखनेपर जो खेद देती है, ऐसी वह उन स्वामीके वक्षस्थलपर निवास करती है उस सुभगके इन्द्रादिकोंने पूजा की तथा देवोंने नमस्कार किया । इस प्रकार सम्पत्तिके सैकड़ों सुख भोगते हुए उनके पन्द्रह लाख वर्ष बीत गये । उनका शरीर पचास धनुष ऊँचा था । स्वर्णके समान रंगवाले मानो नवसूर्य हों । जो नाना प्रकारके राजाओंके कुलोंसे परिपूर्ण हैं, ऐसे दरबारमें रात्रिके समय वह बैठे हुए थे ।

घत्ता—वहाँ भव्यसहाय राजा अनन्तने एक टूटते हुए तारेको देखा । जिस प्रकार वह चंचल तारा सौ टुकड़े होकर चला गया, उसी प्रकार उन्होंने मनुष्यके वैभवको देखा ।।९।।

---

२. P पसण्णु कंतु । ३. A omits जहिं । ४. AP कुमरत्तणि ।
९. १. AP °घडंमएहिं । २. AP °वरणरेहिं । ३. A मज्झत्थइं । ४. P °सरासणु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०

ता तणुरुइरंजियछणससीहिं संबोहिउ दिव्वमहारिसीहिं।
ण्हवणाइउं पोमासंगमेहिं कल्लाणु कयउं सुरपुंगमेहिं।
अप्पिवि अणंतविजयहु सधामु णीसेसु रज्जु धणु साहिरामु।
महुरज्जुणिकिंकिणिलंबमाणु आरूढउ सायरदत्तजाणु।
छट्ठेण जेट्ठमासंतरालि बारसिवासरि णित्तारवालि।
वरुणासाधुलिइ खरंसुजालि उज्जाणि सहेउइ घणतमालि।
पहु पंचमुट्ठि सिरि लोउ देवि सहसेण णिवहं सहुं दिक्ख लेवि।
बीयइ दिणि दिणयरकरफुरंति हिंडंतु देउ उज्झाउरंति।
राएं विसाहभूएं अणंतु जयकारिवि धरिउ महीमहंतु।
दिण्णउं तें तहु आहारदाणु पंचविहु वियंभिउ चोज्जठाणु।

घत्ता—णियमत्थहु दसदिसिवत्थहु खरतवचरणसमत्थहु॥
दुइ अद्दइं दुरियविमद्दइं गयइं तासु छम्मत्थहु॥१०॥

११

मासम्मि पहिल्लइ महुपमत्ति णिच्चंदइ दिणि मासंतपत्ति।
पुव्विल्लइ वणि आसत्थमूलि पंचमउ णाणु हयघाइमूलि।
संभूयउं लोयालोयगामि थिउ अरुहावत्थहि भुवणसामि।
आइय बत्तीस वि सुरवरिंद गह तारा रिक्ख खरंसु चंद।

१०

तब जिन्होंने अपने शरीरकी कान्तियोंसे पूर्णचन्द्रको रंजित किया है ऐसे दिव्य—महा-ऋषियों (लौकान्तिक देवों) ने उन्हें सम्बोधित किया। लक्ष्मी सहित देवश्रेष्ठोंने अभिषेक कर दीक्षा कल्याणक किया। अनन्तविजयके लिए अपना घर, समस्त राज्य और सुन्दर धन देकर, मधुर ध्वनिवाली किंकिणियोंसे शोभित सागरदत्ता नामकी शिविकामें चढ़कर ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशीके दिन (जबकि चन्द्रमा उदित नहीं हुआ था), सूर्यके पश्चिम दिशामें ढलनेपर, सहेतुक उपवनमें पाँच मुट्ठियोंसे केश लोंच कर एक हजार राजाओंके साथ स्वामीने दीक्षा ले ली। दिनकरकी किरणोंसे चमकते हुए दूसरे दिन अयोध्या नगरीमें विहार करते हुए धरतीमें पूज्य अनन्तनाथको राजा विशाखभूतिने जयजयकार कर रोक लिया। उसने उन्हें आहार दान दिया। वहाँ पाँच आश्चर्यके स्थान हुए।

घत्ता—नियमोंमें स्थित दिगम्बर तीव्रतर तप करनेमें समर्थ और छद्मस्थ उनके पापोंको नाश करनेवाले उनके दो वर्ष बीत गये॥१०॥

११

मधुसे प्रमद चैत्रकृष्ण अमावस्याके (चन्द्रविहीन) दिन पूर्वोक्त वन (सहेतुकवन) में अश्वत्थ वृक्षके नीचे चार घातिया कर्मोंका नाश करनेपर उन्हें पाँचवाँ ज्ञान उत्पन्न हुआ। वह लोकालोकको देखनेवाले हो गये तथा भुवनस्वामी अर्हत्-अवस्थामें स्थित हो गये। बत्तीसों

१०. १. AP देसु। २. A घणसाहिरामु। ३. AP सायरदत्तु। ४. AP °फुसिइ। ५. A विसाहभूई; P वसाहभूइ। ६. A तं तहु। ७. AP चोज्जु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तडि मेह सुवण्ण दिसग्गिणाय मरु जलणिहि थणियासुरणिहाय ।
किंणर किंपुरिस महोरगाय गंधव्व जक्ख रक्खस पिसाय ।
संपत्त भूय भत्तिल्लभाव[1] सयल वि थुणंति जय देव देव ।
जय जय सामासुय जय अणंत जय मिहिरमहाहिय गुणमहंत ।
जय जणणणिहण[2]मयरहरसेउ जय सिव सासय[3]सिवलच्छिहेउ ।
घत्ता—जिणणामें भत्तिपणामें पावमहा[4]तरु भज्जइ[5] ॥
गयगव्वहं सव्वहं[6] भव्वहं भावसुद्धि संपज्जइ ॥११॥

१२

अंतरियउं जं महिसुरहरेहिं जं सुहुमु[1] ण याणिउं जगि परेहिं ।
जं केण वि णउ दिट्ठउं सुदूरु[2] तं पइं पयडिउं तुहुं भावसूरु ।
धणपुत्तकलत्तइं अहिलसंति भोयासइ तावस तउ करंति ।
तुहुं पुणु संसारु जि संपुसंतु[3] संचरहि महामुणि[4] चरिउं संतु ।
दिणि अच्छइ घरि वावारलीणु णिसि सोवइ जणु समदुक्खरीणु ।
तुहुं पुणु रिसि अहणिसु[5] जग्गमाणु दीसहि परिमुक्कपमायठाणु ।
बाहिरतवेण पइं अंतरंगु रक्खिउं णीसेसु वि मुइवि संगु ।
तवतावें पइं ताविउं णियंगु विद्दवियउ पइं दुद्दमु अणंगु ।

सुरवरेन्द्र उसमें आये। ग्रह, तारा, नक्षत्र, सूर्य और चन्द्रमा भी, विद्युत, मेघ, यक्ष, दिग्गज, पवन, समुद्र, गरजता हुआ असुर-समूह, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और पिशाच और भक्तिभावसे भरे भूत वहाँ पहुँचे। सभी देव स्तुति करते हैं, 'हे देव ! आपकी जय हो। हे श्यामपुत्र, अनन्त, आपकी जय हो। सूर्यसे भी अधिक तेजवाले और गुणोंसे महान् आपकी जय हो। हे जन्म-मृत्युके समुद्रके लिए सेतुके समान आपकी जय हो। हे शाश्वत मोक्षरूपी लक्ष्मीके कारण आपकी जय हो।

घत्ता—भक्तिसे प्रणम्य जिननामके द्वारा पापरूपी वृक्ष खण्डित हो जाता है और गर्वसे रहित समस्त भव्योंकी भावशुद्धि हो जाती है ॥११॥

१२

जो धरती और देव विमानोंसे अन्तर्हित है, जो सूक्ष्म है और जगमें दूसरोंके द्वारा नहीं जाना जाता, जो इतना दूर है कि किसीने नहीं देखा, उसे हे भावसूर्य, तुमने प्रकट कर दिया। तापस लोक धन, पुत्र और कलत्रकी इच्छा करते हैं और भोगकी आशासे तप करते हैं, लेकिन आप संसारका सम्मार्जन करते हुए चलते हैं। हे महामुनि, आप शान्त चारित्रका आचरण करते हैं। जन दिनमें घरमें व्यापारमें लीन रहता है, और रात्रिमें श्रमके कष्टसे थककर सो जाता है। आप ऋषि हैं, आप दिनरात जागते रहते हैं और प्रमादके स्थानसे आप मुक्त दिखाई देते हैं। समस्त परिग्रहको छोड़कर आपने बाह्य तपसे अन्तरंगकी रक्षा की है। तपतापसे आपने अपने शरीरको तपाया है और आपने दुर्दम कामदेवका दमन किया है।

११. १. A °भत्तिल्लभाय। २. P °णिहल°। ३. AP °जयलच्छि। ४. P महाभरु। ५. A भंजइ। ६. AP भव्वहं सव्वहं।

१२. १. P सुहमु। २. A सदूरु। ३. A संफुसंतु। ४. AP महामुणि सच्चरित्तु। ५. A अहणिसि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—अणुसंकुलु हत्थय[6]लामलु जिह तिह णिहिलु[7] णिरिक्खिउं ॥
मयमत्तउं मयणासत्तउं तिहुवणु पहुं[8] पइं रक्खिउं ॥१२॥

१३

णिम्मुक्ककसाय जिणेसरासु जाया गणहर पण्णास तासु ।
पुव्वंगधराहं सहासु वुत्तु तं तिउणउं वाइहिं दुसयजुत्तु ।
चालीससह[1]स एक्कूण भणमि पंच जि सयाइं भिक्खु[2]यहं गणमि ।
चत्तारि सहस तिण्णि जि सयाइं अवहीहराहं पालियवयाइं ।
वयसहसइं केवलदंसणाहं मणपज्जवणाणमहागुणाहं ।
तेत्तियइं जि मयविद्दावणाहं वसु[3]समयइं सिद्धविउ[4]व्वणाहं ।
अट्ठेव सहासइं एक्कु लक्खु संजमधारिहिं सण्णा[5]णचक्खु ।
सावयहं लक्ख दो चउ भणंति सावइहिं महाकइ किर गणंति ।
गयसंख तिय[6]सगण वंदणिज्ज संखेज्ज तिरिक्ख णमंसणिज्ज ।
संमेयहु सिहरु समारुहेवि छेइल्लु झाणु दढयरु धरेवि ।
विच्छिण्णउं किरियाजालु सयलु ओसारिवि देउ तिदेहणियलु ।
गउ मोक्खहु अमवासा[7]णिसियहि गुरुजोयब्भासें तहिं जि दियहि ।
रिदुसमसहसाइं स[8]उत्तराइं सिद्धाइं रिसिहिं पणमामि ताइं ।

घत्ता—अणुओंसे व्याप्त यह समस्त संसार हे प्रभु, आपने जिस प्रकार हाथपर रखा हुआ आंवला, उसी प्रकार समस्त संसारको देखा है और मदमत्त तथा काममें आसक्त त्रिभुवनकी रक्षा की है ॥१२॥

१३

उन जिनेश्वरके कषायसे रहित पचास गणधर थे। पूर्वांगधारी एक हजार कहे गये हैं, तीन हजार दो सौ वादी कहे गये हैं। उनतालीस हजार पाँच सौ भिक्षुक थे, चार हजार तीन सौ व्रतोंका पालन करनेवाले अवधिज्ञानधारी थे। केवलज्ञानी पाँच हजार, मनःपर्ययज्ञानी महागुणसे युक्त पाँच हजार। विक्रियाऋद्धिसे सिद्ध मुनि आठ हजार थे। संयम धारण करनेवाली और ज्ञाननेत्र आर्यिकाएँ एक लाख आठ हजार थीं। महाकवि श्रावक दो लाख गिनते हैं और श्राविकाएँ चार लाख। वन्दनीय देवगण असंख्यात था और नमन करने योग्य तिर्यंच संख्यात थे। सम्मेद शिखरपर आरोहण कर तथा दृढ़तासे अन्तिम ध्यान धारण कर उन्होंने समस्त क्रिया-जालको विच्छिन्न कर दिया। देव तीन शरीरोंकी शृंखलाको हटाकर, चैत्र कृष्णा अमावस्याके दिन, गुरुयोगमें छह हजार एक सौ मुनियोंके साथ सिद्धिको प्राप्त हुए, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।

६. A हत्थयतला° । ७. AP सयलु । ८. AP पइं पहु ।
१३. १. A °सहासेक्कूण । २. AP भिक्खुयहं । ३. A वसुसहस सिद्ध°; P वसुसहसइं सिद्ध° । ४. AP °वेउव्वणाहं । ५. A सणाणचक्खु । ६. P omits गण । ७. A अमवासहो णिसाहे; P अमवासाणिसीहि । ८. A सदुत्तराइं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तमहारहिं जलणकुमारहिं जिणसरीरु संकारिउ[१] ॥
णीसल्लहिं घल्लियफुल्लहिं अमरिंदहिं जयकारिउ ॥१३॥

१४

[१]सं[२]पुण्णदुवालसतवविहूइ पुणु भासइ गणहरु इंदभूइ ।
अवरु वि समदमसंजमपसत्थि वित्तउं अणंतजिणणाहतित्थि ।
सुप्पहपुरिसुत्तमगुणणिहाणु सुणि मागहेसहरिबलपुराणु ।
पंचसयधणुण्णयमणुयदेहि इह जंबुदीवि सुरदिसिविदेहि ।
उत्तंगु[३] काउ दिण्णायणाउ णंदउरि महाबलु णाम राउ ।
पयपालहु अरिहहु पय णवेवि रिसि जायउ तणयहु रज्जु देवि ।
मई[४] णउ रुद्धी सल्लें अणेण तणुचाउ करिवि सल्लेहणेण ।
उप्पण्णउ कयदहं[५]विहवियप्पि सुर सहसारइ सहसारकप्पि ।
अट्ठारहसायरपरिमियाउ किं वण्णमि सुरवरु सुद्धभाउ ।
घत्ता—इह भारहि पयडियसुहवहि पोयणपुरि चिरु होंतउ ॥
वसुसेणउ तियं[६]मणथेणउ णरवइ वइरिकयंतउ ॥१४॥

घत्ता—तमका नाश करनेवाले अग्निकुमार देवोंने जिन शरीरका संस्कार किया। निःशल्य तथा पुष्पवर्षा करते हुए देवोंने उनका जय-जयकार किया ॥१३॥

१४

सम्पूर्ण द्वादश प्रकारके तपकी विभूति इन्द्रभूति गणधर कहते हैं, शम-दम और संयमसे प्रशस्त अनन्तनाथ तीर्थंकरके तीर्थमें एक और वृत्तान्त हुआ। सुप्रभ और पुरुषोत्तमके गुणसमूहसे युक्त, नारायण और बलभद्रका पुराण हे मागधेश, सुनो। इस जम्बूद्वीपमें जहाँ मनुष्यके शरीरकी ऊँचाई पांच सौ धनुष है ऐसे पूर्वविदेहके नन्दपुरमें दिग्गजकी तरह नादवाला उत्तुंग शरीर महाबल नामका राजा था। वह प्रजापाल (नामक) अर्हत्‌के चरणोंमें प्रणाम कर, अपने पुत्रको राज्य देकर मुनि हो गया। किसी भी प्रकार (किसी भी मूल्यपर) उसने मतिको शल्यसे अवरुद्ध नहीं होने दिया। सल्लेखनाके द्वारा शरीरका त्याग कर, जिसमें दस प्रकारके कल्पवृक्ष हैं, ऐसे सहस्रार स्वर्गमें देव हुआ। उसकी आयु अठारह सागर प्रमाण थी। उस शुद्धभाववाले देवका मैं क्या वर्णन करूँ ?

घत्ता—इस भारतवर्षमें, पहले जिसमें शुभपथ प्रकट है ऐसा पोदनपुर नगर था। उसमें स्त्रीके मनको चुरानेवाला और शत्रुओंके लिए यमके समान राजा था ॥१४॥

---

९. A सक्कारिउ ।
१४. १. P has before this: जिणतणु पणवेप्पिणु गउ सुरिंदु, धरणेंदु णरिंदु खगिंदु चंदु; K gives it in margin in second hand । २. A संपुण्णु । ३. AP उत्तुंग काउ । ४. AT मइ णावरुद्ध । ५. AP दहवियवियप्पि । ६. AP तियमण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५

मुहइंदोहामियसरयचंद　　महएवि तासु णामेण णंद ।
रइरहसपसाहियजोव्वणाइं　　अच्छंति जाम बिण्णि वि जणाइं ।
तामायउ जियपडिवक्खदंडु　　णामेण चंडसासणु पयंडु ।
अइरावयकरथिरथोरबाहु　　राणउ सुहडग्गणि मलयणाहु ।
वसुसेणें मण्णिउ परममित्तु　　तहु कंतहि लग्गउ तासु चित्तु ।
अवलोइवि णंदहि चारु वयणु　　विडु जूरइ ओहुल्लंतवयणु ।
अवलोइवि णंदहि खीणु मज्झु　　विडु कुप्पइ तप्पइ हियमज्झु ।
विडु सहहुं ण सक्किउ मयणबाणु　　अवहरिवि णंद गउ णिययठाणु ।
वसुसेणें दइयविओइएण　　असमत्थें विहिणित्तेइएण ।
वउ लइउ पासि णासियसरासु　　सेयंसणामजोईसरासु ।
अप्पउं दंडिउ छंडिउ ण माणु　　संमोहजणणु बद्धउं णियाणु ।
घत्ता—तवचरणहु खंचियकरणहु हउं फलु एत्तिउं मग्गमि ॥
परयारिउ सो खलु वइरिउ मारिवि परभवि वग्गमि ॥१५॥

१६

तहु रुहिरवारिधाराइ जेव　　परिहवपडु धोवमि होउ तेव ।
इय बंधिवि दुट्ठु णियाणसल्लु　　मुउ सो कालें मोहंधुगिल्लु ।
संभूयउ तहिं सहसारसग्गि　　जिणतवहलेण माणियसमग्गि ।

१५

अपने मुखचन्द्रसे शरद्‌चन्द्रको पराजित करनेवाली उसकी नन्दा नामकी महादेवी थी। जिनका यौवन रतिरससे प्रसाधित है, ऐसे वे दोनों जबतक वहाँ थे तब जिसने शत्रुपक्षके दण्डको जीत लिया है, ऐसा चण्डशासन नामका राजा आया। ऐरावतकी सूँड़के समान स्थिर और स्थूल हाथोंवाला तथा सुभटोंमें अग्रणी वह मलय देशका राजा था। वसुषेणने उसे अपना मित्र मान लिया। उसकी पत्नीसे उसका चित्त लग गया। नन्दाका सुन्दर मुख देखकर अवनतमुख वह दुष्ट पीड़ित हो उठता है। नन्दाका क्षीण मध्य भाग देखकर, उसके हृदयका मध्यभाग क्रुद्ध और सन्तप्त होता है। वह विट कामबाणको सहन करनेमें समर्थ नहीं हो सका, वह (चण्ड) नन्दाका अपहरण कर अपने स्थानपर चला गया। पत्नीसे वियुक्त, असमर्थ और भाग्यसे निस्तेज वसुषेणने कामदेवका नाश करनेवाले श्रेयांस नामक योगीश्वरके पास व्रत ग्रहण कर लिया। अपनेको दण्डित किया। परन्तु मान नहीं छोड़ा। उसने मोह उत्पन्न करनेवाला निदान बाँधा।

घत्ता—"इन्द्रियोंको दमित करनेवाले तपश्चरणका मैं इतना ही फल माँगता हूँ कि दूसरे जन्ममें परस्त्रीका अपहरण करनेवाले उसे मारकर मैं नृत्य करूँ।" ॥१५॥

१६

जिस प्रकार उसकी रक्तरूपी जलधारामें मैं अपने पराभवके पटको धो सकूँ, वैसे ही वह दुष्ट यह निदान-शल्य बाँधकर और मोहग्रस्त होकर समय आनेपर मर गया। जिन तपके

१५. १. AP मुहयंदो° । २. A °पडिवक्खचंदु; P °पडिवक्खदंदु । ३. A चंडसासणपयंडु । ४. A सुहडग्गमि । ५. AP झूरइ । ६. A ओहुल्लंभवयणु ; P उहुल्लुल्लवयणु । ७. A सहिवि । ८. AP वउ ।

१६. १. A मोहंधगिल्लु but T मोहजलार्द्रः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तहिँ दिट्ठउ तेण महाबलेण देवेण भव्वजणवच्छलेण ।
बद्धउ सणेहु कीलाविसालु सहवासें दोहिं मि गलिउ कालु ।
तहिँ कालि सहिवि णाणाकिलेसु परिभमिवि चंडसासणु भवेसु ।
इह भारहि कासीणामदेसि[2] वाणारसिपुरि वरि घरणिवेसि[3] ।
पुहईसरु तहिं णामें विलासु गुणवइणामें महएवि तासु ।
एयहं दोहं मि लक्खणणिउत्तु महुसूयणु[4] णामें जाउ पुत्तु ।
घत्ता—रणि मिलियहं परमंडलियहं भुयबलु पबलु विजित्तउं ।।
तें[5] सुहयरु रुप्पयगिरिवरु धरिवि महीयलु भुत्तउं ।।१६।।

१७

जहिँ वरिसहं लक्खइं णिट्ठियाइं जहिँ[1] वरिससयाइं जि संठियाइं ।
तहु भुंजंतहु लच्छीविलासु तहिँ अवसरि सुणि अवरु[2] वि पयासु ।
दारावइपुरि णं दससयक्खु सोमप्पहु पहु णवपउमचक्खु[3] ।
तहु जयवइ अवर वि अत्थि बीय लहुई पणइणि णामेण सीय ।
कालेण भुवणि किर को ण गसिउ सुरवरु सहसारविमाणलहसिउ[4] ।
पढमाइ महाबलु पुत्तु जणिउ बीयइ[5] जो चिरु वसुसेणु भणिउ ।
सुप्पहु पुरिसुत्तमु णामधारि ते बेण्णि वि हलहरदाणवारि ।
ते बेण्णि वि पंडुरकसणवण्ण ते बेण्णि वि उण्णयपुण्णधण्ण[6] ।

फलस्वरूप वह मान्य सामग्रीसे युक्त सहस्रार स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। वहाँ उसे भव्यजनोंके लिए वत्सल महाबल देवने देखा। उसका स्नेह हो गया। इस प्रकार साथ-साथ रहते हुए क्रीड़ासे विशाल उनका समय बीत गया। उसी समय नाना क्लेशोंको सहन कर और जन्म-जन्मान्तरोंमें भ्रमण कर चण्डशासन राजा इस भारतके काशी नामक देशके, जिसमें सुन्दर घरोंकी रचना है, ऐसे वाराणसी नगरमें विलास नामका राजा था और उसकी गुणवती नामकी पत्नी थी। इन दोनोंके लक्षणोंसे परिपूर्ण मधुसूदन नामका पुत्र हुआ।

घत्ता—युद्धमें आये हुए शत्रुराजाओंके प्रबल भुजबलको उसने जीत लिया। उसने शुभकर विजयार्ध गिरिवरको अपने अधीन कर धरतीतलका भोग किया ॥१६॥

१७

जहाँ लाखों वर्ष ऐसे बीत जाते हैं कि जैसे सैकड़ों वर्ष बीते हों। वहाँ उसके लक्ष्मी-विलासका भोग करते हुए उस अवसरपर दूसरा प्रकाश (महिमा या प्रसंग) सुनिए। द्वारावती नगरीमें नवकमलके समान आँखोंवाला सोमप्रभ नामका राजा था जो मानो इन्द्र था। उसकी जयावती और दूसरी छोटी सीता नामकी प्रणयिनी थी। इस संसारमें समयके द्वारा कौन नहीं ग्रस्त होता। वह सुरवर सहस्रार विमानसे च्युत होकर पहली रानी (जयावती) से महाबल नामका पुत्र हुआ। दूसरीसे जो वसुषेण नामका राजा था, वह सुप्रभ नामका भारी पुरुषोत्तम

२. A °देसु । ३. A °पुरघरवरविसेसु; P °पुरिघरवरविसेसु । ४. AP महुसूयणु । ५. A तं सुहयरु ।
१७. १. AP तहिं । २. AP अवरु । ३. P णउ पउम° । ४. AP °विवाण । ५. P बीयउ ।
६. AP पुण्णवण्ण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते बेण्णि वि साहियसिद्धविज्ज ते बेण्णि वि खयरामरहं पुज्ज ।
घत्ता—हरिकंधर धवलधुरंधर जोइवि कलहपियारउ ॥
महिरायहु दावियघायहु जाइवि अक्खइ णारउ ॥१७॥

१८

भो भो महसूयण सुहडसीह समरंगणि को तुह लुहइ लीह ।
सुंदर सोमप्पहदेहजाय मइं दिट्ठा सुणि रायाहिराय ।
दारावइपुरवरि दोण्णि भाय सक्कु वि णउ पावइ ताहं छाय ।
णं तुहिणंजणमहिहर महंत थिर तीसवरिसलक्खाउवंत ।
पण्णाससरासणदेहमाण संगामरंगणिऽवूढमाण ।
तहिं कालउसलोणउ भणइ एम्व भो सुप्पह महिवइ तुहुं जि देव ।
को अण्णु राउ मइं जीवमाणि को जीवइ गुणसंणिहियबाणि ।
आरूसेप्पिणु दुम्मियमणेण ता दूउ दिण्णु महसूयणेण ।
पडिवक्खपसंसियविक्कमासु गउ तासु पासि पुरिसुत्तमासु ।
पभणिउं भो भो लहु देहि कप्पु अवियक्खणु किं किर करहि दप्पु ।
घत्ता—पहु मण्णहि कलि अवगण्णहि करि उत्तउं महु केरउं ॥
महसूयणि भिडिय महारणि ण रमइ खग्गु तुहारउं ॥१८॥

हुआ। वे दोनों क्रमशः बलभद्र और नारायण थे। वे दोनों ही धवल और कृष्ण वर्णके थे, वे दोनों ही उन्नत पुण्यरूपी धान्यवाले थे। उन दोनोंने विद्याएँ सिद्ध की थीं। वे दोनों ही विद्याधरों और अमरोंके द्वारा पूज्य थे।

घत्ता—वृषभके समान कन्धोंवाले और धवल धुरन्धर उन दोनोंको देखकर कलहप्रिय नारद जाकर आघात करनेवाले धरतीके राजासे कहता है ॥१७॥

१८

"हे सुभटोंमें सिंह मधुसूदन, युद्धके प्रांगणमें तुम्हारी रेखा कौन पोंछ सकता है? हे राजाधिराज, सुनिए—सुन्दर, सोमप्रभके शरीरसे उत्पन्न द्वारापुरीमें मैंने दो भाई देखे हैं। उनकी कान्तिको इन्द्र भी नहीं पा सकता मानो वे महान् हिम और नीलांजनके पहाड़ हैं, स्थिर और तीस लाख वर्षकी आयुवाले हैं, उनके शरीरका प्रमाण पचास धनुष है, दोनों समरके प्रांगणमें निर्वाह करनेवाले हैं।" तब उनमें जो श्याम वर्णका सुप्रभ नामका (पुत्र) राजासे कहता है कि तुम्हीं एकमात्र देव हो, मेरे जीते हुए दूसरा कौन राजा हो सकता है? मेरी प्रत्यंचापर बाण चढ़ानेपर कौन जीवित रह सकता है। तब क्रुद्ध होकर मधुसूदनने पीड़ित मन होकर अपना दूत भेजा। जिसने शत्रुकी विक्रमाशाको संशयमें डाल दिया है, ऐसे उस पुरुषश्रेष्ठके पास गया और बोला, "अरे-अरे, शीघ्र कर दो। हे अज्ञानी, तुम घमण्ड क्यों करते हो।

घत्ता—तुम राजाको मानो, कलहकी उपेक्षा करो, मेरा कहा हुआ करो। मधुसूदनके महायुद्धमें लड़ते समय तुम्हारा खड्ग नहीं ठहरेगा ॥१८॥

---

१८. १. A लहइ। २. AP तीसलक्खवरिसाउअंत। ३. AP काले। ४. AP दूमिय°। ५. A धरइ; K धरइ but corrects it to रमइ।

१९

तं णिसुणिवि भासइ सीरधारि भो दूय म कोक्कउ गोत्तमारि ।
अम्हारउ करु मग्गइ अयाणु किं ण मरइ रणि[1] सो हम्ममाणु ।
अम्हारउ करु सहुं धणुंहरेण[2] अम्हारउ करु सहुं असिवरेण ।
अम्हारउ करु चक्केण फुरइ अम्हारउ करु तहु जीउ हरइ ।
अम्हारउ करु तहु कालवासु जिणु मेल्लिवि अम्हइं भिच्च कासु ।
तं सुणिवि महंतउ गउ तुरंतु विण्णवइ ससामिहि पय णमंतु ।
ण समिच्छइ संधि ण देइ दव्वु पर चवइ रामु केसउ सगव्वु ।
तं णिसुणिवि मणि उप्पण्ण वेरि हय रसमसंति संणाहभेरि ।
संणद्ध सुहड हणु हणु भणंति दट्ठोट्ठ रुट्ठ दढभुय[3] धुणंति ।
आरोहचरणचोइयमयंग धीरासवार[4]वाहियतुरंग ।
धाइय रहवर[5] धयधुव्वमाण गयणयलि ण माइय खगविमाण ।
णिग्गउ आरूसिवि राउ जाम चरपुरिसहिं कहियउं[6] हरिहि ताम ।
आयउ रिउ हय दुंदुहिणिणाउ थिउ रणभूमिहि वड्ढियकसाउ ।

घत्ता—तं णिसुणिवि णियभुय धुणिवि[7] केसउ जंपइ कुद्धउ ।
मरु मारमि पलउ समारमि रिउ बहुकालहुं लद्धउ ॥१९॥

१९

यह सुनकर बलभद्र कहते हैं, "हे दूत, अपने कुलका नाश करनेवाली बात मत करो। हे अजान, जो हमसे कर मांगता वह मारे जानेपर युद्धमें क्यों नहीं मरता। हमारा 'कर' धनुर्धरके साथ, हमारा कर असिवरके साथ, हमारा हाथ चक्रके साथ स्फुरित होता है; हमारा कर उसके जीवका अपहरण करता है, हमारा हाथ उसके लिए कालपाश है, जिनवरको छोड़कर हम और किसके दास हो सकते हैं?" यह सुनकर दूत तुरन्त गया और अपने स्वामीके चरणोंमें प्रणाम करता हुआ निवेदन करता है—'हे देव, न तो वह सन्धिकी इच्छा करता है और न धन देता है, परन्तु राम केशव सगर्व केवल बकवास करता है।' यह सुनकर उसके मनमें वैर उत्पन्न हो गया। घोड़े हिनहिना उठे। भेरी बज उठी। सुभट तैयार होने लगे, मारो मारो कहने लगे, ओठ चबाते हुए अपने दृढ़ बाहु धुनने लगे। महावतके पैरोंसे हाथी प्रेरित हो उठे। धीर घुड़सवार घोड़ोंको हांकने लगे। ध्वजोंसे प्रकम्पित रथ दौड़ने लगे, आकाश-तलमें विद्याधरोंके विमान नहीं समा सके। जबतक राम (बलभद्र महाबल) निकलते हैं तबतक दूत पुरुषोंने नारायणसे कहा कि दुन्दुभि-निनादके साथ शत्रु आया है और बढ़े हुए क्रोधसे युद्धभूमिमें ठहरा है।

घत्ता—यह सुनकर अपने बाहु ठोंकते हुए नारायण क्रुद्ध होकर सुप्रभसे कहता है, लो मारता हूँ, प्रलय मचाता हूँ। बहुत समयके बाद दुश्मन मिला है ॥१९॥

१९. १. AP सो रणि । २. AP धणहरेण । ३. AP भुयबलि । ४. P धारासवार । ५. A रह रणिधयं° । ६. AP साहिउं । ७. AP विहुणिवि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०

हरिवाहिणिखगवाहिणिसमेय णिग्गय बेण्णि वि हिमगरलतेय ।
रह तुरय दुरय णरेरवरउद्द मज्जायविवज्जिय णं समुद्द ।
चलचमरछत्तधयछण्णसेण्णु उग्गयधूलीरयकविलवण्णु ।
दसदिसिवहभरिय ण कहिं मि माइ महि वज्जघडिय विहडिवि ण जाइ ।
फणि तेण भरेण ण केम मरइ धुयफडकडप्पु थरहरइ सरइ ।
णरभोयणकइ रोमंचियाइं सुपहूयइं भूयइं णच्चियाइं ।
बिण्णि मि सेण्णइं समुहागयाइं आलग्गइं तासियदिग्गयाइं ।
जयगोमिणिमेइणिलंपडाइं मुसुमूरियचूरियभडथडाइं ।

घत्ता—दप्पिट्ठइं बेण्णि मि दिट्ठइं सेण्णइं समरि भिडंतइं ।
हलसूलहं[10] झसंकरवालहिं[11] पहरंताइं पडंतइं ॥२०॥

२१

पवरासवारवेढियरहोहि रहसंकडि णिवडियविविहजोहि ।
जोहंघिदलियमंडलियमउडि मउडुच्छलंतमणिकिरणविउडि ।
वियडियकवाडसंदोहणीडि णीडाहिरूढसुरवरसमीडि ।
मीडामहग्घजुज्झंतवीरि वीरंगगलियकीलालणीरि ।

२०

नारायणकी सेना और विद्याधरकी सेनाके साथ धवल और श्याम रंगवाले वे चले। रथ-तुरग-गज-नरवरोंसे भयंकर वह सैन्य ऐसा मालूम होता, मानो मर्यादासे रहित समुद्र हो। चंचल चमर छत्रध्वजसे आच्छन्न तथा उड़ती हुई धूलिरजसे कपिलवर्ण सेना दसों दिशाओंमें फैलती हुई कहीं भी नहीं समा सकी। वज्रसे रचितके समान भूमि किसी प्रकार विघटित नहीं हो रही थी और इसलिए उसके भारसे किसी प्रकार मरता नहीं, कांपते हुए फनोंके समूहसे वह थर-थर कांपता हुआ चलता है। मनुष्योंके भोजनके लिए बहुतसे भूत नाच उठे। दोनों ही सैन्य आमने-सामने आ गये और दिग्गजोंको पीड़ित करते हुए एक दूसरेसे भिड़ गये। दोनों विजयरूपी लक्ष्मी और धरतीके लम्पट थे, दोनों भट समूहको मसलने और चूरित करनेवाले थे।

घत्ता—दोनों सैन्य दर्पसे भरे हुए युद्धमें लड़ते हुए, हल-मूसल-झष और करवालोंसे प्रहार करते और गिरते हुए दिखाई दे रहे थे ॥२०॥

२१

जिसमें बड़े-बड़े घुड़सवारोंसे रथोंके समूह घिरे हुए हैं, रथों ऐसा जमघट है, जिसमें विविध योद्धा गिर रहे हैं, जिसमें योद्धाओंके पैरोंसे माण्डलीक राजाओंके मुकुट नष्ट हो रहे हैं, जो मुकुटोंसे उछलती हुई मणि किरणसे विनष्ट है, जिसमें नष्ट कपालोंके समूहके घर हैं, और उनपर लक्ष्मी और बुद्धिसे युक्त देववर बैठे हुए हैं, जिसमें ऐश्वर्य और बुद्धिसे महान् वीर युद्ध कर रहे हैं और

---

२०. १. AP णरवररउद्द। २. AP मज्जायमुक्क णं चल समुद्द। ३. A °सेण्ण। ४. A धूलीरव°। ५. A °वण्ण। ६. A °दिसवह°। ७. AP कह व। ८. A वण° but corrects it to णर in second hand. ९. P समुहं गयाइं। १०. A हलसूलिहिं। ११. AP वरकरवालहिं।

२१. १. A जोहोहदलिय°।

णीरेरुहसममुहपंकएण   पंकयणाहें दप्पंकएण ।
कयहलणित्तेइयकयखलेण   खलु दुच्छिउ दुद्दमभुयबलेण ।
बलएवहु पइसरु सरणु अज्जु   अज्ज वि णउ णासइ मित्तकज्जु ।
कज्जु वि मइं अक्खिउ तुज्झु सारु   सारइ मुइ अवरु वि हत्थियारु ।
आरुहसु म जमसासणु अजाण   जाणेण जाहि मुक्काहिमाण ।
माणहि मा महुं रणि बाणविट्ठि   विट्ठि वँ भीसण तुह हणइ तुट्ठि ।

घत्ता—पडिकण्हें भणिउं सँतण्हें फलवज्जिउ किं गज्जहि ।
धनुदंडें डिंभँय कंडें रे कुमार मइं तज्जहि ॥२१॥

२२

दे देहि कप्पु किं जंपिएण   दुण्णयवंतें सुइविप्पिएण ।
तुहुं किंकरु हउं तुहुं परमणाहु   किं बद्धउ विहलु पहुत्तगाहु ।
इय भणिवि विसमभडघाइणीइ   जुज्झिउ विज्जइ बहुरूविणीइ ।
सीयासुएण भग्गइ अणीइ   बहुरूविणि जिय पडिरूविणीइ ।
ता रिउणा घल्लिउ फुरियधारु   रहचरणु चवलु सहसारफारु ।
गिरिधरणिवलयचालणबलेण   तं हरिणा धरियउ करयलेण ।
सो रेहइ तेण सुणिम्मलेण   णवमेहु व रविणा णित्तलेण ।
णियरूवपरज्जियणित्तणेण   अलियंजणसामें पत्तलेण ।

वीरोंके शरीरोंसे रक्तकी जलधारा बह रही है, ऐसे उस युद्धमें कमलके समान मुखवाले, दर्पसे अंकित, जिसने हलसे खलको निस्तेज कर दिया है, ऐसे दुर्दम बाहुबलवाले दुष्टकी पंकजनाभने खूब भर्त्सना की और कहा—'अरे तुम बलदेवकी शरणमें चले जाओ, मित्रके कामको तुम आज भी नष्ट मत करो। मैंने तुमसे सारकी बात कह दी है। तुम उसे करो। दूसरा हथियार छोड़ दो, हे अजान, तू यमके शासनपर अधिरोहण क्यों करते हो। अभिमानसे मुक्त होकर तुम यानसे जाओ, युद्धमें मेरी बाणवृष्टिको मत मानो, वह वर्षाकी तरह भीषण तुम्हारे आनन्दको नष्ट कर देगी ?"

घत्ता—सतृष्ण प्रतिकृष्णने कहा, "बिना फलके तुम क्यों गरजते हो, हे बालक कुमार, तुम धनुषदण्ड और बाणसे मुझे धमकाते हो ॥२१॥

२२

तुम कर दो, दुर्विनीत और कानोंके लिए अप्रिय कहनेसे क्या ? तुम मेरे अनुचर हो, मैं तुम्हारा परम स्वामी हूँ।' तुमने विफल प्रभुत्व यश क्यों बाँधा ?" यह कहकर विषम योद्धाओंको मारनेवाली बहुरूपिणी विद्यासे वह लड़ा। सीतापुत्र नारायणके द्वारा सैन्यके नष्ट होनेपर प्रति बहुरूपिणी विद्याके द्वारा बहुरूपिणी विद्या जीत ली गयी। तब शत्रुने चमकती हुई धारवाला चपल हजारों आराओंवाला चक्र छोड़ा। पहाड़ और पृथ्वीमण्डलको चलानेके बलवाले हरि (सुप्रभ) ने करतलसे उसे धारण कर लिया; उस निर्मल चक्रसे वह ऐसा शोभित होता है जैसे निर्दोष सूर्यसे नवमेघ शोभित हो। अपने रूपसे मनुष्यत्वको पराजित करनेवाले भ्रमर और

२. AP दोच्छिउ । ३. A वि । ४. AP सयण्हें । ५. AP डिंभियकंडे
२२. १. A बहुरूपिणि । २. तरणु । ३. AP सहसारु फारु । ४. AP णित्तवेण । ५. A omits 8a ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुणु भणिउ वइरि रे सुप्पहासु करि केर म जाहि कयंतवासु ।
पालियतिखंडमंडियधरेण[6] [7]पँडिजंपिउं पडिदामोयरेण ।
तुहुं सुप्पहु बिण्णि वि मज्झु दास को गव्वु रहंगें रे हयास ।
सरसलिलि रहंगसयाइं अत्थि किं तेहिं धरिज्जइ मत्तहत्थि ।
मरु मरु [8]मारंतहु णत्थि खेउ संभरहि को वि णियइट्ठदेउ ।

घत्ता—असमिच्छिवि पुणु णिब्भंच्छिवि[9] चक्कें रिउसिरु तोडिउ ॥
हरिहंसें लद्धपसंसें णं [10]रणतरुहलु साडिउ ॥२२॥

२३

[1]महिरक्खसि खद्धणिमासखंड पुरिसुत्तमेण भुत्ती तिखंड ।
पत्थिव पसु गिलइ ण कहिं मि धाइ ओहच्छइ केण वि सहुं ण जाइ ।
कालेण कण्हु गउ अवहिठाणु हलिणा चिंतिउ रिसिणाहणाणु ।
णिल्लुंचियकुंतलु करिवि सीसु जायउ सोमप्पहुगुरुहि सीसु ।
परिसेसिवि भवसंसरणवित्ति थिउ भूसिवि मोक्खमहाधरित्ति ।
जहिं भुक्खु णत्थि आहारवग्गु जहिं णिद्द ण मंदिरु सयणवग्गु[2] ।
जहिं कामिणि कामु ण रोसु तोसु जहिं दीसइ एक्कु वि णाहिं दोसु ।
जहि वाहि ण विज्जु ण मलु ण ण्हाणु जहिं [3]अप्पें अप्पउं जाणमाणु ।

अंजनसे श्याम दुबले-पतले बलभद्रने शत्रुसे कहा, "हे सुप्रभास, सेवा करना स्वीकार कर लो, यमवासके लिए मत जा ।" तब तीन खण्डोंसे अलंकृत धरतीका पालन करनेवाले प्रतिनारायण मधुसूदनने कहा—"तुम और सुप्रभ दोनों मेरे दास हो । हे हताश, चक्रका क्या गर्व करता है ? पानीमें सैकड़ों रथांग (चक्रवाक) होते हैं, क्या उनसे मतवाला हाथी पकड़ा जा सकता है ? मर-मर, अब तुझे मारनेमें देर नहीं है, अपने किसी इष्टदेवको याद कर ले ।"

घत्ता—इस प्रकार नहीं चाहते हुए भी उसने शत्रुको ललकारकर चक्रसे उसका सिर तोड़ दिया मानो प्रशंसा प्राप्त करनेवाले हरिरूपी हंसने रणरूपी वृक्षके फलको तोड़ दिया हो ॥२२॥

२३

जिसने मनुष्यमांसका खण्ड खाया है, ऐसी धरतीरूपी राक्षसीका पुरुषोत्तमने भोग किया । वह राजा और पशुको निगल जाती है, कहीं भी नहीं जाती । यहीं रहती है, किसीके साथ नहीं जाती । समयके साथ नारायण सुप्रभ सातवें नरक गया । बलभद्रने ऋषभनाथके ज्ञानका चिन्तन किया । अपने सिरको बालोंसे रहित कर सोमप्रभ मुनिका शिष्य हो गया । संसारमें भ्रमण करनेकी वृत्तिको नष्ट कर मोक्षरूपी महाभूमिको भूषित कर स्थित हो गया । जहाँ भूख नहीं है, न आहारवर्ग है, जहाँ न निद्रा है, न घर है और न स्वजन समूह है । जहाँ न कामिनी है, न काम है, न रोष है और न तोष है । जहाँ एक भी दोष दिखाई नहीं देता । जहाँ न व्याधि है, न विद्या

६. AP °मंडलवरेण । ७. A तो जंपिउं पडि°; P ता जंपिउं पडि° । ८. A महु मारंतहु । ९. AP णिब्भंछिवि । १०. P णं णवसरुह पाडिउ ।

२३. १. AP have before this: बहुपाउ करिवि बहुभोयसत्तु, तमतमि पत्तउ पडिलच्छिकंतु । २. AP सयणमग्गु । ३. AP अप्पाइ अप्पउं जायमाणु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच्छइ[४] पेच्छइ णीसेसु ताम तिहुयणु अणंतु आयासु जाम ।
संतेण समियफुल्लाउहेण[५] चउथेण[६] तेण सीराउहेण ।

घत्ता—ववगयरइ भरहेरावइ जं णरेहिं आराहिउं ॥
तं सिद्धउं[७] सिवसुहुं लद्धउं पुप्फदंतजिणसाहिउं ॥२३॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए
महाकव्वे अणंतणाहसुप्पहपुरिसुत्तम[८]महुसूयणकहंतरं णाम
अट्ठवण्णासमो[९] परिच्छेओ समत्तो ॥५८॥

है, न मल है और न स्नान, जहाँ आत्माके द्वारा आत्माको जाना जाता है। वह समस्त विश्वको वहाँ तक इच्छा करता है और देखता है, जहाँ तक अनन्त त्रिभुवन और आकाश है। शान्त कामदेवका शमन करनेवाले उन चौथे बलभद्रने—

घत्ता—रतिसे रहित भरतश्रेष्ठकी जो मनुष्योंके द्वारा आराधना की जाती है, पुष्पदन्त जिनके द्वारा वह कथित सिद्ध शिवसुख उन्होंने प्राप्त किया ॥२३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका अनन्तनाथ सुप्रभ
पुरुषोत्तम और मधुसूदन कथान्तर नामका अट्ठावनवाँ
परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५८॥

---

४. AP अच्छइ । ५. A पुल्लाउहेण । ६. AP चोत्थेण । ७. AP तं लद्धउं सिवसुहुं सिद्धउं ।
८. AP °पुरिसोत्तम° । ९. AP अट्ठावण्णा° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ५९

जिणु धम्मु भडारउ तिहुवणसारउ मइं जडेण किं गज्जइ।
चवलुक्कलियायरु भरियउ सायरु किं कुडुवेण मविज्जइ ॥ध्रुवकं॥

१

लच्छीरामालिंगियवच्छं — उण्णयसिरिवच्छं।
दिव्वझुणिं छत्तत्तयवंतं — कंतं[2] मयवंतं।
भामंडलरुइणिज्जियचंदं — भव्वकुमुयचंदं।
अमरमुक्ककुसुमंजलिवासं — देवं दिव्वासं।
बुद्धं बहुसंबोहियसुरवं — जयदुंदुहिसुरवं।
वरकंठीरवपीढारूढं — मीमंसारूढं।
पंचिंदियभडसंगरसूरं — भुवणणलिणसूरं।

सन्धि ५९

त्रिभुवनमें श्रेष्ठ आदरणीय जिनधर्मका मुझ जड़के द्वारा क्या वर्णन किया जाये? चंचल लहरोंका समूह सागर क्या कुतुपसे मापा जा सकता है?

१

जिनका वक्षःस्थल लक्ष्मीरूपी रमणीके द्वारा आलिंगित है, जो अशोक वृक्षके समान उन्नत हैं, जो दिव्यध्वनि और तीन छत्रोंसे युक्त हैं, जो ज्ञानवान् और सुन्दर हैं, जिन्होंने भामण्डल की कान्तिसे चन्द्रमाको जीत लिया है, जो भव्यरूपी कुमुदोंके लिए चन्द्रमाके समान हैं, जिनपर देवेन्द्रोंने कुसुमांजलियोंकी वर्षा की है, जो देव दिगम्बर बुद्ध हैं, जिनका शब्द (दिव्यध्वनि) अनेक जनोंको सम्बोधित करनेवाला है, जो जय दुन्दुभिके शब्दसे युक्त हैं, जो सिंहासनपर आरूढ़ हैं, जो मीमांसामें प्रसिद्ध हैं, जो पंचेन्द्रिय योद्धाओंसे संग्राम करनेमें शूर हैं, जो विश्वरूपी कमलके

All Mss., A, K and P, have, at the beginning of this saṃdhi, the following stanza:—

अत्र प्राकृतलक्षणानि सकला नीतिः स्थितिश्छन्दसा-
मर्थालंकृतयो रसाश्च विविधास्तत्त्वार्थनिर्णीतयः।
किं चान्यद्यदिहास्ति जैनचरिते नान्यत्र तद्विद्यते
द्वावेतौ भरतेशपुष्पदशनौ सिद्धं ययोरीदृशम् ॥ १ ॥

K reads ते चार्थनिर्णीतयः for तत्त्वार्थ°; देवेतौ for द्वावेतौ, and भारताख्य° for भरतेश°; P reads देवेतौ भरते तु पुष्प° । K has a gloss on देवेतौ as देवत्वं इतौ प्राप्तौ देवेतौ ।

१. १. A जिणधम्मु । २. P किं तं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंदरद्दिधीरं सवरहियं रायरोसरहियं ।
दूरुज्झियमायाविरहंसं मुणिमणसरहंसं ।
एयाणेयवियप्पविवायं मोहमेहवायं ।
पायपोमपाडियगिव्वाणं उग्गयगिव्वाणं ।
दिसिणासियदुण्णयसारंगं हयवसुसारंगं ।
तवहुयवहहुयवम्महधम्मं णमिऊणं[3] धम्मं ।
भणिमो तस्स चरित्तं चित्तं[4] रंजियपरचित्तं ।

घत्ता—जिह अक्खइ गोत्तमु उत्तमु णित्तमु सत्तमु सेणियरायहु ॥
तिह हउं दुक्कियहरु कहमि[5] कहंतरु भरहहु भव्वसहायहु[6] ॥१॥

२

धादइसंडइ पुव्वदिसायलि पुव्वविदेहइ अंकुरपल्लवसोहियपायवि माइवगेहइ ।
सीयातीरिणिदाहिणतीरइ वच्छयदेसइ पुरिहि सुसीमहि दसरहु राणउ जयसिरिसेसइ
सुपसाहियसिरु[1] बुहयणवच्छलु णिवसइ[2] केहउ चाएं भोएं विहवें रूवें वम्महु जेहउ ।
रयणिसमागमि गिलियउ छणससि अब्भपिसाएं खीरामेलउ णावइ णाएं दिट्ठउ राएं ।
चिंतिउ णियमणि सच्छसहावें वियलियदप्पें अमयकलायरु जेम णिसायरु गसिउ विडप्पें ।
तेम गसेव्वउ[3] जीउ पुसेव्वउ[4] कूरकयंतें णिव्वयवंतें कारिमजंतें काइं जियंतें ।

लिए सूर्य, मन्दराचलके समान धीर, शवरहित (स्व-परसे रहित, शवरके हितस्वरूप) हैं, जो राग-रोषसे रहित हैं, जिन्होंने माया और विरहके अंशोंको दूर कर दिया है, जो मुनियोंके मन-सरोवरके लिए हंस हैं, जो एक-अनेक विकल्पोंसे विवाद करनेवाले हैं, जो मोहरूपी मेघके लिए पवनके समान हैं, जिन्होंने देवोंको अपने चरणकमलोंपर झुकाया है, जो उन्नतग्रीव हैं, जिन्होंने दिशाओंसे दुर्नयरूपी हरिणोंको भगा दिया है, जिन्होंने द्रव्यके अनुरागको नष्ट कर दिया है, जिन्होंने तपकी ज्वालामें कामदेवको आहत कर दिया है, ऐसे धर्मनाथको प्रणाम कर, उनके परचित्तोंको रंजित करनेवाले विचित्र चरित्रको कहता हूँ ।

घत्ता—जिस प्रकार उत्तम तमरहित और प्रशस्त गौतम गणधर राजा श्रेणिकसे कहते हैं, उसी प्रकार मैं पापको हरनेवाला कथान्तर भव्योंके सहायक भरतसे कहता हूँ ॥१॥

२

धातकीखण्डके पूर्व मेरुतलमें पूर्वविदेहमें, जो वृक्षों, अंकुरों और पल्लवोंसे शोभित है, जिसमें धनपतियोंके घर हैं, ऐसे सीता नदीके दक्षिण तटपर स्थित वत्सदेशकी सुसीमा नगरीमें राजा दशरथ था । जिसका सिर विजयश्रीकी पुष्पमालासे प्रसाधित है, ऐसा पण्डितजनोंके प्रति वत्सलभाव रखनेवाला वह राजा इस प्रकार निवास करता था, मानो त्याग भोग वैभव और रूपमें कामदेव हो । निशाका आगमन होनेपर बादलरूपी पिशाच (राहु) के द्वारा निगला गया पूर्णचन्द्रमा राजाने इस प्रकार देखा, मानो नागके द्वारा क्षीरसमुद्र निगल लिया गया हो । स्वच्छस्वभाव और विगलित गर्व उस राजाने अपने मनमें विचार किया कि "जिस प्रकार राहुने

---

३. AP णविऊणं । ४. P omits चित्तं । ५. A कहवि । ६. P °सयायहु ।

२. १. A °सिरि । २. P णिवइ स । ३. A गसेवउ । ४. A पुसेवउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एव चवेप्पिणु रज्जि थवेप्पिणु अइरहु णंदणु संगु मुएप्पिणु गउ तउ लेप्पिणु णिम्माणुसु वणु।
पढिउ सुयंगइं सो एयारह णिट्ठइ झिज्जिवि तिहुवणखोहणु तित्थयरत्तणु पुण्णु समज्जिवि।
पावविणासें मुउ संणासें गउ सव्वत्थहु जगि णउ काइं मि दीसइ दुग्गमु धम्मसमत्थहु।
जं तसणाडिहिं लहुयउ गरुयउ काइं वि अच्छइ तं णियणाणें एक्कु[6] करंगउ जाणइ पेच्छइ।
सो तिहिं तीसहिं पक्खहिं गलियहिं सासु पउंजइ तेत्तियवरिससहासहिं संखइ झीणइ भुंजइ।
सुक्कलेसु ससिसुक्कवण्णु सुई[8] णिप्पडियारउ किं वण्णिज्जइ इंदु चंदु अहमिंदु भडारउ।
तेण[7] तितीससमुद्दमाणु परमाउसु भुत्तउं परियाणिवि उव्वरिउं सेसु छम्मासु णिरुत्तउं।
पेसणु पढमें सयमहिण जक्खिदहु सिट्ठउं कुरु कुरु जिणपुज्जाविहाणु परमागमि दिट्ठउं।

घत्ता—सुणि[10] जंबूदीवइ ससिरविदीवइ भरहखेत्ति जणपउरइ[11]॥
मह[12]राउ णरेसरु सुरकरिकरकरु अत्थि जक्ख रयणउरइ॥२॥

३

पुरंधि तस्स सुप्पहा सई अणंगमापहा।
जणेदिही[1] जिणेसरं रईणिसादिणेसरं।

अमृतके समान किरणोंवाले चन्द्रमाको ग्रसित कर लिया, दुष्ट यमके द्वारा उसी प्रकार जीव पकड़ लिया जायेगा और नष्ट कर दिया जायेगा, अतः व्रतरहित शरीरसे जीनेसे क्या ?" यह कहकर और राज्यमें पुत्र अतिरथको स्थापित कर, परिग्रह छोड़कर तथा तप ग्रहण कर वहाँ गया, जहाँ निर्जन वन था। उसने ग्यारह श्रुतांगोंका अध्ययन किया और निष्ठापूर्वक ध्यान कर त्रिभुवनको क्षुब्ध करनेवाला तीर्थंकरत्वका पुण्य अर्जित कर, पापको नाश कर तथा संन्याससे मरकर सर्वार्थसिद्धिमें गया। धर्मसे समर्थ जीवके लिए संसारमें कुछ भी दुर्गम दिखाई नहीं देता। त्रसनाड़ीमें जो भी लघु और भारी हैं, उसे वह अपने एक ज्ञानसे हस्तगतके समान जानता और देखता है। वह वहाँ (सर्वार्थसिद्धिमें) तीस पक्ष गलनेमें साँस लेता है, उतने ही हजार वर्ष अर्थात् तैंतीस हजार वर्षोंकी संख्या क्षीण होनेपर आहार ग्रहण करता है, शुक्ललेश्यासे युक्त चन्द्रमा और शुक्रके रंगवाला पवित्र निष्पीड़ाकारक इन्द्रचन्द्र उस आदरणीयका क्या वर्णन किया जाये ? उसने वहाँ तैंतीस सागर प्रमाण आयुका भोग किया। यह जानकर कि निश्चयसे छह माह आयु शेष बची है, प्रथम सौधर्म इन्द्रने कुबेरको आदेश दिया—"परमागममें देखे गये जिनपूजा विधानको करिए।

घत्ता—हे यक्ष सुनो, सूर्यचन्द्रमाके द्वीप जम्बूद्वीपके जनप्रचुर भरतक्षेत्रके रत्नपुरमें ऐरावतकी सूँड़के समान हाथोंवाला राजा भानु है ॥२॥

३

उसकी रानी सुप्रभा सती कामश्रीके समान है। वह, रतिरूपी निशाके लिए सूर्यके समान

५. AP read this line as पढिउ सुयंगइं सो अविहंगइं एयारह पुणु; P adds after this: सरिवि सुहंगइं दहधम्मंगइं सोसिवि णियतणु; AP adds after this: छत्तीस वि गुणसहिए तवणिट्ठइ (A तवणिट्ठुविएं झिज्जिवि। ६. P एक्क। ७. A सो तेतीसहि। ८. A सुहॅ°। ९. A तिणि तेत्तीस°। १०. A पुण जंबू°; P मुणि जंबू°। ११. P जणे पउरइ; K जणपवरइ but corrects it to जणपउरइ। १२. A मेहराउ; P महाराउ।

३. १. AP जणेहही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरं णिबद्धतोरणं घरं समंत्त[2]वारणं।
करेहि तं तहा तुमं कुलक्कमागयं इमं।
णमंसिउं सुराहिवं तओ गओ धणी भुवं।
णवप्पसंडिपीयलं अणेयखाइयाजलं।
अणेयवण्णसालयं अणेयणट्टसालयं।
अणेयकेउछाइयं अणेयतूरणाइयं।
अणेयदारदावणं अणेयवल्लरीवणं।
अणेयसुंदरावणं अणेयतित्थपावणं।
कयं पुरं महासरं त[3]हिं चि रायमंदिरं।
घत्ता—तहिं पच्छिमरयणिहि सुत्तइ सयणिहि दीसइ देविइ कुंजरु ॥
पसुवइ पंचाणणु विप्फुरियाणणु मयमारणणहपंजरु ॥३॥

४

अवरे[1] वि सिरिदामइं दिट्ठिहि सोम्मइं ढोइयइं
णहि पंडुरतंबइं ससिरविबिंबइं जोइयइं।
दुइ मीण रईणड दुइ मंगलघड सरयसरु
जलणिहि जलभीसणु सेहीरासणु सक्कघरु।
उरगिंदणिहेलणु णाणामणिगणु सत्तसिहु
मुद्धइ अवलोइउ मणि संमाइउ भणिउ पहु।
मइं दिट्ठा सिविर्णय[2] सोलह सिविणय देंतु सुहुं

जिनेश्वरको जन्म देगी। अतः तोरणोंसे निबद्ध नगर और वारणों सहित घर तुम वहां इस प्रकार बनाओ कि जिस प्रकार कुलक्रमागत हो।" तब देवेन्द्रको नमस्कार कर उस समय कुबेर मनुष्य-लोकके लिए गया। उसने महासरोवरसे युक्त नगर और राजभवन बनाया, जो नवसुवर्णसे पीला था, जिसमें अनेक खाइयोंका जल था, जिसमें अनेक रंगके परकोटे थे, अनेक नृत्यशालाएँ थीं, जो अनेक पताकाओंसे आच्छादित था, अनेक तूर्योंसे निनादित था, अनेक द्वारों और दावण (पशुओंको बाँधनेकी रस्सी) से युक्त था, जिसमें अनेक सुन्दर बाजार थे जो अनेक तीर्थोंसे पवित्र था।

घत्ता—वहाँ शय्यापर सोती हुई देवी रात्रिके अन्तिम प्रहरमें देखती है—हाथी, बैल, विस्फारित मुखवाला तथा हरिणोंके मारनेसे पीले नखोंवाला सिंह ॥३॥

४

और भी दृष्टिके लिए सौम्य श्रीमालाएँ देखीं, आकाशमें सफेद और लाल चन्द्रमा तथा सूर्यके बिम्ब देखे। रतिमें नृत्य करते हुए दो मीन, दो मंगलकलश, शरद्का सरोवर, जलसे भयंकर समुद्र, सिंहासन, इन्द्रघर (देव विमान), नागभवन, नाना रत्नराशि, अग्नि। उस मुग्धाने स्वप्नोंको देखा, मनमें उनका सम्मान किया और अपने स्वामीसे कहा कि मैंने सोलह स्वप्न

२. P सम्मत्त°। ३. A तहि च राय°।
४. १. AP अवरु। २. AP सुविणय।

फलु ताहं भडारा णरवरसारा कहहि तुहुं ।
पइ कंतहि अक्खइ गुज्झु ण रक्खइ भुयणगुरु
तुह होसइ तणुरुहु णव[3]सररुहमुहु गुणपवरु ।
तं णिसुणिवि राणी णं सहँ[4]साणी घणरविण
णच्चइ सिंगारें रसवित्थारें णवणविण ।
हेमुज्जलभित्तिहिं उग्गयदित्तिहिं जियतवणि
वोलाविये[5] अयणइं पडियइं रयणइं णिवभवणि ।
वइसाहइ मासइ तेरसि[6]दिवसइ ससिधवलि
थिउ गब्भि जिणेसरु अहममरेसरु गलियमलि ।
रेवइणक्खत्तइ णविउ[7] पवित्तइ सुरवरहिं
आयहिं दिहिकंतिहिं सिरिहिरिकित्तिहिं अच्छरहिं ।
चउसायरमेत्तइ सिद्धि अणंतइ मयमहणु
अंतिमपल्लद्धइ धम्मविसुद्धइ गइ णिहणु ।
माहम्मि रवण्णइ धण्ण[8]पउण्णइ जणियसुहि
ओसा[9]कणसंकुलि णवतणकोमलि तुहिणवहि ।
सियपक्खहु अवसरि तेरसिवासरि दिण्णदिहि
उप्पण्णउ जगगुरु सिरिसेवियउरु णाणणिहि ।
[10]गुरुजोइ सुरिंदहिं ण्हविउ फणिंदहिं सुरगिरिहि
आणिवि पियवाइहि अप्पिउ मायहि सुंदरिहि ।

देखे हैं, हे नरवर-श्रेष्ठ आप उनके फल बतायें। पति अपनी कान्तासे कहता है, वह कुछ भी छिपाकर नहीं रखेगा, तुम्हारा गुणोंसे प्रवर, नवकमलमुख पुत्र विश्वगुरु होगा। यह सुनकर रानी नवशृंगार और रसविस्तारसे इस प्रकार नृत्य करती है, मानो मेघध्वनिसे मयूरी नाच उठी हो। स्वर्णके समान उज्ज्वल भित्तियोंके समान निकलती हुई किरणोंके द्वारा एक अयन (छह माह) बीतनेपर स्वर्णके जीतनेवाले राजाके भवनमें रत्नोंकी वर्षा हुई। वैशाख माहके शुक्ल पक्षकी तेरसके दिन वह अहमेन्द्र जिनेश्वर मलसे रहित गर्भमें रेवती नक्षत्रमें आकर स्थित हो गया है। धृति-कान्ति-श्री-ह्री-कीर्ति आदि अप्सराओंने उन्हें नमन किया। अनन्त भगवान्‌के सिद्ध होनेपर चार सागर प्रमाण समय बीतने और अन्तिम पल्यके आधे समयके धर्म विशुद्धिसे रहित होनेपर, धान्यसे प्रपूर्ण, सुख उत्पन्न करनेवाले ओसकणोंसे व्याप्त, नवतृणोंसे कोमल तथा हिमपथसे युक्त माघ शुक्ला त्रयोदशीके दिन पुष्य नक्षत्रमें भाग्यविधाता विश्वगुरु तथा लक्ष्मीके द्वारा जिनका वक्ष सेवित है ऐसे ज्ञाननिधि उत्पन्न हुए, देवेन्द्रों और नागेन्द्रोंने सुमेर

---

३. A णवससहरमुहु । ४. A सहसीणी; P सुहसाणी । ५. P वोल्लाविय । ६. A अट्ठमिदिवसइ ।
७. AP णवबि । ८. A धम्मपउण्णइ । ९. P उंसा° । १०. A गुरुजोय ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

गउ सक्कु सुहम्महु पणविवि धम्महु [११]पणइसिरु
वड्ढइ परमेसरु रूवें जियसरु महुरगिरु ।
घत्ता—पणयालसुं[१२]चावइं उज्जुयभावइं गरुएं तणु तुंगत्तें ।।
तेलोक्कहु सारें अरुहकुमारें जणु रंजिउ धणु दंतें ।।४।।

५

ताव कुं[१]अरत्तणे देवकयकित्तणे ।
लक्खजुयसंजुयं अद्धलक्खं गयं ।
वच्छर[२]विसेसहं अच्छरसुरे[३]सहं ।
विरइय [४]अणंदओ जसविडविकंदओ ।
इंदकयण्हाणओ जायओ राणओ ।
वयसमो[५]लक्खहं गयहं कयसोक्खहं ।
चंदिमाकंतिया उक्क णिवडंतिया ।
तेण अवलोइया विहियणिव्वेइया ।
सई जि उम्मोहिओ पुणु वि संबोहिओ ।
वर[६]कुसुमहत्थहिं दिव्वरिसिसत्थहिं ।
हरिहिं अहिसिंचिओ वंदिओ अंचिओ ।
सिहरलिहियंबरं णाययत्तं वरं ।
सिवियमारोहिउं वम्महं जोहिउं ।
मंदिरा णिग्गओ सालवणमुवगओ ।
माहि तेरहमए दियहि स[७]मियंकए ।

पर्वतपर अभिषेक किया, और लाकर प्रिय शब्दोंसे सुन्दरी माताको सौंप दिया। प्रणत शिर इन्द्र धर्मनाथको प्रणाम कर सौधर्म स्वर्ग चला गया। अपने रूपसे कामदेवको जीतनेवाले मधुरवाणी परमेश्वर रूपमें बढ़ने लगे।

घत्ता—उनका शरीर ऊँचाई और गुरुत्वमें सरल पैंतालीस धनुष था। त्रैलोक्यमें श्रेष्ठ अर्हत् कुमारने धन देकर लोगोंका रंजन किया ।।४।।

५

जिसका देवोंने कीर्तन किया है ऐसे कौमार्यकालके दो लाख पचास हजार विशेष वर्ष उनके बीत गये। अप्सराओं और इन्द्रोंने जिनके आनन्दकी रचना की है, जो यशरूपी वृक्षके अंकुर हैं, इन्द्रके द्वारा जिनका अभिषेक किया गया है, ऐसे वह राजा हो गये। सुख उत्पन्न करनेवाले उनके पाँच लाख वर्ष बीत गये। उन्होंने चन्द्रमाके समान कान्तिवाली, वैराग्य उत्पन्न करनेवाली एक गिरती हुई उल्का देखी। वह स्वयं ही विरक्त हो गये, फिर भी उन्हें श्रेष्ठ कुसुम जिनके हाथमें हैं, ऐसे दिव्य मुनिसमूहोंके द्वारा सम्बोधित किया गया। वह देवेन्द्रोंके द्वारा अभिसिंचित और अर्चित हुए। अपने शिखरसे आकाशको छूनेवाली श्रेष्ठ नागदत्ता

११. AP पणयसिरु । १२. A सचावइं ।
५. १. AP कुमरत्तणे । २. P °विसेसेहिं । ३. P °सुरेसेहिं । ४. AP विरयाणंदओ । ५. A वयसमलक्खहं; P वयसमउलक्खहं । ६. A णवकुसुम° । ७. A समयंकए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूसि सायण्हए रहिउ रइतण्हए।
छट्ठउववासओ करिवि णिहि[8]वासओ।
णिवसहससंजुओ मुणिवरिंदो हुओ।
खंतिकंतापिओ तुरियणाणंकिओ।
पुरि[9] घरविचित्तए [10]पाडलीउत्तए।
भमिउ पिंडत्थिओ विणयणविओ थिओ।
धण्णसेणालए ढोइयं कालए।
भोयणं [11]फासुयं सव्वदोसच्चुयं।
जायपंचब्भुयं दाणममरत्थुयं।
सहइ तवतावणं करइ गुणभावणं।

घत्ता—उवसंतइ मच्छरि गइ संवच्छरि खाइयभावहु आइउ॥
फुल्लंतपियालउं तुंगतमालउं तं सालवणु पराइउ॥५॥

६

तहिं सत्तच्छयतरुहिं तलि खगउलमुहलि[1]।
छट्ठववासालंकियहु अविसंकियहु।
पूसरिक्खि छणससिदिवसि हइ कम्मरसि।
अवरण्हइ हूयउ सयलु केवलु विमलु[2]।
आयउ तुरियउं[3] सतियसयणु दससयणयणु।

शिविकामें बैठकर, कामको जीतकर घरसे निकल गये और शालवनमें पहुँचे। माघ शुक्ला त्रयोदशीके दिन सायंकाल पुष्यनक्षत्रमें रतिकी तृष्णासे रहित कर्मकी सामर्थ्यका नाश कर, छठा उपवास कर एक हजार राजाओंके साथ दीक्षित हो गये। क्षान्तिरूपी कान्तिके प्रिय चार ज्ञानोंसे अंकित वह घरोंसे विचित्र पाटलिपुत्र नगरमें आहारके लिए घूमे। शिष्टतासे नम्र वह राजा धन्यषेणके प्रासादमें पहुँचे। उस अवसरपर उन्हें प्रासुक तथा सब प्रकारके दोषोंसे च्युत भोजन दिया गया। पाँच प्रकारके आश्चर्य हुए। वह दान देवोंके द्वारा संस्तुत था। वह तपसे सन्तप्त उनकी श्रद्धा करता, गुणोंकी भावना करता है।

घत्ता—ईर्ष्याभाव समाप्त होने और एक साल बीतनेपर वह क्षायिक भावपर स्थित हो गये। जिसमें प्रियाल वृक्ष खिले हुए हैं और जिसमें ऊँचे-ऊँचे तमालवृक्ष हैं, ऐसे शालवनमें वह पहुँचे॥५॥

६

वहाँ पक्षि-समूहसे मुखरित सप्तपर्ण वृक्षके नीचे, छठे उपवाससे शोभित, विशंकाओंसे रहित, पूष शुक्ल पूर्णिमाके दिन, कर्मकी सामर्थ्य नष्ट होनेपर अपराह्णमें विमल समस्त केवलज्ञान

---

८. A णिहियासवो। ९ A पुरवर°। १०. AP पाडलीपुत्तए। ११. AP पासुयं।

६. १. AP °मुहलि। २. AP add after this: देवें सयरायरु मुणिउं, जगु जाणियउं (A omits जगु जाणियउं); खणि जाइय (A जाइयउ) देवागमणु, छण्णइ (A सुण्णय°) गयणु; णाणाविहहिं पडाइयहिं, अवराइयहिं; संथुउ देउ सुरासुरहिं, मउलियकरहिं; K gives these lines but scores them off. ३. A तुरिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थुणइ थुणंतु गहीरझुणि जय परममुणि ।
धम्मु ण णहयलि गिरिगुहिलि णउ धरणियलि ।
धम्मु ण ण्हाणि ण पसुगॅसणि ण सुरावसणि ।
तुहुं जि धम्मु जिणधम्ममउ कयजीवदउ ।
णरयपडंतहं दिण्णु करु तुहुं दुरियहरु ।
हॅरु तुहुं संकरु परमपॅरु तुहुं तित्थयरु ।
बुद्धु सिद्धु तुहुं मॅहु सरणु हयजरमरणु ।
जिहॅ मणु धावइ णारियणि उत्तुंगथणि ।
जिह मणु धावइ भॅवणि धणि णियबंधुयणि ।
तिह जइ धावइ तुह पयहं गयभवभयहं ।
तो संसारि ण संसरइ ण हवइ मरइ ।
जाइ जीउ तिहुवणसिरहु तहु सिवपुरहु ।
एंव थुणेवि पुरंदरिण वीणासरिण ।
समवसरणु णिम्मिउ विउलु तहिं जीवउलु ।
धम्मचक्कपहुंणा जिणिण संबोहियउं ।
इंदियविसयकसायवसु सुणिरोहियउं ।

घत्ता—तहु वज्जियछम्मद्दु देवहु धम्महु तवभरधरदढयरभुय ॥
चालीस मणोहर जाया गणहर बिहिं[9] गणणाहहिं संजुय ॥६॥

उत्पन्न हो गया । इन्द्र तुरन्त देवजनोंके साथ आया । स्तुति करते हुए गम्भीर ध्वनि वह कहता है—"हे परममुनि, तुम्हारी जय हो । धर्म न तो आकाशतलमें है और न गिरिगुहामें । धर्म न स्नानमें है और न पशुओंके खानेमें, और न मदिरा पीनेमें । जीवदया करनेवाले जिनधर्ममय आप धर्म हैं, नरकमें गिरते हुएके लिए तुमने अपना हाथ दिया है, तुम पापका हरण करनेवाले हो, तुम शिव-शंकर और परमश्रेष्ठ हो । तुम तीर्थंकर हो; तुम बुद्ध-सिद्ध मेरी शरण हो, जरा और मृत्युका नाश करनेवाले हो । जिस प्रकार मन ऊँचे स्तनोंवाली स्त्रियोंमें जाता है, जिस प्रकार मन दौड़ता है, भवन-धन और अपने बन्धुजनमें उसी प्रकार यदि वह भवभयसे रहित तुम्हारे चरणोंमें दौड़े तो वह संसारमें परिभ्रमण न करे, न पैदा हो और न मृत्युको प्राप्त हो, और जीव त्रिभुवनके सिरपर स्थित शिवपुरमें जाता है ।" वीणाके स्वरमें इस प्रकार जिनकी स्तुति कर इन्द्रने विशाल समवसरणकी रचना की । उसमें धर्मचक्रके स्वामी जिनभगवान्ने जीवकुलको सम्बोधित किया । इन्द्रियों और कषायोंकी अधीनताका उन्होंने विरोध किया ।

घत्ता—वहाँ उनके छह मदोंसे रहित, धर्मनाथ देवके तपका भार उठानेमें दृढ़तर भुजावाले, विभिन्न गणनाथोंसे युक्त चालीस सुन्दर गणधर हुए ॥६॥

४. A पसुवहणे । ५. P has तुहुं before हरु । ६. A महु सुयणु । ७. P omits this line.
८. A धावइ भवणि वणि; P धावइ णियभवणि धणि । ९. P तिहिं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

णवसयइं पुव्वपारयरिसिहिं संदरिसियमोक्खमग्गदिसिहिं ।
चालीससहास सत्तसयइं सिक्खुयहं[1] णमंसियगुरुपयइं ।
रिदुसयइं तिण्णि सहसइं परहं अवहिल्लहं संजमभरधरहं ।
चउसहस पंचसय केवलिहिं मणपज्जयाहं तइं[2] मणवलिहिं ।
भयसहसइं विक्किरियाइयहं दोसहसइं वसुसयवाइयहं ।
सहसाइं सट्ठि चउसयजुयइं अज्जियहं मोहवासहु चुयइं ।
दोलक्खइं भणियइं सावयाहं दुगुणाइं तृयहं[3] पालियवयाहं ।
णिव्वाण मिलिय संखारहिय संखेज्ज तिरिक्ख दिक्खसहिय ।
पणवंति जासुं[4] को तेण सहुं उवमिज्जइ हूई चिंत महुं ।
णिभागमि अट्ठणवुत्तरहिं[5] सहु जइसएहिं कयसंवरहिं ।
चोत्थिइ पच्छिमपहरइ णिसिहि संमेयसिहरि अरिहहु रिसिहि ।
संपण्णी धम्मह परमगइ महुं देउ भडारउ सुद्धमइ ।

घत्ता—वंदारयवंदहु देहुं[6] जिणिंदहु पुज्जिवि हयभवपासहु ॥
पहजियरविमंडलु गउ आहंडलु गय अवर वि णियवासहु ॥७॥

८

धम्मवारिविहरणबोहित्थे ऍरिंस[1] परमधम्मजिणतित्थे ।

७

पूर्वांगोंमें पारंगत और मोक्षमार्गकी दिशा बतानेवाले मुनि नौ सौ थे। जिन्होंने अपने गुरुपदोंको नमस्कार किया है, ऐसे शिक्षक चालीस हजार सात सौ थे। संयमके भारको धारण करनेवाले शेष अवधिज्ञानी तीन हजार छह सौ। केवलज्ञानी चार हजार पांच सौ। मनःपर्यय ज्ञानधारी मुनि भी चार हजार पांच सौ। विक्रिया-ऋद्धिधारी सात हजार थे। वादी मुनि दो हजार आठ सौ। मोहवाससे रहित आर्यिकाएँ साठ हजार चार सौ। श्रावक दो लाख और व्रतोंका पालन करनेवाली श्राविकाएँ चार लाख। देवता वहाँ संख्यारहित सम्मिलित हुए। दीक्षा सहित संख्यात तिर्यंच प्रणाम करते हैं। मुझे यह चिन्ता है कि उनकी उपमा किससे दी जाये? ग्रीष्मकाल आनेपर संवर धारण करनेवाले आठ सौ नौ मुनियोंके साथ (ज्येष्ठ शुक्ला) चतुर्थीके दिन रात्रिके अन्तिम प्रहरमें अरहन्त मुनिको सम्मेद शिखरपर धर्मकी परमगति (मोक्ष) प्राप्त हुई। आदरणीय वह मुझे शुभमति प्रदान करें।

घत्ता—जिन्होंने जन्मपाशको नष्ट कर दिया है ऐसे देवोंके द्वारा वन्दनीय जिनेन्द्रकी पूजा कर प्रभासे रविमण्डलको जीतनेवाला इन्द्र तथा दूसरे भी देव अपने-अपने निवासके लिए चले गये ॥७॥

८

धर्मरूपी जलमें विहार करनेके लिए जहाजके समान परम धर्मनाथके इस तीर्थमें हे

---

७. १. P भिक्खुयहं। २. A जिह केवलहिं। ३. AP तियहं। ४. AP जासु सो केण सहुं। ५. A अट्ठणववुत्तरेहिं। ६. A देवजिणिंदहु।

८. १. A अस्स।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेणिय हलहरचक्कहराणं णिसुणहि चरियं णरपवराणं।
णवसासंचियवसुमइदेहे जंबूदीवे अवरविदेहे।
णिवसइ णरवइ परदुव्विसहो वीयसोयणयरे णरवसहो।
सो संसारजायणिव्वेयउ दमवरपासे सुद्धिसमेयउ।
काउं तवचरणं जिणदिट्ठं विसहियकेसालुंचणणिट्ठं।
पत्तो णिरसणविहिणा सग्गं तं सहसारं भोयसमग्गं।
अट्ठारहजलणिहिपरिमाणें तस्सेयारहमे वोलीणे।
जइया तइया इह रायगिहे णयरे घरसिरणच्चियवरिहे।
णाम सुमित्तो अप्पडिमल्लो दुज्जणहियउप्पाइयसल्लो।
जुज्झे सो भुयबलमयमत्तो रायसीहराएण णिहित्तो।
ताम तेण परिमउलियणेत्तें परिभवदुक्खपरंपरछित्तें।

घत्ता—णियरज्जु मुएप्पिणु तणयहु देप्पिणु जुण्णउं तणु व गणेप्पिणु॥
चिण्णउं व्रउं दूसहु कयवम्महवहु कण्हसूरि पणवेप्पिणु॥८॥

९

णवर पमाएं माणकसाएं।
भीमें रुद्धउ हियवइ कुद्धउ।
खरतवखीणउ सासु अयाणउ।
पत्थइ तवहलु होज्जउ भुयबलु।
आगामिणि भवि भउंरवि रउरवि।

श्रेणिक, हलधर और चक्रवर्ती नरश्रेष्ठोंका चरित्र सुनो। जिसकी भूमिरूपी देह नवधान्योंसे अंचित है, ऐसे जम्बूद्वीपके अपर विदेहके वीतशोक नगरमें शत्रुको सहन नहीं कर सकनेवाला राजा नरवृषभ निवास करता था। संसारसे वैराग्य उत्पन्न होनेपर शुद्धि सहित वह दमवर मुनिके पास, जिसमें केशलोंचकी निष्ठाको सहन किया जाता है, ऐसा जिनके द्वारा उपदिष्ट तपको कर उसने अनशन विधिके मार्गसे भोगसे परिपूर्ण सहस्रार स्वर्ग प्राप्त किया। उसकी अठारह सागर प्रमाण आयुमें-से जब ग्यारह सागर आयु निकल गयी तो जिसके गृहशिखरोंपर मयूर नृत्य करते हैं, ऐसे राजगृह नगरमें अप्रतिमल्ल और दुर्जनोंके हृदयमें शल्य उत्पन्न करनेवाला सुमित्र नामका राजा हुआ। भुजबलसे प्रमत्त वह युद्धमें राजसिंह राजके द्वारा पराजित कर दिया गया। तब पराभवकी दुःख-परम्परासे अभिभूत अपनी आँखें बन्द किये हुए वह—

घत्ता—अपना राज्य छोड़कर और पुत्रके लिए देकर जीर्ण तृणकी तरह समझकर जिन्होंने कामदेवका नाश कर दिया है, ऐसे कृष्णसूरि मुनिको प्रणाम कर उसने असह्य व्रत स्वीकार कर लिया॥८॥

९

परन्तु नहीं, वह भीषण मान कषायसे रुद्ध अपने हृदयमें क्रुद्ध हो उठा। अत्यन्त तपसे क्षीण वह अज्ञानी साधु यह तपफल माँगता है कि आगामी भवमें मेरा ऐसा बाहुबल हो, जिससे

२. P णरवासहो। ३. P संसारहु जाय°। ४. °सम्मेयउ। ५. A रायहरे। ६. A वउ; P तउ।
९. १. AP अजाणउ। २. AP भडयणि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जेण वियारमि   सो रिउ मारमि ।
इय णिज्झाइवि   देहु पमाइवि ।
सल्लकिलेसें   मुउ संणासें ।
थिउ[3] सुरविंदइ   हुउ माहिंदइ ।
जाउ मणोरमि   अणुवमतणुरमि ।
आउअणिंदइ   सत्तसमुद्दइ ।
जहिं जिणगीयइं[4]   अच्छरगीयइं[5] ।
जहिं सवणिज्जइं   सुइरमणिज्जइं ।
जें चिरु जित्तउ   राउ सुमित्तउ ।
सो पत्थिवहरि   णं मत्तउ करि ।
हिंडिवि भववणि   विहुरावलिघणि ।
फलियधरायलि   इह कुरुजंगलि ।
पंडुरगोउरि   हूयउ गयउरि ।
राउ कुसीलउ   सो महुकीलउ ।

घत्ता—करयलकरवालें भिउडिकरालें पुहइ तिखंडें[6] पसाहिय ॥
मंडलिय मउद्धुर[7] जेम धुरंधर तेम तेण घरि वाहिय ॥९॥

१०

रज्जु कसिण[1]सुहसारउं अणहुत्तिहिं[2] णियउं
कइवइ वरिसइं जइयहुं तहु जीविउं थियउं ।
तइयहुं खगउरणाहहु[3] सीहसेणणिवहु
इक्खाउहि सुपसिद्धहु इह भरहुब्भवहु ।

मैं भटकोलाहलसे भयंकर युद्धमें विदीर्ण कर शत्रुको नष्ट कर सकूँ यह ध्यान कर और अपना शरीर छोड़कर, शल्यके क्लेश और संन्याससे मरकर वह देवसमूहवाले माहेन्द्र स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। वह सुन्दर अनुपम तारुण्यमें जन्मा। उसकी अनिन्द्य आयु सात सागर प्रमाण थी। जहाँ जिनवरसे सम्बन्धित गीत और अप्सराओंके सुचिर मनोज्ञ गीत सुनाई देते हैं। और जिसने पहले राजा सुमित्रको जीता था, वह श्रेष्ठ राजा राजसिंह मानो मत्तगज हो। कष्टोंसे भरपूर संसाररूपी वनमें भ्रमणकर, जिसमें स्फटिकका धरातल है, ऐसे कुरुजांगलमें सफेद गोपुरोंवाले गजपुर (हस्तिनापुर) में खोटी चेष्टावाला मधुक्रीड़ नामका राजा हुआ।

घत्ता—जिसकी भृकुटियाँ भयंकर हैं ऐसे उसने हाथमें तलवार लेकर तीन खण्ड धरती सिद्ध कर ली। मदसे उद्धत माण्डलीक राजाओंको वह बैलोंकी तरह अपने घर हाँक लाया ॥९॥

१०

समस्त सुखोंसे श्रेष्ठ राज्यका अनुभोग किया और जब उसका जीवन कुछ वर्षोंका रह गया तभी खगपुरके स्वामी इक्ष्वाकुकुलके सुप्रसिद्ध भरतराजाके अंकुर सिंहसेन राजाकी

३. A थिय । ४. P जिणगेहइं । ५. A अच्छरिगीयइं । ६. A तिखंडइं साहिय । ७. AP मउडधर ।
१०. १. A कसण° । २. AP अणुहुंजिवि । ३. A गोउरणाहहु; K गोउर° but corrects it to खगउर° ।

विजयादेविहि गब्भइ उप्पण्णउ धवलु
सो णरवैसहवरामरु भुयजुयबैलपबलु ।
सुहिहिं सुदंसणु कोकिउ कुलसरहंसवरु
तहिं अवसरि माहिंदहु णिवडिउँ सइं इयरु ।
अहरबिंबरुइणिज्जियणवरविबिंबियहि
सो सुमित्तु सुउ जायउ उयँरइ अंबियहि ।
पुरिससीहु हकारिउ लहुयउ बंधवहिं
पहु पमाणु संपत्तउ थणयथर्ण्णधुयहिं ।
ते[9] बेण्णि वि ससियरहिमकज्जलगरलणिह
बेण्णि वि ते सुरगिरिवरसंणिहमाणसिह ।
बेण्णि वि ते बल केसव वासवविहियभय
ते बिण्णि वि नृवँसिरमणिकिरणारुणियपय ।
ते बिण्णि मि संसेविय विज्जाजोइणिहिं
समलंकिय हरिवाहिणिगारुलवाहिणिहिं ।
ते तेइा[11] आयण्णिवि परसिरिअसहणउ
महुकीलउ आरुट्ठउ रणि जुज्झणमणउ ।
पेसियदूएं [12]जाइवि बोल्लिय रायसुय
किं तुम्हइं ण कयाइ वि एही वत्त सुय ।
घत्ता—खोणीयलपालहु जो महुकीलहु कप्पु देइ सो जीवइ ॥
हलहर सुहभायण [13]सुणि णारायण अवरु जमाणणु पावइ ॥१०॥

विजयादेवीके गर्भसे वह धवल बाहुबलसे प्रबल देव उत्पन्न हुआ। सुधीजनोंने कुलरूपी सरोवरके हंस उसे सुदर्शन कहकर पुकारा। उसी अवसरपर माहेन्द्र स्वर्गसे अवतरित दूसरा देव, स्वयं जिसने अधरबिम्बोंकी कान्तिसे नव रविबिम्बोंको जीत लिया है, ऐसी अम्बिका नामकी दूसरी रानीके उदरसे वह सुमित्र पुत्र हुआ। छोटे भाइयोंने पुरुषसिंह कहकर पुकारा। वह प्रभु शीघ्र बालकों और तरुणोंमें प्रामाणिकताको प्राप्त हो गये। वे दोनों ही चन्द्रमा, हिम, काजल और गरलके समान रंगवाले थे। वे दोनों ही सुमेरपर्वतके समान मानसे श्रेष्ठ थे। इन्द्रको भय उत्पन्न करनेवाले वे दोनों बलभद्र और नारायण थे। जिनके पैर राजाओंके शिरोमणिकी किरणोंसे अरुण हैं, ऐसे थे। वे दोनों ही विद्याओं और योगिनियोंके द्वारा सेवित थे। वे दोनों हरिवाहिनी और गरुड़वाहिनियोंसे अलंकृत थे। उनको इस प्रकारका सुनकर दूसरेकी लक्ष्मीके प्रति असहिष्णु युद्धकी इच्छा करनेवाला मधुक्रोड़ युद्धमें क्रुद्ध हो उठा। उसके द्वारा भेजे गये दूतने राजपुत्रोंसे जाकर कहा—

घत्ता—हे शुभभाजन हलधर और नारायण सुनिए, जो राजा मधुक्रोडको कर देगा वही जीवित रहेगा। दूसरा यमाननको प्राप्त करेगा ॥१०॥

४. A णरवसहु। ५. A °पवलबलु। ६. A णिवडिउ सो इयवरु। ७. P अवरइ। ८. A थण्णयथण्णचुवहिं; P थणयथण्णधुवहिं। ९. AP बेण्णि मि ते। १०. AP णिव°। ११. AP तहा। १२. AP बोल्लिय जाइवि। १३. AP णिसुणि णरायण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

भग्गणरिंदो तो गोविंदो ।
माणमहंतो भणइ हसंतो ।
भुवि जो मंदो मेइं सच्छंदो ।
मग्गइ कप्पं तमहं भप्पं ।
करमि अदप्पं किं माहप्पं ।
अत्थि पराणं खग्गकराणं ।
दोण्णयमुक्कं मोत्तूणेक्कं ।
लंगलपाणिं को पहु दाणिं ।
मइं जीवंतें वइरिकयंतें ।
वयणं चंडं सुइवहकंडं ।
तं सोऊणं चारु अदीणं ।
विगओ दूओ हरिसियभूओ ।
कुंजरगइणो तेण सवइणो ।
कहिया वत्ता कुरु रणजत्ता ।
ण करइ संधी लच्छिपुरंधी- ।
लोलो रामो कण्हो भीमो ।

घत्ता—तक्खणि संणद्धउ उब्भियधुयधउ रोसें कहिं वि ण माइउ ॥
हयतूरगहीरें सहुं परिवारें महुकीडउ उद्धाइउ ॥११॥

१२

रमणीदमणइं रिउआगमणइं ।
जूरियसयणइं णिसुणिवि वयणइं ।

११

तब जिसने राजाओंको नष्ट किया है ऐसा वह मानसे महान् गोविन्द हँसता हुआ कहता है—इस धरतीपर जो मूर्ख और स्वच्छन्द मुझसे कर माँगता है मैं उसको भस्म करता हूँ और दर्पहीन बनाता हूँ। जिनके हाथमें तलवार है, ऐसे शत्रुओंका क्या माहात्म्य। दुर्नयसे रहित एकमात्र बलभद्रको छोड़कर इस समय कौन स्वामी है ? शत्रुओंके लिए कृतान्त मेरे जीते हुए। कानोंके लिए तीरके समान उन सुन्दर अदीन प्रचण्ड वचनोंको सुनकर जिसकी भुजा हर्षित है, ऐसा वह दूत चला गया। हाथीके समान चलनेवाले अपने स्वामीसे उसने यह बात कही कि युद्धके लिए प्रस्थान कीजिए। हे देव, वह सन्धि नहीं करता, लक्ष्मी और इन्द्राणी स्त्रियोंके लिए चंचल कृष्ण बहुत भयंकर है।

घत्ता—मधुक्रीड़ तत्काल सन्नद्ध हो गया, आन्दोलित ध्वज वह कहीं भी नहीं समा सका। बजते हुए नगाड़ों और परिवारके साथ मधुक्रीड़ दौड़ा ॥११॥

१२

स्त्रियोंका दमन करनेवाले शत्रुआगमन और स्वजनोंको सतानेवाले वचनोंको सुनकर,

११. १. A तो। २. भमइ सछंदो। ३. A मंगइ। ४. A करुणाजुत्ता। ५. AP महुकीलउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जोइय[1]मुयबल　　णिग्गय हरि बल ।
झल्लरि वज्जइ　　दुंदुहि गज्जइ ।
संचल्लिय चमु　　हुउ महिविब्भमु ।
उक्खयखग्गइं　　सेण्णइं लग्गइं ।
भडकडव[2]द्दणि　　मोडियसंदणि ।
फा[3]डियधयवडि　　तोडियग[4]यगुडि ।
पहरणसंकडि　　विहडावियघडि ।
सुरवरदारुणि　　णवकोवारुणि ।
देहवियारणि　　खेयरमारणि ।
चुयजंपाणइ　　खलियविवाणइ ।
कुरयंधारइ　　ध[5]णुटंकारइ ।
धाइयबाणइ　　लुयत[6]णुताणइ ।
रुहिरज्झलझलि　　णरवरगोंदलि ।
मारियवारणि　　तहिं पइसिवि रणि ।

घत्ता—पडिस[7]त्तुं वुत्तउं एउं अजुत्तउं जं मइं सहुं रणि जुज्झहि ॥
तहुं भिच्चु कुलीणउ हउं तुह राणउ एत्तिउं कज्जु ण बुज्झहि ॥१२॥

१३

दे देहि कप्पु　　मा कालसप्पु ।
पइं गिलउ अज्जु　　अणुहुंजि रज्जु ।
ता भणिउं तेण　　दामोयरेण ।

अपना बाहुबल देखते हुए नारायणकी सेना निकली। झल्लरी बज उठी, दुन्दुभि गरजी। सेनाने कूच किया। मतिभ्रम होने लगा। तलवार उठाये हुए सेनाएँ भिड़ गयीं। जिसमें योद्धाओंका कचूमर हो रहा है, रथ मोड़े जा रहे हैं, ध्वजपट फाड़े जा रहे हैं, हाथियोंके कवच तोड़े जा रहे हैं, हथियारोंका जमघट हो रहा है, गजघटा विघटित हो रही है, जो सुरवरोंसे भयंकर है, नवकोपसे अरुण है, जो शरीरका विदारण करनेवाला और विद्याधरोंको मारनेवाला है, जिसमें जवान च्युत हो रहे हैं, विमान स्खलित हो रहे हैं, पृथ्वीकी धूलसे अन्धकार हो रहा है, जिसमें धनुषकी टंकार हो रही है, बाण दौड़ रहे हैं, शरीरके कवच काटे जा रहे हैं, रुधिर चमक रहा है, नरवरोंकी हर्षध्वनि हो रही है, जिसमें गज मारे जा रहे हैं, ऐसे उस रणमें प्रवेश कर—

घत्ता—प्रतिशत्रुने कहा, "यह अनुचित है कि जो तुम मेरे साथ युद्धमें लड़ते हो। तुम भृत्य हो, मैं कुलीन। मैं तुम्हारा राजा हूँ, तुम इतना काम भी नहीं समझते ॥१२॥

१३

तुम कर दे दो, कहीं तुम्हें आज कालसर्प न निगल ले। तुम राज्यका भोग करो।" तब

---

१२. १. A जोइवि। २. AP °मद्दणि। ३. P पाडिय°। ४. P °हयगुडि। ५. AP अलिझंकारइ।
६. A °तणताणइ। ७. A पडिसत्तें।

१३. १. P गिलइ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

को एत्थु सामि कहु तणिय भूमि।
कुलभूसणम्मि सिरिसासणम्मि।
भणु लिहिय कासु बलु जासु तासु।
इय वज्जरंत अमरि[2]सफुरंत।
आवहइं लेवि अब्भिट्ट बे वि।
ते वरणरिंद पडिहरिउविंद।
कयरोलियाउ दाढालियाउ।
पिंगच्छियाउ बीहच्छ[3]याउ।
फणिकंकणाउ लंबियथणाउ।
उक्के[4]सियाउ रिउपेसियाउ।
बहुरूविणीउ सुरकामिणीउ।
कण्हें हयाउ णासिवि गयाउ।
परणिक्किवेण करिउरणिवेण।
चालिवि गुरुक्कु उम्मु[5]क्कु चक्कु।
आरालिफुरिउं कण्हेण धरिउं।
दाहिणकरेण णं गहवरेण।
कसणेण तंबु णवभाणुबिंबु।
पुणु भणिउ पिसुणु महुकील णिसुणु।

घत्ता—रे रे रिउकुंजर दढदीहरकर सीरिहि सरणु पढुक्कहि ॥
एवहिं असिजीहहु महुं ण[6]रसीहहु कमि पं[7]डियउ कहिं चुक्कहि ॥१३॥

उस दामोदरने कहा— "यहाँ कौन स्वामी है, और किसकी भूमि है? बताओ कुलभूषण किसके श्री-शासनमें धरती लिखी हुई है? जिसके पास बल है, धरती उसकी। (जिसकी लाठी उसकी भैंस)," यह कहते हुए तथा अमर्षसे विस्फुरित होते हुए नारायण और प्रतिनारायण वे दोनों श्रेष्ठ नर हथियार लेकर लड़ने लगे। जिसने भयंकर शब्द किया है, जो दाढ़ोंसे युक्त है, जो पीली और भयंकर आँखोंवाली, नागों, वलय पहने हुए लम्बे स्तनोंवाली तथा उठे हुए बालोंवाली। शत्रुके द्वारा प्रेषित, ऐसी वह बहुरूपिणी देवविद्या कामिनी, नारायणके द्वारा आहत होकर भाग गयी। तब शत्रुके लिए निर्दय, गजपुरनरेश मधुक्रीड़ने चलाकर भारी चक्र छोड़ा। आराओंसे स्फुरित उस चक्रको कृष्णने अपने दायें हाथसे इस प्रकार पकड़ लिया मानो काले ग्रहवरने (राहुने) लाल-लाल नव-भानुबिम्ब पकड़ लिया हो। नारायणने कहा—"हे दुष्ट मधुक्रीड़, सुन।

घत्ता—हे दृढ़कर शत्रुगज, तुम बलभद्रकी शरणमें आ जाओ। इस समय तलवार जिसकी जीभ है, ऐसे मुझ जैसे नरसिंहके चरणोंमें पड़े हुए तुम कैसे बच सकते हो" ॥१३॥

२. A अमरिसु। ३. AP बीहच्छियाउ। ४. A उक्कोसियाउ। ५. AP परिमुक्कु। ६. P वरसीहहु। ७. A कमपडियउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

इय भणिवि सयडंगु अणेण पमेल्लियउं उरयलु वइरिहि विउलु वियरिवि घल्लियउं।
दो वि पंचचालीसधणुण्णयदेहधर सुहुं दहलक्खइं वरिसहं थिय भुंजंत धर।
ते हलहरहरिराणा मंगलभासिणिइ वीर बे वि आलिंगिय विजयविलासिणिइ।
खयकालें मुसुमूरिउ पुरिससीहु गहिरि रउरवि रणरवि णिवडिउ सत्तममहिविवरि।
भाइपेउ सक्कारिवि सीहसेणतणउ धम्महु सरणु पइट्ठउ रामु सुदंसणउ।
छट्ठट्ठमउववासहिं दसमदुवालसहिं परवसलद्धाहारहिं विलवणणीरसहिं।
रुक्खमूलवहि सयणहिं रवियरतावणहिं कम्मकंदु णिल्लूरिवि मुणिगुणभावणहिं।
भुवणत्तयसिहरग्गहु मोक्खहु णिक्कलहु णिक्कसायणीरायहु गउ सो णिक्कलहु।
मुणिगणिंदु आहासइ गोत्तमु विप्पसुउ फणिकिंणरविज्जाहरगणगंधव्वथुउ।

घत्ता—मागहणिव मण्णहि पुणु आयण्णहि चरिउं चक्कणेयारहं॥
संगामसमत्थहं तइयचउत्थहं मघवंसणाइकुमारहं॥१४॥

१५

पडिवइरिइ हइ णिवडिइ तमतमधरणियलि
गिद्धखद्धमणुअंतइ वित्तइ भडतुमुलि।

१४

यह कहकर नारायणने चक्र चला दिया, तथा शत्रुके विशाल उरतलको भेदकर डाल दिया। पैंतालीस धनुष ऊँचे शरीर धारण करनेवाले वे दोनों ही (नारायण और बलभद्र) सुख-पूर्वक दस लाख वर्षों तक धरतीका भोग करते रहे। वे दोनों ही बलभद्र और नारायण राजा मंगल-भाषिणी (सरस्वती) तथा विजयविलासिनी (विजयलक्ष्मी) के द्वारा आलिंगित थे। क्षयकालके द्वारा मसला गया पुरुषसिंह गम्भीर भयंकर तथा युद्धके कोलाहलसे परिपूर्ण सातवें नरकके बिलमें गया। सिंहसेनके पुत्र (बलभद्र) ने भाईके शवका संस्कार कर राम सुदर्शन (बलभद्र) धर्मनाथकी शरणमें चले गये। छह, आठ, दस और बारह उपवासों, नमक रहित दूसरोंके द्वारा दिये गये आहारों, वृक्षोंके मूल पथपर शयनों, सूर्यकिरणोंके तपनों और मुनिगणकी भावनाओंके द्वारा कर्मरूपी अंकुरको नष्ट कर वह भुवनत्रयके शिखरके अग्रभागमें स्थित, निष्पाप, कषाय और रागसे रहित और शरीर रहित मोक्षके लिए चले गये। मुनिगणनाथ विप्र, पुत्र, नाग, किन्नर, विद्याधरगण और गन्धर्वोंके द्वारा संस्तुत गौतम कहते हैं—

घत्ता—"हे मगधराजा, तुम संग्राममें समर्थ तीसरे और चौथे चक्रके स्वामी मघवा और सनत् कुमारके चरितको सुनो और फिर विश्वास करो" ॥१४॥

१५

प्रतिशत्रु (प्रतिनारायण मधुक्रीड़) के मारे जाने और तमतमप्रभा धरणीतलमें पतन होनेपर, जिसमें गिद्धोंके द्वारा मनुष्यकी आँतें खायी गयी हैं, ऐसी भटभिड़न्त समाप्त होनेपर, भयंकर

---

१४. १. A °देहवर। २. A सुहदह°। ३. A °हरिणामि। ४. A रणयविणिवडिउ। ५. A भाइदेहु। ६. A णिक्कसाउ णीराउ सुदंसणु णिच्चलहु। ७. A गणिमुणिंदु। ८. AP °विज्जाहरवर°। ९. P °गंधथुउ। १०. P मघवासणईकुमारहं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दामोयरि गइ णरयहु भीमरहंगकरि
　　　　मारवियारणिवारइ णिव्वुइ सीर[1]धरि ।
दीह[2]काल वोलीणइ णरणिय[3]राउहरि
　　　　[4]धम्मणाहतित्थंतरि बुहयणसंतियरि ।
सुणि जे जाया भारहि भासुरचक्कवइ
　　　　बेण्णि सयलइल[5]पालय जिणकमणिहियमइ ।
एत्थु खेत्ति महिमंडलि णयरि विचित्त[6]घरि
　　　　मोरकीरकुरराउलि सीमारामसरि ।
तित्थि वासुपुज्जेसहु दुद्धर वय धरिवि
　　　　णरवइ णामें राणउ दुक्करु तउ करिवि ।
हुउ मज्झिमगेवज्जहि अहममराहिवइ
　　　　जिणधम्में पाविज्जइ सासयसोक्खगइ ।
कवणु गहणु देवत्तणु परियत्तणसहिउं
　　　　एउं बप्प मइं जाणिउं लोएहिं वि कहिउं ।
सत्तवीससायरखइ जायउं मरणु सुरि
　　　　सउहावलिसिहरुब्भडि सिरिसाकेयपुरि ।
इह सुमित्तणरणाहहु सुहिसंमाणियहि
　　　　हंसवंसकलसद्दहि भद्दाराणियहि ।
मघउ णाम हूयउ सुउ सुयणाणंदयरु
　　　　असियरपसमियरिउतमु [8]भमिउ णिवदिवसयरु ।

चक्रको हाथमें रखनेवाले नारायणके नरक जानेपर, कामदेवके विकारका निवारण करनेवाले बलभद्रके निर्वाण प्राप्त कर लेनेपर, नरसमूहकी आयुका क्षय करनेवाले तथा बुधजनोंको शान्ति प्रदान करनेवाले धर्मनाथके तीर्थकालका लम्बा समय बीतनेपर भारतमें जो चक्रवर्ती हुए उन्हें सुनो। वे दोनों ही धरतीका पालन करनेवाले और जिनवरके चरणोंमें अपनी मति रखते थे। इसी भरत क्षेत्रके महीमण्डलमें विचित्र घरोंकी नगरी थी जो मोर, कीर और कुरर पक्षियोंके शब्दोंसे व्याप्त और सीमोद्यानों तथा नदियोंसे युक्त थी। वासुपूज्यके तीर्थकालमें नरपति नामका राजा कठोर व्रत धारण कर और दुष्कर तप कर मध्यम ग्रैवेयक विमानमें अहमेन्द्र देव हुआ। जिनधर्मसे शाश्वत सुख गति पायी जा सकती है, फिर परिवर्तनशील देवत्वको ग्रहण करनेसे क्या? इस बातको मैं बेचारा जानता हूँ और लोगोंने भी यही कहा है। सत्ताईस सागर समय बीतनेपर देवकी मृत्यु हुई। सौधावलियोंके शिखरोंसे उद्भट श्री साकेतपुरीमें राजा सुमित्रकी सज्जनोंके द्वारा सम्माननीय, हंसकुलके शब्दवाली भद्रा नामकी रानीसे सुजनोंको आनन्द देनेवाला मघवा नामका पुत्र हुआ। वह अपनी तलवाररूपी किरणसे शत्रुरूपी अन्धकारको शान्त करनेवाला घूमता हुआ नव दिनकर था।

---

१५. १. AP सीरहरि । २. A दीहकालु; P दीहकालि । ३. P °णिरयाउ° । ४. A धम्मदेवतित्थकरि; P धम्मदेवतित्थंतरि । ५. AP °इलवालय° । ६. A विचित्तयरि । ७. P णामें । ८. P भमिउ जि दिवसयरु ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

घत्ता—जिउ मागहुं[9] वरतणु सुरखेयरगणु णट्टमालितुहिणामरु[10] ॥
[11]वसिकिय मंदाइणि साहिवि मेइणि पुणरवि आयउ णिययघरु ॥१५॥

१६

दोचालीससद्धधणुतुंगं कणयच्छवि णं मंदिरे[1]सिंगं ।
अंगं तस्स सुलक्खणवंतं कामिणिमणसंखोहणवंतं ।
पंचलक्खवरिसह बद्धाउ णिच्चं सिद्धसमीहियधाउ ।
दिव्वकामभोएं भोत्तूणं चक्कवट्टिरिद्धि[2] मोत्तूणं ।
प्रिय[3]मित्तहु पुत्तहु दाऊणं सव्वं जिणतच्चं णाऊणं ।
मणहरउज्जाणं गंतूणं अभयघोसदेवं थोत्तूणं ।
गहिउं दिक्खं सहिउं दुक्खं जिणिउं तण्हं णिद्दं सुक्खं ।
मघवंतो पयणयमघवंतो रयपरिचत्तो मोक्खं पत्तो ।

घत्ता—जहिं कामु ण कामिणि दिणु णउ जामिणि ताराणाहु ण णेसरु ॥
जहिं वसइ ण सज्जणु भसइ ण दुज्जणु तहिं थिउ मघवमहेसरु ॥१६॥

१७

कालें जंतें अवरु जिह णिवु[1] उप्पण्णउ कहमि तिह ।
चिंधचीरचुंबियखयलि इह विणीयपुरि छुहधवलि ।

घत्ता—उसने मागध वरतनुको जीत लिया। देव-विद्याधर-गण, नृत्यमाल और हेमन्त-कुमारको जीत लिया। मन्दाकिनीको अपने वशमें कर लिया। इस प्रकार धरतीको सिद्ध कर वह पुनः अपने घर आ गया ॥१५॥

१६

उसका शरीर साढ़े चालीस धनुष ऊँचा था स्वर्णकी छविवाला, मानो मन्दराचलका शिखर हो। उसका शरीर सुन्दर तथा अच्छे लक्षणोंसे युक्त था, यह कामिनीके मनको क्षुब्ध करनेवाला था। उसकी आयु पाँच लाख वर्ष की थी और नवनिधानरूप स्वर्णादि धातुएँ उसे नित्यरूपसे सिद्ध थीं। दिव्य कामभोग भोगकर, चक्रवर्तीकी ऋद्धिको छोड़कर, अपने पुत्र प्रियमित्रको देकर, समस्त जिनतत्त्वको जानकर, मनहर उद्यानमें जाकर, अभयघोष देवकी स्तुति कर उसने दीक्षा ले ली, दुःख सहा, तृष्णा, निद्रा और भूख जीत ली। जिसके चरणोंमें इन्द्र प्रणत है, ऐसा मघवा चक्रवर्ती कर्मरजसे परित्यक्त होकर मोक्ष गया।

घत्ता—जहाँ न काम है और न कामिनी। न दिन है और न यामिनी। न चन्द्रमा है और न सूर्य। जहाँ न दुर्जन रहता है, और न सज्जन बोलता है। मघवा महेश्वर वहाँ निवास करता है ॥१६॥

१७

समय बीतनेपर जिस प्रकार एक और राजा हुआ, मैं उसी प्रकार उसकी कथा कहता हूँ।

---

९. A मागहवरं°। १०. P °मालिउ तुहिणामरु। ११. AP वसिकय।

१६. १. A मंदरसिंगं; P मंदरे सिंगं। २. A रिद्धी मोत्तूणं। ३. AP पियमित्तहु।

१७. १. A णिव; P णिउ।

सूरवंसणहदिणयरउ　　धीरउ पयपालणणिरउ।
पहु अणंतवीरिउ वसइ　　तहु महएवी[2] घरिणि सइ।
हरि करि विसवइ कुमुयपिउ　　जोइवि सिविणय णलिणहिउ[3]।
अच्चुयकप्पहु ओयरिउ[4]　　सुरेसिसु[5] उयरि ताइ धरिउ।
किंणरवीणारवझुणिउ　　पुणु णवमासहिं संजणिउ।
विरइयणामकरणविहिहिं　　सणकुमारु कोक्किउ सुहिहिं।
तेण समुद्दणियंसणिय　　चउदहरयणविहूसणिय।
घणणंदणवणकोंतलियँ[6]　　गंगाजलचेलंचलियँ[7]।
बहुणरिंदकोड्डावणिय[8]　　गरुयगिरिंदसिहरथणियँ[9]।
छक्खंड वि महि जित्त किह　　णिहिघडधारिणि दासि जिह।
पुव्वभणियधणुतुंगयरु　　तिण्णि लक्ख वरिसाउधरु।

घत्ता—बत्तीससहासहिं मउडविहूसहिं णरणाहहिं पणविज्जइ॥
जो सयलमहीसरु णरपरमेसरु तासु काइं वण्णिज्जइ॥१७॥

१८

रंभापारंभियतंडवइ　　तावेक्कहिं दिणि मणिमंडवइ।
अत्थाणि परिट्ठिउ सक्कु जहिं　　आलाव जाय सुरवरहिं तहिं।
भो अत्थि णत्थि किं सुहयरहु　　णरलोइ रूउ कासु वि णरहु।
तं णिसुणिवि भणइ सुराहिवइ　　जो संपइ वट्टइ चक्कवइ।

जिसके ध्वजपटोंसे आकाश चुम्बित है ऐसे चूनेसे सफेद विनीतपुरमें सूर्यवंशरूपी आकाशका दिनकर, धीर, प्रजापालनमें लीन राजा अनन्तवीर्य निवास करता था। उसकी गृहिणी महादेवी सती थी। स्वप्नमें सिंह, गज, बैल, चन्द्रमा और सूर्य देखकर उसने अच्युत स्वर्गसे अवतरित देव-शिशुको अपने उदरमें धारण किया। और फिर नौ माहमें किन्नरोंके वीणारवसे ध्वनित पुत्रको उसने जन्म दिया। नामकरण-विधि करनेवाले सुधियोंने उसे सनत्कुमार कहकर पुकारा। उसने, समुद्र जिसका वसन है, चौदह रत्न जिसके विभूषण हैं, सघन नन्दनवन जिसके कुन्तल हैं, गंगाजल जिसका वस्त्रांचल है, जो अनेक राजाओंको कुतूहल उत्पन्न करनेवाली है, भारी गिरीन्द्र शिखर, जिसके स्तन हैं, ऐसी छह खण्ड धरती उसने इस तरह जीत ली मानो निधिघट धारण करनेवाली गृहदासी हो। उसका शरीर पूर्वोक्त धनुषों (साढ़े चालीस धनुष) के बराबर ऊँचा था। वह तीन लाख वर्ष आयुको धारण करनेवाला था।

घत्ता—वह मुकुट धारण करनेवाले बत्तीस हजार राजाओंके द्वारा प्रणाम किया जाता था। जो समस्त महीश्वर और मनुष्य परमेश्वर था, उसका क्या वर्णन किया जाये? ॥१७॥

१८

एक दिन मणिमण्डपमें जब रम्भा अप्सरा ताण्डव नृत्य कर रही थी और इन्द्र दरबारमें बैठा हुआ था, तब देववरोंमें आपसमें बातचीत हुई कि "अरे क्या किसी भी शुभकर मनुष्यका नरलोकमें सुन्दर रूप है या नहीं है?" यह सुनकर इन्द्र कहता है कि "इस समय जो चक्रवर्ती हैं,

२. A महदेवी। ३. P णलिणिहिउ। ४. A अवयरिउ। ५. P सुरु सिसु। ६. AP °कोंतलिया। ७. AP °चलिया। ८. A °कोडावणिया; P कोड्डावणिया। ९. AP थणिया।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सुरणरकामिणियणणलिणरवि सो सणकुमारु किं दिट्ठु णेवि ।
माणुसु णवेत्थि रूउज्जलउं जेणेहउं भासिउं मोकलउं ।
ता झ त्ति समागय तियस तहिं अच्छइ वसुहेसरु भवणि जहिं ।
अवलोइवि णरवइ सुरवरहिं अहिणंदिउ विहुणियसिरकरहिं ।
रूवें तेल्लोक्करूवविजइ एहउ सुरिंदु दुकरु हवइ ।
जिणणाहु वि जहिं संसइ चडइ तहिं अवरु रूउ किर कहिं घडइ ।

घत्ता—पयडेवि सरूवइं सोम्मसहावइं विहसिवि देवहिं भासिउं ॥
जइ मरणु ण होंतउ तो पज्जत्तउ एउ जि रूउ सुहासिउं ॥१८॥

१९

ता जरमरणसद्द आयण्णिवि मण्णिवि तणु व महियलं ।
देवकुमारणामे सुइ अप्पिवि सतुरंगं समयगलं ॥१॥
णिच्चतिगुत्तिगुत्तसिवगुत्तमहामुणिपायपंकयं ।
तेणासंघिऊण पक्खालिय बहुभवपावपंकयं ॥२॥
गहियं वीरपुरिसचरियं चित्तं तडिदंडचंचलं ।
रुद्धं चंडकुसुमसरकंडाडंबरडमरविभलं ॥३॥
ससिडिंडीरपिंडपंडुरयरहिमपडछइयदेहयं ।
वसियं बाहिरम्मि परिसेसियघरपंगुरणणेहयं ॥४॥

सुर-नर-कामिनियोंके नेत्ररूपी कमलोंके लिए सूर्यके समान उस सनत्कुमारको देखा या नहीं।" तब रूपसे सुन्दर मनुष्य है या नहीं, स्वच्छन्द रूपसे जिन देवोंने यह कहा था, वे शीघ्र वहाँ आये जहाँ अपने भवनमें वह पृथ्वीश्वर था। सुरवरोंने उसे देखा, और अपने सिर और हाथ हिलाते हुए उसका अभिनन्दन किया। रूपसे त्रिलोकके रूपकी विजयमें यह देवेन्द्रके लिए दुष्कर होगा, इसके रूपको देखकर जिनेन्द्रके रूपमें सन्देह होने लगता है तब वहाँ दूसरा रूप कहाँ गढ़ा जा सकता है?

घत्ता—तब अपने सौम्य-स्वभाव रूपको प्रकट करते हुए देवोंने हँसकर कहा कि यदि मरण न हो, तो यह सराहनीय रूप पर्याप्त है ॥१८॥

१९

तब जरा और मरण शब्द सुनकर और महीतलको तृणके समान समझकर, देवकुमार नामके पुत्रको अश्व और मैगल सहित धरती देकर, नित्य तीन गुप्तियोंसे गुप्त शिवगुप्त महामुनिके चरणकमलोंकी शरणमें जाकर उसने अनेक जन्मके पापोंका प्रक्षालन किया तथा वीर पुरुषके चरितको स्वीकार कर लिया, बिजलीकी तरह चंचल तथा प्रचण्ड कामके बाणोंके आडम्बरके भयसे विह्वल चित्तको रोक लिया। चन्द्र फेन समूहवत् अति धवलवर्ण हिम पटलकी कान्तिके

१८. १. P णेवि। २. A णयरित्थ। ३. A वडइ। ४. AP सोम°। ५. A ण हुंतउ ता; P ण हु तउ तो।
१९. १. AP °मरणघोसु। २. AP अप्पवि। ३. A °कंडंडंबर°। ४. A °पंडुरपरहिम°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चलतडयडियपडियसोयामणिताडणविहडियायलं ।
सहियं पाउसम्मि वणतरुतलि विसरिसजलझलज्झलं ॥५॥
महिहरवियडकडयविउलविउलयलसिलायलणिहियकाइणं ।
सूरस्सहिम्मुहेण सूरेण वरेण विमुक्कराइणं ॥६॥
सोढुं गिंभयालरविकिरणकलावखरवियंभियं ।
दुद्दमकोहमोहदढलोहमयं णियलं णिसुंभियं ॥७॥
सहसा दिट्ठसयलसयरायरकेवलविमललोयणो ।
देउ सणक्कुमारु जइ सुहमइ जायउ सो णिरंजणो ॥८॥
घत्ता—मइलिउ [10]मोक्खत्तें कइधिट्ठत्तें काइं कइत्तणु पोसइ ॥
भरहाइणरिंदहं चरिउं अणिंदहं पुप्फयंतु जइ घोसइ ॥१९॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे धम्मपरमेट्ठिसुदंसणपुरिससीह-महुकीलयमघवसणक्कुमारकहंतरं णाम एक्कुणसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥५९॥

समान देहवाले वह घर और वस्त्रका मोह छोड़कर बाहर निवास करने लगे। पावस ऋतुमें वह वनवृक्षके नीचे, चंचल तड़-तड़ कर गिरती हुई बिजलीसे जिसका अयाल विघटित है, ऐसी असामान्य जलधाराको सहन करते हैं। जिसने महीधरोंके विकट कटकोंके समान विपुलसे विपुलतर शिलातलपर अपना शरीर रखा है, ऐसे रागसे मुक्त उस श्रेष्ठ वीरने सूर्यके सम्मुख होकर, ग्रीष्मकालकी रविकिरण-समूहके प्रखर विस्तारको सहकर, दुर्दम क्रोध-मोह और दृढ़ लोभमय श्रृंखलाको नष्ट कर दिया। जिससे सकल सचराचर देख लिया जाता है ऐसे केवलज्ञान-रूपी नेत्रवाला शुभमति वह सनत्कुमार निरंजन देव हो गया।

घत्ता—मूर्खता और कवि की धृष्टतासे मलिन कवित्वका पोषण क्यों किया जाता है कि जब पुष्पदन्त कवि अनिन्द्य भरत आदिका चरित घोषित करता है ॥१९॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त, महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यमें धर्मनाथ परमेष्ठी सुदर्शन पुरुषसिंह मधुक्रीड़, मघवा और सनत्कुमार कथान्तर नामका उनसठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५९॥

५. P °ताडणविणण-विहडिया° । ६. AP °वियल° । ७. A सूरशिहिमुहेण; P सूरराहिंमुहेण । ८. A °खरं वियंभियं । ९. AP जाओ । १०. AP मुक्खत्तें ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६०

दुक्कियपसरणिवारओ   जो दीणेसु किवारओ ॥
मोहमहारिउमारओ   जो सासयसिवमारओ ॥ध्रुवकं॥

१

पंचमचक्कहरो णरईसो   जेण णिओ समणं ण रईसो ।
सोलहमो परमेट्ठि पसण्णो   सुत्तणिसेहियपेसिपसण्णो ।
तत्तसमुज्जलकंचणवण्णो   णायणिउत्तचउव्विहवण्णो ।
केवलणाणमहामयमेहो   भव्वसमूहणिरूवियमेहो ।
भूसणभारविवज्जियकण्णो   पंगणणच्चियखेयरकण्णो ।
जो छणयंदकरावलिकंतो   संतसहावो उज्झियकंतो ।
भत्तजणत्तिहरो भयवंतो   जो गिरिधीरो णो भयवंतो ।
फुल्लियकोमलपंकयवत्तो   धत्थकुतित्थ सुतित्थपवत्तो ।
संतियरो भुवणुत्तमसत्तो   वुड्ढदयो परिरक्खियसत्तो ।
घत्ता—सो भवसायरतारओ   पणविवि संतिभडारओ ॥
णियसुकइत्तु पयासमि   तासु जि चरिउं समासमि ॥१॥

सन्धि ६०

जो पापके प्रसारका निवारण करनेवाले और दीनोंमें कृपारत हैं। जो मोहरूपी महाशत्रुका नाश करनेवाले और शाश्वत शिवलक्ष्मीमें रत हैं।

१

जो पाँचवें चक्रवर्ती हैं, मनुष्योंके ईश जिन्होंने कामको अपने मनके पास नहीं फटकने दिया, जो प्रसन्न सोलहवें तीर्थंकर हैं। जिन्होंने अपने सूत्रों (सिद्धान्तों) से मदिरा और मांसका निषेध किया है, जो तत्त्वसे समुज्ज्वल और स्वर्ण वर्णवाले हैं, जिन्होंने चारों वर्णोंको न्यायमें नियुक्त किया है, जो केवलज्ञानरूपी महामेघजलवाले हैं, जिनके द्वारा भव्यजनोंकी मेधा (बुद्धि) का निरूपण किया गया है, जिनके कान भूषणोंके भारसे विवर्जित हैं, जिनके प्रांगणमें विद्याधर-कन्याएँ नृत्य करती हैं, जो पूर्ण चन्द्रकी किरणावलीके समान सुन्दर हैं, जो भक्तजनोंकी पीड़ा दूर करनेवाले हैं, जो ज्ञानवान् हैं, जो पर्वतकी तरह धीर हैं, जो भययुक्त नहीं हैं; जिनका मुख खिले हुए कोमल कमलके समान है, जो कुतीर्थोंको ध्वस्त करनेवाले और सुतीर्थोंका प्रवर्तन करनेवाले हैं, जो शान्ति करनेवाले और भुवनमें सर्वश्रेष्ठ हैं, जो दयामें वृद्ध और प्राणियोंकी रक्षा करनेवाले हैं।

घत्ता—ऐसे भवसमुद्रसे तारनेवाले शान्ति भट्टारकको प्रणाम कर, अपने सुकवित्वका प्रकाशन करता हूँ और उनके चरितका संक्षेपमें कथन करता हूँ ॥१॥

---

१. १. A छणइंद°।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२

जंबूदीवि भरहि विजयाचलु   अहिणवचंदणचंपयपरिमलु।
जहिं सुरणारिहिं गेयपवीणहिं   सरु[1] सुम्मइ वज्जंतहि वीणहि।
जहिं रिसिवसइ अछित्तु अहंसें   जसु मेहल सेविज्जइ हंसें।
जहिं जं भूसिज्जइ सरं[2]कंकें   णिम्मलु तं वण्णिज्जइ कं कें।
जहिं केवलि णिव्वाणपयं गउ   जहिं मणिय[3]रहि ण दिट्ठु पयंगउ।
फलिहसिलायलि जहिं मायंगहिं   मुँहुं[4] दिज्जइ जोइयणियगंगहिं।
दाहिणसेढिहि तहि रहणेउरु   पुरु णो[5]रियणरणियपयणेउरु।
देत्थु जलणजडि णिवसइ खगवइ   विणं[6]ओणयसिरु णारइ खगवइ।
णियजसेण कंतहु चंदाहहु   तिलयणयरणाहहु चंदाहहु।
तासु सुहद्ददेवि पियराणी   णं आसीस पुव्वपियराणी।

घत्ता—ताहं बिहिं मि सुय हूई   णं रइणाहहु दूई॥
वाउवेय सा एयहु   दिण्णी दिणयरतेयहु॥२॥

३

सिहिजं[1]डिणामहु जयसिरिधामहु   रूउ[2]द्दामहु णिज्जियकामहु।
अक्ककित्ति सुउ जायउ केहउ   खत्तधम्मु णरवेसें जेहउ।
अवर वि चंदसरीरइ णं पह   उप्पण्णी सुय णाम सयंपह।

२

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें अभिनव चन्दन और चम्पक परिमलसे युक्त विजयार्ध नामका पर्वत है जहाँ गीतमें प्रवीण सुरनारियों और बजती हुई वीणाका स्वर सुना जाता है। जहाँ ऋषियोंकी बस्ती है और जो पापांशसे अछूता है, जिसकी मेखला हंसके द्वारा सेवित है। जहाँ जो जल जलबकसे भूषित हैं निर्मल उस जलका मैं क्या वर्णन करूँ? जहाँ केवलियोंने निर्वाण प्राप्त किया। जहाँ मणिकिरणोंके कारण सूर्य दिखाई नहीं देता। जिन्होंने अपने शरीरका प्रतिबिम्ब देखा है ऐसे हाथी जहाँ स्फटिक शिलाओंपर अपना मुँह देखते हैं। उस पर्वतकी दक्षिण श्रेणीमें रथनूपुर नगर है, जिसमें नारीजनोंके नूपुरोंकी रुनझुन सुनाई देती है। उसमें ज्वलनजटी नामका विद्याधर निवास करता था। अपने यशसे कान्त चन्द्रके समान आभावाले तिलकनगरके राजा चन्द्राभकी सुभद्रादेवी नामकी प्रिय रानी थी, जो मानो पूर्वजोंका आशीर्वाद थी।

घत्ता—उन दोनोंके एक पुत्री हुई जो मानो कामदेवकी दूती थी। वह वायुवेगा (कन्या) दिनकरके समान तेजवाले इसे (ज्वलनजटी) को दी गयी॥२॥

३

विजयश्रीके घर कामको जीतनेवाले और रूपमें उत्कट ज्वलनजटीका अर्ककीर्ति नामका ऐसा पुत्र हुआ, जो मनुष्यके रूपमें जैसे छात्रधर्म हो। और भी उसे चन्द्रमाके शरीरसे प्रभाके

२. १. A सुरु। २. A सरु कंकें। ३. A मणिणियरहिं। ४. AP महुं। ५. A णारीयण°। ६. A विणउण्णय°।

३. १. A सिहजडि°। २. A रूवोदामहु।

देसि[3] सुरम्मइ पंकयणेत्तहु पोयणणयरि पयावइपुत्तहु ।
विजयाणुयहु महाहवपबलहु कोडिसिलासंचालणधवलहु ।
मुसुमूरियकंठीरवकंठहु दिण्णी पढमहु हरिहि तिविट्ठहु ।
जणिउ ताइ सिसु सिरिविजयंकउ विजयभद्दु कंतीइ ससंकउ ।
उत्तरसेढिहि वसियंतेउरि पुरि सुरिंदकंतारि सुगोउरि ।

घत्ता—परिहावलयसुदुग्गमि रयणदीवणासियतमि ॥
पंचवण्णधयसोहणि देवदेविमणमोहणि ॥३॥

४

खयरु मेहवाहणु पीणत्थणि णाम मेहमालिणि तहु पणइणि ।
जुइमाला णामें सुय वल्लह ढोइय रविकित्तिहि परदुल्लह ।
परिणिय पुत्तु[1] तेण तहि जायउ अमियतेउ णामें विक्खायउ ।
धीय सुतार तारवरलोयण सुंदरि मुणिहिं वि कामुक्कोयण ।
ताएं पोढत्तणि कयपणयहु दिण्णी सिरिविजयहु ससतणयहु ।
अमियतेउ भल्लारउ भाविउ जुइवह सुय कण्हें परिणाविउ ।
भुत्तउं तेण णिबद्धं[2] णियाणउं पत्तउ कालें अवहियठाणउ[3] ।
सिरि सिरिविजयहु देवि हियत्तें कामभोयपरिभारविरत्तें ।
विजएं तउं[4] लइयउं आयण्णिवि वित्तु कलत्तु वि तिणसमु[5] मण्णिवि ।

समान स्वयंप्रभा नामकी कन्या उत्पन्न हुई। सुरम्य देशके पोदनपुर नगरमें कमलके समान नेत्रोंवाले, प्रजापतिके पुत्र विजयके छोटे भाई महायुद्धोंमें प्रबल, कोटिशिला संचालनमें श्रेष्ठ सिंहोंकी गरदनोंको मरोड़नेवाले प्रथम नारायण त्रिपृष्ठको वह कन्या दी गयी। उससे श्रीविजयांक पुत्र उत्पन्न हुआ। और कान्तिमें चन्द्रमाके समान दूसरा विजयभद्र। विजयार्ध पर्वतकी उत्तर श्रेणीमें जिसमें अन्तःपुर हैं, ऐसा सुन्दर गोपुरवाला सुरेन्द्रकान्तार नगर है।

घत्ता—जो परिखा वलयसे अत्यन्त दुर्गम है, जिसमें रत्नद्वीपोंसे अन्धकार नष्ट हो गया है, जो पंचरंगे ध्वजोंसे शोभित है तथा देव और देवियोंका मन मुग्ध कर लेता है ॥३॥

४

उसमें मेघवाहन नामका विद्याधर राजा था। उसकी प्रिय गृहिणी पीन स्तनोंवाली मेघमालिनी थी। उसकी ज्योतिर्माला नामकी प्रिय पुत्री थी, शत्रुओंके लिए दुर्लभ जो अर्ककीर्तिके लिए दी गई। उसने उससे विवाह कर लिया। वहाँ अमिततेज नामका पुत्र हुआ। स्वच्छ और श्रेष्ठ आँखोंवाली सुतार नामक कन्या हुई। वह सुन्दरी मुनियोंको भी कामकुतूहल उत्पन्न करनेवाली थी। प्रौढ़ होनेपर पिताने प्रणय करनेवाले अपनी बहनके लड़के श्रीविजयको उसे दे दिया। अमिततेज बहुत भला था। नारायणने ज्योतिप्रभा उसे ब्याह दी। इस प्रकार उसने अपने बाँधे हुए निदानका भोग किया, और समय आनेपर नरकभूमिमें पहुँचा। कामभोगके परिभारसे विरक्त हृदय विजयने लक्ष्मी श्रीविजयको देकर तप ले लिया है, यह सुनकर धन और

३. A देससुरम्मइ ।

४. १. AP तेण पुत्तु । २. AP णिबद्धु । ३. A अवहियट्ठाणउ; P अवहिट्ठाणिउ । ४. P वउ । ५. AP तिणसउं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमियतेउ णियरज्जि थवेप्पिणु　　भत्तिइ तउ तिव्वयरु तवेप्पिणु।
अक्ककित्ति जइवइ गउ मोक्खहु　　मुक्कउ भवसंसरणहु दुक्खहु।
विजयभद्दु सिरिविजयहु वच्छलु　　जिह तिह अमियतेउ णिरु णेहलु।
पाहुडगमणागमणपवाहें　　जाइ कालु बंधुहुं उच्छाहें।
घत्ता—जा तावेक्कु सुसोत्तिउ　　तहिं आयउ णिम्मित्तिउ[६]॥
सत्तमि दिणि जं होसइ　　तं सिरिविजयहु घोसइ ॥४॥

५

अरिपुरवरणिवसावयवाहहु　　तडि णिवडेसइ पोयणणाहहु।
तडयडंति सिरि[१] द्रत्ति भयंकरि　　सहसा दहविहप्राण[२]खयंकरि।
विजयभद्दु पभणइ रे बंभण　　णिद्दय सज्जणहिययणिसुंभण।
जइ रायहु सिरि विज्जु पडेसइ　　तो तुहुं सिरि भणु किं णिवडेसइ।
तं आयण्णिवि तणुविच्छायहु　　दियवरु आहासइ जुवरायहु।
पत्थिव महु मत्थइ मलमुक्कइं　　णिवडिहिंति णाणामाणिक्कइं।
मरणवयणवा[३]एं विद्दाणउ　　तहिं अवसरि सइं पुच्छइ राणउ।
को तुहुं कासु पासि कहिं[४] सिक्खिउ　　केम[५] भविस्सु बप्प पइं लक्खिउ।
अक्खइ सुत्तकंठु पुहईसहु　　हउं पव्वइयउ समउं हलीसहु।
गउ विहरंतु देसि पुरु कुंडलु　　णं महिणारिहि परिहिउ कुंडलु।

कलत्रको तृणके समान समझकर, अमिततेजको अपने राज्यमें स्थापित कर, भक्तिसे तीव्रतम तप तपकर यतिपति अर्ककीर्ति मोक्ष गया और इस प्रकार संसारके दुःखसे दूर हो गया। जिस प्रकार श्रीविजयका प्रिय विजयभद्र, उसी प्रकार और स्नेही अमिततेज, उपहारोंके आने-जानेके प्रवाह और उत्साहसे दोनों बन्धुओंका जब समय बीतने लगा—

घत्ता—तब एक ज्योतिषी ब्राह्मण वहाँ आया, और सात दिन बाद जो होनेवाला था, वह उसने श्रीविजयको बताया ॥४॥

५

"शत्रुनगरके राजारूपी श्वापदके लिए व्याधा पोदनपुरनरेशके सिरपर तड़तड़ करती हुई शीघ्र और अचानक दसों प्राणोंका अन्त करनेवाली भयंकर बिजली गिरेगी।" इसपर विजयभद्र कहता है—"हे निर्दय, सज्जनोंके हृदयको चूर-चूर करनेवाले ब्राह्मण, यदि राजाके सिरपर वज्र गिरेगा, तो तू बता तेरे सिरपर क्या गिरेगा?" यह सुनकर द्विजवर शरीरसे कान्तिहीन युवराजसे कहता है—'हे राजन्, मेरे सिरपर मलसे रहित नाना मणि गिरेंगे।' उस अवसरपर मरण शब्दकी हवासे शुष्क राजा स्वयं पूछता है—"तुम कौन हो, किसके पास तुमने कहाँ यह सीखा है? हे सुभट, तुमने किस प्रकार भविष्य देख लिया?" ब्राह्मण राजासे कहता है कि "बलभद्रके साथ मैं प्रव्रजित हुआ था। देशमें विहार करते हुए मैं कुण्डलपुर पहुँचा, जो ऐसा लगता था

---

६. AP णेमित्तिउ।

५. १. A सिरि दुत्ति; P सिरि दत्ति। २. AP °पाण°। ३. AP °वायइ। ४. AP किर। ५. P केम इहु भविस्सु।

दूसहविसयपरीसहभग्गउ काइं मि जीवियवित्तिहि लग्गउ।
घत्ता—अंतरिक्खसुणिमित्तइं सिक्खिउ गहणक्खत्तइं ॥
भउमु वि खेत्तपमाणउं अंगउं अंगणिवाणउं ॥५॥

६

सरु गंभीरु इयरु उवलक्खिउ विंजणु पुणु तिलयाइउं सिक्खिउ।
लक्खणाइं कमलाइं पसत्थइं जाणमि मूसयछिण्णइं वत्थइं।
वक्खाणमि जं जिह सिविणंतरु पावइ जेण सुहासुहु णरवरु।
तं हउं सिक्खिवि अट्ठपयारउं इय एहउ णिमित्तु सवियारउं।
केसरिरहहु पुरोहिउ सुरगुरु तासु वि सीसु विसारउ महुं गुरु।
वंदिवि आयउ पोमिणिखेडहु फलिहालंकियकुलिसकवाडहु।
सोमसम्मु णियजणणीभायरु मइं दिट्ठउ तहिं कयपरमायरु।
मेलाविउ हउं तेण संदुहियहि लोमांजणियहि ससहरमुहियहि।
ससुरयदिण्णु दव्वु भुंजंतहं दोहं मि गलिउ कालु कीलंतहं।
हउं पर केवलु पढमि णिमित्तइं किं पि वि णिव ण समज्जमि वित्तइं।
मामसमप्पिउ कंचणु णिट्ठिउ घरि दालिद्दु रउद्दु परिट्ठिउ।
महुं कडियलि लग्गउं कोवीणउं तो वि ण भासमि कासु वि दीणउं।

मानो महीरूपी नारीने कुण्डल पहन लिया हो। असह्य विषय-परिषहसे भग्न होकर मैं किसी प्रकार जीविकावृत्तिमें लग गया।

घत्ता—मैंने अन्तरिक्ष-निमित्त विद्या सीखी और ग्रह-नक्षत्रोंकी विद्या सीखी। क्षेत्र प्रमाण सहित भूमिविद्या अंगकी रचनासे सम्बन्धित अंग-निमित्त सीखा ॥५॥

६

और दूसरा गम्भीर स्वर निमित्त सीखा, तिल आदिके द्वारा व्यंजन निमित्त सीखा। कमलादि प्रशस्त लक्षण निमित्त सीखा। चूहों आदिके द्वारा काटे गये वस्त्रोंसे सम्बन्धित छिन्न निमित्त मैं जानता हूँ। स्वप्नान्तरमें जो जैसा है उसका व्याख्यान करता हूँ कि जिससे नरवरको शुभाशुभ फल प्राप्त होते हैं। इस प्रकार इन विचारपूर्ण आठ प्रकारके निमित्तोंको सीखकर, सिंहरथके पुरोहित बृहस्पति, उनका शिष्य विशारद मेरा गुरु है। उनकी वन्दना कर, स्फटिक-मणियोंसे अलंकृत वज्र किवाड़वाले पद्मिनीखेट नगरसे आया हूँ। सोमशर्मा मेरी माँका भाई है, अत्यन्त आदर करनेवाले उससे मैं मिला। उसने अपनी कन्या हिरण्यलोमासे मेरा मिलाप करवा दिया (विवाह कर दिया)। ससुरका दिया हुआ धन खाते हुए और क्रीड़ा करते हुए हम दोनोंका समय बीत गया। मैं केवल निमित्तशास्त्रका अध्ययन करता रहता, मैं बिलकुल भी धनका अर्जन नहीं करता। ससुरके द्वारा दिया गया धन नष्ट हो गया और घरमें भयंकर दारिद्र्य प्रवेश कर लिया। मेरी कमरमें केवल लँगोटी बची। तब भी मैं किसीसे दीन वचन नहीं कहता था।

६. AP °विसहपरीसह° ।

६. १. A छिन्नइं; P छित्तइं । २. P सुदुहियहि । ३. A लोमंजणियहि । ४. AP ससयर° । ५. A सुसुरय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—घरिणिइ पसरियदुक्खइ   महुं डज्झंतहु भुक्खइ ॥
भुंजहि भणिवि विसालइ   घित्त वराडय थालइ ॥६॥

७

तुहुं महुं दइवें दिण्णउं बंभणु   एत्तिउं तेरउं अच्छइ कुलहणु ।
उज्जंउ[1] करहि ण भरहि कुडुंबउं   लोयणजुयलु करिवि आयंबउं ।
एम जाम घरणीइ पवोल्लिउ   ता महुं हियवउ णं झसंसल्लिउ[2] ।
अइणियडउं जि जलणु पज्जालिउ[3]   इंधइ इंधणु केण वि चालिउ ।
तक्खणि सिहिफुलिंगु उच्छलियउ   आविवि जलयरि[4] गरुयइ घिवियउं ।
हउं थिउ तं जोयंतु[5] सइत्तउ   ता कंतइ सिरि सलिलिं सित्तउ ।
उत्तरु महुं ण देसि जंपंतिहि   मइं[6] दर विहसिवि भासिउं पत्तिहि ।
जं इंगालउ पडिउ वरालइ[7]   तं तडि पडिही[8] पोयणपालइ ।
जं पइं पाणिएण अहिसिंचिउ   तं जाणेहि[9] हउं रयणहिं अंचिउ ।
सा[10] जंपइ पइ बुद्धिहि भुल्लउ   चप्फलु[11] झंखइ चंदगहिल्लउ ।
घत्ता—डज्झउ णिद्धणजंपिउं   महुरु वि कण्णहं विप्पिउं ॥
परु जणवउ किं वुच्चइ[12]   कुलघरणिहिं वि ण रुच्चइ ॥७॥

घत्ता—जिसका दुःख बढ़ रहा है ऐसी गृहिणीने भूखसे जलते हुए मुझपर, 'खा लो' कहकर बड़ी-सी थालीमें कौड़ियाँ डाल दीं" ॥६॥

७

देवने तुम जैसा ब्राह्मण मुझे दिया। तुम्हारा कुल धन इतना ही है, उद्यम कर अपने कुटुम्बका पालन नहीं करते हो—अपनी दोनों आँखें लाल-लाल करते हुए जब इस प्रकार स्त्रीने कहा तो मेरा हृदय प्रज्वलित हो उठा। मेरे अत्यन्त निकट जलती हुई आग थी। किसीने चूल्हेमें आग चला दी। तत्क्षण आगकी चिनगारी उचटी और आकर विशाल कौड़ीपर गिर पड़ी। मैं सावधान होकर उसे देखता हुआ स्थित था। तब पत्नीने सिरपर उसे सींच दिया। (बोली) "बोलते हुए मुझे तुम उत्तर नहीं दोगे।" तब मैंने थोड़ा हँसते हुए पत्नीसे कहा—"कौड़ीपर जो अंगारा पड़ा है वह पोदनपुरके राजापर बिजली गिरेगी और जो तुमने पानीसे उसे सींचा है, उससे तुम यह जानो कि मैं रत्नोंसे अंचित होऊँगा?" वह बोली—"पति बुद्धिसे भोला है, चन्द्रमासे अभिभूत (पागल) वह मिथ्याभाषासे सन्तप्त होता है।

घत्ता—निर्धन व्यक्तिके द्वारा कहे हुएको आग लग जाये, मधुर होते हुए भी (कथन) कानोंके लिए बुरा लगता है, दूसरे लोग क्या कहेंगे, खुद कुलीन गृहिणीको गरीब (पति) की बात अच्छी नहीं लगती" ॥७॥

७. १. AP उज्जमु । २. P झससिल्लिउ । ३. AP पजालिउ । ४. AP गरुयइ जलयरि । ५. AP जं जोयंतु । ६. A omits this foot. । ७. P वराडइ । ८. P तडि पडिहीसी । ९. AP जाणमि । १०. A सइ जंपइ; P स वि जंपइ । ११. P चप्पलु । १२. AP हच्चइ ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

८

इय चिंतंतु घरहु णीसरियउ हउं तुम्हारइ पुरि अवयरियउ।
णामु अमोहजीहु ओहच्छमि[1] पट्टणणाहहु पलउ णियच्छमि।
जइ चुक्कइ नूवं[2] केवलिदिट्ठउं तो जाणहि चुक्कइ मइं सिट्ठउं।
सउणु भडारा सच्चउं सुच्चइ करु[3] पडियारु जेम तुहुं रुच्चइ।
तं तहु भणिउ चित्ति संमाइउ राएं मंतिहि वयणु पलोइउ।
भणइ सुबुद्धि कुलिसमंजूसहि आयससंखलवलयविहूसहि।
वसहि णराहिव मज्झि समुद्दहु जेणुंव्वरसि[4] सदेहविमद्दहु।
चवइ सुमइ पइसहि परदुच्चरि रुप्पयगिरिवरगुहविवरंतरि।
मइसायरु भासइ ण तसिज्जइ णरवइ जिणवरिंदु सुमरिज्जइ।
जं लिहियउं तं अग्गइ थक्कइ जमकरणहु मरणहु को चुक्कइ।
घत्ता—सुरमहिहरथिरचित्तें कयपहुरक्खपयत्तें॥
धरियणराहिवमुद्दें भासिउं बुद्धिसमुद्दें॥८॥

९

विवरि णिहित्तउ[1] वित्तु पहाणउ सुणि महिवइ दिट्ठंतकहाणउ।
गेहि जयंतीपंतिहिं वेविइ सीहउरइ सिरिरामासेविइ।
अच्छइ तहिं वि संझहिं ण्हायउ खलु दप्पिट्ठु सोमु परिवाइउ[2]।

८

यह विचार करते हुए घरसे निकल पड़ा और मैं तुम्हारी नगरीमें आया। मेरा नाम अमोघजिह्व है। मैं यहाँ रहता हूँ और नगरके राजाका नाश (प्रलय) देखता हूँ। हे राजन्, यदि केवलज्ञानीका कहा चूक सकता है, तो समझ लीजिए कि मेरा कहा भी चूक जायेगा। हे आदरणीय, स्वप्न सच्चा कहा जाता है, तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा प्रतिकार कर लीजिए। तब उसका कहा राजाके चित्तमें समा गया। उसने मन्त्रीका मुख देखा। सुबुद्धि मन्त्री कहता है—"हे राजन्, तुम लोहेकी शृंखलाओंके समूहसे अलंकृत वज्रमंजूषामें स्थित होकर समुद्रके भीतर रहो जिससे तुम अपनी देहके विनाशसे बच सको।" सुमति नामका मन्त्री कहता है कि "दूसरोंके लिए दुर्गम विजयार्ध पर्वतकी गुफाके विवरके भीतर प्रवेश करो।" मतिसागर मन्त्री कहता है—"हे राजन्, आपको पीड़ित नहीं होना चाहिए और जिनवरका स्मरण करना चाहिए। जो लिखा हुआ है, वह आगे आयेगा। यमकरण और मरणसे कौन बचता है?"

घत्ता—सुमेरु पर्वतके समान स्थिर चित्त, तथा जिसने प्रभुकी रक्षाका प्रयत्न किया है और जिसने राजा की मुद्राको धारण किया है ऐसे मतिसागर मन्त्रीने कहा—॥८॥

९

"हे राजन्, विवरमें निहित मुख्य वृत्तान्तको दृष्टान्त—कथानकके रूपमें सुनिए—ध्वज-पंक्तियोंसे प्रकम्पित तथा लक्ष्मीरूपी रमणीसे सेवित सिंहपुरमें सोमशर्मा नामका अत्यन्त दुष्ट

८. १. AP आ अच्छमि। २. AP णिव। ३. AP करि। ४. AP जेणुव्वरहि।
९. १. A णिहितहु। २. AP सोम्मु परिवायउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समयंतरपवियारणि जाए   सो जिणदासें जित्तु वित्राए।
दुप्परिणामें मुउ कयमायउ   तहिं जि महिसु संविसाणउ जायउ।
णासोवंसउ विधिवि साहिउ   लोएं लोणु भरेप्पिणु वाहिउ।
कालें जंतें जायउ दुब्बलु   एम जीउ भुंजइ दुक्कियफलु।
गलियसत्ति सो णिवडिवि थक्कउ   णायरणरणिउरुंबें मुक्कउ।
को वि ण तिणु णउ पाणिउं दावइ   रूसिवि सेरिहु णियमणि भावइ।
जइयहुं हउं बलवंतउ होंतउ   जइयहुं वलइउ भारु वहंतउ।
तइयहुं सयल देंति महुं भोयणु   अज्जु ण केण वि किउ अवलोयणु।
कसमसत्ति दंतेहिं दलेवउं   पुरयणु मइं कइयहुं वि गिलेव्वउं।
घत्ता—इय भरंतु माहिंदउ   दुग्गइवेल्लीकंदउ॥
मरिवि भरेण सतामसु   हुउ तहिं पिउवणि रक्खसु॥९॥

१०

तेत्थु जि पुरि अण्णायविहूसिउ   कुंभु णाम राणउ मंसासिउ।
तेण सयलु काणणमृगु खद्धउ   हरिणु ससउ सारंगु ण लद्धउ।
चिंतइ सूयारउ णिरु णिक्किउ   विणु मासेण ण भुंजइ ध्रुवु नृवु।
वणयरु णत्थि केत्थु पावमि पलु   आहिंडवि मसाणधरणीयलु।
आणिउं घल्लियडिंभयजंगलु   जीहालोलहं पेउ जि मंगलु।

और घमण्डी परिव्राजक अपने घरमें तीन सन्ध्याओंमें स्नान करता हुआ रहता था। जिसमें शस्त्रान्तरोंपर विचार है, ऐसे विवादमें वह जिनदासके द्वारा जीत लिया गया। वह मायावी दुष्परिणामसे मर गया और वहीं सींगोंवाला भैंसा हुआ। उसकी नाक छेदकर साध लिया (वशमें कर लिया) गया और नमक लादकर उसे चलाया। समय बीतनेपर वह दुर्बल हो गया। जीव इसी प्रकार दुष्कृतका फल भोगता है। शक्ति क्षीण हो जानेपर वह गिरकर थक गया। नागरजन समूहने उसे मुक्त कर दिया। कोई भी उसे न जल देता और न घास। वह भैंसा अपने मनमें क्रुद्ध होकर विचार करता है कि जब मैं बलवान् था और गोनीका भार ढोता था, तबतक सब लोग मुझे भोजन देते थे। परन्तु आज किसीने मेरी ओर देखा तक नहीं। मैं कसमसाकर दाँतोंसे नष्ट कर दूँगा, मैं कब इन पुरजनोंको निगल सकूँगा।

घत्ता—दुर्गतिरूपी बेलका अंकुर वह तामसी भैंसा यह स्मरण करता हुआ बोझसे मरकर वहीं मरघटमें राक्षस हुआ॥९॥

१०

उसी नगरीमें अज्ञानसे विभूषित कुम्भ नामका मांसभक्षक राजा था। उसने जंगलके सारे पशु खा लिये। जब हरिण, खरगोश और पक्षी नहीं मिले तो निर्दय रसोइया सोचता है कि बिना मांसके राजा निश्चयसे भोजन नहीं करेगा। वनपशु नहीं हैं, मांस कैसे पा सकता हूँ। मरघटकी धरतीपर घूमकर वह पड़े हुए बच्चेके मांसको ले आया। जो लोग जीभके लालची हैं

३. A हयमाणउ; K also records: हयमाणउ इति पाठान्तरे। ४. AP आयउ सुविसाणउ।
५. AP णासावंसें। ६. P विंधवि। ७. A तणु। ८. P रूसइ। ९. A कसमसंतदंतेहिं।
१०. १. P °मिगु। २. P धुउ णिउ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पइवि महाणससत्थणिओएं ढोइउ पहुहि रसायणपाएं
तूँसिवि तहु मुहकमलु णिरिक्खिउ चारु चारु पभणंते भक्खिउ।
माणुसमासहु राउ पइद्धउ अवरहिं दिणि सूयौरु जि खद्धउ।
साहियरक्खसविज्जाणियरउ णरवरिंदु हूयउ रयणियरउ।
तहिं अवसरि पुव्विल्लउ णिसियरु तहु सरीरि संठिउ भीसणयरु।
कुलिसकढिणणक्खेहिं वियारइ णासंतइं जंतइं पच्चारइ।
वाहिवि वाहिवि पुणु अवहेरिउ चंगउं हउं चिरु भुक्खइ मारिउ।
अप्पसयत्थियाइं तमवंतइं एवहिं कहिं महु जाहु जियंतइं।
घत्ता—पंडुरमंदिरपयडइ ता पट्टणि कारयडइ॥
सयलु लोउ थिउ पइसिवि तहु रयणियरहु णासिवि ॥१०॥

११

ता सीहउरु पमेल्लिवि णिग्गउ णियरक्खसु जणपच्छइ लग्गउ।
घेंडहड त्ति णरलोहिउ घोट्टइ कडँयड त्ति हड्डइं दलवट्टइ।
चरयँरंत तणुचम्मइं फाडइ णाइं णिबद्धँणाइं अप्फोडइ।
रायणिसाडचरणजुयलग्गइ ता वुत्तउ पयाइ भयभग्गइ।
चरुयसयडु मणुएं संजुत्तउ दियहि दियहि लइ तुज्झु णिउत्तउ।
जइयहुं तं आयँउ ण णिरिक्खहि तइयहुं तुहुं पुणु सव्वइं भक्खहि।
कुंभकारकडु पुरवरु घुट्ठउं णिच्चमेव दिज्जइ चवइट्ठउं।

उनके लिए प्रेत-मांस भी मंगल होता है। पाकशास्त्रके विधानके अनुसार पकाकर रसोइयेने उसे दिया। राजाने सन्तुष्ट होकर उसका मुखकमल देखा, और 'बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर' कहकर उसको खा लिया। उसका प्रेम मांसभक्षणमें बढ़ गया और दूसरे दिन उसने रसोइयेको खा लिया। जिसने राक्षस-विद्या-समूह सिद्ध कर लिया है ऐसा वह नरवर राक्षस हो गया। उस अवसरपर पहलेका निशाचर (भैंसेका जीव) उसके शरीरमें प्रविष्ट हो गया। वह अपने कुलिशके समान कठोर नखोंसे विदीर्ण करता और भागते हुए लोगोंको उलाहना देता। बुला-बुलाकर उनका तिरस्कार करता। भला मैं बहुत समयसे भूखसे पीड़ित हूँ, स्वार्थी और अज्ञानसे भरे हुए तुम लोग मुझसे (बचकर) जीते जो कहाँ जाते हो।"

घत्ता—जो सफेद घरोंसे प्रगट है, ऐसे उस कारकट-नगरमें उस राक्षस राजासे भागकर प्रवेश कर रहने लगे॥१०॥

११

तब वह नृपराक्षस सिंहपुरसे निकला और लोगोंके पीछे लग गया। घड़-घड़ कर लोगोंका खून पीता और कड़कड़ करके हड्डियोंको चूर-चूर कर देता। शरीरके चमड़ेको चर-चर करके फाड़ देता और उसके जोड़ोंको तोड़ डालता। राजाके दोनों पैरोंपर गिरते हुए भयभीत प्रजाने कहा—"तुम प्रतिदिन मनुष्य सहित एक गाड़ी भात निश्चित रूपसे लो, और जब तुम उसे आया हुआ न देखो, तब तुम सब लोगोंको खा डालना।" इस प्रकार वह नगर कुम्भकारकट घोषित

३. AP रूसिवि। ४. AP सूयारु वि।

११. १. AP घडयडत्ति। २. AP कडयडत्ति। ३. AP चरयरंत। ४. AP णिबंधणाइं। ५. AP आयउं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तहिं जि चंडकोसिउ[6] दियसारउ   सोमसिरीमणणयणपियारउ ।
पउरणिबद्धउ णिरु दुण्णिवारउ   अण्णहिं दिणि तहु आयहु वारउ ।
विप्पेण वि अणडुवरि[7] णिवेसिउ   पुत्तु मंडकोसिउ लहु पेसिउ ।
भूयहिं चालिउ पासि णिसीहहु   ललललंतमुहणिग्गयजीहहु ।
घत्ता—दंडपाणि अवराइउ   रक्खसु संमुहुं धाइउ ॥
ढंढरेहिं[8] महिरंधइ   बडुवउ[9] घित्तु तमंधइ ॥११॥

१२

तहिं अच्छिउ अजयरु तें गिलियउ   पुणु सो वलिवि ण जणणिहिं मिलियउ ।
तेण देव तुहुं विवरि म घिप्पहि[1]   एत्थु जि जीवोवाउ वियप्पहि ।
पभणइ मइसायरु महि दिज्जइ   पोयणणाहु अवरु[2] इह किज्जइ ।
ता अहिसिंचिवि मेइणिसासणि   कंचणजक्खु णिहिउ सिंहासणि[3] ।
सो किंकरजणेण पणविज्जइ   सो चलचामरेहिं विज्जिज्जइ[4] ।
जीय देव आएसु भणिज्जइ   तासु पुरउ णच्चिज्जइ गिज्जइ ।
गयणविलंबमाणधयमालउ   णरवइ गंपि पइट्ठु जिणालउ ।
झायइ अधुवु[5] असरणु तिहुवणु   जिणपडिबिंबणिहियणिच्चलमणु ।
ता सत्तमउ दियहु संपत्तउ   जो जणेण पोयणवइ उत्तउ ।

हुआ। जो कहा गया था, वह प्रतिदिन दिया जाने लगा। वहाँ चण्डकौशिक नामका ब्राह्मण श्रेष्ठ था जो अपनी पत्नी सोमश्रीके मन और नेत्रोंके लिए प्रिय था। एक दिन नगरप्रवरके द्वारा निबद्ध (निश्चित की गयी) दुर्निवार उसकी बारी आ गयी। ब्राह्मणने गाड़ीके ऊपर अपने पुत्र मण्डकौशिकको बैठाया और शीघ्र उसे भेजा। जिसके मुखसे लपलपाती हुई जीभ निकल रही है ऐसे राजाके पास भूत उसे ले गये।

घत्ता—तब दण्डपाणि अपराजित नामका राक्षस सामने दौड़ा। दूसरे राक्षसोंने उस बटुकको एक अन्धे महीरन्ध्रमें फेंक दिया ॥११॥

१२

वहाँ एक अजगर था। उसने उसे खा लिया। वह ब्राह्मण दुबारा आकर अपनी माँसे नहीं मिला। इसलिए हे देव, तुम अपनेको विवरमें मत डालो, यहींपर जीनेके उपायको सोचिए। मतिसागर मन्त्री कहता है—धरती दे दी जाये और पोदनपुरका दूसरा राजा बना दिया जाये। तब स्वर्णयक्षको धरतीके शासकके रूपमें अभिषेक कर सिंहासनपर स्थापित कर दिया गया। उसको किंकरजनोंके द्वारा प्रणाम किया जाता है, चंचल चमरोंके द्वारा उसे हवा की जाती है, "हे देव, आदेश दीजिए" यह कहा जाता है। उसके सम्मुख गाया और नाचा जाता है। जिसकी ध्वजमाला आकाशसे लगी हुई है ऐसे जिनमन्दिरमें जाकर वह राजा बैठ गया। वह अनित्य और अशरण त्रिभुवनका ध्यान करता है। उसका मन जिनप्रतिमामें लीन और निश्चित था। इतनेमें

६. P चंडकासिउ । ७. AT अणु उवरि । ८. P ढंढुरेहिं । ९. AP बडुयउ ।

१२. १. A घेप्पहि; P धेप्पिहि । २. AP अवर वर । ३. AP सीहासणि । ४. P वज्जिज्जइ । ५. AP अद्धुउ ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

असणि पडिय तहु जक्खहु उप्परि णेमित्तियहु दिण्ण रहँ हरि करि।
पउमिणिखेडु गामसयसहियउं णंदणवणमारुयमहिमँहियउं।

घत्ता—अण्णु वि रयणिहिं संचिउ मोत्तियदामहिं अंचिउ।।
किउ बंभणु परिपुण्णउ पुणु पहु रज्जि णिसण्णउ।।१२।।

१३

चंदकुंदणिहदहियहिं खीरहिं गंगासिंधुमहासरिणीरहिं।
अट्ठावयकलसहिं जिणु ण्हाणइ करिवि विइण्णइं दीणहं दाणइं।
अप्पाणहु कुलकुवलयचंदें विहिय संति सिरिविजयणरिंदें।
कालें जंतें तहिं णिवसंतें पोयणपुरवरु परिपालंतें।
जणणिपसाएं मंतु लहेप्पिणु पंचपरमपरमेट्ठि णवेप्पिणु।
सुज्जतेय विज्जाहरसामिणि साहिय विज्ज णहंगणगामिणि।
जोव्वणभावजणियसिंगारइ एक्कहिं वासरि समउं सुतारइ।
गउ णहेण वणि दुमदलणीलइ थिउ कामिणिकिलिकिंचियकीलइ।
तावेत्तहि विहरणअणुराइउ भामँरिविज्ज लहेवि पराइउ।

घत्ता—हित्तमहारिउछाएं इंदासणि खगराएं।।
आसुरियहि उप्पण्णउ लच्छिहि गुणसंपुण्णउ।।१३।।

सातवाँ दिन आ गया। और ज्योतिषजनने जैसा कुछ पोदनपुरमें कहा था, वह वज्र उस स्वर्णयक्षके ऊपर गिर पड़ा। राजा कुम्भने उस नैमित्तिकको रथ, घोड़े और हाथी दिये। एक सौ ग्रामोंके साथ उसे पद्मिनीखेड नगर दिया, जो नन्दनवनकी हवासे महक रहा था।

घत्ता—और भी उसे रत्नोंसे संचित और मोतियोंकी मालासे अंचित किया। उस ब्राह्मणको परिपूर्ण बना दिया और वह स्वयं पुनः राज्यमें स्थित हुआ।।१२।।

१३

चन्द्रमा और कुन्दपुष्पोंके समान दही और दूधोंसे, गंगा-सिन्धु महानदियोंके जलोंके एक सौ आठ कलशोंसे जिनका अभिषेक कर उसने दीनजनोंको दान दिया। कुलरूपी कुवलयके चन्द्र श्रीविजय नरेन्द्रने अपने कुलकी शान्ति की। वहीं निवास करते हुए समय बीतनेपर और पोदनपुरका पालन करते हुए, माँके प्रसादसे मन्त्र पाकर, पाँच परमेष्ठीको प्रणाम कर, अत्यन्त दीप्त विद्याधरोंकी स्वामिनी आकाशगामिनी विद्या सिद्ध की। एक दिन यौवनके भावसे उत्पन्न श्रृंगारवाली सुताराके साथ आकाशमार्गसे गया और वनमें वृक्षपत्रोंके घरमें कामिनी सुताराके साथ हँसने-रोनेकी कामक्रीड़ा करने लगा। इतनेमें विहार करनेका अनुरागी, भ्रामरी विद्या प्राप्त करनेके लिए (अशनिघोष) यहाँ आ पहुँचा।

घत्ता—जिसने शत्रुओंके माहात्म्यका अपहरण किया है, ऐसे इन्द्राशनि नामक विद्याधर राजाके द्वारा आसुरी नामकी विद्याधरीसे उत्पन्न तथा लक्ष्मीके गुणोंसे परिपूर्ण—।।१३।।

---

६. AP रह करि हरि। ७. AP महमहियउं। ८. AP रयणहिं।
१३. १. AP °महाणइणीरहिं। २. A जिणण्हवणइं। ३. AP भामरि°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

चमरचंचपुरवइ रइराइउ असणिघोसु णामेण पराइउ ।
तेणासुररिउसुयसीमंतिणि दिट्ठ सुतार हारभूसियथणि ।
मोहिउ णावइ मोहणवेल्लिइ उरि विद्धउ मयरद्धयभल्लिइ ।
मायाहरिणु तेण दक्खालिउ[1] पइ सइसामीवहु संचालिउ ।
रूवु धरिवि वरइत्तहु केरउ अज्झाहिय आणंदजणेरउ ।
अप्पणु झ त्ति जारु तहिं पत्तउ अमुणंतिइ घरिणीइ पवुत्तउ[2] ।
देव मृगाइं[3] धरंतु ण लज्जहि अज्ज वि बालत्तणु पडिवज्जहि ।
कीलणु तुज्झु तासु भयभंगउं कंपइ मरणविसंठुलु अंगउं ।
तं णिसुणिवि पररमणें भासिउं सुंदरि चारु चारु उवएसिउं ।
हउं परियत्तउ एण जि करुणें आउ जाहुं पुरवरु किं हरिणें ।
एम भणेवि चडाविय सुरहरि रेहइ चंदरेहँ[4] णं जलहरि ।
णहि जंतें दाविउं ससरीरउं मुद्धइ तं जोइवि विवरेरउ ।
मुक धाह हा णाह भणंतिइ करजुयलेण सीसु पहणंतिइ ।
घत्ता—पुणु परँपुरिसु[5] ण जोइउ एण णाहु विच्छोइउ ॥
सुघडिउं विहि विहडावइ एवहिं को मेलावइ ॥१४॥

१४

अशनिघोष नामका रतिशोभित चमरचंचपुरका राजा आया। उसने हारसे भूषित स्तनवाली विद्याधरकी स्त्री सुताराको देखा। मोहिनीलताके समान उससे वह मोहित हो गया। हृदयमें वह कामदेवके भालेकी नोकसे विद्ध हो गया। उसने मायावी हरिण दिखाया और पतिको सतीके पाससे हटा दिया तथा सुताराको आनन्द उत्पन्न करनेवाले वरका रूप बनाकर वह जार स्वयं वहाँ पहुँचा। नहीं जानती हुई पत्नी सुतारा बोली, "मृगोंको पकड़ते हुए आपको शर्म नहीं आती, तुम आज भी बचपनको छोड़ दो। तुम्हारा खेल होता है, उसका भयसे नाश होता है, मरणसे अस्तव्यस्त उसका शरीर काँपता है।" यह सुनकर परम रमण उसने कहा—"हे सुन्दरी, तुमने सुन्दर उपदेश दिया, इस करुणासे मैं सन्तुष्ट हुआ, आओ नगरवरको चलें, हरिणसे क्या?" यह कहकर उसने उसे सुरविमानमें चढ़ा लिया। वह ऐसी शोभित हो रही थी मानो मेघमें चन्द्ररेखा हो। आकाशमें जाते हुए उसने अपना शरीर दिखाया। वह विपरीत रूप देखकर मुग्धाने दोनों हाथोंसे सिर पीटकर हे स्वामी कहते हुए दहाड़ मारी।

घत्ता—उसने परपुरुषको नहीं देखा। इसने मेरे स्वामीका विछोह किया है। विधि सुघटितको अलग कर रहा है। इस समय कौन मिलाप कराता है ॥१४॥

१४. १. A दिक्खालिउ। २. AP घरिणीइ पइ वुत्तउ। ३. AP मिगाइं। ४. AP चंदलेह। ५. AP °पुरुसु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५

एम रुयंति तेण सा णिज्जइ पिययमविरहें तिलु तिलु झिज्जइ ।
एत्तहि पवणु व वेयपयट्टउ गउ मृगु[1] पुहइणाहु पल्लट्टउ ।
मत्तमयूरवंदकयतंडवु पडिआयउ सुंदरिलयमंडउ ।
पररमणीहरणेण णिवेसिय रयणसिलायलि तेत्थु जि दरिसिय ।
लोलइ विज्ज सुताराख्वें जाणिवि गहिय कंत जमदूएं ।
उत्तउं भत्तारें किं जायउं दीसइ वयणं[2]कमलु विच्छायउं ।
अक्खइ मायाविणि हउं णट्ठी कुक्कुडफणिणा करयलि दट्ठी ।
विसरिसविसरसवियणगुरुक्की इय भणंति पाणेहिं विमुक्की ।
चंदणवंदणइंधणु[3] पुंजिवि सूरकंतमणिजलणु पउंजिवि ।
घत्ता—पियविओयआयं[4]पिय परिसेसियइहपरहिउ ॥
संकप्पहु जि वसंगउ णरवइ सलहि वलग्गउ ॥१५॥

१६

ता संपत्त बिण्णि विज्जाहर सयणविहुरहर असिवरफरकर ।
तेहिं तिविट्ठपुत्तु ओलक्खिउ णिज्जणि वणि मरंतु णोवेक्खिउ[1] ।
एक्कें बुज्झियमायामग्गें ताडिय झ त्ति वामपायग्गें ।

१५

इस प्रकार विलाप करती हुई वह उसके द्वारा ले जायी गयी। प्रियतमके विरहमें वह तिल-तिल क्षीण हो रही थी। यहाँपर पवनके समान वेगसे भागा हुआ हरिण भाग गया। राजा लौट आया। जिसमें मत्त मयूरवृन्द नृत्य कर रहे हैं, ऐसे सुन्दर लता-मण्डपमें आया। परस्त्रीके हरण करनेवालेके द्वारा स्थापित उसी रत्न-शिलातलपर सुताराके रूपमें हिलती हुई विद्या दिखाई दी। यह जानकर कि वह यमदूत (मृत्यु) के द्वारा ग्रहण कर ली गयी है पतिने पूछा—"क्या हुआ, तुम्हारा मुखकमल कान्तिहीन दिखाई क्यों दे रहा है?" वह मायाविनी कहती है कि कुक्कुट साँपके द्वारा हथेलीमें काटी गयी मैं नष्ट हो रही हूँ। असामान्य विषरसकी वेदनासे भरी हुई और यह कहती हुई; उसने प्राण छोड़ दिये। लाल चन्दनका ईंधन इकट्ठा कर सूर्यकान्तमणिकी ज्वालासे आग लगाकर—

घत्ता—प्रियाके वियोगसे काँपता हुआ इस लोक और परलोकके हितको छोड़ देनेवाला, कामदेवके वशीभूत होकर वह राजा चितापर चढ़ गया ॥१५॥

१६

इतनेमें दो विद्याधर वहाँ आये, जो स्वजनोंके दुःखको दूर करनेवाले और असिवररूपी अस्त्र हाथमें लिये हुए थे। उन्होंने त्रिपृष्ठके पुत्रको देखा। एकान्त वनमें मरते हुए उसको उन्होंने उपेक्षा नहीं की। मायाके मार्गको समझनेवाले एकने बायें पैरके अग्रभागसे शीघ्र उस विद्याको

१५. १. AP मिगु । २. A कमलवयणु; P वयणु कमलु । ३. A °इंधण । ४. A °आयामिउ ।
१६. १. AP ण उवेक्खिउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पायड करिवि नृवेंहु दक्खालिय विज्ज पणट्ठ भीयवेयालिय।
महिवइ विंभइवसु अवलोइवि खयरें भणिउ णिसुणि मणु ढोइवि।
जंबुदीवि भरहखेत्तंतरि चारुधोयकलहोयमहीहरि।
दाहिणसेढिहि जोइप्पहपुरि उज्जाणंतर्थंतकीलासुरि।
हउं तहिं पहु णामें संभिण्णउ अमियतेयंकिंकरु माणुण्णउ।
संजय पणइणि सुउ दीवयसिहु महुं ओहच्छइ णं कंतिइ विहु।
जणण तणय ए अम्हइं सुंदर अवलोयंति सिहरिदरिकंदर।
चिरु परिभमिवि रमिवि पिउ बोल्लिवि गयणुल्ललिय जाम वणु मेल्लिवि।
पइवय परमेसरि अहिमाणिणि ता रुयंति णहि णिसुणिय माणिणि।
घत्ता—णिरु उक्कंठिय अच्छमि वल्लह पइं कहिं पेच्छमि॥
हा सिरिविजय पधावहि कुढि लग्गहि म चिरावहि॥१६॥

१७

हा हा अमियतेय दुंदुहिरव इहु अवसरु तुहु वट्टइ बंधव।
हा हा माम तिविट्ठ महाबल पइं जीवंति णेंति मइं किं खल।
हा सासुइ देवर साहारहि मइं रोवंति काइं ण णिवारहि।
हा हलहर पइं अप्पउं तारिउ महुं लग्गंतु कुपुरिसु ण णिवारिउ।
हा हे घोर जार जगि सारहु मइं लहु णेहि पासि भत्तारहु।
जइ वि मईणु तुहुं तो वि ण इच्छमि पइं हउं जणणसरिच्छु णियच्छमि।

ताड़ित किया और उसे प्रकट कर राजाको बता दिया, वहीं भीम वेतालिक विद्या नष्ट हो गयी। विस्मयके वशीभूत राजाको देखकर विद्याधर बोला—"मन लगाकर सुनो, जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीमें, जिसके उद्यानोंमें देव क्रीड़ा करते हैं ऐसे ज्योतिप्रभ नगर है। मैं उसका राजा सम्भिन्न हूँ। मानसे उन्नत, अमिततेजका अनुचर। मेरी प्रणयिनीसे दीपशिख नामका पुत्र हुआ, वह मेरे साथ है मानो कान्तिके साथ चन्द्र हो। हे सुन्दर, इस प्रकार हम पिता-पुत्र हैं। पर्वतकी घाटियों और गुफाओंको देखते हुए खूब परिभ्रमण कर, रमण कर और प्रिय बोलकर वन छोड़कर जैसे ही आकाशमें उछले, वैसे ही हमने पतिव्रता स्वाभिमानिनी एक मानिनीको आकाशमें रोते हुए (इस प्रकार) सुना।

घत्ता—"मैं अत्यन्त उत्कण्ठित हूँ। हे प्रिय, मैं तुम्हें कहाँ देखूँ? हे श्रीविजय दौड़ो, पीछे लगो, देर मत करो" ॥१६॥

१७

हा-हा! दुन्दुभिके समान शब्दवाले अमिततेज, हे भाई यह तुम्हारा अवसर है। हे ससुर त्रिपृष्ठ और महाबल, तुम्हारे जीवित रहते हुए दुष्ट मुझे क्यों ले जा रहे हैं? हे सास, हे देवर, तुम मुझे सहारा दो।" मुझ रोती हुईको तुम मना क्यों नहीं करते? हे बलभद्र, तुमने अपना उद्धार कर लिया, मेरे पीछे लगे हुए कुपुरुषको तुमने मना नहीं किया। हा हे घोर जार, जगमें श्रेष्ठ मेरे पतिके पास तुम मुझे ले चलो, यदि तुम कामदेव हो तो मैं तुम्हें नहीं चाहती। मैं तुम्हें

२. P णिवहु। ३. AP विभयवसु। ४. P °तेउ। ५. A तणय बे यम्हइं। ६. AP कह पइं।
१७. १. AP किं मइं। २. A ण वारिउ। ३. AP जगसारहु। ४. AP मयणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिसुणिवि णियसामिहि णामक्खरु अम्हइं धाइय गुणि संधिवि सरु ।
भणिउ वइरि भडवाएं भज्जहि अवरकलत्तु हरंतु ण लज्जहि ।
अप्पहि तरुणि घुलियहारावलि दूसह सिरिविजयहु बाणावलि ।
घत्ता—ता देवीइ पवुत्तउं एव्वहिं भिडहुं ण जुत्तउं ॥
काणणि कामसमाणउ जाइवि जोइवि राणउ ॥१७॥

१८

लहु महुं तणिय वत्त तहु अक्खहु जीउ जंतु णरणाहहु रक्खहु ।
तं परिहच्छियं पणवियमत्था चंडकंडकोदंडविहत्था ।
ए अम्हइं आइय बेण्णि वि जण तुहुं मा मरु रामारंजियमण ।
एम भणिवि दीवयसिहु पेसिउ तें पोयणपुरि वइयरु भासिउ ।
जिह हरिसुउ गउ मयणिद्देसें जिह णिय घरिणि चमरचंचेसें ।
जिह वेयालियविज्जइ विलसिउ ता पहुजणणिहि वयणु विणीसिउ ।
जइ ण वि सिट्ठउं अण्णें केण वि जयगुत्तें अमोहजीहेण वि ।
तो वि सव्वु सब्भावहु आणिउं सपरोक्खु वि पच्चक्खु वि जाणिउं ।
अम्हहं घरि जायइं दुणिमित्तइं पडियइं णहयलाउ णक्खत्तइं ।
पणइणिहरणु जाउं पियणीसहु जायउं विग्घु किं पि धरणीसहु ।
पर किं कुसलु पडीवउं दीसइ को वि कुसलवत्तिउ आवेसइ ।

अपने पिताके समान समझती हूँ। तब अपने स्वामीके नामके अक्षर सुनकर हम प्रत्यंचापर बाण चढ़ाकर दौड़े और शत्रुसे कहा—"भटवचनसे तुम भग्न होते हो, दूसरेकी स्त्रीका अपहरण करते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती। जिसकी हारावलि घूम रही है, ऐसी तरुणीको मुक्त कर दो। श्रीविजयकी बाणावलि तुम्हें असह्य होगी।"

घत्ता—तब उस देवीने कहा कि इस समय लड़ना ठीक नहीं। काननमें जाकर कामके समान मेरे प्रिय राजाको देखकर—॥१७॥

१८

शीघ्र मेरा समाचार उसे दो और नरनाथके जाते हुए जीवको बचाओ। उससे पूछकर प्रणमित मस्तक और हाथमें प्रचण्ड तीर और धनुष लिये हुए हम दोनों यहाँ आये हैं। हे स्त्रियोंके मनका रमण करनेवाले तुम मत मरो। यह कहकर उस विद्याधरने अपने पुत्र दीपशिखको भेजा। उसने पोदनपुरमें यह वृत्तान्त कहा कि किस प्रकार नारायणपुत्र मृगके पीछे गया, किस प्रकार चमरचंचके राजाके द्वारा उसकी गृहिणीका हरण किया गया, किस प्रकार वह वैतालिक विद्यासे विलसित था। प्रभुकी माता (स्वयंप्रभा) का वचन निकला—यद्यपि किसी औरने नहीं जयगुप्त और अमोघजिह्व नैमित्तिकोंने कहा था, तो भी सब बात सद्भावके साथ ठीक हो गयी। और परोक्ष बातको भी मैंने प्रत्यक्षरूपसे जान लिया। हमारे घरमें दुर्निमित्त हो रहे थे, आकाशसे नक्षत्र गिर रहे थे, प्रिय राजाकी प्रणयिनीका हरण होगा, राजाको भी कोई विघ्न होगा। लेकिन उलटे उसे कोई कुशल दिखाई देगा और कोई कुशल-वार्ता आयेगी।

---

५. AP णियसामियणामक्खरु।

१८. १. AP परिहच्छिवि। २. A जाम।

घत्ता—इय जिह विप्पहिं सिट्ठउं　　तिह तुहुं आयउ[3] दिट्ठउं ॥
सुयरिवि सुयहु सयाणउं　　देविइ दिण्णु पयाणउं ॥१८॥

१९

छत्तछण्णरविकिरणविलासें　　गय तं वणु ससेण्ण आयासें ।
दिट्ठु पुत्तु आलिंगिउ मायइ　　भूमिभाउ णं पाउसछायइ ।
पयहिं णवंतु विमाणि चडाविउ　　बीयउ सिसु पोयणु पट्टाविउ[1] ।
पहु रहणेउरु णियउ सहरिसहिं　　अमियतेयरायहु चरपुरिसहिं ।
कहिउ सो वि सवडंमुहुं णिग्गउ　　मिलियउ णं दिसदंतिहि दिग्गउ ।
पायवडणु घरपाहुणयत्तणु　　किउ महल्लपरिवाडिपवत्तणु ।
मंतिउ मंतु कहिउ मंतीसहिं　　अमियतेयसिरिविजयमहीसहिं ।
णाम मरीइ वइरिजलसोसहु　　पेसिउ दूयउ असणिणिघोसहु ।
तेण वि णारीरयणु ण दिण्णउं　　भंडणु भडखंडणु पडिवण्णउं
घत्ता—आइयॅ[2] दूय सुहित्तें　　जलणजडीसुयपुत्तें ॥
हरिकुलहरपायारहु　　तहु सिरिविजयकुमारहु ॥१९॥

२०

दिण्ण विज्ज वीरियपोरिसखणि　　पहरण[1]वारणि बंधविमोयणि ।
ओसारियखलखेयरसत्थहं　　रस्सिसुवेयाइयहं[2] समत्थहं ।

घत्ता—इस प्रकार जैसे विप्रोंने कहा, वैसे ही तुम यहाँ दिखाई दिये। पुत्रकी याद करके माँ (स्वयंप्रभा) ने सैन्यके साथ प्रयाण किया ॥१८॥

१९

छत्रोंसे जिसमें रविकिरणोंका विलास आच्छन्न है, ऐसे आकाशसे वह सेना सहित उस वनमें पहुँचे। पुत्रको देखा। माताने उसका आलिंगन किया मानो भूमिभागने पावस छायाका आलिंगन किया हो। पैरोंमें पड़ते हुए उसे विमानपर चढ़ाया और दूसरे पुत्र (विजयभद्र) को पोदनपुर भेज दिया। प्रभु (श्रीविजय) रथनूपुर नगर ले जाया गया। अमिततेजके हर्षसे भरे हुए चरपुरुषोंने राजासे कहा, वह भी सामने निकला और इस प्रकार मानो दिग्गजसे दिग्गज मिला हो। पैर पड़नेसे लेकर गृहके आतिथ्य तक उसने बड़ोंकी परम्पराका प्रवर्तन किया। (अर्थात् परम्पराके अनुसार उक्त शिष्टाचारका पालन किया) मन्त्रीशोंने अपना विचारित मन्त्र कहा। अमिततेज और श्रीविजय राजाओंने शत्रुरूपी जलको सोखनेवाले मारीच नामक दूतको अशनिघोषके पास भेजा। उसने भी नारीरत्न नहीं दिया, युद्ध और भट-खण्डनको स्वीकार लिया।

घत्ता—दूत वापस आ गया। अर्ककीर्तिके पुत्रने मित्रताके कारण हरिकुलगृहके प्राकार उस श्रीविजय कुमारको—॥१९॥

२०

वीर्य पौरुषकी खदान (युद्धवीर्य), प्रहरावरण और बन्ध-विमोचन विद्याएँ दीं। दुष्ट

---

३. AP आइउ। ४. कहाणउं।

१९. १. P पट्ठविउ। २. AP आइए दूए।

२०. १. AP परहण°। २. A रस्सिसुवेंवाइयहं।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

भीममहाहवभरधुरजुत्तहं पंचसयाइं सहायइं पुत्तहं ।
बहिणीवइदिण्णाइं लएप्पिणु विज्जादेवयाउ सुमरेप्पिणु ।
चमरचंचपुरवइहि ससंदणु उँक्खंधें गउ केसवणंदणु ।
णियसोहाणिज्जियहिमवंतहु अमियतेउ सिहरिहि हिरिवंतहु ।
सहसरस्सिपुत्तेण समेयउ गउ मैरुवेएं मारुयवेयउ ।
तहिं आराहियमृगैसंवग्गइ संजयंतपडिमापायग्गइ ।
णं णिवइहि महिमंडलरिद्धी विज्ज महाजालिणि तहु सिद्धी ।
एत्तहि असणिघोससिरिविजयहं जायउ संगरु सधयहं सगयहं ।
णियसुय असणिसुघोसें पेसिय जे ते जुज्झिवि दिसिहिं पणासिय ।
सहसघोस सयघोस सुघोस वि मेहघोस अरिघोस असेस वि ।
जं गय ते पविहंडियमाणा तं मेल्लंतुँ बाण फणिमाणा ।

घत्ता—णिर्यवि सुताराहारउ सिरिविजयं दुव्वारउ ॥
छाइउ सरवरपंतिहिं णाइ उवद्दउ संतिहिं ॥२०॥

२१

आसुरियहि लच्छिहि सुउ धायउ णाइ कयंतें दंडु णिवेइउ ।
धाराजियखयहुयवहजालें हउ विजएं पइसिवि करवालें ।
रिउ भामरिविज्जामाहप्पें बिहिं रूवहिं उत्थरइ सदप्पें ।

विद्याधर समूहको हटानेवाले रश्मिवेगादि, भीम महायुद्धके भारमें जुते हुए पाँच सौ पुत्र सहायकके रूपमें अपने बहनोईको दिये। उन्हें लेकर और विद्यादेवियोंका स्मरण कर केशवनन्दन (श्रीविजय) रथ सहित चमरचंच नगरके राजापर उक्खन्ध अश्वपर बैठकर आक्रमणके लिए गया। हवाके समान गतिवाला अमिततेज अपने पुत्र सहस्ररश्मिके साथ आकाशमार्गसे अपनी शोभासे चन्द्रमाको जीतनेवाले ह्रीवन्त पर्वतपर गया। वहाँ, जहाँ देवसमूहकी आराधना की जाती है, ऐसे संजयन्त मुनिकी प्रतिमाके आगे उसे महाज्वाला नामकी विद्या सिद्ध हुई, मानो राजाके लिए महिमण्डलकी ऋद्धि सिद्ध हुई हो। यहाँ ध्वजों और गजों सहित अशनिघोष तथा श्रीविजयमें युद्ध हुआ। अशनिघोषके द्वारा भेजे गये जो पुत्र थे वे लड़कर दिशाओंमें भाग गये। सहस्रघोष, शतघोष, सुघोष, मेघघोष और अरिघोष आदि सभी। जब वे खण्डित मान तथा नागके आकारके बाण छोड़कर चले गये—

घत्ता—तब सुताराके अपहरण करनेवालेको दुर्वार समझकर श्रीविजयने तीरोंकी पंक्तिसे उसे इस प्रकार छा लिया मानो शान्तियोंने उपद्रवको छा लिया हो ॥२०॥

२१

आसुरी लक्ष्मीका पुत्र इस प्रकार दौड़ा मानो कृतान्तने अपना दण्ड निवेदित किया हो। विजयने प्रवेश कर धाराप्रलयकी आगकी ज्वालाको जीतनेवाली तलवारसे उसे मार दिया। शत्रु

३. A ओखंधि; P उद्धद्धें । ४. AP हिरिमंतहु । ५. A मरुमगें; T मरुवेगें आकाशेन । ६. P °मिग° । ७. A मेल्लंति । ८. AP णिएवि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हय बेण्णि वि चत्तारि समुग्गय　　ते वि दुहाइय अट्ठ समुग्गय।
अट्ठ णिहय सोलह संजाया　　सोलह तयं बत्तीस समाया।
बत्तीस वि दोखंडिय जामहिं　　रिउ चउसट्ठि पराइय तामहिं।
चउसट्ठि वि विद्दलिय सरूवउ　　अट्ठावीसउ सउ संभूयउ।
एम दुवड्ढिइ वड्ढिउ दुद्धरु　　हणु भणंतु असिवसुणंदयकरु।
जलि थलि दसदिसिवहि णहपंगणि　　दीसइ असणिघोसु समरंगणि।
वेढिउ पोयणणाहु खगिंदहिं　　णं विंझइरि महाघणविंदहिं।

घत्ता—जरफेरवरवभीमइ　　तहिं तेहइ संगामइ॥
पत्तउ सेण्णसणाहउ　　रहणेउरपुरणाहउ॥२१॥

२२

राउ सयंपहपुत्तु खलत्तें　　जाम ण हम्मइ तेहिं अखत्तें।
तांव अमियतेएण पवुत्तउं　　असणिघोस किं कियउं अजुत्तउं।
परकलत्तु किं आणिउ गेहहु　　हक्कारिय भवित्ति णियदेहहु।
एम भणेवि तेण लहु मुक्की　　विज्ज महाजालणि रणि ढुक्की।
पवणुद्धूयचिंधु सविमाणउ　　तं पेक्खिवि सहस त्ति पलाणउ।
जहिं णाहेयहु सीमागिरिवरु　　विजउ णामु जहिं अच्छइ जिणवरु।
परणारीहरु भयवसु तट्ठउ　　समवसरणि तहिं सरणु पइट्ठउ।

भ्रामरी विद्याके माहात्म्यसे दर्पपूर्वक दो रूपोंमें उछला। दोके मारे जानेपर चार उछले। उनके भी दो भाग होनेपर आठ उत्पन्न हुए। आठके आहत होनेपर सोलह हुए। सोलहके आहत होनेपर बत्तीस हो गये, जबतक बत्तीस खण्डित हुए, तबतक चौंसठ हो गये। चौंसठ भी स्वरूपसे विदलित हो गये, तो एक सौ बीस हो गये। इस प्रकार दो की वृद्धिसे बढ़ता हुआ तथा वसुनन्दक तलवार जिसके हाथमें है ऐसा वह जल, स्थल, दसों दिशाओं और आकाशके प्रांगणमें सब जगह दिखाई देता है। इस प्रकार विद्याधरोंने पोदनपुरराजाको घेर लिया, मानो महाघनसमूहने विन्ध्याचलको घेर लिया हो।

घत्ता—बूढ़े शृगालोंसे भयंकर उस वैसे संग्राममें सैन्यसे सहित रथनूपुरका राजा वहाँ आया॥२१॥

२२

स्वयंप्रभाका पुत्र राजा श्रीविजय जब उनके द्वारा दुष्टता और अन्यायसे नहीं मारा जा सका तो अमिततेजने कहा—"हे अशनिघोष, तुमने यह अनुचित क्या किया? दूसरेकी स्त्री अपने घरमें क्यों लाये। तुमने अपने शरीरको होनहारको स्वयं चुनौती दी है।" इस प्रकार कहकर उसके द्वारा फेंकी गयी महाज्वालिनी नामकी विद्या शीघ्र युद्धमें पहुँची। उसे देखकर हवामें जिसका ध्वज उड़ रहा है ऐसा विमान सहित वह सहसा भाग खड़ा हुआ। जहाँ नाभेयसीम नामका गिरिवर था और जहाँ विजय नामके जिनवर थे, भयके वशीभूत होकर परस्त्रीका

---

२१. १. A समागय°। २. AP हय। ३. A जरफेक्कारवभीमइ। ४. P °णाहहु।

२२. १. AP महाजालिणि णहि ढुक्की। २. AP सरणि।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सिरिविजयाइय चोइयगयघड अणुमग्गें तहु लग्ग महाभड ।
माणखंभअवलोयँणभावें मुक्का पत्थिव मच्छरभावें ।
केवलणाणसमुज्जलदिट्ठिहि मउलियकर णवंति परमेट्ठिहि ।
घत्ता—जसधवलियछणयंदहु पुच्छंतहु खयरिंदहु ॥
विद्धंसियवम्मीसरु अक्खइ धम्मु रिसीसरु ॥२२॥

२३

भणइ भडारउ रोसु ण किज्जइ रोसें णरयविवरि णिवडिज्जइ ।
रोसवंतु णरु कह व ण रुच्चइ जइ वि सुवल्लहु तो वि पमुच्चइ ।
रोसु करइ बहु आवइ संकडु रोसें पुरिसु थाइ णं कक्कडु ।
रोसु कयंतु व कं णउ तासइ अत्थु धम्मु कामु वि णिण्णासइ ।
जो रोसेण परव्वसु अच्छइ तहु मुहकमलु ण लच्छि णियच्छइ ।
माणपमत्तु ण काइं वि मण्णइ माणें गुरु देव वि अवगण्णइ ।
माणथँद्धु बंधुहिं वि ण भावइ णिरु दुणिरिक्खइं दुक्खइं पावइ ।
मायाभावें जो चिम्मकइ तहु संमुहउ ण सज्जणु ढुकइ ।
णउ वीससइ को वि णिधम्महु णिच्चपउंजियमायाकम्महु ।
मायारउ तिरिक्खु उप्पज्जइ लोहें णियजणणी वि विरज्जइ ।

अपहरण करनेवाला वह वहाँ उनके समवसरणकी शरणमें चला गया । श्रीविजय आदि महाभट भी अपनी गजघटाको प्रेरित करते हुए उसके मार्गके पीछे जा लगे । मानस्तम्भको देखनेके भावसे वे राजा ईर्ष्याभावसे मुक्त हो गये । जिनकी दृष्टि केवलज्ञानसे समुज्ज्वल है ऐसे परमेष्ठीको वे हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं ।

घत्ता—अपने यशसे चन्द्रमाके धवलित करनेवाले विद्याधर राजाके पूछनेपर कामदेवका नाश करनेवाले ऋषीश्वर धर्मका कथन करते हैं ॥२२॥

२३

आदरणीय वह कहते हैं—'क्रोध नहीं करना चाहिए । क्रोधसे नरकके बिलमें गिरना पड़ता है । क्रोधी व्यक्ति किसीको भी अच्छा नहीं लगता, व्यक्ति कितना ही प्रिय हो (क्रोधी व्यक्ति) छोड़ दिया जाता है । क्रोध कई आपत्तियाँ और संकट उत्पन्न करता है । क्रोधसे व्यक्ति बन्दरकी तरह रहता है । यमकी तरह क्रोध किसे त्रस्त नहीं करता । उससे अर्थ, धर्म और काम नष्ट हो जाता है । जो क्रोधसे परवश हो जाता है, उसके मुखकमलको लक्ष्मी कभी नहीं देखती । मानसे प्रमत्त आदमी किसीको कुछ नहीं गिनता । मानसे गुरु और देवकी भी अवहेलना करता है । मानसे ठस (स्तब्ध) आदमी भाइयोंको भी अच्छा नहीं लगता । वह अत्यन्त दुर्दर्शनीय दुखोंको प्राप्त करता है । मायाभावसे जो व्यक्ति आचरण करता है (चिम्मकइ) उसके पास सज्जन व्यक्ति नहीं जाता । नित्य मायाकर्मका प्रयोग करनेवाले धर्महीन व्यक्तिका कोई विश्वास नहीं करता । मायारत व्यक्ति तिर्यंच गतिमें उत्पन्न होता है । लोभके कारण वह अपनी माँके प्रति विरक्त हो

३. AP °लोयणभावें ।

२३. १. AP कह वि । २. A मंकडु । ३. A माणवंतु । ४. AP णरु ।
५. AP णिद्धम्महु । ६. P विरइज्जइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोहें जणु चामीयरु संचइ   लोहें अप्पणु अप्पउं वंचइ ।
खाइ ण देइ थिवइ धणु खोणिहि   लुद्धउ णिवडइ दुग्गयजोणिहि ।
घत्ता—एयहं चउहुं कसायहं   दावियणरयणिवायहं ॥
जो अप्पाणउं रक्खइ   मोक्खसोक्खु सो चक्खइ ॥२३॥

२४

मिच्छत्तें जणवउ छाइज्जइ   हिंसइ सग्गगमणु[1] पडिवज्जइ ।
मिच्छत्तें विडगुरुपय पुज्जइ   मिच्छत्तें जिणणाहु विवज्जइ ।
मयणमत्तमहिलामहुसेवहं   पायहिं पडइ रउद्दहं देवहं ।
मिच्छत्तेण जीउ मोहिज्जइ   भवविब्भमि भामिज्जइ छिज्जइ ।
मिच्छत्तेण असंजमु वड्ढइ   जीवहं जीविउ मंडेंइ[2] कड्ढइ ।
पोसइ पंचिंदियइं दुरासइं   पावइ माणउ विहुरसहासइं ।
परहणपरकलत्तअणुबंधें   बज्झइ एम जीउ रयबंधें ।
तहिं अवसरि आसुरियइ लच्छिइ   आणिवि सा सुतार धवलच्छिइ ।
अमियतेयसिरिविजयहं ढोइय   भायरपइहिं सणेहें जोइय ।
किउ खंतउं[3] चित्तु णीसल्लउं   भव्वहं[4] खम मंडणउ पहिल्लउं ।
तं रिउजणणिहि वयणु समिच्छिउ   पुणु रहणेउरवइणा पुच्छिउ ।

जाता है। लोभसे मनुष्य सोना इकट्ठा करता है। लोभके कारण स्वयंसे स्वयंको ठगता है। न खाता है और न पीता है, धनको जमीनमें गाड़कर रखता है, लोभी व्यक्ति दुर्गतयोनिमें जाता है।

घत्ता—नरकमें पतन दिखानेवाली इन चार कषायोंसे जो अपनी रक्षा करता है, वह मोक्षसुखका आस्वाद लेता है ॥२३॥

२४

मिथ्यात्वसे जनपद आच्छादित होता है, हिंसासे स्वर्गगमनका प्रतिषेध होता है। मिथ्यात्वसे विटगुरु-चरणोंकी पूजा की जाती है। मिथ्यात्वसे मनुष्य जिननाथका त्याग करता है, कामदेवसे मत्त महिला और मधुका सेवन करनेवाला रौद्र देवोंके चरणोंमें गिरता है। मिथ्यात्वसे जीव मोहित होता है। संसारके चक्करोंमें घूमता है और नाशको प्राप्त होता है। मिथ्यात्वसे असंयम बढ़ता है, जीवोंका जीव बड़ी कठिनाईसे निकलता है। खोटे आशयवाली इन्द्रियोंका पोषण करता है और मनुष्य हजारों दुःख उठाता है। दूसरेके धन और स्त्रीके अनुबन्ध तथा रागके बन्धसे इस प्रकार जीव बँध जाता है। उसी अवसरपर धवल आँखोंवाली आसुरी लक्ष्मीने सुतारा लाकर अमिततेज और श्रीविजयको दे दी। भाई और पतिने उसे स्नेहपूर्वक देखा। उसने उनके चित्तको क्षम्य और शल्यहीन बना दिया। क्षमा भव्योंका पहला अलंकार है। शत्रुकी माताके वचनोंका उन्होंने विचार किया, फिर रथनूपुरके पति अमिततेजने तीर्थंकर विजयसे पूछा।

---

२४. १. AP °गवणु । २. A मडुइ; P मंडुइ । ३. P खंतव्वु चित्तु । ४. A सव्वहं ।

४८

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

घत्ता—दुद्दमपावखयंकरु कहइ णरोहँ[5] सुहंकरु ॥
उग्गयसंसयसंकहु विजय अमियतेयंकहु ॥२४॥

२५

जंबूदीवि भरहवरिसंतरि मागहविसइ सुसासणिरंतरि ।
अचलगामि धरणीजडु बंभणु अग्गिलबंभणिउररुहसुंभणु ।
तहु इंदग्गिभूइसुय सुहयर सुयसत्थत्थमहत्थ मणोहर ।
कविलु णामु दासेरु अलक्खिउ वेयचउक्कु सडंगइं सिक्खिउ ।
कुलविद्धंसणु जाणिउ विप्पें दुज्जसभीएं धाडिउ बप्पें[1] ।
गउ रयणउरहु भल्लउं भाविउं सच्चयदियवरेण[2] परिणाविउ ।
जंबूघरिणिहि हूई सुंदरि सच्चभाम[3] णामेण किसोयरि ।
कुलणिंदिउं करंतु गुणवंतइ वरु कुलहीणु वियाणिउ कंतइ ।
घत्ता—णवर धणोहें चत्तउ आयण्णिवि[4] सुयवत्तउ ।
दालिद्दें संतत्तउ तहिं जि ताउ संपत्तउ ॥२५॥

२६

सपराहवभीएण णमंसिउ कविलें पुरयणमज्झि पसंसिउ ।
तहु पयजुवलु तेण ओलग्गिउं दिण्णउं कंचणु जेत्तिउं मग्गिउं ।
कुलदूसणरुहणीसासुण्हइ धणु ढोइवि आउच्छिउ सुण्हइ ।

घत्ता—दुर्दम पापोंका नाश करनेवाला मनुष्योंके लिए शुभंकर श्रीविजय, जिसके मनमें सन्देहकी कील उत्पन्न है, ऐसे अमिततेजसे कहता है ॥२४॥

२५

जम्बूद्वीपमें भारतवर्षके मगध देशमें, जिसमें निरन्तर सुशासन है ऐसे अचलग्राममें धरणीजट नामका ब्राह्मण था जो अपनी अग्निला ब्राह्मणीके स्तनोंका मर्दन करनेवाला था। उसके शुभ करनेवाले इन्द्रभूति और अग्निभूति नामके पुत्र थे, दोनों सुन्दर थे और उन्होंने शास्त्रोंका अर्थ महार्थ सुना था। उसका कपिल नामका अज्ञात दासी पुत्र था। उसने चारों वेदों और छहों अंगोंको सीख लिया। विप्रने उसे कुलका नाश करनेवाला जानकर, अपयशसे डरकर पिताने उसे निकाल दिया। वह रत्नपुर गया। वहाँ सत्यक नामक ब्राह्मणने उसे भला समझा और अपनी जम्बू नामकी स्त्रीसे उत्पन्न हुई कृशोदरी सुन्दर कन्या सत्यभामा ब्याह दी। उस गुणवती कान्ताने कुलनिन्दित कर्म करते हुए उसे जान लिया कि यह कुलहीन वर है।

घत्ता—केवल धनसे रहित होकर पिता धरणीजट अपने पुत्रका समाचार सुनकर दारिद्र्य-से पीड़ित होकर वहीं आया ॥२५॥

२६

अपने पराभवसे डरे हुए (पोल खुलनेके भयसे) कपिलने नगरके लोगोंके बीच उनकी प्रशंसा की। उसने उनके चरण छुए और उसने जितना माँगा, उतना सोना दिया। विकट कर्मके

५. A णराह सुहंकरु ।
२५. १. A दप्पें । २. AP सच्चइ° । ३. P सच्चसामि । ४. AP आयण्णिय ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहइ जणणु पियवयणहिं तुट्ठउ　　महुं घरि दासीसुउ णिकिट्ठउ ।
कंतु तुहारउ होइ ण दियवरु　　एवं[1] भणेप्पिणु गउ सो णियघरु ।
तहिं सिरिसेणु राउ णरसिरमणि　　पढम सीहणंदिय तहु पणइणि ।
बीय अणिंदियें[2] काइं भणिज्जइ　　जाहि रइ वि दासि व्व गणिज्जइ ।
ताहं बिहिं मि कंतिइ सुच्छाया　　इंदउविंदसेण सुय जाया ।
कुललंछणउं धरियमज्जायहु　　जंबूयइ साहिउं[3] रायहु ।
　　घत्ता—तेणं[4] कविलु अवगण्णिउ　　जणि चंडालु व मण्णिउ ॥
　　　　कक्कसदंडें ताडिउ　　पुरवराउ णिद्धाडिउ ॥२६॥

२७

सच्चभाम[1] सइ सुद्ध हवेप्पिणु　　थिय उवसमु हियउल्लइ लेप्पिणु[2] ।
सदम[3] अमियगइ[4] णामारिंजय　　आइय भिक्खहि चारण संजय ।
सिरिसेणें आहारु पयच्छिउ　　दिज्जंतउ घरिणीहिं समिच्छिउ ।
चउदहमलपरिमुक्कु अकुच्छिउ　　रिसिहिं पाणिवत्तेण पडिच्छिउ ।
भायणधरणाइयउ सुधम्मउ　　सच्चयतणयइ किउ सुहकम्मउ ।
चउहुं वि सुकयबीउ लइ लद्धउं　　भोयभूमिपरमाउ णिबद्धउं ।
समररंगदलवट्टियपरबलु[5]　　कोसंबीणयरीसु महाबलु ।

कारण उष्ण उच्छ्वासवाली बहूने पूछा। उसके प्रिय वचनोंसे सन्तुष्ट होकर पिता कहता है कि यह मेरे घरमें नीच दासीपुत्र था। तुम्हारा पति ब्राह्मण नहीं है। ऐसा कहकर वह ब्राह्मण अपने घर चला गया। वहाँ नर-शिरोमणि श्रीषेण राजा था। उसकी पहली पत्नी सिंहनन्दिता थी। दूसरी पत्नी आनन्दिता थी, उसके विषयमें क्या कहा जाये? उससे रति भी दासीके समान समझी जाती थी। उन दोनोंके कान्तिसे सुन्दर इन्द्रसेन और उपेन्द्रसेन नामके पुत्र हुए। जम्बूकी कन्याने मर्यादाको धारण करनेवाले राजासे कुलकलंककी बात कही।

घत्ता—राजाने उसका अपमान किया, लोगोंमें वह चण्डालकी तरह समझा गया। कठोर दण्डसे प्रताड़ित उसे उस प्रवरपुरसे निकाल दिया गया ॥२६॥

२७

सती सत्यभामा शुद्ध होकर अपने मनमें शान्तभाव धारण कर रहने लगी। संयमधारी अमितगति और अरिंजय नामके दो चारण मुनि आहारके लिए आये। श्रीषेण राजाने उन्हें आहार दिया, देते हुए उसका दोनों पत्नियोंने समर्थन किया, चौदह प्रकारके मलोंसे मुक्त और अकुत्सित उस आहारको मुनियोंने अपने हाथरूपी पात्रसे स्वीकार कर लिया। बरतन आदि रखनेका जो सुधर्म है, वह सुकर्म सत्यक ब्राह्मणकी कन्याने किया। उन चारोंने पुण्यरूपी बीजको प्राप्त किया और भोगभूमिकी परम-आयुका बन्ध कर लिया। कौशाम्बी नगरीमें, जिसने युद्धके

---

२६. १. AP एम। २. P अणंदिय। ३. P साहियउं। ४. A तेण वि खलु।

२७. १. AP सच्चभाव। २. AP लएप्पिणु। ३. A सदणे but records a *p*: सवणि वा। ४. AP अमियगय। ५. AP समरंगण°।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सिरिमइदेविहि उयरुप्पण्णी तें सिरिकंत णाम सुय दिण्णी।
दुज्जणमणपइसारियसल्लहु सिरिसेणंगरुहहु पुरिमिल्लहु।
समउं बहुल्लियाइ गयगामिणि अवर पवर संपेसिय कामिणि।
साणंतमइ उविंदहु रत्ती मोहें मयरोहेण व मत्ती।
घत्ता—णंदणवणि णिवसंतहिं दोसु रोसु चिंतंतहिं॥
कारणि ताहि अजुत्तउं बिहिं मि जुज्झु आढत्तउं॥२७॥

२८

धाइय पहरणपाणि ससंदण सिरिसेणें अवलोइय णंदण।
कह व णिवारहुं बे वि ण सक्किउ णरवइ दूमिउ चित्ति चमक्किउ।
रज्जु सणेहु सदेहु पमाइवि विससेलिंधगंधु अग्घाइवि।
रायाणीयउ तेण जि मग्गें दियधीय वि तं तिह णासग्गें।
गरुयवेइं महियलि णिवडेप्पिणु मउलियणयणइं तेत्थु मरेप्पिणु।
धादइसंडि पुव्वभायंतरि उत्तरकुरुहि सुंभोयणिरंतरि।
चत्तारि वि अज्जइं संजायइं छहधणुसहसपमाणियकायइं।
जायउ णिब्भरु पेमरसिल्लउं राउ सीहणंदिय मिहुणुल्लउं।
हूई मुणिवरदाणें णंदिय बंभणि भामिणि पुरिसें अणिंदिय।

प्रांगणमें शत्रुदलका संहार किया है ऐसा महाबल नामका राजा था। उसके अपनी श्रीमती नामकी देवीके उदरसे उत्पन्न श्रीकान्ता नामकी पुत्री थी। दुर्जनोंके मनमें शल्य उत्पन्न करनेवाले श्रीषेणके पहले पुत्र इन्द्रसेनसे उसका विवाह कर दिया। उस बहूके साथ एक और गजगामिनी (अनन्तमति) स्त्री भेजी गयी। वह अनन्तमति उपेन्द्रसेनमें अनुरक्त हो गयी, मोहके कारण वह मदिरा समूहके समान मतवाली हो उठी।

घत्ता—नन्दनवनमें निवास करते हुए, दोष और क्रोधका विचार करते हुए उन दोनोंके बीच उसके कारण अयुक्त युद्ध प्रारम्भ हो गया॥२७॥

२८

हाथमें हथियार लेकर रथसहित दोनों भाई दौड़े। श्रीषेणने पुत्रोंको देखा, वह उन दोनोंको किसी भी प्रकार मना नहीं कर सका। राजा मनमें दुःखी हुआ और आश्चर्यमें पड़ गया। राज्य, अपना शरीर और स्नेह छोड़कर तथा विषकमल पुष्पकी गन्धको सूँघकर, रानियाँ भी उसी मार्गसे, और उसी प्रकार ब्राह्मणकन्या भी नाकके अग्रभागसे (सूँघकर) भारी वेदनासे धरतीतलपर गिरकर और बन्द किये हुए नेत्रोंसे मरकर धातकीखण्डकी पूर्वदिशामें सुन्दर भोगोंसे निरन्तर उत्तर कुरुमें श्रेष्ठ लोग उत्पन्न हुए। उनके शरीरका प्रमाण छह हजार धनुष था। राजा श्रीषेण और सिंहनन्दिताका जोड़ा उत्पन्न हुआ जो प्रेमसे रसमय और पूर्ण था। ब्राह्मणी सत्यभामा स्त्री हुई और रानी आनन्दिता पुरुष।

६. AP पुव्विल्लहु।

२८. १. P °सेलेंध°। २. A रायाणियउ जि तेण जि। ३. A गरुडवेय; P गरवेएं। ४. A सुललियणिरंतरि। ५. A जोयउ णिब्भरपेम्म°। ६. AP राय। ७. A भाविणि। ८. AP पुरिसु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—जुज्झंतहं दुव्वारहं दोहं मि रायकुमारहं ॥
अंतरि थिउ विज्जाहरु णाइ गिरिंदहं जलहरु ॥२८॥

२९

पभणइ जिणकमकमलेंदिंदिरु जुज्झेवेउं फुल्लहिं वि असुंदरु ।
किं पुणु पहरणेहिं पिहियक्कहिं सत्तिसेल्ललंगलचलचक्कहिं ।
तं णिसुणिवि भणंति ते भायर के तुम्हइं पडिसेहकयायर ।
अक्खइ खेयरु दिव्वइ वायइ धादईसंडहु सुरदिसिभायइ ।
मंदरपुव्वासइ सुहवासइ खलविरहियपुक्खलवइदेसइ ।
तहिं रययायलि दाहिणसेढिहि आइच्चाहणयरि गउ रूढिहि ।
खयरु सुकुंडलि रंभसमाणी अमियसेण णामें तहु राणी ।
मणिकुंडलि हउं तहिं संभूयउ अत्थु व सुकइकहिहि जणणूयउ ।
पवरि पुंडरिकिणि गउ तेत्तहि अमियप्पहु जिणपुंगमु जेत्तहि ।
पुच्छिउ सो मइं णिययभवावलि कहइ भडारउ समयसमियकलि ।
पुक्खरदीवि वरुणसुरसिहरिहि पुव्वदिसहि हयसोयहि णयरिहि ।

घत्ता—रूवें णं मयरद्धउ महिवइ तहिं चक्कद्धउ ॥
कणयमाल पीवरथणि तहु वल्लह सीमंतिणि ॥२९॥

घत्ता—लड़ते हुए उन दोनों राजकुमारके बीच एक विद्याधर आकर स्थित हो गया। मानो पहाड़ोंके बीच, आकर मेघ स्थित हो गया हो ॥२८॥

२९

जिनभगवान्के चरणकमलोंका भ्रमर वह विद्याधर कहता है कि फूलोंसे लड़ना भी बुरा है। फिर सूर्यको आच्छादित कर देनेवाले शक्ति शैल हल और चलचक्र अस्त्रोंसे लड़नेका तो क्या कहना ? यह सुनकर उन दोनों भाइयोंने कहा कि मना करनेमें आदर रखनेवाले तुम कौन हो ? तब विद्याधर दिव्यवाणीमें कहता है कि धातकीखण्डकी पूर्व दिशामें मन्दराचलकी शुभ पूर्व दिशामें दुष्टोंसे रहित पुष्कलावती देश है। वहाँ विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीमें आदित्य नगरके नामसे प्रसिद्ध नगर है। उसमें सुकुण्डली नामका विद्याधर था और अमृतसेना नामकी रम्भाके समान उसकी रानी थी। उससे उत्पन्न मैं मणिकुण्डल हूँ, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार सुकविकी कथाके लोगोंके द्वारा संस्तुत अर्थ। वहाँसे मैं विशाल पुण्डरीकिणी नगर गया कि जहाँपर अमृतप्रभ जिनश्रेष्ठ थे। मैंने उनसे अपनी भवावलि पूछी। सिद्धान्तके ज्ञानसे जिन्होंने पापको शान्त कर दिया है ऐसे उन्होंने बताया, "पुष्कर द्वीपमें पश्चिम सुमेरुकी पूर्वदिशामें वीतशोक नामक नगरमें।

घत्ता—रूपमें कामदेवके समान चक्रध्वज नामका राजा था। कनकमाला★ नामकी उसकी स्थूल स्तनोंवाली प्रिय पत्नी थी ॥२९॥

२९. १. A जुज्झेव्वउ। २. P °सेल°। ३. P वेयरु। ४. A °संडइ। ५. A सुकइकहाहे जणियउ। ६. A पवरपुंडरिगिणि; P पवरपुंडरिकिणि। ७. A समपसमिय°। ८. P कणयद्धउ।

★ कनकमालिका।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०

कणयलया सररुहलय णामें णियंकरभल्लि घित्त णं कामें ।
धीयउ बेण्णि तो[2]हि मृगणेत्तउ कयलीकंदलकोमलगत्तउ ।
विज्जु[3]मईदेविहि हयदुम्मइ तासु जि रायहु सुय पोमावइ ।
अमियसेण कंतियहि णवेप्पिणु कणयमाल सावयवउ लेप्पिणु ।
सा गय सग्गहु आराईयहु भोयभारसंपीणियजीवहु ।
सुर जोएवि सुरूवें रंजिय पोमावइ हूई सुरलंजिय ।
कालें जंतें सुरलोयहु चुउ कणयमालकुंडलि हउं हुउ ।
कणयलया जलरुहलय धीयउ बेण्णि वि मरिवि सुकम्मविणीयउ ।
इंदउविंदसेण पंकयमुह जाया रयणउराहिवतणुरुह ।
सोक्खु असंखु सुइरु भुंजेप्पिणु सुरलंजिय सग्गाउ चएप्पिणु ।
हूई कहिं मि महाबलकामिणि दिण्ण विवाहि तुज्झु गयगामिणि ।
घत्ता—जं जिणणाहें सिट्ठउं तं पच्चक्खु वि दिट्ठउं ।।
हउं आयउ ओसारहुं दोहिं मि जुज्झु णिवारहुं ।।३०।।

३१

कासु वि को वि ण किं किर जुज्झहु भवसंसरणु ण किं पि वि बुज्झहु ।
हउं मायरि चिरु तुम्हइं तणयउ हौंतियाउ परिपालियपणयउ ।

३०

उसकी कनकलता और पद्मलता नामकी सुन्दर कन्याएँ थीं, जो मानो कामदेवके द्वारा फेंकी गयी उसके हाथ की भल्लिकाएँ थीं। उसकी दोनों कन्याएँ मृगनयनी और कदली कन्दलके समान कोमल शरीरवाली थीं। उसी राजा (चक्रध्वज) की विद्युत्मती देवीसे दुर्मतिको नाश करनेवाली पद्मावती नामकी देवी हुई। अमितसेना नामकी आर्यिकाको प्रणाम कर कनकमाला श्रावक व्रत लेकर जिसमें भोगोंके भारसे जीव प्रसन्न रहता है, ऐसे सौधर्म स्वर्गमें गयी। देवको देखकर पद्मावती रूपसे रंजित हो गयी और वह स्वर्गमें दासी हुई। समय बीतनेपर स्वर्गलोकसे च्युत होकर मैं कनककुण्डली देव हुई हूँ। कनकलता और पद्मलता अपने कर्मसे विनीत दोनों पुत्रियाँ मरकर कमलमुख इन्द्रसेन और उपेन्द्रसेनके नामसे रत्नपुरके राजाकी पुत्र हुई हैं। बहुत समय तक असंख्य सुखका भोग कर, वह देवदासी स्वर्गसे च्युत होकर कहीं अनन्तमती नामकी वेश्या हुई। और वह गजगामिनी तुम्हें विवाहमें दी गयी।

घत्ता—जो कुछ जिननाथने कहा था, उसे मैंने आज यहाँ प्रत्यक्ष देख लिया। आज मैं तुम दोनोंको युद्धसे मना करने और अलग करने आया हूँ ।।३०।।

३१

कोई किसीसे कुछ भी युद्ध न करे, संहारके परिभ्रमणको क्या कुछ भी नहीं समझते। मैं

३०. १. A णिवकर° । २. A तहो मिग°; P ताहि मिग° । ३. AP विज्जमई । ४. AP जीयहु । ५. AP सरूवें । ६. A चुएप्पिणु ।

३१. १. A °पालियविणयउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवत्तणु माणिवि[2] णरजाया | किं पहरह उग्गामियघाया ।
तं णिसुणिवि कुमार[3] हयछम्महु | तउ चरेवि पयमूलि सुधम्महु ।
गय मोक्खहु णिक्खवियरओहहु | अट्ठमहागुणविरइयसोहहु ।
जो सिरिसेणु पुणु वि जो कुरुणरु | पढमकप्पि सो जाउ वरामरु ।
सिरिपहु सुरहरि णं ससहरपहु | हुय हरिणंदियज्ज विज्जुप्पहु[4] ।
कुरुमणुयत्तणु माणिवि बहुमेहु[5] | देवि अणिंदिय दिवि विमलप्पहु ।
सुरु हूई पुणु[6] बंभणि वयसहु | सच्चभाम[7] तहु कंत ससिप्पहु ।

घत्ता—जो सिरिसेणु महाइउ कुरुणरु सुरु सग्गाइउ ॥
सो एवहिं तुहुं जायउ अमियतेउ खगरायउ ॥३१॥

३२

जा सा सइ पंचाणणणंदिय | सा जोइप्पह घरिणि अणिंदिय ।
पुणु हूई सिरिविजउ वियाणहि | सोत्तिणि सच्चभाम[1] अहिणाणहि ।
जा सा धुवु सुतार सस तेरी | सुरणरविसहरहिययवियारी ।
कविलु सुइरु हिंडिवि संसारइ | भूयरमणकाणणि[2] भयगारइ ।
पविउलअइरावयणइतीरइ | कोसियतावसभुत्तसरीरइ ।
चवलवेयतवसिणियइ जणियउ | सो मयसिंगु णाम सुउ भणियउ ।

पूर्वजन्मकी प्रेमका परिपालन करनेवाली तुम्हारी माँ हूँ। तुम देवत्वका भोग कर मनुष्य रूपमें जन्मे हो। घात उठाये हुए प्रहार क्यों करते हो?" यह सुनकर दोनों कुमार क्रोधका नाश करनेवाले सुधर्मा मुनिके चरणमूलमें तपका आचरण कर, जिसमें पापोंके समूहका क्षय हो गया है और जिसमें आठ महागुणोंकी शोभा है ऐसे मोक्ष चले गये। जो श्रीषेण था और जो कुरुनर हुआ था वह प्रथम स्वर्गमें श्रेष्ठ देव हुआ—श्रीप्रभ नामक विमानमें श्रीप्रभ नामका। सिंहनन्दिता नामकी रानी उसी स्वर्गमें विद्युत्प्रभ देव हुई। कुरु भोगभूमिके सुखोंको मानकर अत्यधिक तेजवाली देवी अनिन्दिता स्वर्गमें विमलप्रभ नामका देव हुई। व्रतोंको सहते हुए ब्राह्मणी सत्यभामा शशिप्रभा (शुक्लप्रभा) नामकी उसकी देवी हुई।

घत्ता—जो आदरणीय श्रीषेण था, कुरुनर और देव, वह स्वर्गसे आकर इस समय तुम अमिततेज नामक विद्याधर राजा हुए हो ॥३१॥

३२

जो सती सिंहनन्दिता थी वह ज्योतिप्रभा नामकी तुम्हारी गृहिणी है। और जो अनिन्दिता थी वह श्रीविजय हुई, यह जानो। और जो सत्यभामा ब्राह्मणी थी, उसे तुम सुर, नर और विषधरोंका हृदय विदारित करनेवाली तुम्हारी बहन सुतारा निश्चित रूपसे पहचानो। वह पुराना कपिल संसारमें लम्बे समय तक परिभ्रमण कर भयंकर भूतरमण काननमें विशाल ऐरावती नदीके किनारे जिसके शरीरका भोग कौशिक तपस्वीने किया है, ऐसी चपलवेगा नामक

२. AP माणवि। ३. A कुमारयछम्महु। ४. P विज्जापहु। ५. A बहुसुहु। ६. AP बंभणि पुणु। ७. सच्चभाव।

३२. १. AP सच्चभाव। २. P °रमणि काणणि।

तेण तवंतें कामविलुद्धउं खयरु णिएवि णियाणु णिबद्धउं ।
जायउ सुउ आसुरियहि तरुणिहि असणिघोसु रत्तउ चिरघरणिहि ।
पिउ णियविज्जाविहवें मोहिवि णिय कंचणविमाणि आरोहिवि ।
पभणइ तिजगणाहु ण रुसिज्जइ अमियतेय जीवहं खम किज्जइ ।
णिसुणि णिसुणि किं बहुयइ वत्तइ णवमइ जम्मंतरि संपत्तइ ।

घत्ता—धुंव पंचमु चक्केसरु इह सोलहमु जिणेसरु ॥
भरहि राय तुहुं होसहि पुप्फदंतसिरि लेसहि ॥३२॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे संतिणाहभवावलिवण्णणं
णाम सट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥६०॥

तपस्विनीसे उत्पन्न हुआ मृगशृंग नामका पुत्र कहा गया। तप करते हुए उसने विद्याधरको देखकर कामसे लुब्ध निदान बाँधा। वह आसुरी नामकी स्त्रीसे उत्पन्न हुआ और अपनी पुरानी स्त्रीमें अनुरक्त हुआ। प्रिय श्रीविजयको अपनी विद्याके विभवसे मोहित कर और स्वर्णविमानमें चढ़ाकर उसे ले गया। त्रिजग स्वामी कहते हैं कि हे अमिततेज, क्रोध नहीं करना चाहिए। जीवोंको क्षमा करना चाहिए। सुनो-सुनो, बहुत कहनेसे क्या? नौवाँ जन्मान्तर प्राप्त करनेपर—

घत्ता—निश्चयसे तुम पाँचवें चक्रवर्ती और यहाँ सोलहवें तीर्थंकर होगे। तुम भरतक्षेत्रके राजा और मोक्षलक्ष्मी प्राप्त करोगे ॥३२॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका शान्तिनाथ
भवावलि वर्णन नामका साठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६०॥

---

३. P आसुरिहि। ४. AP चिरु घरिणिहि। ५. A पिउ णिय°; P पिउ मय°। ६. P वुत्तइ।
७. A ध्रुव। ८. A राउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६१

सो असणिघोसु आसुरियसिरि देवि सुतार सयंपह वि ॥
प[1]व्वइयइं णिसुणि[2]वि जिणवयणु जिणु पणवेप्पिणु तिजगरवि ॥ध्रुवकं॥

१

सिरिविजयंकें णिग्गयसंकें ।
मारुयवेएं अपमियतेएं ।
वउ उज्जालिउ पोसहु पालिउ ।
घरु बेण्णि वि जण गय ते सज्जण ।
सुरकरिकरभुउ रविकित्तीसुउ ।
णिरु णिरवज्जउ साहइ विज्जउ ।
उत्तमसत्ती चलपण्णत्ती[6] ।
णहयलगामिणि इच्छियरूविणि ।
जलसिहिथंभ[3]णि बंध[4]णि रुंभणि ।
अंधीकरणी पहरावै[5]रणी ।
विस्सपवेसिणि अवि आवेसिणि ।
अप्पडिगामिणि विविहपलाविणि ।
पासविमोयणि गहणीरोयणि ।
बलणिक्खेवणि चंडपहा[7]वणि ।

सन्धि ६१

वह अशनिघोष, आसुरीदेवी, सुतार और स्वयंप्रभा भी त्रिजग सूर्य जिनवरको प्रणाम कर और जिनवचनोंको सुनकर प्रव्रजित हो गये ।

१

शंकाओंसे दूर, वायुके समान वेग और अपरिमित तेजवाले श्रीविजयने व्रतका उद्यापन किया, प्रोषधोपवासका पालन किया। वे दोनों (श्रीविजय और अमिततेज) ही सज्जन घर गये। ऐरावतकी सूँड़के समान हाथोंवाला, अर्ककीर्तिका पुत्र अमिततेज अत्यन्त निरवद्य विद्याएँ सिद्ध करता है। उत्तम शक्ति, चलप्रज्ञप्ति, आकाशगामिनी, कामरूपिणी, जलस्तम्भिनी, अग्निस्तम्भिनी, बन्धिनी, रुंभनी, अन्धीकरिणी, प्रहारावरणी, विश्वप्रवेशिनी और आवेशिनी, अप्रतिगामिनी, विविधप्रलापिनी, पाशविमोचिनी, ग्रहनिरोधिनी, बलनिक्षेपिणी, चण्डप्रभाविनी,

१. १. AP पावइयइं । २. P णिसुणवि । ३. AP °थंभिणि । ४. AP °णिरुंभणि । ५. A पहरावरणी ।
६. K records *a p*: चल इति पाठे चपला । ७. AP °पहाविणि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहरणि मोहणि जंभंणि पाडणि ।
अवर पहावइ सइ पविरलगइ ।
भीमावत्तणि पबरपवत्तणि ।
पुणु लहुकारिणि भूमिवियारणि[9] ।
रोहिणि मणजव देवि महाजव ।
चंडाणिलजवं[10] णिरु चंचलजव ।
बहुलुप्पायणि सत्तुणिवारिणि ।
अक्खरसंकुल खलगलसंखल ।
मायावेहुई[11] पण्णलेहुइ[12] ।
हिमवेयाली सिहिवेयाली ।
मोक्कलवाली चलचंडाली ।
अलिसामंगी सिरिमायंगी ।
इय वरविज्जहिं णहयरपुज्जहिं ।
उहसेढीसरु हुउ परमेसरु ।
अण्णहि वासरि तेणं[13] सणेसरि ।
दमवरणामहु णिज्जियकामहु ।
पुण्णुप्पायणु दिण्णउ भोयणु ।

घत्ता—तें चारणदिण्णें भोयणेण ईह[14] रत्ति जि संभविउ फलु ॥
सुररवु दुंदुहिसरु वसुवरिसु मेहहिं वुट्ठउ सुरेंहिजलु[15] ॥१॥

प्रहरिणी, मोहिनी, जम्भनी, पातनी और प्रभावती, प्रविरलगति, भीमावर्तनी, प्रबलप्रवर्तनी, फिर लघुकारिणी, भूमिविदारिणी, रोहिणी मनोवेगा, चण्डवेगा, अग्निवेगा, बहुलोपिनी, शत्रुनिवारिणी, अक्षरसंकुला, दुष्टगलशृंखला, मायाबह्वी, पर्णलघ्वी, हिमवेताली, शिखीवेताली, मुक्त आलापिनी, चलचाण्डाली और भ्रमर-श्यामांगी, इस प्रकार विद्याधरोंके द्वारा पूजित इन वर विद्याओंके द्वारा वह दोनों श्रेणियोंका परमेश्वर हो गया। आदित्य सहित दूसरे दिन (रविवारके दिन) उसने कामको जीतनेवाले दमवर मुनिको पुण्यको उत्पन्न करनेवाला भोजन दिया।

घत्ता—उन चारण मुनिको दिये गये भोजनसे इसी जन्ममें फल प्राप्त हुआ। देवध्वनि, दुन्दुभिस्वर, धनवृष्टि और मेघोंके द्वारा सुरभित जलकी वर्षा ॥१॥

८. A भंडणि पाडणि; P बंधणि पाडणि। ९. AP °वियारिणि। १०. A चंडालिनिजव। ११. मायापहुई; K मायवहूइ but corrects it to माया°। १२. P पण्णइ लहुई। १३. A तेण णरेसरि। १४. A इह रत्त जि। १५. A सुहु जलु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

अमरगुरुदेवं[1]गुरु णामें[2]ण सावसरु ।
हयमोहवासम्मि साहूण पासम्मि ।
तहिं अमियतेएण सिरिविजयराएण ।
णियतायजम्माइं वणहरणकम्माइं ।
सिलखंभदलणाइं दाइज्जमलणा[3]इं ।
तवचरणकरणाइं सणियाणमरणाइं ।
सुरलोयवासाइं णरभवविलासाइं ।
पडिवक्खमहणाइं हरिगीवणिहणाइं ।
सिरिरमणिरमणाइं कयणरयगमणाइं ।
जस[4]कंतिफुरणाइं असुरारिचरियाइं ।
रिसिणाहकहियाइं सोऊण गहियाइं ।
दोहिं पि सुवयाइं अमयाइं सुद[5]याइं ।
सिरिविजउ तण्हंतु मणि महइ कण्हंतु ।
पुणु कालमाणेण परिव[6]ड्ढमाणेण ।
विउलमइ विमलमइ ण[7]मिऊण परमजइ ।
णाऊण मासाउ मोत्तूण मासाउ ।
रवितेय सिरियत्त राईवदलणेत्त ।
णियणियतणुब्भूय कंदप्पसमरूय ।
[8]दोण्हं पि ण्हविऊण कुलमग्गि थविऊण ।

२

किसी एक दिन अवसर पाकर अमरगुरु और देवगुरु नामके मुनियोंके मोहपाशका नाश करनेवाले सामीप्यमें उन अमिततेज और श्रीविजयने अपने पिताके जन्मों, वनहरण कर्मों (शिलाखम्भको चूर्ण करना, शत्रुओंका मानमर्दन करना, तपश्चरण करना, निदानपूर्वक मरना, सुरलोकमें निवास करना, मनुष्यभवके विलास, प्रतिपक्षोंका मथन, अश्वग्रीवका निधन, श्रीरमणीसे रमण, नरकके लिए गमन करना, यश और कान्तिका स्फुरण, असुर शत्रुके चरित) मुनिनाथके द्वारा कथनको सुनकर सुव्रतों और अमित दयाओंको ग्रहण कर लिया। तृष्णासे आकुल श्रीविजय मनमें कृष्णत्व (नारायणत्व) को महत्त्व देता है। विमलमति और विपुलमति परममुनियोंको नमस्कार कर, अपनी आयु एक माहकी जानकर, लक्ष्मीका आस्वाद (भोग) छोड़कर, कमलदलके नेत्रोंवाले रवितेज और श्रीदत्त नामक अपने कामदेवके समान अपने-अपने पुत्रोंका अभिषेक कर,

२. १. A दिव्वगुरु । २. A णामेण । ३. P adds after this: जसकित्तिपुरियाइं, असुरारिचरियाइं, which in our text is line 10 below । ४. A जसकित्तिफुरियाइं । ५. A सदयाइं; A adds after this: भवभावखमियाइं; K also writes it but scores it off. । ६. A परिवुड्ढमाणेण; P परिवड्ढमाणेण । ७. AP णविऊण । ८. AP दोहिं पि । ९. A णविऊण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंदणवणंतम्मि णंदणमुणी जम्मि ।
णिम्मुक्ककम्मम्मि पईसरिवि लहु तम्मि ।

घत्ता—अहिसिंचिवि पुज्जिवि परमजिणु वंदिवि भत्तिसमग्घविउं ॥
आहारु सरीरु वि परिहरिवि बिहिं मि परत्तु जि चिंतविउं ॥२॥

३

जं णियपरपेसणसुणिरवेक्खु जं णिण्णासियभवबंधदुक्खु ।
जं घोरसरायकसायसमणु तं कयउं तेहिं पाओवमरणु ।
तेरहमइ कप्पि मणोहिरामि सुरणंदिय णंदावत्तधामि ।
हुउ अमियतेउ रविचूलु देउ सत्थिउ णामें अवरु वि णिकेउ ।
मणिचूलु णामु सिरिविजउ तेत्थु सुरवरु जायउ लक्खणपसत्थु ।
को वण्णइ ताहं महापहाउ ते बे वि वीससायरसमाउ ।
कालेण जंबुदीवंतरालि इह पुव्वविदेह रमाविसालि ।
वच्छावइदेसि पहोयरीहि णयरिहि वणकीलियकिंणरीहि ।
णीसेसकलालउ मणुयचंदु णामेण थिमियसायरु णरिंदु ।
तहु देविहि देउ वसुंधरीहि रविचूलु गब्भि थिउ सुंदरीहि ।
आवेप्पिणु णंदावत्तणाहु अवराइउ हुउ थिरथोरबाहु ।

कुलमार्गमें (राजगद्दी) पर स्थापित कर, जिस चन्दनवनमें नन्दनमुनि थे उसमें प्रवेश कर, निर्मुक्तकर्म उसके पास शीघ्र—

घत्ता—भक्तिसे प्राप्य जिन भगवान्का अभिषेक, पूजा और वन्दना कर, आहार और शरीरका त्याग कर दोनोंने परत्व (श्रेष्ठ तत्त्व) का चिन्तन किया ॥२॥

३

जो अपने पराये प्रयोजनसे निरपेक्ष हैं, जिसने संसारके बन्ध और दुःखका नाश कर दिया है, जिसमें घोर कषायका शमन है, उन्होंने ऐसा प्रायोपमरण किया । सुन्दर तेरहवें स्वर्गमें, देवोंके द्वारा आनन्दित नन्दावर्त विमानमें अमिततेज रविचूलदेव हुआ । वहाँ एक और स्वस्तिक नामक विमान था, श्रीविजय उसमें लक्षणोंसे प्रशस्त मणिचूल देव हुआ । उनके प्रभावका वर्णन कौन कर सकता है । वे दोनों बीस सागरकी आयुवाले थे । समय होनेपर जम्बूद्वीपके लक्ष्मीसे विशाल पूर्व विदेहमें वत्सकावती देशकी जिसके वनमें किन्नरियाँ क्रीड़ा करती हैं, नगरीमें मनुष्य-श्रेष्ठ समस्त कलाओंका घर स्तमितसागर नामका राजा था । उसकी देवी सुन्दरी वसुन्धराके गर्भमें वह देव आकर स्थित हो गया । नन्दावर्त विमानका वह स्वामी अपराजित नामसे स्थिर और स्थूल बाँहोंवाला पुत्र हुआ ।

१०. पइसरवि । ११. P समग्घविउ ।

३. १. A पावोगमरणु; P पाओवगमरणु । २. A पहावरीहि । ३. अमियसायरु; P तिमियसायरु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—मणिचूलु वि सत्थियसुरहरहु णिवडिवि हुउ अणुमइतणउ ॥
सो सूहउ सोम्मु सुलक्खणउ वण्णें जियणीलंजणउ ॥३॥

४

परदुज्जउ केसउ मणि गणेवि — कोक्किउ अणंतवीरिउ भणेवि ।
पढमहु विरएप्पिणु पट्टबंधु — लहुयहु ढोइवि जुवरायचिंधु ।
सिंहासणु छत्तइं परिहरेवि — णिम्मोहभावभावणउ लेवि ।
अरहंतहु अविचिंतियपहासु — पिउ सरणु पइट्ठु सयंपहासु ।
अवलोइवि कत्थइ णायराउ — सिरितण्हइ मरिवि फणिंदु जाउ ।
पुरि सुहुं वसंति ते बे वि भाइ — णडि बब्बरि अण्णेक्क वि चिलाइ ।
णच्चंति ताउ ते तहिं णियंति — जा ताम हारहिमहासकंति ।
आयउ णारउ दिग्गयजसेहिं — संमाणिउ णउ रसपरवसेहिं ।

घत्ता—मणि रोसु हुयासणु पज्जलिउ सहहुं ण सक्किउ चलियगहि ॥
सो जंतु ण केण वि दिट्ठु तहिं पवणु चडुलु उल्ललिउ णहि ॥४॥

५

गउ रूसिवि सिवमंदिरपुरासु — दमियारिहि विज्जाहरणिवासु ।
वज्जरिउ तेण रयणाइं कासु — पइं मेल्लिवि को महियलि महीसु ।
वब्बरिचिलाइणामालियाउ — णच्चणिउ दोण्णि वरबालियाउ ।

घत्ता—मणिचूल देव भी स्वस्तिक विमानसे च्युत होकर अनुमतिका पुत्र हुआ। वह सुभग सौम्य सुलक्षण रंगमें नील और अंजन पर्वतको जीतनेवाला था ॥३॥

४

मनमें बलभद्रको शत्रुओंके द्वारा अजेय समझकर उसे अनन्तवीर्य कहकर पुकारा गया। पहलेको पट्ट बाँधकर और छोटेको युवराजके चिह्न देकर सिंहासन और छत्र छोड़कर निर्मोह भावनाका चिन्तन करते हुए वह अचिन्तनीय प्रभाववाले स्वयंप्रभ अरहन्त की शरणमें गया। कहींपर नागराजको देखकर लक्ष्मीकी कामनासे मरकर वह धरणेन्द्र हुआ। वे दोनों भाई उस नगरीमें सुखपूर्वक रहने लगे। उनकी बर्बरी और किलाती नामकी दो नर्तकियाँ थीं। जब वे दोनों नाच रही थीं और वे दोनों देख रहे थे तभी हार हिम और हास्यके समान कान्तिवाले श्री नारद मुनि आये। दिग्गजोंके समान यशवाले रसके वशीभूत (नाट्यरस) उन दोनोंके द्वारा उनका सम्मान नहीं किया गया।

घत्ता—उनके मनमें क्रोधकी ज्वाला भड़क उठी। वे उसे सहन नहीं कर सके, आकाशमें जाते हुए उन्हें कोई नहीं देख सका। पवनकी तरह चंचल वे आकाशमें उछल गये ॥४॥

५

वह रूठकर दमितारि राजाके निवास शिवमन्दिरपुर गये। उन्होंने वहाँ कहा, "रत्न किसके पास हैं, आपको छोड़कर धरतीपर और कौन राजा है ? बर्बरी और किलात नामकी दो

४. A मणिचूलि। ५. A °सुरवरहु णिवडिवि ताहि जि हुउ तणउ। ६. A सलक्खणउ।
४. १. AP सीहासणु। २. A चलियग्गहि।

पहयरिपुरि अवराइयहु गेहि णं विज्जुलियउ अच्छंति मेहि ।
बेण्णि वि थणभारें भग्गियाउ लइ णरवइ तुज्झु जि जोग्गियाउ[1] ।
पट्ठवहि मंति आणवहि तुरिउं राएण वि तं णियचित्ति धरिउं ।
अवलोईय[2] मंतिमहंत[3] संत सहसा संपेसिय बुद्धिवंत ।
गय ते वि पुरिहि पहायरीहि जें[4] वल्लह तणय वसुंधरीहि ।
लइ तेहिं ताहं उवइट्ठु कज्जु जइ इच्छहु संपयविउलु रज्जु ।
तो णियणडिजुयलउं देहु ताम दमियारिदेउ रूसइ ण जाम ।
ता पोसहणियमालंकिएण जिणपायपोमसेवापिएण ।

घत्ता—जिणभवणथिएण[5] णराहिविण अवराइइण समंतियणु ।
आउच्छिउ दिज्जउ तियजुयलु[6] किं किज्जउ सहुं तेण रणु ॥५॥

६

तं णिसुणिवि[1] मंति भणंति एम्व खयराहिउ दुज्जउ समरि देव ।
णारीदाणेण वे होइ मलिणु तं णिसुणिवि मउलियणयणवयणु[2] ।
थिउ चिंताउरु णरणाहु जाम चिर[3]भवविज्जउ पत्ताउ ताम ।
सव्वउ पण्णत्तिपहूइयाउ रिउवहु खवंति वसिहूइयाउ[4] ।

सुन्दर नर्तकी बालाएँ प्रभाकरी नगरीके राजा अपराजितके घरमें इस प्रकार हैं, मानो मेघोंमें बिजलियाँ हों। वे दोनों ही स्तनभारसे भग्न हैं। हे राजा, तुम ले लो, वे दोनों तुम्हारे योग्य हैं। मन्त्री भेज दो, वह शीघ्र ले आये।" राजाने भी इस बातको अपने मनमें ठान लिया। उसने अपने विद्वान् मन्त्रणामें महान् मन्त्रियोंकी ओर देखा और बुद्धिमान् मन्त्रियोंको भेजा। वे भी उस प्रभाकरी नगरीके लिये गये, जो वसुन्धरा (धरती) के लिए प्रिय थी। शीघ्र ही उन्होंने उससे अपना काम कहा कि यदि तुम सम्पत्तिसे विपुल राज्य चाहते हो तो अपनी दोनों नर्तकियाँ दो, कि जिससे हे देव, राजा दमितारि नाराज न हो। तब प्रोषधोपवासके नियमसे अलंकृत तथा जिसे जिनवरके चरणकमलोंकी सेवा प्रिय है ऐसे उस—

घत्ता—जिनमन्दिरमें स्थित राजा अपराजितने अपने मन्त्रीगणसे पूछा—"उसे नर्तकीयुगल दे दिया जाये या युद्ध किया जाये?" ॥५॥

६

यह सुनकर मन्त्रियोंने इस प्रकार कहा—"हे देव, विद्याधर राजा युद्धमें दुर्जेय है, लेकिन नारीदानसे भी कलंक लगेगा?" यह सुनकर अपना मुख और आँखें बन्द करके राजा जब चिन्तासे व्याकुल बैठा था, तब उसे पूर्व भवकी अर्जित विद्याएँ प्राप्त हुईं। प्रज्ञप्ति प्रभृति सभी

५. १. AP जोगियाउ। २. AP आलोइय। ३. A मंतमहंत। ४. A जे पियसुय वसुहवसुंधरीहि; P जे पियसुहवसहि वसुंधरीहि। ५. AP °भवणि थिएण। ६. P तियजमलु।

६. १. AP वि। २. AP मउलियवयणणलिणु। ३. AP चिरभव°। ४. AP add after this: जंपंति णवंति सदूइयाउ, चिरु सामिहि दासत्तणु गयाउ, को पहणहु को आणहु धरेवि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वयणेण तेण संतुट्ठ बे वि भायर णियमंतिहिं रज्जु देवि[5] ।
गय सिवमंदिरु वित्थारएण कवडें णडिवेसायारएण ।
दरिसिउ रायहु पडिहारएण जं संजुत्तउं सिंगारएण ।
दूएंण[6] कहिउ तं एउ राय को सहइ तुहारा विसमघाय ।
अवराइएण लइ दिण्णु तुज्झु कामिणिजुयलुल्लउं खीणमज्झु ।

घत्ता—ता कडयमउडमणिकुंडलहिं कंचीदामहिं भूसियउ ॥
दमियारें मायामाणिणिउ सुइसुमहुरु संभासियउ ॥६॥

७

करणंगहारबहुरसविसट्टु बीयइ दिणि अवलोएवि णट्टु ।
वीणाझुणि घणथण मज्झखाम अदुईय[1] धीय कणयसिरिणाम ।
अप्पिय ताएं मायाविणीहिं णाडउं सिक्खाविय भाविणीहिं ।
णच्चंतिहि तहि[2] पुणु कामवेसु गाइउ अणंतवीरिउ णरेसु ।
कण्णाइ भणिउं को सो अणिंदु किं किंणरु किं सुरु[3] किं फणिंदु ।
कित्तिमरूवाजीवाइ वुत्तु सो कुमरु थिमिय[4]सायरहु पुत्तु ।
परमेसरु पहयरिपुरिणिवासु अवराइउ भायरु होइ जासु ।
उवमिज्जइ सो भुवणयलि कासु ता कण्णहि[5] लग्गउ कामपासु ।
सा भणइ मोरकेक्कारवाइ तहु दंसणु लब्भइ केम[6] माइ ।

वशीभूत विद्याएँ शत्रुवधकी बात कहती हैं। इस वचनसे वे दोनों भाई सन्तुष्ट हुए और अपने मन्त्रियोंको राज्य देकर, कपटसे नर्तकियोंके आकारको बनाकर वे दोनों विस्तारसे शिवमन्दिर नगर गये। प्रतिहारीने उन्हें राजा दमितारिको दिखाया। शृंगारक दूतने जो उपयुक्त था वह कहा कि हे राजन्, तुम्हारा विषम आघात कौन सहन कर सकता है। लो अपराजितने तुम्हें क्षीण मध्यभागवाली दोनों नर्तकियाँ दे दीं।

घत्ता—तब कटक मुकुट और मणिकुण्डलों तथा कांची दामोंसे विभूषित मायाविनी नर्तकियोंसे दमितारिने मधुर वार्तालाप किया ॥६॥

७

दूसरे दिन करणों, अंगहारों तथा अनेक रसोंसे विशिष्ट नृत्यको देखकर फिर अपनी वीणाके समान ध्वनिवाली मध्यक्षीणा और सघन स्तनोंकी अद्वितीय कनकश्री नामकी कन्या उन्हें सौंप दी। उन स्त्रियोंने उसे नाटक सिखाया। उसके नाचते हुए कामरूप अनन्तवीर्य राजा (गीतमें) गाया गया। कन्याने पूछा—यह कौन राजा है—क्या किन्नर है, क्या देव है या नागेन्द्र? वेश्याका कृत्रिम रूप बनानेवाली उन्होंने कहा कि वह स्तिमितसागर राजाका पुत्र है, शत्रुपुरीके निवासोंको आहत करनेवाला परमेश्वर अपराजित जिसका भाई है। धरतीतलपर उसकी उपमा किससे दी जा सकती है। यह सुनकर कन्या कामबाणसे आहत हो गयी। मयूरकी केका वाणीमें वह

५. AP add after this : परिमिय (P परमिय) जणेहि णोसरिय बे वि । ६. AP दूयएण ।
७. १. A तहिं आय धीय । २. AP पुणु तहि । ३. A णरु । ४. तिमिय° । ५. AP कण्हइ ।
६. P किं ण माइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसहविरहग्गिझुलक्कभीउ दक्खालहि जाम ण जाइ जीउ ।
घत्ता—ता कवडणडित्तणु अवहरिवि थिउ हरि पायडु तणु करिवि ।।
जोयंति तरुणि णं सिसुहरिणि विद्धी मयणें हुंकरिवि ।।७।।

८

मणि खुत्तु कुमारिहि कामबाणु आरोहिवि धयचंचलु विमाणु[1] ।
णिय सुंदरि तायहु कहिय वत्त तेण वि पारंभिय समरजत्त ।
पेसिय मंडलिय अणेयभेय सुर विज्जाहर चंदक्कतेय ।
ते जित्त घित्त रणराइएण हलिणा[2] बलिणा अवराइएण ।
सयमेव पत्तु ता चावपाणि हणु हणु भणंतु अहिमाणि दाणि[3] ।
किर बेण्णि वि सर संधंति जाव अंतरि पइट्ठु दणुयारि ताव ।
जुज्झिय बेण्णि वि बहुपहरणेहिं ते केसव पडिकेसव घणेहिं ।
पच्छइ पुणु कित्तिहरहु सुएण मुक्कउ रहंगु णिट्ठुरभुएण ।
तं लेप्पिणु हरिणा तहु जि दिण्णु वियलंतरुहिरु[4] वच्छयलु भिण्णु ।
रिउ मारिवि किर चल्लंति जाम पयमेत्तु णं चलइ विमाणु ताम[5] ।
घत्ता—ता पेक्खंतहिं सयलउ दिसउ समवसरणु अवलोइउं ।।
हरिबलहिं विहि मि विंभियवसहिं[6] णियविज्जामुहुं जोइउं ।।८।।

बोली, "हे आदरणीय, उसके दर्शन कैसे हो सकते हैं, उसे दिखा दीजिए कि जबतक असह्य विरहाग्निकी ज्वालासे भीत मेरा जीव नहीं जाता।"

घत्ता—तब नारायण अनन्तवीर्य अपना कृत्रिम नटत्व छोड़कर तथा प्राकृत शरीर धारण कर स्थित हो गये। उसे देखकर वह तरुणी हुं करके कामसे इस प्रकार विद्ध हो गयी मानो तरुण हरिणी विद्ध हो गयी हो ।।७।।

८

कुमारीके मनमें कामबाण लग गया। ध्वजोंसे चंचल विमानमें बैठाकर कुमारी सुन्दरी ले जायी गयी। पिताको यह समाचार दिया गया। उसने युद्धयात्रा प्रारम्भ की। उसने अनेक प्रकारके माण्डलीक तथा सूर्य-चन्द्रके समान तेजवाले देव विद्याधर भेजे। उन्हें जीतकर युद्ध-शोभी बलभद्र अपराजित और नारायण अनन्तवीर्यने भगा दिया। तब वह अभिमानी दानी हाथमें धनुष लेकर स्वयं 'मारो-मारो' कहता हुआ पहुँचा। जबतक वे दोनों अपने सरोंका सन्धान करें तबतक दानवोंका शत्रु दमितारि बीचमें आ गया। वे नारायण और प्रतिनारायण सघन प्रचुर शस्त्रोंसे लड़े। परन्तु बादमें कीर्तिधरके पुत्र कठोर भुजाओंवाले दमितारिने चक्र फेंका। उसे झेलकर नारायण अनन्तवीर्यने उसीपर चला दिया। जिससे रक्त गिर रहा है, ऐसा उसका वक्षःस्थल भिन्न हो गया। शत्रुको मारकर जैसे ही वे दोनों चलते हैं, एक पग भी उनका विमान नहीं चल पाता।

घत्ता—तब सब दिशाओंमें देखते हुए उन्होंने समवशरण देखा। विस्मयके वशीभूत होकर नारायण और प्रतिनारायण अपनी विद्याओंके मुख देखने लगे ।।८।।

---

८. १. AP विवाणु। २. AP हरिणा। ३. A अहिमाणदाणि; P अहिमाणखाणि। ४. A णिग्गंतरुहिरु। ५. AP पयमेत्तु विवाणु ण चलइ ताम। ६. AP विभय°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

सा भणइ महापहु विजयकंखु होंतउ सिवमंदिरि कणयपुंखु ।
तहु तणउ तणउ कित्तिहरु राउ एयहु दमियारिहि[1] होइ ताउ ।
संतियरहु सीसु मुएवि राउ थिउ वरिसमेत्तु परिमुक्ककाउ ।
अच्छइ भो[2] केवलि जाहुं एहु भत्तिइ वंदहुं वोसट्टदेहु ।
ता सव्वइं भव्वइं तहिं गयाइं वंदेप्पिणु परमप्पयपयाइं ।
लायण्णवण्णणिज्जियसिरीइ आउच्छिउ चामीयरसिरीइ ।
भणु देवदेव णियजणणमरणु मइं दिट्ठउ किं सुहिसोयकरणु ।
तं सुणिवि कहइ[3] समसत्तुमित्तु भुवणत्तयणवराईवमित्तु ।

घत्ता—इह दीवि भरहि[4] संखउरवरि वणि देविलु चक्कलथणिय ॥
बंधुसिरि घरिणि गुणगणणिलय सुय सिरिदत्त ताइ जणिय ॥९॥

१०

पुणु कुंटि[1] पंगु अण्णेक्क दीण णिल्लक्खण हूई हत्थहीण ।
अण्णेक्क बहिर णउ सुणइ वाय खुज्जी अण्णेक्क विमुक्कछाय ।
अण्णेक्क एक्कलोयणिय जाय पिउ मुउ कालें गय मरिवि माय ।
लहुबहिणिउ करुणें तोसियाउ छ[2] वि एयउ पइं घरि पोसियाउ ।
वणि संखमहीहरि सीलबाहु अवलोइउ सव्वजसंकु[3] साहु ।

९

तब विजया कहती है कि शिवमन्दिर नगरकी विजयका अभिलाषी राजा महाप्रभु कनकपुंख था। उसका पुत्र कीर्तिधर राजा है, इस दमितारिका वह पिता है। यह राज्य छोड़कर शान्तिकर मुनिके शिष्य होकर, एक वर्ष तक कायोत्सर्गसे स्थित रहे हैं। अरे कायोत्सर्गमें स्थित वह केवली हैं। जाओ और भक्तिसे इनकी वन्दना करो। तब सब भव्य वहाँ गये। परमात्माके चरणोंकी वन्दना कर सौन्दर्य और रूपमें लक्ष्मीको पराजित करनेवाली स्वर्णश्रीने पूछा—"हे देव-देव बताइए, मैंने सुधीजनोंके शोकका कारण अपने पिताका मरण क्यों देखा।" यह सुनकर शत्रु-मित्रमें समान भाव रखनेवाले बोले—

घत्ता—इस द्वीपके भरत क्षेत्रमें शंखपुर नगरमें देविल नामका वणिक् था। उसकी गोल स्तनोंवाली बन्धुश्री नामकी पत्नी थी। उसने गुणसमूहकी घर श्रीदत्ता नामकी कन्याको जन्म दिया ॥९॥

१०

फिर बौनी लँगड़ी एक और दीन लक्षणशून्य और हाथसे हीन हुई। एक और बहरी थी, जो बात नहीं सुनती थी। एक और कान्तिसे रहित, बात नहीं सुनती थी। एक दूसरी एक आँखवाली कन्या उत्पन्न हुई। पिता मर गया और समय आनेपर माता भी मरकर चली गयी। करुणासे परिपूर्ण होकर तुमने इन छहों कन्याओंका घरपर पालन-पोषण किया। वनमें शंखपर्वत-

९. १. AP दमयारिहि। २. AP केवलि भो। ३. AP भणइ। ४. A भरह।
१०. १. A कुंट; P कुट्टि। २. AP सच्छवि। ३. A सच्चजसंक°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पालिय अहिंस वयणेण तासु अण्णेक्कु धम्मचक्कोववासु।
दिण्णउं सुव्वयखंतियहि दाणु आहारवमणि विदिगिंछठाणु।
सम्मत्ताभावें कयउ बालि मोहेण पडइ जणु जम्मजालि।
सोहम्मसग्गि सामण्णदेवि होइवि मुय माणुसदेहु लेवि।
हूई दमियारिहि तणिय पुत्ति जं दिट्ठी पिउखयदुहपवित्ति।

घत्ता—तं वयणीवमणविणिंदणहु फलु पइं सुइ अणुहुंजियउं॥
हियउल्लउं जणणहु रणि वडिउ दिट्ठउं रुहिरें मंडियउं॥१०॥

११

तं णिसुणिवि हरि बल णियघरासु गय कण्ण लेवि पहयरिपुरासु।
गोविंदतणउ कइकामधेणु सिवमंदिरु गयउ अणंतसेणु।
रिउसुय तं तहु पइसहुं ण देंति करवालहिं सूलहिं उत्थरंति।
कंचणसिरियहि संरंभगाढ भायर सुघोस वर विज्जदाढ।
आवेप्पिणु चवलाउहकरेहिं ते बे वि णिहय हरिहलहरेहिं।
सोयग्गि दड्ढु सरीररुक्खु असहंति सबंधवपलयदुक्खु।
बलकेसव पत्थिवि गय कुमारि जिणु णविवि सयंपहु णाणधारि।
सुप्पहहि पासि थिय संजमेण गणिणिहि संतिहि कहिएं कमेण।

पर शीलबाहु और सर्वजशांक साधुके दर्शन किये। उनके उपदेशसे उसने अहिंसा धर्मका पालन किया। तथा एक और धर्मचक्र उपवास किया। सुव्रता नामक आर्यिकाको दान दिया। उसने आहारको वमन कर दिया (लेकिन) सम्यक्त्वके अभावमें (आर्यिकाके द्वारा) आहारवमनको उस बालाने घृणाका स्थान माना। जन मोहके कारण जन्मजालमें पड़ते हैं। सौधर्म स्वर्गमें सामान्य देवी होकर, वहाँसे मरकर मनुष्य शरीर धारण कर वह दमितारिकी पुत्री हुई और इसलिए पिताके विनाशके कारण दुःख प्रवृत्ति उसने देखी।

घत्ता—उस आर्या सुव्रताके वमनकी निन्दाका फल उसने भोगा। और युद्धमें मारे गये अपने पिताको रक्तसे सना हुआ देखा ॥१०॥

११

यह सुनकर बलभद्र और नारायण कन्याको लेकर अपने घर प्रभाकरीपुरीके लिए चले गये। गोविन्दपुत्र, कवियोंके लिए कामधेनु अनन्तसेन शिवमन्दिरके लिए गया। लेकिन शत्रुपुत्रों (सुघोष और विद्युद्दंष्ट्र) ने उसे नगरमें प्रवेश नहीं करने दिया। वे तलवारों और शूलोंको लेकर उछल पड़े। हिंसाके संकल्पसे दृढ़ वे दोनों कनकश्रीके श्रेष्ठ भाई थे। तब अपने हाथोंमें चंचल आयुध लिये हुए उन दोनों (बलभद्र और नारायण) ने उन दोनोंको मार डाला। उस (कनकश्री) का शरीररूपी वृक्ष शोककी आगसे जलकर खाक हो गया। सम्बन्धियोंके विनाशका दुःख नहीं सह सकनेके कारण बलभद्र और नारायणसे प्रार्थना कर (अनुमति लेकर) कनकश्री ज्ञानधारी स्वयंप्रभ मुनिको प्रणाम कर उपदिष्ट क्रम और संयमके साथ शान्त सुप्रभा आर्यिकाके

४. K धम्मु। ५. AP विजिगिंछ°। ६. A तें वइणीव°; P तं वइणोव°। ७. AP अणुहुंजिउं। ८. AP रंजियउं।
११. १. AP पहयरपुरासु।

सोहम्मि अमरु हूई मरेवि   एत्तहि महि चक्कें वसि करेवि ।
खग माणव[2] दाणव जिणिवि समरि[3]   णारायण[4] सीरि पइट्ठ णयरि ।

घत्ता—बलएवें विजयासुंदरिहि हूई सुय णामें सुमइ ॥
कंकेल्लिपल्लवारत्तकर पाडलपिल्लयमंदगइ ॥११॥

१२

णियमियदुद्दमणवारणासु   घरु आयउ दमवरचारणासु ।
संपुण्णु[1] अण्णु दिण्णउं समिद्धु[2]   पंचच्छेरउ पत्ती पसिद्धु[3] ।
दिट्ठी पिउणा सुय दिण्णदाण   णवजोव्वण रूवें सोहमाण ।
संणिहियसयंवरमंडवंति   देसंतरायणररायकंति ।
जोवइ वरु जा किर रहवरत्थ   तावच्छर चवइ वरंबरत्थ ।
हलि दिल्लिदिलिए ण भरहि[4] काइं   पइं मइं मि सग्गि भणियाइं जाइं ।
जा पुव्वमेव ण लहइ णिजम्मु[5]   सा इयरहि अक्खइ परमधम्मु ।
सुणि विहिं मि भवंतरु कहमि माइ   पुक्खरवरद्धपुव्विल्लभाइ ।
भरहे णंदउरइ[6] णं सुरिंदु   णामेण अमियविक्कमु णरिंदु ।
तहु अत्थि अणंतमइ त्ति भज्ज   वरकइविज्जा इव जणमणोज्ज ।
धणसिरि अणंतसिरि तहि सुयाउ   हउं तुहुं बेण्णि वि सुललियभुयाउ ।

पास स्थित हो गयी। मरकर वह सौधर्म स्वर्गमें उत्पन्न हुई। यहाँ धरतीको चक्रसे जीतकर तथा विद्याधर, मनुष्य और दानवोंको युद्धमें जीतकर बलभद्र और नारायण नगरमें प्रविष्ट हुए।

घत्ता—बलभद्र और विजयासुन्दरीसे सुमती नामकी सुन्दरी हुई। अशोक पल्लवोंके समान आरक्त हाथोंवाली और बालहंसके समान गतिवाली ॥११॥

१२

जिन्होंने मनरूपी दुर्दम गजको वशमें कर लिया है ऐसे घर आये हुए दमवर चारण मुनिको उसने सम्पूर्ण और समृद्ध आहार दिया। वहाँ पाँच आश्चर्य प्राप्त हुए। दान देनेवाली कन्याको पिताने देखा कि वह नवयौवनवती और रूपसे शोभित है। जिसमें देशान्तरके राजाओं और मनुष्य राजाओंकी कान्ति है, ऐसे उस नवनिर्मित मण्डपमें रथवरपर बैठी हुई वह वर देखती है तो आकाशमें स्थित एक अप्सरा उससे कहती है—हे कन्ये, यह तुम्हें याद नहीं आ रहा है कि जो मैंने और तुमने स्वर्गमें कहा था कि जो पहले मनुष्य-जन्म नहीं लेगा वह दूसरेसे परमधर्म कहेगा। हे आदरणीय सुनो, दोनोंके जन्मान्तरका कथन करता हूँ। पुष्करार्ध द्वीपके पूर्वभागमें भरतक्षेत्रके नन्दनपुरमें सुरेन्द्रके समान अमितविक्रम नामका राजा था। उसकी अनन्तमती नामकी भार्या थी, जो वरकविकी विद्याकी तरह लोगोंके लिए सुन्दर थी। उसकी मैं और तुम दोनों सुन्दर भुजाओंवाली धनश्री और अनन्तश्री नामकी कन्याएँ थीं।

---

२. AP दाणव माणव । ३. AP सवरि । ४. AP णाराइण ।
१२. १. AP संपक्कु । २. A समिट्ठु । ३. A सिट्ठु । ४. A सरहि । ५. A नृजम्मु । ६. P णंदउरिहि ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

घत्ता—वणि सिद्धमहागिरि गंपि हलि णंदणमुणिवरपयजुयलु ॥
वंदेप्पिणु व्रउ उववासतउ चिण्णउं दुद्धरु गलियमलु ॥१२॥

१३

वज्जंगउ णामें ससहराहु तहिं आयउ कत्थइ तिउरणाहु ।
कंताइ कुलिसमालिणिइ सहिउ अम्हइं णियंतु मारेण महिउ ।
गउ णियपुरि णियपणइणि थवेवि कामाउरु पडियागउ वलेवि ।
बेण्णि वि जणीउ संचालियाउ णं हंसें कुवलयमालियाउ ।
आयासि जाम धावइ तुरंतु ता दिट्ठउ तेण कलत्तु एंतु ।
भत्तारचित्तगइ संभरंतु ईसाकसायवसु विप्फुरंतु ।
णिक्करुणें दइवें पेल्लियाउ भीएण वेणुवणि घल्लियाउ ।
परिहरियभीमवणयरभयाउ तहिं बेण्णि वि संणासें मुयाउ ।
घत्ता—णउ कंदु ण मूलु ण फलु ण दलु अहिलसियउ णउ किं पि वणि ॥
जोईसरु सासयसिद्धियरु परमजिणेसरु धरिवि मणि ॥१३॥

१४

हउं णवमी आहंडलहु देवि हूई तुहु माणुसतणु मुएवि ।
णामें रइ पवर कुबेरणारि णंदीसरजत्तहि दुक्खहारि ।
मंदरयलि दिट्ठउ चरियतिक्खु दिहिसेणु णाम पणवेवि भिक्खु ।

घत्ता—हे सखी, सुनो सिद्धिमहागिरि पर्वतपर आकर नन्दन नामक मुनिवरके चरण-कमलोंको प्रणाम कर कठोर तथा मलनाशक उपवासतपरूपी व्रत ग्रहण किया ॥१२॥

१३

वहाँ चन्द्रमाके समान कान्तिवाला त्रिपुरका स्वामी वज्रांगद नामका विद्याधर राजा कहींसे आया। हमें देखकर वह कामसे पीड़ित हो उठा। अपनी पत्नीको अपने घर छोड़नेके लिए वह गया और कामातुर वह शीघ्र वापस आ गया। उसने हम दोनोंको इस प्रकार उठा लिया मानो हंसने कुवलयमालाको उठा लिया हो। जैसे ही वह आकाशमें दौड़ा कि उसने तुरन्त अपनी पत्नीको आते हुए देखा। अपने पतिकी गतिकी याद करते हुए और ईर्ष्या कषायके कारण तम-तमाते हुए। दैवसे प्रेरित निष्करुण उस भयावहने हमें वेणुवनमें फेंक दिया। जिन्होंने भीषण वनचरोंके भयको छोड़ दिया है, ऐसी हम दोनों वहाँ संन्यासपूर्वक मर गयीं।

घत्ता—शाश्वत सिद्धि देनेवाले योगीश्वर परम जिनको अपने मनमें धारण कर हम लोगोंने उस वनमें न कन्द, न मूल, न फल और न दल कुछ भी न चाहा ॥१३॥

१४

मैं नौवें स्वर्गमें देवी हुई। तू मनुष्य शरीर छोड़कर कुबेरकी रति नामकी देवी हुई। दुःखका हरण करनेवाली नन्दीश्वरकी यात्रामें मन्दराचलपर चरित्रमें तीक्ष्ण धृतिसेन नामक मुनिको देखा। उन्हें प्रणाम कर हम लोगोंने पूछा कि सिद्धत्व (मोक्ष) कब प्राप्त होगा। मुनिने

---

७. AP वउ।

१३. १. A सहसबाहु। २. P °मालिणए। ३. AP दइउ पेल्लियाउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुच्छिउ सिद्धत्तणु कम्मि कालि होसइ रिसि भणइ भवंतरालि।
चोत्थइ णित्थरह भवढिणीरु तं सुणिवि कण्ण विहुणिवि सरीरु।
आउच्छिवि हरि बल बे वि ताय वंदिवि सुव्वयसंजइहि पाय।
णिवकुमरिहिं सहुं सत्तहिं सएहिं पावज्ज लइय भूसियवएहिं।
एयारहमइ दिवि सुहणिहाणि सुरवरु हूई पाणावसाणि।
केसवु महि मुंजिवि कम्मणडिउ रयणप्पहवसुहाविवरि पडिउ।
सुउ रज्जि थवेवि अणंतसेणु जसहरगुरुचरणंबुरुहि लीणु।
तउ चरिवि सीरि विहडियकसाउ सोलहमइ सग्गि सुरिंदु जाउ।
घत्ता—पिउ जायउ जो उरयाहिवइ तासु पासि दंसणरयणु ॥
पावेप्पिणु णरयहु णीसरिउ सो अणंतवीरियउ पुणु ॥१४॥

१५

भरहम्मि एत्थु विजयाचलिंदि उत्तरसेढिहि धवलहरछंदि।
णहवल्लहपुरि घणबाहु राउ घणमालिणिवरकंतासहाउ।
घणवण्णउ जायउ ताहं पुत्तु घणणाहु णाम णवणलिणणेत्तु।
सो सयलखयरखोणीवईसु मंदरणंदणवणि णमियसीसु।
पण्णत्तिविज्ज संसाहमाणु अच्चुयणाहें बोहिउ सणाणु।
सम्मत्तु लएप्पिणु तिमिरणासु णिक्खंतु सुरामरगुरुहि पासु।

बताया कि चौथे जन्मान्तरमें संसाररूपी समुद्रके जलसे तुम लोग तर जाओगी। यह सुनकर कन्या (सुमति) अपना शरीर कँपाती हुई, नारायण और बलभद्र पितासे पूछकर, सुव्रता आर्यिकाके चरणोंको प्रणाम कर व्रतोंसे भूषित सात सौ राजकुमारियोंके साथ प्रव्रजित हो गयी। प्राणोंका अन्त होनेपर वह सुखके निधान ग्यारहवें स्वर्गमें देव हुई। कर्मोंसे प्रतारित केशव, नारायण, रत्नप्रभा नामक नरकमें गया। अपने पुत्र अनन्तसेनको राज्यमें स्थापित कर यशोधर महामुनिके चरणकमलोंमें लीन होकर और तपश्चरण कर विघटित कषाय श्री बलभद्र सोलहवें स्वर्गमें सुरेन्द्र हुए।

घत्ता—उनका पिता स्मितसागर धरणेन्द्र हुआ। उसके पाससे सम्यग्दर्शनरूपी रत्न पाकर अनन्तवीर्य नरकसे पुनः निकला ॥१४॥

१५

इस भरत क्षेत्रमें विजयार्ध पर्वतकी उत्तरश्रेणीमें धवल गृहोंसे विशाल नभवल्लभ नगरमें मेघमालिनी नामक सुन्दर कान्ता जिसकी सहायक है, ऐसा मेघवाहन नामका विद्याधर राजा था। वह (अनन्तवीर्यका जीव) उन दोनोंका मेघके समान वर्णवाला तथा नवनलिनके समान नेत्रवाला मेघनाद नामका पुत्र हुआ। समस्त विद्याधर भूमिका स्वामी मेघनाद मन्दराचलके नन्दनवनमें सिर झुकाये हुए प्रज्ञप्ति विद्या सिद्ध कर रहा था। अज्ञानी उसे अच्युतेन्द्रने सम्बोधित किया। तिमिरके नाशक सम्यक्त्वको लेकर और देव तथा अमरोंके गुरुके पास संन्यास लेकर,

१४. १. A नृवकुमरिहिं; P णिवकुअरिहि। २. AP पाणावसाणि। ३. P जसहरचरणंबुरुहे णिलीणु।
४. AP दंसणु रयणु। ५. P °वीरिउ।

१५. १. A °वण्णिउ। २. A पण्णत्त। ३. P अणाणु; K अणाणु but corrects it to सणाणु।

अण्णहिँ दिणि गउ णंदणगिरिंदु थिउ पडिमाजोएं मुँणिवरिंदु ।
हयकंठभाइ णामें सुकंठु संसौरु भमिवि दुक्खोहिदट्ठु ।
जायउ भीमासुरु सरिवि वेरु आढत्तु तेण मुणि मेरुधीरु ।
उवसग्गहु ण चलइ किं पि जाम सइं लज्जिउ गउ रिउ गयणु ताम ।
रिसि साहिवि आराहण अमंदु अच्चुइ इंदहु हूयउ पडिंदु ।
इह दीवंतरि सुरदिसिविदेहि मंगलवइदेसि विचित्तगेहि ।

घत्ता—पुरि रयणसंचि मणिचेंचइइ थिरु आउंचियारिपसरु ॥
राणउ खेमंकरु दीहकरु धीमहंतु उद्धरियधरु ॥१५॥

१६

तहु कणयचित्त णामेण देवि तहि णंदेंण इंद पडिंद बे वि ।
जाया हियमाणिणिहियसार वज्जाउह सहसाउह कुमार ।
सिरिसेणहि सुउ सहसाउहेण जणियउ णेहु व कुसुमाउहेण ।
णियसंति णामु सुरणाहमहिउ खेमंकरु पुत्तपउत्तसहिउ ।
जांवच्छइ ता दिवि देवसत्थु पभणइ मुँवि को सदंसणत्थु ।
अण्णहिँ वेंण्णिउ कुलिसाउहासु णिम्मलुं सम्मत्तु गुणावयासु ।

दूसरे दिन वह नन्दनपर्वत पर गया और वह मुनिवरेन्द्र प्रतिमायोगमें स्थित हो गया। अश्वग्रीवका भाई सुकण्ठ दुःखसे आहत और संसारका परिभ्रमण कर भीम असुर हुआ। पूर्वभवका स्मरण कर मेरुपर्वतके समान धीर उन मुनिसे उसने शत्रुता शुरू कर दी। परन्तु जब वह मुनि उपसर्गसे जरा भी विचलित नहीं हुए तो वह शत्रु स्वयं लज्जित होकर आकाशमें कहीं भी चला गया। मुनि भी अनन्त आराधनाको साधकर अच्युत स्वर्गमें इन्द्रका प्रतीन्द्र हुआ। इसी द्वीप (जम्बूद्वीप) की पूर्वदिशामें गृहोंसे विचित्र मंगलावती देश है।

घत्ता—मणियोंसे शोभित रत्नसंचय नगरमें शत्रुओंके प्रसारको रोकनेवाला बुद्धिमें महान् धरतीका उद्धार करनेवाला क्षेमंकर नामका राजा था ॥१५॥

१६

उसकी कनकचित्रा नामकी देवी थी। उससे इन्द्र और प्रतीन्द्र दोनों मानिनियोंके हृदयसारका अपहरण करनेवाले वज्रायुध और सहस्रायुध कुमार उत्पन्न हुए। सहस्रायुधको श्रीषेणसे इन्द्रसे पूजित कनकशान्त नामका पुत्र, वैसे ही हुआ जैसे कामदेवसे स्नेह उत्पन्न हुआ हो। इस प्रकार जब पुत्र और पौत्रों सहित क्षेमंकर राजा रह रहा था, तब स्वर्गमें देवसमूह कहता है कि पृथ्वीपर सम्यक्दर्शनमें कौन स्थित है ? दूसरे देवोंने कहा कि गुणोंसे युक्त वज्रायुधको निर्मल सम्यक्त्व प्राप्त है। यह सुनकर चित्रचूल नामका सुरवर जिसके शिखर आकाशको चूम रहे हैं

४. AP जयवरिंदु । ५. AP संसारि । ६. P दुक्खेहि दट्ठु ।

१६. १. A तहि णंदणु अच्चुवइंदु ए वि । २. A reads this line and 3 *a* as: वज्जाउहु णामें तिजयसारु, तें परिणिय सिरिमइ णं कुमारु, तीए जणियउ सहसाउहु कुमारु । ३. AP को भुवि । ४. P भणिणउ । ५. A णिम्मल ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं णिसुणिवि सुरवरु चित्तचूलु आयउ णिवघरु णहलग्गचूलु।
जिणजेट्ठतणुब्भवु भणिउ तेण अण्णण्णु होइ तिहुवणु खणेण।
घत्ता—णउ अत्थि तो वि दीसइ पयडु जिह सिविणउ तेलोक्कु तिह ॥
लइ सुण्णुँ जि णिच्छउ आवडिउं कहिं अच्छइ गय दीवसिह ॥१६॥

१७

तं सुणिवि भणइ पविपहरणक्खु अण्णाणहं दुक्करु णाणचक्खु।
जइ अवरु जि खणि खणि होइ सव्वु तो किं जाणइ जणु णिहिउ दव्वु।
पज्जायारूढी सव्वसिद्धि आउंचिउ हत्थु जि होइ मुट्ठि।
अण्णयविरहिउं जि जगु भणंति खकुसुमुं ते सससिंगें हणंति।
जइ सिविणु व तच्चु परोवहासि तो सिविणयभोयणि किं ण धासि।
जइ सुण्णत्तहु दीवच्चि जाइ तो खप्परि कज्जलु केमँ थाइ
तं सुणिवि पबुद्धउ सुरुँ बउद्ध संसइ तुहुं णरवइ णाणसुद्ध।
को करइ बप्प पइं सहुं विवाउ अरहंतु भडारउ जासु ताउ।
घत्ता—गउ चित्तचूलु सणिहेलणहु इंदचंदफणिपरियरिउ ॥
खेमंकरु पढमहु तणुरुहहु अप्पिवि वसुमइ णीसरिउ ॥१७॥

ऐसे राजभवनमें आया। उसने जिनके बड़े लड़के (वज्रायुध) से कहा कि त्रिभुवन एक पलमें कुछका कुछ हो जाता है।

घत्ता—यद्यपि वह नहीं है, तो भी वह प्रत्यक्ष रूपमें दिखाई देता है, जिस प्रकार स्वप्न (दिखाई देता है) उसी प्रकार त्रिलोक। लो शून्यको शून्य ही निश्चय रूपसे ज्ञात हुआ, गयी दीप शिखा कहाँ रहती है? ॥१६॥

१७

यह सुनकर वज्रायुध कहता है कि अज्ञानियोंके ज्ञानचक्षु कठिन होते हैं। यदि सब कुछ क्षण-क्षणमें कुछका कुछ हो जाता है तो लोग रखे हुए धनको किस प्रकार जान लेते हैं? समस्त सृष्टि पर्यायोंपर आश्रित है। संकुचित हाथ मुट्ठी बन जाता है। जो विश्वको एक दूसरेसे (द्रव्य पर्याय) रहित कहते हैं वे आकाशके फूलको खरगोशके सींगसे मारते हैं। हे परोपहासी (दूसरोंका उपहास करनेवाले), यदि तत्त्व भी स्वप्नकी तरह है, तो तुम स्वप्नमें किये गये भोजनसे तृप्त क्यों नहीं होते? यदि दीपकी शिखा शून्यत्वको जाती है तो खप्परमें काजल कैसे पाड़ा जाता है? यह सुनकर वह क्षणिकवादी बौद्धदेव प्रबुद्ध हो गया और प्रशंसा करने लगा कि हे देव, हे राजन्, तुम ज्ञानसे शुद्ध हो। हे सुभट, तुम्हारे साथ विवाद कौन करे कि जिसके पिता आदरणीय अरहन्त हैं?

घत्ता—चित्रचूल देव अपने घर चला गया और इन्द्र, चन्द्र और नागोंसे घिरा हुआ क्षेमंकर अपने पहले पुत्रको धरती सौंपकर चला गया ॥१७॥

६. A तृवघरु। ७. AP सुण्णउ णिच्छउ।

१७. १. AP जइ खणे खणे अवरु जि होइ। २. P खकुसुम। ३. AP कि ण थाइ। ४. A सुरु पबुद्धु; P सुरु वबुद्ध।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८

घरु मेल्लिवि वणि थिउ मुक्कगत्तु कालें अरहंतावत्थ पत्तु ।
रायाहिराउ णिव्वूढमाणु गोमिणिकामिणि अणुहुंजमाणु ।
वज्जाउहु अवइण्णइ वसंति जलि रमइ सुदंसणसरवरंति ।
तडिदाढें चिरभववइरिएण दुक्कम्मभावसंचारिएण ।
खयरेण णायपासेण बद्धु विउलइ सिलाइ संह[1] संणिरुद्धु ।
सा तेण णिहय दढकरयलेण गय सयदलु[2] णारि व रयमलेण ।
रिउ णासिवि गउ भयभीयजीउ णियघरि[3] पइट्ठु कुलहरपईउ ।
वसिकयसुरणरविज्जाहरासु णवणिहि चउदहरयणाइं तासु ।
घरु आयइं ता परिहरिवि मरगु घरि णहयरु एक्कु पवण्णु सरणु ।
घत्ता—तहु अणु आगय असियरखयरि चवइ हणमि[4] को मइं धरइ ॥
पहरणकरु थविरु अवरु अइउ णिवहु सवइयरु वज्जरइ ॥१८॥

१९

इह वरिसि खगायलि अरिहभत्तु[1] सक्कप्पहपुरि पहु इंदयत्तु ।
तहु देवि जसोहर वाउवेउ हउं पुत्तु पुण्णसंपुण्णतेउ ।
तेत्थु जि पुरु किंणरगीउ अत्थि तहिं चित्तचूलु खगु जसगभत्थि ।
तहु सुय सुकंत महुं तणिय कंत बहुतंतमंतविहिबुद्धिवंत ।

१८

मुक्त शरीर वह घर छोड़कर वनमें स्थित हो गया और समय बीतनेपर वह अरहन्त अवस्थाको प्राप्त हुआ। अपने मानका निर्वाह करनेवाला राजाधिराज धरती और लक्ष्मीको भोगता हुआ वज्रायुध वसन्त ऋतु आनेपर सुदर्शन नामक सरोवरमें जलमें क्रीड़ा कर रहा था। पूर्व-जन्मके शत्रु और दुष्कर्मभावसे संचारित विद्युद्दंष्ट्र विद्याधरने उसे नागपाशसे बाँधा और विशाल चट्टानसे उसे अवरुद्ध कर दिया। उस चट्टानको उसने अपने दृढ़ करतलसे आहत किया, वह उसी प्रकार सौ टुकड़े हो गयी जैसे रजस्वला स्त्री रक्तमलसे लाजके कारण टुकड़े-टुकड़े हो जाती है। भयसे भीत जीव शत्रु नष्ट होकर चला गया। वह कुलगृहका दीपक अपने घर आया। जिसने मनुष्यों और देवोंकी विद्याओंको अपने वशमें कर लिया है, ऐसे उसके घर नौ निधियाँ और चौदह रत्न आये। एक विद्याधर मरणके भयसे उसके घर शरण आया।

घत्ता—उसके पीछे हाथमें तलवार लिये हुए एक विद्याधरी आयी और बोली कि मैं मारूँगी, कौन मुझे पकड़ सकता है? एक और बूढ़ा विद्याधर हाथमें हथियार लेकर आया और राजासे अपना वृत्तान्त कहने लगा ॥१८॥

१९

इस भारतवर्षमें विजयार्ध पर्वतके शुक्रप्रभ नगरमें अर्हद्भक्त राजा इन्द्रदत्त है। उसकी देवी यशोधरा है। उसका मैं पुण्यसे सम्पूर्ण तेजवाला वायुवेग नामका पुत्र हूँ। उसी देशमें किन्नरगीत नगर है। उसमें यशकी किरणोंवाला विद्याधर राजा चित्रचूल है। उसकी कन्या

१८. १. AP सहसा णिरुद्धु। २. A सयदण। ३. AP णियपुरि। ४. AP मइं को।
१९. १. A अरुहं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओहच्छइ तुह पयणय विणीय   संतिमइ णाम महुं तणिय धीय ।
विज्जासाहणि थियवणयरासु   उवगय मुणिसायरगिरिवरासु ।
किर साहइ इच्छियसिद्धि जाव   गुरुविग्घु पउंजिउ एण ताव ।
तं अवगणिवि मृगं[3]लोयणाइ   सिद्धी देवय जाणिवि अणाइ ।
आरूसिवि कड्ढिउ मंडलग्गु   एहु वि लंघिय णह[4]मंडलग्गु ।
आवेप्पिणु तुज्झु पइट्ठ गेहि   हउं पुज्ज लेवि खे भमियमेहि ।
आगच्छमि जा महिहरधरित्ति   ता पेच्छिवि णहि धावंति पुत्ति ।
इह आयउ अक्खिउ तुज्झु राय   पेक्खहिं परिरक्खहि णाय[5]छाय ।
गंभीरघोरवइराउहेण   तं सु[6]णिवि वुत्तु वज्जाउहेण ।

घत्ता—इह दीव[7]इरावयविंझउरि विंझसेणु णामें णिवइ ॥
णामेण सु[8]लक्खण मृग[9]णयण तहु रायाणी हंसगइ ॥१९॥

२०

तहु णंदणु णामें णलिणकेउ   णं थिउ णररूवें मयरकेउ ।
तेत्थु जि वणिवरु णामें सुमित्तु   सिरिदत्त कंत तणुरुहु सुदत्तु ।
पीयं[1]करि णामें तासु भज्ज   सा हित्ती णिव[2]तणएं मणोज्ज ।
महिलाविरहेण मुणिंदवासि   रिसि हुउ सुदत्तु सुव्वयहु पासि ।

सुकान्ता मेरी कान्ता है। बहुतसे तन्त्र-मन्त्रोंकी विधि और बुद्धिसे युक्त शान्तिमती नामकी मेरी कन्या जो आपके चरणोंमें विनीत है, विद्या सिद्ध करनेके लिए जहाँ वनचर स्थित हैं ऐसे मुनिसागर नामक पर्वतपर गयी हुई थी। जबतक यह इच्छित सिद्धिको सिद्ध करती तबतक इसने भारी विघ्न किया। उसकी उपेक्षा करके मृगनयनीने विद्या सिद्ध कर ली। इसने यह जानकर और क्रुद्ध होकर अपनी तलवार निकाल ली। यह भी आकाशमण्डलका अग्रभाग लाँघकर और आकर तुम्हारी शरणमें प्रवेश कर गया। मैं पूजा लेकर, जिसमें बादल घूम रहे हैं, ऐसे आकाशमें जबतक पर्वतकी भूमिपर आता हूँ, तबतक आकाशमें पुत्रीको दौड़ते हुए देखता हूँ। मैं यहाँ आया हूँ और आपसे कहा है। आप इसे देखें और न्यायके प्रभावकी रक्षा करें। गम्भीर घोर शत्रुओंको ललकारनेवाले वज्रायुधने यह सुनकर कहा—

घत्ता—इस जम्बूद्वीपके ऐरावत क्षेत्रमें विन्ध्यनगर है। उसमें विन्ध्यसेन राजा है। उसकी सुलक्षणा नामकी मृगनयनी तथा हंसकी चालवाली रानी है ॥१९॥

२०

उसका नलिनकेतु नामका पुत्र है, जो मानो मनुष्यके रूपमें कामदेव हो। वहींपर सुमित्र नामका बनिया था, उसकी श्रीदत्ता पत्नी थी और सुदत्त पुत्र था। उसकी प्रीतंकरी नामकी भार्या थी। उस सुन्दरीका राजाके पुत्रने अपहरण कर लिया। पत्नीके विरहमें वह जिसमें मुनीन्द्रोंका

२. A सुक्क° । ३. P मिग° । ४. AP णहि मंडलग्गु । ५. P णायणाय । ६. AP णिसुणिवि । ७. P णिवइ । ८. A सलक्खण । ९. P मिग° ।
२०. १. AP पीइंकरि । २. A नृवतणएं ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

भंजिवि दुम्महु कंदप्पदप्पु संणासें गउ ईसाणकप्पु ।
जंबूदीवंतरि कच्छदेसि वेयड्ढइ उत्तरसेढिवासि ।
पुरि कणयतिलइ णं पुण्णयंदु णामें महिंदविक्कमु खगिंदु ।
तहु पणइणि णामें णीलवेय सुरु मेल्लिवि सुरतणु अमियतेय ।
चिरु वणि सुदत्तु जो दुक्खरीणु सो तहि सुउ जायउ अजियसेणु ।
इंदीवरदलसंकासणेत्तु जें हित्तउ वणितणयहु कलत्तु ।
सीमंकरसूरिहि णविवि पाय तउ चरिवि घोरु चूरिवि कसाय ।
णियदुक्किउ णिंदिवि णायणेउ गउ मोक्खहु सो नृवु णलिणकेउ ।
घत्ता—पीइंकरि सुव्वयसंजइहि पासि मुएप्पिणु धरणियलु ॥
चंदायणु चरिवि पसण्णमइ मय पक्खालिवि पावमलु ॥२०॥

२१

ईसाणि देवि तित्थाउ आय संतिमइ तुहारिय धीय जाय ।
इहु अजियसेणु चिरवरु दुलंघु विज्जउ साहंतिहि करइ विग्घु ।
इय णिसुणिवि कण्णइ पुव्वजम्मु खेमंकरणाहहु पासि धम्मु ।
संतिमइ सुगंथवियक्खणाहि हूई सीसिणिय सुलक्खणाहि ।
देवत्तु लहेप्पिणु बीयसग्गि संचरइ जाम गयणयलमग्गि ।
ता पेक्खइ जो णरजम्मि ताउ सो जिणवरु जायउ वाउवेउ ।

वास है, ऐसे सुव्रतके निकट मुनि हो गया। दुर्मद काममदका क्षय कर संन्याससे वह ईशान स्वर्गमें गया। जम्बूद्वीपके अन्तर्गत कच्छ देशमें विजयार्ध पर्वतकी उत्तर श्रेणीमें स्थित कनकतिलक (कांचनतिलक) का विद्याधर राजा महेन्द्रविक्रम था, जो मानो पूर्णचन्द्र था। उसकी प्रणयिनी नीलवेगा थी। अमिततेज देव जो पहले दुखसे क्षीण सुदत्त नामका वणिक् था, वह उसका अजितसेन नामका पुत्र हुआ और जिसने कमलके समान नेत्रोंवाली वणिक्पुत्रकी पत्नीका अपहरण किया था। सीमन्धर स्वामीके चरणोंमें प्रणाम कर तथा घोर तपश्चरण कर, कषायोंको चूर-चूर कर, अपने पापोंकी निन्दा कर तत्त्वोंको जाननेवाला वह राजा नलिनकेतु मोक्ष गया।

घत्ता—प्रसन्नमति और प्रीतंकरी भी सुव्रता आर्यिकाके पास धरिणीतलको छोड़कर चान्द्रायण तपकर तथा पापमलका प्रक्षालन कर मृत्युको प्राप्त हुई ॥२०॥

२१

ईशान स्वर्गकी देवी प्रीतंकरी (प्रीतंकरा) वहाँसे आयी और शान्तिमती नामसे तुम्हारी पुत्री हुई। यह अजितसेन पूर्वजन्मका दुर्लभ वर है जो विद्या सिद्ध करती हुई इसे विघ्न कर रहा है। इस प्रकार अपना पूर्वजन्म सुनकर क्षेमंकरस्वामीके निकट कन्या शान्तिमती सुशास्त्रोंमें पारंगत आर्यिका सुलक्षणा की शिष्य हो गयी। दूसरे स्वर्गमें उत्पन्न होकर जब वह आकाशतलमें विचरण कर रही थी तो वह देखती है कि जो मेरे पूर्वजन्मके पिता वह वायुवेग जिनवर हो

३. AP हुउ। ४. A पुण्णिविंदु; P पुण्णियंदु। ५. A अमियसेणु। ६. A नृउ; P णिउ। ७. A पीइंकर। ८. AP मुय। ९. A पायमलु।

२१. १. AP तुहारी। २. AP इय णिसुणेप्पिणु अप्पणउ जम्मु। ३. AP गयणमग्गमग्गि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिह सो तिह अवरु वि अजियसेणु रयणत्तयजलधुयकम्मरेणु ।
थुइसयहिँ पसंसिवि वरगिरेण बेण्णि[4] वि वंदिय पणमियसिरेण ।
देवि[5] चिंतिउ संसारु चित्तु जिणधम्मि ण किज्जइ केम चित्तु ।
काणीणदीणदिज्जंतदाणि चक्केसररज्जि पवड्ढमाणि ।

घत्ता—खगमहिहरदाहिण[6]पंतियहि सिवमंदिरि घणवाहणहु ॥
विमलादेविहि संभूय सुय कणयमाल स[7]पसाहणहु ॥२१॥

२२

संगरभरमारियखत्तियासु दिण्णी वसुहाहिवणत्तियासु ।[1]
गुणमणिउज्जोइयकुलहरासु सोवण्णसंतिणामहु वरासु ।
वसुसारयणयरि समुद्दसेण रायहु जयसेण वसंतसेण ।
दोहिं मि सहुं गउ गहणंतरालु घोलंतणीलदलवेल्लिजालु ।
विमलप्पहु णामें तेत्थु साहु अवलोइउ णाणजलोहवाहु ।
णिसुणेवि तच्चु पावज्ज लइय सहुं घरणिहिं तेण विमुक्कदइय ।
णारिहि ण[2] चल मइ जणियसंति आसंघिय विमलमइ त्ति खंति ।
सिद्धायलि काओसग्गु देवि तिण्णि वि थियाइं मणि जोउ लेवि ।
अवियाणियसमचित्तें जडेण विज्जाहरेण वइरुब्भडेण ।

गये हैं। जिस प्रकार वह उसी प्रकार दूसरा अजितसेन भी रत्नत्रयरूपी जलसे कर्मरजको धो चुका है। उसने सैकड़ों स्तुतियों और उत्तम वाणी तथा नम्रसिरसे दोनोंकी वन्दना की। उसने विचार किया कि संसार विचित्र है, जिनधर्ममें चित्तको क्यों न किया जाये? जिसमें कन्यापुत्रों और दीनोंको दान दिया जाता है ऐसे चक्रवर्ती राज्यके बढ़नेपर—

घत्ता—विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीके शिवमन्दिर नगरमें सैन्ययुक्त मेघवाहन और विमलादेवीके कनकमाला नामकी पुत्री हुई ॥२१॥

२२

जिसने संग्राम समूहमें क्षत्रियोंको मारा है, जिसने गुणरूपी मणियोंसे कुलगृहोंको आलोकित किया है ऐसे राजाके नाती कनकशान्ति नामक वरको कन्या दी गयी। वसुसार नगर (वस्त्वोकसार) के समुद्र राजाकी जयसेना और वसन्तसेना स्त्रियाँ थीं। वह उन दोनोंके साथ गहन वनके भीतर गया कि जहाँ हरे-हरे पत्तोंवाला लताजाल आन्दोलित हो रहा था। वहाँ उसने ज्ञानरूपी जलसमूहको धारण करनेवाले विमलप्रभ नामक मुनिको देखा। उनसे तत्त्व सुनकर उसने अपनी गृहिणियोंके साथ, जिसमें पत्नीका त्याग किया जाता है ऐसी दीक्षा ग्रहण कर ली। स्त्रियोंने भी अविचल मति एवं शान्ति देनेवाली विमलमति नामकी आर्यिकाकी शरण ग्रहण की। सिद्ध-शिलातलपर कायोत्सर्ग करते हुए वे तीनों मनमें योग धारण कर स्थित हो गये। जो

४. AP बेण्णि वि पणविवि वंदिवि सिरेण। ५. A देवें; P देविए। ६. AP °दाहिणसेढियहि।
७. AP सुपसाहणहु।

२२. १. A adds after this: तह सुय उप्पण्णी वरभुएण, सा पुणु परिणिय पहुसुयसुएण। २. AP णिच्चलमइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लहुपणइणिमेहुणएण ताहं उवसग्गु रइउ तीहिं मि जणाहं ।
तज्जिउ खयरिंदें असिगहेण गउ चित्तचूलु णासिवि णहेण ।
घत्ता—णिवसुयसुउ कणयसंति णिवइ कणयमाल परिसेसिवि ॥
आहिंडइ महियलि सुद्धमणु अप्पउ तविण विहूसिवि ॥२२॥

२३

रयणउरइ राणउ रयणसेणु तें तहु भयवंतहु दिण्णु दाणु ।
अण्णेक्कें वणि अच्छंतु संतु आढत्तु हणहुं कम्मइं खवंतु ।
एयहं दोहं मि मुणिवर[1] समाणु संजायउ केवलि तिजगभाणु ।
देवागमु पेक्खिवि हीणु दीणु पुणु मुणिवरकमकमलयलि लीणु ।
सो खलु वसंतसेणाहि सयणु पणविउ हिरिभो[2]वोणल्लवयणु ।
णियणत्तिउ णिएवि अणंतणाणि णिव्विण्णउ रइसुहि चक्कपाणि ।
खेमंकरतायहु पासि दिक्ख मणि धरिवि असेस वि समयसिक्ख ।
सिद्धइरिहि लेप्पिणु वरिसजोउ थिउ देहविसग्गें मुक्कभोउ ।
घत्ता—संझायइ पंचमहव्वयइं पंचहिं पंचे[3] जि भावणउ ॥
पंचमगइणिच्चलणिहियमइ परिगयपंचेंदियपणउ ॥२३॥

समचित्तको नहीं पहचानता ऐसे जड़ और वैरसे उद्भट छोटी पत्नी वसन्तसेनाके मामाके लड़के चित्रचूलने उन तीनोंपर उपसर्ग किया। विद्याधर राजाके द्वारा तलवारसे धमकाया गया चित्रचूल आकाशमार्गसे भाग गया।

घत्ता—नृपसुतका सुत अर्थात् कनकशान्ति कनकमालाको छोड़कर, शुद्धमन तथा स्वयंको तपसे विभूषित कर धरतीतलपर भ्रमण करते हैं ॥२२॥

२३

रत्नपुरमें राजा रत्नसेन था, उसने ज्ञानवान् उनको आहारदान दिया। एक और दिन जब वह वनमें कर्मोंका क्षय करते हुए विद्यमान थे तो उसने (चित्रचूल देव) उपसर्ग करना शुरू किया। लेकिन वह मुनिवर इन दोनों (अर्थात् आहारदान देनेवाले राजा रत्नसेन और उपसर्ग करनेवाले चित्रचूल) में एक समान थे। वह त्रिजगसूर्य केवलज्ञानी हो गये। देवागम देखकर वह देव दीन-हीन हो गया और मुनिवरके चरणकमलोंमें लीन हो गया। वसन्तसेनाके मातुलपुत्र दुष्ट उस चन्द्रचूलने लज्जाभावसे विनत होकर उन्हें प्रणाम किया। वज्रायुध भी अपने नातीको केवलज्ञानी देखकर रतिसुखसे विरक्त हो गया। पिता क्षेमंकरके पास दीक्षा लेकर और मनमें समस्त शास्त्र शिक्षा धारण कर सिद्ध पर्वतपर एक वर्षका योग लेकर मुक्तभोग वह कायोत्सर्गमें स्थित हो गया।

घत्ता—वह पांच महाव्रतों और उनकी भावनाओंकी भावना करता। उसकी मति मोक्षमें अचल थी और पांचों इन्द्रियोंके प्रेमसे वह उन्मुक्त था ॥२३॥

---

२३. १. AP मुणिवरु। २. A हरिवाहोणवल्लवयणु। ३. AP पंच वि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४

चिरु हरिगीवहु सुय धम्मभट्ट णामें रयणाउह रयणकंठ।
संसारु[1] भमेप्पिणु जाय देव पहरंति पाव तं सावलेव।
आयइ रंभाइ तिलोत्तिमाइ णिब्भच्छिय वंदियजइकमाइ।
अइबलु समहाबलु खणि पलाणु पाविट्ठहु कासु ण भग्गु माणु।
सहसाउहेण सयबलिहि रज्जु ढोइवि ववसिउ परलोयकज्जु।
वउ[2] लइयउं पिहियासवहु पासि मइ रमइ ण संतहु गेहवासि।
वइभारमहीहरि[3] रिद्धिठाणि दिट्ठउ णियसुहि जोयावसाणि।
तउ चरिवि तहिं जि रिसिजुवलु मुयउं[4] उवरिमगेवज्जहि णवरि[5] गयउं।
घत्ता—एक्कूणतीससायरसमइं बेण्णि वि सुहुं भुंजंत थिय॥
भरहुवरिगामि हिमअहिमयर[6] पुप्फयंत[7]सुरणियर पिय॥२४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे वज्जाउहचक्कवट्टिवण्णणं णाम
एक्कसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥६१॥

२४

पुराने अश्वग्रीवका धर्मभ्रष्ट पुत्र रत्नायुध और रत्नकण्ठ पुत्र संसारमें परिभ्रमण कर देव उत्पन्न हुए। पाप सहित वे दोनों उसपर प्रहार करते हैं। वहाँ रम्भा और तिलोत्तमा आदि देवियाँ आयीं और यतिवरके चरणोंकी वन्दना करनेवाली उन्होंने उसकी भर्त्सना की। वह अतिबल महाबलके साथ एक क्षणमें भाग गया। किस पापीका मान भंग नहीं हुआ। सहस्रायुधमें शतबलीको राज्य देकर वह परलोककाजमें लग गया। उसने पिहितास्रवके पास व्रत ग्रहण कर लिया। सन्तकी मति गृहवासमें नहीं रमती थी। ऋद्धियोंके स्थान वैभार पर्वतपर योगका अन्त होनेपर उसने अपने सुधी पिता सहस्रायुधको देखा। वहाँ तपका आचरण कर वे दोनों ऋषि-युगल मृत्युको प्राप्त हुए और सिर्फ उपरिमग्रैवेयक विमानमें उत्पन्न हुए।

घत्ता—वे दोनों उनतीस सागर प्रमाण समय तक सुखका भोग करते हुए स्थित रहे। वे भरतक्षेत्रके ऊपर चलनेवाले सूर्य-चन्द्र-नक्षत्र और सुरसमूहके लिए प्रिय थे ॥२४॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त, महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यमें वज्रायुध चक्रवर्ती-वर्णन
नामका इकसठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६१॥

२४. १. AP संसारि। २. AP वउ। ३. AP वइभारि महीहरि सिद्धिठाणि। ४. P मुयउं। ५. AP णवर। ६. A अहिमरय। ७. AP पुप्फदंत°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६२

पढमदीवि थिय[1]मेहइ सुरगिरिपुव्वविदेहइ ॥
पुक्खलवइदेसंतरि पवरपुंडरिंगिणिपुरि ॥ ध्रुवकं ॥

१

तहिं घणरहु पहु सयमहणमिउ तिहुयणसिरिरमणीप्राण[2]पिउ ।
तहु देवि मणोहर तुंगथणि गलकंदललंबियहारमणि ।
वज्जाउहु जो अहमिंदु हुउ संभूउ गब्भि सो ताहि सुउ ।
तणुतेओहामियभाणुरहु हक्कारिउ ताएं मेहरहु ।
सहसाउहु अमरु मणोरमइ गेवज्जहि आयउ सुहसमइ ।
णिवकंत[3]इ णंदणु संजणिउ सो सज्जणेहिं दढरहु भणिउ ।
भायरहं बिहिं मि कमभाणियउ पियमित्त सुमइ वरराणियउ ।
हुउ एक्कहिं णंदिवुड्ढु तणउ अण्णहि वरसेणु वराणणउ ।
अवरेक्कहिं दिणि सुसेण गणिय पियमित्तहि घरु कोड्डावणिय ।
सा घणमुहु कुक्कुडु लेवि गय भासइ देविहि पणमंति पय ।
पडिपक्खि पक्खणक्खहिं हणइ कियवाउ एहु जो रणि जिणइ ।

सन्धि ६२

१

जम्बूद्वीपमें जहाँ मेघ स्थिर हैं ऐसे सुमेरुपर्वतके पूर्वविदेहमें पुष्कलवती देशके पुण्डरीकिणी नगरवरमें घनरथ राजा था जो इन्द्रके द्वारा प्रणम्य और त्रिभुवनकी लक्ष्मीरूपी रमणीका प्राण-प्रिय था। उसकी उन्नत स्तनोंवाली तथा जिसके गलेमें मणियोंका हार लटकता है ऐसी मनोहरा नामकी देवी थी। जो वज्रायुध अहमेन्द्र हुआ था, वह उसके गर्भसे पुत्र उत्पन्न हुआ। अपने शरीरके तेजसे सूर्यरथको तिरस्कृत करनेवाले उसे पिताने मेघरथके नामसे पुकारा। ग्रैवेयक विमानसे शुभ समयमें मनोरमाके गर्भमें आया। उस नृपकान्ताने पुत्रको जन्म दिया। सज्जनोंके द्वारा उसे दृढ़रथ कहा गया। उन दोनों भाइयोंकी क्रमसे कही गयीं प्रियमित्रा और सुमति रानियाँ थीं। एकसे नन्दिवर्धन पुत्र हुआ। दूसरीसे सुन्दर मुखवाला वरषेण। एक और दिन प्रियमित्राकी दासी सुषेणा कुतूहलसे भरी हुई घनतुण्ड मुर्गा लेकर देवीके घर गयी और पैरोंमें प्रणाम कर बोली, "जो प्रतिपक्षी अपने पंखों और नखोंसे इसे आहत करता है और युद्धमें इस मुर्गेको जीतता है—

---

१. १. AP थिए मेहए। २. AP पाणपिउ। ३. AP णिवकंताणंदणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—दिज्जइ सालंकारहं ताहं सहँस्सु दीणारहं ॥
एह वत्त णिसुणेप्पिणु अवँर वि पक्खि लएप्पिणु ॥ १ ॥

२

कुलिसाणणु कुक्कुडु कंचणिय अक्खइ सुमइहि घरँकामिणिय ।
गरुडेण वि जिप्पइ एहु ण वि उड्डंतहु संकइ गयणि रवि ।
ता हरिसें वाइय जयवडह खुँज्जुय णच्चंति लडहमडह ।
तहिं आया घणरह मेहरह दढरह वरसेण णंदि सुमँह ।
पियमित्तसुमइकरयलपुसिय चिरजम्मणिबद्धवँइरिवसिय ।
जुज्झंति पक्खि ते पबलबल चंचेलचंचुचरणारँचल ।
उल्ललणवलणपरियत्तणहिं पेहुणसिरसिहरवियत्तणहिं ।
रोसुद्धयकंधरकेसरय जं केवँ वि ण ओसरंति सरय ।
तं ताएं पुच्छिउ मेहरहु संबोहहुं भव्वजीवणिवहु ।
किं तंबचूल जुज्झंति सुय भणु अवहिवंत सग्गग्गचुय ।
घत्ता—कहइ कुमारु सुहावइ एत्थु दीवि अइरावइ ॥
सयडजीवि तिट्ठावर रयणउरइ णर भायर ॥२॥

घत्ता—उसे अलंकारों सहित एक हजार दीनारें दी जायेंगी।" यह बात सुनकर दूसरी भी (सुमतिकी दासी कांचना) अपना पक्षी (मुर्गा) ॥१॥

२

वज्रतुण्ड लेकर सुमति की गृहदासी बोली कि यह गरुड़के द्वारा भी नहीं जीता जा सकता। उड़ते हुए इससे आकाशमें सूर्य शंकित हो उठता है। तब हर्षसे विजयके नगाड़े बजा दिये गये, सुन्दर वामन कुब्जक नाचने लगे। वहाँपर घनरथ, मेघरथ, दृढ़रथ, वरसेन और तेजस्वी नन्दिवर्धन आये। प्रियमित्रा और सुमतिके हाथोंसे पोसे गये तथा पूर्वजन्ममें बाँधे गये वैरके वशीभूत होकर प्रबल बलवाले तथा अपनी वक्र चोंचों और पैरोंसे चंचल वे दोनों मुर्गे उछलना, मुड़ना, घूमना तथा पूँछसे सिरके शेखरको घुमाना आदिसे युद्ध करने लगे। क्रोधसे काँपते हुए कन्धों और केशरक (सिरके बाल) वाले और चिल्लाते हुए जब वे मुर्गे नहीं हटे तो पिताने मेघरथसे भव्यजीवोंके सम्बोधनके लिए पूछा, "हे पुत्र, ये मुर्गे क्यों लड़ते हैं। हे स्वर्गसे च्युत अवधिज्ञानवाले तुम बताओ।"

घत्ता—कुमार बताता है—यहाँ इस जम्बूद्वीपमें सुखास्पद ऐरावत क्षेत्र है। उसके रत्नपुर नगरमें गाड़ीसे अपनी आजीविका चलानेवाले दो लालची भाई रहते थे ॥२॥

४. A सहासु । ५. AP अवरु ।
२. १. P घरि कामिणिय । २. AP कुज्जय । ३. A णंदिपमुह । ४. AP वइररसिय । ५. A चरणा चवल । ६. AP केम वि णोसरंति ।

३

पहरेवि परुप्परु कढिणभुय बलिवद्दहु कारणि कोवजुय।
णामेण पसिद्धा भद्द धणि ते बे वि मरेप्पिणु तेत्थु धणि।
बहुपुंडरीयपंचाणणइ कंचणसरितीरइ काणणइ।
सियकण्ण तंबकण्ण त्ति गय संजाया पुणु जुज्झेवि मुय।
कोसलणयरिहि गोउलियघरि जाया सेरिह णववयहु भरि।
एप्पिणु जुज्झेप्पिणु खयहु गय तेत्थु जि पुरि कुर्रर पलद्धजय।
वरसेणसत्तिसेणहं णिवहं अग्गइ जुज्झिवि उज्झियकिवहं।
ए चूलि पहूया संभरमि भउ पेक्खालुअहं मि वज्जरमि।
दीवाइदीवि खगसिहरि वरि उत्तरसेढिहि कणयाइपुरि।
खगु गरुलवेउ दिहिसेण प्रिय सुय चंदविचंदतिलय सुहिय।

घत्ता—कुसुमालुद्धइंदिंदिरि सिद्धकूडजिणमंदिरि॥
जइवरु तेहिं णियच्छिउ णियजम्मंतरु पुच्छिउ॥३॥

४

थिउ लंछणु धादइविडवि जहिं रिसि अक्खइ धादइसंडि तहिं।
सुरदिसि अइरावइ तिलयपुरि पइ अभयघोसु सिरि तासु उरि।
जिह तिह गेहिणि कंचणतिलय णावइ रइणाहहु रइविलय।

३

बैलके कारण क्रोधयुक्त होकर कठोर बाहुवाले भद्र और धन्य नामसे प्रसिद्ध वे दोनों मरकर वहीं जिसमें बहुत-से व्याघ्र और सिंह हैं, ऐसे कांचननदीके तटपर वनमें श्वेतकर्ण और ताम्रकर्ण नामक गज हुए और पुनः युद्ध करके मर गये। अयोध्या नगरमें एक ग्वालाके घर नववयसे युक्त भैंसे हुए। आकर और युद्ध कर विनाशको प्राप्त हुए, फिर उसी नगरमें आधे पलमें जीतनेवाले मेढ़े हुए। दया रहित वरषेण राजाके सम्मुख वे दोनों लड़कर ये मुर्गे हुए हैं। मैं याद करता हूँ और देखनेवालोंके पूर्वभव कहता हूँ। जम्बूद्वीपके विजयार्ध पर्वतपर कनकपुर नामका नगर है। उसमें विद्याधर गरुड़वेग और उसकी पत्नी धृतिषेणा थी। उसके दिवितिलक और चन्द्रतिलक नामके अच्छे हृदयके मित्र थे।

घत्ता—जहाँ भ्रमर फूलोंपर लुब्ध हो रहे हैं ऐसे सिद्धकूट जिनवर मन्दिरमें उन्होंने एक मुनिको देखा और उनसे अपने जन्मान्तर पूछे॥३॥

४

ऋषि कहते हैं—जिसमें धातकी वृक्षका चिह्न है, ऐसे धातकीखण्ड द्वीपकी पूर्वदिशामें ऐरावत क्षेत्र है। उसमें राजा अभयघोष था। जैसे उसके हृदयमें लक्ष्मी थी, वैसे ही उसकी

३. १. AP वणि। २. A °तंबकण्णंत गय। ३. A मय। ४. A उररय लद्धजय; P उरर पलद्धजय; T कुररय मेषौ, K कुरर मेषो. पलद्धजय प्रलब्धजयौ। ५. AP चूलिय हूया। ६. AP °सिहरिसिरि। ७. AP पिय। ८. A कुसुमलुद्ध°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मयरद्धयबाण[1]वरोल्लियहि　　जाया सुय बेण्णि पियल्लियहि ।
णामें जगि जाणिय जय विजय　　णं कामदेव णिम्म[2]यरधय ।
विज्जाहरगिरिदाहिणइ तडि　　मंदर[3]पुरि सरसु ण[4]डंतणडि ।
तहिं संखु खयरु तहु जय घरिणि　　सुय पुहइतिलय ससिमुहि तरुणि ।
दिण्णी जयविजयजणेरयहु　　तहु अवरु ण रुच्चइ तहि रयहु ।
संवच्छरंति कइय[5]वणिलय　　णामेण विसारि चंदतिलय ।
पभणइ सुवण्णतिलयहि तणउं　　वणु फुल्लिउं फ[6]लियउं घणघणउं ।
आवेहि जाहुं जोयहि णिवइँ[7]　　ता चवइ सवत्ति विरुद्धमइ ।
मेरउं वणु जोव्वणु किं ण सुहुं　　जें जो[8]यहि दूयहि तणउं मुहुं ।
घत्ता—ताहि वयणु अवगण्णिवि　　पडिवक्खु जि बहु मण्णिवि ।
गउ महिवइ वणजत्तहि　　मलिवि माणु मृग[9]णेत्तहि ॥४॥

५

साहीण काहि भत्तारदय　　सुमईगणिणिहि सा सरणु गय ।
करपंकयलुहियभालतिलय　　तवचरणि लग्ग पुहईतिलय ।
रिसिणाहहु संजमवयधरहु　　पहुणा किउ भोयणु दमवरहु ।
अवलोइवि पंचमहब्भुयइं　　सुरकिंणरणायरायथुयइं ।

स्वर्णतिलका नामकी गृहिणी थी जो मानो कामदेवकी रतिकामिनी थी। कामदेवके बाणोंकी पंक्ति उस प्रियासे दो पुत्र उत्पन्न हुए जो जगमें जय-विजयके नामसे जाने जाते थे, जो मानो मकरध्वजसे रहित कामदेव थे। विजयार्ध पर्वतके दक्षिण तटपर जिसमें नट मधुर नृत्य करते हैं ऐसे मन्दरपुरमें शंख नामका विद्याधर राजा था। उसकी जया नामकी पत्नी थी और पुत्री पृथ्वीतिलका जो तरुण और चन्द्रमुखी थी। वह जय-विजयके पिता (अभयघोष) को दी गयी। उसमें अनुरक्त उसे कुछ और अच्छा नहीं लगता था। एक वर्ष तक वे कपटगृहमें रहे। तब चन्द्रतिलका नामकी दूती उससे कहती है कि स्वर्णतिलकाके उपवनमें खूब फूल और फल लग गये हैं। आइए और उसे देखने चलिए। तब विरुद्धमति सौत (पृथ्वीतिलका) कहती है, "क्या मेरा यौवनरूपी वन शुभ नहीं है ? जिससे दूती (चन्द्रतिलका) का मुख देखना चाहते हो।"

घत्ता—उसके वचनोंकी उपेक्षा कर प्रतिपक्षको ही मानकर तथा उस मृगनेत्रीके मानको मलिन कर राजा वनयात्राके लिए चला गया ॥४॥

५

प्रिय की दया किसीके लिए भी स्वतन्त्र नहीं होती (अर्थात् पतिकी दयापर किसीका एकाधिकार नहीं होता)। वह (पृथ्वीतिलका) सुमति नामकी आर्यिकाकी शरणमें चली गयी। अपने हाथसे उसने मस्तकका तिलक पोंछ डाला और तपश्चरणमें लग गयी। राजा अभयघोषने संयमवरके धारी मुनिनाथ दमवरको आहारदान दिया। सुरों, किन्नरों और नागराजोंसे संस्तुत

४. १. AP °बाणविरोल्लियहि। २. AP णं मयरधय। ३. AP मंदिरपुरि। ४. A णडंति णडि। ५. AP कइवयणिलय। ६. A फलियउं घणउं वणउं; P फलिउं घणघणउं। ७. A नृवइ। ८. A जं जोयहिं; P जें जायहि। ९. P मिगणेत्तहि।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

अप्पउं मोहें ण विडंबियउं   ससुएण वउ जि अवलंबियउं।
इंदियपडिबलु रणि णिज्जियउं   अरहंतणामु[1] तेणज्जियउं।
मुउ सब्भावें सम्मयणिरउ   हुउ अंतिमकप्पि पुरंदरउ।
सिसु तासु[2] बे वि तेत्थु जि अमर   जाया अच्छरकरधुयचमर।
दिवि मरिवि बे वि ते भाइवर   तिलयंतिम चंद विचंद णर।
भुवि जाया गरुलवेयधणहि   जाउंडय[3]जडिलमंडियथणहि।
तं सुणिवि कुमारहिं बोल्लियउं   मुणि जम्मंतरु उब्वेल्लियउं।
भणु अभयघोसु उप्पण्णु कहिं   पिउ वसइ जहिं जि गच्छामि[4] तहिं।
जइ चवइ पुंडरिंकिणिपुरिहि   णंदणु घणमालिणिसुंदरिहि।
घत्ता—तणु मेल्लिवि तियसाहिउ   जायउ तेलुक्काहिउ[5]॥
जो सक्कें पणविज्जइ   सो जिणु किं वण्णिज्जइ ॥५॥

६

तहिं अच्छइ देउ सबंधुयणु   जोयंतु कूडकुक्कुडयरणु[1]।
परिभमणणमणउड्डाणणिहि   चिंतंतु घोरसंसारविहि।
दिव्वासें एहउ वज्जरिउं   तं सुणिवि खयरभायर तुरिउं।
गय बेण्णि वि चिरजणणासयहु   पयडेप्पिणु अग्गइ जणसयहु।
तायत्तणु तहु ससुयत्तणउं   कम्माणुबंधविणियत्तणउं।

पाँच आश्चर्योंको देखकर उसने अपनेको मोहसे विखण्डित नहीं होने दिया। अपने पुत्रोंके साथ व्रत ग्रहण कर लिये। इन्द्रियरूपी शत्रुओंको उन्होंने जीत लिया। उसने अर्हत् प्रकृतिका बन्ध किया। सम्यग्दर्शनमें निरत वह सद्भावसे मर गया और अन्तिम स्वर्गमें इन्द्र हुआ। उसके वे दोनों पुत्र भी जिनके ऊपर अप्सराओं द्वारा चमर ढोले जाते हैं, ऐसे देव हुए। वे दोनों भाई स्वर्गमें मरकर चन्द्रतिलक और विचन्द्रतिलक नामसे, जिसके स्तन केशरकी जटिलतासे मण्डित हैं, ऐसी गरुड़वेगा धन्यासे उत्पन्न हुए। मुनि द्वारा प्रकट किये गये जन्मान्तरको सुनकर कुमारोंने पूछा—मुनिवर बताइए अभयघोष कहाँ उत्पन्न हुए? जहाँ पिता हैं, हम वहीं जायेंगे? मुनिवर कहते हैं—पुण्डरीकिणी नगरीकी रानी मेघमालिनीका पुत्र—

घत्ता—देवराज शरीर छोड़कर त्रिलोकराज हो गया है। जो इन्द्रके द्वारा प्रणम्य है, उन जिनका वर्णन किस प्रकार किया जाये? ॥५॥

६

वह देव इस समय बन्धुजनोंके साथ कूट कुक्कुटोंका युद्ध देखते हुए, जिसमें परिभ्रमण नमन और उड़ान की विधि है, ऐसी घोर संसार विधिका विचार करते हुए वहीं पुण्डरीकिणी नगरमें स्थित हैं। दिगम्बर मुनिने यह कहा कि वे दोनों विद्याधर भाई यह सुनकर अपने पुराने पिताके घर गये। सैकड़ों लोगोंके सामने उनका पुत्रत्व सहित पिताका कर्मानुबन्धका

५. १. AP अरहंतु। २. AP बे वि तासु। ३. P जाउडुय°। ४. A गच्छामु; P गच्छमि। ५. AP तइलोक्का°।

६. १. A °रयणु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गुणवंतहु गुत्तिगुत्तमणहु व्रउ[2] लइउ णविवि गोवद्धणहु ।
गय णिव्वाणहु खरतवतवण ते चंदविचंदतिलय सवण ।
भउ णिसुणिवि पक्खिहिं कंदियउं अप्पाणउं गरहिउं णिंदियउं ।
किमिपिंडु ण भक्खिउ मरिवि गय जिणवयणें दुक्किय[3]वेल्लिहय ।
वेंतरसुर जाया भूयकुलि तहिं एक्कु देववणि गिरिगुहिलि ।
अण्णेक्कु भूयरमणंतवणि भूयाहिव बेण्णि वि पत्त खणि ।
तहिं जहिं अच्छेंइ[4] सुउ घणरहहु संदरिसियविमलणाणपहहु ।

घत्ता—भणिउं तेहिं जडपक्खिहिं अम्हेंहिं[5] किमिउलभक्खिहिं ।।
तुज्झु पसाएं आयउं दिव्वें[6] भवंतरु जायउं ।।६।।

७

मेहरहदेव पइं दिण्णु सुहुं आवहि विमोणि[1] आरुहहि तुहुं ।
मणु[2]उत्तरमहिहरपरियँ[3]रिउं सँ[4]रसरिकुलसिहरिअलंकरिउं ।
पणयालक्खजोयणविउलु अवलोयहि मणुयखेत्तु सयलु ।
उवयारहु पडिउवयारु किह तुह किज्जइ जसु जगि रिद्धिसिह ।
दुल्लंघु सदेवहं दाणवहं अहिवंदणिज्जु वरमाणवहं ।
ता[5] इच्छिवि कीलाभवणु मणि आरूढउ सुंदरु सुरभवणि ।

निवर्तन प्रकट कर गुणवान् गुप्तियोंसे गुप्त मन गोवर्धन मुनिको प्रणाम कर उन्होंने व्रत ग्रहण कर लिये। प्रखर तप करनेवाले वे दोनों चन्द्रतिलक और विचन्द्रतिलक श्रमण निर्वाणको प्राप्त हुए। अपने जन्मान्तरोंको सुनकर पक्षियोंने आक्रन्दन किया और स्वयं की गर्हा एवं निन्दा की। उन्होंने कृमियोंके समूहको नहीं खाया। वे मर गये। पापरूपी लतासे आहत वे दोनों जिनवरके शब्दोंसे भूतकुलमें व्यन्तरदेव हुए। उनमेंसे एक देववनकी गिरिगुहामें और दूसरा भूतरमणवनके भीतर। वे दोनों भूत राजा एक क्षणमें वहाँ पहुँचे जहाँ विमल केवलज्ञानकी प्रभाको प्रगट करनेवाले घनरथका पुत्र था।

घत्ता—कृमिकुलका भक्षण करनेवाले उन जड़ पक्षियोंने कहा कि आपके प्रसादसे हम-लोगोंका दिव्य जन्मान्तर हुआ है और हम यहाँ आये हैं ।।६।।

७

हे मेघरथ देव, तुमने सुख दिया है। आओ, तुम विमानपर चढ़ो, मानुषोत्तर पर्वतसे घिरा हुआ सर सरित् कुल पर्वतोंसे अलंकृत पैंतालीस लाख योजन विशाल इस समस्त मनुष्य लोकको देख लो। तुम्हारे द्वारा जगमें जिसकी ऋद्धिका प्रकर्ष किया जाता है उस उपकारका प्रतिकार क्या हो सकता है? देवताओं सहित दानवोंको जो दुर्लंघ्य है और जो उत्तम मनुष्योंके द्वारा वन्दनीय है। ऐसे वह अपने मनमें क्रीड़ा भ्रमणकी इच्छा कर देवविमानमें बैठ गया। अपने मित्रों,

२. AP वउ । ३. A दुक्खिय बेण्णि हय; P दुक्खियवेल्लिहय । ४. AP सुउ अच्छइ । ५. A अम्हहं ।
६. AP दिव्वु ।

७. १. AP विवाणि । २. P मणुसुत्तर° । ३. P °परियरउं । ४. AP सरिसर° । ५. P तो ।

णिय[६]सहयरकिंकरगुरुसहिउ कुक्कुडदेविहिं भत्तिइ महिउ।
णहि सुरहरि जंति विविहँ[७]पुरइं दावंति देव देसं[८]तरइं।

घत्ता—एहु भरहु अवलोयहि इहु हिमवंतु विवेयहि ॥
एह दिव्व गंगाणइ एह सिंधु मंथरगइ ॥७॥

८

इ[१]हु दीसइ णिम्मलु पोमसरु सिरिदेविसहिउ रुंजिय[२]भमरु।
हइमवँ[३]उ एहु पूरियदरिउ वररोहिय[४]रोहियाससरिउ।
तुहिण[५]ईरि एहु गरुयउ अवरु अण्णेक्कु महासयवत्तसरु।
हिरिदेवि एत्थु णिच्चु जि वसइ हरिवरिसु एउ सग्गु वि हसइ।
इहु एत्थु वहइ णामेण हरि अण्णेक्कु पेक्खु हरिकंतसरि।
इहुं[६] मंदरु ए गयदंतगिरि इहु सुर[७]कुरु उत्तरकुरु स[८]सरि।
इहु णिसहु णाम महिहरु पवरु इहु जोवहि णिव तिगिंछिसरु।
दिहिदेवि एत्थु विरइयभवणं[९] अच्छइ सुर[१०]रायणिहत्त[११]मेण।
एयाइं विदेहइं दोण्णि पिय सरि सीया सीओया वि थिय।
इहु णीलिहि [१२]केसरि णाम दहु ई[१३]हुँ दीसइ कित्तीदेविसे[१४]हुँ।

अनुचर और गुरुजनों सहित उसकी कुक्कुट देवोंने भक्तिपूर्वक पूजा की। आकाशमें देवविमानमें जाते हुए, देव विविध नगर और देशान्तर दिखाते हैं।

घत्ता—इस भरतक्षेत्रको देखो। इसे हिमवन्त (हैमवत क्षेत्र) जानो। यह दिव्य गंगा नदी है, और यह मन्दगामिनी सिन्धु नदी है ॥७॥

८

यह निर्मल पद्म सरोवर है, जो श्रीदेवीसे सहित और भ्रमरोंसे गुंजित है। घाटियोंसे भरा हुआ यह हैमवत पर्वत है, ये श्रेष्ठ रोहित और रोहितास्या नदियां हैं। यह दूसरा महान् हिमगिरि है, और दूसरा महापद्मसरोवर है, इसमें ह्री देवी नित्य रूपसे निवास करती है। यह हरिवर्ष है, जो स्वर्गका उपहास करता है? यहाँ हरि नामकी नदी बहती है और दूसरी हरिकान्ता नदी देखो। यह मन्दराचल है। यह गजदन्त गिरि है। यह नदियों सहित उत्तरकुरु और दक्षिणकुरु हैं। यह निषध नामका विशाल पर्वत है। हे राजन्! यह तिगिंच्छ सरोवर है। यहाँ धृतिने अपना भवन बना रखा है। सौधर्म स्वर्गके इन्द्रमें अपना मन करनेवाली वह स्थित है। हे प्रिय, ये दोनों विदेह हैं और ये सीता और सीतोदा नदियां स्थित हैं। ये नील और केशर नामके सरोवर हैं,

६. AP णिउ सहयर° । ७. A विविप्फुरइं । ८. K देसंतइं ।

८. १. Mss. reads एहु and इहु promiscuously here । २. A रंजिय° । ३. A हइमवइ । ४. P रोहिणि रोहियासउ सरिउ । ५. A तुहिणयरि । ६. P reads this line after 8 *b*. ७. A सुरु कुरु । ८. A ससिरि । ९. AP °भवणु । १०. A सुयराय° । ११. AP णिहित्तमणु । १२. A केसरु । १३. A ओ दीसइ; P पहु दीसइ । १४. A सुहु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ईहु[15] रम्मु[16] एउ णइणारिवर णरकंत एह[17] पवहइ अवर।
इहु रुम्मिधराहरु पुंडरिउ सरु एत्थु देव पाणियभरिउं।
घत्ता—बुद्धिदेवि ईहं अच्छइ जगि माणउ जो पेच्छइ॥
जिणवरसेवासिद्धउं तेण णयणफलु लद्धउं॥८॥

९

णिव खेत्तु हिरण्णवंतु णियहि सोवण्णकूलसरिजलु पियहि।
रुप्पयकूल वि इह एम गय जहिं कुद्धहिं सीहहिं हत्थि हय।
सो एहु सिहरिगिरि सिहरपिउ सरु एत्थु महापुंडरिउ हिउ।
लच्छीदेविहि रुच्चइ रमइ ओहच्छइ इह वासरु गमइ।
रत्तारत्तोयसरिहिं सहिउं अइरावउ एउं खेत्तु कहिउं।
फुल्लियतरुमालापरिमलइं वरिसंति[1] मेह धाराजलइं[2]।
पिच्चंति कलमकयलीहलइं[3] णच्चंतमोरपिच्छुज्जलइं[4][5]।
कच्छाइयाइं विसयंतरइं खेमाइयाइं णयरइं वरइं।
दरिसंति[6] अमर जोयंति णर विम्हइयहियय[7] कंपवियकर।
घत्ता—कंदरदरिकीलियसुर[8] जोइवि णाणागिरिवर॥
अकयइं मणियरतंबइं वंदिवि जिणपडिबिंबइं॥९॥

यह कीर्तिदेवीके साथ दिखाई देते है, यह रम्यक पर्वत है। यह श्रेष्ठ नारी नदी है और यह दूसरी नरकान्ता नदी बहती है। यह रुक्मी महीधर है, यह पुण्डरीक नामका हे देव, जलसे भरा हुआ सरोवर है।

घत्ता—यहाँ बुद्धिदेवी है, जो विश्वके मानको देख लेती है। उसने जिनवरकी सेवासे सिद्ध नेत्रोंके फलको प्राप्त कर लिया है॥८॥

९

हे नृप, यह हैरण्यवत क्षेत्र देखो। और स्वर्णकूला नदीका जल पियो। यह रूप्यकूला नदी इस प्रकार बहती है, जहाँ क्रुद्ध सिंहोंके द्वारा हाथी मारे जाते हैं? यह वह, शिखर प्रिय शिखरी पर्वत है। यह महापुण्डरीक सरोवर है, जो लक्ष्मीदेवीके द्वारा चाहा जाता और रमण किया जाता है। यहाँ रहकर वह अपने दिन व्यतीत करती है? रक्ता रक्तोदा नदियोंके साथ यह ऐरावत क्षेत्र कहा जाता है। जहाँ मेघ खिली हुई वृक्षमालासे सुगन्धित धाराजलोंकी वर्षा करते हैं। जहाँ धान्य और कदली फल पकते हैं। अपने पक्षोंसे सुन्दर मयूर नाचते रहते हैं। जिसमें कच्छादि देशान्तर और क्षेमादि नगर हैं। देवता लोग दिखाते हैं और मनुष्य विस्मित हृदय तथा अपना हाथ हिलाते हुए देखते हैं।

घत्ता—जिसके पहाड़ोंकी घाटियोंमें देव क्रीड़ा करते हैं ऐसे नाना गिरिवरोंको देखकर तथा अकृत्रिम मणिकिरणोंसे लालजिन प्रतिमाओंकी वन्दना कर॥९॥

---

१५. AP पहु, probably प is confounded with ए। १६. A रम्मि। १७. AP एह।
९. १. A वरिसंत। २. A जलधाराइं। ३. A °केली°। ४. AP णच्चंति। ५. P °पिछुज्जलइं। ६. P दरिसंति य अमर°। ७. P विभइय°। ८. A दरकेलिय°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०

णरखेत्तु गिरीसरिमालियउं मणुसुत्तरु[1] जाम णिहालियउं ।
तहु उप्परि मणुयहं णत्थि गइ पल्लट्टु सविम्हय[2]भिण्णमइ ।
पडिआया घणरहणंदणयरु[3] जयजयसद्दें पइसेरिवि[4] घरु ।
पुज्जिवि कुमारु गय तियस तहिं[6] णंदणवणि[5] णियणयराइं जहिं ।
संसारु असारु विवेइयउ इंदियकंखइ पडिचोइयउ ।
घणरहिण पुत्तु हक्कारियउ मेहरहु रज्जि वइसारियउ ।
लोयंतिएहिं उद्दीवियउं वेरग्गु तेण णिरु भावियउं ।
जाणें माणिक्कविराइएण णरखयरसुरिंदुच्चाइएण ।
गउ वणि[7] किउ देवें तवचरणु उप्पायउ केवलु मलहरणु ।

घत्ता—भूगोयरखगरायहिं चउविहदेवणिकायहिं ॥
णमिउ[8] जिणिंदु दुयत्तिइ तणएं जाइवि भत्तिइ ॥१०॥

११

अण्णहिं दिणि वणि तरुकोमलइ पियमित्तइ समउं सिलायलइ ।
आसीणउ राणउ मेहरहु जांवच्छइ ता ढक्कंतु[1] णहु ।
विज्जाहर[2]विज्जाचोइयउं उप्परि विमाणु संप्राइयउं[3] ।
तं ताहं ण वच्चइ पउ वि किह[4] वायरणवियारणु जडहुं जिह ।

१०

पहाड़ों और नदियोंकी मालासे घिरा हुआ जब उन्होंने मानुषोत्तर पर्वत देख लिया तो उसके ऊपर मनुष्योंकी गति नहीं है। विस्मयसे परिपूर्ण मति वह लौट आया। वे पुण्डरीकिणी नगर आ गये। और जय-जय शब्दके साथ घरमें प्रवेश कराकर तथा कुमारकी पूजाकर देवता लोग वहाँ गये। नन्दनवनमें उनके अपने नगर थे। इन्द्रियोंकी आकांक्षासे प्रेरित उसने जान लिया कि संसार असार है। घनरथने अपने पुत्रको पुकारा और मेघरथको राज्यपर बैठाया। लौकान्तिक देवोंने प्रेरणा दी। उन्हें वैराग्य बहुत अच्छा लगा। माणिक्योंसे शोभित मनुष्य विद्याधर और देवेन्द्रोंके द्वारा उठायी गयी पालकीसे वह वनमें गये और देवने वहाँ तपश्चरण किया। उन्हें मलका नाश करनेवाला केवलज्ञान उत्पन्न हो गया।

घत्ता—मनुष्यों और विद्याधरों तथा चार प्रकारके देवनिकायों और पुत्रने पीड़ाको दूर करनेवाली भक्तिसे जाकर जिनकी वन्दना की ॥१०॥

११

दूसरे दिन वृक्षोंसे कोमल वनमें जाकर चट्टानपर प्रियमित्राके साथ जब राजा मेघरथ बैठे हुए थे कि इतनेमें आकाशको ढकता हुआ, विद्याधरको विद्यासे प्रेरित एक विमान वहाँ आया। वह उन लोगोंके ऊपरसे एक पग भी उसी प्रकार नहीं चल सका जिस प्रकार मूर्ख लोगोंमें

१०. १. A मणुउत्तरु । २. AP सविंभय° । ३. AP णिवणयरु । ४. A पइसेवि; P पइसरवि । ५. A °वणणिय° । ६. AP तेहिं । ७. A वणु । ८. AP णविउ ।

११. १. P ढंकंतु । २. A विज्जाहरु । ३. AP विवाणु संपाइयउं । ४. P वच्चइ उवरि किह ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आरुट्ठउ[5] वड्ढियअमरिसउ खेयरु अवलोयइ दसदिसउ।
महियलि कीलंतु रत्तु[6] सुयणु दिट्ठउं उवविट्ठउं णरमिहुणु।
उत्थल्लिवि घल्लमि[7] एउ खलु अणुहवउ विमाण[8]णिरोहफलु।
इय चिंतिवि कुद्धु अकारणइ विज्जइ[9] पायालवियारणइ।
तलि पइसिवि [10]चालिय तेण सिल डोल्लिउ वहुवरु थरहरिय इल।

घत्ता—अरिवरु[11] तणु व वियप्पिवि सिल चरणयलें चप्पिवि ॥
मेहरहें [12]पडिपेल्लिय तासु जि मत्थइ घल्लिय ॥११॥

१२

संचलहुं ण सक्कइ सो खयरु आकंदइ रवपूरियविवरु।
तहु घरिणि भणइ उद्धरहि लहुं दे देहि बप्प पइभिक्ख महुं।
मा मारहि रमणु मेहुं[1] तणउ तुहुं देव[2] वइरिविद्दावणउ।
तं[3] णिसुणिवि करपल्लवि धरिवि कड्ढिउ कारुण्णें दय करिवि।
पहु भणइ म मेल्लहि करुणसरु लइ अम्मि तुहारउ एहु वरु।
विहलुद्धारणि पसरियहरिस पिसुणहं मि खमंति महापुरिस।
थिउ वीलावसु ओणुल्लमुहु[4] णहयलु[5] अवलोइवि जायदुहु[6]।

व्याकरणका विचार। जिसे ईर्ष्या बढ़ रही है ऐसा विद्याधर क्रुद्ध हो उठा। वह चारों दिशाओंमें देखता है। उसने धरतीतलपर क्रीड़ा करते हुए स्वजनोंसे रहित बैठे हुए मनुष्यके जोड़ेको देखा। मैं इस दुष्टको उछालकर फेंकता हूँ, मेरे विमानके निरोधका फल यह अनुभव करे यह सोचकर वह अकारण क्रुद्ध हो उठा, पाताल विदारण विद्यासे तलमें प्रवेश कर उसने शिलातल चलायमान कर दिया। वधूवर डोल उठे और धरती हिल उठी।

घत्ता—शत्रुको तिनकेके बराबर समझते हुए शिलातलको पैरसे चाँपकर मेघरथने उसे उल्टा प्रेरित किया और उसीके मस्तकपर फेंक दिया ॥११॥

१२

वह विद्याधर चल नहीं सका। शब्दसे विवरोंको भरता हुआ वह रोता है। तब उसकी गृहिणी (विद्याधरी) कहती है—"शीघ्र उद्धार कीजिए। हे सुभट, मुझे पतिकी भीख दीजिये। प्रियकी हत्या मत कीजिए। हे देव, आप शत्रुओंका विदारण करनेवाले हैं।" यह सुनकर उसने दया कर कारुण्यसे अपनी हथेलीपर धारण कर उसे निकाला। प्रभु मेघरथ कहते हैं—"हे माँ, तुम करुण विलाप मत करो ये लो तुम्हारा वर।" विकल जनोंका उद्धार करनेमें जिनमें हर्षका प्रसार होता है, ऐसे महापुरुष दुष्टोंको क्षमा नहीं करते। लज्जाके वशीभूत वह विद्याधर अपना मुख

५. A आरूढउ। ६. A रत्तसुयणु। ७. A घल्लिवि एहु; P घल्लिमि एउ। ८. AP विवाण।
९. P विज्जाइ। १०. A तेणुच्चइय सिल। ११. A अरिवर। १२. A पडिमेल्लिय।
१२. १. A महं तणउ। २. AP देउ। ३. P तें। ४. AP ओणुल्लमुहु। ५. AP णहयरु। ६. A जायमुहु।

पियमित्तइ णाहु पपुच्छियउ कहु तणउ एहु कहिं अच्छियउ।
तं णिसुणिवि ओहिणाणणयणु अक्खइ णरवइ पहुल्लवयणु।
घत्ता—धादइसंडएरावइ तहिं संखउरि सुहावइ ॥
रामगुत्तु णिवु होंतउ संखिणिरमणीरत्तउ ॥१२॥

१३

गंजियसद्दूलणिरंतरइ संखइरिगुहाकुहरंतरइ।
मुणि सव्वगुत्तु आसंघियउ दोहिं मि संसारु विलंघियउ।
जिणगुणउववासें खविवि तणु जिणचरणकमलि थिरु करिवि मणु।
दिहिसेणहु दाणु पयच्छियउं पंचविहु वि चोज्जु णियच्छियउं।
विरएप्पिणु परमेट्ठिहि ण्हवणु पणविवि समाहिगुत्तु समणु।
संणासें मुउ बंभेंदु हुउ कालेण णवर तेत्थाउ चुउ।
सीहरहु एहु खयराहिवइ देवहुं दुज्जउ तिहुवणविजइ।
इहु पुण्णवंतु जयलच्छिधउ मइं जित्तउ तो किं मज्झु मउ।
घत्ता—अंगइं गेण्हिंवि छंडिवि चिरु संसारि विहंडिवि ॥
दुल्लहभोयाकंखिणि जिणतवेण सा संखिणि ॥१३॥

नीचा करके रह गया। आकाशतल देखकर उसे बहुत दुख हुआ। प्रियमित्राने अपने स्वामीसे पूछा, "यह किसका है और कहाँ रहता है?" यह सुनकर अवधिज्ञानरूपी आँखवाला प्रफुल्लमुख राजा कहता है।

घत्ता—धातकीखण्डके ऐरावत क्षेत्रमें शंखपुर नगर शोभित है। उसमें अपनी शंखिनी भार्यामें अनुरक्त रामगुप्त नामका राजा था ॥१२॥

१३

जिसमें निरन्तर सिंहोंकी गर्जना हो रही है, ऐसी शंखगिरि गुफाके भीतर मुनि सर्वगुप्त आकर ठहरे। उन दोनों (राजा रामगुप्त और शंखिनी) ने संसारका त्याग कर दिया। जिनगुणों (पंचकल्याणकोंके अनुसार) उपवाससे अपने शरीरको क्षीण कर तथा जिनवरके चरण-कमलोंमें अपना मन स्थिर कर धृतिसेनको आहार-दान दिया और पाँच प्रकार आश्चर्योंको देखा। पाँच परमेष्ठियोंका अभिषेक कर तथा समाधिगुप्त मुनिको प्रणाम कर संन्याससे मरकर ब्रह्मेन्द्र देव हुआ। समय आनेपर वहाँसे च्युत होकर विद्याधरपति सिंहरथ हुआ है जो अपनी त्रिलोक-विजयमें देवोंके लिए भी दुर्लभ है। यह पुण्यवान् तथा विजय लक्ष्मीका पति मेरे द्वारा जीत लिया गया है। तो भी मुझे मद क्यों है।

घत्ता—शरीर और गृहका त्याग कर चिरकाल तक संसारमें परिभ्रमण कर तथा दुर्लभ भोगोंकी आकांक्षा रखनेवाली वह शंखिनी भी जिन तपसे ॥१३॥

७. AP महिवइ। ८. A पफुल्लवयणु; P पप्फुल्लवयणु। ९. AP णिउ।

१३. १. A खवियतणु। २. AP संणिहिउ मणु। ३. A गिण्हइं। ४. A संसारु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

गय सग्गहु पुणु वेयड्ढधरि दाहिणसेढिहि वसुमालपुरि ।
विज्जाहरु इंदकेउ वसइ पिय मयणवेय तहु अत्थि सइ ।
सुप्पह उप्पण्णी तांहं सुय ओहच्छइ बालमुणालभुय ।
एयइ पिययमु ओलग्गियउ भत्तारभिक्ख हउं मग्गियउ ।
णिसुणिवि भैवि संसरिउं विउलि सुउ थविवि सुवण्णतिलउ सउलि ।
घणरहजिणकमकमलउं महिउं सीहरहें मुणिचरित्तु गहिउं ।
पियमित्तवेयगणणीकहिउ संजमु जमु अवलंबिवि सहिउ ।
थिय मयणवेयविरईइ किह कइमइ दुक्करकहरीण जिह ।
दक्खालइ लोयहुं णायवहु तहिं रज्जु करइ सो मेहरहु ।
घत्ता—णंदीसरि संपत्तइ जिणु झायंतु सचित्तइ ॥
दंसणु णाणु समिच्छइ उववासिउ जां वैच्छइ ॥१४॥

१५

भवभावपवेवियसव्वतणु चलमरणुत्तासिउ सरणमणु ।
तावेक्कु कवोउ पराइयउ तहु पच्छइ गिद्धु पराइयउ ।
किर झ त्ति झंडप्पिवि लेइ खलु णियवइरिहि लुंचिवि खाइ पलु ।

१४

स्वर्ग गयी । फिर विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीके वसुमालपुरमें इन्द्रकेतु विद्याधर निवास करता है, उसकी पत्नी मदनवेगा सती है । वह उन दोनोंकी सुप्रभा कन्या उत्पन्न हुई । बालमृणालके समान बाहुवाली वह, यह स्थित है । इसने अपने पतिकी सेवा की है, और मुझसे पतिकी भीख मांगी है । विपुल संसारमें परिभ्रमणको सुनकर अपने पुत्र स्वर्णतिलकको गद्दीपर स्थापित कर घनरथ जिनवरके चरणकमलोंकी पूजा कर सिंहरथने मुनि दीक्षा स्वीकार ली । प्रियमित्रा आर्यिकाके द्वारा कहे गये संयम और यम तथा स्वहितका अवलम्बन कर विरतिसे मदनवेगा उसी प्रकार स्थित हो गयी जिस प्रकार कविकी मति दुष्कर कथासे शान्त हो जाती है । वहां मेघरथ लोगोंको न्यायपथ दिखाता है और इस प्रकार राज्य करता है ।

घत्ता—नन्दीश्वरपर्वत प्राप्त होनेपर जिनका अपने मनमें ध्यान करते हुए जबतक वह उपवास करता है और दर्शनज्ञानकी इच्छा करता है ॥१४॥

१५

कि इतनेमें जिसका जन्मके भावसे सारा शरीर प्रकम्पित है, जो चंचल मरणसे पीड़ित है, और जिसका मन शरणके लिए है, ऐसा एक कबूतर वहां आया । उसके पीछे एक गीध आया ।

१४. १. A वेयड्डवरि । २. A तासु । ३. P has तं before णिसुणिवि । ४. A भव संसरियउ; P भवि संसरियउं । ५. AP कमजुयलउं । ६. P महियउं । ७. P गहियउं । ८. A °गणिणी° । ९. A सइत्तइ । १०. A जा अच्छइ; P जामच्छइ ।

१५. १. AP चलु । २. AP सेणु । ३. A झडेप्पिणु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ता पक्खि णरिंदें वारियउ पइं एहु भवंतरि मारियउ।
किं मारहि वारहि अप्पणउं मा पावहि भवि दुहुं घणघणउं।
ता पुच्छइ दढरहु देव किह महुं कहहि कहाणउं चित्तु जिह।
पहु अक्खइ मंदरउत्तरइ खेत्तंतरि सोक्खणिरंतरइ।
पुरि पउमिणिखेडइ मंदगइ धण सागरसेणहु अमियमइ।
धणमित्तु तासु वल्लहु तणुउ पुणु जायउ णंदिसेणु अणुउ।
मुइ वणिवरि भायर जायरइ अवरोप्परु पहणिवि धणहु कइ।
ते लुद्ध मुद्ध मुय बे वि जण जाया खग मारणदिण्णखण।

घत्ता—इहु मारइ इहु णासइ भीयउ रक्ख गवेसइ ॥
णहि एंतें हउं दिट्ठउ मज्झु जि सरणु पइट्ठउ ॥१५॥

१६

अण्णोण्णु जि भक्खिवि जणु जियइ ण णिहालइ णिवडंती णियइ।
इहु दीणु इहु णिरु भुक्खियउ इय चिंतिवि राउ दुवक्कियउ।
किं किज्जइ खगु दिज्जइ जइ वि णउ लब्भइ धम्मलाहु तइ वि।
तहिं अवसरि कुंडलमउडधरु अंबरयलि थिउ भासइ अमरु।
जइ देसि ण तो गिद्धहु पलउ पलि दिण्णइ पारावयहु खउ।

वह दुष्ट उसे झड़पकर जबतक ले और अपने शत्रुका मांस लोंचकर खाये, तबतक राजाने उसे मना किया कि तुमने इसे जन्मान्तरमें मारा था, अब क्यों मारते हो अपनेको रोको, संसारमें सघन दुःखोंको मत प्राप्त करो। तब वह सिंहरथ देव पूछता है कि जिस प्रकार मेरा कथानक है, उस प्रकार बताइए। राजा कहता है कि मन्दराचलके उत्तरमें सुखसे निरन्तर परिपूर्ण क्षेत्रान्तर (ऐरावत) की पद्मिनीखेट नगरीमें सागरसेन वैश्य था। उसकी पत्नी अमितगति थी। धनमित्र उसका प्रिय पुत्र था, फिर छोटा पुत्र नन्दिषेण हुआ। सेठकी मृत्यु होनेपर जिनमें लड़ाई चल पड़ी है, ऐसे दोनों भाई धनके लिए एक दूसरेपर प्रहार करते हैं। वे दोनों लोभी और मूर्ख मृत्युको प्राप्त होते हैं। मारनेमें अपना समय देनेवाले वे पक्षी हुए।

घत्ता—यह मारता है, यह भागता है, डरा हुआ रक्षाकी खोज कर रहा है। आकाशमें जाते हुए इसने मुझे देखा और मेरी ही शरणमें आ गया ॥१५॥

१६

जन एक दूसरेका भक्षण कर जीवित रहता है, अपने ऊपर आती हुई नियतिको नहीं जानता। यह दीन है, यह अत्यन्त भूखा है—यह सोचकर राजा अत्यन्त भयभीत हो उठा। क्या किया जाय? यद्यपि यह खग दे दिया जाये तो भी इसमें धर्म लाभ नहीं पाया जा सकता। उस अवसरपर कुण्डल और मुकुट धारण किये हुए आकाशमें स्थित एक देवने कहा—"यदि नहीं

---

४. P भवि भवि दुहुं घणउं। ५. P वणिसागर°। ६. A पहरिवि। ७. P °दिण्णमण।

१६. १. A एउ। २. A दुवक्कियउ; P दुवक्खियउ; T दुवक्खियउ पक्षद्वयः। ३. A हिज्जइ। ४. AP सेणहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाइत्तणु तेरउ किं करइ तो[5] विहसिवि भहिवइ वज्जरइ।
मइं चाउ करेवउ तेम तिह जिउ ण मरइ ण हवइ हिंस जिह।
वर अच्छउ णिग्गुणु छुहियतणु णउ ओयाविज्जइ[6] प्राणिगणु[7]।
किं वग्घु भणिज्जइ पत्तु गुणि आहारु असुद्धु ण लेंति मुणि।

घत्ता—जेहिं णियागमि वुत्तउं आमिसु दिण्णउं भुत्तउं॥
ते लहंति दुणिरिक्खइं भवि भवि विविहइं दुक्खइं॥१६॥

१७

तं णिसुणिवि देवें संसियउ मेहरहु सिरेण णमंसियउ।
गउ अमरु णिवासुएण भणिउ कोऊहलु महुं हियवइ जणिउ।
को एहु किमत्थु समागमणु तो[1] कहइ णराहिउ रिउदमणु।
पइं दमियारिहि रणि पाइयउ हेमरहु णाम णिउ घाइयउ।
भवि भमिवि सुइरु कइलासयडि वणि पंण्णकंततीरिणिणियडि[2]।
वरसिरिदत्ताकंतावसहु सुउ जायउ सोम्महु[3] तावसहु।
चंदाहु णाम प्रिउं[4] पाणपिउ पंचग्गिताउ तउ तेण किउ।
जोइसकुलि उप्पण्णउ अमरु गउ जहिं हरि अच्छइ कुलिसकरु[5]।
ईसाणणामकप्पाहिवइ तहिं तियसहं णिसुणिवि वयणगइ।

दोगे तो गीधका नाश है और मांस देनेपर कबूतरका नाश है? तुम्हारा त्याग इसमें क्या करेगा?" तब राजा हँसकर उत्तर देता है, "मेरा त्याग वह करेगा कि जिससे जीव नहीं मरेगा और हिंसा नहीं होगी? निर्गुण और भूखा रहना अच्छा लेकिन प्राणियोंको घात नहीं करना चाहिए? क्या बाघको गुणीपात्र कहा जाता है, मुनि लोग अशुद्ध आहार ग्रहण नहीं करते।

घत्ता—जिन लोगोंके द्वारा अपने आगममें कहा गया और दिया गया आमिष भोजन खाया जाता है, वे भव-भवमें दुर्दर्शनीय दुःखोंको पाते हैं॥१६॥

१७

यह सुनकर देवोंने उसकी प्रशंसा की और मेघरथको सिरसे प्रणाम किया। वह देव चला गया। राजाके अनुज (दृढ़रथ) ने कहा कि इसने मेरे हृदयमें कुतूहल उत्पन्न कर दिया है। यह कौन है और किसलिए यहाँ आया? तब शत्रुओंका दमन करनेवाला, राजा मेघरथ कहता है—तुमने (अनन्तवीर्यके रूपमें) दमितारिके पैदल सैनिक हेमरथ राजाको मारा था। वह बहुत समय तक संसारमें भ्रमण कर कैलासके तटपर पर्णकान्ता नदीके निकट वनमें श्रेष्ठ श्रीदत्ता कान्ताके वशीभूत तापस सोमशर्माका चन्द्र नामका प्राणप्रिय पुत्र हुआ। उसने पंचाग्नि तप किया, वह ज्योतिषकुलमें देव उत्पन्न हुआ है। वह वहाँ गया जहाँ हाथमें वज्र लिये इन्द्र था, जो—ईशान स्वर्गका राजा था। वहाँ देवताओंकी वचनगति और मेरे त्याग तथा भोगकी स्तुतिको

५. A तो। ६. A उज्जाविज्जइ। ७. A पाणिगणु; P पाणिगुणु।
१७. १. A तो। २. AP पण्णकंति°। ३. A सोमहु। ४. AP पिउ। ५. A कुलिसघरु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महुं केरी चौयसुभोयथुइ[6] इहु आयउ कुद्धु[7] अजायरुइ।
आएं महु सीलु णिरिक्खियउ चित्तेण असेसु परिक्खियउ।
घत्ता—एउ वयणु णिसुणेप्पिणु[8] पक्खें रोसु मुएप्पिणु ॥
वंदिवि जिणवरसासणु कयउं बिहिं मि संणासणु ॥१७॥

१८

बेण्णि वि सुरूवअइरूववर सुररमणवणंतरि जाय सुर।
णरणाहु तेहिं संमाणियउ पइं देव[1] धम्मु जगि जाणियउ।
पइं रउरवि णिविडमाण धरिय अम्हइं मि कुजोणिहि णीसरिय।
गय सुरवरराएं दमवरहु कय भोज्जजुत्ति संजमधरहु।
दुंदुहिरउ मणिकंचणवरिसु सुरजयसरु पाउसु कयहरिसु।
मरु सुरहियंगु मंथरु वहइ जणु जणहु दाणु विलसिउ कहइ।
पुणु णंदीसरि पोसहु करिवि थिउ पडिमाजोएं जिणु सरिवि।
ईसाणसुरिंदें वण्णियउ अण्णहिं देवहिं आयण्णियउं।
वण्णिउ कहु केरउं चरिउ पइं को तुज्झु वि गरुयउ देवें[2] सइं।
घत्ता—तें[3] णियगुज्झु ण रक्खिउ सुरवरराएं अक्खिउ ॥
मइं संथुउ परमेसरु सिरिमेहरहु महीसरु ॥१८॥

सुनकर यह अच्छा नहीं लगनेसे क्रुद्ध होकर यहाँ आया है। इसने मेरे शीलका निरीक्षण किया और चित्तसे सबकी परीक्षा की।

घत्ता—यह वचन सुनकर क्रोध छोड़कर तथा जिनवर शासनकी वन्दना कर दोनों (पक्षियोंने) संन्यास ले लिया ॥१७॥

१८

वे दोनों सुररमणवन (देवारण्य) के भीतर सुरूप और अतिरूप नामके देव हुए। उन्होंने राजा (मेघरथ) का सम्मान किया (और कहा)—हे देव, तुमने ही संसारमें धर्मको जाना है। तुमने रौरव नरकमें जाते हुए हमें पकड़ लिया और हम लोगोंको कुयोनिसे निकाल लिया। सुरवरराजके जानेपर उसने दमवर संयमधारीकी भोजनयुक्ति (आहारदान) की। दुन्दुभि शब्द, मणिकांचनकी वर्षा, देवोंका जयस्वर, हर्ष उत्पन्न करनेवाली वर्षा, सुरभित हवा मन्थर-मन्थर बहती है। जन जनोंसे दानका प्रभाव कहते हैं। फिर नन्दीश्वरमें प्रोषधोपवास कर जिनको स्मरण करते हुए वह प्रतिमायोगमें स्थित हो गया। ईशानेन्द्रने वर्णन किया और दूसरे देवोंने उसे सुना (और पूछा) कि तुमने स्वयं किसके चरितका वर्णन किया। हे देव, तुमसे महान् कौन है?

घत्ता—उस सुरेन्द्रने अपना रहस्य छिपाकर नहीं रखा। सुरवरराजने कहा—मैंने परमेश्वर श्री मेघरथ परमेश्वरकी स्तुति की है ॥१८॥

---

६. A वायतुभोय°। ७. A कुद्धु व जायरुइ। ८. P णिसुणेविणु।

१८. १. AP धम्मु देव। २. AP देउ। ३. AP तं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९

तं णिसुणिवि देवि सुरूविणिय अणेक्क ढुक्क अइरूविणिय ।
जहिं अच्छइ राउ समाहियउ तहिं ताहिं तासु दाविउ समउ ।
दोहिं मि गाढउ आलिंगियउ दोहिं मि मुहचुंबणु मग्गियउ ।
दोहिं मि सुमहुरु संभासियउ दोहिं मि आहरणहिं भूसियउ ।
णीवीणिबंधु आमेल्लियउ दोहिं मि थणकलसहिं पेल्लियउ ।
दोहिं मि सवियारु पलोइयउ दोहिं मि उरुउप्परि ढोइयउ ।
अचलत्तें अहिणवमंदरहु जं हियउ ण हित्तउ सुंदरहु ।
तं बेण्णि मि वंदेप्पिणु गयउ वंदारयघरिणिउ अविरयउ ।
अण्णहिं दिणि सुर चवंति जुवइ णरलोइ अत्थि किं रूववइ ।
ता भासइ ईसाणाहिवइ पियमित्तहि केरी रूवगइ ।
घत्ता—ता देवय मणि कंपइ [2]पुरहूयउ किं जंपइ ॥
रूवें मण्णइ माणवि आगय रइ रइसेण वि ॥१९॥

२०

[1]अदंसणीहिं सुरकामिणिहिं जोइवि अइरावयगामिणिहिं ।
अब्भंगिउ अंगु मणोहरउं उग्घाडउं तुंगपयोहरउं ।
बेण्णि वि पुणु दारि परिट्ठियउ देविउं[2] दंसणउक्कंठियउ ।
अक्खिउ कण्णइ कट्ठियहरइ अच्छंति तियउं[3] दारंतरइ ।

१९

यह सुनकर एक सुरूपिणी और दूसरी अतिरूपिणी देवियाँ वहाँ पहुँचीं कि जहाँ राजा समाधिमें लीन था। वहाँ उन्होंने उसका अवसर प्रदर्शित किया। दोनोंने एक दूसरेका प्रगाढ़ रूपसे आलिंगन किया। दोनोंने एक दूसरेका मुख-चुम्बन माँगा। दोनोंने सुमधुर सम्भाषण किया। दोनोंने एक दूसरेको आभरणोंसे आभूषित किया। नीवीबन्ध खोल दिया। दोनोंने एक दूसरेको स्तनकलशोंसे प्रेरित किया। दोनोंने विकारपूर्वक देखा। दोनोंने उरके ऊपर उर रखा। अचलत्वमें नये मन्दराचलके समान उस सुन्दरके हृदयका अपहरण नहीं किया जा सका तो व्रतहीन वे दोनों देवांगनाएँ वन्दना करके चली गयीं। दूसरे दिन देव कहते हैं कि क्या मनुष्यलोकमें रूपवती युवती है? इसपर ईशानेन्द्रने प्रियमित्राकी रूपगतिका वर्णन किया।

घत्ता—तब देवी मनमें काँप उठती है, इन्द्र क्या कहता है मनुष्यणीके रूपको मानता है। रति और रतिसेन देवियाँ आयीं ॥१९॥

२०

ऐरावत गजके समान चलनेवाली उन देवबालाओंने अदृष्ट होकर उसके तेलसे मर्दित सुन्दर शरीर और खुले हुए ऊँचे स्तन देखकर फिर वे देवीको देखनेकी उत्कण्ठासे द्वारपर गयीं। यष्टि धारण करनेवाली कन्याने कहा—द्वारके पास स्त्रियाँ हैं, क्या विद्याधरियाँ हैं, या अप्सराएँ?

१९. १. A समहुरु। २. AP पुरुहूअउ।
२०. १. A सदंसणीहिं। २. P देविहिं। ३. AP तियउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किं खेयरीउ किं अच्छरउ तुह दंसणमणउ अमच्छरउ ।
तं ण्हाइवि जणमणसाहणउं लहुं लइयउं ताइ पसाहणउं ।
सुरणारिउ पुणु पइसारियउ मागवजणदूरोसारियउ ।
अवलोइवि झीणु रूवविहवु देवयहिं पवुत्तु ण किं पि धुवु ।
तेरउ सरूउ रूवहु ढलिउ पुव्विल्लहि रेहहि परिगलिउ ।
घत्ता—ता रइसुहि णिव्विण्णी सा पियमित्त विसण्णी ॥
उम्मण दुम्मण थक्की माणमरट्टे मुक्की ॥२०॥

२१

तं पेक्खिवि गउ मणहरवणहु राणउ पणविवि घणरहजिणहु ।
चउपव्वपयारि अणासयहं आउच्छइ वित्ति उवासयहं ।
सावयअज्झयणु ण तं रहइ सत्तमउ अंगु रिसिवइ कहइ ।
विविहउ घरधम्मपवित्तियउ किरियाउ असेसउ उत्तियउ ।
दढरहिण ण रज्जु समिच्छियउ णीसारु दुरंगु दुगुंछियउ ।
सुउ मेहसेणु पच्छइ थविवि मेहरहिं जिणवरु विण्णविवि ।
सहुं भाइइ सहसा लइउ तउ बारहविहु सोसिउ विसमभउ ।
धीरहिं णिंदियइंदियसिवहिं भयसमसहसहिं सहु पत्थिवहिं ।
घत्ता—सिरिपुरि घरि सिरिसेणहु भुंजिवि दिण्णसुदाणहु ॥
अंतयपुरि णिव्वणंदहु थाइवि अमराणंदहु ॥२१॥

ईर्ष्यासे रहित वे तुम्हें देखनेका मन रखती हैं ? तब उसने स्नान कर तथा जनमनको आकर्षित करनेवाला प्रसाधन कर लिया। फिर मनुष्यजनको दूरसे हटानेवाली देवस्त्रियोंको भीतर प्रवेश दिया गया। उसके रूपवैभववाले शरीरको देखकर देवियोंने कहा कि (संसारमें) स्थिर कुछ भी नहीं है। तुम्हारा स्वरूप रूपसे ढल गया है, पूर्वकी शोभासे गल गया है।

घत्ता—रतिसुखसे विरक्त विषण्ण, उन्मन और दुर्मन वह प्रियमित्रा मानके अहंकारसे मुक्त होकर श्रान्त हो गयी ॥२०॥

२१

उसे इस प्रकार देखकर राजा मनहर वन गया और घनरथ जिनको प्रणाम कर उसने कर्मास्रवसे रहित उपासकों (श्रावकों) की वृत्ति पूछी। ऋषीश्वर सातवें अंग उपासकाध्ययनका कथन करते हैं, वह उसे छोड़ते नहीं। गृहस्थ धर्मकी विविध-प्रवृत्तियों, अशेष क्रियाओं और उक्तियोंका उन्होंने कथन किया। दृढ़रथने राज्यकी इच्छा नहीं की। असार और दुरंगी चालवाले उसकी निन्दा की। बादमें अपने पुत्रको राज्यमें स्थापित कर मेघरथ जिनसे निवेदन कर अपने भाईके साथ इन्द्रिय सुखकी निन्दा करनेवाले सात सौ राजाओंके साथ उसने बारह प्रकारका तप ले लिया, और संसारके भयको नष्ट कर दिया।

घत्ता—श्रीपुरमें सुदानको देनेवाले श्रीषेण राजाके घर आहार कर और देवोंको आनन्द देनेवाले नन्दन राजाके प्रासादमें ठहरकर ॥२१॥

४. A समच्छरउ। ५. A °सुहणिव्विण्णी।

२१. १. A हरइ। २. A विण्णिविवि; P वेण्णविवि। ३. A विसमतउ। ४. A णिवदाणहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२

तहिं [1]भत्तपाणगिद्धिइ रहिउ   इच्छिवि णिच्छियमत्तासहिउ।
पइसिवि वणे[2]गिरिवरकंदरइ   फणिविच्छिय[3]घरि तरु[4]कोड्डरइ।
णिण्णासइ स[5]त्त वि सो भयइं   मयचिंधइं तहु अट्ठ वि गयइं।
दिढु बंभचेरु णवविहु धरिउ   दहविहु जिणधम्मु परिप्फुरिउ।
दहभेउ विकालु वि लक्खियउ   एयारह अंगइं सिक्खियउ।
बारह अणु[6]पेक्खउ चिंतवइ   तेरह[7] चारित्तइं थिरु थवइ।
चउदहगुणठाणइं अब्भसइ   पण्णारहविह पमाय पुसइ।
परिभाविवि सोलहकारणइं   तित्थयरत्तणहकारणइं।
घत्ता—सहुं बंधवेण अणिंदहु   गउ णहतिलयगिरिंदहु ॥
दूसहणिट्ठाणिट्ठिउ   तहिं अणसणिण परिट्ठिउ ॥२२॥

२३

हियवल्लउं मुणिमग्गेण णिउ   पाउं[1]ग्गमरणु मासंतु किउ।
जइपुंगम घणरहरायसुय   मय[2] बेण्णि वि ते अहमिंद हुय।
सव्वत्थसिद्धिसुरहरि[3] धवल   करमेत्तदेह वरमुहकमल।
तेत्तीससमुद्द[4]जीवियपवर   तेत्तिय जि पक्ख णीसासधर।
तइ वरिससहासइं लेंति खणु   आहारु वि चिंतिउ सुहमु[5] अणु।

२२

वहाँ भोजन और पानकी इच्छासे रहित, निश्चित मात्रासे युक्त (भोजन) चाहकर सर्पों और बिच्छुओंके घर तथा वृक्ष कोटरवाली वनगिरिकी गुफाओंमें प्रवेश कर, वह भी सात भयोंका नाश करते हैं, मानके आठ चिह्न भी उनसे चले गये। उन्होंने नौ प्रकारके दृढ़ ब्रह्मचर्यका पालन किया। दस प्रकारका धर्म उनमें स्फुरित हो उठा। दस प्रकारके मुनि-आचारको भी उन्होंने जान लिया। उन्होंने ग्यारह अंगोंको सीख लिया। वह बारह अनुप्रेक्षाओंका चिन्तन किया। तेरह प्रकारके चारित्रोंकी स्थापना करता है। चौदह गुणस्थानोंका अभ्यास करता है। पन्द्रह प्रकारके प्रमादोंका नाश करता है। तीर्थंकरत्वका बन्ध करनेवाली सोलहकारण भावनाओंका विचार कर—

घत्ता—अपने भाईके साथ, वह अनिन्द्य नभस्तिलक पर्वतके लिए गये। असह्य निष्ठामें निष्ठ वह वहाँ अनशनमें स्थित हो गये ॥२२॥

२३

अपने हृदयको मुनिमार्गमें लगाकर एक माहके प्रायोपगमन उपवास किया। दोनों यतिश्रेष्ठ घनरथ और उसका पुत्र मृत्युको प्राप्त हुए और दोनों सर्वार्थसिद्धिके विमानमें अहमेन्द्र उत्पन्न हुए। दोनों गोरे, एक हाथ शरीरवाले, श्रेष्ठ मुखकमल और तैंतीस सागर प्रमाण आयुसे युक्त उत्तम जीवनवाले थे। वे उतने ही पक्षोंमें श्वास लेते थे। तैंतीस हजार वर्षोंमें एक क्षणमें

२२. १. AP भत्तु पाणु। २. A वणे गिरि°। ३. A विच्छियतरुगिरि°। ४. AP °कोडरइ। ५. AP सो सत्त वि भयइं। ६. AP अणुवेक्खउ। ७. P तेरह वि चरित्तइं थिरु घरइ।
२३. १. A पाउवगमणु। २. AP मुय। ३. A °हरधवल। ४. AP °जलहिं°। ५. A सुहुमु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

जगणाडिपलोयणणाणधर तेत्तियवीरियविकिरियकर ।
ते णिप्पडियार पसण्णमइ कत्थइ णउ ताहं वियाररइ ।
रिज्झंति धम्मसंभासणइं कत्थइं मुयंति सीहासणइं ।
केवलि उप्पण्णइ जिणवरहं भुवि जाइजराजम्मणहरहं ।
सहुं भायरेण अहमिंद सुरु जाणंतु तच्चु पणमंतु गुरु ।

घत्ता—गोत्तमेण जं अक्खिउ जं भरहेसें लक्खिउ ॥
जं सुहु सोत्तहिं माणइ पुप्फयंतु तं जाणइ ॥२३॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए
महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे मेहरहतित्थयरगोत्तणिबंधणं
णाम दुसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥६२॥

चिन्तित सूक्ष्म-सूक्ष्म अणुका आहार करते। विश्वनाड़ीको देखनेवाले ज्ञानके धारक थे। उतनी ही विक्रियाऋद्धिको कर सकते थे। प्रतिकारकी भावनासे रहित और प्रसन्नमति थे। उनमें विकाररति कहीं भी नहीं थी। वे धर्मसम्भाषणोंसे प्रसन्न होते थे। जन्म, जरा और मरणका हरण करनेवाले जिनवरोंको केवलज्ञान उत्पन्न होनेपर वे कभी-कभी अपना सिंहासन छोड़ते थे। वह अहमेन्द्रसुर अपने भाईके साथ तत्त्वको जानता और गुरुको प्रणाम करता।

घत्ता—गौतमने जो कुछ कहा, वह भरतेश श्रेणिकने जान लिया। अपने कानोंसे जो उस सुखको मानता है, हे पुष्पदन्त वही उसे जानता है ॥२३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका मेघरथ तीर्थंकर
गोत्र निबन्धन नामका बासठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६२॥

---

६. AP विहाररइ। ७. A कत्थइ ण मुयंति। ८. A पणवंतगुरु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६३

छम्मासइं आउससेसइं थियइं जाम अहमिंदहु ॥
ता रम्मइ तहिं सोहम्मइ जाय चिंत तियसिंदहु ॥ ध्रुवकं ॥

१

जिणवरण्हवणण्हवियगिरिमंदरु धणयहु अक्खइ देउ पुरंदरु ।
कुंजरकरताडियसीयलजलि सिसिरकिरणविलसियणीलुप्पलि ।
णवखरदंडसंडमंडियसरि दसदिसु गुमुगुमंतमयमहुयरि ।
सीमारामगामरमणीयइ दीणाणाहदिण्णतवणीयइ ।
गंधसालिकणसुरहियपरिमलि कीरकुररकलहंसीकलयलि ।
दिव्वुज्जाणविडविणिवडियफलि जंबूदीवि भरहि कुरुजंगलि ।
हत्थिणयरु तहिं मंडलि छज्जइ तूरहं सद्दें णं गलगज्जइ ।
सग्गें सरिसउ अप्पउ मण्णइ घरसिहरहिं हरइ व तिजगुण्णइ ।

सन्धि ६३

जब अहमेन्द्रकी छह माह आयु शेष रह गयी, तो सौधर्म स्वर्गमें इन्द्रको चिन्ता उत्पन्न हो गयी।

१

जिनवरके स्नानमें मन्दराचल पर्वतको स्नान करानेवाला इन्द्र कुबेरसे कहता है—इस जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें कुरुजांगल देश है, जिसमें हाथियोंसे प्रताड़ित शीतल जल है। जिसमें नील-कमल शिशिर किरणोंसे विकसित है, नदियाँ नवपद्मोंसे मण्डित हैं, दसों दिशाओंमें मधुकर गुंजन करते हैं, सीमोद्यानों और ग्रामोंसे जो रमणीय है, जहाँ दीन और अनाथोंको सोना दिया जाता है, जहाँ सुगन्धित धान्यके कणोंसे सुरभित परिमल है, जिसमें कीर, कुरल और कलहंसोंका सुन्दर कलकल शब्द हो रहा है। ऐसे उस मण्डलमें हस्तिनापुर नगर शोभित है जो मानो तूर्योंकी ध्वनियोंसे गरज रहा है। वह अपने आपको स्वर्गके समान मानता है। अपने घरोंके शिखरोंसे

All Mss. have, at the beginning of this saṃdhi, the following stanza:-

बन्धः सौजन्यवार्धेः कविखलधिषणाध्वान्तविध्वंसभानुः
प्रौढालंकारसारामलतनुविभवा भारती यस्य नित्यम् ।
वक्त्राम्भोजानुरागक्रमनिहितपदा राजहंसीव भाति
प्रोद्यद्गम्भीरभावा स जयति भरते धार्मिके पुष्पदन्तः ॥ १ ॥

AP read बन्धुः in the first line. for बन्धः, but K has a gloss सेतुः on it. P reads °भावः for °भावा in the third line.

१. १. AP °वियसिय° । २. A सीमागामराम° । ३. AP °कणपसरियपरिमलि ।

५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजियसेणु तहिं पहु पियवाइणि तहु पियदंसण णामें पणइणि ।
बंभकप्पचुउ वइरिविमद्दणु वीससेणु उप्पण्णउ णंदणु ।
सुणि गंधारदेसि गंधारइ पुरि पंडुरघरि पुहईसारइ ।
तहिं णरणाहु णाम अजियंजउ अजियदेविवल्लहु परदुज्जउ ।

घत्ता—तें राएं सुहिअणुराएं णिरु भल्लारउं भाविउं ॥
अइरा सुय णवकिसलयभुय वीससेणु परिणाविउ ॥ १ ॥

२

एयहं होसइ धुवु तित्थंकरु सोलहमउ कंदप्पखयंकरु ।
धणय धणय लइ तेरउ अवसरु करि पुरु मणियरहयदिवसेसरु ।
तं णिसुणिवि तें कमलदलक्खें कंचणपट्टणु णिम्मिउ जक्खें ।
हरियउं मरगयतोरणमालहिं[1] जलइ व पउमरायकरजालहिं ।
कोमलगत्तइ मउलियणेत्तइ सउहयलइ पल्लंकपसुत्तइ[2] ।
णिद्दाएंतिइ पुण्णपवित्तिइ, पच्छिमरत्तिइ गुणगणजुत्तिइ ।
एरादेविइ[3] दिट्ठउ कुंजरु पसुवइ केसरि खरणहपंजरु ।
सिरिदामाइं दोण्णि विलुलंतइं ससिरविबिंबइं णहि उययंतइं[4] ।
कुंभजुयलु झसजुयलउं कीलिरु सरवरु जलहि जलावलिचालिरु ।
सीहासणु विमाणु अमराणउं[5] भवणु फणिंदहु तणउं पहाणउं ।

त्रिजगकी उन्नतिका अपहरण कर रहा है। अजितसेन नामक वहाँका राजा था उसकी प्रिय बोलनेवाली प्रियदर्शना नामकी प्रणयिनी थी। शत्रुओंका मर्दन करनेवाला ब्रह्मस्वर्गसे च्युत होकर उनका विश्वसेन नामका पुत्र हुआ। सुनो—गान्धार देशमें पृथ्वीमें श्रेष्ठ धवल घरोंवाली गन्धारी नगरीमें अजितंजय नामका राजा था, जो अजिता देवीका प्रिय और शत्रुओंके लिए अजेय था।

घत्ता—सुधियोंके प्रति अनुराग रखनेवाले उस राजाने अच्छा विचार किया कि जो उसके नवकिशलयके समान भुजाओंवाली अपनी अचिरा नामकी कन्याका विवाह विश्वसेनसे कर दिया ॥१॥

२

इन दोनोंसे निश्चयपूर्वक कामदेवका नाश करनेवाले सोलहवें तीर्थंकरका जन्म होगा। कुबेर-कुबेर! लो, यह तेरा अवसर है। तुम मणिकिरणोंसे दिनेश्वरको पराजित करनेवाले पुरकी रचना करो। यह सुनकर कमल दलके समान आँखोंवाले उस यक्षने स्वर्णनगरकी रचना की। मरकत मणियोंकी तोरणमालाओंसे वह हरा-हरा था। पद्मराग मणियोंके किरणजालसे जलता हुआ था। सौधतलमें पलंगपर सोते हुए कोमल शरीरवाली, मुकुलित नेत्र, पुण्यसे पवित्र तथा गुणगणोंसे युक्त एरा देवी थी। रात्रिके अन्तिम प्रहरमें उसने हाथी देखा। वृषभ, तीव्र नखसमूहसे युक्त सिंह, लक्ष्मी, दो मालाएँ झूलती हुईं, आकाशमें उगते हुए सूर्यचन्द्रके बिम्ब, घटयुगल, खेलते हुए दो मत्स्य, सरोवर, जलकी लहरोंसे चंचल समुद्र, सिंहासन, देवोंका विमान, नागेन्द्रका प्रमुख

---

२. १. A तोरणदारहिं। २. P पल्लंकि पसुत्तइ। ३. AP अइरादेविइ। ४. A उवयंतइं। ५. P अमरालउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रयणरासि सत्तच्चि[6] वि जोइउ   मुहु धोइवि दप्पणु अवलोइउ।
गय सुंदरि सुविहाणइ तेत्तइ   थिउ अत्थाणि णराहिउ जेत्तहि।
घत्ता—सिविणंतरु णिहिलु णिरंतरु कंतइ कंतहु ईरिउं ॥
अवहीसें तेण महीसें तं फलु ताहि वियारिउं ॥ २ ॥

३

तुज्झु उयरि तेलोक्कपियारउ   होसइ सिरिअरहंतु भडारउ।
रायंगणि लोएहिं वि दिट्ठउं   जा छम्मास ताम वसु वुट्ठउं।
हिरि सिरि बुद्धि कंति कित्ती सइ   आगय घरु जिणगुणरंजियमइ।
भद्दवयहु भयसंखावासरि   भरणिरिक्खि णिसिपरपहरंतरि।
जणणिहि मुहि पइट्ठु गयवेसें   किउ गब्भावयारु परमेसें।
मेहरहेण तेण अहमिंदें   पुण्णपवणकंपावियइंदें।
आय देव सयल वि पंजलियर   पुज्जिय सयल असेस वि सपियर।
णवमासइं णिहित्तु चामीयरु   धणएं किउ पहुपंगणु पिंजरु।
पल्लच[1]उत्थि भाइ तइयंसें   ऊणि[2] तिसायरि गलियजमंसें।
धम्ममहामुणिदेवजिणंतरि   चित्ता[3]जुत्तमासपक्खंतरि।
कालइ दिणि चउदहमइ जायइ   जामइ जोइ सुहंकरि आयइ।
पच्छिमसंझहि जणियउ मायइ   जिणु रेहइ णाणत्तयछायइ।

भवन, रत्नराशि और अग्निज्वाला भी देखी। मुँह धोकर उसने दर्पण देखा। सवेरे वह सुन्दरी वहाँ गयी जहाँ राजा सिंहासनपर विराजमान था।

घत्ता—समस्त लगातार स्वप्नान्तर कान्ताने अपने पतिसे कहा। अवधीश्वर (अवधिज्ञानके धारी) महीश्वरने उसे उसका फल विवेचित कर दिया ॥२॥

३

तुम्हारे उदरसे त्रिलोकके प्यारे आदरणीय श्री अरहन्त उत्पन्न होंगे। लोगोंने भी देखा कि राजाके आँगनमें छह माह तक रत्नोंकी वर्षा हुई। ह्री-श्री-बुद्धि-कीर्ति आदि सतियाँ जिन-गुणोंसे रंजितमति होकर आयीं। भाद्र वदी सप्तमीके दिन भरणी नक्षत्रमें रात्रिके अन्तिम प्रहरमें वह माताके उदरमें गजरूपमें प्रविष्ट हुए और इस प्रकार परमेश्वर उस अहमेन्द्र मेघरथने गर्भावतार किया। सभी देव अंजली बाँधे हुए आये और पिता सहित उन्होंने सभी स्वजनोंकी पूजा की। कुबेरने नव माह तक स्वर्णकी वर्षा की और उसने राजाके आँगनको पीला कर दिया। धर्मनाथ महामुनि तीर्थंकरके बाद चौथे पल्यके तीन भाग कम तीन सागर समय बीतनेपर, एक भाग (पाव) पल्य धर्मका उच्छेद होनेपर, ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्थीके दिन शुभंकर शुभयोगमें रात्रिके अन्तिम प्रहरमें माताने जिनको जन्म दिया। वे तीन ज्ञानोंकी छायासे शोभित थे।

---

६. A सत्तच्चिवय।

३. १. A चउत्थभाय°। २. A ऊणतिसायर°। ३. A जिट्ठा° but gloss चैत्र:; T चित्तजुत्तमास° चैत्रः।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

घत्ता—एरावइ चडिवि सुरावइ सहसा पत्तु पुरंदरु ॥
सहुं देवहिं णाणारूवहिं अरुहु लेवि गउ मंदरु ॥ ३ ॥

४

इंदचंदखयरिंदफणिंदहिं ण्हाणिउ तहिं वंदारयवंदहिं ।
पुज्जिउ कुंदकुडयकणियारहिं बउलतिलयचंपयमंदारहिं ।
जणसंतीयरु संति भणेप्पिणु तं गुरु सुरगिरिसिहरु मुएप्पिणु ।
आणिवि भवणहु अप्पिउ जणणिहि जिणवरसुरतरुसंभवधरणिहि ।
हरि घरि पायडणडु व पणच्चिउ तेण ण को को किर रोमंचिउ ।
गउ सग्गहु पणविवि सक्कंदणु कालें जाउ णाहु णवजोव्वणु ।
कणयवण्णु णं बालपयंगउ दह दह तह दह दह धणुतुंगउ ।
लक्खवरिसपरमाउ मह्रामहु दढरहु णाम अवरु हसयमहु ।
वीससेणराएण रवण्णउ जसवइदेविहि सो उप्पण्णहु ।
णामें चक्काउहु पियतणुरुहु छणसत्तावीसंजोयणमुहु ।
घत्ता—ते भायर चंददिवायरणिह परिणाविय ताएं ॥
णिवकण्णउ बहुलायण्णउ जयजयपडहणिणाएं ॥ ४ ॥

५

पंचवीसवरवरिससहासइं वोलीणइं कुमरत्ति पयासइं ।
जेट्ठहु अप्पिय धरणि णरिंदें अप्पणु बद्धउ पट्टु सुरिंदें ।

घत्ता—ऐरावतपर चढ़कर देवोंका स्वामी पुरन्दर शीघ्र वहाँ पहुँचा तथा नानारूपोंवाले देवोंके साथ अर्हन्त देवको लेकर मन्दराचल गया ॥३॥

४

इन्द्र, चन्द्र, विद्याधरेन्द्र और नागेन्द्र आदि देवसमूहने वहाँ उनका अभिषेक किया तथा कुन्द, कुटज, कनेर, बकुल, तिलक, चम्पक और मन्दार पुष्पोंसे पूजा की। लोगोंको शान्ति देनेवाले होनेसे उन्हें शान्ति कहकर, मन्दराचल-शिखरको छोड़कर, गुरुको लाकर, जिनवररूपी कल्पवृक्षको उत्पन्न करनेकी भूमि माँको सौंपकर इन्द्र प्राकृतनटकी तरह नाचा। उससे कौन-कौन नहीं रोमांचित हुआ। इन्द्र प्रणाम कर स्वर्ग चला गया। समयके साथ जिन नवयौवनको प्राप्त हुए। स्वर्णरंगके वह मानो बालसूर्य थे। वह चालीस धनुष प्रमाण ऊँचे थे। एक लाख वर्षकी उनकी परमायु थी। दृढ़रथ नामका दूसरा अहमेन्द्र था, वह भी विश्वसेन राजाकी दूसरी पत्नी यशस्वतीसे उत्पन्न हुआ। चक्रायुध नामसे वह प्रियपुत्र था। उसका मुख पूर्ण चन्द्रमाके समान था।

घत्ता—चन्द्रमा और दिवाकरके समान दोनों भाइयोंका पिताने नगाड़ोंकी ध्वनिके साथ अत्यन्त रूपवती राजकन्याओंसे विवाह कर दिया ॥४॥

५

कौमार्यकालमें जब उनके पचीस हजार वर्ष बीत गये तो राजाने बड़े भाईको धरती अर्पित

---

४. १. इ °खयरिंदसुरिंदहिं। २. AP पायडु णडु व। ३. AP दह तह दह। ४. AP लक्खु वरिसु परमाउ। ५. A अवरु अहसयमहु। ६. A नृव°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रज्जु करंतहु देंतहु णियधणु गलिय समासहास तेत्तिय पुणु ।
जइयहुं तइयहुं पुण्णविसेसें आयइं दिट्ठइं तेण णरेसें ।
चक्कु छत्तु असि पहरणसालहि[1] संभूयउं[2] दंडु वि सुविसालहि ।
कागणि मणि उप्पण्णइं सिरिहरि थवइ पुरोहु चमूवइ गयउरि ।
कण्णा गय तुरंग खगभूहरि णव णिहि जलणिहिणइसंगमघरि[3] ।
छक्खंड[4] वि महिवीढु पसाहिवि विंतर सुर विज्जाहर साहिवि ।
पणवीससहसहस महि पालिवि दप्पणयलि णियवयणु णिहालिवि ।
घत्ता—णिव्वेइउ णाहु पसाइउ[5] लोयंतियएहिं पबोहिउ ॥
अवमत्तउ इंदें सित्तउ रयणाहरणहिं सोहिउ ॥ ५ ॥

६

थिउ सव्वत्थसिद्धि सिवियासणि जाइवि तहि लहु सहसंबयवणि ।
सिलहि णिसण्णें उत्तरवयणें कयपलियंकें दीहरणयणें ।
जेट्ठहु मासहु सतिमिरपक्खइ दिवसि चउद्दसि भरणीरिक्खइ ।
अवरण्हइ णिक्खवणु करंतें छट्ठुववासिएण गुणवंतें ।
उप्पाइउ मणपज्जउ देवें किं ण होइ भणु संजमभावें ।
जो धम्मिल्लभारु आलुंचिउ सो सुरणाहें कुसुमें अंचिउ ।
घल्लिउ णवर खीरमयरालइ चक्काउहपमुहहिं तक्कालइ ।
संजमु णिवसहसें पडिवण्णउ बीयइ वासरि समसंपण्णउ ।

कर दी और देवेन्द्रने स्वयं पट्ट बाँधा। राज्य करते हुए और अपना धन देते हुए फिर जब उनके उतने ही अर्थात् पचीस हजार वर्ष बीत गये, तो पुण्य विशेषसे उस राजाने इन चीजोंको देखा (प्राप्त हुईं) सुविशाल आयुधशालामें चक्र-छत्र और तलवार तथा दण्डरत्न उत्पन्न हुए। श्रीगृहमें कागणि मणि उत्पन्न हुई। हस्तिनागपुरमें स्थपति, पुरोहित और चमूपति। कन्या, गज, तुरंग विजयार्ध पर्वतपर उत्पन्न हुए। जलनिधि और नदीके संगमस्थलपर नवनिधियाँ प्राप्त हुईं। छह खण्ड धरतीको सिद्ध कर व्यन्तर, विद्याधरों और देवोंको साधकर पचीस हजार वर्षों तक धरतीका पालन कर (एक दिन) दर्पणतलमें अपना मुख देखकर—

घत्ता—प्रसन्नताको प्राप्त देव विरक्त हो उठे। लौकान्तिक देवोंने उन्हें सम्बोधित किया। रत्नाभरणोंसे शोभित और अप्रमत्त उनका इन्द्रने अभिषेक किया ॥५॥

६

वह सर्वार्थसिद्धि नामक शिविकापर आरूढ़ हुए। शीघ्र सहस्राम्र वनमें जाकर शिलापर बैठे हुए उत्तर दिशामें मुख किये हुए पद्मासनमें स्थित दीर्घनेत्रवाले वह, ज्येष्ठ माहके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन भरणी नक्षत्रमें अपराह्णके समय छठे उपवासके साथ दीक्षा ग्रहण करते हुए गुणवान् देवको मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हो गया। बताओ संयम भावसे क्या नहीं उत्पन्न होता? उन्होंने जिस केशभारको उखाड़ा था उसे इन्द्रने फूलोंसे अर्चित किया और क्षीरसमुद्रमें फेंक दिया। चक्रायुध प्रमुख एक हजार राजाओंने तत्काल संयम ग्रहण कर लिया। दूसरे दिन

---

५. १. A असि पहरणु सालहि; P असि चम्मु वि सालहि। २. P गेहवइ दंडु वि। ३. AP °संगमहरि। ४. A छक्खंडु। ५. AP पयासिउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गउ मंदरपुरु जिणु तवताविउ पियमित्तें राएं पाराविउ।
महि विहरंतु मुणियसत्थत्थउ सोलह वरिसइं थिउ छम्मत्थउ।
संतु दंतु भयवंतु सरिसिगणु पुणु आयउ तं सहसंबयवणु।

घत्ता—णवपत्तहु णंदावत्तहु तरुहि मूलि आसीणउ॥
खंचियदुहु सुरदिसिसंमुहु रिउमित्ते वि समाणउ॥ ६॥

७

पूसहु मासहु सोक्खणिवासहु।
दहमेदिणंतरि सियपक्खंतरि।
छट्ठववासें वियलियपासें।
दरसंझाऊइ जाइ वियालइ।
कम्मुणिवाइउ खणि उप्पाइउ।
केवलदंसणु दोसविहंसणु।
ध्रुवें सिवमाणणु केवलजाणणु।
कयमयविलएं कुरुकुलतिलएं।
कासवगोत्तें सुयसुइसोत्तें।
पत्तउं कित्तणु सिरिअरुहत्तणु।
दहविह वसुविह अवर वि वयविह।
सुर सोलहविह भूसणयरसिह।
गुणगणवंत्तं पंकयणेत्तं।

समताभावसे परिपूर्ण और तपसे सन्तप्त जिनवर मन्दरपुर नगर गये। प्रियमित्र राजाने उन्हें आहार कराया। ज्ञात कर लिया है शास्त्रार्थको जिन्होंने ऐसे वह धरतीपर विहार करते हुए सोलह वर्ष तक छद्मस्थभावमें स्थित रहे। शान्त, दांत, ज्ञानवान् वह ऋषिगणके साथ फिरसे उसी सहस्राम्रवनमें आये।

घत्ता—नये पत्तोंवाले नन्दावर्त वृक्षके नीचे बैठे हुए, दुःखोंका नाश करनेवाले पूर्वदिशामें मुख किये हुए, शत्रु तथा मित्रमें समान वह—॥६॥

७

पौष शुक्ल दशमीके दिन, बन्धनोंको काटनेवाले छठे उपवासके द्वारा, थोड़ी-थोड़ी सन्ध्या होनेपर उन्होंने कर्मोंका नाश कर दिया और एक क्षणमें दोषोंको नष्ट करनेवाला केवलज्ञान और शिवको माननेवाला केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। जिन्होंने मदका विलय किया है, ऐसे कुरुकुलके तिलक, कश्यप गोत्रीय, पवित्र शास्त्रोंके प्रवाहवाले उन्होंने श्री अरहन्त होनेका कीर्तन प्राप्त कर लिया। दस प्रकारके, आठ प्रकारके और भी पाँच प्रकारके, सोलह प्रकारके देव, (भूषण-

६. १. जिणतवताविउ २. A विरहंतु। ३. AP णवपत्तहु। ४. A सुरदिसिमुहु।
७. १. A °दियंतरि। २. AP जायवियालइ। ३. A कम्मणिवाइउ। ४. A धुउ; P धुव। ५. AP कयमलविलएं। ६. AP °गणवंतें; AP add after this: ससहरवत्तें। ७. AP °णेत्तें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अइरा[8]पुत्तं　　खमदमजुत्तं[9]।
खाइय[10]भावं　　संतिं देवं[11]।
ते[12] वंदंते　　[13]सुहुं झायंते।
पंजलिहत्था　　पणवियमत्था।
भत्तिरसाला　　विलुलियमाला।

घत्ता—मउ वज्जइ गई[14] पडिवज्जइ पंचिंदियइं वि दंडइ॥
पइं होंतें मग्गु दिसंतें जणु संसारि ण हिंडइ॥ ७॥

८

तओ कोसिएणं　　जसेणं सिएणं।
कयं मुक्क[1]डंभं　　महामाणखंभं।
महाधम्मलंभं　　महापंकयंभं।
महाखाइयालं　　महापुप्फमालं।
महाधूलिसालं　　महाणट्टसालं।
महासाहिवंतं　　महाकेउकंतं।
महावेइयम्मं　　महाथू[2]हहम्मं।
महादेवछण्णं　　महासाहुपुण्णं।
महारिद्धिरूढं　　महापीढ[3]पीढं।
महासोय[4]रत्तं　　महासेयछत्तं।
महाचामरिल्लं　　महादुंदुहिल्लं।

की किरणोंकी शिखावाले), गुणसमूहके पात्र, कमलनयन, ऐरापुत्र क्षमा और संयमसे युक्त; क्षायिकभाववाले शान्तिदेवकी वे वन्दना करते हैं, उनका शुभ ध्यान करते हैं, हाथकी अंजलि बाँधे हुए, मस्तक झुकाये हुए, भक्तिसे मीठे और मालाएँ हिलाते हुए।

घत्ता—जन मदका त्याग करता है, मोक्षगतिको स्वीकार करता है, पाँचों इन्द्रियोंको दण्डित करता है, आपके रहनेपर और उपदेश देनेपर वह (जन) संसारमें परिभ्रमण नहीं करता ॥७॥

८

तब यशसे श्वेत इन्द्रने दम्भसे मुक्त महामानस्तम्भ बनवाया जिसमें महाधर्मकी प्राप्ति है, महाकमलोंका जल है, जो महान् खाइयोंसे सहित है, जिसमें महानृत्यशाला है, जो महावृक्षोंसे युक्त है, जो महाध्वजोंसे सुन्दर है, जो महावेदिकाओंकी रचनासे युक्त है, जिसमें स्थूल प्रासाद हैं, जो महादेवोंसे व्याप्त हैं, जो महामुनियोंसे सम्पूर्ण है, महाऋद्धियोंसे प्रसिद्ध है, महासिंहासनोंसे युक्त है, महान् अशोक वृक्षोंसे आरक्त है, महाश्वेतछत्रोंवाला है, महाचामरोंसे युक्त है,

८. AP °पुत्तें। ९. A omits खमदमजुत्तं; P adds : दोसविचत्तं। १०. AP °भावें। ११. AP देवें। १२. A तं वंदंति; P तें वंदंतें। १३. A मुहुं जोयंतें; P सुहुं जोयंतें। १४. A मइ।

८. १. AP मुक्कदंभं। २. A °थूलहम्मं। ३. AP सीहवीढं। ४. AP महासोयवंतं।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

महापुप्फवासं महादिव्वभासं ।
महादित्तिवंतं महंतं पवित्तं ।

घत्ता—पडिहारहिं णायकुमारहिं सेविज्जंतु दयावरु ॥
गंभीरहिं हयजयतूरहिं समवसरणु गउ जिणवरु ॥ ८ ॥

९

अक्खइ धम्मु कम्मु ओसारइ सत्त वि तच्चइं जणहु वियारइ ।
अट्ठइ धरणिहिं माणु पयासइ सग्गविमाणहं पंतिउ भासइ ।
पायालंतरि भवणसहासइं चलणिच्चलइं मि जोइसवासइं ।
जीवकम्मपोग्गलपरिणामइं कहइ भडारउ णाणाणामइं ।
चक्काउहपहुइ तहु गणहर जाया छत्तीस वि जणमणहर ।
अट्ठसयइं पुव्वंगवियाणहं रिसिहिं कट्ठतणकणयसमाणहं ।
एकतालसहसइं वसुसमसय सिक्खसुदिक्खसिक्खपारंगय ।
सहसइं तिण्णि अवहिणाणालहं चउ केवलिहिं पि हियतमजालहं ।
विक्किरियावंतहं छह भणियइं मणपज्जवधराहं चउ गणियइं ।
वाइहिं दोसहसाइं णिरुत्तइं सयचउक्कु अग्गलउ पउत्तइं ।

महादुन्दुभियोंसे परिपूर्ण है, महापुष्पोंकी वाससे युक्त है, महादिव्यभाषासे पूर्ण है, महादीप्तिसे युक्त है और महान् पवित्र है।

घत्ता—प्रतिहार नागकुमार देवों द्वारा सेवित दयावर जिनवर शान्तिनाथ गम्भीर आहत विजय तूर्योंके साथ समवसरणके लिए गये ॥८॥

९

वह धर्मका कथन करते हैं, कर्मका निवारण करते हैं, जनके लिए सातों तत्त्वोंका विचार करते हैं, आठवीं भूमि (मोक्षभूमि) का मान प्रकाशित करते हैं, स्वर्गके विमानोंकी पंक्तिका कथन करते हैं, पातालके भीतर हजारों भवनवासियों, चल और निश्चल ज्योतिषवासियों, जीवकर्म और पुद्गलके परिणामोंका नाना नामोंसे आदरणीय वह वर्णन करते हैं। चक्रायुध आदिको लेकर उनके जनमनोंके लिए सुन्दर छत्तीस गणधर थे। पूर्वांगोंको जाननेवाले तथा काष्ठ तिनका और सोनेको समान समझनेवाले आठ सौ ऋषि थे। शिक्षा और दीक्षाकी सीखमें पारंगत एकतालीस हजार आठ सौ थे। अवधिज्ञानको धारण करनेवाले तीन हजार थे, तमजालको नष्ट करनेवाले केवली चार हजार। विक्रियाऋद्धिके धारक छह हजार थे और मनःपर्ययज्ञानके धारी चार हजार। और दो हजार श्रेष्ठ वादी मुनि थे।

५. A महा दित्तदित्तं; P महादित्तिदित्तं। ६. A समवसरणगउ।

९. १. A अट्ठमिधरणिहि; । २. AP °विवाणहं। ३. A °परिमाणइं। ४. P जि। ५. A सिक्खयदिक्खसिक्ख°। ६. A केवलिहि पहयतम°; P केवलिहि मि हयतम°। ७. A °वत्तहं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—हरिसेणहि वय[8]विहिखीणहि पायपोमथुइरायइं ।।
णरमहियइं तिस[9]यहि सहियइं सट्ठिसहासइं जायइं ।। ९ ।।

१०

झाणमोणणियमियणियमइयउ पत्तियाउ भणियउ संजइयउ ।
लक्खइं दुइ सावयहं स[1]लग्घहं सुरकित्तीपमुहहं णिव्विग्घे[2]हं ।
अरुहदासिपमुहाहं सुइ[3]त्तइं सावईहिं चउलक्खइं वुत्तइं ।
देव असंख संख मृग[4]कुलरुह एक्कदुखुर गयवय जाया बुह ।
पंचवीससहसइं वोलीणइं वरिसहं सोलहवरिसविहीणइं ।
हिंडिवि महियलि धम्मु कहेप्पिणु माससमेत्तु जीविउ जाणेप्पिणु ।
गिरिसंमेयारुहणु करेप्पिणु चरमसुक्कु दियहेहिं धरेप्पिणु ।
जेट्ठचउद्दसिवासरि का[5]लइ भरणिरिक्खि धरणीमुहि विमलइ ।
गउ जगसिहरहु संति भडारउ देउ समाहि बोहि भवहारउ ।
सहुं चक्काउहेण तवे[6]रिद्धइं णवस[7]हसइं रिसिणाहहं सिद्धइं ।

घत्ता—सु[8]विलेवणु घल्लिवि कुसुमइं मेल्लिवि पणविउ तहिं अग्गिदहिं ।।
मणि ईहिय सिद्धणिसीहिय णविय भरेण सुरिंदहिं ।।१०।।

घत्ता—व्रतोंकी विधिसे क्षीण हरिषेणा आदि आर्यिकाएँ साठ हजार तीन सौ थीं। जिसके चरण राजाओंके द्वारा स्तुत थे और जो देवों सहित मनुष्यों द्वारा पूज्य थीं ।।९।।

१०

ध्यान और मौनसे जिन्होंने अपनी मति संयत कर ली है ऐसे संयमी और श्लाघनीय, सुरकीर्ति-प्रमुख विघ्न रहित दो लाख श्रावक थे। अर्हद्दासी आदिको लेकर चार लाख पवित्र श्राविकाएँ कही गयी हैं। देव असंख्यात थे और तिर्यंचयोनिके पशु संख्यात थे। एक दो खुरवाले ज्ञानव्रतसे युक्त पण्डित। सोलह वर्ष रहित पचीस हजार वर्ष बीत गये। धरती तलपर भ्रमण कर और धर्मका कथन कर तथा अपना जीवन एक माह शेष जानकर, सम्मेदशिखर पर्वतपर आरोहण कर कुछ दिनों तक चरम शुक्लध्यान धारण कर, ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशीके दिन, भरणी नक्षत्रमें पवित्र धरतीके अग्रभागमें विश्वके शिखरपर आदरणीय शान्तिनाथ चले गये। भवका हरण करनेवाले देव मुझे समाधि प्रदान करें। तपसे समृद्ध नौ हजार मुनिनाथ भी चक्रायुधके साथ सिद्ध हो गये।

घत्ता—सुन्दर लेप कर, फूल डालकर वहाँ अग्नीन्द्र देवोंने प्रणाम किया (शवका)। देवेन्द्रोंने भी मनमें अभीप्सित सिद्ध नृसिंह उनको प्रणाम किया ।।१०।।

८. AP °विहिलीणहि। ९. P तिसई सहियइं।

१०. १. P सलग्घइं। २. P णिविग्घइं। ३. A सुवत्तइं। ४. AP मिग°। ५. A बहुलइ। ६. AP गुणरिद्धइं। ७. A णवसयाइं। ८. AP कालायरु घल्लिवि सुरतरु दिण (ण्ण ?) अग्नि अग्गिदहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

णेवु[1] सिरिसेणु पुणु वि जो कुरुणरु देउ खयरु सुरु हलि पवरामरु।
वज्जाउहु[2] सुरवइ घणसंदणु सव्वत्थाहिवु अइरहि णंदणु।
दरिसउ मज्झु सयलु सयलायरु होउ पडंतहु लहु लग्गणतरु।
देवि अणिंदिय कुरुणरु[3] माणउ सुरु सिरिविजउ[4] महीयलराणउ।
अमयासउ अणंतवीरिउ हरि णारउ जोइयवइतरणीसरि।
मेहणाउ पडिहरि सहसाउहु कप्पणाहु दढरहु पहसियमुहु।
पुणु सव्वत्थसिद्धि परमेसरु चक्काउहु सुहुं देउ रिसीसरु।
संति भंति विहुणेवि महारी करउ कसायसंति गरुयारी।
घत्ता—भरहेसरु जियसरु मुणिपवरु जहिं गउ जिण तुहुं तेत्तहि॥
मइं पावहि सिद्धालयमहि पुप्फयंतरुइ[5] जेत्तहि॥११॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे संतिणाहणिव्वाणगमणं णाम तिसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥६३॥

११

कुरुमानव जो राजा श्रीषेण थे, वह देव (भोगभूमिमें) विद्याधर, देव फिर प्रवर अमर, वज्रायुध, इन्द्र, मेघरथ, फिर सर्वार्थसिद्धिमें अहमेन्द्र और फिर ऐराके पुत्र (शान्तिनाथ) हुए। वह मुझे समस्त सकलाचार दिखायें और गिरते हुए मुझे आधारस्तम्भ हों, और जो अनिन्दिता देवी कुरुकी नर हुई थी, फिर श्रीविजयदेव, फिर महीतलका राजा, अमृताशय अनन्तवीर्य, नारायण, वैतरणी नदीको देखनेवाला नारकी, मेघनाद प्रतिनारायण, फिर सहस्रायुध, कल्पदेव, प्रहसितमुख दृढ़रथ, फिर सर्वार्थसिद्धिका देव और तब परमेश्वर चक्रायुध ऋषीश्वर देव सुख दें। हमारी विद्यमान भ्रान्तिको नष्ट कर वे मेरी भारी कषायशान्ति करें।

घत्ता—हे जिन, कामको जीतनेवाला मुनिप्रवर भरतेश्वर जहाँ गया, और जहाँ आप गये हैं, और जहाँ चन्द्र और सूर्यके समान दीप्ति है, वह सिद्धालयभूमि मुझे प्राप्त करा दो ॥११॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यमें शान्तिनाथ निर्वाण गमन नामका त्रेसठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६३॥

११. १. AP णिउ। २. A विज्जाउहु। ३. P कुरुतणुमाणउ। ४. AP सिरिविज्जउ महियलि। ५. AP पुप्फदंत°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६४

जिणगिरिपवरहु णीसरिय बारहंगपाणियसरि ॥
पुव्वमहण्णवगामिणिय पणवेप्पिणु वाईसरि ॥ ध्रुवकं ॥

१

जो भुवणि भणिउ छट्ठउ णिराउ जो हियवएण णिच्चु जि णिराउ ।
जो इंदियकूराहिहिं विराउ जो सत्तारहमउ जिणु विराउ ।
जो ण मरइ ण हवइ कालएण जो[1] को जाणिज्जइ कालएण ।
घणमणतिमिरें अलिकालएण ण समंकिउ[3] जो कंकालएण ।
जो णग्गु णिरंजणु लुंकवालु[4] जो ण करइ करि कत्तियंकवालु[5] ।

सन्धि ६४

जो जिनवररूपी श्रेष्ठ पर्वतसे निकली है, जो बारह अंगोंके जलकी नदी है, जो (चौदह) पूर्वरूपी समुद्रकी ओर जानेवाली है, ऐसी वाग्देवीको मैं प्रणाम करता हूँ।

१

जो संसारमें छठे चक्रवर्ती हैं, जो हृदयसे नित्य वीतराग हैं, जो इन्द्रियरूपी क्रूर सांपोंके लिए विराड् (वीराज = गरुड़) हैं, और जो सत्तरहवें वीतराग जिन हैं। जो कालके साथ न मरते हैं और न जन्म लेते हैं, जो कालको परमज्ञानसे जान लेते हैं, जो सघन मनरूपी अन्धकार, भ्रमरके समान कृष्णत्व और मृग कलेवर (चर्म) से अंकित नहीं हैं, जो नग्न निरंजन और लोकपाल

All Mss. have, at the beginning of this saṃdhi, this following stanza:—

आखण्डोड्डमरारवोद्दमरुकं (?) चण्डीशमाश्रित्य यः
कुर्वन्काममकाण्डताण्डवविधिं डिण्डीरपिण्डच्छविम् ।
हंसाडम्बरमुण्डमण्डललसद्भ्रागोरथोनायकं
वाञ्छन्नित्यमहं कुतूहलवती खण्डस्य कीर्तिः कृतेः ॥ १ ॥

P reads °डमरारुचण्डमरुकं; P reads चण्डोसमासत्य; K reads चण्डीसमासृत्य । P reads कुर्वत्काम°; A reads कुर्वत्क्रीड°; P reads °छवेः । A reads डिण्डमण्डल° । P reads कृते । K has marginal gloss on the stanza: अखण्ड एव आखण्डः, उड्डमरो भयानकः, आरवशब्दः तेन युक्तं उड्डमरुकं वाद्यं यस्य हरस्य तम् । अकाण्ड° अप्रस्तावेन । रुद्रमाश्रित्य या कीर्तिर्वर्तते इत्यध्याहार्यम् । रुद्रादप्यहं अतिशयेन निर्मला इति भावार्थः । कृतेः काव्यस्य । The stanza, all the same, is not clear.

१. १. A जो जाणिज्जइ इह कालएण । २. A अइकालएण । ३. A चमंकिउ । ४. A लुवकवालु । ५. AP कत्तियकरालु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जें वुत्तु अहिंसावित्तिसुत्तु [6]जो गणिवि ण[7] याणइ अक्खसुत्तु ।
जो दंसियसासयपरममोक्खु णउ करइ पिणाएं कंडमोक्खु ।
जो तिउरडहणु जियकामदेउ पहु परमप्पउ देवाहिदेउ ।
जें रक्खिउ सण्हु वि जीउ कुंथु सो वंदिवि रिसिपरमेट्ठि कुंथु ।
पुणु कहमि कहंतरु दिव्वु तासु दालिद्दुक्खदोहग्गणासु ।

घत्ता—एत्थु जि जंबू[8]दीववरि पुव्वविदेहि महाणइ ॥
णामें सीय सलक्खणिय तं को वण्णहुं जाणइ ॥ १ ॥

२

तहि दाहिणतीरइ वच्छदेसि डिंडीरपिंडपंडुरणिवासि ।
सोहिल्लसुसीमाणयरि रम्मि अणवरयमहारिसिकहियधम्मि ।
सीहरहु सीहविक्कमु महंतु णरवइ णियारिकुलबलकयंतु ।
अणुहुंजिवि भोउ[1] सुदीहकालु जोयंतें कहिं मि णहंतरालु ।
णिवडंत[2] णिहालिय तेण उक्क संसारिणि रइ णीसेस मुक्क ।
जइवसहहु पासि हयत्तिएहिं पावइयउ सहुं बहुखत्तिएहिं ।
एयारहंगधरु सीलवंतु वणि णिवसइ रुक्खु व अणलवंतु ।
तिणि[3] कणि सचित्ति णउ चरणु देइ वयविहिअजोग्गु दिण्णु[4] वि ण लेइ ।

हैं, जो हाथमें छुरी और खप्पर नहीं लेते। जिन्होंने अहिंसा-वृत्तिके सूत्रोंका कथन किया है, जो अक्षसूत्रोंको गिनना नहीं जानते, जिन्होंने शाश्वत परम मोक्षको देखा है, जो अपने धनुषसे तीरोंको नहीं छोड़ते, जो त्रिपुरका दाह करनेवाले और कामदेवको जीतनेवाले हैं, जो प्रभु परमात्मा और देवाधिदेव हैं, जिन्होंने सूक्ष्मजीवकी भी रक्षा की है, ऐसे उन ऋषि परमेष्ठी कुन्थु जिनकी वन्दना कर, मैं फिर दारिद्र्य दुःख और दुर्भाग्यको नष्ट करनेवाले उनके दिव्य कथान्तरको कहता हूँ।

घत्ता—इस श्रेष्ठ जम्बूद्वीपके पूर्वविदेहमें लक्षणोंवाली महानदी सीता है। उसका वर्णन करना कौन जानता है ? ॥१॥

२

उसके दक्षिण किनारेपर वत्स देश है, जहाँके निवासगृह फेनसमूहके समान धवल हैं, जो शोभित सीमाओं और नगरोंसे सुन्दर हैं। जहाँ महामुनियों द्वारा अनवरत रूपसे धर्मका कथन किया जाता है। उसमें अपने शत्रुकुलके बलके लिए यमके समान सिंहके समान विक्रमवाला राजा सिंहरथ था। लम्बे समय तक भोगोंको भोग चुकनेके बाद किसी समय आकाशके अन्तरालको देखते हुए उसने एक टूटते हुए तारेको देखा, उसकी संसारमें रति नष्ट हो गयी। जिन्होंने पीड़ाओंको आहत किया है, ऐसे अनेक क्षत्रियोंके साथ यतिवृषभ मुनिके पास वह प्रव्रजित हो गया। ग्यारह अंगोंको धारण करनेवाले शीलवान् वह वनमें वृक्षकी तरह मौन रूपसे निवास करते हैं। संचित कण और तृणपर वह पैर नहीं रखते। दी हुई जो चीज व्रतविधिके अयोग्य है, वे उसे

६. A omits this foot. ७. P ण जाणइ । ८. P जंबूदीवि वरि ।
२. १. A भोय । २. AP णिवडंति । ३. A तणे । ४. A दिण्णउ ण लेइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधिवि तित्थंकरणामकम्मु मउ उवरिमिल्लु ससिबिंबसोम्मु ।
पत्तउ पंचाणुत्तरविमाणु मुंजिवि तेत्तीसजलणिहिपमाणु ।
छम्मास परिट्ठिउ आउ जाम वइसवणहु कहइ सुरिंदु ताम ।
घत्ता—दीवि पहिल्लइ पविउलइ भरहि देसु कुरुजंगलु ॥
गयउरि महिवइ तहिं वसइ सूरसेणु जेंगमंगलु ॥ २ ॥

३

कुरुकुलरुहुं सिरिजयसिरिणिकेउ कासवगोत्तें भूसिउ सुतेउ ।
सिरिकंत कंत कमणीयरूय सुरखयरणियंबिणितिलयभूय ।
णरणाहहु सा वल्लहिय केव सुवियड्ढहु वरकइवाणि जेव ।
एयहुं दोहं मि होही ण भंति जिणु कुंथु णाम केवलि कहंति ।
करि पुरवरु घरुं णंदणवणालु पुज्जिज्जइ भत्तिइ सामिसालु ।
तं णिसुणिवि धणएं तं विचित्तु किउ णयरु कणयमाणिक्कदित्तु ।
पवणुद्धुयपहकप्पूरपंसु सरंसरिनीरंतररमियहंसु ।
पासायचूलियालिहियमेहु गयणुंग्गयसुरहियधूंमरेहु ।
घत्ता—सुहुं सुत्ती रयणिहि सयणि बालहंसगयंगामिणि ॥
पच्छिमजामइ सोलह वि पेच्छइ सिविणय सामिणि ॥ ३ ॥

ग्रहण नहीं करते। तीर्थंकर नामक प्रकृतिका बन्ध कर वे मर गये तथा वे ऊपर चन्द्रबिम्बके समान सौम्य पाँचवें अनुत्तर विमानमें पहुँचे। वहाँ तैंतीस सागर प्रमाण आयु भोगते हुए जब छह माह आयु शेष रह गयी, तो इन्द्र कुबेरसे कहता है।

घत्ता—पहले द्वीप जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें कुरुजांगल देश है। वहाँ हस्तिनापुरमें जगमंगल राजा सूरसेन राजा है ॥२॥

३

कुरुकुलका अंकुर तथा विजयश्रीका घर तेजस्वी वह कश्यपगोत्रसे विभूषित था। उसकी कान्ता श्रीकान्ता अत्यन्त कमनीय रूपवाली और सुर विद्याधर-स्त्रियोंमें तिलकस्वरूप थी। राजाके लिए वह वैसी ही प्रिया थी जैसे सुविदग्धोंके लिए वरकविकी वाणी प्रिय होती है। इन दोनोंके जिन कुन्थुके नामसे उत्पन्न होंगे, इसमें भ्रान्ति नहीं है, ऐसा केवली कहते हैं। तुम नगर, घर और नन्दनवनकी रचना करो और भक्तिसे स्वामी श्रेष्ठकी पूजा करो। यह सुनकर कुबेरने स्वर्ण और माणिक्योंसे प्रदीप्त विचित्र नगरकी रचना की। जिसमें हवासे पथमें कपूरकी धूल उड़ती है, जिसके सर-नदीके नीरके भीतर हंस रमण करते हैं, जिसके प्रासादोंके शिखर मेघोंको छूते हैं, जहाँ सुरभित धूम्र रेखाएँ आकाश तक उठी हुई हैं।

घत्ता—शय्यातलपर सुखसे सोयी हुई बालहंसगामिनी स्वामिनी श्रीकान्ता रात्रिके अन्तिम प्रहरमें सोलह स्वप्न देखती है ॥३॥

५. AP जयमंगलु ।

३. १. A °कुलरुहजयसिरिसिरि° । २. A सुकेउ । ३. AP णरणाहहु तहु वल्लहिय । ४. AP घर । ५. A पवणुद्धयपंकयरयविमीसु; P पवणुद्धयपहकप्पूरफंसु । ६. AP सरिसर° । ७. A गयणग्गय° । ८. P धम्मरेहु । ९. A सुहसुत्ती । १०. P °गइगामिणि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

वारणं मयालीणछप्पयं गोवइं खुरुब्भिण्णवप्पयं[1] ।
केसरिं गलालंबिकेसरं गोमिणी[2] सुमालाजुयं वरं ।
उग्गयं हिमंसुं[3] दिणेसरं रत्तमीणजुम्मं रईसरं ।
सायकुंभकुंभाण संघडं[4] पंकयायरं लच्छिपायडं ।
खीरवारिरासिं महारवं विट्ठरं सकंठीरवं णवं ।
मंदिरं सुराणं विहावियं णायगेहमहिरायसेवियं ।
मेलयं मणीणं विचित्तयं[5] झत्ति धूमकेउं पलित्तयं ।
राइछेयए संविउद्धिया सा णिवस्स वज्जरइ मुद्धिया ।
रत्तियाविरामे णियच्छियं दंसणावलिं कयसुहच्छियं ।
कहइ तीइ तिस्सा फलं पई होहिही[6] तुहं सुउ महामई ।
इंदचंदणाइंदवंदिओ दिव्वणाणि णिज्जियमणिंदिओ ।
चक्कवट्टि भोत्तूण भूयलं पाविही पयं परमणिक्कलं ।

घत्ता—तं णिसुणिवि संतुट्ठ[7] सइ आइय मंदिरु मीणइ ।।
बुद्धि लच्छि सिरि कंति हिरि दिहि कित्ति वि लीलागइ ।। ४ ।।

५

कय धणएं दरिसियसुयणतुट्ठि छम्मासु जाम ता रयणवुट्ठि[1] ।
सावणमासंतरि कसणपक्खि दहमइ दिणि माणवजणियसोक्खि ।

४

जिसके मदमें भ्रमर लीन हैं ऐसा गज, अपने खुरोंसे वप्रक्रीड़ा करता हुआ बैल, गले तक लटकती हुई अयालवाला सिंह, लक्ष्मी, सुन्दर मालाका उत्तम युग्म, उगता हुआ चन्द्र और सूर्य, खेलता हुआ रक्त मीनयुगल, स्वर्णकुम्भोंका युग्म, शोभाको प्रकट करता हुआ सरोवर, महाशब्दवाला क्षीरसमुद्र, नव सिंहासन, देवोंका विमान, नागराजोंसे सेवित नागभवन, मणियोंका विचित्र संगम और शीघ्र ही प्रदीप्त अग्निको उसने देखा। रात्रिका अन्त होनेपर जागी हुई वह मुग्धा राजासे कहती है कि रात्रिके अन्तमें मैंने शुभ और इच्छितको करनेवाली स्वप्नावली देखी है। पति उससे उसका फल कहता है कि तुम्हारा महामतिमान् पुत्र होगा। इन्द्र-चन्द्र और नागेन्द्रसे वन्दित दिव्यज्ञानी मन और इन्द्रियोंके विजेता, चक्रवर्ती जो भूतलका भोगकर परम निष्कल पद (मोक्षपद) प्राप्त करेगा।

घत्ता—यह सुनकर वह सती सन्तुष्ट हुई। मेनका उसके घर आयी। बुद्धि-लक्ष्मी-श्री-कान्ति-ह्री-धृति और लीलागति कीर्ति भी ।।४।।

५

कुबेरने सुजनको सन्तुष्ट करनेवाली रत्नवृष्टि छह माह तक की। श्रावण माहके कृष्णपक्षमें

---

४. १. A खुरविभिण्ण° । २. AP गोमिणि । ३. A हिमेसुं । ४. P संघणं । ५. A मेलयं विचित्तं मणीणयं ६. AP तुहं सुओ पहोही महामई । ७. A संतुट्ठमइ ।

५. १. A रयणविट्ठि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कत्तिय[2]णक्खत्ति णिसाविरामि थिउ गब्भि भडारउ पउरधामि ।
सीहरहु राउ अहमिंदु देउ वण्णिज्जइ किं णिव्वाणहेउ ।
वणवासहिं घल्लियकब्बुरेहिं थुउ इंदपडिंदाइहिं सुरेहिं ।
गइ संतिणाहि मलदोसहीणि पल्लोवमद्धि सायरि वि खीणि ।
वइ[3]साहमासि पडिवयहि दियहि अग्गेयजोइ णरणाहपियहि ।
जायउ[4] जिणु कयतइलोक्कखोहु सुरवइ संपत्तु ससुरवरोहु ।
णिउ सुरगिरिसिरु सुरणाहणाहु णाणत्तयसलिलवरंभवाहु ।
घत्ता—सिंचिवि खीरघडेहिं जिणु अंचिउ णवसयवत्तहिं ॥
इंदें रुंदाणंदयरु जोइउ दससयणेत्तहिं ॥ ५ ॥

६

वंदिवि पुणु णामु कहिवि[1] कुंथु लंघेप्पिणु दीहरु पवणपंथु ।
पुरु आविवि जणणिहि दिण्णु बालु गउ सग्गहु हरि सुर[2]चक्कवालु ।
पोढत्तभावि थिउ कणयवण्णु कंतीइ पुण्णचंदु व पसण्णु ।
पहु पंचतीसधणुतुंगकाउ सिरिलंछणु जयदुंदुहिणिणाउ ।
तेवीससहसवरिसहं सयाइं सत्तेव सपण्णासइं गयाइं ।
चरणंभोरुहण[3]मियामरासु णियबालकलीलाइ तासु ।
पुणु तेत्तिउ मंडलियत्तणेण तेत्तिउ जि चक्कपरियत्तणेण ।

दसमीके दिन मानवोंको सुख देनेवाले कार्तिक नक्षत्रमें निशाके अन्तमें आदरणीय वह सिंहरथ राजा अहमेन्द्र देव प्रवरधाम और गर्भमें आकर स्थित हो गया। उसके निर्वाणके कारणका क्या वर्णन किया जाये? जिन्होंने स्वर्णकी वर्षा की है ऐसे वनवासियों, इन्द्र-प्रतीन्द्रों आदि देवोंके द्वारा उनकी स्तुति की गयी। मलदोषसे रहित शान्तिनाथ तीर्थंकरके बाद लक्ष्मी उत्पन्न करनेवाला आधा पल्य समय बीतनेपर वैशाख शुक्ल प्रतिपदाके दिन राजाओंको प्रिय आग्नेय योगमें त्रिलोकको क्षोभ उत्पन्न करनेवाले जिनका जन्म हुआ। सुरवर-समूहके साथ इन्द्र भी उपस्थित हुआ। देवेन्द्रोंके नाथ और ज्ञानरूपी सलिलके श्रेष्ठ मेघ उनको सुमेरु पर्वतपर ले जाया गया।

घत्ता—वहीं क्षीरके घड़ोंसे अभिषेक कर फिर उनको नवकमलोंसे अंचित किया। इन्द्रने विशाल आनन्द उत्पन्न करनेवाले उन्हें हजार नेत्रोंसे देखा ॥५॥

६

फिर वन्दना कर, उनका नाम कुन्थु कहकर, लम्बे पवन-पथको पार कर, नगरमें आकर और बालक माँको देकर देवसमूहका पालक इन्द्र चला गया। स्वर्ण रंगवाले वह प्रौढ़ताको प्राप्त हुए। कान्तिमें वह पूर्णचन्द्रके समान प्रसन्न थे। स्वामी पैंतीस धनुष प्रमाण ऊँचे थे। वह श्रीलांछन और जय-जय दुन्दुभि निनादसे युक्त थे। जिनके चरण-कमलोंमें देव नमित हैं, ऐसे उनके नृपबाल क्रीड़ामें तेईस हजार सात सौ पचास वर्ष बीत गये। फिर इतने ही वर्ष अर्थात् तेईस हजार सात सौ पचास वर्ष राज्य करते हुए और इतने ही वर्ष (२३७५०) चक्रवर्तित्वमें,

२. AP कित्तिय° । ३. A वइसाहमासि पडिवयइ दियहि; P वइसाहमासि सेयपडिवयहि दियहि ।
४. AP जायउ जिणिंदु तेलोक्कखोहु ।
६. १. AP करिवि । २. A सुरु चक्कवालु । ३. AP °णविय° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जइयहुं परिछिण्णउ कालु दीहु　　तइयहुं परमेसरु पुरिससीहु ।
गउ कहिं मि वणंतरु रमणकामु　　दिट्ठउ रिसि तेण तवेण खामु ।
मत्तंडचंडकिरणइं सहंतु　　दुम्मुक्कजम्मविलसिउ महंतु ।
घत्ता—सो तज्जणियइ दंसियउ मंतिहि तेण णरिंदें ॥
जोयहि दुच्चरु तवचरणु चिण्णउं एण रिसिंदें ॥ ६ ॥

७

छड्डिवि कुडंबु कुविडंबु सव्वु　　छड्डिवि कुलबलु छलमाणगव्वु ।
वणि पइसिवि णिहसिवि इंदियाइं　　अवगण्णिवि दुज्जणणिंदियाइं ।
चंगउ ववसिउ जइपुंगमेण　　लइ हउं मि जामि एण जि कमेण ।
तं णिसुणिवि मंतें वुत्तु एम　　एयइ णिट्ठइ तउ करिवि देव ।
जाएसइ कहिं णिम्मुक्कगंथु　　तं णिसुणिवि भासइ देउ कुंथु ।
जाएसइ तहिं जहिं भूयगामु　　णउ पहवइ लोहु ण कोहु कामु ।
जाएसइ तहिं जहिं हेमकंति　　गउ परमप्पउ परमेट्ठि संति ।
हो हउं मि पवज्जमि तेत्थु तेम　　ण णियत्तमि कालें कहिं मि जेम ।
घरु आवेप्पिणु संसरासईहि　　ता पडिबोहिउ सुरवरजईहिं ।
अहिसेउ विरइउ पुरंदरेण　　कुलि णिहिउ सतणुरुहु जिणवरेण ।
घत्ता—सिवियहि तेणारुहणु किउ विजयहि विजयपयासहि ॥
णाणामणिसिहरुज्जलहि लग्गखगाहिवतियसहि ॥ ७ ॥

इस प्रकार जब उनका लम्बा समय निकल गया, तब वह पुरुष श्रेष्ठ परमेश्वर रमण करनेकी इच्छासे कहीं भी वनान्तरमें चले गये। वहाँ उन्होंने तपसे क्षीण एक मुनिको देखा—सूर्यकी प्रचण्ड-किरणोंको सहन करते हुए महान् तथा जन्मकी चेष्टाओंसे मुक्त।

घत्ता—उस राजाने अपनी तर्जनीसे मन्त्रियोंके लिए उन्हें बताया कि देखो इन ऋषीन्द्रने कठोर तपका आचरण किया है ॥६॥

७

कुत्सित विडम्बनावाले सब कुटुम्बको छोड़कर; कुलबल, कपट, मान और गर्वको छोड़कर, वनमें प्रवेश कर, इन्द्रियोंका उपहास कर, दुर्जनोंकी निन्दाकी उपेक्षा कर इन यतिश्रेष्ठने बहुत अच्छा किया। लो मैं भी इसी परम्परासे जाता हूँ। यह सुनकर मन्त्रीने इस प्रकार कहा—"हे देव, इस निष्ठासे तपकर परिग्रहसे रहित, यह कहाँ जायेंगे ?" यह सुनकर कन्थु देव कहते हैं—कि वह वहाँ जायेंगे जहाँ प्राणिसमूहको लोभ, क्रोध और काम प्रभावित नहीं करते। वहाँ जायेंगे जहाँ स्वर्णकान्ति शान्तिजिन परमेष्ठी हों, मैं भी उसी प्रकार वहाँ जाऊँगा, जहाँसे समयके साथ वापस नहीं आऊँगा। तब घर आकर लौकान्तिक देवोंने अपनी वाणीमें उन्हें सम्बोधित किया। इन्द्रने अभिषेक किया। जिनवरने अपने पुत्रको कुलपरम्परामें स्थापित किया।

घत्ता—उन्होंने विजयको प्रकाशित करनेवाली, नाना मणिशिखरोंसे उज्ज्वल तथा जिसमें विद्याधर राजा और देव लगे हुए हैं, ऐसी शिविकामें आरोहण किया ॥७॥

४. AP दुक्कम्मजम्म° । ५. A दुद्धरु ।

७. १. A कुटुंबु । २. A सुसरासईहि; KT recard: सुसुहासईहिं इति पाठे अतीव शोभनभाषिभिः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

८

वणि विउलि सहेउयरुक्खणीलि　णियजम्ममासपक्खंतरालि ।
दिणि तम्मि चेय विच्छुलियपंकि　कित्तियणक्खत्तासिइ ससंकि ।
वेउ लइउ लइवि छट्ठोववासु　तें सहुं पव्वइयउं णिवसहासु ।
संसारि सणेहु ण किं पि बद्धु　मणपज्जउ णाणु जिणेण लद्धु ।
बीयइ दिणि दिणयरकयपयासि　परिभमइ णाहु णरवासवासि ।
गयउरि दाविउ आहारु चारु　थिउ धम्ममित्तघरि हयवियारु ।
अमरहिं घल्लिय मंदारयाइं　विहियइं पंच वि अच्छेरयाइं ।
सोलहवरिसइं तउ तिव्वु चरिवि　भवभामिरु दुक्कियभाउ हरिवि ।
दिक्खावणि पत्ति चइत्ति मासि　चंदिणि तइयइ दिणि सुहणिवासि ।
कयछट्ठें तिलयतलासिएण　खणि खीणकसाएं जससिएण ।
अप्पेणप्पाणउं मुणिउं तेण　उग्गमिएं णाणें केवलेण ।
परिजाणिउं तिजगु अणंतु गयणु　जायउ सजोइजिणु अचलणयणु ।

घत्ता—दिव्वंबरदिव्वाहरणइं सुर णमंति चउपासहिं ॥
पुणु वि पुरंदरु अवयरिउ णाणाजाणसहासहिं ॥ ८ ॥

९

थिओ समवसरणि　सया विउससरणि ।
जिणो विहियकरुणो　हयावरणमरणो ।

८

सहेतुक वृक्षोंसे हरे विशाल वनमें अपने जन्मके अन्तराल और दिनमें (अर्थात् वैशाख शुक्ला प्रतिपदाके दिन) चन्द्रमाके कृत्तिका नक्षत्रमें स्थित होनेपर छठा उपवास करते हुए उन्होंने व्रत ग्रहण कर लिया। उनके साथ एक हजार लोग और प्रव्रजित हुए। उन्होंने संसारके प्रति कुछ भी स्नेह नहीं रखा, जिननाथने मनःपर्ययज्ञान प्राप्त कर लिया। दूसरे दिन, दिनकर द्वारा जिसमें प्रकाश किया गया है, ऐसे हस्तिनापुरमें स्वामी घर-घर परिभ्रमण करते हैं। हतविकार वह धर्ममित्रके घर ठहर गये। वहाँ उन्हें सुन्दर आहार दिया गया। देवोंने मन्दारपुष्प बरसाये और पाँच आश्चर्य प्रकट किये। सोलह वर्ष तक तीव्र तपका आचरण कर संसारमें परिभ्रमण करानेवाले पापभावको नष्ट कर वह शुभ निवास दीक्षा वनमें पहुँचे। चैत्रमाहके शुक्ल पक्षकी तृतीयाके दिन तिलक वृक्षके नीचे स्थित यशसे श्वेत छठा उपवास करनेवाले क्षीणकषाय उन्होंने आत्मासे आत्माका ध्यान किया। उत्पन्न हुए केवलज्ञानसे उन्होंने त्रिलोक और अनन्त आकाश जान लिया। अचल नेत्र जिन ज्योति सहित हो गये।

घत्ता—दिव्य वस्त्र और दिव्य आभरण धारण करनेवाले देव चारों ओरसे उन्हें प्रणाम करते हैं। फिर भी अपने नाना यानोंसे पुरन्दर वहाँ आया ॥८॥

९

सदैव विद्वानोंके लिए शरणस्वरूप समवसरणमें वह स्थित हो गये। करुणा करनेवाले,

---

८. १. AP °रुक्खमूलि। २. A विच्छलिय°। ३. AP वउ। ४. A णूवसहासु। ५. P पइ जाणिउ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

समुद्धरइ समयं णया हरइ कुमयं।
मुसावयणमुइयं पसूहणणरुइयं।
जणं करइ विमयं पहे थवइ दुमयं।
मलं महइ कसणं घणं दमइ वसणं।
फणीसुरनृभवणं[1] फुडं कहइ भुवणं।
चलं खलइ कविलं हरं हसणमुहलं।
तणूणिहियमहिलं महीधरणसबलं।
बला विणिहयपुरं[2] हरिं भणइ ण वरं।
मुणिं कणयचरणं ण तं तिमिरहरणं।
खणाभावविगयं ण पत्तियह सुगयं।
अयं अमरतरुणी- रयं णमइ ण गुणी।
परं रिसहचरियं महोपसमभरियं[3]।
जिणा किमवि गहियं मणे अहव महियं।
ण[4] सो पडइ गहिरि णरो णरयविवरि।

घत्ता—पंचतीस गणहर जिणहु जाया हयरयसंगहं[5]॥
भयसयाइं दिव्वहं रिसिहिं मणमाणियपुव्वंगहं[6]॥ ९॥

१०

चालीस तिण्णि सहसाइं होंति सहुं अद्धसएं सउ तहिं ण भंति।
एत्तिय सिक्खुय सिक्खाविणीय गुरुभत्तिवंत संसारभीय।

मरणके आवरणको नष्ट करनेवाले वह जिन जिनशासनका उद्धार करते हैं, नयोंसे कुमतका हरण करते हैं। असत्य भाषणसे मुदित होनेवाले, पशुहत्यामें रुचि रखनेवाले उनको वह मद रहित करते हैं, दुर्मदको पथमें लाते हैं, पाप और मलका नाश करते हैं, सघन दुःखोंका दमन करते हैं, नागेश्वर और नृपभवनवाले विश्वका स्पष्ट कथन करते हैं। चंचल कपिल मतको और हँसीसे मुखर हरको स्खलित करते हैं। शरीरपर महिलाको धारण करनेवाले धरतीको धारण करनेमें समर्थ, बलपूर्वक द्वारिकाका निर्माण करनेवाले हरिको जो वर नहीं कहते, जो अक्षपाद मुनि हैं, वह अन्धकारका नाश करनेवाले नहीं हैं, जो क्षणिकवादको माननेवाले हैं ऐसे उन सुगतका विश्वास मत करो। ब्रह्मा देवस्त्रीमें रत है, उसे गुणी नमस्कार नहीं करते। केवल महान् उपशमसे भरित ऋषभचरितको जिसने स्वीकार किया है, अथवा मनमें उसकी पूजा की है, वह नर गम्भीर नरकविवरमें नहीं पड़ता।

घत्ता—जिनवरके पैंतीस गणधर थे। पापसंग्रहको नष्ट करनेवाले और अपने मनमें पूर्वांगोंको माननेवाले दिव्य ऋषि सात सौ थे ॥९॥

१०

तैंतालीस हजार एक सौ पचास, इतने महान् भक्तिसे पूर्ण, संसारसे भीत और शिक्षामें

---

९. १. AP °सुरणिभवणं। २. A विणिहयपरं। ३. A महापसम°। ४. P omits ण। ५. AP हयरइ-संगहं। ६. AP मणि माणिय°।

दोसहसइं पंचसयाइं ओहि णाणिहिं केवलिहिं[1] ति दोण्णि लेहि ।
पंचेव सहस सउ एक्कु ताइं महरिसिहिं विउव्वणरिद्धि जाहं ।
दोसहसइं पण्णासाहियाइं गुणवंतहं वाइहिं साहियाइं ।
सहसाइं तिण्णि तिण्णि जि सयाइं मणपज्जववंतहं गयमयाइं ।
सहसाइं सट्ठि आहुट्ठसयइं अज्जियहं तेत्थु थुयकुंथुपयइं ।
सावयहं[2] लक्ख दो तिण्णि लक्ख सावइहिं ण याणमि देव संख ।
संखेज्ज तिरियगणु णहकरालु जेत्तिउ होइवि थिउ चक्कवालु ।
तेत्तिउ सोलहवरिसूणु कालु महि विहरिवि हयणरमोहजालु ।
गउ संमेयहु सम्मयगुणालु तं[3] सुक्कझाणु पूरिउ विसालु ।
पडिमाइ परिट्ठिउ मासमेत्तु रिसिसहसें सहुं णिम्मुक्कगत्तु ।

घत्ता—वइसाहहु सियपडिवइ जामिणिमुहि णिहयक्खहु ॥
गउ जिणु सहसक्खें कित्तियउ कित्तियरिक्खे मोक्खहु ॥१०॥

११

कय तियसहिं तासु सरीरपुज्ज सुरकिंकरकरहयविविहवज्ज ।
भंभाभेरीदुंदुहिणिणाय घणथणियामरमुहमुक्कणाय ।
पयपणइपयासियदुरियदलणं[1] जय जयहि जिणेसर कम्ममलण ।
उव्वसिरंभाणच्चणरसिल्लु[3] सयमहकरपंजलिघित्तफुल्लु[4] ।

विनीत शिक्षक थे। दो हजार पाँच सौ अवधिज्ञानी थे। तीन हजार दो सौ केवलज्ञानी, विक्रिया ऋद्धिके धारक महामुनि पाँच हजार एक सौ, गुणवान् वादी मुनि दो हजार पचास थे, तीन हजार तीन सौ मद रहित मनःपर्ययज्ञानी थे। साठ हजार तीन सौ पचास कुन्थु भगवान्के चरणकी स्तुति करनेवाली आर्यिकाएँ थीं। दो लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएँ थीं। देवोंकी संख्या मैं नहीं जानता। नखोंसे भयंकर जितना संख्यात तिर्यंच समूह था, वह गोलाकार स्थित हो गया। जिन्होंने मनुष्योंके मोहजालको नष्ट किया है, ऐसे सम्यक्त्व गुणोंके घर वह उतने ही सोलह वर्ष तक धरतीपर विहार करते हुए सम्मेदशिखर पहुँचे। वहाँ उन्होंने विशाल शुक्लध्यान पूरा किया। एक माह तक प्रतिमा योगमें स्थित रहे और एक हजार मुनियोंके साथ शरीरसे मुक्त हो गये।

घत्ता—वैशाख शुक्ला प्रतिपदाके दिन रात्रिके पूर्वभागमें कृत्तिका नक्षत्रमें इन्द्रके द्वारा कीर्तित जिन मोक्षके लिए गये ॥१०॥

११

जिसमें देवों और अनुचरोंके हाथोंसे विविध वाद्य बजाये गये हैं, देवोंने उनकी ऐसी शरीर पूजा की। भम्भा, भेरी और दुन्दुभियोंका निनाद और जोर-जोरसे बोलनेवाले देवोंका नाद होने लगा। चरणोंमें प्रणत लोगोंके पापोंका दलन प्रकाशित करनेवाले और कर्मोंका नाश करनेवाले हे देव, आपकी जय हो। जो उर्वशी और रम्भाके नृत्यसे रसमय है, जिसमें इन्द्रके हाथों फूल फेंके जा

---

१०. १. A केवलिहि वि दोण्णि। २. A सावयहं संख दो। ३. A omits this foot.

११. १. AP °दलणु। २. AP वरजलणकुमारणिहित्तजलणु। ३. A °रसिल्ल। ४. A °फुल्ल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुंबरुणारयसंगीयगेय विरइय जिणपडिबिंबाहिसेय।
मालाविज्जाहरपिहियगयण मुणिघोसियणाणाथोत्तवयण।
णवकमलकलसदप्पणसमेय धवलायवत्तधयसंखसेय।
दूवंकुरदहिचंदणपसत्थ वंसग्गविलंबियदिव्ववत्थ।
सण्णाणि सुदंसणि विउलबुद्धि णिव्वाणपुज्ज महुं देउ सुद्धि।

घत्ता—सुहुं कुंथु भडारउ देउ महुं वंदिउ भरहणरिंदहिं ॥
सियपुप्फयंतउज्जलमुहहिं णेमिउ फणिंदसुरिंदहिं ॥११॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए
महाकव्वे कुंथुचक्कहरतित्थयरणिव्वाणगमणं णाम चउसट्ठिमो
परिच्छेओ समत्तो ॥६४॥

रहे हैं, तुम्बुरु और नारदके द्वारा गीत गाये जा रहे हैं, जिन प्रतिबिम्बोंका ऐसा अभिषेक किया गया। जिसमें विद्याधरोंकी कतारोंने आकाशको ढक लिया है, जिसमें मुनियोंके द्वारा नाना स्तोत्रवचन घोषित किये जा रहे हैं, जो नवकमल-कलश और दर्पणसे युक्त हैं, जो धवल आतपत्र ध्वज और शंखोंसे श्वेत है। दूर्वांकुर, दही और चन्दनसे प्रशस्त है, जिसमें बाँसोंपर दिव्यवस्त्र अवलम्बित हैं, ऐसी निर्वाण पूजा, मुझे ज्ञान और दर्शनसे युक्त विपुल बुद्धि और शुद्धि प्रदान करे।

घत्ता—भरतादि नरेन्द्रोंसे वन्दित, श्वेत नक्षत्रोंके समान उज्ज्वल मुखोंवाले नागेन्द्रों-सुरेन्द्रों द्वारा नमित आदरणीय कुन्थुदेव मुझे सुख प्रदान करें ॥११॥

त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं
महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका कुन्थु चक्रवर्ती और तीर्थंकर
निर्वाण गमन नामका चौसठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६४॥

५. AP खेयरविसहरचंदहिं। ६. AP कुंथुचक्कवट्टितित्थयरपुराणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६५

सुयदेवयहि पसत्थहि पसमियदुम्मइहि ॥
वंदिवि सिरेण सउऊवई अंगइं भयवइहि ॥ ध्रुवकं ॥

१

जो भयवंतो मुक्कसवासो जं णीसासो सुरहियवासो ।
जेण कयं उत्तमसंणासं जो ण समिच्छइ चउसण्णासं ।
जिणदिट्ठं पंचिंदियणासं जं पणवंतो पावइ णा सं ।
भीममुहा वग्घाइणवासा जस्स गया दूरेण सवासा ।
रक्खइ भुवणं जस्स खमा णं णाणं जस्साणंतखमाणं ।
जेणुवइट्ठं धम्मणिहाणं संमियं चित्तं भिल्लणिहाणं ।
जो जीवाणं जाओ ताणं गुरुयणभत्ती जाणं ताणं ।
अत्ताईणं वत्थुपयाणं जो वत्तारो सव्वपयाणं ।

सन्धि ६५

दुर्मतिको प्रशमित करनेवाली प्रशस्त भगवती श्रुतदेवताके चौदह पूर्वों सहित ग्यारह अंगोंकी मैं वन्दना करता हूँ ।

१

जो ज्ञानवान् अपने गृहवाससे मुक्त हैं, जिनसे मनुष्योंको शिक्षा होती है, जो सुरभित गन्धवाले हैं, जिन्होंने उत्तम संन्यास लिया है, जो आहारनिद्रादि संज्ञाओंको नहीं चाहते, बल्कि जिनेन्द्र द्वारा उपदिष्ट पाँच इन्द्रियोंका नाश चाहते हैं । जिनको प्रणाम करनेवाला पुरुष सुख प्राप्त करता है । व्याघ्रादि चर्मको धारण करनेवाले पाशयुक्त वेताल आदि देव जिनसे दूर चले गये हैं, जिनकी क्षमा विश्व और मनुष्यकी रक्षा करती है, जिनका ज्ञान अनन्तआकाशके प्रमाणवाला है । जिन्होंने धर्मका उपदेश किया है और भीलके समान लोगोंके चित्तको शान्त किया है, जिन जीवों-में गुरुजनोंके प्रति भक्ति है, वे उनके त्राता हैं । जो आप्त आदिके वस्तुप्रमाण और समस्त पदोंके

All Mss. have, at the beginning of this saṃdhi, the following stanza:-

आजन्मं (?) कवितारसैकधिषणासौभाग्यभाजो गिरां
दृश्यते कवयो विलाससकलग्रन्थानुगा बोधतः ।
किं तु प्रौढनिरूढगूढमतिना श्रीपुष्पदन्तेन भोः
साम्यं बिभ्रति (?) नैव जातु कविता शीघ्रं ततः प्राकृते ॥ १ ॥

AP read विशाल in the second line; A reads प्रौढनिगूढ° in the third line; and AP read कविना, A reads शीघ्रं तत प्राकृतैः, P reads शीघ्रं त्वतः प्राकृतेः in the fourth line.

१. १. A सम्मियचित्तं । २. A अंताईणं; P अत्थाईणं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिण्णं जेणं[3] अभयपयाणं सासयसिवणयरस्स पयाणं ।
भवहंतारं धीरं[4] हं तं णमिउं देवं अरमरिहंतं ।
तस्स भणामि चरित्तं चित्तं जणियसुरासुरविसहरचित्तं ।

घत्ता—जंबूदीवइ सुरगिरिपुव्वदिसासियइ ॥
पुव्वविदेहइ पविउलि केवलिभासियइ ॥ १ ॥

२

सीयहि उत्तरकूलि रवण्णइ कच्छाणामदेसि विच्छिण्णइ ।
खेमणयरि धणवइ पुहईसरु रूवें रमणीसरु वम्मीसरु ।
णंदणाहतित्थयरसमीवइ बुज्झिवि धम्मु णाणसब्भावइ[1] ।
अप्पउं तेण णिओइउं[2] राएं समणु[3] हवेप्पिणु मणवयकाएं ।
चत्तकुपंथें जाणियसत्थें किउ पाओवगमणु[4] परमत्थें ।
जाउ जयंताणुत्तरि सुरवरु कायमाणु तहु एक्कु जि किर करु ।
आउ तासु तेत्तीसमहोयहि लोयणाडि सो पेक्खइ सावहि ।
तप्पमाणविकिरियातेएं वीरिएण संजुत्तु अमेएं ।
भुंजंतहु सुहुं अहमिंदाणउं[5] आउहि थिउ छम्मासपमाणउं[6] ।

घत्ता—सोहम्माहिउ भव्वहु जिणपयरयमइहि ॥
तहिं कालिहिं आहासइ सुरवइ धणवइहि ॥ २ ॥

वक्ता हैं, जिन्होंने अभयको प्रदान और शाश्वत शिवनगरको प्रयाण किया है, ऐसे संसारका नाश करनेवाले धीर अरहनाथ अर्हन्तको नमस्कार कर उनके सुर, असुर और विषधरोंके चित्तको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले विचित्र चरित्रको कहता हूँ ।

घत्ता—जम्बूद्वीपके सुमेरुपर्वतकी पूर्व दिशा केवलीके द्वारा भाषित विशाल पूर्वविदेहमें ॥१॥

२

सीता नदीके उत्तरीतटपर फैले हुए सुन्दर कच्छ नामके देशके क्षेमनगरमें धनपति नामका राजा था । रूपमें जो स्त्रियोंका स्वामी और कामदेव था, वह अर्हन्नन्दन तीर्थंकरके समीप धर्म समझकर उस राजाने ज्ञानके स्वभावमें अपनेको नियोजित कर लिया । मन वचन कायसे श्रमण होकर, खोटे मार्गको छोड़कर और शास्त्रको जानकर उसने परमार्थ भावसे प्रायोपगमन किया । वह जयन्त विमान देव पैदा हुआ । वहाँ उसके शरीरका प्रमाण एक हाथ था । उसकी आयु तैंतीस सागर प्रमाण थी । अवधिज्ञानी वह लोकनाड़ीको देख सकता था । सन्तसमान विक्रिया ऋद्धिके तेज और वीर्यसे संयुक्त सुखको विना किसी मर्यादाके भोगते हुए उस अहमेन्द्रकी आयु छह माह शेष रह गई ।

घत्ता—तो उस अवसरपर सौधर्म इन्द्रने जिनपदमें जिसकी मति अनुरक्त है, ऐसे भव्य कुबेरसे कहा ॥२॥

---

३. A तेणं । ४. AP वीरं ।

२. १. A बुज्झवि णाणु धम्मु । २. AP णिओविउ । ३. AP सवणु । ४. AP पायोगमरणु । ५. AP अहमिंदाणं । ६. A °पवाणं; P °पमाणं । ७. AP तहिं जि कालि आहासइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

एत्थु भरहि कुरुजंगलि जणवइ कुंजरपुरवरि मारुयधुयधइ ।
राउ सुदंसणु तहु गुणजलसरि मित्तसेण णामेण घरेसरि ।
एयहं दोहं वि होसइ जगगुरु तुहुं करि ताहं[1] तुरिउ कंचणपुरु ।
ता तं जाइवि जक्खें रइयउ पट्टणु रयणकिरणअइसइयउ ।
णिसि सुहुं[2] सुत्तइ पियकमणीयइ सिविणयपंति दिट्ठ रमणीयइ ।
करि करोडु पंचाणणु गोमिणि मालाजुयलु चंदु णहयलमणि ।
सफरुल्लय दो कलस सुहायर विमलसलिलकमलायर सायर ।
सीहासणु विमाणु णायालउ मणिणिउरुंबु म[3]ऊहकरालउ ।
जायवेउ दीहरजालावलि इय जोइवि ताए सिविणावलि ।

घत्ता—देविइ सुत्तवि[4]उद्धिइ अक्खिउ णरवइहि ॥
तेण वि फलु विहसेप्पिणु भासिउ तहि सइहि ॥ ३ ॥

४

जो जाणइ तिहुयणि[1] परु अप्पउ सो तुह सुउ होसइ परमप्पउ ।
तं णिसुणिवि[2] हरिसिय सीमंतिणि आइय घरु सिरि दिहि हिरि कामिणि ।
कंति कित्ति सइ बुद्धि भडारी गब्भसुद्धि कय सुहइं जणेरी ।
जा छम्मास ताम घरि चंदिरु घत्तिउं[3] जक्खें लोयाणंदिरु ।
फग्गुणि चंदविसुद्धहि तइयहि णिसिपच्छिमसंझहि रेवइयहि ।

३

यहाँ भरतक्षेत्रके कुरुजांगल जनपदमें जिसमें हवासे ध्वज हिलते हैं, ऐसा हस्तिनापुर नगर है, उसमें राजा सुदर्शन है। उसकी गुणरूपी जलकी नदी मित्रसेना नामकी गृहेश्वरी थी। इन दोनोंके विश्वगुरु जन्म लेंगे, तुम शीघ्र उनके लिए स्वर्णनगरकी रचना करो। तब कुबेरने जाकर रत्नकिरणोंसे अतिशमित नगरकी रचना की। प्रिय रमणी कामिनीने रात्रिमें सुखसे सोते हुए स्वप्नमाला देखी। हाथी, बैल, सिंह, लक्ष्मी, मालायुगल, चन्द्रमा, सूर्य, दो मत्स्य, दो शुभाकार कलश, विमल जल और कमलोंका सरोवर, समुद्र, सिंहासन, विमान, नागलोक, किरणोंसे भास्वर मणिसमूह और दीर्घ ज्वालावलीसे युक्त आग। इस प्रकार स्वप्न देखकर उस—

घत्ता—देवीने सोतेसे जागकर, राजासे कहा। उसने भी हँसते हुए उस सतीसे उसका फल बताया ॥३॥

४

जो त्रिभुवनमें स्वपरको जानता है, वह परमात्मा तुम्हारे पुत्र होंगे। यह सुनकर वह सीमन्तिनी हर्षित हो उठी। घरपर श्री, धृति, ह्री, कान्ति, कीर्ति, सती और बुद्धि आदि आदरणीय देवियाँ आयीं और उन्होंने सुखको उत्पन्न करनेवाली गर्भशुद्धि की। जब छह माह बाकी बचे तो कुबेरने लोगोंको आनन्द देनेवाले सोनेकी घरपर वर्षा की। फाल्गुन कृष्णा तृतीयाके दिन, रात्रिके

३. १. AP तुरिउ ताहं। २. A सुहसुत्तइ। ३. AP मयूह°। ४. A °विबुद्धइ।
४. १. AP तिहुवणु। २. P सुणिवि। ३. A खित्तउ; P घित्तउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थिउ गब्भंतरालि जो धणवइ सो अहमिंदु चवेप्पिणु सुहमइ।
थुउ अमरिंदचंदधरणिंदहिं तहु दिवसहु ळग्गिवि जक्खिदहिं।
वुट्ठउं विसरिसेहिं वसुहारहिं अट्ठारहपक्खंतरमेरहिं।
परिवट्टंतइ दिणसंताणइ वरिसकोडिसहसेण विहीणइ।
थक्कइ कुंथुणाहणिव्वाणइ पल्लचउत्थभायपरिमाणइ।
वरमग्गसिरमासि सिसिरहु भरि पूसजोइ चउदहमइ वासरि।

घत्ता—सग्गमग्गसंखोहणु बुहयणदुरियहरु ॥
णाणत्तयसंजुत्तउ णासियजम्मजरु ॥ ४ ॥

५

सत्तमचक्कवट्टि हयपरमउ संभूयउ जिणु अट्ठारहमउ।
मंदरसिहरि तूरणिग्घोसहिं ण्हविउ पुरंदरेहिं बत्तीसहिं।
णामु करेप्पिणु परमेसहु अरु अम्महि करि अप्पिउ आविवि घरु।
गउ पोलोमीवइ णियमंदिरु वड्ढइ पुण्णवंतु जिणु सुंदरु।
हेमच्छवितणु दहदहधणुतणु गरुयारउ गुणगणरंजियजणु।
एक्कवीसवरिसहं सहसइं सिसु लीलइ थिउ डिंभयकीलावसु।
एक्कवीससहसइं मंडलवइ एक्कवीससहसइं पुणु महिवइ।
चउदह रयणइं णव वि णिहाणइं भुंजिवि पीणिवि दविणें दीणइं।

अन्तिम प्रहरमें रेवती नक्षत्रमें, जो धनपति, अहमेन्द्र था, शुभमति वह, वहाँसे च्युत होकर, गर्भमें आकर स्थित हो गया। अमरेन्द्र चन्द्र और धरणेन्द्रने स्तुति की। उस दिनसे लेकर यक्षेन्द्रने अठारह पक्षों तक असामान्य स्वर्णधाराकी वर्षा की। कुन्थुनाथके निर्वाणके बाद समयकी परम्परा बीतनेपर एक हजार करोड़ वर्ष कम पल्यका चौथाई भाग जब शेष रह गया, तो शिशिरके भारसे भरे मार्गशीर्षके शुक्ल पक्षकी चतुर्दशीको पुष्य नक्षत्रमें—

घत्ता—स्वर्गमार्गको क्षुब्ध करनेवाले, बुधजनोंके पापको हरण करनेवाले तीन ज्ञानोंसे युक्त, जन्म और बुढ़ापेका जिन्होंने नाश कर दिया है ॥४॥

५

ऐसे शत्रुका मद दूर करनेवाले सातवें चक्रवर्ती और अठारहवें जिन उत्पन्न हुए। मन्दराचलके शिखरपर, बत्तीस इन्द्रोंने तूर्योंके निर्घोषके साथ उनका अभिषेक किया। परमेश्वरका 'अर' नाम रखकर और घर आकर माताके हाथमें सौंप दिया। इन्द्र अपने घर चला गया। पुण्यवान् सुन्दर जिन बढ़ने लगे। स्वर्णके समान शरीर कान्तिवाले उनका शरीर बीस धनुष प्रमाण ऊँचा था। और वह अपने गुणगणसे जनोंका रंजन करनेवाले थे। बाल क्रीड़ाके वशीभूत वह शिशु इक्कीस हजार वर्ष तक क्रीड़ामें रहा। फिर इक्कीस हजार वर्षों तक वह मण्डलपति रहे फिर इक्कीस हजार वर्ष तक चक्रवर्ती राजा रहे। चौदह रत्न और नौ निधियोंका भोगकर धनसे

---

४. A देवसहु; P दिवहहु। ५. AP परिवड्ढंतइ। ६. AP दिणि। ७. P सियमग्गसिर°। ८. A सिसिहुरभरि; P सिसिरहे भरि।

५. १. K मंदिरसिहरि। २. P एक्कवीससहसहसइं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारयब्भु पविलीणु णियच्छिवि लच्छिविहोउ असेसु दुगुंछिवि ।
जीविउ देहु असारु वियप्पिवि अरविंदहु महिरज्जु समप्पिवि

घत्ता—खीरवारिपरिपुण्णहिं तारहारसियहिं ॥
ण्हाइवि मंगलकलसहिं सुरपल्हत्थियहिं ॥ ५ ॥

६

णिसुणिवि सारस्सयसंबोहणु[1] वइजयंतसिवियहि आरोहणु ।
करिवि सहेउयवणु तं जेत्तहि गउ तुरिएण महापहु तेत्तहि ।
मियसिरजुत्तमासि दहमइ दिणि चंदिणि रेवइरिक्खि सुसोहणि ।
अवरण्हइ छट्ठेणुववासें णिक्खंतउ सहुं रायसहासें ।
लुंचिवि कुंतल णिम्मोहालउं लिंगु असंगु लेवि णिच्चेलउं ।
मणपज्जयधरु सुद्धिणिरिक्खहि बीयइ दियहि पइट्ठउ भिक्खहि ।
चक्कणयरि अवराइयणरवें पाराविउ अमरासुरसुरवें ।
तहु घरि पंच वि चोज्जइं घडियइं कुसुमइं रयणइं गयणहु पडियइं ।
तवतावें णियतणु तावंतउ[2] सोलहवरिसइं महि विहरंतउ[3] ।

घत्ता—दिक्खावणु आवेप्पिणु कत्तियमासि पुणु ॥
सियबारहमइ वासरि सुरवरणवियगुणु ॥ ६ ॥

दोनोंको प्रसन्न कर शरद्के मेघको लीन होते देखकर, अशेष लक्ष्मी-विभोगकी निन्दा कर जीवन और देहको असार समझकर, अरविन्द (पुत्र) को महाराज्य देकर।

घत्ता—क्षीर समुद्रके जलोंसे परिपूर्ण, तार और हारके समान स्वच्छ मंगलकलशोंसे, देवपंक्तियों द्वारा स्नान कराकर ॥५॥

६

लौकान्तिक देवोंका सम्बोधन सुनकर, वैजयन्त शिविकापर आरोहणकर, जहाँ वह सहेतुकवन था, वहाँ महाप्रभु तुरन्त गये। मार्गशीर्षके शुक्ल पक्षकी दसमीके दिन, सुशोभन रेवती नक्षत्रमें अपराह्णमें वह छठा उपवास कर एक हजार राजाओंके साथ दीक्षित हो गये। केश लोंच कर निर्मोहसे युक्त असंग चिह्न और दिगम्बरत्व लेकर, वह जिसमें शुद्धिका निरीक्षण है, ऐसी भिक्षाके लिए दूसरे दिन प्रविष्ट हुए। चक्रनगरमें अमरों और असुरोंके समान सुन्दर स्वरवाले राजा अपराजितने उन्हें आहार दिया। उसके घरमें पाँच आश्चर्य प्रगट हुए। पुष्पों और रत्नोंकी आकाशसे वर्षा हुई। तपके तापसे अपने शरीरको तपाते हुए तथा सोलह वर्ष तक धरतीपर विहार करते हुए।

घत्ता—दीक्षावन (सहेतुकवन) में आकर, सुरवरोंसे जिनके गुण प्रणम्य हैं, ऐसे वह कार्तिक शुक्ला द्वादशीके दिन ॥६॥

---

६. १. A सारयस्स। २. AP तावंतहु। ३. AP विहरंतहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

अवरण्हइ अंबयतलि थक्कउ　　छट्ठववासिउ मोहें मुक्कउ ।
जायउ केवलि केवलदंसणि　　आयउ भेसइं[1] अंगारउ[2] सणि ।
धरणु वरणु ससि तरणि धणेसरु　　पवणु जलणु भावेण सुरेसरु ।
थुणइ अणेयहिं थोत्तपउत्तिहिं　　समवसरणु किउ विविहविहत्तिहिं ।
तेत्थु णिसण्णएण तं सिट्ठउ　　जं अवरेहिं मि देवहिं दिट्ठउ ।
चउ णिरूवि[3] अजीव पयासिय　　रूविखंधदेसाइ वि भासिय ।
मग्गणगुणठाणाइं समासिय　　जीव सकाय अकाय वि दरिसिय ।
सत्तपंचणवछव्विहभेयइं　　एयइं अवरइं कहियइं णेयइं ।
तहु संजाया तहिं मउलियकर　　गणहर तीस रिद्धिबुद्धीसर ।
गणमि दहुत्तर वम्महदमणहं　　तिण्णि तिण्णि सय सिक्खुय सवणहं[4] ।

घत्ता—पंचतीस[5]सहसइं भणु अट्ठसयइं कियइं ॥
तीसणिउत्तइं जाणसु मुणिहिं वयंकियइं ॥ ७ ॥

८

एत्तियं[1] ओहिणाणि तहु हयकलि　　दुसहस वसुसय साहिय केवलि ।
जिणवरचरणुण्णामियसीसइं　　दोसहसइं पणवण्णविमीसइं ।
मणपज्जयधराहं वरचरियहं　　चउसहसइं तिसयइं विक्किरियहं ।

७

अपराह्णमें आम्रवृक्षके नीचे स्थित हो गये और छठे उपवासके द्वारा मोहसे मुक्त हो गये। केवलदर्शनी वह केवली हो गये। बृहस्पति, मंगल, शनि, धरण (नागकुमारोंका इन्द्र), वरुण, शशि, सूर्य, धनेश्वर (कुबेर), पवन, अग्नि और इन्द्र भावपूर्वक वहाँ आये। वह अनेक स्तोत्र प्रवृत्तियोंसे स्तुति करता है और अनेक विभाजनोंके साथ समवसरणकी रचना करता है। वहाँ विराजमान उन्होंने वह कथन किया जो दूसरे देवोंने भी देख लिया। चार द्रव्यों (धर्म, अधर्म, आकाश और काल) का निरूपण कर उन्होंने अजीव तत्त्वका प्रकाशन किया। उन्होंने द्रव्यके स्कन्ध और देशका भी कथन किया। संक्षेपमें मार्गणा और गुणस्थानोंकी चर्चा की। सकाम-अकाम जीवोंको भी दरसाया। सात, पांच, नौ और छह भेदवाले इन और दूसरी ज्ञेय वस्तुओंका कथन किया। वहाँ उनके हाथ जोड़े हुए तीस गणधर हुए। कामदेवका दमन करनेवाले ग्यारह अंगों और चौदह पूर्वोंके धारी छह सौ दस मुनि थे।

घत्ता—व्रतोंसे अंकित शिक्षक मुनि पैंतीस हजार आठ सौ पैंतीस थे, यह जानो ॥७॥

८

पापको नष्ट करनेवाले अवधिज्ञानी अट्ठाईस सौ थे। केवलज्ञानी भी इतने ही अर्थात् अट्ठाईस सौ। जिनवरके चरणोंमें सिर झुकानेवाले मनःपर्ययज्ञानी दो हजार पचपन थे। श्रेष्ठ

---

७. १. A भेसउ । २. AP अंगारय । ३. AP णीरूवि । ४. AP समणहं । ५. पंचवीस ।

८. १. AP एत्तिय तीयणाणि; T तइयणाणि ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सोलहसयइं परागमहारिहिं सट्ठिसहासइं संजमणारिहिं ।
सावयाहं पुणु लक्खु भणिज्जइ सुण्णचउक्क छडग्गइ दिज्जइ ।
लक्खइं तिण्णि गेहधम्मत्थहं महिलहं मंगलदव्वविहत्थहं ।
संखावज्जिएहिं गिव्वाणहिं खगमृगेहिं पुव्वुत्तयमाणहिं ।
एक्कवीससहसइं भुवं माणइं वरिसहं सोलहवरिसविहीणइं ।
भूयलि भमिवि भव्व पहि लाइवि माससेसु णियजीविउ जोइवि ।
सहुं रिसिसहसें थिउ संमेयइ मुइवि दिव्वतणु पडिमाजोयइ ।
फग्गुणपुरिममासि कसणंतिमि दियहि चंदि कयरेवइसंगमि ।
पुव्वणिसागमि णिक्कलु जायउ गउ तहिं जिणु जहिं गयउ ण आयउ ।

घत्ता—चउविहदेवणिकायहिं जयजयकारियउ ॥
अरु अग्गिदकुमारहिं तहिं साहुक्कारियउ ॥ ८ ॥

९

अरु अरविंदगब्भकयचारउ अरु अरुहंतु अणंगवियारउ ।
अरु अरमाणिहीहिं णउ रुच्चइ अरु अरहिल्लु तच्चु जगि सुच्चइ ।
अरु अरसिल्लु अगंधु अरूअउ अरु अरामु अविरामउ हूयउ ।
अरु अरईरईहिं णउ छिप्पइ अरु अरोसु किह पावें लिप्पइ ।

चर्या धारण करनेवाले विक्रियाऋद्धिके धारक चार हजार तीन सौ थे। परमागमको धारण करनेवाले श्रेष्ठ वादी मुनि सोलह सौ थे। संयम धारण करनेवाली आर्यिकाएँ साठ हजार थीं। श्रावक एक लाख साठ हजार थे। गृहस्थ धर्ममें स्थित तथा हाथमें मंगल द्रव्य लिये हुए तीन लाख श्राविकाएँ थीं। देवता संख्या-विहीन थे, खग और मृग पूर्वोक्त मानवाले (संख्यात) थे। सोलह वर्ष कम इक्कीस हजार वर्ष पर्यन्त भूतलपर परिभ्रमण कर, भव्योंको पथपर लाकर, अपना जीवन एक माहका देखकर वह एक हजार मुनियोंके साथ सम्मेद शिखरपर स्थित हो गये एवं शरीरको (मोहको) छोड़कर प्रतिमायोगमें स्थित हो गये। फागुन माहके कृष्ण पक्षकी द्वितीयाके दिन रेवती नक्षत्रमें निशाके पूर्वभागमें वह निष्पाप हो गये, जिन वहाँ चले गये कि जहाँ गया हुआ वापस नहीं आता।

घत्ता—चार प्रकारके निकायोंके देवोंने जय-जयकार किया। तब अग्नीन्द्रकुमार देवोंने अरह तीर्थंकरका दाह संस्कार किया ॥८॥

९

अरु—अरविन्दके गर्भमें उत्पन्न शोभा है, अरु—कामको विदारण करनेवाले जिन हैं, अरु—दरिद्रोंके लिए नहीं रुचते, अरु—अर्हत्का तत्त्व संसारमें स्पष्ट सूचित होता है। अरु—रसरहित, अगन्ध और अरूप है। अरु—रति-अरतिके द्वारा स्पृश्य नहीं हैं। अरु—क्रोधसे रहित

२. AP °मिगेहि। ३. AP पुव्वुत्तपमाणहिं। ४. A जुयमाणइं। ५. A °वरिसइं हीणइं। ६. T चोइवि। ७. AP कलेवरु। ८. A कसणतमि। ९. AP सक्कारियउ।
९. १. AP जणि। २. A किम।

अरु अं[3]रव्वें गुणेण संजुत्तउ अरु अरुणें प[4]वणें पहु वुत्तउ ।
अरु अरु[5]याणिवासु अजरामरु अरु अरुद्धु विहुरेण सुहायरु ।
अरु अरुहक्खरेहिं जगि भाणिउ अरु अरु ब[6]प्पे जेण णउ जाणिउ ।
सो संसारि भमंतु ण थक्कइ अरथुइ करहुं ण सक्कु वि सक्कइ ।
अरु अरिहरु आवरणु महारउ णिहणउ दंसणणाणणिवारउ ।

घत्ता—अरतित्थंकरि णिव्वुइ रंजियविउससह ॥
हूई णिसुणि सु[7]भउमहु चक्किहि तणिय कह ॥ ९ ॥

१०

एत्थु भरहि लंबियधयमालइ रयणसिहरघरि णयरि विसालइ ।
पहु [1]भूवालु णाम भूमंडणु तहु जायउं परेहिं सहुं भंडणु ।
बहुयहिं आहवि एक्कु णिरुज्झइ बहुयहिं सुत्तहिं हत्थि वि बज्झइ ।
खज्जइ बहुयहिं भरियभरोलिहिं विसहरु विसदारुणु वि पिपीलिहिं ।
बहुयहिं मिलिवि माणु तहु खंडिउ तेण वि पुरु कलत्तु घरु छंडिउं[2] ।
लोहमोहमयभयजमदूयहु रिसिव्व[3]उ लइउ णियडि संभूयहु ।
भोयाकंखइ करिवि णियाणउं[4] मुउ लद्धउं महसुक्कविमाणउं ।
सोलहसायराउ सो जइयहुं अच्छइ सुरवर सहुं दिवि तइयहुं ।

हैं, वे पापके द्वारा कैसे लिप्त होते हैं? अरु—अशब्द-गुणसे युक्त हैं, अरु - सूर्य और पवनके द्वारा प्रभु कहे जाते हैं। अरु—आरोग्यके निवास हैं, अजर-अमर हैं। अरु—कष्टोंसे अरुद्ध हैं और शुभाकर हैं, अरु—अर्हत् अक्षरोंसे जगमें कहे जाते हैं। हे सुभट, जिसने 'अरु अरु' को नहीं जाना, वह संसारमें भ्रमण करता हुआ कभी विश्रान्ति नहीं पाता। अरहन्तकी स्तुति करनेमें इन्द्र भी समर्थ नहीं है। मेरे दर्शनज्ञानका निवारण करनेवाले आवरणको नष्ट करनेके लिए अरु–अरिका नाश करनेवाले हैं।

घत्ता—अर तीर्थंकरके मोक्ष प्राप्त कर लेनेपर विद्वद्सभाको रंजित करनेवाली सुभौम चक्रवर्तीकी कथा हुई, उसे सुनो ॥९॥

१०

इस जम्बूद्वीपमें, जिसमें ध्वजाएँ अवलम्बित हैं और रत्नोंके शिखरवाले घर हैं, ऐसे विशाल नगरमें, पृथ्वीका अलंकार भूपाल नामका राजा है। उसकी शत्रुओंके साथ भिड़न्त हुई। युद्धमें बहुतोंके द्वारा एकको रोक लिया गया। बहुत-से धागोंके द्वारा तो हाथी भी बाँध लिया जाता है। जिन्होंने वल्मीकको भर दिया है ऐसी बहुत सी चींटियों द्वारा विषसे भयंकर विषधर खा लिया जाता है। बहुतोंने मिलकर उसके मानको खण्डित कर दिया। उसने भी पुर, कलत्र और घरको छोड़ दिया। लोभ, मोह, मद और भयके लिए यमदूत सम्भूत मुनिके पास उसने मुनिव्रत ले लिया। भोगकी आकांक्षाका निदान कर मर गया। उसने महाशुक्र विमानको प्राप्त किया। जब-

---

३. A अरएं । ४. AP वरुणें । ५. A अरुवाणिवासु । ६. AP जेण बप्प । ७. P सुभोमहु ।
१०. १. AP भूपालु । २. P छड्डिउ । ३. AP रिसिवउ । ४. AP विवाणउ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालें कालु जाम पल्लट्टइ　　एत्थु कहंतरु अवरु पवट्टइ।
पवरिक्खाउवंसु सियमंदिरि　　सहसबाहु णरवइ कोसलपुरि।
दुद्धरवइरिवीरसंधारउ　　कण्णाकुज्जहि राणउ पारउ।

घत्ता—णाम विचित्तमइ सइ तेण मुणालभुय ॥
सहसबाहुणरणाहहु दिण्णी णियय सुय ॥१०॥

११

सुंदरु लक्खणलक्खियकायउ　　तहि कयवीरु णाम सुउ जायउ।
वीणालावहि मज्झे खामहि　　पारयबहिणिहि सिरिमइणामहि।
सयबिंदु णरिंदकुलहंसें　　णियजससससहरधवलियवंसें।
सिसु जमयग्गि णाम उप्पण्णउ　　जणणिमरणसोएं णिव्विण्णउ।
बालत्तम्मि तेण सेविउ वणु　　जगि जायउ तववतिव्वु तवोहणु।
अवरु तहिं जि दढगाहिणरेसरु　　तासु मित्तु हरिसम्मु सुदियवरु।
बेण्णि मि समउं सोक्खु भुंजेप्पिणु　　जइ जाया इच्छिउ व्वउ लेप्पिणु।
णिउ जिणवररिसि सोत्तिउ तावसु　　हूयउ मोहमंदु मिच्छावसु।
मित्तें मित्तु वुत्तु णउ जुज्जइ　　तावसमग्गें जम्मु ण छिज्जइ।
विप्पें तासु वयणु अवहेरिउ　　उत्तरु किं पि वि णेय समीरिउ।

तक सोलह सागर समय है तबतक वह समर्थ सुरवर स्वर्गमें रहा। जबतक समयके द्वारा समय पलटता है और यहाँ दूसरा कथान्तर प्रारम्भ होता है। सफेद घरोंसे युक्त अयोध्यानगरमें प्रवर इक्ष्वाकुवंशीय राजा सहस्रबाहु था। दुर्धर शत्रुवीरोंको संहार करनेवाला कान्यकुब्जका राजा पारत था।

घत्ता—उसने अपनी मृणालके समान भुजाओंवाली सती कन्या विचित्रमती राजा सहस्रबाहुको दे दी ॥१०॥

११

उसका लक्षणोंसे लक्षित शरीर सुन्दर कृतवीर्य नामका पुत्र हुआ। वीणाके समान बोलनेवाली मध्यमें क्षीण श्रीमती नामकी पारतकी बहनसे, नरेन्द्रकुलके हंस अपने यशरूपी चन्द्रमासे वंशको धवलित करनेवाले शतबिन्दुको जमदग्नि नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। माताकी मृत्युके शोकसे वह विरक्त हो गया। बचपनमें उसने वनमें तपस्या की और जगमें वह तपसे तीव्र तपस्वीके रूपमें प्रसिद्ध हो गया। वहाँपर एक दृढ़ग्राही राजा था। श्रेष्ठ द्विजवर हरिशर्मा उसका मित्र था। साथ-साथ सुखका उपभोग कर दोनों अपना इच्छित व्रत लेकर यति हो गये। राजा (दृढ़ग्राही) जैनमुनि हुआ और मोहसे मूर्ख और मिथ्यात्वके वशीभूत होकर तापस हो गया। मित्रने मित्रसे कहा कि यह ठीक नहीं है, तुम्हें तपस्वी मार्गमें अपना जन्म नष्ट नहीं करना चाहिए। ब्राह्मणने

---

५. AP °वंसि तहु मंदिरि। ६. AP सहसबाहु°।

११. १. A सुंदर°। २. AP °बहिणिहि। ३. A बालत्तणि जि। ४. AP तउ तिव्वु। ५. AP वउ।
६. A वरसिरि सोमित्तिउ; P °वररिसि सोमित्तिउ। ७. P मेहमंदु।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

जिणवरहरपयाइं सुमरेप्पिणु बेण्णि मि मुय संणासु करेप्पिणु ।
खत्तिउ मरिवि जाउ सोहम्मइ बंभणु पुणु जोइससुरहम्मइ ।

घत्ता—चिंतिउ पत्थिवदेवें सुहि वसुमलमइहि ॥
तउ अण्णाणु चरेप्पिणु हुउ जोइसगइहि ॥११॥

१२

मइं सयणेण वि णउ उत्तारिउ जायउ बंधु[1] दीहसंसारिउ ।
इय णिज्झाइवि ढुक्कउ तेत्तहिं अच्छइ सुरवरु जोइस[2] जेत्तहिं ।
णेहपरव्वसेहिं भुयमंडिउ दोहं मि एक्कमेक्कु अवरुंडिउ ।
अवलोइवि जोइसु मउलियकरु आहासइ विहसिवि कप्पामरु ।
पइं जिणवयणु बप्प अवगण्णिउ अण्णाणु जि गुरु[3]यारउं मण्णिउ ।
णच्चइ देउ गेयसरु गायइ महिलउ माणइ वज्जउ वायइ ।
डहइ पुरइं रिउवग्गु वियारइ एहउ किं संसारहु तारइ ।
णिक्कलु किं सिद्धंतु समासइ विणु वयणेण सद्दु कहिं होसइ ।
सद्दें[4] विणु कहिं सत्थपरिग्गहु पइं कुमग्गि किं किउ णियणिग्गहु ।
तं णिसुणिवि इयरेण पवुत्तउं मइं ण सिवागमि इट्ठु तउ तत्तउं ।

घत्ता—गउरीमुहकमलालिहि वरगोवइगइहि ॥
भासिउ किं पि ण बुज्झिउ देवहु पसुवइहि ॥१२॥

उसके वचनोंकी उपेक्षा की। उसने कुछ भी उत्तर देनेकी चेष्टा नहीं की। जिनवर और शिवके चरणोंका स्मरण कर दोनों संन्यासपूर्वक मर गये। क्षत्रिय (राजा) मरकर सौधर्म स्वर्गमें उत्पन्न हुआ और ब्राह्मण ज्योतिषदेवके विमानमें।

घत्ता—राजा देवने विचार किया कि मित्र अज्ञानतपका आचरण कर आठों मलोंसे युक्त मतिवाले ज्योतिषी घरमें उत्पन्न हुआ है ॥११॥

१२

स्वजन मैंने उसका उद्धार नहीं किया और मेरा बन्धु दीर्घ संसारी हो गया। यह सोचकर वह वहां पहुँचा, जहांपर वह ज्योतिष सुरवर था। स्नेहके परवश होकर दोनोंने बाहु फैलाकर एक दूसरेका आलिंगन किया। हाथ जोड़े हुए ज्योतिष देवको देखकर कल्पवासी देव हँसकर कहता है—"हे सुभट, तुमने जिनवचनोंकी उपेक्षा की, अज्ञानको ही तुमने बहुत बड़ा माना। देव (शिव) नृत्य करता है, गीत स्वर गाता है, महिला (पार्वती) को मानता है। वाद्य (डमरू) बजाता है, नगरों (त्रिपुर) को जलाता है, शत्रुवर्गका नाश करता है। यह क्या संसारसे तार सकता है। सदाशिव क्या सिद्धान्तका कथन कर सकता है, बिना वचनके क्या शब्द हो सकता है? शब्दके बिना शास्त्रकी रचना कैसे हो सकती है? तुमने कुमार्गमें अपना तप क्यों किया।" यह सुनकर दूसरेने कहा—"मैंने शिवागममें इष्ट तपका आचरण नहीं किया।

घत्ता—पार्वतीके मुखरूपी कमलके भ्रमर, बैलपर (नन्दीपर) चलनेवाले पशुपति देवका कहा हुआ मैंने कुछ भी नहीं समझा" ॥१२॥

१२. १. A देह बंधु। २. A जोइससुरवरु। ३. AP गरुयारउ। ४. AP सद्दु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३

ता पभणइ सुरु सम्माइट्ठिउ जो तुम्हारइ णिट्ठइ णिट्ठिउ।
सो दावहि तावसु जो गयमलु आउ आउ वच्चहुं धरणीयलु।
सुहिणा उत्तउ मयणणिवारउ पेच्छहि रिसि जमयग्गिभडारउ।
ते बेण्णि वि जेण गुणगणसिक्खहि सज्जण लग्गा धम्मपरिक्खहि।
गय कलविंकमिहुणु होएप्पिणु थिउ मुणिमीसियवासु रएप्पिणु।
कणु चुणंति कीलंति भमंति वि तावसमासुरवासि रसंति वि।
अण्णहि दिणि जंपइ चिडउल्लउ कंति कंति हउं भमणपियल्लउ।
गच्छमि लग्गउ एत्थु जि अच्छहि कल्लइ आयहु महु मुहुं पेच्छहि।
ता चिडउल्लियाइ पडिबोल्लिउ हियवउ णाह महारउ सल्लिउ।
पइं विणु एक्कु वि दिवहु ण जीवमि अज्जु वियालइ जमपुरि पावमि।
करेहि सवह जइ परइ ण आवहि तो मइं णिच्छउं मुइय विहावहि।

घत्ता—भणइ पक्खि हलि पक्खिणि परइ ण एमि जइ॥
हउं एयहु जमयग्गिहि दुक्किउ लेमि तइ॥१३॥

१४

तं णिसुणिवि सयबिंदुहि णंदणु पभणइ रोसजलणजालियतणु।
अरि अरि पिसुण पक्खि किं बुंकउं महुं गुणवंतहु किं किर दुक्किउं।

१३

तब वह सम्यग्दृष्टि देव कहता है कि जो तुम्हारी निष्ठा (साधना) में लीन है, और जो गतमल है, ऐसे तापसको बताओ। आओ-आओ, धरणीतलको चलें। सुधिदेवने कहा—कामका निवारण करनेवाले आदरणीय जमदग्नि मुनिको देखिए। वे दोनों ही देव, जिसमें गुणगणकी शिक्षा है, ऐसी धर्म परीक्षामें लग गये। वे दोनों चटक पक्षीका जोड़ा बनकर मुनिकी दाढ़ीमें घोंसला बनाकर रहने लगे। वे दोनों कण चुगते क्रीड़ा करते और भ्रमण करते। तापसके दाढ़ी-रूपी घरमें रहनेवाले वे दोनों शब्द भी करते। एक दूसरे दिन चिड़ा कहता है—'हे प्रिये, प्रिये, मैं भ्रमण-प्रिय हूँ। मैं जाता हूँ। तुम यहाँ लगकर रहो। कल आये हुए मेरा मुँह तुम देखोगी।' तब चिड़ियाने उत्तर दिया कि हे स्वामी, मेरा हृदय पीड़ित है, तुम्हारे बिना मैं एक दिन जीवित नहीं रह सकती, मैं आज ही शाम यमपुर चली जाऊँगी। तुम शपथ लो। यदि तुम कल तक नहीं आओगे तो तुम मुझे निश्चित रूपसे मरा हुआ देखोगे?

घत्ता—चिड़ा कहता है—"हे चिड़िया रानी, (पक्षिणी) यदि मैं कल तक लौटकर नहीं आया तो मैं इस जमदग्निके पापको ग्रहण करूँ" ॥१३॥

१४

यह सुनकर क्रोधकी ज्वालासे जिसका शरीर जल रहा है, ऐसा शतबिन्दुका पुत्र बोला,

१३. १. AP वच्चहं। २. P पच्छहि। ३. A जिण। ४. A तावसभासुर। ५. A रमंति। ६. A भवण°; P भणमि। ७. महुं। ८. A डोल्लिउ। ९. A करहु। १०. A णिच्चउ। ११. A लेवि।

१४. १. A पक्खि पिसुण। २. AP बुक्किउं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जइ दुक्किउ तो पइं संघारमि हत्थें णिहसिवि पेट्टु[3] समारमि ।
एव चवेप्पिणु कयसंकीलणु करहिं णिहिट्टिउ सउणिणिहेलणु ।
पेहुणिल्ल थिय अंबरि जाइवि पभणिउ तवसि तेर्णं पोमाइवि ।
तवहु ण जुत्तउं जीवविणासणु खमहिं ताय खम मुणिहिं विहूसणु ।
ता भासइ छारेणुद्धूलिउ हउं तुम्हहिं किं झाणहु चालिउ ।
किं मइं कियउं पाउं तवचरणें गणवइतिणयणपूयाकरणें ।
ता घरपक्खि कहइ लइ चंगउं पइं तवतावें ताविउं अंगउं ।
पर किं वेयवयण ण वियाणिउं णवउ कलत्तु ण कत्थु वि माणिउं ।
सुयमुहकमलु ण कहिं वि णिहालिउं दुरिएं अप्पाणउं किं मइलिउ ।
णत्थि अपुत्तहु गइ विप्पागमि ता संजाय चिंत जइपुंगमि ।

घत्ता—अण्णाणिउ तवभट्ठउ मायावयणहउ ॥
सो तहु पारयणामहु मामहु पासि गउ ॥१४॥

१५

तणुरुहकारणि मग्गइ कण्णउ कज्जलकंचणमरगयवण्णउ ।
वेयालु व वियरालु जडालउ अवलोएप्पिणु णट्ठउ बालउ ।
थेरु जराजज्जरिउ ण लज्जइ घरघरिणीवाएं किह भज्जइ ।
कीलंती अण्णेक पियारी कुयरि रेणुधूसर लहुयारी ।

"अरे-अरे दुष्ट पक्षी, तूने क्या कहा, मुझ गुणवान्‌में क्या पाप है ? यदि दुष्कृत है तो तुम्हें मारता हूँ। हाथसे रगड़कर चूर्ण-चूर्ण करता हूँ।" यह कहकर, जिसने परिहास किया है, ऐसे पक्षियोंके घोंसलेको वह हाथसे रगड़ता है। दोनों पक्षी जाकर आकाशमें स्थित हो गये—प्रशंसा करते हुए। तापससे कहा कि तपस्वीके लिए जीवका नाश करना ठीक नहीं। हे तात, क्षमा कीजिए, क्षमा मुनियोंका आभूषण है। तब भस्म-विभूषित वह मुनि कहते हैं कि तुम लोगोंने हमें ध्यानसे क्यों विचलित किया। गणपति और शिवकी पूजा और तपश्चरण करके मैंने क्या पाप किया ? इसपर गृहपक्षी कहता है—"अच्छा लो, तुमने तपतापसे अपने शरीरको सन्तप्त किया। पर क्यों तुमने वेद वचन नहीं जाना। तुमने नवकलत्रको भी नहीं माना। तुमने पुत्रके मुखकमलको कभी भी नहीं देखा। तुमने अपनेको पापसे मलिन क्यों किया ? ब्राह्मणोंके आगमके अनुसार पुत्रहीन व्यक्तिकी कोई गति नहीं है।" (यह सुनकर) यतिवरको चिन्ता पैदा हो गयी।

घत्ता—अज्ञानी तपसे भ्रष्ट और मायावचनोंसे आहत वह अपने पारत नामके मामाके पास गया ॥१४॥

१५

पुत्रकी इच्छासे वह कन्या मांगता है। काजल, स्वर्ण और मरकतके रंगका वह वेतालके समान विकराल और जटासे युक्त था। उसे देखकर, कन्याएँ भाग गयीं। बुढ़ापेसे जर्जर वह बूढ़ा जरा भी नहीं लजाया। घर और गृहिणीकी बातसे वह कैसे भग्न होता ? खेलती हुई एक और

---

३. AP पिट्टु । ४. AP तहिं । ५. AP कयउ । ६. A सुरपक्खि; T घरपक्खि । ७. AP पइं ।
१५. १. AP घरि घरिणी° । २. P °धूसरि ।

रेणुय भणिवि तेण हक्कारिवि कयलीहलु दंसेवि [3]पैयारिवि ।
वइसारिय [4]अंचोलिहि लुद्धें भणिउं अणंगसरोहणिरुद्धें ।
णिसुणि ससुर एयइ हउं इच्छिउ मुद्धइ एंतु मणेण पडिच्छिउ ।
एह [5]देवि [6]लहुई किं वुच्चइ जाहि महारउ वोल्लिउ रुच्चइ ।
घत्ता—णासउ [7]तणुगरुयत्तणु पत्थिवपुत्तियहं ॥
वड्ढियजोव्वणगव्वहं मज्झु विरत्तियहं ॥१५॥

१६

[1]कण्णाउ खुज्जियाउ तहु सावें जायउ तिव्वतवोहपहावें ।
कण्णाकुज्जणयरु तं [2]घोसिउ देवहिं [3]जडचरित्तु उवहासिउ ।
एयहं पासिउ एह रवण्णी देहि मज्झु ता ताएं दिण्णी ।
गउ वणवासहु महिहरकंदरि तहिं णिवसंतहं ताहं सणिज्झरि ।
जाया तणुरुह दोण्णि [4]महाभुय दोण्णि वि चंद सूर णं णहचुय ।
दोहिं मि णिहियइं जयजसधामइं इंदसेयरामंतइं णामइं ।
रेणुयभायरु साहु अरिंजउ रिद्धिवंतु तवतत्तु सुसंजउ ।
आउ णिहालिवि ससइ णमंतिइ मग्गिउ किं पि हसंतहसंतिइ ।

धूल-धूसरित छोटी प्रिय कन्याको रेणुका कहकर पुकारा और केलेका फल दिखाकर उसे वंचित कर उस लोभीने उसे गोदमें बैठा लिया। कामदेवके तीरोंसे घायल वह बोला, 'हे ससुर, सुनिए। उसके द्वारा मैं चाहा गया हूँ। आते हुए मुझे मुग्धाने मनसे स्वीकार किया है। यह देवी है, इसे छोटा क्यों कहा जाता है? कि जिसे हमारा बोलना अच्छा लगता है।

घत्ता—मुझसे विरक्त तथा जिनका यौवनगर्व बढ़ा हुआ है ऐसी पार्थिव कन्याओंके शरीरोंका गौरव नष्ट हो जाये' ॥१५॥

१६

उसके शाप और तीव्र तपके प्रभावसे कन्याएँ कुबड़ी हो गयीं। उसे कन्याकुब्ज (कान्यकुब्ज) नगर घोषित कर दिया गया। देवोंने उसके (जमदग्नि) मूर्खचरितका उपहास किया। इनकी तुलनामें यह सुन्दरी है, यह मुझे दे दो। तब पिताने उसे दे दिया। वनवासके लिए वह झरनोंसे युक्त पर्वतकी कन्दरामें चला गया। वहाँ निवास करते हुए उनके दो महाबाहु पुत्र हुए। दोनों मानो आकाशसे च्युत सूर्यचन्द्र थे। जय और यशके घर दोनोंके नाम इन्द्रराम और श्वेतराम रखे गये। रेणुकाके भाई मुनि अरिजंय ऋद्धिसे युक्त, तपसे सन्तप्त और सुसंयमी थे। वह उसे

३. A वियारिवि; PT पवियारिवि। ४. A अञ्चो लिहि। ५. AP देहि। ६. लहुयी; P लहुवी। ७. P वडगरुय°।

१६. १. AP कण्णाखुज्जु। २. A तहु घोसिउ। ३. A कुडचरित्तु। ४. A महब्भुय। ५. A दिण्णइं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जइयहुं महु विवाहु किउ ताएं तइयहुं धणु ण दिण्णु पइं भाएं।
अज्जु देहि बंधव जइ भावइ जेण दुक्खु दालिद्दु वि णावइ।
घत्ता—भणइ मुणीसरु सुंदरि छिंदहि कुमयमइ ।।
दंसणणाणचरित्तइं रयणइं तिण्णि लइ ।।१६।।

१७

ता सम्मत्तु वियारें सहियउ सावयवउ मुद्धइ संगहियउ।
तुट्ठु भडारउ सुट्ठु वियक्खणु करुणें करिवि सबहिणिणिरिक्खणु।
परसुमंतु परिरक्खणु देंतें दिण्णी कामधेणु भयवंतें।
हूई रेणुय ताइ कयत्थी पभणइ भिक्खुहि पंजलिहत्थी।
तुम्हारिसहं सजीउ वि देंतहं दीणुद्धरणु सहाउ महंतहं।
ससहि महंतु हरिसु पयणेप्पिणु गउ रिसि धम्मविद्धि पभणेप्पिणु।
कामधेणु हियइच्छिउ दुब्भइ [3]तं तावसकुडुंबु तहिं रिज्झइ।
अण्णहिं वासरि सुरगिरिधीरें सहसबाहु संजुउ कयवीरें।
गहणणिहेलणु छुडु जि पइट्ठउ राउ तवोहणेण तें[4] दिट्ठउ।
घत्ता—अब्भागयपडिवत्तिइ भोयणु दिण्णु तहु ।।
हियउं[5] भिण्णउं दोहं मि [6]कुअरहु पत्थिवहु ।।१७।।

देखनेके लिए आये। प्रणाम करते हुए बहन ने हँसी-हँसीमें कुछ तो भी माँगा—"जब पिताने मेरा विवाह किया था तो तुम भाईने मुझे कुछ भी धन नहीं दिया था। हे भाई, यदि अच्छा लगे तो मुझे आज दो। जिससे दुख और दारिद्र्य न फटके।"

घत्ता—मुनीश्वर कहते हैं—"हे सुन्दरि, अपनी कुमतबुद्धिको दूर करो और सम्यक् दर्शन, ज्ञान और चरित्र ये तीन रत्न स्वीकार करो" ।।१६।।

१७

तब उस मुग्धाने ज्ञानके साथ सम्यक्त्व श्रावक व्रत स्वीकार कर लिये। अत्यन्त विचक्षण अपनी बहनसे भेंट करनेवाले आदरणीय मुनि परम सन्तुष्ट हुए और करुणा कर उसे परिरक्षण मन्त्र सहित फरसा देते हुए उन्होंने ज्ञानवान् एक कामधेनु दी। रेणुका उससे कृतार्थ हो गयी। हाथ जोड़कर उसने महामुनिसे कहा—"अपना जीवन भी देनेवाले आप जैसे महापुरुषोंका स्वभाव ही दीनोंका उद्धार करना है।" इस प्रकार अपनी बहनके लिए महान् हर्ष उत्पन्न कर और धर्मवृद्धि हो—यह कहकर वह मुनि चले गये। वह कामधेनु इच्छानुसार दुही जाती और वह तपस्वी परिवार वहाँ सम्पन्न हो गया। दूसरे दिन सुमेरुपर्वतके समान धीर कृतवीरके साथ सहस्रबाहु आया। वह शीघ्र तापस-गृहमें प्रविष्ट हुआ। तपोधन (जमदग्नि) ने राजाको देखा।

घत्ता—अभ्यागतकी (आतिथ्यकी) परम्पराके अनुसार उसके लिए भोजन दिया गया। राजा और कुमार (कृतवीर) का हृदय आश्चर्यसे चकित हो गया ।।१७।।

---

६. A जं भावइ। ७. A दालिद्दु ण आवइ; P दालिद्दु वि ण आवइ। ८. A छड्डहि।
१७. १. A मुद्धें। २. P पररक्खणु। ३. P तें। ४. P तहिं। ५. AP हियवउं। ६. A कुमरहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८

णियजणणीसस णविवि णियच्छिय   माउच्छिय कयवीरें पुच्छिय।
अम्मि अम्मि भोयणु भल्लारउं   जहिं चक्खिज्जइ तहिं रससारउं।
एहउं नृवहं मि णउं संपज्जइ   तुम्हहं तावसाहं किह जुज्जइ।
अक्खिउ रेणुयाइ विहसेप्पिणु   गउ बंधवु सुरधेणुय देप्पिणु।
ताइ वुत्तु अम्हहं चिंतिउ फलु   णं तो पुणु वणि भुंजहुं दुमहलु।
जं अंबाइ एम आहासिउं   तणएं तं णियपिउहि पयासिउ।
रयणइं होंति महीयलवालहं   णउ तवसिहिपसरियजडजालहं।
तासु वि तहिं जि चित्तु आसत्तउं   कयवीरें कर मउलिवि वुत्तउं।
चउरासमगुरु रयणिहिं अंचहि   दिव्वगाइ दिय देहि म वंचहि।
घत्ता—गाइ ण देमि म पत्थहि अरितरुणियरसिहि॥
विणु गाइइ अम्हारइ ण सरइ होमविहि॥१८॥

१९

तो तं सुणिवि तेण महिणाहें   गोहणलुद्धें णं वणवाहें।
झ त्ति अमरवरसुरहि महड्ढिय   कंचणदामइ धरिवि णियड्ढिय।
भुयहिं धरइ जमयग्गि ण संकइ   रेणुय कलयलु करहुं ण थक्कइ।

१८

अपनी माँकी बहनको प्रणाम कर कृतवीरने उसे देखा। मौसीसे उसने पूछा, "हे माँ, हे माँ, भोजन बहुत अच्छा है, जहाँसे भी चखो, वहींसे रसमय है। ऐसा भोजन तो राजाओंके लिए भी सम्भव नहीं है। तुम तपस्वियोंके लिए यह कैसे प्राप्त होता है?" तब रेणुका हँसकर बोली, "मेरा भाई सुरधेनु देकर गया है, हे पुत्र, उसके द्वारा हमारे लिए चिन्तित फल मिलते हैं, नहीं तो वनमें हम वृक्षोंके फल खाते हैं।" जब मौसीने इस प्रकार कहा तो पुत्रने यह अपने पिताके लिए बताया कि रत्न धरतीका पालन करनेवालोंके होते हैं न कि तपस्याकी आगसे जटाजाल बढ़ानेवालोंके। उसका (सहस्रबाहुका) चित्त भी उसमें आसक्त हो गया। कृतवीरने उससे हाथ जोड़कर कहा, "चारों आश्रमोंके गुरु (राजा) की तुम रत्नोंसे अर्चा करो। हे द्विज, तुम दिव्य गाय दो, धोखा मत दो।"

घत्ता—(द्विजने कहा)—शत्रुरूपी वृक्षोंके समूहके लिए आगके समान हे (कृतवीर), मैं राजाके लिए गाय नहीं दूँगा। गायके बिना हमारी यज्ञविधि पूरी नहीं होगी॥१८॥

१९

तब गोधनके लोभी उस राजाने मानो भीलके समान महा-ऋद्धि सम्पन्न वह सुरधेनु स्वर्णकी शृंखलासे पकड़कर खींच ली। जमदग्नि बाहुओंसे उसे पकड़ता है, शंका नहीं करता,

---

१८. १. AP णिवहं। २. P ण वि। ३. AP दुमफलु। ४. णियपियहि। ५. A तवसियपसरिय°।
१९. १. P ता तें सुणिवि। २. AP महिड्ढिय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तवसिहि करु करेण आच्छोडिउ णिच्चलु मेइणियलि [3]सो पाडिउ।
णीसारिय णंदिणि मढवासहु णं णियजीयवित्ति तणुदेसहु।
उद्धाबद्धणिविडजडमंडलु सवणोलंबियतंबयकुंडलु।
सोत्तरीयउववीययउरयलु धूलिधवलु अवलोइयभुयबलु।
बद्धतोणु परिवड्ढियअमरिसु धाइउ सर मुयंतु रणि तावसु।
दोण्णि तिण्णि चउ पिच्छंचिय वरै पंच सत्त णव दह चंचलयर।
बारह तेरह पुणु पण्णारह सोलह बाण मुक्क सत्तारह।
णहयलुसरसंछण्णु ण दीसइ सहसबाहु णियरहियहु भासइ।

घत्ता—[12]वाहि वाहि रहु तुरिएं संघारमि कुमइ॥
एहा महियलि जइ जइ तो केहा णिवइ॥१९॥

२०

बाणहिं बाण हणेप्पिणु विद्धउ णं[1] चंदणतरु णायहिं रुद्धउ।
जइ विचित्तमइदइएं घाइउ सयबिंदुहि तणुरुहु विणिवाइउ।
णाहमरणि दुक्खेण विसट्टइ गाइ ण जाइ हयवि पलट्टइ।
महिपलोट्टु णियसामि णिहालइ पुच्छि विज्जइ जीहइ लालइ।

रेणुका कलकल करते हुए नहीं थकती। तपस्वीके हाथको उसने अपने हाथसे झकझोर दिया और उसे अचेतन धरतीपर गिरा दिया। आश्रमसे नन्दिनी निकाल ली गयी मानो शरीरप्रदेशसे अपनी जीववृत्ति निकाल ली गयी हो। जिसका निविड जटामण्डल ऊपर बँधा हुआ है, जिसके लाल-लाल कुण्डल कानों तक लटक रहे हैं, जो वक्षपर उत्तरीय और यज्ञोपवीत पहने हुए हैं, जो धूलसे धूसरित है और बार-बार अपनी भुँजाएँ देख रहा है, जिसने तूणीर (तरकस) बाँध रखा है, जिसका अमर्ष बढ़ रहा है ऐसा वह तपस्वी (जमदग्नि) तीर छोड़ता हुआ युद्धमें दौड़ा। उसने पुंखसे शोभित दो, तीन, चार, पाँच, सात, नौ और दस, बारह, तेरह फिर पन्द्रह, सोलह और सत्तरह चंचल तीर छोड़े। तीरोंसे आच्छन्न आकाश दिखाई नहीं देता। तब सहस्रबाहु अपने सारथिसे कहता है—

घत्ता—अश्वसे शीघ्र-शीघ्र रथ बढ़ाओ, मैं उस कुमतिको मारूँगा। यदि धरतीपर इस प्रकारके यति हैं, तो राजा किस प्रकारके होंगे॥१९॥

२०

तीरोंसे तीरोंको आहत कर उसने उसे विद्ध कर दिया, मानो चन्दनवृक्षको नागोंने अवरुद्ध कर लिया हो। विचित्रमतिके पति (सहस्रबाहु) ने यतिको आहत कर दिया। शतबिन्दुका पुत्र मार डाला गया। अपने स्वामीके मरनेपर गाय दुःखसे आहत हो उठती है, वह आगे

---

३. A तहि पाडिउ। ४. AP adds after this: चल्लिउ लेवि जाम णियवासहु (A णियदेसहु)। ५. A omits this foot. ६. P तणु देंतहु। ७. A समणोलंबियं। ८. A सोत्तरीउ। ९. A धवलु। १०. AP सर। ११. A णहयलु संछण्णउ णउ दीसइ; P णहयलु छण्णु ण बाणहि दीसइ। १२. वाहु वाहु।

२०. १. AP चंदणतरु णं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुद्धें सिंचइ वयणु समिच्छइ   ओरसंति णियडुल्लइ[2] अच्छइ ।
जाम ताम णियवइरिहिं[3] चप्पिवि   रोवइ रेणुय विहुरु वियप्पिवि ।
हा हा कंत कंत किं सुत्तउ   किं ण चवहि महुं काइं विरत्तउ ।
मुच्छिओ सि किं तवसंतावें   किं परवसु थिउ झाणपहावें ।
लइ कुसुमाइं घट्टु लइ चंदणु   करहि भडारा संझावंदणु ।
घत्ता—उट्ठि णाह जलु ढोवहि तण्हाणिरसणउं ॥
करि सहवासियहरिणहं करयलफंसणउं ॥२०॥

२१

दावहि एयहु कुवलयकंतिहि   जलु होमावसेसु सिसुदंतिहि ।
उट्ठि णाह तुहुं एक्कु जि जाणहि   तणयहं वेयपयइं वक्खाणहि ।
तेहिं वि अज्जु काइं सुइराविउं   अवरु किं पि किं दुग्गि[1] विहाविउ ।
जहिं गय कंदमूलफलगुंछेहं[2]   तहिं किं कमि णिवडिय खलमेच्छहं ।
णउ मुणंति जं जणयहु[3] जायउ   ता तहिं सुयजुवलुल्लउं आयउं ।
आयण्णवि[4] तहिं जणणिहि रुण्णउं   पिउमडउल्लउं बाणविहिण्णउं ।
जाइवि[5] दोहिं मि थीयणसारी   पुच्छी अम्माएवि भडारी ।
भणु भणु केण[6] ताउ संघारिउ   केण सपाणणासु[7] हक्कारिउ ।
कुलिसिहि कुलिसु केण मुसुमूरिउ   सेसफडाकडप्पु किं चूरिउ ।

नहीं जाती, (सींग मारकर) पीछे हट आती है। धरतीपर पड़े हुए अपने स्वामीको देखती है। पूँछसे हवा करती है, जीभसे चाटती है। दूधसे सींचती है, उसका मुख देखती है, चिल्लाती है और जब उसके निकट रहती है, तबतक अपने शत्रुओंके द्वारा घिरी हुई रेणुका दुखका विचार कर रोती है, "हा-हा हे स्वामी, तुम क्यों सो गये ? मुझसे बोलते क्यों नहीं, मुझसे विरक्त क्यों हो ? तपके सन्तापसे मूच्छित क्यों हो ? ध्यानके प्रभावसे परवश क्यों हो ? लो ये फूल, लो यह चन्दन घिसा। हे आदरणीय, सन्ध्यावन्दन करिए।

घत्ता – हे स्वामी, उठिए। प्यासको दूर करनेवाला जल ग्रहण करिए और सहवास करनेवाले हरिणोंका करतलसे स्पर्श कीजिए ? ॥२०॥

२१

कुवलयके समान कान्तिवाले बालगजको होमावशेष जल दिखाओ। हे स्वामी, तुम उठो। एक तुम्हीं वेदपदोंको जानते हो और बच्चोंके लिए उनकी व्याख्या करते हो। उन्होंने भी आज क्यों देरी कर दी ? क्या कुछ और वनमें उन्होंने देख लिया है ? जहाँ कन्दमूल और फलके गुच्छोंके लिए गये हुए वे क्या दुष्ट म्लेच्छोंके हाथ पड़ गये हैं कि जो वे पिताकी मृत्युको नहीं जानते ?" इतनेमें वे दोनों पुत्र वहाँ आ गये। वहाँ अपनी माँका रोना सुनकर और पिताके शवको तीरोंसे छिदा हुआ देखकर दोनों, स्त्रीजनमें श्रेष्ठ आदरणीय माता रेणुका देवीसे पूछा—"बताओ-बताओ, किसने पिताको मारा ? किसने अपने प्राणोंके विनाशको ललकारा है ? वज्रसे वज्रको

२. A णियडुल्लिय; P णियदुल्लइ। ३. A णियवइउरि।

२१. १. A A दुग्गु। २. AP °गोंछहं। ३. AP जणणहु। ४. A आयण्णिवि तहिं; P आयण्णंतहिं। ५. A जोयवि। ६. P ताउ केण। ७. A सुपाणणासु।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

केसरिकेसरग्गु किं छिण्णउं केण गरलु हालाहलु चिण्णउं।
केण सदेहु हुणिउ कालाणणि को पइट्ठु वइवसमुहघंघलि।

घत्ता—इज्जइ कहिउ रुयंतिइ भोयणरिद्धिं भरि॥
सहसबाहु कयवीरु वि भुंजिवि मज्झु घरि॥२१॥

२२

जहिं भुत्तउं तहिं भाणउं भिंदिवि कंतु महारउ कंडहिं छिंदिवि।
गय रिउ हरिवि महारिय धेणुय ता संथविय सपुत्तिहिं रेणुय।
गज्जिवि पुणु वि रोसरसभरियउ णयणजुयलजलु जणणिहि पुसियउ।
ता जेट्ठहु उवइट्ठउ मायइ परसुमंतु दिण्णासीवायइ।
गय बेण्णि मि जण वीर महाइय तं साकेयणयरु संप्राइय।
करि तुरंगु रहवरु णरु णावइ दसदिसु चडुलु परसु परिधावइ।
लंबिरकेसइं भउहाभीसइं पिउपुत्तहं खणि छिण्णइं सीसइं।
णासंत वि खत्तिय णिक्खत्तिय वइवसमुहकुहरंतरि घत्तिय।
जो भूआलु णाम चिरु राणउ जो तउ चरिवि मरिवि सणियाणउ।
देउ महासुक्कंतरि जायउ जो पुणरवि जम्मंतरि आयउ।
समउं तेण गब्भेण पलाणी सइ विचित्तमइ णामें राणी।

किसने चूर-चूर किया है? उसने शेषनागके फनसमूहको क्यों चूर-चूर किया है? सिंहके अयालके अग्रभागको किसने छुआ? गरलविषको किसने ग्रहण कर लिया है? किसने कालाननमें अपने शरीरको होम दिया है? यमकी मुखरूपी विडम्बनामें कौन पड़ गया है?"

घत्ता—आदरणीया (माँ) ने रोते हुए कहा, "भोजनकी ऋद्धिसे भरपूर मेरे घरमें भोजन करके सहस्रबाहु और कृतवीर—॥२१॥

२२

जिस पात्रमें उन्होंने खाया, उसीमें छेद कर और मेरे स्वामीको तीरोंसे छेदकर दुश्मन हमारी गायका हरण कर ले गया।" तब पुत्रोंने अपनी माँ रेणुकाको सान्त्वना दी। फिर क्रोधके रससे भरे हुए उन दोनोंने गरजकर माँकी दोनों आँखोंके आँसू पोंछे। जिसने आशीर्वाद दिया है ऐसी माँने, तब बड़े पुत्रके लिए परशुमन्त्रका उपदेश दिया। वीर और महा-आहत वे दोनों गये और उस साकेत नगर पहुँचे। हाथी-घोड़ा, रथवर और मनुष्यकी भाँति वह चंचल फरसा दसों दिशाओंमें दौड़ता है। पिता-पुत्रके लम्बे केशवाले, भौंहोंसे भयंकर सिरोंको उसने क्षण-भरमें काट डाला। भागते हुए क्षत्रियोंको भी उसने धूलमें मिला दिया और उन्हें यमके मुखरूपी कुहरमें डाल दिया। जो पुराना भूपाल नामका राजा था और जो तप कर निदानपूर्वक मरा था, महाशुक्र स्वर्गमें देव हुआ था और पुनः जन्मान्तरमें आया था। उसके साथ गर्भ लेकर (उसे गर्भमें रखकर) विचित्रमती नामकी उस सती रानीने वहाँसे पलायन किया।

८. A जि छित्तउ। ९. AP भुत्तउं। १०. AP °हरि।
२२. १. AP गव। २. AP महारी। ३. A सपुत्तहि। ४. P घोर। ५. AP संपाइय। ६. AP भूपालु।
७. AP सो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—णियपइपुत्तहं मरणें सोयविसंठुलिय ॥
सुंदरि भयकंपियतणु कत्थइ संचलिय ॥२२॥

२३

सा गुरुहार दिट्ठ संडिल्लें   तावसेण स[1]सयणवच्छल्लें ।
अप्पिय सा[2] सुबुद्धिणिग्गंथहु   सुद्धसहावहु कहियसुपंथहु ।
वस[3]इ जिणालइ गइ रणयालइ   फुल्लियकाणणि तहिं मिगमेलइ ।
पुत्तु पसूई देवहिं रक्खिउ   मायइ कुलउद्धरणु णिरिक्खिउ ।
पुच्छिउ साहु समंजसु घोसइ   णंदणु छक्खंडाहिउ होसइ ।
सोलहमइ पत्तइ संवच्छरि   तुहुं पेच्छिहिसि चिंधु[4] तणुरुहवरि ।
देवीभायरेण हयसल्लें   णिउ णियभवणहु सिसु संडिल्लें ।
पडिभडवरसिरखुडणसमत्थइं   परिपालिउ सिक्खिउ सत्थत्थइं ।
एत्तहि रिसिजं[5]मयग्गिहि पुत्तें   जयसिरिरइरसलंपडचित्तें ।

घत्ता—जणणमरणु सुअ[6]रंतें मारिय रायवर ॥
परसुमंत[7]माहप्पें रणि करवालकर ॥२३॥

२४

एक्कवीसवारउ णिक्खत्तिवि   खत्तिय सय[1]लु वि छारुप[2]रत्तिवि ।
वड्ढियवेयवयणमाहप्पहं   पुहइ असेस वि दिण्णी विप्पहं ।

घत्ता—अपने पति और पुत्रकी मृत्युके कारण शोकसे अस्त-व्यस्त, भयसे जिसका शरीर कांप रहा है ऐसी वह सती सुन्दरी कहीं भी चल दी ॥२२॥

२३

स्वजनोंके प्रति वात्सल्य रखनेवाले तपस्वी शाण्डिल्यने जब उसे गर्भवती देखा तो उसने सन्मार्गका कथन करनेवाले शुद्ध स्वभावसे युक्त सुबुद्धि (सुबन्धु) नामक निग्रन्थ मुनिको उसे सौंप दिया। वह जिनालयमें रहने लगी। रणका समय बीतनेपर जहाँ पशुओंका संगम है, ऐसे खिले हुए जंगलमें उसने पुत्रको जन्म दिया। देवोंने उसकी रक्षा की। माताने अपने कुलके उद्धारकर्ताको देखा। उसने न्यायशील मुनिसे पूछा। उन्होंने बताया, "तुम्हारा पुत्र छह खण्ड धरतीका स्वामी होगा। सोलहवाँ वर्ष प्राप्त होनेपर तुम अपने पुत्रके ऊपर राजचिह्न देखोगी।" जिसका शल्य नष्ट हो गया है ऐसा देवीका भाई शाण्डिल्य बच्चेको अपने घर ले गया। उसने उसका परिपालन किया और शत्रु योद्धाओंके श्रेष्ठ सिरोंको काटनेमें समर्थ शस्त्र-अस्त्रोंकी उसे शिक्षा दी। यहाँ पर जमदग्निके विजयश्रीके रतिरसके लम्पट चित्तवाले पुत्रने—

घत्ता—अपने पिताके मरणकी याद करते हुए रणमें हाथमें तलवार लिये हुए राजाओंको परशुमन्त्रके प्रभावसे मार डाला ॥२३॥

२४

इक्कीस बार मारकर, समस्त क्षत्रियोंको खाकमें मिलाकर जिनके वेदवचनोंका माहात्म्य

---

२३. १. A सिसुजणवच्छल्लें; P ससुयणि वच्छलें। २. AP सइ सुबंधु°। ३. A तेत्थु सा वि जा वसइ जिणालइ; P वसइ जिणालइ गय रयणालइ। ४. A सचिंधु तणु°। ५. A सिरिजम°। ६. AP सुमरंतें। ७. A °मंतिमाहप्पें रण°।

२४. १. A सयल वि। २. AP पवत्तिवि।

जाया रिद्धिइ सक्कसमाणा जहिं दीसहि तहिं दियवर राणा।
जहिं दीसइ तहिं पसु मारिज्जइ पियरहं ढोएप्पिणु पलु खज्जइ।
सोमपाणु महुमहुरउ पिज्जइ सामवेयपउ मणहरु गिज्जइ।
विउलजण्णमंडवसिरि दावइ होमहुयासधूमु णहि धावइ।
णिच्चमेव संठियपडिहारइ परसुरामदेवेसँदुवारइ।
पयडियदंतपंतिवियरालइं खंभि खंभि कीलियइं कवालइं।
ताराणियरसिसिरकरधवलइं णं जसवेल्लिहि फुल्लइं विमलइं।
जायउ सव्वँभोमभूवालउ किं वण्णिज्जइ तावसबालउ।
गुरुहारहि कह कह व चलंतहि मायहि पसवणवियणकिलंतहि।
उप्पज्जइ सो को वि सुणंदणु किज्जइ जेण वइरिसिरछिंदणु।
जामयग्गिणरणाहें जेहउ अण्णहु जयविलासु कँहु एहउ।
घत्ता—भरहु असेसु वि भुत्तउ हय रिउ तायवहि॥
पुप्फदंत तहु तेएं सभय चरंति णहि॥२४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए महाकव्वे अरतित्थंकरणिव्वाणगमणं परँसुरामविहववण्णणं णाम पंचसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥६५॥

बढ़ रहा है ऐसे विप्रोंको धरती दे दी। ऋद्धिसे वे इन्द्रके समान दिखाई देने लगे। जहाँ दिखाई देता है वह ब्राह्मण राजा है। जहाँ दिखाई देता है वहाँ पशु मारे जाते हैं, पितरोंको चढ़ाकर मांस खाया जाता है, मधुर-मधुर सोमपान किया जाता है, सामवेदके मधुर पदोंका गान किया जाता है, विपुल यज्ञोंकी मण्डपश्री दिखाई देती है, यज्ञोंकी आगका धुआँ आकाशमें दिखाई देता है। जिसमें प्रतिहार बैठे हुए हैं, ऐसे परशुराम राजाके द्वारपर नित्य हो, जो स्पष्ट दिखाई पड़नेवाली दन्तपंक्तिसे विकराल हैं ऐसे कपाल खम्भे-खम्भेपर ठोक दिये गये हैं, जो ऐसे लगते हैं मानो यश-रूपी लताके तारासमूह और चन्द्रकिरणोंके समान धवल और विमल फूल हों। वह सार्वभौम राजा हो गया। उस तपस्वी राजाका क्या वर्णन किया जाये। गर्भके भारवाली, किसी प्रकार कठिनाईसे चलते हुए प्रसवकी वेदनासे पीड़ित माताका वैसा कोई एक अच्छा बेटा पैदा होता है कि जिसके द्वारा शत्रुका सिर काटा जाता है। जमदग्नि राजाने जैसा (विलास भोगा) ऐसा जयविलास किसका है?

घत्ता—पिताका वध होनेपर उसने शत्रुको मारा और अशेष भारतका भोग किया। उसके तेजसे सूर्य और चन्द्रमा आकाशमें डरसे भ्रमण करते हैं ॥२४॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका अरतीर्थंकर निर्वाण गमन एवं परशुराम विभव वर्णन नामका पैंसठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६५॥

३. A सुदुवारइ। ४. A सव्वभूमिभूवालउ। ५. A कहि। ६. A सुभूमचक्कवट्टिउप्पत्ती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६६

१

एत्तहि गिरिगहणि तावसघरि वड्ढइ सुंदरु ॥
लक्खणचेंचइउ णहणिवडिउ णाइ पुरंदरु ॥ ध्रुवकं ॥

करताडियवरफणिफणकडप्पु उद्दालियवणमायंगदप्पु ।
लीलाइ धरियकेसरिकिसोरु तरुकीलिरकिंणरिचित्तचोरु ।
दियसिहिं वड्ढिउ णं बालयंदु णं सो णिववंसहु तणउ कंदु ।
सत्तुहि छिंदंतहु अमरसेण उव्वरिउ कहिं मि जो विहिवसेण ।
णं सहसबाहुकुलजसणिहाउ णं परसुरामसिरकुलिसघाउ ।

सन्धि ६६

यहाँ गहनवनमें तपस्वी शाण्डिल्यके घर वह सुन्दर इस प्रकार बढ़ने लगा जैसे लक्षणोंसे शोभित आकाशसे पतित इन्द्र हो ।

१

जिसने महानागोंके फनसमूहको अपने करतलसे ताड़ित किया है, जिसने वनगजोंके दर्पको उखाड़ दिया है, जिसने खेल-खेलमें किशोरसिंहोंको पकड़ लिया है, जो वृक्षोंपर क्रीड़ा करती हुई किन्नरियोंके चित्तका चुरानेवाला है, ऐसा वह कुमार कुछ ही दिनोंमें इस प्रकार बढ़ने लगा, मानो बालचन्द्र हो, मानो वह राजवंशका अंकुर हो। देवसेनाको नष्ट करते हुए शत्रुसे जो भाग्यके वशसे किसी प्रकार बच गया हो, जो मानो सहस्रबाहुके कुलका यशसमूह हो, मानो परशुरामके सिरपर

All Mss. have, at the beginning of this samdhi, the following stanza:-

यस्येह कुन्दामलचन्द्ररोचिःसमानकीर्तिः ककुभां मुखानि ।
प्रसाधयन्ती ननु बम्भ्रमोति जयत्वसौ श्रीभरतो नितान्तम् ॥ १ ॥
पीयूषसूतिकिरणा हरहासहार-
कुन्दप्रसूनसुरतोरिणिशक्रनागाः ।
क्षीरोद शेष बल याहि निहंस चैव
किं खण्डकाव्यधवला भरतः स्थ यूयम् ॥ २ ॥

A reads in the third line: बलयासिति हंस चैव; P reads बलसत्तम हंस चैव; AP reards in the fourth line भरतस्तु यूयम् । K has a gloss : या हि त्वं गच्छ; निहंस नितरां हंस त्वमपि गच्छ । यूयं किं भरतः अतिशयात् खण्डकाव्यवत् धवला वर्तध्वे, अपि तु न । तर्हि गच्छन्तु ।

१. १. AP णहि णिवडिउ । २. P °फणिफड° । ३. P उद्दालिय° । ४. A णिरु कीलिरकिंणर° । ५. P omits णं । ६. AP °सिरि कुलिस° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चक्कंकियकरयलु पायपउमु हक्कारिउ मामें सो सुभँउमु ।
विहवत्तणर्दुक्खोहरियछाय अण्णहिं दिणि पुच्छिय तेण माय ।
संडिल्लु मामु तुहुं जणणि माइ पर ताउ ण पिच्छमि महुरवाइ ।
विणु ताएं पुत्तु ण होइ जेण महु संसउ वट्टइ कहहि तेण ।

घत्ता—भणु हउं कासु सुउ महियलि मंडणउ पहिल्लउं ॥
भणु किं कारणेण तुह हत्थि णत्थि कडुंल्लउं ॥ १ ॥

२

तावम्महि अंसुजलोल्लियाइं णयणइं णं कमलइं फुल्लियाइं ।
जाणिवि णियतणयहु तणिय सत्ति पडिलवइ सहसभुयरायपत्ति ।
सुणि सुय जो वुच्चइ परसुरामु तें मारिउ तुह पिउ अतुलथामु ।
तावट्ठवीसधणुदंडतुंगु वण्णें कणयच्छवि रणि अहंगु ।
तं णिसुणिवि णं जमरायदूउ आरुट्ठु अरिहि सिहिचुरुलिभूउ ।
चूडामणिकिरणालिहियमेहि तावेत्तहि रेणुयतणयगेहि ।
दिउ णारायणकमकमलभसलु संपत्तउ कहिं मि णिमित्तकुसलु ।
सो पुच्छिउ तेण कयायरेण उद्धरियसँधरधरगुरुभरेण ।
सहसयरसिरुप्पललूरणेण णियजणणिमणोरहपूरणेण ।

वज्रका आघात हो, जिसका हाथ चक्रसे अंकित है, जिसके पैरोंमें शंख हैं, ऐसे उस कुमारको मामा शाण्डिल्यने सुभौम कहकर पुकारा। वैधव्यके दुःखसे जिसके शरीरकी कान्ति नष्ट हो गयी है ऐसी अपनी माँसे उसने एक दिन पूछा, "हे माँ, शाण्डिल्य मामा है और तुम जननी हो, परन्तु मधुर बोलनेवाले पिताको मैं नहीं देखता हूँ। परन्तु बिना पिताके पुत्र नहीं हो सकता इसीलिए मेरा सन्देह बढ़ रहा है आप बताइए।

घत्ता—कहो, मैं किसका पुत्र हूँ? पृथ्वीतलपर मैं किसका पहला मण्डन हूँ? बताओ किस कारण तुम्हारे हाथमें कड़ा नहीं है" ॥१॥

२

तब माताके नेत्र अश्रुजलसे आर्द्र हो उठे, मानो खिले हुए कमल हों। अपने पुत्रकी शक्तिको जानते हुए सहस्रबाहुकी पत्नी प्रत्युत्तर देती है, "हे पुत्र सुनो, जो परशुराम कहा जाता है उसने अतुलशक्तिवाले तुम्हारे पिताका वध किया है। जो अट्ठाईस धनुष प्रमाण ऊँचे थे, रंगमें स्वर्ण-कान्तिके समान और युद्धमें अभग्न थे।" यह सुनकर आगकी ज्वाला बनकर वह शत्रुपर इस प्रकार क्रुद्ध हो गया, मानो यमराजका दूत हो। जिसके शिखरमणिकी किरणोंसे मेघ अंकित हैं, ऐसे रेणुकाके पुत्रके घर नारायणके चरणकमलोंका भ्रमर एक निमित्तशास्त्री ब्राह्मण आया। जिसने पर्वत सहित धरतीका गुरुभार उठाया है, ऐसे सहस्रबाहुके सिररूपी कमलको काटनेवाले तथा अपनी माँके मनोरथोंको पूरा करनेवाले उसने आदर करते हुए पूछा—

७. A सुभूमु। ८. A °दुक्खें हरिय°। ९. A भणु कासु सुउ हउं महिलहिं मंडणउ। १०. AP कडउल्लउं।

२. १. AP ता अम्महि। २. AP रिउहि। ३. A कह व। ४. A सधरगुरुभायरेण। ५. A °पूरएण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—पइं विप्पेण[6] जगि जीवहं भवियव्वु पमाणिउं[7] ॥
महु कइयहुं मरणु भणु भणु जइ पइं फुडु जाणिउं[8] ॥ २ ॥

३

तं णिसुणिवि विप्पें वुत्तु एम　　रायाहिराय भो णिसुणि देव ।
भोयणकालइ रसरसियभावि　　अग्गइ दक्खालिइ कयसरावि ।
रिउदसण असणभावेण जासु　　णिव परिणमंति तुहुं वज्झु तासु ।
ता राएं णयरि महाविसाल　　काराविय तक्खणि दाणसाल ।
संणिहिय णिओइय दिण्णु दाणु　　घिउं दुद्धु दहिउं इच्छापमाणु ।
पीणिवि[1] देसिय तित्तिइ डरंत[2]　　णिच्चं चिय दाविज्जंति दंत ।
दसदिसिवहि[3] पसरिय एह वत्त　　कयवीराणुयसुइसुसिरु पत्त ।
अइदीहरपंथें मंथिएण　　वणि[4] जंतें वुत्तउ पंथिएण ।
भो भो कुमार लहु जाहि जाहि　　साकेयणयरि भुंजंतु थाहि ।
घत्ता—किं वणतरुहलेहिं खद्धेहिं मि तित्ति ण पूरइ ॥
पेच्छिवि तुज्झु तणु महुं भायर हियवउं जूरइ ॥ ३ ॥

४

जहिं रायहु केरउं अत्थि दाणु　　जहिं जणवउ भुंजइ अप्पमाणु ।
भोयणपत्थावइ[1] मुहरुहोहु　　जहिं दरिसिज्जइ ससिअंतसोहु ।

घत्ता—तुम विप्रके द्वारा विश्वमें जीवोंका भवितव्य प्रमाणित किया जाता है। मेरा मरण कब होगा? कहो-कहो, यदि तुम स्पष्ट जानते हो तो? ॥२॥

३

यह सुनकर विप्रने इस प्रकार कहा, "हे राजाधिराज देव, सुनिए। जिसमें रसके ज्ञायकका भाव है ऐसे भोजनकालमें, सकोरेमें रखे गये शत्रुके दांत जिसके आगे दिखाये जानेपर ओदनभावको प्राप्त होते हैं, हे नृप तुम उसके द्वारा वध्य होगे।" तब राजाने नगरमें उसी क्षण एक विशाल दानशाला बनवायी। वहाँ किंकर रख दिये। इच्छाके अनुसार घी, दूध और दहीका दान दिया। तृप्तिसे प्रसन्न कर डरते हुए यात्रियोंको नित्य ही दांत दिखाये जाते। दसों दिशापथोंमें यह बात प्रसारित हो गयी। कृतवीरके अनुज सुभौमके कर्णविवरमें यह बात पहुँची। अत्यन्त लम्बे पथसे श्रान्त वनमें जाते हुए एक पथिकने कहा, "हे कुमार, शीघ्र जाओ-जाओ और साकेत नगरमें भोजन करते हुए रहो।

घत्ता—खाये गये वन-तरुफलोंसे क्या? तृप्ति पूरी नहीं होती, तुम्हारा शरीर देखकर हे भाई, मेरा हृदय सन्तप्त होता है ॥३॥

४

जहाँ राजाका दान है, जहाँ अप्रमाण जनता भोजन करती है। भोजनके प्रस्तावके समय

---

६. A विप्पेण वर जगि; P विप्पें वर जगि। ७. AP पमाणिउं। ८. जाणियउं।

३. १. AP पीणिय। २. A फुरंत। ३. A दहदिसिपह°; P दसदिसिपह°। ४. A कुमरहु अक्खिउ ता पंथिएण।

४. १. P °पत्थारइ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सो जासु कूरु होही सुरासु तहु हत्थें मेरिही[2] परसुरासु।
तहिं गच्छहि पेच्छहि चोज्जु बप्प किं अच्छइ काणणि[3] णिव्वियप्प।
तं णिसुणिवि मणि चिंतइ कुमारु डहु डहु णरु जंगलपुंजु फारु[4]।
दुज्जणकरगाहगलत्थियाइं जें दिट्ठइं सयणइं दुत्थियाइं।
दरिसावियबंधवलोयवसण जेणायण्णिय णंदंत पिसुण।
सो णिहयजणणिजोव्वणवियारु[5] अम्हारिसु जीवइ भूमिभारु।
वरिसहं परमाउसु जमदुगेज्झु धुवु सट्ठिसहासइं आउ मज्झु।
लइ णियइ ण ढुक्कइ अंतरालि रिउ चूरमि मारमि कलहकालि[6]।
अह वा जइ मरमि ण तो वि दोसु लइ अज्जु करमि हउं सहलु रोसु।

घत्ता—तायवियारणउं जं वइरु रिणु य चिरु दिण्णउं[7]॥
तं हउं तासु रणि लइ अज्जु देमि उच्छिण्णउं॥ ४॥

५

इय भणेवि वीरो[1] धुरंधरो समरभारवहणेक्ककंधरो।
कायकंतिधवलियदिसावहो[2] चिक्करंतछक्कण्णुपाणहो[3]।
धरणिविजयसिरिविजयलंपडो कसणकुडिलधम्मिल्लझंपडो।
दंडपाणिपोत्थयपरिग्गहो रत्तचीरचंचइयविग्गहो।

चन्द्रकान्तके समान दांत दिखाये जाते हैं। जिससे वे दांत सुन्दर भात हो जायेंगे उसके हाथसे परशुराम मारा जायेगा। हे सुभट तुम वहाँ जाओ और उस आश्चर्यको देखो। बिना किसी विकल्पके जंगलमें क्यों पड़े हो।" यह सुनकर कुमार अपने मनमें विचार करता है—प्रचुर मांस-समूह वह मनुष्य खाक हो जाये कि जिसने स्वजनोंको दुर्जनोंके द्वारा हाथ पकड़कर बाहर निकाले जाते हुए और खराब स्थितिमें होते हुए देखा है। जिसने बान्धवलोकको दुख दिखानेवाले दुष्टोंको आनन्दित होते हुए सुना है। अपनी मांके यौवन-विकारको नष्ट करनेवाला (व्यर्थ कर देनेवाला) ऐसा वह मुझ जैसा धरतीका भारस्वरूप व्यक्ति जीवित है। परमायु मैं यमके द्वारा अग्राह्य हूँ, (यम मुझे नहीं पकड़ सकता), निश्चय ही मेरी आयु साठ हजार वर्ष है, लो इस अन्तरालमें (इस बीच) नियति नहीं आ सकती, इसलिए युद्धकालमें शत्रुको चकनाचूर कर मारता हूँ। अथवा यदि मैं मर जाता हूँ तो इसमें दोष नहीं है। लो मैं आज अपना क्रोध सफल करता हूँ।

घत्ता—पिताके मारनेका जो वैर और ऋण पहले दिया गया है, मैं आज उसे युद्धमें दूँगा और उसे उच्छिन्न करूँगा॥४॥

५

यह कहकर समरभारको अपने एक कन्धेसे उठानेवाला, अपनी शरीर-कान्तिसे दिशाओंको धवलित करनेवाला, चरमराते हुए छह कोनोंवाले जूतोंसे युक्त, पृथ्वीविजय और श्रीविजयका लम्पट, मुक्त खुले काले बालोंवाला, जिसके हाथमें दण्ड और पुस्तकका परिग्रह है, जिसका शरीर

२. A मरही। ३. A णरजंगलु। ४. AP भारु। ५. AP णिहियजणणिहि जोव्वण°।
६. AP समरकालि। ७. A वइरु रिणु चिरु ण दिण्णउं; P वइरु रिणु व चिरु दिण्णउं।
५. १. AP घोरो। २. AP °कविलिय°। ३. A चिक्करंतु छक्कण्णुवाणहो; P चिक्करंतु छक्कण्णवाणहो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुसपवित्तयंकियकरंगुली कोसलं पुरं पत्तओ बली ।
सहयरेहिं सह लच्छिमाणणो वेयघोसबहिरियदिसाणणो ।
दाणमंडवं खणि पइट्ठओ तं णिवत्तमणुएहिं दिट्ठओ ।
तेहिं तस्स णँविऊण णीरयं पायपोमपक्खालणं कयं ।
आसणे णिविट्ठँस्स णिम्मलं णीलदब्भँखंडं पुणो जलं ।

घत्ता—पुणु अहियारिएहिं ढोएप्पिणु मिट्ठउ भोयणु ॥
दसणुक्केरु तहु दक्खालिउ जायउ ओयणु ॥ ५ ॥

६

जं दंत जाय णवकलमसित्थ तं उट्ठिय भड रणभँरसमत्थ ।
हणु हणु भणंत करफुरियखग्ग बालहु अँखत्तधम्मेण लग्ग ।
परमेसरु ते णउ गणइ केव कंठीरउ वणि गोमाउ जेव ।
जो दसणपुंजु तं [3]कूरु जाउ तं जोयइ णं णियजसणिहाउ ।
उट्ठिवि दिट्ठिइ चप्परिय सव्व गय णासेप्पिणु भड गलियगव्व ।
विण्णविउ तेहिं पहु परसुधारि भो पुहइणाह रिउ जीवहारि ।
आएसपुरिसु संपत्तु भीमु तं णिसुणिवि णिग्गउ इंदरामु ।
सपसाहणेण हरिवाहणेण संणज्झिवि लहु सहुं साहणेण ।
आवंतु दिट्ठु बालें अणेण भुयदंड तुलिय हरिसियमणेणें ।

लाल वस्त्रसे शोभित है, जिसकी अँगुलियाँ दर्भमुद्रिकासे अंकित हैं, ऐसा वह वीर धुरन्धर और बलवान् अयोध्या नगरी पहुँचा। लक्ष्मीको माननेवाला वह अपने सहचरोंके साथ वेदोंके घोषसे दिशामुखोंको बहरा बनाता हुआ एक क्षणमें दानमण्डपमें प्रविष्ट हुआ। वहाँ नियुक्त मनुष्योंने उसे देखा। उन्होंने उसे प्रणाम कर उसके चरणकमलोंका धूलरहित प्रक्षालन किया और आसनपर बैठे हुए उसे निर्मल हरा दर्भखण्ड (दूब खण्ड) और जल दिया।

घत्ता—फिर अधिकारियोंने मीठा भोजन देकर उसे दाँतोंका समूह दिखाया, वह भात बन गया ॥५॥

६

जब दाँत नये चावलोंकी तरह सीज गये तो रणभारमें समर्थ योद्धा उठे। जिनके हाथमें तलवारें चमक रही हैं, ऐसे वे मारो-मारो कहते हुए क्षात्रधर्मको ताक पर—रखते हुए वे बालकके पीछे लग गये। लेकिन वह परमेश्वर उन्हें उसी प्रकार कुछ नहीं समझता कि जिस प्रकार सिंह वनमें शृंगालोंको कुछ नहीं समझता। जो वह दाँतसमूह भात हो गया था उसे वह अपने यश-समूहके समान देखता है। उठकर उसने दृष्टिसे उन्हें हटा दिया। गलितगर्व सभी योद्धा भागकर चले गये। उन्होंने फरसा धारण करनेवाले अपने स्वामीसे निवेदन किया, "हे पृथ्वीनाथ, शत्रु जीवका हरण करनेवाला है। भयंकर आवेगपुरुष है।" यह सुनकर इन्द्रराम निकला। अपने प्रसा-

४. AP णमिऊण । ५. A आसणोपविट्ठस्स । ६. A णीलडब्भ° ।

६. १. A भड समत्थ । २. P अक्खतधम्मेण । ३. AP तहि कूरु । ४. A चप्परिवि । ५. A adds after this: बोल्लिउ पडिमडछडभंजणेण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जइ अत्थि को वि सुकियपहाउ तइं[6] एउ जि पहरणु मज्झु होउ।
इय चिंतिवि तेण सुकम्मवाउ[7] तं दंतंकुरपूरिउ सराउ[8]।
भामिउ णहि जायउ णिज्जियक्कु आरासहासविप्फुरियउ[9] चक्कु।
घत्ता—रिसिसुउ तेण हउ मारिउ गउ णरयणिवासहु॥
दुग्गइ सावडइ सव्वहु वि लोइ कयहिंसहु॥ ६॥

७

दुइसय [1]कोडिहिं वरिसहं गयहं अरतित्थे
राउ सुभोमउ[2] रामाकामउ हुउ[3] सुत्थे।
माणु मलेप्पिणु दुट्ठहं[4] धिट्ठहं दुज्जणहं
हित्तइं छत्तइं[5] चमरइं चिंधइं बंभणहं।
रहजंपाणइं पिउसंताणइं[6] लद्धाइं
चउदहरयणइं णव वि णिहाणइं सिद्धाइं।
छक्खंड वि महि जयलच्छीसहि भुत्त किह
असिणा तासिवि णाएं भूसिवि दासि जिह।
एक्कहिं वासरि उग्गइ दिणयरि उत्तसिउ
विरइयभोयणु अमयरणायणु[7] भाणसिउ।

धन सहित अश्व वाहन और सेनाके साथ शीघ्र सन्नद्ध होकर उसे आते हुए इस बालकने देखा। हर्षित मन होकर उसने अपने बाहु तौले (उठाये)। यदि मेरा कोई पुण्य प्रभाव हो तो मेरा यही एक अस्त्र हो—यह विचारकर उसने सुकर्मके पाककी तरह उस दांतोंरूपी भातसे भरे सकोरेको घुमा दिया। सूर्यको जीतनेवाला तथा सैकड़ों आराओंसे विस्फुरित चक्र आकाशमें उत्पन्न हो गया।

घत्ता—उससे उसने शत्रुपुत्रका काम तमाम कर दिया। वह नरकनिवासमें गया। हिंसा करनेवाले सभी लोगोंके लिए लोकमें नरकगति मिलती है॥६॥

७

अरनाथके प्रशस्त तीर्थके दो सौ करोड़ वर्ष बीतनेपर स्त्रियोंको चाहनेवाला सुभौम नामका चक्रवर्ती हुआ। दुष्ट, ढीठ और दुर्जन ब्राह्मणोंका मान मर्दन कर उनके छत्र-चमर और चिह्न छीन लिये गये। उसे रथ जम्पान और पिताकी परम्परा प्राप्त हुई तथा चौदह रत्नों और नव निधियाँ सिद्ध हुईं। विजयलक्ष्मीकी सखी, छह खण्ड धरतीको तलवारसे त्रस्त कर तथा न्यायसे भूषित कर इस प्रकार उपभोग किया जैसे वह दासी हो। एक दिन सूर्योदय होनेपर

---

६. A तइ एउ; P ता एउ। ७. A सकम्मवाउ। ८. A दंतंतकुर। ९. AP °विप्फुरिउ।

७. १. A दुइसय वरिसहं गइयहं कोडिहिं; P दुइसय वरिसहं कोडिहिं गइयहं। २. AP सुभउमउ। ३. A हुवउ सुतित्थे; P हुउ सत्थे। ४. AP घिट्ठहं दुट्ठहं। ५. A चमरइं छत्तइं चिंधइं; P चमरइं चिंधइं छत्तइं। ६. जाणइं सयणइं लद्धाइं। ७. P अमिय°।

कयलालाजल णावइ कोमल झंदुलिय
तेण सिरीधरि दिण्णी णिवकरि अंबिलिय।
सा भेक्खंतें रसु [10]चक्खंतें सिरु धुणिउं
[11]राएं तं रूसिवि तहु गुण दूसिवि जं भणिउं।
तं खलसंढहिं णिरु दुवियड्ढहिं पोसियउं
जीविउ धीरहु तहु सूवारहु णासियउं।
मरिवि सतामसु जायउ जोइसु ढुक्कु तहिं
छण्णें रोसें वणिवरवेसें राउ जहिं।
तें महिवालहु जीहालोलहु ढोइयेंइं[12]
फलइं अणेयइं बहुरस[13]भेयइं जोइयेंइं[14]।
[15]गइ पक्खंतरि अह मासंतरि रहइ खलु
वणिउ सराएं मग्गिउ राएं देहि फलु।
तेण पवुत्तउं देव णिरु[16]त्तउं णिट्ठियइं
णिरु दूरंतरि परदीवंतरि संठियइं।

घत्ता—फलसंदोहु मइं सुरवरहुं पसाएं लद्धउ॥
णिच्छउ णिट्ठियउ लइ पइं जि भडारा खद्धउ॥७॥

८

सुचउं वसुहाहिव कहमि तुज्झु　　एवहिं ते देव ण देंति मज्झु।
तुह पुणु पहु अवलोयणि तसंति　　इयरहं कह महिमंडलि वसंति।

उसका भोजन बनानेवाला अमृतरसायन नामका रसोइया त्रस्त हो उठा। उसने लक्ष्मी धारण करनेवाले राजाके हाथमें कढ़ी दी जो लारजल उत्पन्न करनेवाली कोमल इमलीके समान थी। उसे खाते हुए और रस चखते हुए राजाने अपना माथा ठोका तथा उसके गुणोंको दोष लगाते हुए क्रुद्ध होकर जो कुछ कहा उसका मूर्ख दुष्ट खलसमूहने समर्थन किया। उस धीर रसोइएका जीवन नष्ट हो गया। क्रोधपूर्वक मरकर वह ज्योतिष देव हुआ और वह प्रच्छन्न क्रोधसे सेठका रूप बनाकर वहाँ पहुँचा कि जहाँ राजा था। उसने जीभके लालची राजाको बहुरस भेदवाले अनेक योग्य फल दिये। एक पक्ष अथवा माह व्यतीत होनेपर एकान्तमें राजाने रागपूर्वक उस दुष्ट बनियेसे याचना की—"फल दो।" उसने कहा—हे देव, निश्चित रूपसे फल समाप्त हो गये हैं और वे अत्यन्त दूर द्वीपान्तरमें हैं।

घत्ता—वह फलसमूह मैंने सुरवरके प्रसादसे प्राप्त किया था, वह अब खत्म हो गया है। हे आदरणीय, वह आपने खा लिया है॥७॥

८

हे वसुधाधिप, मैं तुमसे सच कहता हूँ। इस समय वे देव मुझे फल नहीं देते। हे स्वामी,

८. A झिंदुलिय। ९. A भक्खंतइं। १०. A चक्खंतइं। ११. A राएं रूसिवि। १२. P ढाइयइं। १३. AP बहुविहभेयइं। १४. P ढोइयइं। १५. P गइपक्खंतरि। १६. A णिवत्तउ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

राएं पडिवण्णउं वयणु तासु भणु भुवणि ण ढुक्कइ णियइ कासु।
णिउ णरपरमेसरु तेण तेत्थु करिमयरभयंकरु जलहि जेत्थु।
जीहिंदियविसय[2]वसेण खविउ तहिं सिहरि सिलायलि णिवइ थविउ।
चट्टुयविहत्थु[3] रोसेण फुरिउ सूयारवेसु देवेण धरिउ।
पभणिउ मइं जाणहि किं ण पाव खलवयणणडिय रे कूरभाव।
चिंचिणिहलत्थि दप्पिट्ठ दुट्ठ[4] हउं पइं जम्मंतरि णिहउ कट्ठ[5]।
इय कहिवि तेण सयखंडु करिवि मारिउ गउ णरयहु भउमु मरिवि।

घत्ता—गोत्तमु वज्जरइ मगहाहिव चारु चिराणउं ॥
अण्णु वि णिसुणि तुहुं बलणारायणहं कहाणउं ।८॥

९

इह खेत्ति णिसेविवि जइणमग्गु दो पत्थिव गय सोहम्मसग्गु।
तहिं एक्कु सुकेउ स[1]हुं ससल्लु किं वण्णमि मूढेउ[2] मोहगिल्लु।
इह भारहंति संपुण्णकामु चक्क[3]उरि णाहु वरसेणु णामु।
इक्खाउवंसगयणयलि चंदु दाणोल्लियकरु णं सुरकरिंदु।
तहु देवि पढम पिय वइजयंति लच्छिमइ बीय णं ससिहि कंति।
जइयहुं सुभउमि मुइ जाणियाहं छहसयसमकोडिहिं झीणियाहं।

तुम्हारे देखनेसे वे त्रस्त हो उठते हैं। नहीं तो वे दूसरे धरतीमण्डलमें क्यों निवास करते ? राजाने उसका कहा स्वीकार कर लिया। बताओ संसारमें किसकी नियति (अन्त) नहीं आती। उसके द्वारा वह नरपरमेश्वर वहाँ ले जाया गया कि जहाँ हाथियों और मगरोंसे भयंकर समुद्र था। जिह्वा इन्द्रियके विषयरूपी विषसे नष्ट वह राजा पहाड़की एक चट्टानपर स्थापित कर दिया गया। देवने जिसके हाथमें करछुली है ऐसा रसोइयेका रूप धारण कर लिया और क्रोधसे तमतमाया। वह बोला—"हे पाप, तू मुझे नहीं जानता। दुष्टोंके वचनोंसे प्रतारित हे दुष्टभाव, चिंचणी फल (इमली) के अर्थी दर्पिष्ठ और दुष्ट कठोर जन्मान्तरमें मैं तेरे द्वारा मारा गया।" यह कहकर उसने सौ टुकड़े कर उसे मार डाला। सुभौम मरकर नरकमें गया।

घत्ता—गौतम कहते हैं—हे मगधराज, एक और सुन्दर और पुराना बल तथा नारायणका कथानक है, उसे सुनो ॥८॥

९

इस भरत क्षेत्रमें जैनमार्गका पालन कर दो राजा सौधर्म स्वर्ग गये। उनमें एक सुकेतु था जो शल्य सहित था। मोहग्रस्त उस मूर्खका क्या वर्णन करूँ ? इस भारतमें चक्रपुरमें सम्पूर्णकाम वरषेण नामका राजा था। वह इक्ष्वाकुवंशरूपी आकाशतलका चन्द्र था, दान (जल और दान) से आर्द्रकर (हाथ और सूँड़) वाला जो मानो ऐरावत गज था। उसकी पहली प्रिय पत्नी वैजयन्ती थी तथा दूसरी चन्द्रमाकी कान्तिके समान मानो लक्ष्मीवती थी। सुभौमके मरनेपर जब ज्ञात

---

८. १. A वडिवणउं। २. AP °विसयविसेण। ३. A चड्डुवविहत्थु; P चट्टुअविहत्थु। ४. A दुट्ठ। ५. A कट्ठु।

९. १. A मुउ। २. A मोहें मूढगिल्लु। ३. A चक्कउरणाहु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तइयहुं संचुउ सोहम्मदेउ हुउ पुत्तु जयंतिहि सोक्खहेउ ।
अण्णेक्कु[४] लच्छिमइयहि ससल्लु किं वण्णमि अप्पडिमल्लमल्लु[५] ।
तहिं एक्कु पकोक्किउ णंदिसेणु अण्णेक्कु वि दुत्थियकामधेणु ।
णामइं हक्कारिउ पुंडरीउ किं थुणमि वइरिमृग[६]पुंडरीउ ।
ते[७] बेण्णि वि णीलसुपीयवसण ते बेण्णि वि भायर धवलकसण ।
दोहं मि विच्छिण्ण[८]उ आवयाउ दोहं मि संसिद्धउ देवयाउ ।

घत्ता—सीरिहि साहियइं छप्पण्णसहासइं वरिसहं ॥
चक्किहि णाहियइं परमाउसु एवं[९] सुपुरिसहं ॥९॥

१०

छव्वीसचाव देहहु पमाणु तहिं ताहं पहुत्तणु जाणमाणु ।
इंदउरि णरिंदु उविंदसेणु जो देवहिं गेज्जइ धरिवि वेणु ।
तहु तेण धीय दामोयरासु पोमावइ दिण्ण कयायरासु ।
तं हरहुं पराइउ पहु णिसुंभु चिरभवि सुकेउ सो रिउणिसुंभु ।
जायउं रणु विज्जहि लग्ग बे वि अवरोप्परु णउ सक्किय हणेवि ।
पडिहरिणा घल्लिउ धगधगंतु धरियउं कण्हेण रहंगु एंतु ।
तेणाहउ उरयलि पडिउ वेरि अइभीसणु कयधम्मावहेरि ।

छह सौ करोड़ वर्ष बीत गये तो सौधर्म देव च्युत होकर वैजयन्तीका पुत्र हुआ जो सुखका कारण था। दूसरा जो सशल्य था, वह लक्ष्मीमतीसे जन्मा। अप्रतिम मल्लोंके मल्ल उसका मैं क्या वर्णन करूँ। उनमेंसे एकको नन्दिषेण कहा गया और दूसरेको जो दुःस्थितों (विपत्तिग्रस्तों) के लिए कामधेनु था, पुण्डरीक नामसे पुकारा गया। शत्रुरूपी हरिणोंके लिए पुण्डरीक (व्याघ्र) के समान था, उसकी मैं क्या स्तुति करूँ? वे दोनों ही नील और पीत वस्त्रवाले थे। वे दोनों ही भाई गोरे और काले थे। दोनोंने आपत्तियोंको तहस-नहस कर दिया था। दोनोंको विद्याएँ सिद्ध थीं।

घत्ता—श्री बलभद्र नन्दिषेणकी आयु छप्पन हजार वर्ष कही गयी है। चक्रवर्ती पुण्डरीककी आयु भी इससे अधिक नहीं थी, इस प्रकार दोनों सुपुरुषोंकी यह परमायु थी ॥९॥

१०

दोनोंके शरीरका प्रमाण छब्बीस धनुष था। वहाँ उनका प्रभुत्व भी ज्ञातमान था। इन्द्रपुरीका राजा उपेन्द्रसेन था। जिसका देवों द्वारा वेणु लेकर गान किया जाता था। किया गया है आदर जिसका ऐसे उग्र दामोदर (पुण्डरीक) को उसने अपनी कन्या पद्मावती दे दी। पूर्वभवमें शत्रुओंका नाश करनेवाला जो सुकेतु राजा था, ऐसा निशुम्भ राजा (चक्रपुरका) उसका अपहरण करनेके लिए आया। दोनोंमें युद्ध हुआ, वे विद्याओंसे लग गये। वे एक-दूसरेको मारनेमें समर्थ नहीं हो सके। प्रतिनारायण निशुम्भने धकधक करता हुआ चक्र चलाया। आते हुए उसे नारायण पुण्डरीकने पकड़ लिया। उससे वक्षःस्थलमें आहत होकर अत्यन्त भयंकर और धर्मकी

४. AP अण्णेक्कु वि लच्छिमइहि। ५. AP अप्पडिमल्लु। ६. AP मिग°। ७. AP read *a* as *b* and *b* as *a*. ८. P संछिण्णउ। ९. AP एउ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गउ णरयहु णियमणगहियखेरि महि सो[1]हिवि पहयाणंदभेरि ।
हरि हलहर रज्जु करंत थक्क ता कालें अणुयहु दिट्ठि मुक्क ।
सब्भंतरि णिवडिउ चक्कपाणि हलिणा[2] विरइय कम्मावहाणि ।
सिवघोसगु[3]रुहि उवएसएण सिद्धउ मुक्कउ मोहें मएण ।

घत्ता—भरहणराहिवहिं मणभरियभत्तिपइरिक्कहिं ॥
वंदिउ विसहरेहिं खगपुप्फयंतगहचक्कहिं ॥१०॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए
महाकव्वे सुभउमचक्कवट्टिबलएववासुएवपडिवासु[4]एवकहंतरं णाम
छसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो[5] ॥६६॥

अवहेलना करनेवाला वह शत्रु गिर पड़ा। अपने मनमें कलहका भाव धारण करनेवाला वह नरकमें गया। जिसमें आनन्दकी भेरी बजायी गयी है, ऐसी धरतीको सिद्ध कर जब बलभद्र और नारायण राज्य करते हुए रह रहे थे, तो कालने अनुज (पुण्डरीक) पर अपनी दृष्टि छोड़ी। चक्रवर्ती नरकके मध्य गया। बलभद्रने शिवघोष गुरुके उपदेशसे कर्मोंका नाश किया तथा मोह और मदसे मुक्त होकर वह सिद्ध हो गये।

घत्ता—जिनके मनमें भक्तिकी प्रचुरता भरी हुई है, ऐसे भरतक्षेत्रके राजाओं, विषधरों, विद्याधरों, सूर्य-चन्द्र आदि गृहचक्रोंने उनकी वन्दना की ॥१०॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा
विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका सुभौम चक्रवर्ती
बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेव कथान्तर नामका छियासठवाँ
परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६६॥

---

१०. १. AP सहिवि । २. AP हलिणा पुणु विरइय कम्महाणि । ३. A °रिसिहि । ४. AP omit पडिवासुएव° । ५. P adds सत्तमचक्कवट्टि अर स एव तित्थयर अट्ठमचक्कवट्टि सुभोम छट्ठबलएव णंदिसेण, वासुदेव पुंडरीय, पडिवासुएव णिसुंभ एतच्चरियं सम्मत्तं; K gives this in margin ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संधि ६७

तिहुवणसिरिधरो[1] सल्लविवज्जिओ ॥
जो परमेसरो सयमहपुज्जिओ ॥ ध्रुवकं ॥

१

जेण हओ णीहारओ   रुइणिज्जियणीहारओ ।
सुजसोधवलियहंसओ   जस्स भुवणसरहंसओ ।
जा कंती मयलंछणे   संपुण्णा जाय छणे ।
सा वि जस्स मुहपंकए   इर मज्जइ[2] णिप्पंकए ।
मोत्तूणं महिवइं[3]चलं   चित्तं सोदामणिचलं ।
गाढं जेण वसं कयं   मुणिमग्गे णीसंकयं ।
हिंसायारो वारिओ   जो कोवाणलवारिओ ।
कामभोय[4]आसी हया   सरहस्स व वणसीहया ।
णट्ठा जस्स विवाइणो   अइबहुकम्मविवाइणो ।

सन्धि ६७

जो त्रिभुवनकी लक्ष्मीको धारण करनेवाले और शल्यसे रहित हैं, जो परमेश्वर इन्द्रके द्वारा पूज्य हैं।

१

जिन्होंने मनुष्यकी मिथ्या चेष्टासे उत्पन्न कर्मको नष्ट कर दिया है, जिन्होंने कान्तिसे चन्द्रमाको जीत लिया है, जिन्होंने अपने सुयशसे सूर्यको धवलित किया है, जिनका यश भुवनरूपी सरोवरमें हंसकी तरह क्रीड़ा करता है। पूर्णिमाकी रात्रिमें चन्द्रमाकी जो सम्पूर्ण कान्ति होती है, वह भी जिसके निष्पंक (कलंकरहित) मुखरूपी कमलमें डूब जाती है। राज्यलक्ष्मीको छोड़कर जिन्होंने सौदामिनीकी तरह चंचल मनको अच्छी तरह वशमें किया है और मुनिमार्गमें निःशंक-भावसे लगाया है। जिन्होंने हिंसामय आचारका निवारण किया है, जो क्रोधरूपी आगका निवारण करनेवाले हैं, जिन्होंने कामभोगरूपी सर्पकी दाढ़को नष्ट कर दिया है, उसी प्रकार जिस प्रकार अष्टापद वनसिंहको नष्ट कर देता है। अत्यन्त अधिक कर्मविपाकवाले विवादी जिनसे नष्ट हो गये

All Mss. have, at the beginning of this samdhi, the following stanza:-

इह पठितमुदारं वाचकैर्गीयमानं
इह लिखितमजस्रं लेखकैश्चारु काव्यम् ।
गतवति कविमित्रे मित्रतां पुष्पदन्ते
भरत तव गृहेऽस्मिन्भाति विद्याविनोदः ॥ १ ॥

१. १. A सिरिवरो । २. K reads a *p* : मिज्जइ इति पाठे मीयते । ३. A महिवइबलं । ४. T reads a *p* : कामभोइआसी इति पाठे काम एव भोगी सर्पस्तस्य आसी दंष्ट्रा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोउं जस्स सुआमयं हंतूणं मोहामयं ।
पुरिसा णिक्कलधामयं पत्ता णाणसुधामयं ।
आयंबुज्जलकरणहं भयवंतं णियकरणहं ।
णिम्मलत्तणिरसियणहं तं मल्लिं णमिऊँण हं ।
वोच्छं तस्सेव य कहं इयरह मोक्खविही कहं ।

घत्ता—पढमइ दीवइ सुरगिरिपुव्वइ ॥
कच्छादेसइ सोहादिव्वइ ॥१॥

२

वीयसोयणयरेसरो रायो रूवी विव सरो ।
धीरो[2] जियपरमंडलो विहवेणं आहंडलो ।
कोसेणं वइसवणओ णामेणं वइसवणओ ।
अण्णंसि[3] दियहे घणं गंतूणं कीलावणं ।
पंकेरुहरयधूसरो रमइ जाम पुहईसरो ।
ताम पवासियदिहिहरो सुरधणुमंडियजलधरो ।
थोरथंभथिप्पिरणहो पच्छाइयदसदिसिवहो ।
फुल्लियफुडयकयंबओ वियसावियदालिंबओ ।
णीरपूरपूरियधरो किडिकरडीण सुहंकरो ।
पत्तो वासारत्तओ दूरं कंको मत्तओ ।
णच्चावियसिहिउलणडो विज्जुजलणजलिओ वडो ।

हैं, जिनके श्रुतरूपी अमृतको सुनकर, मोहरूपी व्याधिको नष्ट कर लोग ज्ञानरूपी सुधासे युक्त निष्कलधाम (मोक्ष) को प्राप्त हुए हैं, जिनके हाथोंके नख लाल और उज्ज्वल हैं, जो ज्ञानवान् और अपनी इन्द्रियोंका घात करनेवाले हैं, जिन्होंने निर्मलतामें आकाशको तिरस्कृत कर दिया है ऐसे उन मल्लिनाथको मैं नमस्कार करता हूँ और उन्हींकी कथाको कहता हूँ ।

घत्ता—प्रथम जम्बूद्वीपके सुमेरुपर्वतकी पूर्व दिशामें शोभासे दिव्य कच्छदेशमें—॥१॥

२

वीतशोक नगरका स्वामी राजा (वैश्रवण) कामदेवके समान सुन्दर था । धीर और शत्रुमण्डलको जीतनेवाला जो वैभवमें इन्द्र, धनमें कुबेर और नामसे वैश्रवण था । दूसरे दिन सघन क्रीड़ावनमें जाकर कमलपरागसे धूसरित वह राजा क्रीड़ा करता है तो इतनेमें प्रवासियोंके धैर्यका हरण करनेवाला जिसमें इन्द्रधनुषसे मेघ मण्डित हैं, आकाशसे बड़ी-बड़ी बूँदें गिर रही हैं, दसों दिशापथ आच्छादित हैं, जिसमें कदम्ब वृक्ष विकसित और पुष्पित हैं, जिसने कुकुरमुत्तोंको विकसित कर दिया है, जलोंसे धरती प्लावित है, जो सुअरों और गजोंसे सुन्दर है ऐसी वर्षाऋतु आ गयी, बगुले दूर हो गये हैं । जिसने मयूरकुलरूपी नटोंको नचाया है ऐसा वटवृक्ष

५. A णविऊण ।

२. १. A रायं रूवें जियसरो । २. AP वीरो । ३. AP अण्णेसं । ४. AP °जलहरो । ५. AP °थिभ° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[6]पयलियपल्लवराइयं हुयवहपउलियसाइयं ।
दट्ठूणं तं पायवं चिंतइ णि[7]वइ णवं णवं ।
होइ जयं पुणु णासए णिच्चं चिय ण हु दीसए ।
घत्ता—जिह णग्गोहओ दाणि दिट्ठओ ॥
तडिदंडाहओ सहसा णट्ठओ ॥२॥

३

णासिहिंति तिह हय गया चिंधछत्त[1]चामरचया ।
देहो जो रसपोसिओ रयणाहरणविहूसिओ ।
सिंभवसापित्तासओ सो वि ण होही सासओ ।
इय भणिउं दाउं सिरिं णियतणयस्स गओ गिरिं ।
सिरिणायं सिहरुण्णयं दरितरुकीलियपण्णयं ।
संबोहियबहुवणयरं सिरिणायंकं मुणिवरं ।
[2]णविऊणं जाओ जई सामंतेहिं समं वई ।
एयारह वि सुयंगइं पढि[3]ऊणं अविहंगइं ।
धरिऊणं हियं दढं चिण्णं चरियं णीसढं ।
इंदचंदकयकित्तणं बद्धं तित्थयरत्तणं ।
अहमिंदेहिं विराइए संभूयउ अवराइए ।
तेत्तीसंबुहिकालए गइ थिइ छम्मासालए ।

बिजलीकी आगमें जलकर भस्म हो गया। उस वृक्षको देखकर राजा अपने मनमें सोचता है कि यह विश्व नया-नया होता है फिर नाशको प्राप्त होता है।

घत्ता—जिस प्रकार इस समय वटवृक्ष विद्युत्-दण्डसे आहत सहसा नष्ट होता हुआ दिखाई दिया— ॥२॥

३

उसी प्रकार हाथी और घोड़े, चिह्न, छत्र और चामर-समूह नाशको प्राप्त होगा। रससे पोषित, रत्नाभरणोंसे विभूषित, श्लेष्मा (कफ), मज्जा और पित्तसे आश्रित यह शरीर भी शाश्वत नहीं होता। उसने यह विचार किया और लक्ष्मी अपने पुत्रको देकर राजा श्रीनाग पर्वतके लिए चल दिया कि जो पर्वतोंसे उन्नत था और जिसकी घाटियोंमें साँप क्रीड़ा कर रहे थे। जिन्होंने बहुतसे अनेक वनचरोंको सम्बोधित किया है, ऐसे श्रीनायक मुनिवरको प्रणाम कर वह सामन्तोंके साथ मुनि हो गया। अविभंग ग्यारह श्रुतांगोंको पढ़कर उसने निष्कपट चारित्र्य ग्रहण कर लिया। जिसका कीर्तन इन्द्र और चन्द्रमा करते हैं ऐसे तीर्थंकरत्वका उसने बन्ध कर लिया। वह अमरेन्द्रोंसे विराजित अपराजित विमानमें उत्पन्न हुआ। वहाँ उसके तैंतीस सागर आयु बीतने और छह माह शेष रहनेपर—

---

६. A पयडिय° । ७. A णरवइ ।

३. १. A °चामरधया । २. A णमिऊणं । ३. P पडिऊणं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—तम्मि कालए अमलिणवेसहो ॥
सोहम्माहिवो कहइ धणेसहो ॥३॥

४

सुणि इह भरहे अंगए विसए धम्मवसंगए ।
मिहिलो[1]उरणयराहिवो दीणेसु[2] य पसरियकिवो ।
रिसहगोत्तवंसुब्भवो कुंभो णाम महा[3]णिवो ।
किं किर कहमि महासई देवी तस्स प[4]याबई ।
णिक्कंदप्पो णिब्भओ होही ताणं अब्भओ ।
भुवि हिरण्णगब्भो गुणी जं थुणंति देवा मुणी ।
कुणसु तस्स[5] णयरं तुमं ता धणएण अणोवमं ।
सहसा रइयं तं पुरं रयणजालफुरियंबरं ।
पुण्णाणं पिव संचए पासाए मणिमंचए ।
राइविरामे सुत्तिया पेच्छइ पंकयणेत्तिया ।
साहियसिरियणुभवणए एए सोलह सिविणए ।

घत्ता—पूणं मत्तयं धोरेयं सियं ॥
सारंगाहिवं गोवद्धणपियं ॥४॥

घत्ता—उस समय स्वच्छ वेशवाला सौधर्म इन्द्र कुबेरसे कहता है ॥३॥

४

"सुनो, भरतक्षेत्रके धर्मके वशीभूत अंगदेशमें मिथिलापुर नामके नगरका राजा है, जो दीनोंके प्रति कृपाका विस्तार करनेवाला है। जो ऋषभके गोत्र और वंशमें उत्पन्न हुआ है, ऐसा कुम्भ नामका महान् राजा है। उसकी देवी महासती प्रजावती है। उसका मैं क्या वर्णन करूँ? उससे कामदेवका नाश करनेवाला निष्कलंक बालक उत्पन्न होगा, जो संसारमें हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) होगा, और जिसकी देव और मुनि स्तुति करते हैं, उसके लिए तुम सुन्दर नगर बनाओ।" तब कुबेरने सहसा अनुपम, जिसके रत्नजालसे आकाश स्फुरित है ऐसा मिथिलापुर नगर बनाया। पुण्योंके समूहके समान प्रासादमें मणिमय मंचपर सोते हुए रात्रिके अन्तमें वह कमलनयनी, जिसमें लक्ष्मीके भोगको कहा गया है, ऐसे स्वप्नमें ये सोलह (चीजें) देखती है।

घत्ता—मतवाला गज, सफेद बैल, सिंह, लक्ष्मी ॥४॥

---

४. १. A महिलावर° । २. A दीणेसुं; P दीणेसु पसरिय° । ३. AP महाहिवो । ४. AP पहावई । ५. A तासु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५

मालाओ कयजणदिहिं अमयरुहं सरुहइसुहिं।
भावभरियवम्महरसं अणिमिसमिहुणं रइवसं।
धवलघडाणं जुयलयं हंसीचुंबियकुवलयं।
पुलिणणिलीणबेलाययं[1] सजलं कमलतलाययं।
सरिरायं रसणारवं मणिवीढं हरिभइरवं।
अच्छरणाइणिगेयए इंदफणिंदणिकेयए।
हरियं पीयं तंबयं रयणाणं णिउरुंबयं।
दट्ठूणं मरुजालियं अग्गिं जालामालियं।
पडिबुद्धा परमेसरी कहइ सपइणो सुंदरी।
मई विइण्णलोयणरई दिट्ठा सिविणयसंतई।

घत्ता—तिस्सा[3] तं फलं कहइ नृसारओ[4]॥
तुह होही सुओ देवि भडारओ॥५॥

६

धरिही जो रयणत्तयं णविही जस्स जयत्तयं।
लहिही जो छत्तत्तयं जाइजरामरणत्तयं।
डहिही जो णिब्भंतयं जाही मोक्खमणंतयं।
सो[1] ते होही डिंभओ सुहिजणलग्गणखंभओ।
अमरविलासणिसत्थओ पत्तो मंगलहत्थओ।

५

मालाएँ, जनोंका भाग्यविधाता चन्द्रमा और सूर्य जिसमें भावोंसे—।

कामदेवका रस भरा हुआ है ऐसा रतिवश मत्स्ययुग, धवल घड़ोंका युग्म, जिसमें कमल हंसिनियोंके द्वारा चुम्बित हैं, जिसके तटोंपर बगुले बैठे हुए हैं, ऐसा सजल सरोवर। गर्जनासे भयंकर समुद्र, सिंहासन (सिंहोंसे भयंकर मणिपीठ), अप्सराओं और नागिनोंके द्वारा गाये गये स्वर्गलोक और नागलोक, रत्नोंका हरा-पीला और लाल समूह तथा पवनसे प्रज्वलित ज्वालाओंसे सहित आगको देखकर वह परमेश्वरी जाग गयी। वह सुन्दरी अपने पतिसे कहती है कि मैंने आंखोंमें रति उत्पन्न करनेवाले स्वप्नोंको देखा।

घत्ता—तब उसके लिए राजा उनका फल कहता है कि हे देवी, तुम्हारे आदरणीय पुत्र होगा। ॥५॥

६

जो रत्नत्रयको धारण करेगा, जिसे तीनों जगत् प्रणाम करेंगे। जो तीन छत्र प्राप्त करेगा, जन्म-जरा और मरण तीनोंका नाश करेगा, जो बिना किसी भ्रान्तिके अनन्त मोक्षको प्राप्त होगा। सुधीजनोंका आधारस्तम्भ वह तुम्हारा पुत्र होगा। मंगलद्रव्य हाथमें लिये हुए अमर

---

५. १. A वलालयं। २. A डडालयं। ३. A तस्सा। ४. AP णिसारओ।

६. १. A सो तव होही।

सुविसुद्धे गब्भासए धणधारावरिसे कए ।
पढममासि पढमे दिणे ओ[2]सिणिगइ हरिणंकणे ।
राणउ[3] जो रइकंदओ[4] वइसवणो अहमिंदओ ।
गयरूवेणवइण्णओ राणीगब्भि णिसण्णओ ।
सो सुरेहिं अहिणंदिओ फणिकिंणरणरवंदिओ ।
णिव्वाणं पत्ते अरे वरिसकोडिसहसंतरे ।
मग्गसिरे तुहिणायरे सियएयारसिवासरे ।
ओ[5]सिणिरिक्खे जायओ तित्थयरो हयरायओ ।
एक्कुणवीसमओ इमो णररूवेण व संजमो ।
अहिसित्तो अमरायले हरिणा पंडुसिलायले ।

घत्ता—मल्लियमालागंधो जाणिओ ॥
इंदेण जिणो मल्ली भाणिओ ॥६॥

७

अणुअत्थं[1] पवियप्पिओ जणणीहत्थे अप्पिओ ।
घणडंबरघल्लियपया देवा णियवासं गया ।
बुहमुहपोमाणं इणो वड्ढइ कालेणं जिणो ।
जाओ जायरूवाहओ पंचवीसधणुदीहओ[2] ।
आउसु तस्स सहासइं वरिसहं पणपण्णासइं ।
वरिससए वोलीणए आरूढो सुरपूणए[3] ।

विलासिनियोंका समूह आ गया। धनधाराकी वर्षा होनेपर सुविशुद्ध गर्भाशयमें चैत्र शुक्ला प्रतिपदाके दिन प्रातःकाल चन्द्रमासे युक्त अश्विनी नक्षत्रमें रतिका अंकुर वह राजा वैश्रवण अहमेन्द्र गजरूपमें अवतीर्ण होकर रानीके गर्भमें स्थित हो गया। नाग, किन्नर और मनुष्योंके द्वारा वन्दनीय वह देवोंके द्वारा अभिनन्दित किया गया। अरनाथके निर्वाण प्राप्त करनेके बाद एक हजार करोड़ वर्ष बीतनेपर मार्गशीर्ष सुदी एकादशीके दिन अश्विनी नक्षत्रमें कामदेवका नाश करनेवाले तीर्थंकरका जन्म हुआ। उन्नीसवें तीर्थंकर यह जैसे मनुष्यके रूपमें मूर्त संयम थे। इन्द्रके द्वारा सुमेरुपर्वतपर पाण्डुकशिलाके ऊपर वह अभिषिक्त हुए।

घत्ता—मल्लिकाकी मालाके गन्धसे युक्त जानकर इन्द्रने उन जिनको मल्ली कहा ॥६॥

७

उसने सार्थक नाम समझा और माताके हाथमें उन्हें दे दिया। मेघोंके आडम्बर (घटा) में पैर रखते हुए देवता अपने निवासगृह चले गये। जो बुधोंके मुखरूपी कमलोंके लिए सूर्य हैं, ऐसे जिन भगवान् समयके साथ बढ़ने लगे। वह स्वर्णरूप हो गये एवं वह पच्चीस धनुष ऊँचे थे। उनकी आयु पचपन हजार वर्ष थी। सौ वर्ष आयु पूरी होनेपर वह ऐरावतपर आरूढ़ हुए। वह

२. A अहिसणि° । ३. A राओ जो । ४. AP रइरुंदओ । ५. A अस्सिणि° ।
७. १. A अणुअच्छें and gloss आश्चर्यम्; T अणुअत्थं आश्चर्यम् । २. A °धणुदेहओ । ३. A सुरयूणए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुणइ विवाहपवट्टणं पेच्छइ कुंअँरो पट्टणं ।
परिहापाणियदुग्गमं बहुदुवारकयणिग्गमं ।
हेमघडियपायारयं पवरट्टालयसारयं ।
पोमरायँकयभारुणं उब्भियधुयधयतोरणं ।
हसियणिसावइकंतियं पेच्छंतो घरपंतियं ।
सरइ पहू अवराइयं सुकयं मज्झु पुराइयं ।
खीणं तेण विमाणयं मुक्कं अहमिंदाणयं ।
एण्हि होही किं थिरं णरजम्मे णयरं घरं ।

घत्ता—छत्तायारयं सिवमहिमंडलं ॥
करमि तवं परं लहमि धुवं फलं ॥७॥

८

ता सारस्सयभासियं सोऊणं सुईमीसियं ।
कुंभणिवस्स य तणुरुहो तरुणीणं विवरंमुहो ।
इंदेणं ससहरमुहो ण्हविओ दिक्खासंमुहो ।
जयणे जाणे थक्कओ कुवलयकुमुयमियंकओ ।
कामेसुं सुविरत्तओ सरयवणं संपत्तओ ।
जम्मदिणे णक्खत्तए पक्खे तम्मि पउत्तए ।
णिववरंतिसँयइए जुओ मोहणिबंधाओ चुओ ।
सायण्हे सुतवे थिओ णाणचउक्केणंकिओ ।

विवाहके लिए प्रवर्तन करते हैं। कुमार नगरको देखते हैं कि जो परिखा और पानीसे दुर्गम है, जिसमें बाहर जानेके अनेक द्वार हैं, जिसके परकोटे स्वर्णरचित हैं, जिसमें श्रेष्ठ और विशाल अट्टालिकाएँ हैं, जो पद्मराग मणियोंकी आभासे युक्त हैं, जिसमें हिलती हुई ऊँची पताकाओंके तोरण हैं। गृह-पंक्तियोंको देखते हुए कुमार मल्लि अपराजित विमानकी याद करता है। मेरा पुरातन पुण्य क्षीण हो गया है उसीसे अहमेन्द्र विमानसे मैं मुक्त हूँ। इस मनुष्य जन्मके नगर और घर क्या स्थिर रहते हैं।

घत्ता—मैं केवल तप करूँगा और छत्राकार शिवमहीमण्डलके शाश्वत फलका भोग करूँगा ॥७॥

८

तब लौकान्तिक देवोंका आगमयुक्त कथन सुनकर स्त्रियोंसे पराङ्मुख दीक्षाके लिए उद्यत चन्द्रमाके समान मुखवाले कुम्भराजाके पुत्र वैश्रवणका इन्द्रने अभिषेक किया। 'जयन' यानमें बैठकर कुवलय (पृथ्वीरूपी) कुमुदके लिए चन्द्रमाके समान कामोंसे अत्यन्त विरक्त वह शरद्वनमें पहुँचे। जन्मके दिन अर्थात् अगहन सुदी एकादशीके दिन अश्विनी नक्षत्रमें तीन सौ राजाओंके साथ वह मोह बन्धनोंसे छूट गये। सायंकाल सुतपमें स्थित हो गये और चार ज्ञानोंसे अंकित

४. AP कुमरो। ५. AP पोमरायकिरणारुणं।
८. १. A सुयमोसियं। २. A °तिसईए; P °तिसइएण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घित्तं[3] पच्चक्खाणयं मोत्तुं[4] भत्तं पाणयं ।
बिहिं दिवसेहिं गएहिं सो दसदिसिवहपसरियजसो ।
णिण्णेहो णीसंगओ मिहिलाए भिक्खं गओ ।
णंदिसेणवरराइणा[5] दिण्णं भत्तं[6] जोइणा[7] ।
भुत्तं तणुणिव्वाहणं संजमजत्तासाहणं ।
घत्ता—पुणु दिक्खावणे सुरहियपरिमले ।।
थक्कु असोयहो तलि धरणीयले ।।८।।

९

दिणि छक्के विच्छिण्णए भिण्णे मिच्छादुण्णए ।
हुउ देवाण वि देवओ लद्धो खाइयभावओ[1] ।
रिसिविज्जाहरसंसिओ इंदपडिंदणमंसिओ ।
समवसरणि आसीणओ अरिसुयणे[2] वि समाणओ ।
जीवमजीवं आसवं संवरणिज्जरणं तवं ।
बंधं मोक्खं भासए लोयं धम्मविसेसए ।
थवइ तस्स णिसुणियझुणी अट्ठवीस जाया गणी ।
सयइं पंचपण्णासइं पुव्वधराहं णिरासइं ।
एक्कुणतीससहासइं सिक्खुयाहं[3] मलणासइं ।

हो गये । प्रत्याख्यानावरण आदि छोड़नेके लिए भात और पानी छोड़ दिया । दो दिन हो जानेपर दसों दिशाओंमें जिनका यश फैला हुआ है ऐसे निर्नेह और अनासंग वह मिथिला नगरीमें भिक्षाके लिए गये । नन्दिषेण श्रेष्ठ राजाने योगीको आहार दिया । शरीरका निर्वाह करनेवाला और संयमयात्राका साधक आहार उन्होंने ग्रहण कर लिया ।

घत्ता—फिर सुरभित परागवाले दीक्षावनमें वह अशोक वृक्षके नीचे धरणीतलपर स्थित हो गये ।।८।।

९

छठा दिन बीतनेपर (पारणाके बाद) मिथ्या दुर्नय नष्ट होनेपर वह देवोंके देव हो गये । उन्होंने क्षायिकभाव प्राप्त कर लिया । ऋषि विद्याधरों द्वारा प्रशंसित इन्द्र और प्रतीन्द्रके द्वारा प्रणम्य समवसरणमें बैठे हुए शत्रु और स्वजनमें समान वह जीव-अजीव-आस्रव-संवर-निर्जरा-तप-बन्ध और मोक्षका कथन करते हैं, लोकको धर्मविशेषमें स्थापित करते हैं । जिन्होंने दिव्यध्वनि सुनी है ऐसे उनके अट्ठाईस गणधर हुए । आशारहित पूर्वांगके धारी पाँच सौ पचास थे । मानका नाश करनेवाले शिक्षक उनतीस हजार थे ।

३. P घेत्तुं । ४. A मोत्तं । ५. P राइणो । ६. A भिक्खं; P भक्खं । ७. A जोइणो ।

९. १. P add after this: पूसकिण्हदीयए तओ, पंचमु णाणुप्पण्णओ । २. A अरिसयणे; P अरिसयणा ।
३ A सिक्खुवाह; P भिक्खुयाह ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—दुसहसदुसयइं सावहि इयकलि ॥
तेहिं जेत्तिय ते तेत्तिय केवलि ॥९॥

१०

चउदहसय वाईसहं विक्किरियहं वि रिसीसहं ।
णवसय दोण्णि सहासइं कुच्छियणयविद्धंसइं ।
मणजाणहं सत्तारह सयपण्णास समीरह ।
पंचावण्णसहासइं विरइहिं मुक्कसवासइं ।
सावयलक्खु अहीणउं सावईहिं तं तिउणउं ।
सुर असंख उम्मोहिवि पसु ससंख संबोहिवि ।
भवसमुद्दतडपाविए मासेसेसथियजीविए ।
पंचसहासहिं जुत्तओ रिसिहिं णाहु तमचत्तओ ।
संमेए सिरहयणहे फग्गुणि सियपंचमियहे ।
भरणीरिक्खे मुक्कओ अट्ठमपुहइहि थक्कओ ।

घत्ता—हरउ भयंकरं भवविब्भमदुहं ॥
मल्लिमुणीसरो देउ सुहं महं ॥१०॥

११

मल्लितित्थसंताणे कयपडिवक्खवहं
बुहयणसुइसुहयरणं णिसुणह चक्किकहं ।

घत्ता—पापका नाश करनेवाले अवधिज्ञानी दो हजार दो सौ थे। वहां जितने थे उतने ही केवलज्ञानी थे ॥९॥

१०

वादी मुनि चौदह सौ थे। कुत्सित नयोंका ध्वंस करनेवाले विक्रिया-ऋद्धिके धारक मुनि दो हजार नौ सौ थे। तुम मनःपर्ययज्ञानी एक हजार सात सौ कहो। अपना गृहवास छोड़नेवाली पचपन हजार आर्यिकाएँ थीं, श्रावक एक लाख थे और श्राविकाएँ तिगुनी अर्थात् तीन लाख थीं। असंख्य देवोंको मोहमुक्त कर संख्यात तिर्यंचोंको सम्बोधित कर संसाररूपी समुद्रका तट प्राप्त कर जीवनका एक माह शेष रहनेपर पांच हजार मुनियोंके साथ अन्धकार रहित स्वामी शिखरसे आकाशके छूनेवाले सम्मेद शिखरपर फागुन शुक्ला सप्तमीके दिन भरणी नक्षत्रमें मुक्त हुए। वे आठवीं धरतीपर पहुँच गये।

घत्ता—हे मल्लि जिनेश्वर, तुम भयंकर भवविभ्रमके दुखको दूर करो और मुझे सुख दो ॥१०॥

११

मल्लिनाथकी तीर्थपरम्परामें जिसमें शत्रुपक्षका वध किया गया है, जो बुधजनोंके कानोंके

---

४. AP तहि हुय जेत्तिय तेत्तिय ।

१०. १. A पण्णावण्ण° । २. A मुक्कसवासई; P मुक्कभवासइं । ३. A संमोहिवि । ४. AP माससेसि थिइ जीविए । ५. AP °पुहविहि । ६. AP महं सुहं ।

११. १. A °सुहजणणी; P °सुहजाणण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जंबूदीवसुरायलि[2] पुव्वविदेह[3]वरे
चिउलि सुकच्छाजणवइ सिरिहरि सिरिणयरे।
तडिकरालअसिधारातासियसयलखलो
पयपालो पुहईसो पोसियपुहइयलो।
णिसिसमए दट्ठूणं उक्कं णँहल्हसियं[4]
सिवगुत्तस्स समीवे सुकियं तेण कियं।
बारहविहतवचरणं इंदियमयहरणं
मुक्काहारसरीरं सल्लेहणमरणं।
जायउ अच्चुयकप्पे अमरो मरिऊणं
सग्गसिहरभवणाओ पुणु ओयरिऊणं।
इह भरहे कासीए वाणारसिणाहो
आइदेवकुलतिलओ पहु पंकयणाहो।
मज्झे खामा सामा[5] रामा तस्स सई
जाओ देवो पोमो ताणं सुद्धमई।
तीसवरिससहासउ[6] धणुबावीसतणु
णयसंणिहियणरोहो पहु णं चरममणु।
गंगासिंधूणविओ साहियमहियमरो
णिहिरयणालंकारो णवमो चक्कहरो।
घत्ता—पुहईसुंदरीपमुहउ धीयउ॥
अट्ठ वि सिट्ठउ[7] सुट्ठु विणीयउ॥११॥

लिए शुभकर है ऐसी चक्रवर्ती-कथाको सुनो। जम्बूद्वीपके सुमेरुपर्वतके श्रेष्ठ पूर्वविदेहके अत्यन्त विशाल कच्छावती देशमें लक्ष्मीको धारण करनेवाले श्रीनगरमें प्रजापाल नामका पृथ्वीश्वर है जो बिजलीके समान भयंकर असिधारासे समस्त शत्रुओंको त्रस्त करनेवाला है और पृथ्वीतलका पालन करनेवाला है। रात्रिके समय आकाशसे गिरते हुए तारेको देखकर उसने शिवगुप्त मुनिके समीप बारह प्रकारके तपके आचरणके द्वारा इन्द्रियोंके मदका हरण करनेवाला पुण्य किया तथा छोड़ दिया है आहार और शरीर जिसमें ऐसा सल्लेखना मरण किया। मृत्युको प्राप्त होकर वह अच्युत स्वर्गमें उत्पन्न हुआ। स्वर्गके विमान शिखरसे अवतरित होकर वह पुनः इस भारतवर्षके काशीदेशमें बाराणसीका राजा हुआ—इक्ष्वाकुकुलका तिलक स्वामी पद्मनाभ। उसकी सती स्त्री सुन्दरी मध्यमें क्षीण थी। उनका शुद्धमति पद्म नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। तीस हजार वर्ष उसकी आयु थी। बाईस धनुष उसका ऊँचा शरीर था। वह लोगोंको न्यायमें स्थापित करनेवाला मानो अन्तिम मनु था। जिसने गंगा और सिन्धु नदियोंको सिद्ध किया है, धरती और देवोंको सिद्ध किया है, जो निधियों—रत्नों और अलंकारोंसे युक्त है, ऐसा वह नौवाँ चक्रवर्ती था।

घत्ता—उसकी पृथ्वीसुन्दरी प्रभृति कन्याएँ थीं जो आठों ही अत्यन्त विनीत कही गयी हैं॥११॥

२. A सुरालए। ३. A विदेहि वरे। ४. A उक्कं उल्हसियं। ५. A रामा सामा तस्स। ६. A सहसाऊ। ७. A सिद्धउ।

१२

णेहे णिउत्ताण विण्णाणजुत्ताण दिण्णाउ[1] ताओ सुकेयस्स[2] पुत्ताण।
णिच्छिज्जमाणेण[3] दीहेण कालेण रज्जं करंतेण भूचक्कवालेण।
देवेण सव्वावणीरिद्धिरिद्धेण दिट्ठो घणो[4] खे पणट्ठो खणद्धेण।
कम्मारिचारित्तचिंता कया जाम दुब्भंतिणा मंतिणा जंपियं ताम।
जायंति भूयाण संजोयभावेण जीवा ण बज्झंति पुण्णेण पावेण।
दिक्खाइ भिक्खाइ किं होइ हे राय णाहेण सो उत्तु भो वुड्ढ णिण्णाय।
जं णत्थि[5] णो तस्स उप्पत्तिसंताणु णो जम्मु णो कम्मु णो कस्स[6] णिव्वाणु।
कूराण कउलाण कंकालचिंधाण[7] कीलालमत्ताण कंतारयंधाण।
सुत्तेण किं मज्झु किं बंधुणेहेण साहामि[8] सोक्खं धुवं एण देहेण।
एवं पवोत्तूण तच्चाइं णाऊण पुत्तस्स भूमिं असेसं पि दाऊण।
सूरिस्स तिव्वं समाहीइ गुत्तस्स काउं तवं पायमूले सुजुत्तस्स।
सोमो[9] व्व सोमेण णिम्मुक्कपोमेण राया सुकेऊ[10] वि अण्णे वि पोमेण।
[11]सड्ढं इसी जायया णिक्कसाएण णिल्लोहणिम्मोहिणा णिव्विसाएण।
[12]खीणा तवेणं खरं णिक्कलत्तेण मोक्खं गया संठिया णिक्कलत्तेण।

घत्ता—एत्थइ तित्थइ जे हयवइरिणो॥
जाया भाणिमो ते हरिसीरिणो॥१२॥

१२

वे आठों राजा सुकेतुके स्नेहसे परिपूर्ण विज्ञानसे युक्त पुत्रोंको दी गयीं। लम्बा समय निकल जानेके बाद राज्य करते हुए भूपाल चक्रवर्ती समस्त धराऋद्धियोंसे समृद्ध देवने आकाशमें आधे ही पलमें बादलको नष्ट होते हुए देखा। जब उसने कर्मोंके शत्रु जिनके चरित्रको चिन्ता की तो दुर्भ्रान्ति मन्त्रीने कहा—"प्राणी संयोगभावसे जन्म लेते हैं, जीव पुण्य या पापसे बन्धनको प्राप्त नहीं होते। इसलिए हे राजन्, दीक्षा और भिक्षासे क्या होता है?" तब राजाने कहा—"हे न्याय-हीन वृद्ध मन्त्री, जो चीज नहीं है उसकी उत्पत्ति या परम्परा नहीं हो सकती है। जब जन्म नहीं है, कर्म नहीं है, तो निर्वाण क्या है? कंकाल चिह्नवाले क्रूर कौल मद्यसे मस्त कान्तारतिमें अन्धे चार्वाकोंके सिद्धान्तसे मुझे क्या, बन्धुस्नेहसे क्या? इस शरीरसे मैं शाश्वत सुखकी सिद्धि करूँगा?" यह कहकर, तत्त्वोंको जानकर, पुत्रको समस्त धरती देकर सुयुक्त समाधिगुप्त मुनिके पादमूलमें तीव्र तप कर लक्ष्मीसे मुक्त चन्द्रमाके समान सौम्य राजा पद्मके साथ राजा सुकेतु तथा दूसरे राजा मुनि हो गये। निष्कषाय, निर्लोभ, निर्मोह और निर्विषाद तथा स्त्रीशून्य तपसे क्षीण वे मोक्ष गये और वहाँ अशरीरभावसे स्थित हो गये।

घत्ता—इसी तीर्थमें जो शत्रुओंको मारनेवाले बलभद्र और नारायण हुए उनका कथन करता हूँ॥१२॥

१२. १. A दिण्णाउ ता ताउ। २. AP सुकेउस्स। ३. A णिच्छिज्जमाणेण। ४. A खं पणट्ठो। ५. A अत्थि। ६. P धम्मणिव्वाणु। ७. A कंकालसिद्धाण। ८. AP साहम्मि। ९. P सोमो ण। १०. A सुकेऊविइण्णेण। ११. A सुद्धं इसी जायओ; P सक्कं इसी जायया। १२. A खीणं तवेणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३

ससहरधवलहरे धणरिद्धे इह भरहे साकेयपसिद्धे ।
मंदरधीरो वीरो राया पुत्ता रामविरामा जाया ।
एए किर दुम्मइपइरिक्का पिसुणमंतिवयणेण विमुक्का ।
लग्गा ते ण हु पिउणो चित्ते भाउ वि णिहियउ जुवराइत्ते ।
लक्खियतच्चे रक्खियजीवे गुरुणो सिरिसिवगुत्तसमीवे ।
धम्मणाहतित्थे हयमारा ते पावइया रायकुमारा ।
णो समियं णियचित्तं कुद्धं अणुजाएण णियाणं बद्धं ।
जइ वयवेल्लिहलं पावामो तो तं खलमंतिं णिहणामो ।
एम भरंतो णिग्गयपाणो अणसणेण जाओ गिव्वाणो ।
पढमे कप्पे पिहुलविमाणे जेट्ठो वि हु तत्थेय विमाणे ।
पिसुणमहंतो ता संसारे अणुहविऊणं दुक्खपयारे ।
उत्तरसेढीमंदिरणामे णयरे कामिणिकामियकामे ।
जाओ धरणीवइ खयरिंदो बलिबलणासो णाम बलिंदो ।

घत्ता—चंडा राइणो असिणा दंडिया ॥
तेण तिखंडिया मेइणि मंडिया ॥१३॥

१३

इस भारतवर्षमें धनसे समृद्ध चन्द्रमाके समान धवल गृहवाले अयोध्या नगरमें मन्दराचलके समान धीर वीर नामका राजा था। उसके राम-विराम नामके पुत्र थे। वे दुर्मतिसे प्रचुर थे। दुष्ट मन्त्रीके कहनेमें आकर आजाद हो गये। वे दोनों पिताके चित्तको अच्छे नहीं लगे, इसलिए उसने छोटे भाईको युवराजपदपर स्थापित कर दिया। कामदेवको नष्ट करनेवाले वे राजकुमार, धर्मनाथके तीर्थकालमें जिन्होंने तत्त्वोंको जान लिया है, जीवोंकी रक्षा की है ऐसे श्री शिवगुप्त मुनिके पास प्रव्रजित हो गये। छोटे भाई (विराम) ने अपने क्रुद्ध चित्तको शान्त नहीं किया और निदान बाँध लिया कि यदि मैं व्रतरूपी लताका फल प्राप्त करता हूँ तो मैं उस दुष्ट मन्त्रीको मारूँगा। इस प्रकार स्मरण करता हुआ वह अनशनसे मृत्युको प्राप्त हुआ और प्रथम स्वर्गके विशाल विमानमें देव हुआ। बड़ा भाई भी वहीं उत्पन्न हुआ। वह दुष्ट मन्त्री भी संसारमें तरह-तरहके दुःखोंका अनुभव कर विजयार्ध पर्वतकी उत्तर श्रेणीमें जिसमें कामिनियोंके द्वारा काम चाहा जाता है, ऐसे मन्दरपुर नगरमें बलवानोंके बलका नाश करनेवाला बलीन्द्र नामका विद्याधर राजा हुआ।

घत्ता—प्रचण्ड राजाओंको उसने तलवारसे दण्डित किया। उसने तीन खण्ड धरतीको अलंकृत किया ॥१३॥

---

१३. १. P साकेयए पसिद्धे। २. A रामविराम विजाया। ३. A भाऊ णिहिओ। ४. A लक्खियचित्ते। ५. A तो। ६. AP °पाणो। ७. AP °विवाणे। ८. P तत्थेअ समाणे; K records: तत्थेअ समाणे इति पाठे पूजासहिते। ९. P'पिसुणु। १० A णरिंदो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

एत्थंतरए   सिरि[1]सुंदरए।
[2]खेत्तविचित्ते   भारहखेत्ते।
कासीदेसे   सज्जणवासे।
बहुगुण[3]रासी   वाणारासी।
[4]उण्णयहम्मा   णयरी रम्मा।
पडिभडमल्लो   अग्गिसिहिल्लो।
सत्तिसहाओ   तम्मि राओ।
सिसुहंसगई   अवराइय ई।
णं पच्चक्खा   कयरयसोक्खा।
अलिकेसवई   थी केसवई।
बीया सरसा   पियघरसरसा।
विस्सुयणामो   जो चिररामो।
कयजिणसेवो   [5]आयउ देवो।
थक्को गब्भे   रवि व सियब्भे।
जाओ तीए   पढमसईए।
रमियरईए   केसवईए।
अवरो हूओ   वम्महरूओ।

घत्ता—लीलागामिणो णाइ मरालया॥
णवजोव्वणसिरिं पत्ता बालया॥१४॥

१४

इसी बीच श्रीसे सुन्दर तथा क्षेत्रोंसे विचित्र भारत क्षेत्रके सज्जनोंसे बसे हुए काशी देशमें अनेक गुणोंकी खान वाराणसी नगरी है जो उन्नत प्रासादोंवाली और सुन्दर है। उसमें शत्रु-योद्धाओंके लिए मल्ल तथा जिसकी सहायक शक्ति है ऐसा अग्निशिख नामका राजा था। उसकी शिशुहंसके समान गमनवाली अपराजिता नामकी पत्नी थी जो प्रत्यक्ष रतिसुख करनेवाली थी। दूसरी भ्रमरके समान बालोंवाली केशवती नामकी पत्नी थी। दूसरी अत्यन्त सरस और पतिघर-रूपी सरोवरकी लक्ष्मी थी। जो पहला विश्रुतनाम राम था और जिसने जिनकी सेवा की है ऐसा वह देव आया तथा गर्भमें उसी प्रकार स्थित हो गया जिस प्रकार श्वेतकमलमें सूर्य। वह प्रथम सती अपराजिता स्त्रीसे उत्पन्न हुआ। जिसने रतिकी तरह रमण किया है ऐसी केशवतीसे दूसरा (विराम) कामदेवके रूपमें उत्पन्न हुआ।

घत्ता—हंसोंके समान लीलापूर्वक चलनेवाले वे दोनों बालक यौवनश्रीको प्राप्त हुए॥१४॥

१४. १. A सिरिसुंदरए। २. P खेत्ति विचित्ते। ३. A °गुणवासी। ४. उण्णयहामा। ५. AP आओ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

१५

तहिं पहिल्लओ णंदिमित्तओ बीयओ वि णामेण दत्तओ।
खरपयावभरतसियवासवा बे वि ते णिवा[1] सीरिकेसवा।
बे वि सिद्धहरिरहविहंगया बे वि कासकज्जलणिहंगया।
बिहिं मि अत्थि महिपंसुपिंजरो खीरसायरो णाम कुंजरो।
मग्गिओ यं[2] सो रायराइणा धीर[3]वइरिसंतावदाइणा।
अट्टहासहिमरासिवण्णओ तेहिं तस्स सो णेय दिण्णओ।
दूयवयणविहिवड्ढिओ कली सह चमूइ आयउ[4] णिवो बली।
चारु अमरकंतारवासिणा दाहिणिल्ल[5]सेढीखगीसिणा।
बद्धणेहरसमुणियसाउणा माउलेण केसवइभाउणा।
सहिय बे वि बंधू वि णिग्गया सह बलेण समराइरं गया।
जाययं रणं बलियसंमुहा सीरिणा हया वइरितणुरुहा।
चूरिया रहा दारिया हरी लूरिया धया मारिया करी।
णच्चिया णहे अमरसुंदरी बद्धमच्छरो धाइओ अरी।
अंतरे भडो संठिओ हरी तेण दोंछिओ[6] खयरकेसरी।

घत्ता—दोहिं मि जं कयं विज्जापहरणं॥
को तं वण्णए बहुरूवं रणं॥१५॥

१५

उनमें पहला नन्दिमित्र था दूसरा भी नामसे दत्त था। अपने प्रखर प्रतापके भारसे इन्द्रको सन्त्रस्त करनेवाले वे दोनों राजा बलदेव और नारायण थे। उन दोनोंको क्रमशः सिद्ध रथ वाहिनी और गरुड़ विद्याएँ सिद्ध थीं। दोनोंके शरीर कास और काजलके रंगके समान थे। दोनोंके पास धरतीकी धूलसे धूसरित क्षीरसागर नामका हाथी था। उसे धीर वैरियोंको सन्ताप देनेवाले राजराजा (बलीन्द्रने) माँगा। अट्टहास और हिमराशिके रंगका वह गज उन लोगोंने उसे नहीं दिया। दूतके शब्दोंसे कलह बढ़ गयी। सेनाके साथ वह बलि राजा वहाँ आया। अमरकान्तार नगरके निवासी दक्षिण श्रेणीके विद्याधर स्वामी बद्धस्नेहके स्वादको जाननेवाले मामा केशवतीके भाईके साथ वे दोनों भाई भी निकल पड़े। सेनाके साथ दोनों समरांगणमें गये। उनमें रण हुआ। बलि (बलीन्द्र राजा) के सम्मुख बलभद्रने शत्रुके पुत्रका काम तमाम कर दिया, रथको चूर-चूर कर दिया। घोड़ेको फाड़ डाला। ध्वज फाड़ डाले। हाथीको मार डाला। अमरसुन्दरी आकाशमें नाच उठी। तब मत्सर बांधता हुआ शत्रु दौड़ा। वह योद्धा और हरिके बीच स्थित हो गया। उसने विद्याधर राजाकी भर्त्सना की।

घत्ता—दोनोंके द्वारा जो विद्याओंका अपहरण किया गया है, ऐसे उस बहुरूपी रणका कौन वर्णन कर सकता है?॥१५॥

१५. १. A हुवा। २. AP वि। ३. AP वीर°। ४. AP आइओ। ५. A दाहिणल्ल°। ६. A दुच्छिओ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

जं दिणयरबिंबु व विप्फुरिउ पडिवक्खें[1] चक्कु मुक्कु तुरिउ ।
सुहडत्तदीउ णं संचरिउ तं दत्तएण हत्थें धरिउ ।
हउ वइरि[2] तेण मारिउ तुमुलि गउ णिवडिउ सत्तमधरणियलि ।
[3]ईह एव एहु थिउ गंपि जहिं महि भुंजिवि कण्हु वि गयउ[4] तहिं ।
तहिं अवसरि सीलु परिग्गहिउं हलिणा हियउल्लउं णिग्गहिउं ।
संभूयजिणेसरु सेवियउ तवतावें[5] अप्पउ ताविययउ ।
सहियइं बावीसपरीसहइं महियइं चउकम्मइं दुम्महइं[6] ।
अणयारु महाकेवलिपवरु जायउ कालेण अजरु अमरु ।
ससहावें तिहुवणसिहरु णिउ बीयउ परमेट्ठि हवेवि ठिउ ।
सो बुद्धु सिद्धु णिद्धूयरउ धुवकेवलदंसणणाणमउ[7] ।
मयरद्धयचावसमुल्ललियं णिसियं[8] संछिंदउ आवलियं ।

घत्ता—भरहणमंसिउ महं[9] देहाणियं ॥
सुकुसुमयंतउ कुसुमसराणियं ॥१६॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंतविरइए
महाकव्वे मल्लिणाह[10]पउमचक्किणंदिमित्तदत्तयबलिपुराणं णाम
सत्तसट्ठिमो परिच्छेओ समत्तो ॥६७॥

१६

जो दिनकरके बिम्बके समान चमक रहा है ऐसे उस चक्रको तुरन्त चलाया गया मानो सुभटत्वका द्वीप ही संचरित कर दिया गया हो। दत्तने उसे अपने हाथमें ले लिया। वैरी नष्ट हो गया। उसके द्वारा मारा गया वह भयंकर सातवें नरक में गया। इस प्रकार यह जहाँ जाकर स्थित रहा धरतीका भोग कर नारायण भी वहीं गया। उस अवसरपर बलभद्रने शील ग्रहण कर लिया और अपने हृदयका निग्रह किया। उसने सम्भूत जिनेश्वरकी सेवा की और तपके तापसे स्वयंको सन्तप्त किया। उसने बाईस परिग्रहोंको सहन किया। दुर्मद चार घातिया कर्मोंका नाश कर दिया। अनागर महाकेवली प्रवर समयके साथ अजर-अमर हो गये। अपने स्वभावसे वह त्रिभुवनकी शिखरपर ले जाये गये और दूसरे परमेष्ठी (सिद्ध) होकर स्थित हो गये। पापको नष्ट करनेवाले वह बुद्ध सिद्ध शाश्वतरूपसे केवलदर्शन ज्ञानमय हो गये। कामदेवके धनुषसे उल्लसित—

घत्ता—कुसुमबाणमयी मेरे शरीरमें लगी हुई पैनी तीरपंक्तिको हे कुन्दकुसुमके समान कान्तिवाले भरतके द्वारा नमनीय मल्लिनाथ काट दो ॥१६॥

त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं
महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका मल्लिनाथ पद्म चक्रवर्ती नन्दीमित्र
दत्तबलि पुराण नामका सड़सठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६७॥

---

१६. १. A पडिचक्कें । २. AP तेण वइरि । ३. A इह एम गंपि थिउ एहु जहिं । ४. A जाम तहिं; P तेम तहिं । ५. AP तवभावें । ६. A दुम्मयइं । ७. AP धुउ । ८. A णिसि पासिउ छिंदिउ आवडियं । ९. A महुं । १०. A मल्लिणाहणिव्वाणगमणं णाम सत्तसत्तिमो ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

NOTES

[The references in these Notes are to Saṃdhis in Roman figures and to Kaḍavakas and lines in Arabic figures.]

XXXVIII

1\. 12*b* भवइजसोहो, having the beauty of the rays born of भवइ, the lord of stars, or नक्षत्र, 26 पयासवि, i.e., प्रकाशयामि, publish or manifest. Note *v. l.* पयासमि which is simpler to understand, but K sometimes shows preference to such forms; compare समासवि in the following line; as also इच्छवि and अच्छवि in 5. 10, 11; पडिच्छवि & ओहच्छवि in 3. 8 below.

2\. 1*b* कइवयदियहइं कतिपयदिवसान्, for some days. 2*a* णिव्विण्णउ निर्विण्णः, dejected. णिव्विणोउ i. e., निर्विनोदः of K is an equally good reading and may mean काव्यकरणादिविनोदरहितः, but I have adopted णिव्विण्णउ in view of उव्वेउ जि वित्थरइ णिरारिउ in 4. 9*a* below, and in view of the gloss. 9–10 खलसंकुलि कालि etc. भरत who lifted up सरस्वती, the goddess of learning, going down on an empty, very empty or dangerous path (सुण्णसुसुण्णवहि) or in the empty sky in these (bad) times, full of wicked people (खलसंकुलि), and full of people of bad character (कुसीलमइ), by covering her (संवरिय संवृतां कृत्वा) by means of his विनय, modesty.

3\. 1*a* अइयणदेवियव्वतणुजाएं, i.e., by भरत who was the son of अइयण or ऐयण and देवियव्वा. 2*b* दुत्थियमित्तें, by भरत who was the friend of दुत्थिय, persons in distress. 3*a* मइं उवयारभावु णिव्वहणें, by भरत who accomplished, i.e., showered, obligations on me, i. e., poet पुष्पदन्त. How भरत put पुष्पदन्त under his obligations can be seen from MP I. 3–10 and Introduction to Vol I. pp xxviii–xxxii. 10 तुहु सिद्धहि etc., why don't you milch the milk of nine sentiments (णव रस) out of the cow, viz., your वाणी or poetic power which is सिद्ध or accomplished to you or is at your command.

4\. 7*a* राउ राउ णं संझहि केरउ, the king is as (fickle as) the red glow of the evening, i. e., lasting for a short time. 8*b* एक्कु वि पउ वि रएवउ भारउ, to compose even one word is a heavy task. 10 जगु एउ etc., the world is always crooked (वंकउं) with the virtuous (गुणेण सह) as the bow is when strung with its string (गुण).

5\. 2*b*–3*a* According to the poet, भरत excelled even king सालवाहण, i. e., सातवाहन, in that he (भरत) was a constant friend of poets (अणवरयरइयकइमेत्तिइ).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4*a-b*. The poet here refers to an anecdote that king श्रीहर्ष carried the famous poet कालिदास on his shoulders. Historically this reference is on par with several others, e. g., those mentioned in the भोजप्रबन्ध. The date of the accession to throne of king श्रीहर्ष, the patron of बाण, is 620 A. D., while कालिदास is certainly older than Aihole Inscription of 634 A. D., than बाण (620 A.D.) and above all than वत्सभट्टि's मन्दसोर प्रशस्ति of 473 A. D. 8*a–b*. Poet पुष्पदन्त who styled himself as कव्वपिसल्ल, was honoured by some and was despised by others saying that he was a dullard (खड्डु). 11 देवीसुय, a son of देवी or देवियब्वा of 3. 1*a* above, i. e. भरत.

6. 3*a–b*. The poet here assures his patron भरत that his poetic genius manifests itself out of devotion for the feet of the Jinas, and not out of desire to earn his living (णउ णियजोवियवित्तहि). 10. करहु कण्णि कहकोंडलु, place on your ear this ear-ring (कोंडलु), viz., the narrative (कह, कथा) of अजित.

7. The narrative of अजित, the second तीर्थंकर, begins with this कडवक. I have already referred to the monotonous way in which lives of great men in Jain works are described (Vide MP Vol. I. p. 599). We first get some information of the previous birth of a Jina wherein he acquires the necessary qualifications of becoming a Jina in the subsequent birth. In the case of Ajita, he was विमलवाहन, a king ruling in the town of सुसीमा of the वत्सदेश, situated on the southern bank of the river सीता in the पूर्वविदेह of जम्बूद्वीप. There one day he acquires disgust for the worldly life, practises penance, cultivates the sixteen भावनाs such as दर्शनविशुद्धि, secures तीर्थंकर नाम and गोत्र, dies by observing fast, is born in the विजय अनुत्तरविमान, has a life of 23 सागरोपम; there when only six months of this long life remain, सौधर्मेन्द्र comes to know that this अहमिन्द्र is to be born in अयोध्या in the भरतवर्ष as a son to king जितशत्रु and queen विजया, and orders कुबेर to bestow a shower of gold on this city. The six deities, श्री, ह्री, धृति, मति, कान्ति and कीर्ति, come to wait upon queen विजया. The queen then sees sixteen dreams, and on waking up describes them to king जितशत्रु who tells her that she would give birth to a जिन. When विमलवाहन completes his period of life as अहमिन्द्र he descends into the womb of विजया in the form of an elephant. Gods arrive on the scene and congratulate जितशत्रु. The Jina is born as त्रिज्ञानिन् i. e., possessed of मति, श्रुत and अवधिज्ञान, on the 10th day of the bright half of माघ. Gods headed by इन्द्र, arrive on the scene once more, go round the Jina three times, salute the parents, and handing over to the mother a मायाबाल, take the Jina to the मन्दर mountain, give him a bath, name him as अजित, offer him prayers, and, bringing him back to अयोध्या, hand him over to his mother. When अजित attained youth, he was married to thousand princesses. He was also crowned as prince, and enjoyed the earth for 19 lacs of पूर्वs. One night prince अजित saw a meteor

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

falling, and gathering from it that his fortune was as fickle as the meteor, resolved to renounce the worldly life. Gods arrive on the scene once more and praise him for his resolve. He then placed his son अजितसेन on the throne, gods gave him a bath, and on the afternoon of the ninth day of the bright half of माघ he performed the केशलोंच and took the दीक्षा. The hair of the monk अजित were picked up by इन्द्र in a golden plate and thrown in the क्षीरसमुद्र. One thousand princes renounced the world with him. In a short time the fourth knowledge, viz., मनःपर्ययज्ञान, was acquired by him. He took the vows with a fast of two days and a half (षष्ठोपवास). He broke the fast the next day at अयोध्या at the house of king ब्रह्मा, who was graced by five wonders. अजित practised penance for twelve years, and on the 11th day of the bright half of पौष, he secured केवलज्ञान under सप्तच्छद tree. इन्द्र and other gods arrived on the scene, praised him and built a समवसरण. There the Jina sat on a सिंहासन, called सर्वभद्र, had with him all the eight प्रातिहार्यs, and then delivered a discourse. He had his गण or followers devided into 12 groups, viz., गणधर, पूर्वधारिन्, शिक्षक, अवधिज्ञानिन्, केवलिन्, विक्रियाऋद्धिमत्, मनःपर्ययज्ञानिन्, अनुत्तरवादिन्, आर्यिका, श्रावक, श्राविका and देव, देवी, तिर्यञ्च् etc. With such संघ, the Jina wandered on the earth for a period of 53 lacs of पूर्वs less by 12 years. He then went to the सम्मेदशिखर, and having lived the life of 72 lacs पूर्वs, practised the प्रतिमाs for one month, and attained emancipation on the forenoon of the fifth day of the bright half of चैत्र. Gods worshipped him on this occasion, his body was burnt by अग्निकुमार, the ashes were respectfully collected by Indra and thrown into क्षीरसमुद्र.

I have given all the details of the life of अजित here. The same will be repeated almost in the same form with the change of names, dates etc., in the case of all the तीर्थंकरs mentioned in this Vol. and therefore will not be described any more. I am giving these details in the tabular form to facilitate understanding.

7. 2*a* सीयहि दाहिणकूलि, we have a *v. l.* in K, उत्तर°, but is corrected in the Ms. to दाहिण, perhaps on the strength of गुणभद्र's उत्तरपुराण, which reads :

सीतासरिदपाग्भागे वत्साख्यो विषयो महान् ।—उत्तरपुराण, 48. 3.

where अपाग्भाग means south. 8*b* हलियहिं, by farmers.

8. 8*a–b* जसु सोहग्गें etc. God of love falls into background on account of the beauty of विमलवाहन, and therefore gave up his body and became अनङ्ग.

9. 2*b* पंचमहव्वयमायउ, the mothers of five great vows, viz. the 25 भावनाs, five for each vow. 8*a* दंसणसुद्धिविणउ, the sixteen भावनाs beginning with दर्शनविशुद्धि. For details see तत्त्वार्थसूत्र VI. 24. These भावनाs enable a soul to secure तीर्थंकर नामगोत्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

10. 9*a* सो अहममराहिउ, that अहमिन्द्र, who, in the previous birth, was king विमलवाहन. 11*b* कणयमयणिलयण, (अयोध्या) having houses of gold.

11. 1*b* माणवमाणिणिवेसें, dressed as earthly ladies. 4*a* गब्भि ण थंतहु, even before the descent of the जिन; into the womb i. e., इन्द्र sent a shower of gold even before the जिन descended into the womb of queen विजया.

12. For sixteen dreams see my note in MP. Vol I, pp. 600–601.

13. 4*a–b* कुंजरवेसें etc. The अहमिन्द्र, on completion of his period of life at विजयविमान, entered into the mouth of the queen in the form of an elephant just as the sun enters into clouds. 9–10. These lines mention the interval between the निर्वाण of ऋषभ and the descent of अजित into the womb of queen विजया; it is fifty lacs of crores of सागरोपमs.

14. 4–5 दसणकमलसरणच्चियसुरवरि etc. इन्द्र ascended his elephant ऐरावण on whose lotus-pond-like tusks gods were dancing. 8*b* सरसरसिर, talking full of devotion.

15. 6*b* मंतु पणवसाहा संजोइवि, using the मन्त्र "ॐ स्वाहा."

18. 9*a* वसुवइवसुमइकंताकंतें, by अजित who was the lord of two wives, viz., wealth (वसुवइ) and the earth (वसुमइ).

19. 1*b* ईसमणीस समासमलीणी, the mind of lord अजित was completely engrossed in peace of mind (सम, उपशम, वैराग्य). 4*b* आउ वरिसवरिसेण जि खिज्जइ, man's life is lessened year by year.

20. 4*a–b* गइदुच्चरित्तकम्मसंताणइ संताणइ, for the continuation of his race which meant a series of acts (कम्मसंताण) such as गइ (देवमनुष्यादिगति) and misdeeds (दुच्चरित्त). The act of continuing the race involves a series of birth and death and several other acts which are misdeeds.

21. 6*a-b* कुसुमवरिसु etc. The five miraculous things are कुसुमवर्ष, a shower of flowers from heaven, सुरपटहनिनाद, beating of heavenly drums, वसुहारा shower of gold from heaven, चेलुक्खेव, erecting of flags, and अहोदाणं, divine sound praising the nobility of gift. Compare विवागसुयं page 78.

23. Description of समवसरण.

24. Description of eight प्रातिहार्यs, viz., अशोकवृक्ष, दिव्य पुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चामर, सिंहासन, भामण्डल, देवदुन्दुभि and छत्र. 10–12 and the following कडवक mention the number of his गणs, for which see the Table.

26 1 *a* सिहरिहि i. e., on mount Meru. 5 *b* दंडकवाडुरुजगजगपूरणु describes the process by which the soul of a Jina proceeds to सिद्धसिला.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

XXXIX

The saṃdhi gives the story of सगर, the second चक्रवर्तिन् of the Jainas.

1. 2 मगहाहिव, i. e., श्रेणिक, the king of the मगध country who asked गौतम इन्द्रभूति to tell him the lives of sixtythree great men. 4 *a* For दाहिणयलि AK originally read उत्तरयलि but K corrects it to दाहिणयलि which agrees with गुणभद्र's उत्तरपुराण:—

द्वीपेऽत्र प्राग्विदेहस्य सीताप्राग्भागभूषणे ।
विषये वत्सकावत्यां पृथिवीनगराधिपः ॥ 48. 58.

12 घरचूलाहयणहयल, the capital पृथ्वीपुर which struck or scratched the surface of the sky with the tops (चूला) of its houses.

2. 9 *b* सिसुमोहणीउ मुणिहिं वि दुवारु, affection to children is irresistible even to monks. 10 जिणवरवयणु रसायणु, the councillors of the king gave him the elixir, viz., the teachings of the Jinas to overecome his grief.

4. 3*a* इयरु वि, i. e. महारुतमन्त्री. 5*b* किउ दोहिं मि पडिबोहणणिबंधु, god महाबल (formerly king जयसेन) and god मणिकेतु (formerly महारुत मन्त्री) made an agreement that whoever was born as a human being first, should be reminded by the other who continued to be अमर or god, of this fact.

5. 9–10 The fourteen jewels of the sovereign ruler.

6. 3*a* जिव भरहहु तिव सयरहु जि होइ, i. e., सगर got as much wealth as भरत, the first चक्रवर्तिन्.

7. 1*a* मयमउलवियणयण, elephants have their eyes closed on account of their मद, rut or rutting season. 10*a* रयणकेउ, i. e., मणिकेतु,

8. 9*b* तरुणिहि कोक्किज्जइ हसिवि ताउ, young women laugh at him and call him papa, father (ताउ, तात).

10. 2*a* देवसाहु i. e., मणिकेतु, who, being a god, assumed the form of a monk.

12. Description of the descent of the गङ्गा.

14. 2*a* बिहिं ऊणी सट्ठि, sixty thousand sons, minus two, viz., भीम and भईरहि or भगीरथ who alone escaped death. 9*b* गउ आवइ णउ सरिसरतरंगु, waves of the river water, once gone, do not come back (आवइ णउ).

16. 11*a* दढधम्महु पायंतिइ, at the feet of a sage named दढधम्म (दृढधर्मन्).

17. 6*b* गउ जेण महाजणु सो जि पंथु, Compare : महाजनो येन गतः स पन्थाः.

XL

1. सासयसंभवु, source of eternal bliss (शाश्वत + शं + भव). संभवणासणु, one that puts an end to संभव, birth, i. e., संसार. 5*b* पुसियबंभहरिहरणयं, one that refuted (पुसिय)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the doctrines (णय) of ब्रह्मा, विष्णु, and शिव. 20*b* असिआउसं. For note on this expression see MP. Vol I, page 653. 23 अमिउं, पियह कण्णंजलिहिं, drink the nectar, i. e., my poem, with the अञ्जलि of your ears. Compare कर्णाञ्जलिपुटपेयं विरचितवान् भारताख्यममृतं यः । तमहमरागमकृष्णं कृष्णद्वैपायनं वन्दे.

4. 10*b* सत्था i. e., स्वस्था, quiet, peaceful, happy.

5. 14*a* जित्तसत्तुसुए, son of जितशत्रु, i. e., अजित, the second तीर्थंकर. 18*b* जंभारिणा, by इन्द्र.

6. 4*a* सईइ सइं धारियउ, held or picked up by शची herself.

8. 12 किं जाणहुं सोसिउ उवहि, what do you think ? The ocean became dry as gods were carrying water for the bath of संभवजिन.

9. 13 पइं मुइवि, त्वां मुक्त्वा, वर्जयित्वा, except yourself.

11. 7*a* कत्तियसियपक्खि i. e. कार्तिक + असित + पक्षे, कार्तिक कृष्णपक्षे, Compare गुणभद्र 49. 41 जन्मर्क्षे कार्तिके कृष्णचतुर्थ्यामपराह्णगः. 11 णाणें णेयपमाणें, his knowledge which was co-extensive with ज्ञेय, knowables, i. e., the केवलज्ञान.

13. 5*a* जक्खिदमउडसिहरुद्धरिउ, coming out from the top of the crown of यक्षेन्द्र, i. e. कुबेर.

14. 10*b* दहगुणिय तिण्णि सहस, i. e., thirty thousand. गुणभद्र however mentions twenty thousand.

15. 1*a* भवियतिमिरु, ignorance of the भव्य persons. 14 सिंगारंगहु i. e., शृङ्गाराङ्गस्य, i. e., शृङ्गारभूमेः.

XLI

1. 1 णिंदिंदियइं णिवारउ, one who wards off or controls the base, निन्द्य, sense–organs, i. e., a तीर्थंकर, here अभिनन्दन. 18 जीहासहसेण विणु, in the absence of one thousand tongues. The फणीश्वर has one thousand tongues and hence capable of praising all aspects of a तीर्थंकर, but पुष्पदन्त. the poet; has only one tongue and hence unable to do justice to the qualities of a तीर्थंकर.

3. 1*b* सणियउं वियरइ, walks gently so as to cause no injury to a living being. 5*b* तिण्णि तिउत्तरसय, the expression is eliptic, but clearly refers to 363 doctrines of heretics, as the *lection faciliore* of AP indicates.

5. 7*b* सव्वु सवारिउ, he accomplished it completely.

6. 12 आसणथणहरणि, by the shaking of his seat, इन्द्र learnt, on account of the shaking of his seat, that a जिन was born.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8. This कडवक gives the list of ten deities invoked at the time of he bathing of a जिन. These deities or लोकपाल्स are: इन्द्र, अग्नि, यम, नैर्ऋत, वरुण, वायु, कुबेर, रुद्र, चन्द्र and फणीश; they are described here with a specific mention of their vehicle (वाहन) weapon (प्रहरण), wife (प्रियरमणी) and a characteristic feature (चिह्न), as line 23 says.

12. 13 भयलज्जामाणमयवज्जियउं जिणवउं पेम्मसमाणउं, the vow of a जिन is like the vow of love or behaviour of love, in as much as it ignores or is destitute of fear, shame, pride and self-respect. Just as a man in love ignores the feelings of fear etc., so a जिन ignores these feelings.

17. 9*a* जीवपक्खिबंदिग्गहपंजरु, (the dead body मुक्ककलेवरु) was a cage to catch the bird, viz., the soul.

XLII

1. 18 समासइ वइयरु, the व्यतिकर, story or narrative is being abridged (समासइ, समस्यते).

2. 4*b* पोमरयरासिपिंजरियकुंजरघडे (in the country) where the herds of elephants were reddened with the pollen of lotus flower. 5*a* दुक्खणिग्गमण etc. The region of पुष्कलावती was so charming that it bore the comparison with वनश्री from which the god of love, रइरमण, the lord of रति, would depart (only) with difficulty. 10*b* रमइ वइसवणओ आवणे आवणे, the lord of wealth, वैश्रवण, i. e., कुबेर, took delight in every shop, as it had plenty of wealth. 15 उवसमवाणिएण, with the water (वाणिअ, पानीय) of tranquility of mind (उवसम, उपशम). 16 भोयतणेण, with the grass (तण, तृण) f enjoyments (भोय, भोग).

3. 17*b* हरिसुद्धदेहेण, with his body filled with horripilation (उद्ध, ऊर्ध्वरोम) due to joy.

4. 15*a* हूए हरिभणणे, when the orders of हरि, i. e., इन्द्र, were obeyed, i. e., when the town etc. was decorated at the command of Indra. 17 अणवइण्णि अरुहे, even before the arrival or birth of the अर्हत्.

5. 21 झुल्लंतवडायहिं, with flags (वडाय, पताका) fluttering (झुल्लंत).

7. 6*b* णिव्विधकामावहो, of the जिन who continually or uninterruptedly destroys the god of love or passions. 10*b* जडकसरदुग्गेण, hard to be practised by dullards and mischievous people. कसर literally means a mischievous bull. गिरिकक्करि पडइ etc. A wretched camel throws itself or wanders over a rugged cliff (गिरिकक्कर) for the sake of sweet (महुकारणि) herbs where they cannot be had.

9. 5*b* इणे पच्छिमत्थे, when the sun turned towards the west, was about to set.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12. 15*b* घडिमालाहयहं, the पूर्व periods counted by the series of घटिका that elapsed. Compare हयदियहपाडोहि in 5, 14*a*.

XLIII

1. 5*a* णियायममग्गणिओइयसीसु, who directed his disciples (सीस, शिष्य) on the path prescribed by his holy texts (निज + आगम) or scriptures. 7*b* गलकंदलु bulblike (tender) neck.

2. 6*a* °णीड, nests or houses. 10*a* भाविणि° (भामिनी), women. 13 होउ पहुच्चइ, पूर्णं भवतु, be accomplished. पहुच्चइ normally means प्रभवति, but the gloss explains it as पूर्णं. 14 जं पुरउ etc. If the town or capital is abandoned, then one can secure emancipation quickly. If the king leaves his kingdom he can secure release from संसार.

4. 1*a-b* गिहीगुणठाणवएहिं विमीस,... महोवहि वीस, the period of life of the अहमिन्द्र was twenty सागरोपम (महोवहि) mixed with or plus (विमीस, मिश्र) eleven which is the number of the प्रतिमाs of a householder, in all thirtyone सागरोपम.

8. 10*b* दुमाणवु, wretched man.

10. 4*b* The line should be rather read : सबंधुसु वेरिसु णिच्चसमाणु, always equanimous towards his relatives and towards his enemies.

XLIV

3. 8*a* परमारिसरिसहण्णवजायउ, born in the race (अण्णव अन्वय = वंश) of रिसह, the first तीर्थंकर who was परमारिस, परमर्षि, the great sage.

6. 11 परिमाणु here stands for परमाणु, atoms. All atoms or as many atoms as exist in the universe, were used to make up the body of the lord सुपार्श्व.

7. 5*a* उडुपल्लट्टउ, the falling of stars or meteors, which indicated the fickleness of संसार.

9. 5*b* जलहिमाणि किं आणिज्जइ घडु. Can we use or bring an earthen jar to measure (the waters of) the ocean ?

XLV

1. 17*b* वयणणुवुप्पलमालइ, by means of a wreath of fresh lotus flowers, namely, my poetic composition (वयण, वचन).

2. 16*b* कलहोयमइयाउ, made of gold (कलधौत).

3. 1?*a-b* तूररवें दिस हम्मइ, the quarters (दिस, दिशा) were being beaten, i. e., filled, with the sound of trumpets (तूर, तूर्य); कण्णि वि पडिउ ण सुम्मई, even if a

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

sound reaches our ears, it is not heard or understood owing to deep sound of trumpets.

6. 9*b* सरसेणा, army of सर (स्मर), god of love.

13. 13–14. The meaning of the lines is: पद्मप्रभ was born in the वैजयन्त heaven, and had a white complexion (सियंगु) and very bright lustre. On seeing this lustre of पद्मप्रभ, the wife or wives of पुष्पदन्त, i. e., of चन्द्र and सूर्य, felt that their lustre was nothing before his lustre and thus became blackened.

XLVI

5. 9*b* सासेहिं व चासपइण्णएहिं, like crops (सास, सस्य) sown in series of plough share marks (चास). चास is a deśī word meaning a line drawn by the plough-share (हलविदारित भूमिरेखा) and is still preserved in Marathi in the form of तास.

6. 12. जिणतणुहि कंतिइ पयडु ण होंतउ, the milk which was used for bathing the जिन, could not be distinguished as its colour was identical with the complexion of the जिन; an instance of मीलितालंकार.

11. 5*a* बलदेवहं अग्गइ देहि तिण्णि, put the figure 3 after 9; बलदेवs are nine. The whole passage gives the figure 93 which is the number of गणधरs of चन्द्रप्रभ. 10-11. These lines mention the eight प्रातिहार्यs such as पिंडीद्रुम, i. e., अशोकवृक्ष. The position of these प्रातिहार्यs in the middle of the list of the followers of चन्द्रप्रभ is unusual.

XLVII

4. 3*a* वच्छु जहिं रोसहुं, he avoids places where there is the tree (वच्छ, वृक्ष) of anger. The variant in P, 'वासु' is clearly an easier substitute for वच्छु.

6. 9*a–b* The child, looking at its mother and also at her reflected image, was comfounded and felt it had two mothers (दोमायउं द्वैमातृकम्) and so was unable to decide which was his real mother.

XLVIII

1. 19 गुणभद्दगुणीहिं जो संथुउ, he i. e., the tenth तीर्थंकर who is glorified by the revered sage गुणभद्र. We know that गुणभद्र is the pupil of जिनसेन the author of the Sanskrit आदिपुराण. जिनसेन's work was continued after his death by गुणभद्र, which is called the उत्तरपुराण. The expression गुणभद्दगुणीहिं may also be interpreted "by pious monks possessing auspicious qualities."

4. 14 तं पट्टणु कंचणु घडिउं, that city was made or built of gold. कंचणु stands for काञ्चनं, i. e., काञ्चनमयम्. AP read कंचणघडिउं as the copyists did not understand the meaning above of कंचणु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. 1*a-b* तं सइं etc. The line means: Even though the water used for the bath of शीतलनाथ flowed in a downward direction, it led the pious people in the upward direction, i. e., to heaven.

10. 5*b* उत्ताणाणणु गव्वेण जाइ, a man, out of pride, goes or walks with his face or head up or erect. A proud man walks with his head stiff and erect.

13. 1*b* संभरइ विरुद्धउ जिणचरित्तु, the gods brought to their minds the (apparent) contradictions in the life of the जिन. In the following lines we get a reference to these contradictions. For instance, the जिन is called गोपाल (cow-herd boy, lord of the earth) and is very terrific to his own enemies (णियारिचंडु).

18. 5*a-b* He who makes gifts of cows etc., goes to विष्णुलोक in golden विमानs, and enjoys (माणइ) heavenly pleasures. 11. सुज्झइ पिपलफंसणिण, is purified by touching the पिप्पलवृक्ष.

20. 14 सइं विरइवि कव्वु, मुण्डसालायण himself composed some verses glorifying the gifts of cow etc. and brought them to the king. The king felt that these verses were as authentic as the Vedas.

IL

1. 15 कित्ति वियंभउ महुं जगगेहि, may my fame spread over the house of the whole world. The poet is conscious of his poetic powers which, as he says, would bring him a world-wide name.

3. 3*b* गुणदेवहं भवदेवहं ईसरु, the अनन्तजिन is said to be the lord of गणधरs and also of gods by birth such as इन्द्र etc.

5. 9 ता णज्जइ etc. Owing to the shower of gold in the city it was very difficult for people to distinguish the night from the day. The people therefore called that time to be the daytime when lotuses in ponds bloomed.

L.

This saṃdhi and the two following narrate the story of the first वासुदेव (त्रिपृष्ठ), first बलदेव (विजय) and first प्रतिवासुदेव (अश्वग्रीव) of the Jain Mythology. In order that the reader should understand the background of the friendship between त्रिपृष्ठ and विजय, and the enmity between त्रिपृष्ठ and अश्वग्रीव, the poet gives us the narrative of the two previous lives of all these three.

1. 5*a* गोउलपयधाराधायपहिइ, where travellers were made to drink to their satisfaction (धाय) the streams of milk of cows. 11*a* जइणी i. e., जैनी which is

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

a proper name here. 15 खलमित्तसणेहु, friendship with a wicked friend which lasts only for a short time.

2. 5*a* णिग्गेसइ ण वाय, words will not come out. The root णिग्ग here and in 7*b* below corresponds to निघणें in Marathi and may be traced to निर् + गम् or गा.

3. 5*b* तरइ swims. The root तर् to swim is preserved in Marathi in this sense. There is another root तर् in Prakrit which means to be able (शक्).

4. 1*b* वणुस्साहिलासं should have been वणस्साहिलासं, the desire to have the garden. वणुस्स is found in all the Mss. and hence retained. Or, are we to take वण + उस्स (उत्सुक) + अहिलासं, keen desire for the garden ? 12*b* तायाउ आराहणिज्जो, to be respected after (the death of) my father. You deserve the same respect as my father.

5. 13 दुग्गु भणेवि, saying ar thinking that the stone pillar was like a fortress (दुग्ग). वइरिउ i. e. विशाखनन्दी.

8. 6*a* छइउ (छादित:) defeated.

9. 10 तुज्झु हसियहु करमि समाणउं, I shall equalize, i. e , repay your laugh which ridicules me and insults me.

10. 8*b* अवरु i. e., विशाखनन्दी.

LI

1. 6*a* जायासीधणुतणु, They both (विजय and त्रिपृष्ठ) grew to the height of 80 bows. 9*b* बिहि पक्खहिं णं पुण्णिमवासरु, like the day of the full moon which had on one side the bright half and on the other side the dark half, corresponding to विजय बलदेव who is white and त्रिपृष्ठ वासुदेव who is dark in complexion.

2. 11*a-b* हलहरु, दामोयरु. Please note that बलदेवs and वासुदेवs will all be referred to by their various synonyms such as सीरि, हली, लंगलहर, सीराउह etc. for बलदेव, and दामोदर, माधव, श्रीवत्स, अनन्त, सिरिरमणीस, लच्छीवइ, (लक्ष्मीपति) दानवारि, दानववैरिन्, विट्ठरसव, विस्ससेण, etc. for वासुदेव; similarly अश्वग्रीव is mentioned under हयग्गीव, हयकंठ, तुरंगगल etc.

5. 4*b* पुयवयणहि, note ऋ in पृय which has come in for प्रिय probably by extending the application of हेमचन्द्र's rule: अभूतोऽपि क्वचित्, iv. 399.

6. 13. जसु जसु, यस्य यश: whose fame.

7. 8*b* मृगवइयहि जाएं, by the son of मृगावती, i. e., by त्रिपृष्ठ. 9*a* संचालेवी, the potential passive participle. Campare also पालेवी जणेवी, परिणेवी etc. हेमचन्द्र under iv. 438 however gives एवा as substitute for तव्य in अपभ्रंश and does not mention एवी.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. 13-14 णियजणणविइण्णु etc. The lines mean that अर्ककीर्ति understanding the signs of the brows from his father prostrated before king प्रजापति and thus saluted him.

10. 1*a* हरिबलेहिं, by हरि i. e., त्रिपृष्ठ, and by बल i. e., विजय. ससुरउ (श्वशुरः) the the (would-be) father-in-law of त्रिपृष्ठ.

11. 12-13 पुणु भणिउ etc. They again said to अणंत (त्रिपृष्ठ): Let us see; lift up the slab of stone, and show to us whether you would be the killer, (कयंतु, कृतान्तः) of हयकंठ (अश्वग्रीव) or no.

15. 14 अह सो सामण्णु भणहुं ण जाइ, now he cannot be called an ordinary man (सामण्ण, सामान्य).

LII

1. 2 चिरभववइरवसु, under the influence of enmity of the previous birth, when both of them were विश्वनन्दि and विशाखनन्दि. 4 तिखंडखोणिपरमेसरु, the lord of the earth with three continents, i. e., अर्धचक्रवर्ती. अश्वग्रीव was the अर्धचक्रवर्ती before त्रिपृष्ठ.

5. 4*b* विज्जाहरभूयरभूमिणाहु, the lord of the विद्याधरभूमि and भूचरभूमि, i. e. the अर्धचक्रवर्ती, अश्वग्रीव.

7. 3*a* मा रसउ काउ चप्पिवि कवालु, a crow sitting on the head of a person and crowing is considered to be an indication of approaching death.

8. 2 करगय etc., why do you require a mirror to see a golden bracelet which is put on your hand ? A famous लोकोक्ति. 5*a* भरहहु लग्गिवि, from the days of king भरत, the first चक्रवर्तिन्. 11 रणु बोल्लंतहुं चंगउं, the talk of fight is pleasant. Campare युद्धस्य कथा रम्या.

9. किंकर णिहणंतहं णत्थि छाय, there is no charm or pleasure in killing the servants. अश्वग्रीव was glad to fight with त्रिपृष्ठ as he thought that there was no pleasure in fighting with the inferior or low people. 15 सारंगु is interpreted as बलवत् in T. but it appears that त्रिपृष्ठ, being a वासुदेव, should have a bow made of a horn. विष्णु is called शार्ङ्गधर in Hindu Mythology. The other emblems of विष्णु in Hindu Mythology such as पाञ्चजन्य, कौस्तुभमणि, असि, कौमोदकी गदा, गरुडध्वज and लक्ष्मी, are also mentioned as emblems of वासुदेव in Jain Mythology and hence I think that सारंगु धणु should also mean शार्ङ्गं धनुः.

10. 4 a-*b* This line mentions the weapons of बलदेव; they are: लाङ्गल, a plough, मुसल, a pestle, and गदा called चन्द्रिमा.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. 2 खगाहिवो i. e. गरुड, eagle, who is the emblem on the banner of वासुदेव or विष्णु. 8*a* णिच्चिचुंचें, thick and high. This expression, according to T seems to come from निस् and उच्च. It is likely that it can also come from नित्य, निच्च and उच्च + उच्च of which the second उच्च becomes उंच. The meaning would be 'hair standing on end (रोमंच) which remain for ever high.'

12. 8*a-b* भड्. etc. A warrior says : Even if my head falls, my trunk would kill the enemy and dance.

15. 2 कण्णाहरणकरणरणलग्गइं, the armies that were engaged in a fight which was due to the giving away in marriage of the girl स्वयंप्रभा. 12–13 These two lines compare the two armies to loving couples, मिहुणइं, मिथुनानि, engaged in love-sport.

16. 2 सिरिहरिमस्सु, who is mentioned above in LI. 16. 9 *b*, as the minister of king प्रजापति. 25 माहववलवइणा, i. e., by हरिमस्सु.

17. 14*b* णं अट्ठमउ चंदु, the moon in the eight place in the horoscope indicates death. For a different view see मृच्छकटिक VI. 9:

कस्सट्ठमो दिणअरो कस्स चउत्थो अ वट्टए चंदो ।

where the moon in the fourth place is said to indicate death.

19. 3*b* णीलंजणपहदेवीसुएण, i. e., by अश्वग्रीव.

20. 21*b* भीमुहउज्झिउ, free from fear.

21. 14*b* सिवकामिणीइ, by beloved, viz., the female jackal (शिवा). 16 मोल्लवणु, price or return.

24. 15*b* कुलालचक्कु, the wheel of the potter. When the discus of अश्वग्रीव did no harm to त्रिपृष्ठ and remained on his hand, अश्वग्रीव said that it was like a wheel of the potter, quite useless in warfare, although त्रिपृष्ठ and his party valued it so much. अश्वग्रीव abuses त्रिपृष्ठ by saying that a begger may value a lump of oil-cake as a precious article of food, which would satisfy his hunger, but others do not think so.

25. 9 कामिणिकारणि कलहसमत्तो, engaged in fight or battle for the sake of a lady (स्वयंप्रभा).

LIII

5. 5*b* कंजबंधवो सरम्मि दिण्णपोमिणीरई, the sun who is the friend of lotus flowers and gives delight to lotus-plants in the lack.

6. 8*b* तित्थणाहसंखम्मि रिक्खए, on a नक्षत्र which is twentyfourth, i. e. शतभिषा or शततारका.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8. 5*a* अण्णहु पासि ण सत्थविही कत्थइ सुणइ, he does not study the शास्त्रs with any teacher other than himself. The तीर्थंकर is self-enlightened and does not require a teacher.

13. 1*a* सयभिसहइ, with the शतभिषानक्षत्र, i. e., शततारका नक्षत्र.

LIV

1. 14–15 The lines mean: If I (the poet) compare the face of गुणमञ्जरी to the moon, there will be no exhibition of my poetic powers, I would not be called a poet; for, the face of गुणमञ्जरी is not soiled or darkened by the deerspot as the disc of the moon is, nor is there reduction in size nor crookedness as it is in the moon.

3. 2 इहु कल्लोलणिवहु etc. The poet says that friendship between विन्ध्यशक्ति and सुषेण was so fast and intimate that it was impossible to draw any distinction between them; for who will be able to differentiate the ocean from a mass of waves ? The तादात्म्य or identity between समुद्र and तरङ्ग is an accepted thing with philosophers.

8. 7*b* The birth of बलदेव and वासुदेव is heralded by the sun and the moon seen in dreams by their mothers.

8. 9*b* बीयउ उववादेविइ दढभुउ. The name of the mother of द्विपृष्ठवासुदेव is उववादेवी as given here. गुणभद्र however gives it as उषा. Compare:

तस्यैवासौ सुषेणाख्योऽप्युषायामात्मजोऽजनि ।
द्विपृष्ठाख्यस्तनुस्तस्य चापसप्ततिसंमिता ॥ 58. 84.

9. 10*b* गलियंसुयइं सुहद्दहि णयणइं, I shall kill अचल and make his mother सुभद्रा shed tears.

12. 10–12 रायत्तणु etc. There is a pun on राय which means राजन् as well as राग.

17. 8*a* रासहु होइवि etc. तारक compares द्विपृष्ठ to an ass and himself to an elephant. 10*a* गोवालबाल, the son of a cowherd boy, is an epithet of वासुदेव (कृष्ण), who, according to Hindu Mythology, lived and was brought up among the cowherds.

LV

3. 6*b* तहु गुण किं वण्णइ खंडकइ, how can खण्डकवि (पुष्पदन्त) describe his qualities ? खण्ड means broken, incomplete, which is one of the nicknames of पुष्पदन्त.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. 8*b* णायभव, नाकभवा: i. e. gods. 16 गिमें जित्तु सियालउ, the season of summer (गिभ, ग्रीष्म) defeated winter (सियाल, शीतकाल). This was a निमित्त for विमलनाथ to realize the impermanence of the world.

LVI

1. 6*a* धणु सुरधणु जिह तिह थिरु ण ठाइ, wealth, like the rainbow, does not remain perpetualy with a person. 7*a* भायर णियभायहु अवयरंति, brothers misbehave (अवयरंति, अपचरन्ति) with their brother.

2. 8*a-b* चर etc. चर, गमण, छेज्ज and कड्ढण are different types of the play of dice which are a means of attacking the opponent and taking charge of his possessions. 9*b* एक्कें उड्डिउ णियरज्जु ताम, one of them (सुकेतु) lost his kingdom. Note the use of उड्डिउ which word, in the form of उडवणें is preserved in modern Marathi.

6. 4*a* महुराउ भणहि महुघोट्टु काइं, how can you call king मधु a mouthful of honey ? How can you speak of king मधु in such light terms ? 7*a* णीलणियासणेण, by धर्मबलदेव who wears blue clothes. बलदेव is a नीलाम्बर. Compare नीलाम्बरो रौहिणेय: कालाङ्को मुसली हली in अमरकोश.

7. 10*a* उविंदुप्पणरोसु, उविंदु + उप्पणरोसु, उपेन्द्र i. e., स्वयंभू (वासुदेव) got angry. 11 *a-b* जइ लोहिउ etc. I swear by the feet of (my elder brother) धर्म, if I do not make the goblins drink the blood of king मधु. पायमि stand for पाययामि, make one drink, a causal form of पा to drink.

8. 1 वसुहासुउ, the son of वसुधा, i. e., स्वयंभू. The name of the mother of स्वयंभू is पृथिवी as we see from 4. 7*b* above; here the poet uses a synonym वसुधा for पृथिवी.

9. 4*b*, 6*b* सुंदरिहि तणुएण i. e, by मधु. 5*a-b*–6*a* विउसयणकयवयणविणुएण, by king मधु who was glorified in compositions or poems (वयण, वचन) composed by a body of learned men (विउसयण, विद्वज्जन). 36 महुमहमुक्कें चक्कें, by the discus discharged by the enemy of मधु. महुमह or मधुमथन is one of the names of विष्णु in Hindu Mythology.

LVII

This saṃdhi gives the narratives of three persons, संजयन्त, मेरु and मन्दर with their several past lives. Of these मेरु and मन्दर are the two prominent गणधरs of विमल. The table given below records chronologically the different previous births of persons mentioned in the narratives :—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*a*) संजयन्त—(१) सिंहसेन; (२) अशनिघोष हस्ती; (३) श्रीधरदेव; (४) रश्मिवेग; (५) अर्कप्रभ; (६) वज्रायुध; (७) सर्वार्थसिद्धि अहमिन्द्र; and (८) संजयन्त, It is in this birth that he attained emancipation.

(*b*) मेरु—(१) मधुरा; (२) रामदत्ता; (३) भास्करदेव; (४) श्रीधरा in देवलोक; (५) रत्नमाला in the अच्युतस्वर्ग; (६) वीतभय; (७) आदित्यप्रभ; and (८) मेरु who is the गणधर of विमल.

(*c*) मन्दर—(१) वारुणी; (२) पूर्णचन्द्र; (३) वैडूर्यदेव; (४) यशोधरा; (५) रुचकप्रभ in कापिष्ठस्वर्ग; (६) रत्नायुध; (७) विभीषण; (८) द्वितीय नारकी; (९) श्रीधामा; (१०) ब्रह्मस्वर्गस्थित देव; (११) जयन्तधरणेन्द्र; and (१२) मन्दर who is the गणधर of विमल.

There are two other prominent persons mentioned in the narrative; they are : (1) सत्यघोष or श्रीभूति, the minister of सिंहसेन who became अगन्धनसर्प, चमरमृग, कुक्कुटसर्प, तृतीय नारक, अजगर, चतुर्थनारक, त्रसादिभव, सप्तमनारक, सर्प, नारकी, मृगशृङ्ग and विद्युद्दंष्ट्र; (2) भद्रमित्र the merchant who became सिंहचन्द्र, प्रीतिंकर देव and चक्रायुध.

1. 5*b* चिज्जइ comes from चि to pluck, to collect, and then eat. The T gives भक्ष्यते which is only a secondary sense of the root.

6. 10 देवदिवायराहु, of god आदित्यप्रभ who in subsequent birth became मेरु.

9. 11*a* बिण्णि वि एयइं, i. e., यज्ञोपवीत as well as मुद्रिका.

14. 1*a* णावइ वारुणि, like wine.

15. 6*a* तूलिहि, on a mattress made of cotton (तूल).

18. 4*b* कम्मारउ, a labourer.

LVIII

9. 1*a* पुणु तहु कइ etc. The line means : Now for the sake of अनन्त (तहु कइ, तस्य कृते) the royalty (राज्यश्री) suffered pangs of love; she fainted (but was brought round (सचेयण कय) by fanning) by means of chowries.

11. 8*b* मिहिरमहाहिय, superior in lustre (मह, महस्) to the sun (मिहिर).

13. 12*a* अमवासाणिसियहि, on the night of अमावास्या. Both गुणभद्र and पुष्पदन्त do not mention the month which is चैत्र. Probably we are to borrow the name of the month from 11.1*a*.

16. 9*b* महुसूयणु i. e. मधुसूदन the Mss use promiscuously महसूयणु and महुसूयणु. In Hindu Mythology मधुसूदन is the name of विष्णु. Are we to take मखसूदन to be the name, which is confounded with मधुसूदन ?

21. Note the दामयमक or शृंखलायमक throughout the कडवक.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

22. 5*b* रहचरणु i. e. चक्र, the discus. 13*a* सरसलिलि रहंगसयाइं अत्थि, there are hundreds of रथाङ्गs, i. e., चक्रवाक birds in lakes but can they catch a maddened elephant ?

LIX

4. 7 सिविणय देंतु सुहुं, giving delight to men who were modest or humble though rich. Note that the word सिविणय has no case-ending of the Genitive. See हेमचन्द्र iv. 345.

6. 3*a* पूसरिक्खि छणससिदिवसि, there is no mention of the name of the month here. Elsewhere, i. g. in गुणभद्र, the month of माघ is mentioned, but we cannot have पुष्यनक्षत्र on the full-moon day of माघ. The month therefore must be पौष. Is the confusion due to the difference in the method of naming the months in the northern and southern India ?

14. 1*a* सयडंगु (शकटाङ्ग), the wheel, i. e., discus, the weapon of a चक्रवर्तिन्.

19. 10 विसरिसजलझलज्झलं, the drippling of dirty rainwater.

LX

2. 5*b* जहिं मणियरहिं ण दिट्ठु पयंगउ, where the sun (पयंगउ, पतङ्गः) could not be seen because of the rays of gems. The gems were so numerous and vast that their rays even eclipsed the sun.

3. 5*b* कोडिसिलासंचालणधवलहु, the line refers to the exploit of त्रिपृष्ठ the first वासुदेव who lifted up the कोटिशिला. See LI. above.

4. 13*b* पाहुडगमणागमणपवाहें, by a series of gifts passing or exchanged between विजयभद्र and अमिततेजस्. 14 णिम्मित्तिउ, नैमित्तिक; an astrologer.

5. 9*b* हउं पव्वइउ समउं हलीसहु, when हलीस, i. e., विजय बलदेव renounced the world, I (the Brahmin astrologer says) also became a monk with him.

6. 11*a* मामसमप्पिउ, given by my father-in-law (माम). Even in modern Marathi the father-in-law is called मामा.

8. 2*a* अमोहजीहु, the name of the astrologer. 7*b* जेणुव्वरसि by which you will survive the calamity.

11. 3*b* णिबद्धणाइं, the AP reading णिबंधणाइं is easier. The meaning of the expression is 'binding tissues. 9*b* वारउ turn. The word वार, meaning a turn, is preserved in Marathi.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

18. 5*a* हरिसुउ, i. e., श्रीविजय the son of त्रिपृष्ठवासुदेव.

29. 10*b* समयसमियकलि, समतया स्वमतेन वा शमितः कलिः येन, who, by his equanimity or preaching, settled the quarrels of people.

LXI

1. 9*a*-28*b* These lines give the list of विद्याs acquired by अमिततेजस.

12. 6*a* दिल्लिदिल्लिए, हे बाले. दिल्लिदिल्लिअ is a deśī word meaning a boy & दिल्लिदिल्लिआ a girl. See देशीनाममाला V. 40.

15. 13 आउंचियारिपसरु, who stopped the progress of his enemies.

21. 11 घणवाहणहु, i. e., मेघरथस्य.

LXII

2. 2*a* गरुडेण वि जिप्पइ एहु ण वि, this cock cannot be defeated even by an eagle.

5. 10*b* जाउडयजडिलमंडियथणिहि, whose breasts were decked by a thick paste of saffron.

7. 9*a* to 10. 2*b* We have here a description of the whole earth with its continents as seen from the sky.

17. 12*b* पक्खें (पक्षिणा), by the bird. Are we to have the word as पक्खि which would be the form of the Instrumental sing ?

LXIII

2. 7*a* एरादेविइ, elsewhere the name of the mother of शान्ति is given as अइरा as for instance in 1. 16 and 11. 2*b*.

5. 5–6 These lines give the list of 14 gems which, as a चक्रवर्तिन्, शान्तिनाथ possessed.

11. 1–7 These lines give the previous births of शान्तिनाथ and चक्रायुध. शान्ति had in all twelve, viz., श्रीषेण, कुरुनरदेव, विद्याधर, देव, बलदेव, देव, वज्रायुध, चक्रवर्तिन्, देव, मेघरथ, सर्वार्थसिद्धिदेव, शान्ति; चक्रायुध also had the following : अनिन्दिता, कुरुनर, विमलप्रभदेव, श्रीविजय, देव, अनन्तवीर्य, वासुदेव, नारक, मेघनाद, प्रतीन्द्र, सहस्रायुध, अहमिन्द्र, दृढरथ (मेघरथभ्राता), सर्वार्थसिद्धिदेव, चक्रायुध.

LXIV

1. 7*b* जो ण करइ करि कत्तिय कवालु, (कुंथु or a तीर्थंकर) who does not hold in his hand human skull (कपाल) and (tiger's) skin (कृत्ति) as god शिव does. The तीर्थंकर is thus far superior to god शिव.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. 8*b* वयविहिअजोग्गु दिण्णु वि ण लेइ, while begging alms he does not accept things which, for his vows (व्रतविधि) he cannot accept.

8. 1*b* णियजम्ममासपक्खंतरालि, on the same day, month and fortnight on which he was born, i. e. on the first day of the bright half of वैशाख. 2*b* कित्तियणक्खत्तासिइससंकि, when the moon was in conjunction with the नक्षत्र mentioned (कीर्तित) or कृत्तिका.

LXV

3. 4*b* पट्टणु रयणकिरणअइसइयउ, the town that excelled in brightness or was extremely bright owing to the rays of gems.

4. 9*b*–10*b* वरिसकोडि सहसेण विहीणइ....पल्लचउत्थभायपरिमाणइ, when after the निर्वाण of कुन्थु onefourth of the पल्योपम minus one thousand crores of years passed.

5. 5*b* दहदहधणुतणु, with his body twenty शरासनs in height. गुणभद्र however mentions thirty शरासनs as the height of अर. Compare : त्रिंशच्चापतनूत्सेधः चारुचामीकरच्छविः—65. 26. Which seems to be more probable.

9. 1–8 Note the play on the term अर or अरु here.

11. 8*a* णिउ जिणवररिसि सोत्तिउ तावसु, the king became a Jain monk, while the Brahmin became a तापस ascetic, i. e., an ascetic following the teaching of the Vedice religion, particularly the teaching of devotion to god शिव.

12. 6–7 णच्चइ देउ etc. These lines give the characteristic behaviour of god शिव, who performs a ताण्डवनृत्य, sings, has a woman or women (पार्वती and गङ्गा), beats the डमरु, burns त्रिपुर, and kills demons. The Jain monk says that such a godhead will not save one from संसार.

13. 6*b* तावसमासुरवासि रसंति, the pair of sparrows, having formed their nest in the beard of the ascetic, used to warble.

16. 1–2 These lines give the origin of the name कण्णाकुज्जणयरु, the city of कान्यकुब्ज, because the girls in which, having refused to marry the sage, became dwarfish owing to his curse.

24. 1*b* खत्तिय सयलु वि छारु परत्तिवि, having burnt to ashes all the क्षत्रियs. परत्तिवि comes from परत्त a deśī root which is preserved in modern Marathi as परतणें.

LXVI

1. 9*a* विहवत्तणदुक्खोहरियछाय, whose beauty or spirit was soiled by sufferings of widowhood (विहवत्तण, विधवात्व). 10*b* पर ताउ ण पिच्छमि, but I do not see or know my father (सहस्रबाहु).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. 5*b* कोसलं पुरं, i. e., साकेत which is the capital of the कोसल country.

6. 3*a* परमेसरु, i. e. सुभौम, who was destined to be a चक्रवर्तिन् later. 10*b* एउ जि, this very earthen plate filled with the teeth of his father (सहस्रबाहु), which turned into a discus (चक्र).

10. 10*a* सब्भंतरि (श्वभ्रान्तरे), in a ditch, i. e., in a hell.

LXVII

4. 6*a* हिरण्णगब्भो, i. e., a जिन. The term हिरण्यगर्भ is used to designate god ब्रह्मा in Hindu Mythology, but in Jain Mythology it is used to denote a तीर्थंकर.

9. 1*a* दिणि छक्के विच्छिण्णए, six days after his दीक्षा, i. e., on पौष कृष्ण द्वितीया, मल्लि attained केवलज्ञान. गुणभद्र also gives this date exactly in the same form. Compare: दिने षट्के गते तस्य छाद्मस्थे प्राक्तने वने–66.51.

13. 11*a* पिसुणमहंतो, i. e., the minister named पिशुन, who gave a wrong report about राम and विराम to their father वीर, was born as बलि the अर्धचक्रवर्तिन् and a प्रतिवासुदेव.

14 4*b* वाणारासि, i. e., वाराणसी; the lengthening of the third syllable is due to metre.

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अँगरेजी टिप्पणियोंका हिन्दी अनुवाद

सन्धियोंको टिप्पणियोंके सन्दर्भ रोमन अंकोंमें हैं, जब कि कड़वकों और पंक्तियोंके अरबी अंकोंमें। वर्ण्यविषयका संक्षिप्त सार प्रारम्भिक परिचयमें दिया गया है, जिससे पाठक मूलपाठको समझ सकें। ये टिप्पणियाँ उन संस्कृत टिप्पणियोंकी पूरक हैं, जो पृष्ठके नीचे पाद टिप्पणके रूपमें दिये गये हैं। टी–प्रभाचन्द्रके टिप्पणके लिए है।

XXXVIII

1. 12*b* भवइजमोहो—सूर्यसे उत्पन्न किरणोंकी शोभा धारण करनेवाले, 26 प्रकाशयामि–प्रकाशित करता हूँ या व्यक्त करता हूँ। पयासयामि = इसे समझना आसान है—परन्तु 'के' प्रति कभी-कभी ऐसे रूपोंको वरीयता देती है। तुलना कीजिए—बादकी पंक्तिसे (समासवि) साथ ही इच्छवि और अच्छवि। पाँचवेंके 10–11 पंक्ति या तीसरी पंक्तिमें पडिच्छवि और ओहच्छवि, तीसरे कडवककी आठवीं पंक्ति।

2. 1*b* कहवयदियहइं—कुछ दिनोंके लिए। 2*a* णिव्विण्णउ निर्विण्ण—उदास। णिव्विणोउ अर्थात् निर्विनोद। 'क' प्रतिका यह पाठ पढ़नेमें समान रूपसे ठीक है और उसका अर्थ हो सकता है काव्य-रचनाके विनोदसे रहित। परंतु मैंने णिव्विण्णउ पाठको उव्वेउ जि वित्थरइ णिरारिउ पाठके दृष्टिकोणसे ठीक समझा है, जो 4 के 9*a* में है, और टिप्पणके विचारसे भी। 9–10 खलसंकुलि कालि—इत्यादि, भरत जिसने सरस्वती (विद्याकी देवी) का उद्धार किया, जो रिक्त अत्यन्त, या खतरनाक रास्तेपर जा रही थी। (शून्य सुशून्य पथमें) अथवा बुरे समयमें, (खाली आसमानमें) जो दुर्जनोंसे व्याप्त है (खल संकुलि)। और खोटे चरित्रवाले लोगोंसे भरा है (कुसीलमइ)। उसे विनय करके। Modesty विनय।

3. अइयणदेवियव्वतणुजाएं—भरतके द्वारा जो अइयण (एयण) और देवि अव्वाका पुत्र था। 2*b* दुत्थियमित्तें—भरतके द्वारा, जो उन लोगोंका मित्र था, जो संकटमें थे। 3*a* मई उवयारभावु णिव्वहणें—भरतके द्वारा, जिसने मुझपर उपकारोंकी वर्षा की। [कवि पुष्पदन्तपर], भरतने पुष्पदन्तको किस प्रकार उपकृत किया, यह, महापुराणके I. 3–10 कड़वकोंमें देखा जा सकता है, और जिल्द एक की भूमिकामें देखा जा सकता है। pp–XXVIII। 10 तुह सिद्धहि इत्यादि। तुम नवरसोंका दोहन क्यों नहीं करते, अपनी वाणीरूपी कामधेनुसे। अथवा काव्यात्मक शक्तिसे जो तुम्हें सिद्ध है, या जिसपर तुम्हारा अधिकार है।

4. 7*a* राउ राउ णं संझहि केरउ—राजा, सन्ध्याके अरुण रागकी तरह है, अर्थात् थोड़े समय ठहरनेवाला है, 8*b* एक्कु वि पउ वि रएवउ भारउ—एक पदकी रचना करना भी बहुत बड़ा कार्य है। 10 जगु एउ इत्यादि—संसार गुणोंके साथ वक्र है जिस प्रकार कि धनुष जब डोरीपर खींचा जाता है।

5. 9*b*–3*a* कविके अनुसार भरत सालवाहन (सातवाहन) से बढ़कर है, इस बातमें कि भरत कवियोंका लगातार मित्र रहा है (अणवरयरइयकइमेत्तिइ) 4 *a*,*b*—यहाँ कवि उस किस्सेका सन्दर्भ दे रहा है कि राजा श्रीहर्षने कालिदासको अपने कन्धोंपर उठा लिया था। ऐतिहासिक दृष्टिसे यह सन्दर्भ दूसरोंसे भी समानता रखता है, जिनका कि भोजप्रबन्धमें उल्लेख है। श्रीहर्षकी जो बाणभट्टका आश्रयदाता है राजगद्दी-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर बैठनेकी तारीख 620 ईसवी है, बाणकी (620) की तुलनामें, और वत्सभट्टिकी प्रशस्ति (473 ई. सं.) से । 8 *a-b*—पुष्पदन्त जो अपनेको काव्यपिसल्ल कहते हैं, कुछ लोगोंके द्वारा सम्मानित हुए, और कुछ लोगों द्वारा असम्मानित हुए, यह कहते हुए कि वह बुद्धू है । 11 देवीसुय—देवीका पुत्र, अथवा देवियव्वा of 3.1*a* ऊपर—अर्थात् भरत ।

6. 3*a–b* यहाँ कवि अपने आश्रयदाता भरतको विश्वास दिलाता है कि उसकी काव्य-प्रतिभाकी अभिव्यक्ति जिनवरके चरणकमलोंकी भक्तिके कारण है, आजीविकाके लिए धन कमानेकी इच्छासे नहीं। (णउ णियजीवियवित्तहि), 10 करहु कण्णि कहकोंडलु—अजितनाथके कथाके कर्णकुण्डलको तुम अपने कानोंमें धारण करो ।

7. दूसरे तीर्थंकर अजितनाथकी कथा इस कडवकसे शुरू होती है; मैं पहले ही उस ऊबाऊ शैली-का सन्दर्भ दे चुका हूँ जिसमें बड़े लोगोंकी जीवनियोंका जैन साहित्यमें वर्णन किया जाता है (म. पु. जिल्द I पृ. 599) । सबसे पहले हम तीर्थंकरों या महापुरुषोंके बारेमें सूचनाएँ पाते हैं जिनमें वे कुछ विशेष योग्यताएँ हैं, जिनके कारण अगले भवमें तीर्थंकरोंका जन्म होता है । अजितनाथके मामलेमें विमलवाहन एक राजा था जो वत्स देशका शासक था जो कि पूर्व विदेहमें सीता नदीके दक्षिण किनारेपर स्थित था । वहाँ एक दिन उसे सांसारिक जीवनसे विरक्ति हो जाती है, वह तप करता है, सोलह कारण भावनाओंका ध्यान करता है, (जैसे तीर्थंकर नाम गोत्र इत्यादि) । उपवासपूर्वक उसकी मृत्यु होती है, और वह विजय अनुत्तर विमानमें उत्पन्न होता है । वहाँ उसकी तेंतीस सागर प्रमाण आयु थी । जब उसके लम्बे जीवनके छह माह बाकी बचते हैं, तो सौधर्म इन्द्र जान लेता है कि यह अहमेन्द्र अयोध्यामें जन्म लेनेवाले हैं, भारतवर्षमें राजा जितशत्रु और रानी विजयाके पुत्रके रूपमें । वह कुबेरको अयोध्यापर स्वर्णकी वर्षा करनेका आदेश देता है । श्री, ह्री, धृति, मति, कान्ति और कीर्तिके ये छह देवियाँ विजयाकी देखभाल करनेके लिए आती हैं, रानी विजया सोलह सपने देखती है, नींद खुलनेपर वह राजासे उनका वर्णन करती है, जो उसे बताते हैं कि वह जिनको जन्म देगी । जब विमलवाहन अपने जीवनके समयको समाप्त करता है तो वह विजयाके गर्भमें हाथीके रूपमें जन्म लेते हैं । उस अवसरपर देव आते हैं और राजाको बधाई देते हैं । तीन ज्ञानोंके साथ जिनवर जन्म लेते हैं, अर्थात् उन्हें मति, श्रुति और अवधिज्ञान प्राप्त थे । माघ शुक्ला दशवींके दिन इन्द्रके नेतृत्वमें देवता वहाँ पहुँचते हैं और जिनवरकी तीन बार प्रदक्षिणा करते हैं, माता-पिताको प्रणाम करते हैं । माताको मायावी बालक देते हुए वे जिनबालकको मन्दराचलपर ले जाते हैं, जहाँ उनका अभिषेक करते हैं । उनका अजित नामकरण करते हैं, और उनकी स्तुति करते हैं । उसे अयोध्या वापस लाकर माताको सौंप देते हैं । जब अजितनाथ युवा हुए, तो उनकी एक हजार राजकुमारियोंसे विवाह हुआ । उनका युवराजके रूपमें अभिषेक हुआ । उन्होंने 19 लाख पूर्व धरतीका उपभोग किया । एक रात युवराज अजितने उल्कापात देखा और उससे यह सोचते हुए कि भाग्य उसी प्रकार क्षणभंगुर है, जिस प्रकार यह उल्का । एक बार फिर देवता आये और निश्चयके लिए भगवान्की प्रशंसा की । उन्होंने अपने पुत्र अजितसेनको गद्दीपर बैठाया । देवोंने उनका अभिषेक किया और माघ शुक्ल नवमीको दोपहर बाद उन्होंने केशलोंच कर दीक्षा ग्रहण की । मुनि अजितके बालोंको देवेन्द्रने इकट्ठा किया, स्वर्णपात्रमें, और उन्हें क्षीरसमुद्रमें फेंक दिया । उनके साथ एक हजार राजकुमारोंने दीक्षा ग्रहण की । थोड़े ही समयमें उन्हें चौथा मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हो गया । उन्होंने ढाई दिनका उपवास ग्रहण किया और दूसरे दिन अयोध्यामें राजा ब्रह्माके घर उपवास तोड़ा । उसे पाँच आश्चर्य प्राप्त हुए । अजितने बारह वर्ष तक तप किया, और पौष शुक्ला ग्यारहवीं के दिन सप्तच्छद वृक्षके नीचे उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया । इस अवसरपर इन्द्र और दूसरे देव आये । उन्होंने स्तुति की और समव-सरणकी रचना की । उसमें अजितनाथ सर्वभद्र सिंहासनपर बैठे । उनके साथ आठ प्रातिहार्य थे । उन्होंने धर्म प्रवचन किया । उनके अनुयायी बारह गणोंमें विभक्त थे—गणधर, पूर्वधारिन, शिक्षक, अवधिज्ञानी, केवली,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विक्रियाधारीऋद्धिमत, मनःपर्ययज्ञानी, अनुत्तरवादी, आर्यिका, श्रावक, श्राविका और देव, देवी तिर्यंच इत्यादि। इस संघके साथ भगवान् अजितनाथने 53 लाख पूर्व तक धरतीपर भ्रमण किया (बारह वर्ष कम), तब वह सम्मेदशिखरपर गये और 72 लाख पूर्वका जीवन पूरा कर उन्होंने नौ महीनों तक प्रतिमाओंका अभ्यास किया और चैत्र शुक्ला पंचमीको उन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। इस अवसरपर देवोंने भगवान्की पूजा की। अग्निकुमारने उनके शरीरका दाह-संस्कार किया। देवेन्द्रने आदरपूर्वक भस्मको इकट्ठा किया और उसे समुद्रमें फेंक दिया।

मैंने यहाँ अजितके जीवनका समूचा जीवन विस्तार दे दिया है। यही चीजें प्रायः प्रत्येक तीर्थंकरके जीवनमें दुहरायी जायेंगी। केवल समय, नामों, तिथियों में कुछ परिवर्तनके साथ। इस जिल्दमें वर्णित सभी तीर्थंकरोंके जीवनके वर्णनमें इन बातोंको नहीं दुहराया जायेगा। इन विस्तारोंको हम चित्र रूपमें दे रहे हैं जिससे पाठक उन्हें समझ सकें।

7. 2*a* —सीयहि दाहिणकूलि—'के' प्रतिमें उत्तर पाठ है, परन्तु हमने उसे सुधार दिया है। और उत्तर कर दिया है। गुणभद्रके उत्तरपुराणके प्रमाणपर, जिसमें पाठ इस प्रकारका है—सीतासरिदपाग्भागे वत्साख्यो विषयो महान्। वहाँ अपाग्भागका अर्थ है दक्षिण। 8*b* हलियहिं—किसानोंके द्वारा।

8. 8*a b* जसु सोहग्गें—प्रेमके देवता (कामदेव) राजा विमलवाहनके सौन्दर्यके कारण पृष्ठभूमिमें चला गया इसलिए उसने शरीरको छोड़ दिया और वह अनंग हो गया।

9. 2*b* पंचमहव्वयमायउ–पाँच महाव्रतोंकी माता। अर्थात् पचीस भावनाएँ, एक-एक व्रत की पाँच भावनाएँ। 8*a* दंसणसुद्धिविणउ—सोलहकारणभावनाएँ जो दर्शन-विशुद्धिसे शुरू होती हैं। विस्तारके लिए तत्त्वार्थ सूत्र देखिए VI. 24। इन भावनाओंसे व्यक्तिको तीर्थंकर गोत्रका बन्ध होता है।

10. 9*a* सो अहमिंदु—वह अहमिन्द्र जो पूर्वजन्ममें विमलवाहन था। 11*b* कणयमयणिलयण—(अयोध्या) जिसके स्वर्णप्रासाद हैं।

11. 1*b* माणवमाणिणिवेसें—धरतीको स्त्रियोंका वेश धारण किये हुए। 4*a* गब्भि ण थंतहु—जिनके गर्भमें स्थित होनेके पूर्व इन्द्रने स्वर्णकी वर्षा की। जिनेन्द्र अजितके विजयाके गर्भमें आनेके पूर्व।

12. सोलह स्वप्नोंके लिए म. पु. प्रथम जिल्द, पृ. 600–601 देखिए।

13. 4*a-b* कुंजरवेसें—अहमिन्द्र अपने जीवनकी अवधि समाप्त कर (विजय विमानमें) रानी विजयाके मुखमें, एक हाथीके रूपमें इस प्रकार प्रविष्ट हुए जिस प्रकार सूर्य बादलोंमें प्रवेश करता है। 9–10 ये पंक्तियाँ ऋषभके निर्वाण, अजितनाथके विजयाके गर्भमें अवतरणके बीचकी अवधिका वर्णन करती हैं जो पचास करोड़ सागर प्रमाण है।

14. 4–5 दसणकमलसरणच्चियसुरवरि—इन्द्र अपने ऐरावत हाथीपर आरूढ़ हुआ। जिसकी कमलसरोवरके समान सूँड़पर देवता नृत्य कर रहे थे। 8*b* सरसरसिर—भक्तिसे परिपूर्ण बातें करते हुए।

15. 6*b* मन्तु पणवसाहा संजोइवि—'ओं स्वाहा' मन्त्रका प्रयोग करते हुए।

18. 9*a*. वसुमइवसुमइकंताकंतें—अजितके द्वारा, जिनकी दो पत्नियाँ थीं। अर्थात् धरती और लक्ष्मी।

19. 1*b* ईसमणीस समासमलीणो—स्वामी अजितका मस्तिष्क पूर्णतः मानसिक शान्तिमें निमग्न था। (सम, उपशम, वैराग्य)। 4*b* आउ वरिसवरिसेण जि खिज्जइ—मनुष्यकी आयु वर्ष-प्रतिवर्ष कम होती जाती है।

20. 4*a-b* गइदुच्चरित्तकम्मसंताणइ—अपनी जातिको जारी रखनेके लिए, जिसका अर्थ है कर्मोंकी परम्परा, जैसे—गति (देवमनुष्यादिगति) खोटे कार्य (दुश्चरित्र)। जातिको जारी रखनेके कर्ममें

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

जन्म और मृत्युकी शृंखला संलग्न रहती है। और भी दूसरे कर्म होते हैं जो बुरे कार्य हैं।

21. 6*a-b* कुसुमवरिसु–पाँच आश्चर्योंकी वर्षा कुसुमवर्षा है। स्वर्गके फूलोंका बरसना, सुरपटह-निनाद, स्वर्गके नगाड़ोंका शब्द, वसुहारा—स्वर्गसे स्वर्णकी वर्षा, चेलुक्खेव—झण्डे ऊँचे करना, अहोदाणं—दानकी शालीनतामें किये गये प्रशंसाके स्वर्गीय शब्द। तुलना कीजिए विवागसुयसे, पृष्ठ 78।

23. समवसरणका वर्णन।

24. आठ प्रातिहार्योंका वर्णन—अशोकवृक्ष, पुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चामर, सिंहासन, भामण्डल, देवदुन्दुभि और छत्र। 10–12 और बादका कड़वक अपने गणोंका वर्णन करता है इसके लिए चित्रफलक देखिए।

26. 1*a* सिहरिहि—सुमेरु पर्वतपर। 5*b* = दण्डकवाडुरुजगजगपूरणु—उस प्रक्रियाका वर्णन करता है जिससे जिनेन्द्रकी आत्मा सिद्धशिलापर आरोहण करती है।

XXXIX

यह सन्धि सगरकी कहानी बताती है, जो जैनोंके दूसरे चक्रवर्ती हैं।

1. 2 मगहाहिव = श्रेणिक, मगध देशका राजा, जिसने गणधर गौतम इन्द्रभूतिसे त्रेसठ शलाका पुरुषोंके जीवनके बारेमें कहनेके लिए कहा था। 4*a* दाहिणयलि के लिए–'ए' और 'के' प्रतियोंमें सामान्यतः उत्तरयलि 'पाठ' है, परन्तु 'के' प्रति इसकी जगह शुद्ध पाठ दाहिणयलि मानती है। गुणभद्रके उत्तरपुराणमें

द्वीपेऽत्र प्राग्विदेहस्य सीताप्राग्भागभूषणे।
विषये वत्सकावत्यां पृथिवीनगराधिपः ॥ 48-58

12 घरचूलाहयणहयल—राजधानी पृथ्वीपुर जो अपने प्रासादोंके शिखरोंसे आकाशको छूती थी।

2. 9*b* सिसुमोहणीउ मुणिहिं वि दुवारु—बच्चोंके प्रति प्रेमको रोकना मुनियोंके लिए भी कठिन है। 10 जिणवरवयणु रसायणु—राजाके मन्त्रियोंने उस दुःखको सहनेके लिए जिनवरका वचनामृत दिया।

4. 3*a* इयरु वि—अर्थात् महारुत मन्त्री। 5*b* किउ दोहिं मि पडिबोहणणिबंधु—देव महाबल, (पूर्वजन्मका राजा जयसेन) और देव मणिकेतु (पूर्वजन्मका महारुत मन्त्री), दोनोंने यह समझौता किया कि जो पहले मनुष्य होगा, उसे दूसरा इस तथ्यका स्मरण करायेगा जो स्वर्गमें देर तक देव रहता है।

5. 9-10 सार्वभौम राजाके ये चौदह रत्न हैं।

6. 3*a* जितनी सम्पत्ति भरतकी थी, उतनी ही सगरकी भी हुई, चक्रवर्तीके रूपमें।

7. 1*a* मयमउलवियणयण—हाथी मदके कारण आँखें बन्द किये हुए था। 10*a* रयणकेउ अर्थात् मणिकेतु।

8. 9*b* तरुणिहिं कोक्किज्जइ हसिवि ताउ—जवान औरतें उसपर हँसीं और उसे पापा कहकर पुकारा।

10. 2*a* देवसाहु—मणिकेतुने देव होनेके कारण साधुका रूप धारण कर लिया।

12. गंगाके अवतरणका वर्णन।

14. 2*a* बिहिं ऊणी तट्ठी—साठ हजार पुत्रोंमें-से दोको छोड़कर, (भीम और भागीरथ), जो अपनेको मौतसे बचा सके। 9*b* गउ आवइ णउ सरिसरतरंगु—नदीके जलकी तरंगें, जब एक बार जाती हैं तब दुबारा नहीं आतीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

16. 11*a* दढधम्मह्रु पायंतिइ—दृढ़ धर्मके पैरोंके नीचे।

17. 6*b* गउ जेण महाजणु सो जि पन्थु—तुलना करिए महाजनो येन गतः स पन्थाः।

XL

1. सासयसंभवु—शाश्वत आशीर्वाद, (शाश्वत + शं + भव) संभवणासणु—वह जो जन्म (संसार) का अन्त कर देता है। पुसियबंभहरिहरणयं—वह जिसने ब्रह्मा, विष्णु और शिवके सिद्धान्तोंका खण्डन कर दिया है। 20*b* असिआउसं—इस अभिव्यक्तिपर टिप्पणके लिए म. पु. की जिल्द एक, पृष्ठ 653 पर देखिए। 23 अमिउं पियहि कण्णंजलिहिं—अमृतका पान करिए, अर्थात् अपने कानोंकी अंजलिसे मेरे काव्यका पान करिए। तुलना कीजिए—कर्णाञ्जलिपुटपेयं विरचितवान् भारताख्यममृतं यः। तमहम-रागमकृष्णं कृष्णद्वैपायनं वन्दे।

4. 10*b* सत्था—स्वस्थ। अत्यन्त शान्त और प्रसन्न।

5. 14*a* जितसत्तुसुए—जितशत्रुके पुत्रने, अजित, दूसरे तीर्थंकर। 18*b* जंभारिणा—इन्द्र।

6. 4*a* सईइ सइं धारियउ—इन्द्राणीने स्वयं धारण किया।

8. 12 किं जाणिहुं सोसिउ उवहि—क्या तुम सोचते हो कि समुद्र सूख गया क्योंकि देवता सम्भव-जिनके अभिषेकके लिए पानी ले जा रहे हैं।

9. 13 पइं मुइवि—तुम्हें छोड़कर।

11. 7*a* कत्तियसियपक्खि—कार्तिक कृष्ण पक्षमें। गुणभद्रके 49से तुलना कीजिए। 41 जन्मर्क्षे कार्तिके कृष्णचतुर्थ्यामपराह्णगः, 11 णाणें णेयपमाणें—उनका ज्ञान जो ज्ञेयके साथ विस्तृत है—अर्थात् केवलज्ञान।

13. 5*a* जक्खिदमउडसिहरुद्धरिउ—यक्षेन्द्रके मुकुटके अग्रभागसे आता हुआ। यक्षेन्द्र यानी कुबेर।

14. 10*b* दहगुणिय तिण्णि सहस—तीस हजार, यद्यपि गुणभद्र बीस हजारका उल्लेख करते हैं।

15. 1*a* भवियतिमिरु—भव्य जीवोंके अन्धकारको। 14 सिंगारंगह=श्रृंगारके अंगका। श्रृंगार-भूमिका।

XLI

1. णिंदिदियइं णिवारउ—जिन्होंने निन्द्य इन्द्रियोंका निवारण कर दिया है, अर्थात् तीर्थंकर, यहाँ-पर अभिनन्दन। 18 जीहासहसेण विणु—हजार जीभवालेके बिना। फणीश्वरकी एक हजार जीभ हैं इस-लिए वह तीर्थंकरकी सभी विशेषताओंका वर्णन करनेमें समर्थ है, परन्तु कवि पुष्पदन्तकी एक ही जीभ है इसलिए वह तीर्थंकरोंके गुणोंके साथ न्याय नहीं कर सकता।

3. 1*b* सणियउं वियरइ—धीरे चलते हैं इसलिए प्राणियोंको चोट नहीं पहुँचती। 5*b* तिण्णि तिउत्तरसय—अभिव्यक्तिमें न्यूनपद है, परन्तु वह स्पष्टतः वंशपरम्पराके 363 सिद्धान्तको सन्दर्भित करता है। जैसा कि अपभ्रंशमें पाठोंकी सरलता सूचित करती है।

5. 7*b* सव्वु सवारिउ—उसने इसे पूरा सम्पादित किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. 12 आसणयणहरणि—आसनके कम्पनके द्वारा इन्द्र जानता है; आसनके कम्पायमान होनेके कारण इन्द्र जानता है कि जिनका जन्म हुआ है।

8. इस कडवकमें उन दस लोकपालोंकी सूची है। जिनवरके जन्माभिषेकके समय जिनका आह्वान किया जाता है। ये देव या लोकपाल हैं—इन्द्र, अग्नि, यम, नैर्ऋत, वरुण, वायु, कुबेर, रुद्र, चन्द्र और फणीश्वर। यहाँ वाहनों, प्रहरणों, पत्नियों, और चिह्नोंके साथ उनका विशेष वर्णन किया गया है। जैसा कि २३वीं पंक्ति बताती है।

12–13 भयलज्जामाणमयवज्जियउं जिणवउं पेम्मसमाणउं—जिनवरके प्रति व्रतप्रेमके अथवा चरित्रके प्रेमके व्रतके समान उतना ही जितना यह भय, लज्जा, मान और मदका परित्याग करता है, उसी प्रकार जिस प्रकार प्रेममें पड़कर आदमी—भय आदिकी अनुभूतिकी उपेक्षा करता है।

17. जीवपक्खिबंदिग्गहपंजरु—(मृत शरीर) पक्षी (आत्मा) को पकड़नेका पिंजरा है।

XLII

1. 18 समासइ वइयरु—व्यतिकर। कहानी या कथानकको संक्षेपमें कहता हूँ।

2. 4*b* पोमरयरासिपिंजरियकुंजरघडे (देशमें)—हाथियोंके झुण्ड कमलपुष्पोंके परागसे रंजित हैं। 5*a* दुक्खणिग्गमण इत्यादि—पुष्कलावतीका क्षेत्र इतना आकर्षक था कि वह वनश्रीसे समानता रखता था जो प्रेमकी देवी है। रइरमण—रतिका स्वामी—कामदेव, कठिनाईसे अलग होगा। 10*b* रमइ वइसमणओ आवणे आवणे—धनका देवता—कुबेर प्रत्येक दुकानमें प्रसन्न होता है, क्योंकि उसमें धनकी प्रचुरता है। 15 उवसमवाणिएण—मनकी शान्तिके जलसे। 16 भोयतणेण—भोगरूपी तृण।

3. 17*b* हरिसुद्धदेहेण—अपने रोमांचित शरीरसे। आनन्दके कारण।

4. 15*a* हूए हरिभणणे—जब कि हरिके आदेशसे, इन्द्रकी आज्ञाओंको माना गया, जब कि नगर आदिको सजाया गया इन्द्रके आदेशसे। 17 अणवइण्णि अरुहे—अर्हत्‌के जन्मके होनेके पूर्व ही।

5. 21 झुल्लंतवडायहिं—झण्डोंसे झूलते हुए।

7. 6*b* णिव्विधकामावहो—जिनेन्द्रका, जो लगातार या बिना किसी बाधाके, प्रेम अथवा वासनाके देवताका अन्त कर देते हैं। 10*b* जडकसरदुग्गेण—जड़ और धूर्तोंके लिए जिसका आचरण दुस्साध्य है। कसरका शाब्दिक अर्थ है दुष्ट बैल। गिरिकक्करि पडइ—दुष्ट ऊँट अपने-आपको फेंक देता है या घूमता है, जंगलके रेतीले क्षेत्रमें। मीठी घासके लिए, वहाँ जिसे वे नहीं पा सकते।

9. 5*b* इणे पच्छिमत्थे—जब कि सूर्य पश्चिम दिशामें पहुँच गया, अस्त होनेको था।

12. 15*b* घडिमालाहयहं—पूर्वसमय उन घटिकाओंसे मापा जाता है, जो समाप्त हो जाता है। हयदियहपाडीहि से तुलना कीजिए 5. 14*a* में।

XLIII

1. 5*a* णियायममग्गणिओइयसीसु—जिसने शिष्योंको आगमके पवित्र मार्गपर निर्देशित किया है। 7*b* गलकंदलु—बल्बके समान गलेवाला।

2. 6*a* णीड—घोंसला या घर। 10*a* भाविणि—(भामिनी) औरत। 13 होउ पहुच्चइ—पूर्ण हो। सामान्यतः अर्थ है समर्थ होना। परन्तु शब्दकोश पूर्ण अर्थ करता है। 14. जं पुरउ इत्यादि—यदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नगर या राजधानी छोड़ दी जाती है तो व्यक्ति शीघ्र तपस्या ग्रहण कर सकता है। यदि राजा अपना राज्य छोड़ता है, तो वह संसारसे मुक्ति पा सकता है।

4. 1*a-b* गिहीगुणठाणवएहिं तिमीस—अहमिन्द्र जीवनकी आयु बीस सागर प्रमाण थी, उसमें 99 (प्रतिमाओंकी संख्या) मिलानेसे कुल इकतीस सागर प्रमाण आयु थी।

8. 10*b* दुमाणवु—नीच व्यक्ति।

10. 4*b* पंक्ति इस प्रकार पढ़ी जानी चाहिए—सबंधुसु वेरिसु णिच्चसमाणु—जो अपने परिवार-जनों और शत्रुओंसे समान भाव रखते थे।

XLIV

3. 8*a* परमारिसरिसहुण्णवजायउ—ऋषभके वंशमें उत्पन्न। प्रथम तीर्थंकर जो परमर्षि हैं।

6. 11 परिमाणु—यहाँ परमाणुका रूप है—अणु। संसारमें जितने परमाणु प्राप्त हैं उनसे सुपार्श्वका शरीर बनाया गया।

7. 5*a* उडुपल्लट्टउ—नक्षत्रोंका पतन, या उल्काओंका पतन। जो संसारकी क्षणभंगुरताकी सूचक थीं।

9. 5*b* जलहिमाणि किं आणिज्जइ घडु—क्या हम मिट्टीके घड़ेसे समुद्रका पानी माप सकते हैं।

XLV

1. 17*b* वयणणुप्पलमालइ—नये कमलोंकी मालाके द्वारा अर्थात् काव्यात्मक रूपसे रचित शब्दोंके द्वारा।

2. 16*b* कलहोइमइयाउ—स्वर्ण (कलधौत) से निर्मित।

3. 12*a-b* तूररवें दिस इम्मइ = नगाड़ोंके शब्दोंसे दिशाएँ निनादित थीं। कण्णि वि पडिउ ण सुम्मई—यदि ध्वनि कानोंमें भी पहुँचती थी तो सुनाई नहीं देती थी, या समझी जाती थी—विजयके सघन नादोंके कारण।

6. 9*b* सरसेणा—कामदेवकी सेना।

13. 13-14 इन पंक्तियोंका अर्थ पद्मप्रभ है, जो वैजयन्त स्वर्गमें उत्पन्न हुए। और उनका शरीर गौरवर्ण था, तथा अत्यन्त चमकीली कान्ति थी। पद्मप्रभकी इस कान्तिको देखकर पुष्पदन्त (चन्द्र और सूर्य) की पत्नियोंने अनुभव किया कि उनकी कान्ति कुछ भी नहीं है—पद्मप्रभुके शरीरकी कान्तिकी तुलनामें।

XLVI

5. 9*b* सासेहिं व चासपइण्णएहिं—धान्यके समान जो हलके द्वारा की गयी रेखा (चास) में बोये गये हैं। चास देशी शब्द है जिसका अर्थ है हलके फलकसे खींची गयी रेखा, हलविदारित भूमिरेखा। और तासके रूपमें अब भी मराठीमें सुरक्षित है।

6. 12 जिणतणुहि कंतिइ पयडु ण होंतउ—जिस दूधका जिनवरके अभिषेकके लिए उपयोग किया जाता था, वह जिनवरके शरीरकी कान्तिसे साफ दिखाई नहीं देता था, क्योंकि दूधकी कान्ति जिनवरके शरीरकी कान्तिसे मिलती-जुलती थी। मीलित अलंकारका उदाहरण।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

11. 5a बलदेवहं अग्गइ देहि तिण्णि—तीनके आगे 9का अंक दीजिए, जो बलदेवोंकी संख्या है। पूरा अंक 93 होगा, जो चन्द्रप्रभुके गणधरोंकी संख्या है। 10-11 इन पंक्तियोंमें आठ प्रातिहार्योंका वर्णन है। जैसे पिंडीद्रुम—अर्थात् अशोक वृक्ष। इन प्रातिहार्योंकी स्थिति सूचीके मध्यमें चन्द्रप्रभुके अनुयायियोंमें अस्वाभाविक है।

XLVII

4. 9a वच्छु जहिं रोसहुं—वह उन स्थानोंको छोड़ देते हैं जहाँ क्रोधका वृक्ष है। 'पी' में 'वासु' भिन्न रूप स्पष्ट रूपसे वच्छका सरल रूप है।

6. 9a-b बच्चा अपनी माँ और उसकी प्रतिच्छायाको देखता हुआ भ्रान्तिमें पड़ जाता है और समझता है कि उसकी दो माताएँ हैं और इसलिए वह यह निर्णय करनेमें असमर्थ था कि उसकी वास्तविक माँ कौन थी।

XLVIII

1. 19 गुणभद्दगुणीहिं जो संथुउ—अर्थात् दसवें तीर्थंकर, जो गुणभद्रसे गौरवान्वित हैं। हम जानते हैं कि गुणभद्र जिनसेनके शिष्य हैं, जो संस्कृत आदिपुराणके रचयिता हैं। उनकी मृत्युके बाद उनके कार्यको गुणभद्रने जारी रखा, जो उत्तरपुराण कहलाता है। गुणभद्दगुणीहिं—इस अभिव्यक्तिका यह अर्थ भी किया जा सकता है, विशिष्ट गुणोंको धारण करनेवाले पवित्रजनोंके द्वारा।

4. 14 तं पट्टणु कंचणु घडिउं—वह नगर स्वर्णसे निर्मित था। यहाँ कंचनका प्रयोग कांचनके लिए हुआ है—अर्थात् कांचनमय। 'ए-पी' में कंचणघडिउ पाठ है, क्योंकि प्रतिलिपिकार कंचणका अर्थ नहीं समझ सका।

9. 1a-b तं सइं पंक्तिका अर्थ है, यद्यपि शीतलनाथके अभिषेकमें प्रयुक्त जल नीचेकी ओर बह रहा था, परन्तु वह पवित्र लोगोंको ऊपरकी दिशामें ले जा रहा था, अर्थात् स्वर्ग।

10. 5b उत्ताणाणणु गव्वेण जाइ—गर्वसे आदमी अपना सिर तानकर या ऊँचा उठाकर चलता है। घमण्डी आदमी अपना सिर अकड़ाकर और ऊँचा करके चलता है।

13. 1b संभरइ विरुद्धउ जिणचरित्तु—देवोंने उसके दिमागमें जिनवरके जीवनकी परस्परविरोधी बातें ला दीं। बादकी पंक्तिमें उक्त परस्परविरोधी बातोंका सन्दर्भ है। उदाहरणके लिए जिन गोपाल कहे जाते हैं (ग्वाला—पृथ्वीका पालन करनेवाले) लेकिन अपने ही शत्रुओंके लिए वे अत्यन्त भयंकर हैं।

18. 5a-b जो गायका दान करता है, वह विष्णुलोक जाता है, स्वर्णविमानमें। और स्वर्गीय आनन्द मनाता है। 11 सुज्झइ पिंपलफंसणिण—पीपलका वृक्ष छूनेसे शुद्ध होता है।

20. 14 सइं विरइवि कव्वु, मुण्डसालायण—मुण्डसालायणने स्वयं गो आदिके दानके महत्त्वको बतानेके लिए छन्दोंकी रचना की और उन्हें वह राजाके सामने लाया। राजाने अनुभव किया कि वे उतने ही प्रामाणिक हैं जितने कि वेद।

IL

1. 15 किित्ति वियंभउ महुं जगगेहि—मेरी कीर्ति समूचे विश्वरूपी घरमें फैल जाये। कवि अपनी काव्यशक्तिके प्रति सचेतन है, जैसा कि वह कहता है कि वह उसे विश्वविख्यात यश दिलवायेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

3. 3*b* गुणदेवहं भवदेवहं ईसरु—अनन्त जिनवर गणधरों और जन्मसे देव होनेवाले इन्द्रादिकके ईश्वर हैं।

5. 9 ता णज्जइ इत्यादि—शहरमें स्वर्णवर्षा होनेके कारण लोगोंको रात और दिनके बीच भेद करना कठिन था। इसलिए लोग उस समयको दिनका समय मानते थे जब सरोवरमें कमल खिलते थे।

L

यह और इसके बादकी दो सन्धियाँ प्रथम वासुदेव त्रिपृष्ठ, प्रथम बलदेव (विजय) और प्रथम वासुदेव अश्वग्रीवकी कहानीका वर्णन करती हैं, जो जैन पौराणिक परम्पराके अनुसार हैं। पाठक त्रिपृष्ठ और विजयकी मित्रता और त्रिपृष्ठ तथा अश्वग्रीवकी शत्रुताकी पृष्ठभूमि समझ सकें, इसके लिए कवि तीनोंके दो पूर्वभवोंके जीवनोंका वर्णन करता है।

1. 5*a* गोउलपयधाराधायपहिइ—जहाँपर यात्री गायोंके दूधको जी-भर पी सकते हैं। 11*a* जइणी—जैनी, जो यहाँ व्यक्तिवाचक संज्ञा है। 15 खलमित्तसणेहु—दुष्ट आदमीके साथ मित्रता थोड़े समयके लिए रहती है।

2. 5*a* णिग्गेसइ ण वाय—शब्द बाहर नहीं निकलेंगे। यहाँ णिग्ग शब्द तथा 7*b* में मराठीके निघणेंके समतुल्य है जिसकी व्युत्पत्ति निर्‌गमसे की जा सकती है।

3. 5*b* तरइ Swims—मूल 'तर' तैरना मराठीमें सुरक्षित है, इसी अर्थमें प्राकृतमें एक और मूल शब्द तर् है जिसका अर्थ समर्थ या योग्य होता है।

4. 1*b* वणुस्साहिलासं—होना चाहिए वणस्साहिलासं, उद्यान रखनेकी अभिलाषा। वणुस्स सभी पाण्डुलिपियोंमें मिलता है इसलिए इसे रहने दिया है अथवा क्या हम वण + उत्सुक + अभिलासं ले सकते हैं, जिसका अर्थ होगा वन रखनेकी तीव्र इच्छा। 12*b* तायाउ आराहणिज्जो—बादमें आदर करने योग्य। (पिताकी मृत्युके बाद), तुम भी मेरे पिताकी तरह समान आदर पाने योग्य हो।

5. 13 दुग्गु भणेवि—यह कहते हुए या सोचते हुए कि वृक्ष दुर्गके समान है (दुग्ग)। वइरिउ—शत्रु।

8. 6*a* छइउ (छादितः)—पराजित किया।

9. 10 तुज्झु हसियहु करमि समाणउं—मैं बराबर कर दूँगा। मैं उस हँसीका बदला दूँगा जो मेरा मजाक उड़ाती है और अपमान करती है।

10. 8*b* अवरु—विशाखनन्दी।

LI

1. 6*a* जायासीधणुतणु—वे दोनों (विजय और त्रिपृष्ठ) 80 धनुष बराबर ऊँचे हो गये। 9*b* बिहिं पक्खहिं णं पुण्णिमवासरु—पूर्णिमाके दिनके समान जिसके एक ओर आधा उजला पक्ष है और दूसरी ओर अँधेरा पक्ष है। जो विजय बलदेवके समान हैं, जो गोरे हैं, और त्रिपृष्ठ वासुदेव जो श्याम वर्णके हैं।

2. 11*a-b* हलहरु दामोयरु—यहाँ कृपया याद रखिए कि बलदेव और वासुदेवका उल्लेख उनके विभिन्न पर्यायवाची नामोंसे होगा। जैसे सीरि, हली, लंगलहर, सीराउह, बलदेवके नाम हैं। दामोदर, माधव, श्रीवत्स, अनन्त, सिरिरमणीस, लच्छीवइ (लक्ष्मीपति), दानवारि, दानववैरिन्, विट्ठरसव, विस्ससेण वासुदेवका; इसी प्रकार अश्वग्रीवका उल्लेख हयग्गीव, हयकण्ठ, तुरंगगलके रूपमें होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. 4b पयवयणहिं—अ पय में है जो प्रियके रूपमें आनी चाहिए, सम्भवतः यह हेमचन्द्रके नियम अभूतोऽपि क्वचित्, (399) का बढ़ाव है।

6. 13 जसु जसु—यस्य यशः—जिसका यश।

7. 8b मृगवइयहि जाएं—मृगावतीके पुत्रके द्वारा। यानी त्रिपृष्ठके द्वारा। 9a संचालेवी—कर्मवाच्यका सम्भाव्य कृदन्त रूप है, तुलना कीजिए—पालेवी जणेवी, परिणेवी इत्यादिसे। हेमचन्द्र 438 नियममें इसके लिए एवा रूप देते हैं जो तव्यका स्थानापन्न है। वे एवीका उल्लेख नहीं करते।

9. 13-14 णियजणणविइण्णु—पंक्तियोंका अर्थ है कि अर्ककीर्ति अपने पिताकी भौंहोंके संकेतोंको समझते हुए राजा प्रजापतिके पास गया और इस प्रकार उसे प्रणाम किया।

10. 1a हरिबलेहिं—त्रिपृष्ठ और बलके द्वारा; ससुरउ (श्वसुर), त्रिपृष्ठका होनेवाला ससुर।

11. 12-13 पुणु भणिउ—उन्होंने फिर अनन्त (त्रिपृष्ठ) से कहा—हम देखें और पत्थरके गोल खम्भे उठायें और मुझे बतायें कि क्या तुम अश्वग्रीवकी हत्या कर सकते हो।

15. 14 अह सो सामण्णु भणहुं ण जाइ—उसे सामान्य व्यक्ति नहीं कहा जा सकता।

LII

1. 2 चिरभववइरवसु—पूर्वजन्मके वैरके प्रभावसे कि जब वे विश्वनन्दी और विशाखनन्दी थे। 4 तिखंडखोणिपरमेसरु—तीन खण्ड धरतीके चक्रवर्ती। अश्वग्रीव अर्धचक्रवर्ती था।

5. 4b विज्जाहरभूयरभूमिणाहु—विद्याधरभूमि और मनुष्यभूमिके स्वामी। अर्धचक्रवर्ती अश्वग्रीव।

7. 3a मा रसउ काउ चप्पिवि कवालु—आदमीके सिरपर कौएका बैठना और काँव-काँव करना आनेवाली मौतका संकेत है।

8. 2 करगय—स्वर्णका हार देखनेके लिए तुम्हें दर्पण क्यों चाहिए कि जो तुम्हारे हाथमें है। वह प्रसिद्ध लोकोक्ति है, 5a भरहहु लग्गिवि—भरत चक्रवर्तीके समयसे लेकर, प्रथम चक्रवर्ती। 11 रणु बोल्लंतहं चंगउं—युद्धकी बात करना आनन्ददायक है। तुलना कीजिए कि युद्धस्य कथा रम्या।

3. किंकर णिहणंतहं णत्थि छाय—अनुचरोंको मारनेमें कोई आकर्षण या आनन्द नहीं है। अश्वग्रीव त्रिपृष्ठसे लड़नेमें प्रसन्न था, उसने सोचा कि छोटे व्यक्ति या अनुचरसे लड़नेमें कोई मजा नहीं है। 15 सारंगु का 'टी'में बलवान् अर्थ किया गया है। परन्तु लगता है कि त्रिपृष्ठको वासुदेव होनेके कारण शृंगका बना धनुष रखना चाहिए, विष्णुको शार्ङ्गधर कहा जाता है—हिन्दू-पुराण विद्यामें। हिन्दू-पुराण विद्यामें विष्णुके दूसरे प्रतीक हैं पाँचजन्य, कौस्तुभमणि, असि, कौमोदकी गदा, गरुडध्वज और लक्ष्मी। जैनपुराण विद्यामें ये प्रतीक वासुदेवके भी माने जाते हैं और इसलिए मैं सोचता हूँ कि सारंगधनुका अर्थ शार्ङ्गधनु होगा।

10. 4a-b यह पंक्ति बलदेवके हथियारोंका वर्णन करती है, ये हैं लांगल, मुसल और गदा जो चन्द्रिमा कहा जाता है।

11. 2 खगाहिवो—गरुड़, जो वासुदेव या विष्णुके ध्वजका प्रतीक है। 8a णिच्चिच्चुंचे—मोटा और ऊँचा। 'टी' के अनुसार यह मुहावरा निस् + उच्च से बना। सम्भवतः कि नित्य + उच्च से बना हो, उच्च उंच होता है, अथवा उच्च + उच्च; इसका अर्थ है अन्त तक खड़े बाल, जो हमेशा खड़े रहते हैं।

12. 8a-b भडु इत्यादि—योद्धा कहता है यदि मेरा मस्तक भी गिर जाता है तो भी मेरा धड़ शत्रुका वध करेगा और नाचेगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

15. 2 कण्णाहरणकरणरणलग्गइं—सेना उस युद्धमें व्यस्त थी, जो विवाहमें दी गयी कन्या स्वयंप्रभाके अपहरणके लिए हो रहा था। 12-13 ये दो पंक्तियाँ, दो सेनाओंकी तुलना प्रेम करते हुए जोड़ेसे करती हैं। मिहुणइं—मिथुनानि—प्रेमक्रीड़ामें लगे हुए।

16. 2 सिरिहरिमस्सु—जो कि ऊपर वर्णित है LI में। 16-9*b*, प्रजापति राजाके मन्त्रीके रूपमें। 25 माहवबलवइणा अर्थात् हरिमस्सु।

17. 14*b* णं अट्ठमउ चंदु—चन्द्रमा आठवें स्थानपर हो तो ज्योतिषशास्त्रमें मृत्युकी सूचना देता है।

19. 3*b* णीलंजणपहुदेवीसुएण—अश्वग्रीवके द्वारा। दूसरे दृष्टिकोणके लिए देखिए मृच्छकटिक VI. 9. "कस्सट्ठमो दिणअरो कस्स चउत्थो आ बट्टए चंदो" इसमें चतुर्थ स्थानका चन्द्रमा मृत्युका सूचक है।

20. 21*b* भीमुह-उज्झिउ—भयसे मुक्त।

21. 14*b* सिवकामिणीइ—प्रेमिकाके द्वारा अर्थात् स्त्रीशृगाल शिवा। 16 मोल्लवणु—मूल्य या वापसी।

24. 15*b* कुलालचक्कु—कुम्हारका चक्र। जब अश्वग्रीवका चक्र त्रिपृष्ठको आहत नहीं कर सका, और वह उसके हाथमें ठहर गया। अश्वग्रीव बोला—यह कुम्हारके चक्रके समान है जो युद्धमें व्यर्थ है। यद्यपि त्रिपृष्ठ और उसके पक्षने इसका बहुत कुछ मूल्य आँका। अश्वग्रीवने त्रिपृष्ठकी यह कहकर निन्दा की कि भिखारी तिलतुष खण्डको भूख मिटानेवाला कीमती खाद्य पदार्थ समझकर महत्त्व दे सकता है, परन्तु दूसरे लोग ऐसा नहीं सोचते।

25. 9 कामिणिकारणि कलहसमत्तो—कामिनीके लिए युद्धमें व्यस्त।

LIII

5. 5*b* कंजबंधवो सरम्मि दिण्णपोमिणीरई—सूर्य जो कि कमलका मित्र है और झीलमें कमलके पौधोंको आनन्द देता है।

6. 8*b* तिरयणाहसंखम्मि रिक्खए—चौबीसवें नक्षत्रपर अर्थात् शततारिका।

8. 5*a* अण्णहु पासि ण सत्थविही करयइ सुणइ—वह शास्त्रका अध्ययन नहीं करता, मेरे अध्यापकसे वह स्वयं अध्ययन करता है। तीर्थंकर स्वयं प्रकाशित हैं, और उन्हें किसी दूसरे गुरुकी आवश्यकता नहीं।

13. 1*a* ससयभिसहइ—शततारिकाके साथ।

LIV

1. 14-15 पंक्तियोंका अर्थ है—यदि मैं (कवि) गुणमंजरीके मुखको तुलना चन्द्रमासे करता हूँ तो इसमें मेरी कवित्व शक्तिका प्रदर्शन नहीं होगा। मुझे कवि नहीं कहा जाना चाहिए। क्योंकि गुणमंजरीका मुख गन्दा या काला नहीं है, जैसा कि मृगचिह्न चन्द्रमण्डलपर है। उसकी आकृतिमें चन्द्रमाकी तरह घटत और वक्रता है।

3. 2 इहु कल्लोलणिवहु—कवि कहता है कि विन्ध्यशक्ति और सुषेणकी मित्रता इतनी घनिष्ठ और पक्की थी कि उनमें मेरा भेद करना असम्भव है। क्योंकि समुद्रसे उसकी लहरोंको दूर कौन कर सकता है? दार्शनिकों द्वारा समुद्र और उनकी लहरोंका एकात्म्य, एक स्वीकृत सत्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8. 7*b* बलदेव और वासुदेवका जन्म माताओंके द्वारा स्वप्नमें देखे गये सूर्य और चन्द्रने पहलेसे घोषित कर दिया।

8. 9*b* बीयउ उववादेविह दढभुउ—द्विपृष्ठ वासुदेवकी माताका नाम उववादेवी है—जैसा कि यहाँ दिया गया है। यद्यपि गुणभद्रने उसका नाम उषा दिया है : तुलना कीजिए :—

तस्यैवासौ सुषेणाख्योऽप्युषायामात्मजोऽजनि।
द्विपृष्ठाख्यस्तनुस्तस्य चापसप्ततिसंमिता ।। 58।84

9. 10*b* गलियंसुयइं सुहद्दहि णयणइं—मैं अचलको मारूँगा और उसकी सुभद्राको बात-बातमें आँसू बहानेके लिए विवश करूँगा।

12. 10-12 रायत्तणु इत्यादि—रायमें श्लेष है, जिसका अर्थ है राजन् और राग।

17. 8*a* रासहु होइवि—तारक द्विपृष्ठकी तुलना गधेसे और अपने हाथीसे करता है। 10*a* गोवालबाल—ग्वालेका पुत्र, बालक। वासुदेवका एक विशेषण है, जो कि हिन्दू पुराण विद्याके अनुसार ग्वालोंमें रहे और वहीं बड़े हुए।

LV

3. 6*b* तहु गुण किं वण्णइ खंडकइ—खण्डकवि (पुष्पदन्त) उसके गुणोंका वर्णन किस प्रकार कर सकता है। खण्डका अर्थ है टूटा हुआ, अधूरा जो पुष्पदन्तका एक उपनाम है।

7. 8*b* णायभव, नाकभवा—देवता। 16 गिंभें जित्तु सियालउ—ग्रीष्मऋतुने शीतको पराजित कर दिया। यह एक निमित्त था कि जिससे विमलनाथ विश्वकी अपूर्णताका अहसास कर सकें।

LVI

1. 6*a* धणु सुरधणु जिह तिह थिरु ण ठाइ—इन्द्रधनुषकी तरह धन व्यक्तिके पास स्थायी रूपसे नहीं रहता। 7*a* भायर णियभायहु अवयरंति—भाई भाईके साथ बुरा बर्ताव करते हैं।

2. 8*a-b* चर इत्यादि—चर, गमण, छेज्ज और कड्ढण—पाँसेके खेलके विभिन्न प्रकार हैं जो विरोधीपर आक्रमण करने और उसके अधिकारको चार्जमें लेनेमें हैं। 9*b* एक्कें उड्डिउ णियरज्जु ताम—उनमें-से एकने (सुकेतु) अपनी राजधानी खो दी। ध्यान दीजिए कि उड्डिउका प्रयोग आधुनिक मराठीमें उडवणेंके रूपमें सुरक्षित है।

6. 4*a* महुराउ भणहि महुघोट्टु काइं—तुम मधुको राजा कैसे कहते हो कि वह मधुसे भरा मुखवाला है? मधु राजाके सम्बन्धमें इतने ओछे शब्दोंमें तुम कैसे बोल सकते हो? 7*a* णीलणियासणेण—धर्मबलदेवके द्वारा जो कि नीले वस्त्र धारण करता है। बलदेवको नीलाम्बर कहा जाता है। तुलना कीजिए : नीलाम्बरो रौहिणेयः कालांको मुराली हली—अमरकोश।

7. 10*a* उविंदुप्पणरोसु—उविंदु + उप्पणरोसु, उपेन्द्र अर्थात्। स्वयंभू—वासुदेव क्रुद्ध हो गये। 11*a-b* जइ लोहिउ—मैं अपने भाईके चरणोंकी शपथ खाता हूँ यदि मैंने वेतालको मधु रक्त नहीं पिलाया। पायमि पाययामिका रूप है। 'पा' धातुका प्रेरणार्थक रूप।

8. 1 वसुहासुउ—वसुधाका पुत्र—अर्थात् स्वयंभू। स्वयंभूकी माताका नाम। इस पर्यायवाची शब्दका उपयोग कविने पृथ्वीके अर्थमें किया है, जैसा कि हम 4 और 7*b* के रूपोंसे देखते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. 4*b*, 6*b* सुंदरिहि तणुएण—मधुके द्वारा। 5*a*-*b*-6*a* विउससयणकयवयणविणुएण—मधुके द्वारा जो सैकड़ों विज्ञानोंके समान काव्य रचनामें प्रशंसित है। 36 महुमहमुक्कें चक्कें—चक्रके द्वारा, जो मधुके शत्रु द्वारा प्रक्षिप्त था। महुमह—मधुमथन विष्णुका एक नाम है, हिन्दूपुराण विद्यामें।

LVII

इस सन्धिमें तीन व्यक्तियोंकी कथा है। ये हैं—संजयन्त, मेरु और मन्दर; और उनके पूर्वभवोंको जीवनियोंकी भी कथा है। इनमें मेरु और मन्दरकी जीवनियाँ प्रमुख हैं जो विमलनाथके गणधर हैं। नीचे दी गयी सूचीमें इन दोनोंके पूर्वभव कालक्रमानुसार इस प्रकार हैं—

(a) संजयन्त—1. सिंहसेन, 2. अशनिघोष हस्ती, 3. श्रीधरदेव, 4. रश्मिवेग, 5. अर्कप्रभ, 6. वज्रायुध, 7. सर्वार्थसिद्धि अहमिन्द्र, 8. संजयन्त, इस जीवनमें उसने तपस्या ग्रहण की।

(b) मेरु—1. मधुरा, 2. रामदत्ता, 3. भास्करदेव, 4. श्रीधरा, 5. रत्नमाला, 6. वीतभय, 7. आदित्यप्रभ, 8. मेरु, जो विमलनाथके गणधर हैं।

(c) मन्दर—1. वारुणी, 2. पूर्णचन्द्र, 3. वैडूर्यदेव, 4. यशोधरा, 5. रुचकप्रभ, 6. रत्नायुध, 7. विभीषण, 8. द्वितीय नारकी, 9. श्रीधामा, 10. ब्रह्मस्वर्गस्थित देव, 11. जयन्तधरणेन्द्र, 12. मन्दर, जो विमलके गणधर हैं।

इस वर्णनात्मक वृत्तान्तमें दो और प्रमुख व्यक्तियोंका वर्णन है। वे हैं (1) सत्यघोष या श्रीभूति, सिंहसेनका मन्त्री, जो अगन्धनसर्प, चमरमृग, कुक्कुटसर्प, तृतीयनारक, अजगर, चतुर्थनारक, त्रसादिभव, ससनारक, सर्प, नारकी, भृगश्रृंग और विद्युद्दंष्ट्र। (2) भद्रमित्र व्यापारी जो सिंहचन्द्र, प्रीतिंकरदेव और चक्रायुध।

1. 5*b* विज्जइ—चि से विकसित है तोड़ने और तब खानेके लिए। 'टो' में इसका अर्थ खाना दिया है, जो दूसरा अर्थ है।

6. 10 देवदिवायराहु—आदित्यप्रभ देवका जो परवर्ती दूसरे भवमें मेरु बना।

9. 11*a* त्रिण्णि वि एयइं—यज्ञोपवीत और मुद्रिका।

14. 1*a* णावइ वारुणि—पुराके समान।

15. 6*a* तूलिहि—सूतसे बना गद्दा।

18. 4*b* कम्मारउ—श्रमिक।

LVIII

9. 1*a* पुणु तहु कइ—पंक्तिका अर्थ है अनन्तके लिए (तहु कइ = तस्य कृते) राज्यश्री प्रेमकी कसकसे पीड़ित हो उठी और मूर्छित हो गयी। परन्तु उसे सचेतन किया गया, चँवरों से।

11. 8*b* मिहिरमहाहिय—कान्तिमें श्रेष्ठ। सूर्यसे श्रेष्ठ।

13. 12*a* अमवासाणिसियहि—अमावस्याकी रातमें। गुणभद्र और पुष्पदन्त माहका उल्लेख नहीं करते जो चैत्रमास है। हमें माहका नाम 11. 1*a* से लेना पड़ा है।

16. 9*b* महुसूयणु—मधुसूदन विष्णुका नाम है। हिन्दूपुराण विद्यामें यह विष्णुका नाम है। क्या मखसूदनको उस मधुसूदनके समकक्ष माना जाये जो मधुसूदनसे समता रखता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. दामयमक अथवा शृंखलायमकपर ध्यान दीजिए जो पूरे कडवकमें है।

22. 5*b* रहचरणु—चक्र। 13*a*. सरसलिलि रहंगसयाइं अत्थि—यहाँ झीलमें सैकड़ों चक्रवाक हैं परन्तु क्या वे पागल हाथीको पकड़ सकते हैं।

LIX

4. 7 सिविणय देंतु सुहुं—उस आदमीको सुख देता हुआ जो धनिक होते हुए भी नम्र और सदय हैं। ध्यान दीजिए कि शब्द सिविणयमें कारक चिह्न नहीं है।

6. 3*a* पूसरिक्खि छणससिदिवसि—इसमें भी माहके नामका उल्लेख नहीं है। गुणभद्रमें माघ माहका उल्लेख है, परन्तु माघकी पूर्णिमाको हम पुष्यनक्षत्र नहीं पा सकते इसलिए पौष माह होना चाहिए। क्या यह उत्तर और दक्षिणमें माह गिननेके अलग-अलग प्रकारोंके सन्देहके कारण ऐसा हुआ?

14. 1*a* सयडंग (शकटांग)—चक्र; चक्रवर्तीका शस्त्र।

19. 10 विसरिसजलझलज्झलं—वर्षाके गन्दे पानीका टपकना।

LX

2. 5*b* जहिं मणियरहिं ण दिट्ठु पयंगउ—जहाँ रत्नोंकी किरणोंके कारण सूर्य दिखाई नहीं पड़ता था, रत्न इतने अधिक और विशाल थे कि उन्होंने सूर्यको आच्छादित कर लिया।

3. 5*b* कोडिसिलासंचालणधवलहु—यह पंक्ति प्रथम वासुदेव त्रिपृष्ठके कार्यको सन्दर्भित करती है कि जिसने कोटिशिलाको उठाया।

4. 13*b* पाहुडगमणागमणपवाहें—भेंटकी वस्तुओंके आने-जानेके प्रकारमें—विजयभद्र और अमित-तेजस् के बीच। नैमित्तिक—ज्योतिषी।

5. 9*b* इउं पव्वइउ समउं हलीसहु—हलीस अर्थात् विजय बलदेव, जिन्होंने संसारका परित्याग कर दिया। मैं (ब्राह्मण ज्योतिषी भी) उसके साथ साधु हो गया।

6. 11*a* मामसमप्पिउ—मेरे ससुरके द्वारा दिया गया। यहाँ तक आधुनिक मराठीमें ससुरको मामा कहते हैं।

8. 2*a* अमोहजीहु—ज्योतिषीका नाम। 7*b* जेवुव्वरसि—जिससे तुम आपत्तिमें सुरक्षित रह सकोगे (जीवित रह सकोगे)।

11. 3*b* णिबद्धणाइं— 'ए' 'पी' में पाठ है णिबंधणाइं, जो सरल है। मुहावरेका अर्थ है तन्तुओंको बाँधनेवाले। 9*b* वारउ—पारी। वार शब्दका पारी अर्थ मराठीमें सुरक्षित है।

18. 5*a* हरिसुउ—श्रीविजय, त्रिपृष्ठ वासुदेवका पुत्र।

29. 10*b* समयसमियकलि—जिसने समता या अपनी मतिसे कलहको शान्त कर दिया है।

LXI

1. 9*a*-28*b* इन पंक्तियोंमें अमिततेज द्वारा अर्जित विद्याओंकी सूची है।

12. 6*a* दिल्लिदिलिए, हे बाले—कन्या, देशी नाममाला देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

15. 13 आउंचियारिपसरु—जिसने शत्रुओंकी प्रगति रोक दी है।

21. 11 घणवाहणहु—मेघरथका।

LXII

2. 2a गरुडेण वि जिप्पइ एहु ण वि—यह रसोइया गरुड़के द्वारा भी नहीं जीता जा सकता।

5. 10b जाउडयजडिलमंडियथणिहिं—जिसके स्तन केशरसे सघन रँगे हुए हैं।

7. 9a to 10. 2b—यहाँ पूरी धरती और उसके खण्डोंका वर्णन है जो आकाशसे दिखाई देते हैं।

17. 12b पक्खें—पक्षीके द्वारा। इस शब्दको क्या पक्खिके रूपमें लिया जा सकता है, जो वाद्यात्मक संगीतका एक अंग है।

LXIII

2. 7a एरादेविइ—दूसरी जगह शान्तिकी माताका नाम अइरा दिया गया है, उदाहरण के लिए 1.16 और 11b में।

5. 5-6—इन पंक्तियोंमें उन रत्नोंकी सूची है, जो चक्रवर्ती शान्तिनाथको प्राप्त थे।

11. 1–7—इन पंक्तियोंमें शान्तिनाथ और चक्रायुधके पूर्वभवोंका वर्णन है। शान्तिनाथके कुल 12 भव हैं—श्रीषेण, कुरुनरदेव, विद्याधर, देव, बलदेव, देव, वज्रायुध, चक्रवर्ती, देव, मेघरथ, सर्वार्थसिद्धिदेव, शान्ति। चक्रायुधके ये भव थे—अनिन्दिता, कुरुणर, विमलप्रभदेव, श्रीविजय, देव, अनन्तवीर्य, वासुदेव, नारक, मेघनाद, प्रतीन्द्र, सहस्रायुध, अहमिन्द्र, दृढ़रथ (मेघरथभ्राता), सर्वार्थसिद्धिदेव, चक्रायुध।

LXIV

1. 7b जो ण करइ करि कत्तिय कवालु—कुन्थु या तीर्थंकर, जो अपने हाथमें मानवीकपाल नहीं रखते, और बाघका चमड़ा जैसा कि शिव रखते हैं, इसलिए तीर्थंकर शिवसे बहुत ऊँचे हैं।

2 8b वयविहिअजोग्गु दिण्णु वि ण लेइ—हाथ पसारे हुए, वह ऐसी चीजें स्वीकार नहीं करते, जो अपनी व्रतनिष्ठाके कारण, वे ग्रहण नहीं कर सकते।

8. 1b णियजम्ममासपक्खंतरालि—उसी दिन माह और पक्षमें, कि जब उनका जन्म हुआ। अर्थात् वैशाख शुक्ल प्रतिपदाके दिन। 2b कित्तियणक्खत्तासिइ ससंकि—जबकि चन्द्रमा कृत्तिका नक्षत्रके संगममें था।

LXV

3. 4b पट्टणु रयणकिरणअइसइयउ—रत्नोंकी किरणोंके कारण नगर अत्यन्त चमकदार था।

4. 9b–10b वरिसकोडि सहसेण विहीणइ—जबकि कुन्थुके निर्वाणके एक हजार करोड़ वर्ष बीत गये।

5. 5b दहदहधणुतणु—शरीर बीस धनुष ऊँचा था, यद्यपि गुणभद्र तीस धनुष ऊँचा शरीर बताते हैं; जो अरहको ऊँचाईसे तुलनीय है। तुलना कीजिए = त्रिशच्चापतनूत्सेधः चारुचामीकरच्छविः—65. 26 जो अधिक सम्भवनीय है।

9. 1–8 ध्यान दीजिए—अर शब्दपर अलंकारिता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. 8*a* णिउ जिणवररिसि सोत्तिउ तावसु—राजा जिन साधु बना जब कि ब्राह्मण तपस्वी। अर्थात् वैदिकधर्मका अनुयायी साधक बना। विशेष रूपसे वह शिवकी भक्तिके सिद्धान्तोंका अनुयायी बना।

12. 6–7 णच्चइ देउ—इन पंक्तियोंमें शिवके चरित्र की विशेषताओंका वर्णन है कि जो ताण्डव नृत्य करते हैं, और जो पार्वतीको रखते हैं। डमरु बजाते हैं, त्रिपुर को जलाते हैं, और राक्षसोंका संहार करते हैं। जिनवर कहते हैं कि ऐसी ईश्वरता संसारसे नहीं बचा सकती।

13. 6*b* तावसमासुरवासि रसंति—चिड़ा-चिड़ियाके जोड़ेने दाढ़ीमें घोंसला बना लिया साधुकी और वे उसमें गाते हैं।

16. 1–2 इन पंक्तियोंमें कान्यकुब्ज नगरका नाम है। क्योंकि उसमें साधुसे विवाह नहीं करनेपर कन्याओंको शापके कारण 'बौनी' बनना पड़ा।

24. 1*b* खत्तिय सयलु वि छारु परत्तिवि—सभी क्षत्रियोंको जलाकर खाक कर देनेवाले। परत्तिवि परत्तसे बना है जो देशी है, और जो आधुनिक मराठीमें सुरक्षित है।

LXVI

1. 9*a* विहवत्तणदुक्खोहरियछाय—वैधव्यके कारण उत्पन्न दुखसे उसके शरीरकी कान्ति चली गयी। 10*b* पर ताउ ण पिच्छमि—परन्तु मैं अपने पितासे (सहस्रबाहुसे) नहीं मिलती।

5. 5*b* कोसलं पुरं—कोसलपुर अर्थात् साकेत, जो कोसल राज्यकी राजधानी है।

6. 3*a* परमेसरु—अर्थात् सुभौम, जो बाद में चक्रवर्ती होनेवाले थे। 10*b* एउ जि—पिताके दाँतोंसे पकड़ा हुआ मिट्टीका प्लेट इस प्रकार चक्रमें बदल गया।

10. 10*a* सब्भंतरि—(श्वभ्रान्तरमें) नरकमें।

LXVII

4. 6*a* हिरणगब्भो—*a* जिन–हिरण्यगर्भ शब्द हिन्दुपुराण विद्यामें ब्रह्मासे भेद बतानेके लिए है परन्तु जैनपुराण विद्यामें यह तीर्थंकरका वाचक है।

9. 1*a* दिणि छक्के विच्छिण्णए—दीक्षाके छह दिन बाद। अर्थात् पौष कृष्ण द्वितीयाके दिन मल्लिने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। गुणभद्र भी इस तिथिको इस रूपमें देते हैं।

13. 11*a* पिसुणमहंतो—पिशुन नामका मन्त्री, जिसने राम-विरामके बारेमें उनके पिता 'वीर' को गलत सूचना दी; वह बलि हुआ।

14. 4*b* वाणारासि—वाराणसी, छन्दके कारण तीसरे अक्षरको दीर्घ किया गया।

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org